1 विज्ञान स्वरूप

विज्ञान कहते किसे हैं? इसके ऊपर विचारना है। विज्ञान नाना प्रकार के परमाणुवाद को जानना, यन्त्र बनाना, चन्द्रमण्डल में जाना और भी नाना लोकों की कल्पना करना यह वास्तव में विज्ञान तो है परन्तु जहाँ मन और प्राण का निदान कर दिया जाता है और निदान करके दोनों का जब मिलाना करके वह जो मेरे पूज्यपाद गुरूदेव ने अभी-अभी नाना प्रकार की नाड़ियों का वर्णन किया है, चक्रों का वर्णन किया है जब वह ग्रन्थियां खुल जाती हैं तो मानव का यह विज्ञान उसे अन्तर्गत ऐसे आ जाता है जैसे गऊ के द्वारा बछड़ा आ जाता है। आज मैं विज्ञान की चर्चा प्रकट करने नहीं जा रहा हं। आज मैं चन्द्रमण्डल की वार्त्ता प्रकट करने नहीं जा रहा हूं। आज में कोई मंगल की भी व्याख्या करने नहीं आया। 12.02.1971

विज्ञान दोनों प्रकार धाराओं में विद्यमान रहती है। एक विज्ञान तो वह जो एक सूत्र में पिरोया हुआ ब्रह्माण्ड जो ऋत में दृष्टिपात आता है। कल के वाक्यों में ऋत और सत की मैं कुछ विवेचना कर रहा था और तुम्हारे समीप यह उच्चारण कर रहा था कि यह ऋत और सत क्या हैं? जितना भी यह ब्रह्माण्ड लोक लोकन्तरवाद तुम्हें दृष्टिपात आता है, जितना भी परमाणुवाद है, तरंगवाद है वह एक सूत्र में पिरोया हुआ है, और उस सूत्र का नाम है ऋत। वह ऋत में पिररोया हुआ है। और एक लोक दूसरे लोकों की परिक्रमा कर रहा है वह ऋत कहलाता है। जितना भी प्रकृतिवाद है, प्रत्यक्षवाद है वह सर्वत्र ऋत में पिरोया हुआ है। वह ऋत में रहने वाला है। उस ऋत में प्रवेश करने के पश्चात वैज्ञानिक नाना प्रकार के मन्त्रों का निर्माण करता है और निर्माण करता हुआ उन मन्त्रों पर विद्यमान हो करके वह लोक लोकान्तरों की जो ऋत से आभायित होते हुए तरंगें हैं उन तरंगों में रत्त हो करके लोक लोकान्तरों में वास करता है, वह रमण करता है, वह उसमें अपना यातायात बना लेता है।

बेटा! मुझे स्मरण है कि नाना ऋषि हुए हैं, जिन्होंने यातायात को बनाया है। नाना वैज्ञानिक हुए हैं जिनका लोकों से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है और घनिष्ठताएं रहते हुए उन्होंने अपने यातायात को बनाया है। उसी में वह गमन करते रहते थे। तो नाना वैज्ञानिक अपनी आभाओं में निहित रहे हैं, और वैज्ञानिकता में रमण करने वाले वैज्ञानिक कहलाते हैं। द्वितीय वैज्ञानिक वे होते हैं जो इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड को अपने मानवीय ब्रह्माण्ड में दृष्टिपात करने लगते हैं। वह सत में रमण करने वाले होते हैं। क्योंकि सत में प्रभु है, सत में आत्म तथ्य कहलाता है। वह सत ही सत कहलाता है। जहाँ वह जाता है वहाँ उसे सत ही दृष्टिपात होता है। वह सत ही सत कहलाता है। वह द्वितीय विज्ञान है। वह योगेश्वर कहलाता है। जो योगियों में रमण करने वाला, योग में गति करने वाला, चित्त की वृत्तियों को निरोध करने वाला, चित्त की वृत्तियों को निरोध कर रहा है अथवा उन्हें समेट रहा है, अपने में धारण कर रहा है तो वह जो योगेश्वर बनने जा रहा है, उस योगेश्वर की जो प्रबल गति है, अभ्यागति है, अभ्यास में रमण करने वाला है। वह योगश्चित्त वृत्तियों को निरोध करता हुआ लोक लोकान्तरों के पिछले भाग में सत ही सत में रमण करता है। क्योंकि वह सत में पिरोया हुआ है। इसीलिए वह जो दोनों प्रकार का विज्ञान है वह ऋत और सत दोनों में पिरोया हुआ है। इसलिए वह वैज्ञानिक कहलाता है। विज्ञान में रमण करने वाला महान् वैज्ञानिक बन जाता है। इन दोनों विषयों को समेट करके ज्ञानमय बनता हुआ विज्ञान में प्रवेश करता है। 09.10.1977

2 भौतिक विज्ञान से अध्यात्म विज्ञान

परन्तु विज्ञान के आँगन में हैं। विज्ञान होना चाहिए विज्ञान से ही आगे जा करके मानव आध्यात्मिक वेत्ता बनता है। पूज्यपाद गुरुदेव ने बहुत पुरातन काल में कहा था कि जब मैंने उनसे यह प्रश्न किया कि भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान में क्या अन्तर्द्वन्द्व है? पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि भौतिक विज्ञान ऐसा आभायित है कि जब आध्यात्मिक विज्ञान में प्रवेश करता हैं तो भौतिकवाद के मार्ग से विचरण करके जाता है। इसीलिए संसार को जानना, परमाणुओं को जानना, तरंगों को जानना, सूर्य लोक में प्रवेश करना और भी नाना लोक लोकान्तरों में यातायात का बनाना और एक बात स्वीकार कर लो, कि संसार में जितने भी लोक लोकान्तरों की यात्रा हैं, चाहे वह सूर्य मण्डल हो, चाहे वह बृहस्पति हो, चाहे वह शनि हो, कोई भी मण्डल हो, परन्तु उसमें जीवन है। कुछ लोकों में पार्थिव तत्व हैं, कुछ लोकों में जल प्रधान प्राणी रहते हैं, किन्हीं में अग्नि प्रधान प्राणी रहते हैं। परन्तु जहाँ जीवन है, जहाँजल है, जहाँ प्राणवर्धक वायु है वहीं प्राणी का जीवन विद्यमान है। राष्ट्र के राष्ट्र विद्यमान हैं। मंगल का राजा, अपने राष्ट्र में शासन कर रहा है, चन्द्रमा का अपने राष्ट्र में शासन कर रहा है।

3 त्रि परमाणु

वेद का वाक् कहता है कि गुरुत्व, तरलत्व और तेजोमयी ये तीन परमाणु है। इनको गति देने वाली वायु है और जहाँ गमन करता है, उसका नाम अंतरिक्ष कहलाया गया है। पाँच प्रकार की गतियों में ये विज्ञान अपने में रमण करता है और प्रसारण, ध्रुवा, ऊर्ध्वा, गति और आकुंचन ये विज्ञान अपने में सार्थक बना करता है। 02.03.1988

4 पृथ्वी, आपो और तेजस का ज्ञान सूत्र

वेद मन्त्र यह कहता था कि जो सूत्र पृथ्वी से गति करता है वहीं सूत्र आपोमयी ज्योति में समन्वय करता है, और वही सूत्र आपो से तेजोमयी में प्रवेश करता हुआ, और वही लोक लोकान्तरों में गमन करता है और जैसा वेद का ज्ञान हम स्वीकार करते हैं। उससे ऊर्ध्वा में जो हमारे यहाँ तेजोमयी कहलाते हैं, प्रकाश वाले मण्डल हैं, उनमें यहाँ ये विशेष होता है और जो अग्निमयी, तेजोमयी कहलाते हैं वहाँ उसमें विशेष होता है। जैसे आज हम यह कल्पना करने लगे, कि सूर्य मण्डल में जो प्राणी मात्र रहता है उसका ज्ञान बड़ा अनुपम है वह अपने में विष्णु राष्ट्र क्योंकि विष्णु हमारे यहाँ सूर्य को कहते हैं और सूर्य मण्डल में जो प्राणी मात्र है, उसका वेद का ज्ञान बड़ा अनुपम और विचित्र, वेद विज्ञान से गुथा हुआ है, इसी प्रकार मंगल मण्डल में भी तेजोमयी की प्रतिभा न रह करके, वह कुछ सूक्ष्म है, पार्थिवता रहने से, यहाँ से उसका ज्ञान और विज्ञान भी ऊर्ध्वा में है। 21.03.1988

5 महर्षि मार्कण्डेय जी द्वारा चन्द्रमा और पृथ्वी की सीमा पर अनुसन्धानशाला निर्माण

हमारे यहाँ पुरातन काल में, तुमने महर्षि मार्कण्डेय जी को दृष्टिपात किया होगा। मार्कण्डेय जी ने एक समय एक परमाणु को जाना था। उस परमाणु का नाम था 'ऋणीक्रांत परमाणु' तो जहाँ वह पृथ्वी का परमाणु और चन्द्रमा का परमाणु मिलन करता था, वहाँ वह परमाणु स्थिर हो जाता है, उसमें उन्होंने जाना कि जहाँ चन्द्रमा और पृथ्वी दोनों की सीमा है, वहाँ एक आश्रम का निर्माण किया जा सकता है, परमाणुवाद के द्वारा, तो महर्षिमार्कण्डेयमुनि ने इन्हीं से यन्त्रों का निर्माण किया और यन्त्रों का निर्माण करके जहाँ चन्द्रमा और पृथ्वी की सीमा है, वहाँ जा करके अपने यान को स्थिर कर दिया था, जहाँ छह माह तक माता पार्वती और शिव ने जा करके विज्ञानमयी अपने जीवन को बनाया। 21.03.1988

6 विज्ञान की सदुपयोगिता

जब कर्त्तव्यवाद के गर्भ में विज्ञान रहता है और जब अधिकार की पुकार स्वीकार करने लगती है, तो उसके गर्भ में अन्धकार रहता है। इसीलिए प्रकाश को, अग्रणीय बना करके और अन्धकार को नष्ट करके आध्यात्मिकवाद की भौतिकवाद में पुट लगी रहनी चाहिए, जिससे विज्ञान का दुरूपयोग न हो। 23.03.1988

आधुनिक काल का जो विज्ञानवेत्ता है, वह मंगल की यात्रा में भी अब कुछ समय में सफल होने जा रहा है, परन्तु चन्द्रमा तक गया है। आधुनिक काल का वैज्ञानिक कहता है, कि जितना विज्ञान हमने जाना है इससे आगे विज्ञान था ही नहीं। 24.03.1988

7 आध्यात्मिक विज्ञान

विज्ञान किसे कहते हैं? हमारे यहाँ विज्ञान की बड़ी महत्तता मानी गई है। क्योंकि विज्ञान उसे कहते हैं, जो मानव के अन्तर्जगत में कुछ तरंगों का प्रादुर्भाव होता रहता है, और उन तरंगों का सम्बन्ध प्रभु के अमूल्य जगत से होता है, और वह जगत मे जैसे प्रत्येक वस्तु को दृष्टिपात करते हुए, प्रत्येक वस्तु को गम्भीर मुद्रा में ले जाना ओर गम्भीर मुद्रा में ले जा करके, उसको विचारना, हमारे जैसे एक शब्द है, यह शब्द हमारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर कैसे जाता है, उसमें चित्र भी जाता है, शब्द भी जाता है तो यह विज्ञान माना गया है। इसको हम साकार रूप बनाने में लग जाएं, तो यह हमारा विज्ञान है, एक वायुमण्डल में सूर्य की किरणें अपना गमन करती हैं, सूर्य एक मण्डल दूसरे की परिक्रमा कर रहा है, और जब वह एक दूसरे की परिक्रमा में निहित हो रहा है तो उसका कोई सूत्र है, उस सूत्र को हमारे यहां प्राण सत्ता मानी गई है। कोई कोई विकृति रूपों में स्वीकार करते रहते हैं। परन्तु परिणाम यह होता है, क्या यह जो विज्ञान है, वह अपने मे सार्थक होना चाहिए। विज्ञान उसे कहते हैं पृथ्वी के गर्भ में जाना, परमाणुओं की जो आदान प्रदानता हो रही है उन परमाणुओं को जान करके, उसको स्थूल रूप को जानना है जान करके सूक्ष्मता को, उसको स्थूल रूप में निर्माणित करना है। तो वह हमारे यहां विज्ञान माना गया है, उस विज्ञान का जो भौतिकवाद है, जिसके ऊपर, मानव अपनी स्थली में अनुसन्धनशाला में विद्यमान हो रहा है। एक दूसरे परमाणु का मिलान कर रहा है, एक धातु का दूसरी धातु से समन्वय कर रहा है, वह जो धातु पिपाद का जो समन्वय हो रहा है, उस समन्वयी धारा को सूक्ष्म बनाना, सूक्ष्मतव से जानना और उसको साकार रूप देने का नाम विज्ञान माना गया है। जैसे हमारे यहां एक यज्ञशाला है उस यज्ञशाला में यज्ञमान आहुति दे रहा है, और आहुति दे करके जब अग्नि उसको सूक्ष्म बना देती है, अग्नि उसे एक बहुत ही अद्वितीय रूपों में परिणत कर देती है, तो उसमें जैसे अग्नि है अग्नि की धारा से जो भी शब्द विराजमान हो जाता है, वह उसका एक विशाल रूप बन जाता है। तो उसका नाम भौतिक विज्ञान है। उस शब्द को जानना, यह अन्तरिक्ष में लय हो जाना, अन्तरिक्ष से हम उसे ऊर्ध्वा में लाना, ये सब विज्ञान कहलाता है। परन्तु हमारे वैदिक साहित्य में विज्ञान का बड़ा महत्व आया है बड़ी मौलिकता आई है। क्योंकि परम्परागतों से ही, ऋषि मुनि अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके वह भौतिक विज्ञान में भी रत्त होते रहे हैं, जहां उनका आध्यात्मिकवाद या व्यवहार और आध्यात्मिकवाद दोनों वह ऊर्ध्वा में रहे हैं, वहां उनका विज्ञान, यह बड़ा मौलिक रूपों में रमण करता रहा है। यह भौतिक विज्ञान अपने

में बड़ा ऊर्ध्वा में गमन करता है, क्योंकि पांच प्रकार की जो प्रवृत्तियां हैं, प्रकृति का जो स्वरूप है, वह पांच प्रकार के रूपों में विद्यमान रहता है। सबसे प्रथम जब महर्षि पतंजलि जी से यह प्रश्न किया गया कि महाराज! यह जो दृष्टिपात आने वाला जगत है, इसकी कितनी गतियां हैं तो महर्षि ने यह वर्णन किया, क्या प्रसारण, गति, ध्रुवा, ऊर्ध्वा, आंकुचन ये पांच प्रकार की गतियां में यह सर्वत्र जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है। पांच प्रकार का विज्ञान दृष्टिपात आता है। सबसे प्रथम प्रसारण, उसका फलावृत्तियों में रत्त होना उसे प्रसारण कहते हैं। ओर गति, वही प्रसारण भी, उसमें गति भी हो मे उसमें ध्रुवा ओर ऊर्ध्वा हो और उसमें आंकुचन उसमें एक वृत्ति आंकुचन होनी चाहिए। तो यह पांच प्रकार की गति हैं, प्रकृति की, इन पांचों प्रकार की गतियों में, मानव को रमण करना है और पांचों प्रकार की गतियों को जानने का नाम विज्ञान कहा जाता है। इसी विज्ञान में मानव को रत्त रहना चाहिए। यह प्रसारण में आंकुचन ओर गतियां में रमण करने वाला ध्रुवा ओर ऊर्ध्वा में जो वृत्तियां हैं उनका नाम विज्ञान है। तो हमें विज्ञान में रमण करना चाहिए, विज्ञान की मौलिक धाराओं को जानना चाहिए। हमारे वैदिक साहित्य में, जहां व्यवहार हैं वहां विज्ञान भी है, और विज्ञान अपने कक्ष में बड़ी ऊर्ध्वा में गमन करता रहा है। जितना भी ये जगत है ये तीन प्रकार के परमाणुओं से निहित ओर प्रभावित रहता है। तीन प्रकार के परमाणुवाद में सर्वत्र विज्ञान विद्यमान हैं। चाहे वह पृथ्वी मण्डल पर हो, चाहे वह मंगल में हो, किसी भी लोक लोकान्तरों में विज्ञान हो, परन्तु वह तीन प्रकार के परमाणुओं से घिरा हुआ है। परमाणु तीन है, गति देने वाली वायु है, और जहां गतिवान हो रहा है उसका नाम अन्तरिक्ष है। तो एक स्थली में विज्ञान हैं दूसरा, तीसरा जो रूप है वह आध्यात्मिकवाद कहलाता है। आध्यात्मिकवाद किसे कहते हैं, अपने अवयवों को जानना है, हम जब यह विचारते हैं कि आध्यात्मिकवाद किसे कहते हैं, तो आध्यात्मिकवाद कहते हैं अपने प्रवृत्तियों को नम्रता में परिणत कर देना, क्योंकि जब हमारा व्यवहार ऊँचा बन जाता है, हमारा विज्ञान ऊर्ध्वा में, हम जान लेते हैं वैज्ञानिक वस्तुओं को, तो हमारा आध्यात्मिकवाद में नम्रता आ जाती है। क्योंकि हम इतने व्यापक रूप से अपने जीवन को, हमें प्रायः स्वीकार करना है, जिससे आध्यात्मिक विज्ञान हमारे समीप आ जाएं। आध्यात्मिकवाद में सबसे प्रथम नम्रता आ जाना, नम्रता इतनी आ जाना कि अपनी आत्मा के सम्बन्ध में विचारने लगे। परन्तु आत्मा का चिन्तन जब भी रात्रि या दिवस काल में, निन्द्रा से जागरूक हो जाए तो उसी समय वह आत्मा के सम्बन्ध में, अपने अन्तर्मुखी जगत में चला जाता है। अन्तर्मुखी जगत में जो क्रियाकलाप हो रहे हैं उन क्रियाकलापों को प्रभु के राष्ट्र में स्वीकार करने का नाम बेटा! आध्यात्मिक विज्ञान कहा जाता है आध्यात्मिक विज्ञान उसे कहते हैं जहां अपनी इन्द्रियों पर और प्राणों पर संयम करने वाला हो, वह प्राण के ऊपर विचारता रहता है, वह चित्त के मण्डल में विचारता रहता है, चित्त के मण्डल में वह प्रवेश कर जाता है। तो आध्यात्मिकवाद अपने में उपरामता को प्राप्त हो जाता है आत्मा का विषय, बड़ा विचित्र है आत्मा के विषय को जानने लगते है मानव, तो उसके लिए अहिंसा परमोधर्म एक मुख्यतव उसके अन्तर्जगत में आ जाता है। प्रवेशिका बन जाती है। एक समय कुछ जिज्ञासु आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता, वह भ्रमण करते, महर्षि सुकेता के द्वार पर पंहुचे, ओर महर्षि सुकेता ने उनका स्वागत किया और ऋषि मुनि जब जिज्ञासुओं ने, सुकेता से कहा कि हे सुकेता! हम जानना चाहते हैं कि यह आध्यात्मिकवाद क्या है? तो सुकेता ने कहा कि आध्यात्मिकवाद उसे कहते हैं, जो परमात्मा के राष्ट्र में जो अपने को स्वीकार करता रहता है। कि मैं प्रभु के राष्ट्र में हूँ मुझे इस संसार के अवयवों से कोई सम्बन्ध नही रहना चाहिए, वह परमात्मा के जगत और परमात्मा के प्रति अपने में रमण करा करके उसी में वह रत्त हो जाएं, तो उसी को आध्यात्मिकवाद कहते हैं। वह उन्होंने कहा प्रभु! इतने में महर्षि जालवी ने कहा हे प्रभु! हम जानना चाहते हैं कि आध्यात्मिकवाद किसे कहते हैं? उन्होंने कहा आध्यात्मिकवाद उसे कहते हैं जो अपनी अन्तरात्मा को जानता है, अन्तरात्मा के दोनों गुणों में प्रवेश हो जाता है, क्योंकि आत्मा का जो गुण है वह ज्ञान और प्रयत्न कहलाता है। ज्ञान और प्रयत्न को जानने वाला मानव, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता होता है, और ज्ञान और प्रयत्न यह आत्मा का मौलिक गुण कहा जाता है। वास्तव में तो राग, द्वेष, इच्छा, दुःख, सुख, सर्वत्र ये मनस्तव के गुण माने गएं हैं। परन्तु कहीं कहीं आचार्यों ने इसके साथ उसका समन्वय किया है। परन्तु यह विचार करने से प्रतीत नही होता, कि आध्यात्मिकवादी वह पुरूष होता है, जो आत्मा के सम्बन्ध में विचारता है, आत्मा के सम्बन्धी जितना जगत है, उसमें विचारता है, वह मोक्ष की पगडण्डी में जाने के लिए तत्पर होता है। वह प्राणायाम करता हुआ, अपने में ऊर्ध्वा गति बनता है, ऊर्ध्वा में रमण करता हुआ तो वह आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता कहलाता है तो आज हम आध्यात्मिकवादी बनें, आध्यात्मिक जैसे आचार्य विद्यालय में प्रवेश हो करके सबसे प्रथम ब्रह्मचारियों को नैतिकता में परिणत करता है। आचार्य कहता है हे ब्रह्मचारी! तुम अपनी अन्तरात्मा को जानने का भी प्रयास करो। जहां तुम संसार की नाना प्रकार की भौतिक विद्याओं को अध्ययन करते हो, वहां जहां तुम शृंगार रस विद्या को अध्ययन करते हो, जहां तुम वनस्पति विज्ञान का अध्ययन करते हो, वहां आध्यात्मिक विज्ञान का भी तुम्हें ज्ञान होना चाहिए। आध्यात्मिकवाद में भी रमण करना चाहिए, आध्यात्मिकवादी जो प्राणी होते हैं, वह परमात्मा के राष्ट्र में, अपने को स्वीकार करते हैं, तो वह आत्मा, तुम कुछ समय के लिए ब्रह्मचारियों तुम परमात्मा में इतने मग्न हो जाओ, जिससे संसार का तुम्हें ज्ञान न रहे, केवल परमात्मा के राष्ट्र में, परमात्मा की प्रतिभा में

रत्त रहते रहो, तो उसका नाम आध्यात्मिवाद कहा जाता है। वहां अन्धकार नही हैं, वहां आलस्य और प्रमाद नही हैं उसको त्यागना है, और प्रभु के राष्ट्र में प्रकाश में रहना। क्योंकि प्रभु का राष्ट्र प्रकाशमयी है, वहां रात्राणि नही हैं वहां अन्धकार नही हैं, वहां प्रकाश का चलन होता रहा है। तो आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता कहलाते हैं। तो आओ मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है, आध्यात्मिकवाद की चर्चाएं स्मरण आती रहती है, जहां बेटा! आध्यात्मिक अपने में बड़ा ऊर्ध्वा में गमन करता रहा है, आध्यात्मिकवादी कहां तक चला जाता है। सर्पराज भी उसके चरणों में गमन करता है, सिहराज भी उसकी वार्त्ता को श्रवण करता है, जब इतना विवेकी हृदय हो जाता है, इतना विवेकी आध्यात्मिवाद में विहरण हो जाता है। तो वह सिंहराज भी उसकी कृति चरणों में रत्त होते रहे है

आध्यात्मिकवाद की चर्चाएं, एक समय महर्षि श्वेत्ताश्वेतर अपने आसन पर विद्यमान थे, जब वह भयंकर वन में वेदों का अध्ययन कर रहे थे, तो अध्ययन करना उनका एक मौलिकता में रूप में गमन करते रहते थे। जब वह गान गाते तो स्वरों में तन्मय हो करके गान गाते आध्यात्मिकवाद मे प्रभु को संलग्न कराके कहते, हे प्रभु! तू महान है हे प्रभु! तू आध्यात्मिक वृत्तियों में रत्त रहने वाला है। हे प्रभु! तू महान है। तो सर्पराज, मृगराज, सिंहराज सब उनकी वाणी को, विवेकमयी दर्शनों को ओर प्रभु के उदगार को श्रवण करते रहते थे। जब श्रवण करते रहते हैं, तो ऋषिजन उनसे प्रश्न करते, कि महाराज! ऐसा क्या कारण है? जो सिंहराज हिंसक है वह अहिंसामयी बन जाता हैं। उन्होंने कहा कि प्रभु का जो राष्ट्र है वह अहिंसामयी है, वह हिंसा में नही है, प्रभु का राष्ट्र जब अहिंसा में रहता है, तो जब प्रभु के राष्ट्र में चले जाते हैं, तो वहां कोई हिंसक ही नही हैं, वहां सब अहिंसामयी परमोधर्म को अपनाते हैं। तो वह आध्यात्मिवाद कहलाता है। जो मानव इतना संलग्न हो जाएं, वह सबमें आत्मा स्वीकार करता हुआ, न घृणा करता है, न द्वेष करता है, न क्रोधाग्नि को जागरूक करता है, न तृष्णा में परिणत रहता है, सब कुछ त्याग देता है, और त्याग करके वह केवल एक प्रभु के राष्ट्र में अपने को स्वीकार करके और इदन्नमम् जो कुछ उसके द्वारा सम्पदा जो भी संसार है, वह सब प्रभु की रचना का रचनीय का वृत्तियों में रत्त होता रहा है। वह प्रभु की रचना स्वीकार करता है, तो वह आध्यात्मिकवाद कहलाता है।

तो सबसे प्रथम व्यवहार, उसके पश्चात विज्ञान और उसके पश्चात आध्यात्मिकवाद कहलाता है। यह आध्यात्मिकवाद अपने में बड़ा अद्वितीय और महान माना गया है। 30.10.1988

8 विज्ञान की पाञ्च गतियाँ

यह पाँच प्रकार की गतियाँ है, प्रसारण, गति, ध्रुवा, ऊर्ध्वा और आकुंचन इसी में सर्वत्र विज्ञान, चाहे वह विज्ञान इस पृथ्वी मण्डल का हो, चाहे मंगल का हो, चाहे किसी भी लोक लोकान्तरों में विज्ञानवेत्ता अपने में अनुसंधान करने वाले हो।

तो वह इन्हीं पाँचो प्रकार की गतियाँ, तीन प्रकार के परमाणु, वायु में गमन कराता हैं, ये पाँच प्रकार की गतियाँ प्रकृति की मानी गई है। तो इसी में विज्ञान अपने में गतिवान होता रहता है।

तो जब वे पृथ्वी विज्ञानवेताओं के समीप ले गए तो उन्होने कहा कि मेरे यहाँ ये पृथ्वी के ऊपर अनुसंधान हो रहा है। कितनी दूरी पर कौन खनिज विद्यमान है, कितनी दूरी पर कौन सा परमाणु अपने में गतिवान हो रहा है। पृथ्वी के विज्ञानवेत्ता कितनी दूरी पर, कौन सा खनिज है, कौन सा परमाणु गमन कर रहा है। जल कितनी दूरी पर शक्तिशाली बन रहा है। सूर्य की किरणें कहाँ, कहाँ क्या, क्या क्रियाकलाप कर रही है। तो उसी में वो रत्त हो रहा है। उसी में गमन कर रहा है और खाद्यान्न के ऊपर अन्वेषण करने वाला, कितना खाद्य कितनी दूरी से ये उपज करके कितनी दूरी पर अनुवृत्त होता रहता है। 01.10.1988

9 परमाणु में ब्रह्माण्ड दर्शन

जब वे सूर्य अनुसंधानशाला और अग्नि अनुसंधानशाला में पहुँचे, तो अपने में बड़ा नृत हो रहा है। जैसे आयुर्वेद आचार्य 85 प्रकार की अग्नियाँ स्वीकार करते हैं। आयुर्वेद विज्ञानवेत्ता जब 85वीं धारा का विभाजन करते हैं तो उसमें से अरबों, खरबों प्रकार की अग्नि उत्पन्न हो जाती है। उन धाराओं का जन्म हो जाता है और वही धारा अग्नि की विचित्र धारा बन करके वैज्ञानिक जब उसमें रत्त होता है, तो अणु और परमाणु में चला जाता है। अणु और परमाणु का विभाजन करता है तो ब्रह्माण्ड का दर्शन होने लगता है और जब ब्रह्माण्ड का दर्शन होता है तो उसी अणु में से एक त्रिसरेणु का जन्म होता है, उस त्रिसरेणु का विभाजन किया जाता, तो उसमें भी ब्रह्माण्ड का दर्शन है। कैसी अनन्तता वाला प्रभु का विज्ञान है।

आज जब मानव इसके ऊपर अन्वेषण विचार विनिमय करता है तो एक परमाणु है जो माता के गर्भस्थल में शिशु के साथ में, गमन करता है। जब वैज्ञानिकों ने भारद्वाज की विज्ञानशाला में जब उसका विभाजन किया गया तो यंत्रों के द्वारा नाना पुरूषों के चित्र दृष्टिपात आने लगे। तो माता के गर्भस्थल में भी इसी प्रकार का निर्माणवेत्ता निर्माण करता रहता, निर्माण हो रहा है। 01.10.1988

बहत्तर लोकों का भ्रमण करता हुआ पुनः पृथ्वी मण्डल पर, ऋषि के आश्रम में, दण्डक वन में प्रवेश हो जाता है।

10 भौतिक व आध्यात्मिक विज्ञान

महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा हे ब्रह्मचारियों! तुम्हारा विज्ञान बड़ा अनुपम है और तुम्हारे विज्ञान की धाराएं लोक लोकांतरों में गमन करती है। परन्तु जहाँ तुम्हारा भौतिक विज्ञान इतना महान है वहाँ आध्यात्मिक विज्ञान भी महान रहना चाहिए। आध्यात्मिकवाद क्या है, भौतिक विज्ञान क्या है। भौतिक विज्ञान में तो यन्त्रों का निर्माण है, अस्त्रों शस्त्रों की प्रतिभा है, उसमें अभ्यस्त होना है। और, आध्यात्मिकवाद वह है जहाँ आत्मा के ऊपर मानव चिन्तन करता रहता है। आत्मा के जो अवयव हैं, अंग संग रहने वाला हैं उन्हें वह जानता रहता है और उनके ऊपर अध्ययन करता रहता है। महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने विद्यालय में, जहाँ वह भौतिक विज्ञान की चर्चा करते रहते, वहाँ आध्यात्मिक विज्ञान उनकी पराकाष्ठा में गमन करता रहता था। 26.03.1989

जितने भी लोक लोकान्तरों के पिण्डाकार बने हुए हैं चाहे वह सूर्य है, चाहे वह मंगल है, चाहे वह बुद्ध, शुक्र है कोई भी मण्डल हो, मण्डलों का जो निर्माण हो रहा है वह केवल इसी गुरूत्व और तरलत्व, तेजोमयी को ले करके निर्माणित हो रहा है। यह पिण्डों का निर्माण का निर्माणदाता है यह पिण्डों का जन्मदाता हैं 11.06.1992

यह पंच महाभूत हैं और पंच महाभूतों में अन्तरिक्ष है और, वायु है और तेजोमयी अग्नि है और जल और गुरुत्व, जिसे पृथ्वी कहा जाता है। ये पंच महाभूत इनको मानव जान करके याग करने वाला हो। जितना विज्ञान है संसार में, चाहे वह परमपिता परमात्मा से गुथा हुआ हो, चाहे वह मानवीयता से गुथा हुआ हो परन्तु तीन प्रकार के परमाणुओं को जाना जाता है। सबसे प्रथम तेजोमयी परमाणु और तरलत्व और, गुरुत्व इन परमाणुओं को जानता हुआ इन परमाणुओं को वायु गति देता है और, अन्तरिक्ष में वह गमन करते हैं इसी प्रकार जब हम परमाणुवाद में प्रवेश करने लगते हैं, तो जितना संसार का विज्ञान है चाहे वह अन्तरिक्ष में गमन करने वाला हो चाहे वह विज्ञान सूर्य मण्डल में रमण करने वाला हो चाहे वह मंगल का वैज्ञानिक हो, चाहे वह ध्रुव मण्डल का वैज्ञानिक क्यों न हो परन्तु वह किसी भी लोक लोकान्तरों में रमण करने वाला विज्ञानवेत्ता हो, वह इन तीन गतियों में रमण करता रहता है।

वह तेजोमयी, तरलत्व और गुरुत्व, इन परमाणुओं में गमन करता रहता है। इन्हीं परमाणुओं से वायु, इन परमाणुओ को गति देती है और अन्तरिक्ष में गमन करता है तो यह अमृत बन जाता है। महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के विद्यालय में ब्रह्मचारी वैज्ञानिक यन्त्रो में भ्रमण करते हुए वह नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में गमन करते रहे हैं। बहत्तर बहत्तर लोकों का भ्रमण करने के पश्चात यन्त्र उनका पुनः आश्रम में प्रवेश हो जाता था। यह परमाणुवाद है। परमाणुवाद के ऊपर, आचार्य ने कहा है कि इन पंच महाभूतों को जान करके जब यज्ञमान याग करता है, तो प्रकृति के ऊपर उसका अधिपथ्य हो जाता है और प्रकृतिवाद को जब नीचे दबा लेता है तो उसका ऊर्ध्वामयी गमन करने लगता है। 21.06.1992

11 दक्षिणी ध्रुव की स्थिति

मैं आधुनिक काल के कुछ वैज्ञानिकों की, कुछ चर्चा भी प्रकट करूँगा। जो भौतिक विज्ञानवेत्ता हैं वह समुद्र के तट पर किसीकिसी काल में अपनी सभाएँ करते हैं। अपना एक समूह एकत्रित होता है तो चिन्तन होता रहता है। समुद्र में दक्षिणी ध्रुव के आँगन में एक स्थली इस प्रकार की है जहाँ भौतिक वैज्ञानिकों का यन्त्र वहाँ गया, तो वह यन्त्र समाप्त हो जाता है। परन्तु किसी किसी काल में वह यन्त्र समाप्त नहीं होता है। आधुनिक काल के वैज्ञानिकों का ऐसा मत है, कुछ वैज्ञानिकों का तो यह मत है कि पूर्व काल के वैज्ञानिकों की एक स्थली यहाँ बनी हुई है। कुछ वैज्ञानिकों का यह मत है कि कुछ लोकों की किरणें इस प्रकार की आती हैं। कुछ वैज्ञानिकों का यह मत है, कि समुद्र में एक अग्नि का भण्डार है। समुद्रों में किसी काल में अग्नि के भण्डार में से तरंगों का जन्म होता है, वे विषैली तरंगों का जन्म हो करके, यन्त्र को भस्माभूत कर देता है। परन्तु आधुनिक काल के वैज्ञानिकों का नाना प्रकार का मन्तव्य, मैं वर्णन कर रहा हूँ।

पूर्वकाल में जब यहाँ महर्षि भारद्वाज या महर्षि सुकेता इत्यादियों का काल या वैज्ञानिकों का, जिन्होंने एकएक यन्त्र में नक्षत्रों में यान गति करते थे उनके यानों की प्रतिभा आधुनिक काल का कुछ वैज्ञानिक यह कुछ स्वीकार करता है, कि पूर्व काल का विज्ञान विशाल रहा है। कुछ वैज्ञानिक यह कहते हैं कि नहीं, इस विज्ञान की उपलब्धि अभी हुई है। परन्तु जब महर्षि कणाद और महर्षि सुकेता इत्यादियों की विवेचनाएँ आती हैं, आधुनिक काल का विज्ञान इकाई में रमण कर रहा है। यह तो इकाई वाला विज्ञान है। 13.11.1983

12 मानव मस्तिष्क में विज्ञान

जितना भी यह भौतिकवाद हमें दृष्टिपात आ रहा है। इस भौतिकवाद के आंगन में, प्रत्येक मानव, विज्ञान में गति कर रहा है। परन्तु यह जो विज्ञान है, यह प्रत्येक मानव के मस्तिष्क में विद्यमान है। प्रत्येक मानव यदि साधनों से उपार्जित हो जाए, तो वह सूर्य की यात्रा भी करने लगता है। चन्द्रमा का यात्री भी बन जाता है। मंगल और बुध में रमण करता है। और भी नाना प्रकार के लोकों में गति करने लगता है। परन्तु यह कैसे? यह आध्यात्मिक मार्ग वाला जितना व्यक्ति है, वह इस मार्ग से हो करके ही वह गति कर रहा है। यदि भौतिकवाद को

जानता हुआ, मानव उपरामता को प्राप्त नहीं होता है। तो वह आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता नहीं बन सकता। क्योंकि आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता उसी काल में बनता है, जब वह इस संसार से उपराम हो जाता है। और उपराम तब होता है जब इसको जान लेता है। यदि हम मानव शरीर को नहीं जानते, इस मानवीय ब्रह्माण्ड को नहीं जानते, तो हम बाह्य जगत को भी नहीं जान सकते। परन्तु बाह्य जगत में जितना भी क्रियाकलाप हो रहा है, वह मानव के आन्तरिक जगत में भी हो रहा है। 05.03.1982

मानव जब बाह्य जगत को, आन्तरिक जगत में दृष्टिपात करता है, तो यह भौतिकवाद के मार्ग से हो करके जाता है। अब यह भौतिकवाद क्या है? आध्यात्मिकवाद क्या है? भौतिकवाद उसे कहते है, जितना भी संसार का व्यापार है। व्यापार क्या है? एक मानव प्रातः काल अपनी स्थली से पृथक् होता है, वह जब पृथक् होता है, तो अपने कार्यो में रत्त हो जाता है। परन्तु जो वैज्ञानिक है, वह विज्ञान को विचारता है। जो मानव धर्म के मर्म को जानता है याज्ञिक पुरुष, वह यज्ञ करने में लग जाता है। जो साधक जन होते है, वे साधना में रत्त हो जाते है। प्रभु का चिन्तन करते है। और जो भी जिसका व्यापार है वह सत्यता में रमण करता हैं, वह होते, किस प्रतिक्रिया से है? इस मानव के द्वारा। 05.03.1982

13 परमाणुवाद का कोष

यह मानव शरीर पंजीकरण कहलाता है। इस पंचीकरण में, पंच महाभूत कहलाते है। पंच इन्द्रियाँ कहलाती है, उन इन्द्रियों से जो भी व्यापार हो रहा है, उस व्यापार का नाम भौतिकवाद कहलाता है। इन इन्द्रियों को समेट करके, जब मानव एकत्रित हो करके और भी गम्भीर क्षेत्र में रमण करते है, परन्तु सूक्ष्मता से इन इन्द्रियों का और बुद्धि और मन का जब समन्वय होता है, दोनों का जब समन्वय होता है, बुद्धि, मेधा के द्वारा प्रवेश करती रहती है तो यह जो तरंगवाद रमण कर रहा है, तरंगों में यह मानव ओत प्रोत है। उन तरंगों में जो जो भी वस्तु गति कर रही है उन गतियों को जानने लगता है। उन गतियों में रत्त हो जाता है। आगे चल रहा है परन्तु मार्गवेत्ता है। वह मार्गों में रमण करना चाहता है, सूर्य की नाना किरण आ रही है, चन्द्रमा की कान्ति आ रही है, वायु गति में, गतिशील हो करके प्राण दे रही है, अग्नि अपने तेज से संसार को तेजस्वी बना रही है। अन्तरिक्ष, परमाणुवाद का कोष माना गया है। तो इसमें अपनी इन्द्रियों के, सूक्ष्म विषयों को ले जाता है। क्योंकि वह अंकुरित, मानव शरीर में विद्यमान है। 05.03.1982

14 ब्रह्माण्ड का कोष

इस ब्रह्माण्ड में, जो भी लोक लोकान्तर, निहारिका है उसकी छाया इस मानव शरीर में होती है। और वह उसके ऊपर कल्पना करता रहता है कल्पना तब ही आती है जब उसका कोई न कोई अंकुर उसके साथ होता है। यदि अंकुर नहीं होगा, तो कल्पना भी नहीं होगी। यदि अंकुर नहीं होगा, तो वह उस विषय के लिए, अनुसन्धान भी नहीं कर रहा। परन्तु वह जो पंच महाभूत है, उन पंच महाभूतों में, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड का कोष कहलाता है। उसमें सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान में विद्यमान रहता है। चाहे, वह सूर्य की उड़ान करने वाला मानव हो, चाहे वह चन्द्रमा की उड़ान करने वाला हो, चाहे वह मंगल में जाने वाला हो, चाहे वह निहारिकाओं में गति करने वाला हो। चाहे, वह सूर्य की किरणों के साथ अन्तरिक्ष में गति करने वाला हो। परन्तु यह सर्वत्र, उन पंच महाभूतों में माना गया है। जिन महाभूतों में, यह द्यौ में, जो ओत प्रोत हो जाते है, द्यौ से प्रकाश आता है, वह प्रकाश सूर्य में पहुँचता है। सूर्य जब प्रकाशक बन करके, प्रकाश देता है। उन किरणों को वैज्ञानिक अपने में धारण करता है। 05.03.1982

15 परमाणुवाद का सूत्र

नाना प्रकार के वैज्ञानिक, परम्परागतों से ही, नाना प्रकार की गाथाएं, नाना प्रकार की आभा में रमण कर रहे है।, इस माता वसुन्धरा के गर्भ में एक योगी है, वह योगेश्वर बन करके सूर्य की किरणों के साथ, सूर्य मण्डल में गति करता है। एक वैज्ञानिक है, यन्त्रों का निर्माण करके उसके गर्भ में, प्रभु के गर्भ में उड़ान उड़ रहा है। कैसी उड़ान उड़ रहा एक समय भारद्वाज मुनि से कुम्भकरण ने यह कहा कि महाराज! हम यह जानना चाहते है कि यह जो परमाणुवाद है इस परमाणुवाद का सूत्र क्या है? उन्होंने कहा कि परमाणुवाद का सूत्र गति है, उन्होंने कहा गति का सूत्र क्या है? तो भारद्वाज मुनि ने कहा कि गति का सूत्र चेतना है और उस चेतना का नाम ही परमपिता परमात्मा माना गया है। तो यह सिद्ध हुआ, कि हम उस माता के गर्भस्थल में विद्यमान है जहाँ संसार का सूत्र बना हुआ है जैसे प्राण एक सूत्र कहलाता है, प्रत्येक प्राणियों में प्राण गति कर रहा है और वह प्राण ही सूत्र कहलाता है, प्राण से ही बना हुआ मनस्तव माना गया है, उसी से मनस्तव, प्राणत्व आत्मा भी उसी के आश्रित रहता है। कहीं आत्मा के आश्रित प्राण रहता है कहीं प्राण के आश्रित आत्मा रहता है। 24.03.1982

16 प्रकृति की गतियों में ब्रह्म का दिग्दर्शन

उन्होंने कहा देवी! मैं प्रयत्न तो कर रहा हूं, परन्तु मेरा अन्तर्हृदय नास्तिकता के आंगन में जा रहा है, क्योंकि मैंने विज्ञान को बहुत जाना है। मैं इस विज्ञान को जाना है, कि मेरा अन्तर्हृदय यह कह रहा है कि पांच गति इस प्रकृति की होती है। पांचों गतियों में जब मैं गति करता हूं

तो मुझे ब्रह्म के दर्शन नहीं होते।उन गतियों में ब्रह्म का दिग्दर्शन नहीं होता। जब मुझे ब्रह्म का दिग्दर्शन नहीं होता तो मेरी नास्तिकता की दशा बन गई है। 06.01.1983

17 याग से विज्ञान

ऋषि के आश्चर्यमयी विज्ञान को दृष्टिपात करके ऋषि बड़े प्रसन्न हुए, उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! उन्होंने कहा कि मेरे यहाँ और भी नाना प्रकार के यन्त्र है जो सूर्य की किरणों के साथ में गमन करते है, और सूर्य की परिक्रमा करते है, मैंने महर्षि स्वाति अन्धेत मुनि महाराज की सहायता से एक यन्त्र प्राप्त किया है, जिस यन्त्र में यह विशेषता है किवह ध्रुव की परिक्रमा करता रहता है और उसमें उसका जो आयु है जो भ्रमण कर रहा है उसका आयु एक एक लाख लाख वर्षों का आयु है तो इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण, प्रायः हमारी विज्ञानशाला में, हम यज्ञशाला में प्रविष्ट हो करके, याग के माध्यम से यन्त्रों में प्रवेश करते रहे है। 05.08.1989

18 यज्ञ समिधा से परमाणु

जितनी वनस्पतियां अग्नि में परिणत करते है। प्रत्येक औषधि को ले करके, प्रत्येक औषधि के साठ प्रकार के सूक्ष्म परमाणु बना लेती है, और वह औषधियों में किसी मे पार्थिव तत्व की अधिकता है किसी में अग्नि की प्रधानता है जैसे समिधा है, चन्दन में इतनी सुगन्धि होती है अहा, चन्दन में अग्नि की प्रधानता है, क्योंकि उसमें प्रतिभा है। इस प्रकार जैसे पीपल का वृक्ष है पीपल के वृक्ष में उसमें आंकुचन करने की बहुत शक्ति होती है इसीलिए पीपल का वृक्ष हमारे यहाँ यज्ञशाला में महावृत स्वीकार किया गया है, जैसे वट वृक्ष है, वट वृक्ष की समिधाओं में लगभग एक समिधा को जब हम अग्नि में प्रदीप्त कर देते हैं उससे वायु तत्व की और पार्थिव तत्व की, हम पार्थिव और वायु दोनों की प्रधानता स्वीकार करते हैं उसमें, जब अग्नि से वह सुगन्धि देती है, तो उसमें से लगभग निन्यानवें प्रकार के परमाणुओं की उत्पति होने लगती है। 20.08.1969

19 तत्वों से परमाणु

इसी प्रकार से एक एक करके, यह अग्नि जब सूक्ष्म परमाणु बनाती है सूक्ष्म अग्नि के कितने परमाणु हैं? कितने प्रकार के परमाणु उत्पन्न होते हैं अब एक दूसरे परमाणु में गति जानने लगोगे, और जानते रहोगे तो एक दूसरे यन्त्र का भी तुम निकास करते रहोगे और, वायु तत्व प्रधानता का तुम्हें यन्त्र बनाना है, तो उसमें वायु के परमाणुओं को तुम्हें निकासना होगा।अब उनका अनुसन्धान करना होगा, कैसे निकासा जाए, यह मस्तिष्क में उसको विचारा जाए, उन धातुओं को वसुन्धरा से लिया जाए, वसुन्धरा से जब वह धातु ली जाती है एक धातु का, दूसरी धातु से मिलान करते हैं, तो वह धातु, वह परमाणु, जो भ्रमण कर रहे हैं, तत्व में, तत्व प्रधानता में, वह इसके साथ साथ इनका मिलान होता है और वह एक दूसरी वसुन्धरा की, जब हम एक दूसरें से मिलान करते हैं, मिलान करके वह परमाणु सुगठित हो जाते हैं, उनमें व्यापकवाद प्रकृति का स्वभाविक गुण होता है, क्योंकि, वायु में व्यापकवाद है, अग्नि में प्रसारण शक्ति अधिक होती है, अब ऐसे उन परमाणुओं को जानने से ही हम आगे चल सकते हैं एक मार्ग यह है कि जो हम विज्ञान का मार्ग प्राप्त करते हैं परन्तु यह मार्ग कहां तक सम्बन्धित होता है यह आगे चल करके हम शान्त हो गए कि जितनी बुद्धि सूक्ष्म होती चली जाएगी, जितना इसमें सूक्ष्मवाद और व्यापकवाद की तरंगे आती रहेगी, उतना ही परमाणुवाद को हम सुगठित कर सकते हैं। आगे चल करके इस मार्ग को हम प्राप्त करते हुएं, इसमें हमें नाना प्रकार की धातु और द्रव्य इत्यादियों की आवश्यकता रहती है, स्वर्ण की आवश्यकता रहती है, क्योंकि स्वर्ण में विद्युत अधिक होती है और जैसे अग्नि हैं, विद्युत को हमारें यहाँ यज्ञशाला में परिणत की जाती है, और एक अग्नि वह है, जो अग्नि हमारे यहाँ विद्युत बन करके प्रकाश देती है, एक वह अग्नि है जो विद्युत को प्रकाशित करती है, एक वह अग्नि है जो तरंगों में रमण करके भ्रमण करती है। परन्तु जितनी प्रकार की विद्युत होती है, उतने ही परमाणु होते हैं, वह अग्नि भी जैसे अग्नि और मिलान से अग्नि और वायु और जल के दोनो के मिलान से इसमें जल का मिश्रण और पृथ्वी का मिश्रण करने से ही वह स्वयं अग्नि के और जिसको हम विद्युत के परमाणु सुगठित हो जाते हैं और वह परमाणु एकत्रित हो जाते हैं, इसी प्रकार परमाणुवाद, एक दूसरा दूसरी समिधा से सुगठित करने से, वह एकत्रित हो जाते हैं, हमारे यहा विद्युत से भी सूक्ष्म है, ऐसी ऐसी सूक्ष्म धातु हैं, जो विद्युत को भी निगल जाती हैं।

जैसे मुत्यु निगल जाती है, इसी प्रकार विद्युत को निगलने वाली भी धातु है, परन्तु इनको जानने के लिए वास्तव में हम उद्यत रहें और वेद का अध्ययन करेंगे और वेद से वस्तुओं का प्राप्त करने का प्रयास करें, तो वह प्राप्त हो सकती हैं। 20.08.1969

20 नाना प्रकार का विज्ञान

वेद का विज्ञान भी परम्परागतों से ही माना गया है। वेद नाम तो प्रकाश को कहा गया है, वह जो प्रकाश है वह तो परम्परा से है। क्योंकि प्रकृति का जितना भी परमाणुवाद है, अथवा जितना भी प्रकृतिवाद है, इसके अन्तर्गत विज्ञान की परिक्रमा होती रहती है प्रभु का जो नक्षत्रवाद है, कितना विचित्र है एक दूसरा मण्डल एक दूसरे को सहायता दे रहा है, सूर्य मण्डल के अन्तर्गत करोड़ों मण्डल इस प्रकार के

हैं, जो सूर्य मण्डल के हैं, जो सूर्य मण्डल की सहायता पा करके क्रीड़ा कर रहे हैं, अपने अपने आँगन में भ्रमण कर रहे हैं, लगभग बृहस्पति की सहायता से ऐसे हैं, कई करोड़ मण्डल ऐसे हैं, जो उसकी सहायता से भ्रमण कर रहे हैं, जेठाय न्क्षत्र हैं जिसमें सहस्रों बृहस्पति समा जाते हैं, वह जो जेठाय नक्षत्र है, वह उसके प्रकाश से उसकी क्रीड़ा से अरबों खरबों मण्डल उसकी सहायता से सहायता पा करके अपने अपने आँगन में परिणत हो जाते हैं। 05.03.1973

21 मानव मन में विज्ञान जिज्ञसा का आधार

आज का संसार तो चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है। मंगल और बुध इत्यादियों में भ्रमण किया जाता था, और समय आता रहता है उसी प्रकार विज्ञान उन्नतशील होता रहता है। 03.09.1969

महर्षि भृंगी जी ने कहा कि मेरे विचारों में तो ऐसा आता है कि मानव के मस्तिष्क का हृदय से सम्बन्ध होता है, तो उस समय मानव के हृदय में, मानव के मस्तिष्क में वह अंकुर होते हैं, वह उपज होती है, उनकेद्वारा जिनका अन्तःकरण में, सूक्ष्म अंकुर विराजमान होते है, जिस प्रकार एक मानव, चन्द्र मण्डल के सम्बन्ध में जानना चाहता है, वही मानव मंगल की कल्पना कर रहा है, वही मानव सूर्य की नाना किरणों की कल्पना कर रहा है, वही मानव ओर भी नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की कल्पना करता रहता है, ऐसी मानव की हृदय में पिपासा क्यों जागरूक होती है? उसको वह जानता नही हैं।

उन्होंने कहा प्रभु! मैं यह जानना चाहता हूं, कि मानव के हृदय में इस प्रकार की पिपासा क्यों जागरूक होती है? इसका मूल कारण क्या है? तो जब ऋषि ने कहा, मानव का, जिसे ब्रह्मरन्ध्र कहते हैं, उसमें सूक्ष्म सूक्ष्म वाहक नाड़ियां होती हैं, जिनका सम्बन्ध नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों से होता है, पंच तन्मात्राओं से होता है, जिन पंच तन्मात्राओं से यह सर्वस्व जगत की रचना है, द्यौ लोक की रचना मानी गई है, । इस प्रकार परमात्मा का जो हृदय है, वह द्यौ लोक माना जाता है। जैसे मानव के हृदय में नाना प्रकार की तरंगे सूक्ष्मतम हो करके, उनमें जागरूकता आती रहती है, सुषुप्ति अवस्था वाले जो अंकुर होते हैं, वह जागरूक होते रहते हैं। इसी प्रकार प्रभु का जो हृदय है, जिसे हमारे यहाँ द्यौ लोक कहा जाता है, जिसमें शब्दावली विराजमान हो जाती है, जिसमें पंच तन्मात्रओं में, जो नाना प्रकार की ध्वनि होती है, मिलान करने के पश्चात, उनका समूह भी महान परमात्मा के हृदय में, जिसे हमारे यहाँ द्यौ लोक कहा जाता है, जिसमें सहस्त्रों प्रकार की मन की तरंगे रमण करती रहती हैं, बुद्धि की तरंगें रमण करती रहती है, जिसमें मानव का आन्तरिक और बाह्य विचार दोनों ही भ्रमण करते रहते हैं। 12.04.1971

22 भौतिक विज्ञान से अध्यात्मवाद

परन्तु हमारे ऋषि मुनियों ने यह कहा है कि यह जो विज्ञान है, परमाणुवाद है, यह जो चन्द्रयान है, नाना प्रकार के जो यान हैं, यह परमाणुवाद जहाँ समाप्त होता है, वहाँ अध्यात्मिकवाद का, धर्म का, प्रारम्भ हो जाता हैं। जब अध्यात्मिकवाद में जाने का मानव प्रयास करता है, उसे यह दृष्टिपात करने लगता है। जब हम उस युग में चले जाते हैं, जिस युग में आत्मा को उत्थानित बनाया जाता है, जिसमें मानव अपनी यौगिक प्रक्रियाओं को जानने लगता है, जिस काल में यज्ञ की सुगन्धि ही सुगन्धि समाज में ओत प्रोत हो जाती है, परमाणुवाद को, यज्ञ की सुगन्धि निगल जाती है। वेद मार्ग को मानव अपनाए। 16.10.1971

23 प्रकृति के स्वाभाविक गुण

प्रकृति की पांचों आभाओं का जन्म होता रहता है। किसी भी काल में, प्रभु ने जब यह संसार रचा, इस पृथ्वी में, जब किसी चेतना का समन्वय हुआ, चेतना से मिलान होते ही, ये पांचों प्रकृति के स्वभाव जागरूक हो गए और पांचों स्वभाव कौन से हैं? वे स्वाभाविक गुण हैं प्रकृति के, प्रसारण हैं, गति है, ऊर्ध्वा है, ध्रुवा है, और आकुंचन है। ये पांच इसके स्वभाविक गुण हैं। 16.03.1983

भगवान कृष्ण और नाना ऋषि मुनियों का जीवन स्मरण आता रहता है। ऋषि मुनि यन्त्रों का निर्माण करके कहीं वह मंगल में गए हैं, कहीं वह सूर्य लोकों तक की यात्राएं हमारे आचार्यों ने विज्ञान के द्वारा की हैं। जैसे सूर्य की किरण गति कर रही है, उसी के साथ अपनी प्रवृत्ति को ले जाना, अपनी मन की धाराओं को ले जाना, उनके ऊपर जब गम्भीर अध्ययन करना, यही अपने मानवीय जीवन का अध्ययन करना है। परन्तु, यहाँ नाना प्रकार के चित्र अन्तरिक्ष में गति करते रहते हैं। 17.03.1983

24 ऋषियों को समाधि में विज्ञान बोध

वह जो शनि मण्डल है जिसमें पांच सूर्य प्रकाश दे रहे हैं उसमें कितनी पृथ्वियों का निर्माण हो सकता है?तो विचारने से प्रतीत हुआ कि यह जो प्रभु का ब्रह्माण्ड है, प्रभु का यह रचाया हुआ जो जगत है यह इतना अनन्तमयी माना गया है क्या एक परमाणु है, एक अणु है, एक कृतिका है, एक स्वदिति है, इन चारों का जब समन्वय किया जाता है तो असंख्य सूर्य उस परमाणुवाद में, समाधि में ऋषियों को दृष्टिपात आते रहे हैं।

तो भौतिकवाद का जो विज्ञान है बिना समाधि, बिना आध्यात्मिकवाद के विज्ञान की एक इकाई में रमण करता रहता है। इकाईयों में रमण करता हुआ, अपने में एक इकाई है। परन्तु वह समोवृत्तियों में अनेकता मानी गई है।

महाराजा शिव और माता पार्वती से महाराजा हनुमानव शोभानी ऋषि की विज्ञान चर्चाएँ, हनुमान जी व शोभनी ऋषि के समीप एक वेदमन्त्र आया और वह वेदमन्त्र यह कहता था

स्वाचं वचत्प्रवः पुरातन ब्रह्म वाचोः देवं घृति प्रतियात्वाचम्शनिव्रतोः वाचं ब्रह्मवाचोः वाचं ब्रह्मा ब्रह्मा अग्नि रुद्र भागः।

जब उन्हें यह वेद का मन्त्र स्मरण आया, वेदमन्त्र को चिन्तन में लाते हुए, जब अनन्य यह ब्रह्माण्ड, अनन्य शनि दृष्टिपात आने लगे, तो इसी वेद मन्त्र को, अपने अनुभव को ले करके, वह महाराजा शिव केद्वार पर पहुंचे। हिमालय में महाराजा शिव, माता पार्वती अनुसन्धान करते थे। उनके बाल्य महाराजा गणेश जी, वेभी अनुसंधान करते थे, क्योंकि उनकी बुद्धि में इतनी प्रखरता थी, कि लेखनी कदापि भी उनकी शान्त नहीं होती थी। वे अपने विचारों को लेखनीबद्ध करते रहते थे, वे पिता के चरणों में ओत प्रोत है चरणों में विद्यमान हो करके वह अनुसन्धान कर रहा हैं।

इतने में हनुमान और शोभनी ऋषि दोनों उनके समीप पहुंचे। महाराजा गणेश जी ने अपने आसन को त्यागकर कहा आइए भगवन! उन्हें आसन दिया। वे आसनों पर विद्यमान हो गए। गणेश जी ने कहा कि क्या चिन्तन है?

तो शोभनी और महाराजा हनुमान जी ने कहा कि एक वेदमन्त्र हैहमने श्रवण किया है, कि आप लेखनियाँ बद्ध करते रहते हैं। लेखनी का जो सम्बन्ध है वह मानव के हृदय से है और यह जो हृदय है यह ब्रह्म का आयतन है, क्योंकि यह जो जगत है, यह ब्रह्म का हृदय है, और हृदय ब्रह्म का आयतन है, इसीलिए आपका जो हृदय है, सब हृदयब्रह्म का आयतन है, लेखनीबद्ध करते हुए, आपने उस ब्रह्म के गृह को जान लिया है। तो प्रभु! इस वेदमन्त्र को ले करके आपके समीप आ पहुंचे हैं। 05.03.1984

25 जगत की गतियाँ

जब महर्षि पतंजलि जी से यह प्रश्न किया गया कि महाराज! यह जो दृष्टिपात आने वाला जगत है, इसकी कितनी गतियां हैं? तो महर्षि ने यह वर्णन किया कि प्रसारण, गति, ध्रुवा, उर्ध्वा और आकुन्चन, इन, पाँच प्रकार की गतियों में ये सर्वत्र जगत, हमें दृष्टिपात आ रहा है। चाहे वह इस देवत्व में हो, परन्तु पांच प्रकार से विज्ञान दृष्टिपात आता है।

सबसे प्रथम प्रसारण, उसका फैलाव वृतियों में रत होना उसे प्रसारण कहते हैं। और गति, वही प्रसारण भी हो, उसमें गति भी हो, उसमें ध्रुवा और उर्ध्वा हो और उसमे आकुंचन, उसमें एक वृत्ति आकुंचित होनी चाहिए। तो ये पांच प्रकार की गति है, इस प्रकृति की। इन पांचों प्रकार की गतियों में, मानव को रमण करना है और पांचों प्रकार की गतियों को जानने का नाम विज्ञान कहा जाता है। इसी विज्ञान में मानव को रत्त रहना चाहिए। तो प्रसारण में आकुंचन और गतियों में रमण करने वाला ध्रुवा और उर्ध्वा में वृतियां हैं, उसका नाम विज्ञान है। हमें विज्ञान में रमण करना चाहिए, विज्ञान की मौलिक धाराओं को जानना चाहिए। 30.09.1988

26 विज्ञान

हमारे वैदिक साहित्य में जहाँ व्यवहार है, वहाँ विज्ञान है। विज्ञान अपने कक्ष में, बड़ी उर्ध्वा से गमन करता रहा है। जितना भी यह जगत है, वह तीन प्रकार के मण्डल दूसरे की परिक्रमा कर रहे है और जब वह एक दूसरे की परिक्रमा में निहित हो रहे है, तो उसका कोई सूत्र है। उस सूत्र को हमारे यहाँ किसी ने प्राण सत्ता माना है, कोई कोई उसे विकृति रूपों में स्वीकार करते है। परन्तु परिणाम यह कि विज्ञान अपने में सार्थक रहना चाहिए। विज्ञान उसे कहते हैं पृथ्वी के गर्भ में जाना परमाणुओं की जो आदान प्रदानता हो रही है उस परमाणुओं को जान करके उसके स्थूल रूप को जानना है और जान करके सूक्ष्मता को स्थूल रूप में निर्माणित करना है।

तो वह हमारे यहाँ विज्ञान माना गया है। उस विज्ञान का जो भौतिकवाद है, जैसे मानव अपनी अनुसंधानशाला में विद्यमान हो रहा है, एक दूसरे परमाणु का मिलान कर रहा है, एक धातु का एक धातु से समन्वय कर रहा है, वह जो धातु पिपाद का समन्वय हो रहा है उस समन्वयी धारा को सूक्ष्म बनाना, सूक्ष्मत्व से जानना और उसको साकार रूप देने का नाम विज्ञान माना गया है।

जैसे हमारे यहाँ यज्ञशाला है, उस यज्ञशाला में यज्ञमान आहुति दे रहा है, और अग्नि जब उसको सूक्ष्म बना देती है, द्वितीय रूपों में परिणत कर देती है, तो अग्नि की धाराओं पर जो भी विराजमान हो जाता है, वह उसका विशाल रूप बन जाता है, तो उसका नाम भौतिक विज्ञान है। उस शब्द को जानना, अंतरिक्ष में लय हो जाना, अंतरिक्ष से उसे उर्ध्वा में लाना, ये सब विज्ञान कहलाता है।

हमारे वैदिक साहित्य में विज्ञान का बड़ा महत्त्व आया है बड़ी मौलिकता आयी है, क्योंकि परम्परागतों से ऋषि मुनि अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके वे भौतिक विज्ञान में भी रत्त होते रहे हैं। जहाँ उनका भौतिकवाद या व्यवहार और आध्यात्मिकवाद दोनों ऊर्ध्वा में रहे हैं, वहाँ उनका विज्ञान भी बड़ा मौलिक रूपों में रमण करता रहा है।

यह भौतिक विज्ञान अपने में बड़ा ऊर्ध्वा में गमन करता है, क्योंकि पांच प्रकार की जो प्रवृत्तियाँ हैं, प्रकृति का जो स्वरूप है, वह पांच प्रकार के रूपों में विद्यमान रहता है। 30.09.1988

27 तीन परमाणु

वह तीन प्रकार के परमाणुओं में निहित और प्रभावित रहता है। तीन प्रकार के परमाणुवाद में ही सर्वत्र विज्ञान विद्यमान है, चाहे वह इस पृथ्वी मण्डल में हो, चाहे मंगल मण्डल से हो, किसी भी लोक लोकान्तर में विज्ञान हो, परन्तु वह तीन प्रकार के परमाणुओं से घिरा हुआ है। परमाणु तीन हैं, गति देने वाली वायु है और जहाँ गतिवान हो रहा है उसका नाम अन्तरिक्ष है। तो यह इसमें एक स्थली में विज्ञान है और तीसरा रूप आध्यात्मिकवाद कहलाता है। 30.09.1988

28 वेदों में विज्ञान

यह विज्ञान वेदों से आया।आज के आर्यावर्त वालों की बुद्धि कितनी सूक्ष्म है, आर्यावर्त के वैज्ञानिक कहते है, कि यह जो हमारा विज्ञान है यह तो पश्चिम से आया है। परन्तु पश्चिम में विज्ञान कहाँ से आया? उनके धर्म में विज्ञान नहीं, उनके विचारों में विज्ञान कहाँ से आया? विज्ञान तो वे चुनते हैं, जहाँ अच्छे पुरुष राजाओं का चुनाव करते हैं। उनकेद्वारा यह विज्ञान आता है। तुम्हारे समीप क्यों रहता? हमारे यहाँ जब महाराजा अर्जुन मंगल मण्डल में तीन वर्ष रहे, जहाँ इतना विशाल विज्ञान वेदों में, संसार का ज्ञान विज्ञान है, जो ऋषि आत्मा ने कहा है। उनके आदर्शों को लेकर चलोगे, तो यह वाक्य तुम्हारे आँगन में सहज ही आ जाएगा। 13.11.1966

जैसा हमारा यह पृथ्वी मण्डल है और जैसा हमारे यहाँ जो पोथी रूप में है, वह अन्य लोक लोकान्तरों में पोथी रूप में है और अथवा नहीं? हम उनके प्रश्न का उत्तर तो दिया करते हैं, परन्तु यह भय रहता है कि न जाने यह आगे क्या प्रश्न कर दे। वास्तव में कहीं कहीं तो वेद के सम्बन्ध में ऐसा माना जाता है, कि मानव के यहाँ जब गुरु परम्पराए चली आती हैं, तो वहाँ पोथी की आवश्यकता नहीं रहती।जैसे हमारे यहाँ सूर्य मण्डल है, ध्रुव, बृहस्पति, आरुणि, जेष्ठाय, रोहिणी, सप्तऋषि, मण्डल अरुंधति मण्डल, भौमकेतु मण्डल, विश्वानि केतु मण्डल, आभूषण केतु मण्डल, अनुगात केतु मण्डल, आभूषणागति मण्डल, वशिष्ट मण्डल, किरकोतुक नाम का मण्डल आदि हमारे यहाँ विशेष मण्डल माने जाते हैं।

इन लोकों मे वेद की पोथी किस रूप में है। वेद धर्म सार्वभौम धर्म है, तो वह किस रूप में है? वास्तव में यह बड़े अनुसन्धान का विषय है। 26.07.1967

29 लोकों में भिन्न भिन्न गुणों की अधिकता

हमारे यहाँ जितने पर्थिव तत्व होते है, उनमें पार्थिवता प्रधान होती है, वहाँ तमोगुण और रजोगुण की मात्रा अधिक होती है।

चन्द्रमण्डल में जाते हैं, तो वहाँ भी तमोगुण की मात्रा अधिक होती है और रजोगुण की भी, परन्तु जब मंगल मण्डल में जाते हैं तो वहाँ कुछ सतोगुण, सतोगुण तो यहाँ भी है, पार्थिवता में भी सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण की प्रधानता मानी जाती है। 26.07.1967

30 योगी को विज्ञान दर्शन

आज मैंने अपने सूक्ष्म शरीरद्वारा एक राष्ट्र का भ्रमण किया। वहाँ इस प्रकार के यन्त्र का निर्माण हुआ है जो चन्द्रमा के ऊपरले विभाग में भ्रमण करेगा। इस विषय में अभी उनका पूर्ण निश्चय नहीं परन्तु अनुमान है। उनसे यह प्राप्त किया जाए, कि इससे लाभ क्या होगा? तो वह कहेंगे, कि यह बुद्धि का विकास है, विज्ञान की पहुंच है। हमने विज्ञान का चमत्कार तो स्वीकार कर लिया, परन्तु यह है क्या? एक योगी दो वर्ष की तपस्या में अपनी आत्मा का इतना विकास कर सकता है कि चन्द्रमा के ऊपर जो मंगल है उसमें रमण कर सकता है, तो यन्त्र की कोई विशेषता तो नहीं होती। इससे अभिमान की प्रवृत्ति बढ़ेगी। जब अभिमान की प्रवृत्तियां इतनी प्रबल हो जाएगी, कि ऐसे ऐसे यन्त्रों के निर्माण हो जाएगे, तो उनके द्वारा वहाँ प्रहार होगा, जिससे इस पृथ्वी मण्डल में जो वनस्पतियां हैं, राष्ट्रीय संपत्ति है वह नष्ट हो सकती है। आज का मानव इसे विकास कहता है। पूर्व का मानव समुन्द्रों की यात्रा नहीं कर सकता था, वायुयान में भ्रमण नहीं करता था, लोहपथगामनी में भ्रमण नहीं करता था, मार्ग में जो यन्त्र भ्रमण कर रहे हैं, उनमें नहीं जा सकता था, मानव मानव से बहुत दूर था। यह वाक्य तो सुन्दर है, कि इतना विकास हुआ, परन्तु इस विकास से, शरीर से, तो मानव बहुत निकट आ गया, जिसकी कल्पना नहीं, परन्तु जब इनके हृदय दूर हो गए, तो दूसरे स्थान से दूर हो गए। तो यह वाक्य कि जहाँ का तहां रहा यह संसार। जब यातायात की उन्नति हुई, तो मानव के हृदय दूर हो गए। जब यातायात नहीं था, तो एक मानव दूसरे राष्ट्र में विराजमान है, परन्तु हृदय बड़ा निकट था। तो इस संसार का बना क्या?

मैं तो यह कहा करता हूं कि यह संसार ज्यो का त्यों रहा। जैसे एक कृषक कूप से अपनी वाटिका को सींचता है, और जिस यन्त्र से सींचता है, जिसमें जल आता है, वह वहीं का वहीं भ्रमण करता रहता है। इसी प्रकार यह संसार प्रकृति के आँगन में भ्रमण कर रहा है। अशुद्ध

परमाणुओं का वातावरण वायुमण्डल में छाता जा रहा है। समय वह आ जाता है, कि संसार में परमात्मा का प्रकोप प्रारम्भ होता है आपस में संग्राम होकर वही परमाणु तुम्हारे विनाश के कारण बनते चले जाएगे। 28.07.1967

आधुनिक काल का जो समाज है, जो मानववाद है वह कहीं चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है, कहीं शुक्र में जा रहा है, तो कहीं मंगल में जाने के लिए उद्यत हो रहा है। मैं यह कहा करता हूँ यह जो संसार है यह तो अग्नि के मुख में ही चला जा रहा है। क्योंकि सर्वगुण संपन्न जो गुण है वह मानव के द्वारा, मानवत्व का ज्ञान होना चाहिए, जैसा मैं बहुत पूर्व काल में कहा है कि संसार में नाना प्रकार का निर्माण हो, सुन्दर सुन्दर मार्ग भी हो, और विशाल विज्ञान हो, परन्तु जब तक मानवता का निर्माण न हो, तो राष्ट्र में किसी भी प्रकार का निर्माण सफल नहीं होता। 26.10.1967

31 विभिन्न लोकों में विभिन्न तत्व की प्रधानता

क्यांकि आगे चल करके, नाना प्रकार की बाधाएं, नाना प्रकार के गृहस्थी, नाना प्रकार के पर्वतों की ऊँची ऊँची आकृति, उनके समीप आएगी। उसमें जाना, इनके लिए एक महान, कठिन कार्य होगा। उन मार्गों को प्राप्त करने से, सफलता को अवश्य प्राप्त हो जाएगें परन्तु उसके लिए समय की आवश्यकता रहेगी।

चन्द्रमा में भी जीवन है, मंगल में पार्थिव तत्व प्रधान है, सहानूभूति लोकों में भी पार्थिव तत्व प्रधान ही माना गया है। बृहस्पति मण्डल में अग्नि और वायु की प्रधानता है।इसी प्रकार ध्रुव मण्डल में अक्रीति और आसवानी इन दोनों तत्वों की प्रधानता को स्वीकार किया गया है। सूर्य मण्डल में अग्नि तत्व स्वीकार करते हैं। वेद में सम्पन्न विद्याओं का वर्णन आता रहता है। इस संसार का और प्रकृति का स्वतः ही ब्रह्म की चेतना से अपनी प्रक्रियाओं में प्रक्रियाए करते रहते हैं, अपने अपने आसन पर भ्रमण करते रहते है।

चन्द्रमा में प्राणी रहते हैं, उनके कार्यालय हैं, उनका राष्ट्र भी है उनकी प्रजा भी है, वहाँ नाना प्रकार के भोग विलासों की सामग्री उनके अनूकुल होती है जो सब प्राणी मात्र के लिए होती है। ऐसा ऐसा व्यापार होता है, अब मानव अपनी अल्प बुद्धि से न जान सके, तो वह द्वितीय वाक्य है। एक मानव यह उच्चारण कर सकता है कि आज हम इसको कैसे स्वीकार करें, कि चन्द्रमा में प्राणी रहते हैं, जब आज का वैज्ञानिक, जब अभी तक वहाँ पंहुच ही नही पाया है, तो वह तुम्हें उतर भी क्या दे, । जब उसे प्रतीत ही नही हुआ, यन्त्रों के द्वारा, तो उतर भी क्या दे सकता है।

मैं तो वेद के आधार पर यह वाक्य प्रगट कर रहा हूँ। मैं अपने अनुभव की चर्चा क्यों उच्चारण करूं, यह मेरा स्वभाव नही हैं। मैंने सूक्ष्म शरीर के द्वारा यह दृष्टिपात किया है अथवा नही किया, इसको उच्चारण करने का क्या लाभ है। परन्तु मैने सार्वभौम सिद्धान्त प्रथम ही वाक्यों में प्रगट किया है।

जहाँ भी पंच महाभूत होंगें, वहाँ प्राणी भी होंगें। यह द्वितीय चर्चा है कि वहाँ कौन सा तत्व प्रधान है। रहा यह वाक्य कि परमात्मा के राष्ट्र में, हम आत्मा कितनी स्वीकार करें? तो यह बहुत अल्पबुद्धि वाला प्रश्न है, क्योंकि जैसे परमपिता परमात्मा अनन्त है, वैसे ही प्रकृति भी अनन्त है इसकी कोई सीमा नही होती और न कोई उसे सीमा में कटिबद्ध कर सकता है।

इसी प्रकार आत्मा अनन्त हैं जो सार्वभौम सिद्धान्त हैं, उसकी प्रतिभा को हम सदैव स्वीकार करें और ब्रह्म की चेतना के साथ हम अपनी चेतना को मिश्रण करने का प्रयास करें, जिससे हम इन नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में सफल हो सकें। 22.08.1969

32 परमाणुओं की उद्बुद्धता

तो ऐसे जो महापुरूष षोडश कलाओं को जानने वाले होते हैं क्योंकि इन षोडश कलाओं में से ही परमाणुओं की उद्बुद्धता होती रहती है, परमाणुओं की उद्बुद्धता होने के नाते ही भिन्न भिन्न प्रकार के परमाणु उत्पन्न होते रहते हैं, उन परमाणुओं को सुगठित करना, यह सब महापुरूषों का कर्त्तव्य होता है। इन परमाणुओं पर उनका अधिपत्य हो जाता है। अधिपत्य हो जाने के पश्चात वह भौतिकवाद हो, चाहे आध्यात्मिकवाद हो, उन में अधूरापन किसी काल में भी नहीं रह सकता। 04.09.1969

33 विज्ञान का लाभ

परन्तु आध्यात्मिकवाद तो यह है नहीं, यह तो भौतिकवाद है। इस भौतिकवाद के गर्भ में यदि अभिमान न आ जाए, तो आध्यात्मिकवाद में इसका परिवर्तन हो सकता है। परन्तु क्या करें, भौतिकवाद में प्रकृति और 'मैं' के वाद में अभिमान की मात्रा होती है। यह अपना कृत नहीं है, यह परम्परा की ही वार्ता मानी जाती है। इस लोक का मानव, चन्द्रमा के अति सीमित क्षेत्र में ही गया है, पृथ्वी का प्राणी चन्द्रमा पर भ्रमण कर रहा है। हमारे लिए तो यह आश्चर्य नहीं, हमारे लिए तो यह एक ऐसा अकृत है, जो बहुत ही सहज है। अभी तो एक ही आँगन में ये रमण कर रहे हैं, एक ही भाग में उन्होंने रमण करना प्रारम्भ किया है। आगे चल करके जब यह आगे भ्रमण करेंगे, तो उन्हें वही जलाशय पुनः प्राप्त होगे। अभी तो इन्हें पर्वत, वृक्ष, आदियों के दिग्दर्शन, सौन्दर्य का ही दिग्दर्शन हुआ है।

प्रकृति की गोद में ही तो हैं, परन्तु वह प्रकृति की गोद को त्याग करके जब आगे जाकर के अपनी प्रतिभा में पहुंचेंगे, तो वहाँ इन्हें और भी सौन्दर्य दृष्टिपात आएगा। इस प्रकार का जो विज्ञान है, वह बड़ा हर्षध्वनि के योग्य है। मानव मस्तिष्क का पूर्ण विकास विज्ञान का फल है तीन अप्रेत वैज्ञानिक मृत्यु को भी प्राप्त हो गए हैं, मृत्यु भी ऐसे विज्ञान में प्राय हो ही जाती है क्योंकि जब मानव अपने जीवन की धारा को त्याग करके दूसरे लोक की कल्पना करता है तो उसका जीवन सुरक्षित तो रहता नहीं वह तो एक प्रभु के आश्रित होकर के अपनी श्रद्धा के आश्रित हो करके, अपने जीवन की प्रक्रिया को त्याग करके कक्ष में चला जाता है, जहाँ उसे प्रकृति का सौंदर्य दृष्टिपात आता है। 04.08.1971

34 विज्ञान

इस त्रिविद्या का जब मन्थन किया जाता है तो मन्थन करने के पश्चात जो वस्तु होती है उसका नाम विज्ञान कहा गया है जैसे आज हमें यह चन्द्रमा दृष्टिपात आया है, मंगल दृष्टिपात आता है, वशिष्ठ और अरुंधति मण्डल आज हमें दृष्टिपात आते है। ये दृष्टिपात तो आ रहे हैं, परन्तु इनमें से एक यह मंगल हैं, यह चन्द्रमा है, यह बुध है, यह शुक्र हैं, यह सूर्य है। परन्तु इनका ज्ञान तो हो गया, अनुमोदन भी हो गया, परन्तु विचार विनिमय अब यह करना है कि ये जो लोक लोकान्तर हैं, इनका ज्ञान तो मन के द्वारा हो गया, इसकी जो प्रतिभा है इसमें जो विज्ञान है, इसमें जो वस्तु है, खनिज है, खाद्य है, प्राणीमात्र हैं, इन लोक लोकान्तर में जैसी भी 'अभय' आभा है, आज वहाँ जो जाने का मार्ग है, उस मार्ग में जाने वाले जो यन्त्र हैं, हमारे यहाँ उस जानकारी का नाम विज्ञान कहा गया है।

इसी प्रकार ऋषि कहते हैं कि यदि मानव प्रत्येक श्वास के साथ ही, जो अध्ययनशील होते हैं, आध्यात्मिकवेत्ता होते हैं, ब्रह्मवेत्ता होते हैं, वे प्रत्येक श्वास के परमाणुओं की गणना कर लेते हैं। उसी गणना के साथ में मानव अपने चित्र को चित्रण कर लेता है। वह योगी इस प्रकार का महापुरुष बन जाता है। जो श्वास की गति को जानता है और अपने सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर के परमाणुवाद पर जब अध्ययन कर लेता है, तो वह मानव को यथार्थ स्थूल रूप में दृष्टिपात नहीं आता है। उस मानव की इस प्रकार गति बन जाती है। जब आत्मवेत्ता बनने के लिए जब ब्रह्मवाद में जाते हैं, तो यही प्रतीत होता है कि हमें आज इस आध्यात्मिक विज्ञान को जानना चाहिए जिससे हम संसार का चित्रण कर सके।

35 भौतिक विज्ञान

एक मानव को परमाणुवेत्ता, भौतिक विज्ञानवेत्ता, भौतिकवादी इसीलिए कहा करते हैं, कि वह भूतों के परमाणुओं का निरीक्षण कर रहा है। उन पर अनुसन्धान कर रहा है। इसीलिए उसे भौतिक विज्ञानवेत्ता कहते है, क्योंकि वह पंच महाभूतों पर अनुसन्धान कर रहा है। यन्त्रों का निर्माण कर रहा है। लोक लोकान्तरों में जाने वाले यानों का निर्माण कर रहा है। अपने इस शरीर का चित्रण, वायु में प्रसारण करके यन्त्र के द्वारा उसका चित्रण कर रहा है।

यह क्या है?इसको कहते हैं भौतिक विज्ञान।परन्तु इस भौतिकवाद में मानव के विनाश के यन्त्रों का निर्माण अधिक किया जाता है। और मानव के लाभ के लाभ के सूक्ष्म निर्माण होते हैं। 13.11.1971

आज का वैज्ञानिक चन्द्र यात्रा कर रहा है, मंगल में जाने का प्रयास कर रहा है, चन्द्रमा में जाना कोई आश्चर्य नहीं, मंगल में जाना भी आश्चर्य नहीं, शुक्र में जाना भी मानव के लिए कोई आश्चर्य नहीं हैं, परन्तु यहाँ अधिकार का निर्माण करना, चुनाव करना, राष्ट्र में मानवता को लाना, समाज को सुदृढ़ बनाना। यह जब समाज में आ जाता है तो समाज ऊँचा बन जाता है। उस काल में चन्द्रमा की यात्रा भी सफल होती है। भौतिक विज्ञान पर मानव का जन्म सिद्ध अधिकार। चन्द्र यात्रा तो होनी चाहिए, परन्तु परम्परागतों से हमारा जो विज्ञान है, इस विज्ञान की आभाओं में एक महत्ता का दिग्दर्शन होता रहता है। इसको विचारने के पश्चात हमारा जीवन एक महत्ता की वेदी पर आकर के, एक पवित्रता को प्राप्त होता रहता है। 23.02.1972

36 आध्यात्मिकवाद

आध्यात्मिकवाद कहते किसे हैं? सबसे प्रथम तो मानव को यही ज्ञान नहीं है, कि आध्यात्मिकवाद किसे कहते हैं? आध्यात्मिकवाद वह वेला है, वह पदार्थ है, जिसको जानने के पश्चात संसार में, इस पृथ्वी की उड़ान ही नहीं, चन्द्रमा की उड़ान ही नहीं, मंगल की उड़ान ही नहीं सर्व भू मण्डलों की उड़ान उड़ने के लिए तत्पर रहता है। आध्यात्मिकवाद वह वस्तु है, जिसमे मानव एक श्रुति के अनुसार मन और प्राण की एकाग्र करने मात्र से ही संसार की उड़ान में उड़ने लगता है। चन्द्र मण्डलों में क्या? सूर्य मण्डलों में क्या? वह उसकी प्रतिभा एक ऐसी रमण करने लगती है। इसी प्रकार जब हम ओर भी आगे जाना चाहते हैं, तो ऐसी प्रतीत होता है। जहाँ मैं राष्ट्रवाद की घोषणा करूं। जहाँ मैं मानववाद की घोषण करूं। वहाँ ऐसा प्रतीत होता है, कि आज हम आध्यात्मिकवाद की वेला में रमण करना चाहते है। 23.02.1972

37 आध्यात्मिक याग

गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के यहां, जब नाना ऋषियों का पर्दापण होता, तो वहां प्रायः आध्यात्मिक याग होता रहता था, आध्यात्मिक याग का अभिप्रायः यह है कि जितना यह भौतिक विज्ञान है, चाहे वह किसी भी प्रकार के रूप में हो, चाहे वह गणना के रूप में हो, चाहे वह ब्रह्माण्ड के रूप में हो, चाहे चित्रावलियों के रूप में हो, चाहे ब्रह्मास्त्र वरूणास्त्र, चाहे भिन्न भिन्न प्रकार के रूपों में रत रहने वाला विज्ञान हो, परन्त इसको भौतिकवाद कहते हैं, और यह सब भौतिकवाद में, जब विज्ञान आध्यात्मिक विज्ञान, अपने में सार्थक नही बन पाता, तो यह भौतिक विज्ञान अपंग बन जाता है।

यह जो विज्ञान है, यह शब्द चित्रावली और परमाणु तक सीमित बन जाता है, परन्तु आध्यात्मिक विज्ञानवेता यह कहते हैं, कि आध्यात्मिक विज्ञान जहां भौतिकवाद परमाणुवाद अणुवाद वहां इसका समापन हो जाता है, वहां से आध्यात्मिकवाद का प्रारम्भ हो जाता है। क्योंकि आध्यात्मिकवाद किसे कहते हैं? आध्यात्मिकवाद उसे कहते हैं, जहां मानव मृत्यु से प्रकाश में जाने का प्रयास करता है, और वह प्रकाश में चला जाता है, और जहां उसे प्रकाश हुआ, वह आध्यात्मिकवाद कहलाता है। और भौतिक विज्ञान वह कहलाता है, जैसे प्रारम्भ में एक बाल्य रहता है, वह अग्नि को काष्ठों में दृष्टिपात करता है, अग्नि से अग्नि एक दूसरे के परमाणुओं का समन्वय हुआ और समन्वय होते ही उसमें विचित्र धाराओं का जन्म हो जाता है, और उन धाराओं को जन्म देने वाला अग्रणीय बनता है, उसमें से नाना प्रकार के अणु और परमाणुओं का वह निर्माण करता है। अणु और परमाणुओं का निर्माण करते ही, यन्त्रों में विद्यमान हो जाता है। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिस काल में महाराजा शिव और यहां भोकेतु ऋषि महाराज अपने में अन्वेषण करते रहते थे, महर्षि मार्कण्डेय जी के सम्बन्ध में भी ऐसा ही कहा जाता ह, कि यह बड़े विज्ञानवेता है महाराजा शिव यन्त्रों में विद्यमान हो करके एक एक यन्त्र की, एक एक लोक की आर्कषण शक्ति से जानना, यन्त्र स्थिर रहते थे, उनमें छह छह, वर्षो तक ऋषि मुनि वास करते रहते थे, शिव और पार्वती उसमें अपने में नृत, वास करते रहे। तो भौतिक विज्ञान अपने में बड़ा सार्थक रहा है, नाना प्रकार के अस्त्रों शस्त्रों का निर्माण करना और मुझे तो वह काल स्मरण है जब महर्षि भारद्वाज मुनि के यहां एक समय एक ऋषि का आगमन हुआ, ऋषि का नामोकरण सोमकेतु दद्दड़ गोत्रीय कहलाते थे, जब वह महर्षि भारद्वाज के आश्रम में आए, तो वहां महर्षि भारद्वाज, ब्रह्मचारी कवन्धि, ब्रह्मचारिणी शबरी, महर्षि पणपेतु और ब्रह्मचारी सुकेता यह सब विद्यमान थे, महर्षि रोहिणीकेतु भी विद्यमान थे। 01.12.1987

38 प्रभु की धरोहर विज्ञान

तो, परमपिता परमात्मा का अनन्त विज्ञान है, बिखरा हुआ परमाणु है, अणु है, उसी को, वह मानव जान करके, उसको साकार रूप में लाने का प्रयास करता है, परन्तु विज्ञान तो प्रभु की ही धरोहर है, अणु और परमाणु, तो प्रभु की धरोहर है। उसको जान करके वैज्ञानिक मिलान करा देता है, और वह उसका मिलान होते ही, वह उसका रूपांतर भी हो जाता है। तो यह प्रभु का अनूठा जगत है, विज्ञान परमात्मा की धरोहर है, परमात्मा की धरोहर स्वीकार करके, जब उसका उपयोग करता है, तो मृत्यु से पार हो जाता है। और जब विज्ञान अभिमान से करता है, तो मृत्यु के आंगन में प्रवेश कर जाता है।परमात्मा की धरोहर को हम अपने में सीमित न होकर, उसका विचार करते हुए, इस सागर से पार हो जाना चाहिए। 05.12.1987

39 याग से विज्ञान

कपिल मुनि के आश्रम में धनुयाग और विज्ञान कितना महान और विचित्र कहलाया गय, तो हमें याग से प्रतिष्ठित हो जाना चाहिए, और परमात्मा के बिखरे हुए विज्ञान को साकार रूप देना चाहिए, यह हमारा कर्तव्य है।

परन्तु जैसे हनुमान जी बड़े बुद्धिमान, अपने स्वरूप को ऊर्ध्वा में निहित करने वाले और विज्ञानवेता क्योंकि बारह बारह वर्षो, क्या उन्होंने पचास वर्ष, गणेश जी और हनुमान जी समुद्र के तट पर विज्ञान में रत रहे है, और उनके समीप कैसा विज्ञान, उनके यहां ऐसे ऐसे यन्त्र थे, जिन यन्त्रों पर विराजमान हो करके, वह समुद्र को पार कर जाते है, वायुमण्डल में उड़ाने उड़ने लगते थे, लोकों की यात्रा, हनुमान जी और गणेश जी मंगल की यात्रा में भी सफलता को प्राप्त रहे है, शुक्र और बुध में भी उनका आवागमन रहा है, और वृति लोकों में भी उनका आवागमन रहा है, वह यंत्रों के द्वारा कही मृत्त लोक में, तो कही देव लोक में, तो कही चन्द्रलोक में, तो कही और भी नाना लोकों में गमन करते रहे है। 05.12.1987

40 आध्यात्मिकवाद

उन्होंने कहाहे प्रभु! आध्यात्मिकवाद, मैं तो इतना ही जानता हूँ, जितना आपने मुझे शिक्षा दी है, क्योंकि आचार्य ही तो शिक्षा देने वाला है, उन्होंने कहा कि हे प्रभु! मैं आध्यात्मिकवाद में समन्वय करता रहता हूँ, आध्यात्मिकवाद का अभिप्रायः यह है, कि यह जो ब्रह्माण्ड को मैं मापता रहता हूँ और ब्रह्माण्ड को मापते मापते, मैं कुछ विज्ञान की अनुपम धारा में प्रवेश कर जाता हूँ, तो आध्यात्मिकवाद में, तो

मेरा विचार यह है कि मिलन का नाम ही आध्यात्मिकवाद है, क्योंकि मिलन होना है, दो वस्तुओं का।जब विच्छेद हो जाता है, उसका मिलन होना ही, उसका नाम एक योग कहा गया है, और वही साधना से समन्वय रहता है, एक कृतिका कहलाती है।उन्होंने कहा निर्णय दो, उन्होंने कहा निर्णय यह है कि यह जो मन है, मैं, मन में भी कोई वस्तु समावेश करना चाहता हूँ, तो ऋषि ने कहा है कि जब जब, यह इन्द्रियां, पांच ज्ञानेन्द्रियां हैं, पांच कमेन्द्रियां हैं।जब मैं इन्द्रियों के लौकिक विषय को, मैं ज्ञानेन्द्रियों में समाहित कर देता हूँ, और ज्ञानेन्द्रियों का जो विषय है, उसे मन में जब समाहित हो जाता है, और यह मन प्राण में समाहित हो जाता है। 07.04.1990

लोकों की प्रतिष्ठा-स्थावर, उद्भिज, अण्डज और जरायुज सृष्टि

प्रातः कालीन सूर्य का प्रकाश आता है, संसार को तपाता रहता है। प्रत्येक प्राणी सूर्य से प्रकाश को प्राप्त करता है। नाना प्रकार की किरणों को अपने में धारण करता हुआ, तेजोमय को प्राप्त होता रहता है। आज हम तेजोमय की उपासना करते चले जाएँ, जो तेज सूर्य से आ रहा है। वही तेज पृथ्वी के गर्भ स्थल में प्रवेश करता हुआ, इस संसार, इस प्रकृति चक्र को गतिशील बना रहा है। और भी नाना प्रकार के लोक लोकांतरों को गतिशील बनाने वाला है। तो वह जो प्यारा प्रभु है, वह कैसा अनुपम है? नाना प्रकार की वनस्पतियों में प्राण के देने वाला है। तो हम उस अपने प्यारे प्रभु की प्रतिभा अथवा मनुष्यता की प्रतिभा का वर्णन करते चले जाएँ।

माता के गर्भ स्थल में हम जैसे प्यारे पुत्रों का निर्माण होता है। परन्तु वह निर्माणवेत्ता विश्वकर्मा ने इस मानव के शरीर में चित्त नाम की भूमि का निर्माण किया और वह उदान, प्राण और आत्मा का संकलन करते हुए उस मेरे प्यारे प्रभु ने इस मनस्थल की रचना की है। आज हम उस महान देवतव, जो हमारे जीवन का स्वामी कहलाया जाता है। जिसकी संरक्षणता में यह ब्रह्माण्ड है, यह महान और विचित्र माना गया है। हे प्रभु! मानव तेरी उपासना कर रहे हैं और तू हमारा उपास्य देव है। प्रातःकालीन ब्रह्मयज्ञ कर रहे हैं। ब्रह्मयाग का अभिप्राय यह है कि ब्रह्म की प्रतिभा का वर्णन करना। नाना प्रकार के लोक-लोकांतर तेरे गर्भस्थल में हैं। एक मण्डल दूसरे मण्डल की परिक्रमा कर रहा है। एक दूसरा लोक एक दूसरे को आभायित कर रहा है। उस मेरे प्यारे प्रभु का कितना सुन्दर प्रातःकालीन याग को हम दृष्टिपात कर रहे हैं। कैसा वह याज्ञिक है?

41 स्थावर सृष्टि

सृष्टि के प्रारम्भ में मेरे प्रभु ने चार प्रकार की सृष्टि का सर्जन किया। सबसे प्रथम स्थावर सृष्टि आती है और द्वितीय काल में अण्डज सृष्टि का निर्माण होता है और तृतीय काल में उदिभज सृष्टि आती है, उसके पश्चात जंगम सृष्टि का प्रादुर्भाव होता है। ये चार प्रकार की सृष्टि मानी जाती हैं। स्थावर सृष्टि कितनी विचित्र है? कितने प्रकार माने जाते हैं, जो स्थिर रहने वाली सृष्टि है जैसे वृक्ष हैं, वज्र हैं, पर्वतों की माला है। सृष्टि के प्रारम्भ में प्रभु ने स्थावर सृष्टि का निर्माण किया, जो स्थावर रहने वाले हैं। वनस्पतियों में सबसे प्रथम पीपल के वृक्ष में नाना प्रकार के गुणों का गुण गान होता रहता है। वेद के आचार्य जब भी कोई उपमा प्रदान करते हैं, तो पीपल के वृक्ष की संसार में कल्पना करते रहते हैं। ऐसा कहते हैं कि यह जो ब्रह्माण्ड है यह पीपल के वृक्ष के सदृश माना जाता है। जैसे तने पृथ्वी की आभा में रमण करते हैं, नदियों के रूप में रमण करते हैं उसके जो पत्ते हैं, वह वैदिक, वेद की एक-एक ऋचा का गुणगान गाते हैं। ऐसा हमारे आचार्य परम्परा से इसका निर्वाचन करते रहते हैं अथवा इसकी कल्पना करते रहते हैं। द्वितीय काल में मेरे प्यारे प्रभु ने आक को जन्म दिया। उसे सूर्य कृतिभा वेदकेतु भी कहते हैं। परन्तु उसको शुद्ध रूपों में आक (अर्क) कहा जाता है। वह जो आख है उसमें एक सौ गुणों का वर्णन महर्षि भास्काचार्य ने किया है। एक सौ गुणों का वर्णन, अश्विनी कुमारों ने किया है जो वैद्यराज रहे हैं महात्मा भुंजु के पुत्र और महात्मा दधीचि ने इसके ऊपर बहुत अध्ययन किया है।उसके पश्चात बट वृक्ष का जन्म हुआ। वह जो बट वृक्ष है उसका अंकुर बहुत सूक्ष्म है। परन्तु इस वृक्ष का जो विस्तार है वह कितना विशाल है? उसको मापा नहीं जाता। ऐसा कहा जाता है कि बट वृक्ष के नीचे विद्यमान हो करके महर्षि मार्कण्डेय ऋषि महाराज तपस्या किया करते थे। उन्हीं की समिधा ले करके वह अग्न्याधान करते थे। अग्नि होत्र करने को उसको देव पूजा कहा जाता है। महर्षि मार्कण्डेय ऋषि महाराज के काल में एक बार बट वृक्ष के नीचे जब वह विद्यमान थे, तो एक समय जल प्लावन आया और भयंकर जल प्लावन आया तो वह बट वृक्ष पर विद्यमान हो गए। ऐसा कहा जाता है कि जल प्लावन ने इस पृथ्वी को अपने नीचे दबा लिया था। क्योंकि हिरण नाम जल को कहा जाता है। यह जो जल है इसने पृथ्वी को अपने में धारण कर लिया और धारण करके मार्कण्डेय ऋषि महाराज उस बट वृक्ष के नीचे विद्यमान हो गए तो उसके ऊर्ध्व तने पर अपना आसन लगाया। आसन लगाकर ही उपासना करते रहे।

मार्कण्डेय ऋषि महाराज के समय में भी एक जल प्लावन आया था। जल प्लावन समुद्रों से आता है। पृथ्वी के प्राणी समापन को प्राप्त हो जाते हैं। कोई भी उन्हें आहार प्राप्त नहीं हुआ। तो कहा जाता है कि तन्दुल उन्हें कई प्राप्त हुए। उन तन्दुलों को ले करके उन्होंने उसी बट वृक्ष के ऊपर एक पक्षी, एक चो-प्राणियों में विराजमान होने वाला पुत्र है। स्वांग है, स्वांगिनी भी उसी में थी। उसके दुग्ध को ले करके उन

तन्दुलों को उस अग्नि वृतः दोनों का समन्वय करके, उन्होंने अपने ्राणों की रक्षा की। प्राणों की रक्षा करने वाला उससे यह प्रतीत हुआ कि अभाव में मानव अपने प्राणों की रक्षा चाहता है। प्राणों की रक्षा उसी काल में होती है, जब किसी वस्तु का अभाव होता है। मानव प्रिय-अप्रिय को दृष्टिपात नहीं करता। प्रिय-अप्रिय अनुभव करता है उस काल में जब कि वह अपनी आभा में रमण करता रहता है। तो ये तीनों वृक्ष सृष्टि के प्रारम्भ में सबसे प्रथम उत्पन्न किए।

सृष्टि का जब प्रारम्भ हुआ, प्रादुर्भाव, हुआ तो करोड़ों वर्षों तक यह पृथ्वी शीतल होती रही। शीतलता में रमण करतेसूर्य का ताप भी धीमा पड़ गया और पृथ्वी के मध्य की जो रेखा है उस रेखा का भी तेज कुछ सूक्ष्म बना। उसमें प्राण शक्ति आ गई। तो प्राण शक्ति उस काल में आई जब यहाँ वनस्पतियों का जन्म हो गया था। जो वनस्पति हैं इनसे प्रजनन होता है। इसलिए वनस्पतियों का होना, वृक्षों का होना हमारे आचार्यों ने बहुत अनिवार्य माना है। तो कहा है कि वट वृक्ष होने चाहिए, पीपल वृक्ष होने चाहिए, आक होना चाहिए। नाना प्रकार की वनस्पतियों का प्रादुर्भाव होना चाहिए जिससेअनुसन्धान किया जाए। मानव की रुग्णता समाप्त हो।

42 अण्डज सृष्टि

उसके पश्चात मेरे प्रभु ने, मेरे चैतन्य देव ने एक रूपों में बनने के लिए उन्होंने यह विचारा कि मैं अपनी प्रजा में भ्रमण करूँ। वह उस प्रजा में यह सृष्टि मेरे उस देव की प्रजा है। उस प्रजा में रमण करने के लिए चैतन्यता में परिणत हो गए। उसके पश्चात यहाँ अण्डज सृष्टि का जन्म हुआ। यह जो अण्डज सृष्टि है। यह प्रतीक है कि जैसे कच्छ है, वह समुद्र के आँगन में रहने वाला था। वह जल और पृथ्वी के कणों में एक पिपाद होता है। उस पिपाद स्थल में एक दूरी से अण्ड सृष्टि को तपा रहा है, उसको जीवन दे रहा है। नेत्रों से जीवन देता है।एक एक अण्डज अन्तरिक्ष में उड़ान उड़ने वाला वह अपने ओज को अपने नेत्रों से दृष्टिपात कर रहा है। इसी प्रकार नाना अण्डज सृष्टि का जन्म हो गया। उस अण्डज सृष्टि में यह सर्पराज भी माने जाते हैं। ऊर्ध्व में उड़ान उड़ने वाले पक्षी भी माने जाते हैं। अण्डज सृष्टि में नाना प्रकार की योनियाँ हैं। उसको मानव गणना करने में भी असमर्थ हो जाता है। क्योंकि नाना प्रकार की योनियाँ हैं और उसके नाना प्रकार माने गए हैं। जैसे सृष्टि का निर्माण अण्डाकार हुआ है उसी प्रकार अण्डज सृष्टि का जन्म हुआ।

43 उद्भिज सृष्टि

अण्डज सृष्टि के पश्चात उद्भिज सृष्टि का जन्म हुआ। उद्भिज उसे कहते हैं जहाँ शीतलता और उष्णता दोनों का मिलान होता है। दोनों का समन्वय होता है। समन्वय होते ही मिलान होने के पश्चात योनियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। मानव के शरीर में, जब समुद्रों से जलों का उत्थान होता है, तो वह शीतलता के रूप में होता है। परन्तु जब उनको ऊष्णता प्राप्त होती है। द्यु लोक की, वह जो द्यु लोक में रहने वाली है जो वायु मण्डल में बिखरे हुए परमाणु हैं अथवा कण हैं, उन कणों में मिलान होना जब प्रारम्भ होता है तो उद्भिज सृष्टि का जन्म जब ऊष्णता और शीतलता दोनों के मिलान से कुछ योनियाँ उत्पन्न होती हैं उनको उद्भिज कहा जाता है। वह जो उद्भिज सृष्टि है वह कितनी महान है? कितनी विचित्र है?उसके सम्बन्ध में मानव अपनी कल्पना भी नहीं कर सकता। अपना विचार विनिमय भी नहीं कर सकता।

44 जंगम सृष्टि

उसके पश्चात यह जंगम सृष्टि का जन्म हुआ। जंगम सृष्टि में मानव भी आता है। जंगम सृष्टि में नाना पशु आते हैं, अश्व भी आता है और उनमें नाना प्रकार के माने जाते हैं। मान देखो, वह जंगम सृष्टि कहलाती है। जंगम सृष्टि का अभिप्राय जो जंगाम को उत्पन्न करते हैं। उनको जंगम सृष्टि जो गर्भ में रहने वाले हैं। यह गर्भाशय सृष्टि मानी जाती है। गर्भस्य जो सृष्टि है उसे जगम कहा जाता है। तो मेरे प्यारे प्रभु देव ने नाना प्रकार का जंगम सृष्टि का कर्म बनाया। इन कर्म को उत्पन्न करने के पश्चात इसका क्यों ऐसा कर्म है? अपने-अपने अधिकार के अनुसार उसका जन्म होता रहता है। क्योंकि जैसे-जैसे पृथ्वी का वातावरण, सृष्टि का वातावरण बनता गया, उसी प्रकार योनियों का प्रादुर्भाव होता रहा। ऐसा वेद का आचार्य का, ऋषि-मुनियों का ऐसा कुछ निश्चय किया हुआ है कि करोड़ों वर्षों उसे शान्त होने के लिए लगे। उसके पश्चात दस हजार वर्षों तक इस वृक्ष योनियों का, जो स्थावर योनि हैं। क्योंकि यह पृथ्वी सुयोग्य हो गई। उत्पन्न करने के लिए इसमें उपजाऊ जीवनी शक्ति आ गई क्योंकि यह ऊष्ण थी। वह शीतलता से उसमें उपजाने की शक्ति आ गई। नाना प्रकार की वनस्पतियों का जन्म हुआ। वृक्षों का, स्थावर सृष्टि का जन्म हुआ। उसके पश्चात जब वृक्षों की शीतलता समाप्त हुई तो अण्डज सृष्टि बनी। क्योंकि अण्डज सृष्टि भी कुछ पृथ्वी के आँगनों में उनके गर्भ में उनका जन्म होता है। तो अण्डज सृष्टि का भी जब निर्माण हो गया दस हजार वर्षों तक यह सृष्टि इसी प्रकारता को प्राप्त होती रही। समुद्रों से जल का उत्थान होने लगा। क्योंकि वह जो समुद्र थे, करोड़ों वर्षों तक समुद्रों का अपने आँगन में भी स्थावर होने का पर्याप्त समय नहीं हुआ। वह जो स्थावर और नाना प्रकार की जो योनियाँ समुद्रों में जन्म लेने वाली थीं। वे जन्मों को प्राप्त होती रही आँगन से, जलाशय में, समुद्रों में, नाना प्रकार की सृष्टि मानी जाती है।

उसके पश्चात उनकी आभा से, उनकी वेदना से, वह आत्म वेदना थी, उससे जलों का उत्थान होता रहा। जलों का उत्थान हो करके वह

मेघ मण्डल बन करके विद्युत का उसमें प्रवाह हुआ। इंद्र देव ने आगमन किया। विद्युत का प्रवाह हो गया। वकासुर का विनाश हो गया और धीमी-धीमी सृष्टि प्रारम्भ होने लगी। वह जो धीमी सृष्टि हुई उससे यह उदभिज सृष्टि का जन्म हुआ। उद्भिज सृष्टि भी इस पृथ्वी मण्डल पर हजारों वर्षों तक रेंगती रही, गति करती रही।

45 सृष्टि के चार प्रकार

यह जो चारों प्रकार का सृष्टि विज्ञान है, चारों प्रकार की उत्पति होने वाला जगत है, इसके सम्बन्ध में तुम क्या जानना चाहते हो? उन्होंने कहा प्रभु! कि मैं यह जानना चाहती हूँ, कि यह जो वनस्पति विज्ञान, जिसे स्थावर सृष्टि कहते हैं, इसमें जो लोक लोकान्तर वाद भी आता है, अथवा नहीं? तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा यह चारों प्रकार की जो सृष्टि है, यह प्रत्येक मण्डल में हमें दृष्टिपात आती है, चाहे हम मंगल में चले जाए, चाहे हम बुध में चले जाए, स्वाति नक्षत्र में चले जाए, किसी भी नक्षत्र में हम गति करने लगें, तो ये चारों प्रकार की सृष्टि का दृश्य, हमें दृष्टिपात आने लगता है।

एक समय ऋषि मुनियों का कुछ समूह भ्रमण करते, मण्डलों को एकाग्र करने और अपने में एक दूसरे में ओत प्रोत होती हुई वह सृष्टि दृष्टिपात आती रहती है, जैसा परमाणु, एक दूसरे में पिरोया हुआ, मनका एक सूत्र में पिरोया रहता है, उस सूत्र की प्रतिभा एक महानता में रत रहने वाली है, तो जब ऋषि ने यह वर्णन कराया तो चाक्राणी गार्गी बोली कि प्रभु! आपने और मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई काल में वर्णन कराया है, मैं यह जानना चाहती हूँ कि भगवन! यह चारों प्रकार की जो सृष्टि हैं, उनकी प्रतिष्ठा कहां कहलाती है? प्रतिष्ठा में बड़ा अवान्तर भेदन होता चला जाएगा। उन्होंने कहा हे देवी! यह जो जगत है, यह जो चारों प्रकार की सृष्टि है, यह गुरुत्व जो परमाणु हैं, गुरुत्व जिसमें विकृष माने गए हैं, पार्थिव तत्व है, और उसमें गुरुत्व विकृष रहता है। उसी में वृणित हो जाता है, जब वह उसमें वृणित हो जाता है, तो चाहे वह सृष्टिवाद मंगल का हो, चाहे वह सृष्टिवाद किसी भी लोक लोकान्तरों का हो, परन्तु वह गुरुत्व में ही पिरोया हुआ दृष्टिपात आएगा, वह गुरुत्व में, वह पृथ्वी के परमाणुओं में लय हो जाता है, उसी में निहित हो जाता है, उसी में ओत प्रोत हो जाता है, क्योंकि ओत प्रोत होने वाली चर्चाएं बड़ी विचित्र है, जैसे माता के गर्भस्थल में जो शिशु होता है, तो उस शिशु की रक्षा के लिए, देवता उसकी रक्षा करते हैं, जल, अग्नि, तेज, वायु, आकाश पंच महाभौतिक जो प्रतिभा है वह रक्षार्थ के लिए परिणत हो जाती है, इसी प्रकार यह जो अनुपम जगत है, यह एक वृतियों में रत रहने वाला है, उन्होंने कहा कि यह चारों प्रकार की जो सृष्टि है ये पृथ्वी में ओत प्रोत हो जाती है, पृथ्वी इसकी प्रतिष्ठा कहलाती है। वेद के ऋषि ने कहा हे देवी! यह जो चारों प्रकार का जगत है, चाहे वह लोक लोकान्तरों में हो, परन्तु उसकी प्रतिष्ठा, यह पृथ्वी कहलाती है। इस पृथ्वी में गुरुत्व कहलाता है।यह अपने में धारण करने वाली है, वेद इसे वसुन्धरा कहता है। कहीं धेनु कहता है। कहीं इसी पृथ्वी को पृथा के रुप में वर्णन कर रहा है। कहीं यही पृथ्वी पालन करने वाली है। कहीं यही पृथ्वी अपने में समाहित कर लेती है।अवृणियों में रमण कराने वाली है। 78.92.012

46 प्रत्येक लोकों में चतुर्विध सृष्टि

तत्व मुनि महाराज ने मुझे यह निर्णय कराया कि तुम यात्रा करने वाले बनों। तो मैंने जो यन्त्रों का निर्माण किया, ब्रह्मचारी सुकेता ओर कवन्धि के सहयोग से, ओर महर्षि पणपेतु मुनि महाराज के सहयोग से, एक यन्त्र का निर्माण किया था। जिसमें राजा रावण के विधाता कुम्भकरण भी विद्यमान थे, उनके सहकारिता में एक यन्त्र का निर्माण हुआ था, जिस यन्त्र में विद्यमान हो करके हम एक दूसरे मण्डल की परिक्रमा करने लगे थे। तो भारद्वाज मुनि ने यह निर्णय कराया, कि यान जब बुध में पंहुचा, तो वहां भी चारों प्रकार की सृष्टियों का निर्माण हो रहा है, परन्तु मंगल में पहुंचा, तो वहां भी चारों प्रकार की सृष्टियां दृष्टिपात आ रही हैं, जब स्वाति नक्षत्र में पंहुचे, तो वहां भी प्रायः ऐसा ही दृष्टिपात आने लगा। ऋषि ने यह निर्णय कराया।तो भारद्वाज मुनि के विज्ञान को महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज चाक्राणी गार्गी से प्रगट कराने लगे, उन्होंने कहा हे चाक्राणी यह विज्ञान बड़ा अनुपम है, अनुवृत्तियां कहलाने वाला है चारों प्रकार की सृष्टियां हैं। 78.92.012

47 सृष्टि के चार प्रकार

यह जो संसार है, यह चार प्रकार की सृष्टियों वाला कहलाता है, चार प्रकार की सृटि कहलाती है, जिसमें जंगम है, उद्भिज है, अण्डज हैं, स्वेदज कहलाता है।तो यह सृष्टि का चार प्रकार का कर्म है, इसी में रत्त रहती है, इसी में रत्त रह करके, कोई प्राणी इसी योनि को प्राप्त होता रहता है, इसमें कर्मबद्ध की, कर्मो की एक धारा बनी हुई है, उसी धारा के आधार पर इसका कर्मबद्ध जीवन प्रारम्भ रहता ह।उसी में निहित रहने वाला, यह जगत है, जो ब्रह्मता में निहित रहने वाला है।

देवी ने कहा प्रभु! यह तो मैं पूर्व ही जानती थी, क्योंकि मैं जब माता की लोरियों का पान करती रही, तो माता जब मुझे लोरियों का पान करती रही, तो मुझे वह स्मरण करती रहती थी, तो इससे ऊर्ध्वा में मैं यह जानना चाहती हूँ, कि रत्त न रह करके यह गुरुत्व में रत हो जाते हैं, गुरुत्व क्या है? पृथ्वी का गुण है, इसी में वह निहित रह करके, ओत प्रोत हो जाते हैं।

उन्होंने कहा प्रभु! यह भी मैं जानना नहीं चाहती हूँ, क्योंकि मेरे पूज्यपाद के यहाँ जब मैं अध्ययन करती थी, आचार्य कुल में, तो आचार्य इन वाक्यों का निर्णय कराते रहते थे, कि गुरुत्व वह लोक लोकान्तरों की प्रतिभा भी कहलाता है, यही गुरुत्व पृथ्वी का गुण कहलाता है, यही गुरुत्व मानव के शरारों में प्रवेश होता रहता है। हे प्रभु! मैं जानना चाहती हूँ, यह गुरुत्व तो तरल पदार्थो में रहता है, यह तरलता में परिणत हो जाता है, तरलता में प्रायः जल आता है, अमृतोमयी ज्योति आती है, इसी को पान करके, मानव अपने में शान्ति की स्थापना करता है, शान्ति अनुभव करने लगता है।तो यह इसी में रत्त होने वाली प्रत्तियां हैं।ऋषि देवी ने कहा हे प्रभु! जब मैं आचार्य कुल में प्रवेश करती थी, उस समय मैं गुरु पत्नी के द्वार पर विद्यमान थी, मैंने गुरु पत्नी से कहा हे मातेश्वरी! मैं यह जानना चाहती हूँ कि यह जो तरल पदार्थ है, अमृतमयी ज्योति है, इसका तुम्हारे यहाँ क्या समाधान है।

उन्होंने कहा कि ये अपने में परमाणु है यह अपने में एक दूसरे में सुगठित करने वाला है, एक दूसरे में पिण्ड की स्थापना करने वाला है, यही जितने पिण्ड तुम्हें दृष्टिपात आते हैं, चाहे वह सूर्य मण्डल के रूप में हैं, चाहे वह चन्द्रमा के रूप में हैं, चाहे वह ध्रुव के रूप में हैं, चाहे वह और भी, मंगल मण्डल के रूप में क्यों न हो, यह सर्वत्र उसके पिण्ड में एक अमृतमयी ज्योति कहलाई जाती है, पिण्ड का जो निर्माण है, वहज्योतिमयी, आपोंयमी ज्योति से प्रगट होता है। 02.08.1987

48 ब्रह्माण्ड के चार विभाग

यह ब्रह्माण्ड चार प्रकार के ब्रह्माण्ड में विभक्त हो रहा है, सबसे प्रथम स्थावर सृष्टि है और द्वितीय सृष्टि का नाम अण्डज है और तृतीय सृष्टि का नाम जंगम है, और चतुर्थ सृष्टि का नाम उदभिज कहलाता है। 19.04.1991

49 स्थावर सृष्टि

एक तो वह स्थावर सृष्टि है, जिसमें वृक्ष आदि विद्यमान रहते हैं जिसके द्वारा यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में नाना प्रकार के साकल्य को एकत्रित करके और अपनी भावना और श्रद्धा को ले करके वह याग करता है, वह वनस्पति है उसी वनस्पति को वैद्यराज अपने गृह में प्रेरित कर लेते है, और वह अपनी जीवन शक्ति को प्रदान करते हुए, उनको भी जीवन शक्ति देते है। इसी प्रकार यह स्थावर सृष्टि है, जिसकी छाया में यह संसार अपने वातावरण को शुद्ध और पवित्र बनाता हैं, यह स्थावर सृष्टि है। 19.04.1991

50 अण्डज सृष्टि

द्वितीय अण्डज सृष्टि है, अण्डज सृष्टि में कुछ ऐसे प्राणी है, जोविशेष वायु को अपने में ग्रहण करते है, और वह वायुमण्डल का शुद्धिकरण करते हैं तो अण्डज सृष्टि में यह सर्प इत्यादि और भी योनियां हैं, जोअण्डे से उत्पन्न होने वाली हैं, ये जो यह इस प्रकार की सृष्टि है, जो शुद्धिकरण करती रहती है, तो यह परमात्मा का एक अनूठा जगत है, तो यह अण्डज सृष्टि कहलाती है। 19.04.1991

51 जंगम सृष्टि

और तृतीय सृष्टि का नाम जंगम है, जंगम में भी इस प्रकार की सृष्टि है, जो दूषिता को लेती है, और उसका शुद्धिकरण भी करती है, जैसेमानव समाज है, मानव समाज भी जंगम सृष्टि में आता है, यह सत्य उच्चारण करता है। वेदों का अध्ययन करता है, परमात्मा का चिन्तन करता है, विष को अपने में धारण करता हुआ, और यह वायुमण्डल का शुद्धिकरण करता है। यागिक बन करके, याग करता है।अपने श्रद्धामयी घृत की आहुति देकरके, वह देवताओं का आह्वान करता हुआ, शुद्धिकरण करता रहता है। यह जंगम सृष्टि में मानव समाज है, ऐसे बहुत से प्राणी है, जैसे गो है, गो के श्वास में भी शुद्धिकरण है, उसकी दृष्टि में भी शुद्धिकरण रहता है, तो इसी प्रकार जब उसके दुग्ध से यागिक याग करता है, तो उसमे भी शुद्धिकरण की भावना रहती है, उसको ही जल में मिश्रण करके, सूर्य की किरणों के साथ में, जब मन्त्रों का उदगीत गा करके, उसको वह समर्पित करता है, तो उसमें भी शुद्धिकरण की भावना होती है, तो यह सब जंगम सृष्टि की वृतियां मानी गई हैं।19 04 1991

52 उदभिज सृष्टि

चतुर्थ सृष्टि को उदभिज कहा जाता है, जो जल में रहने वाला प्राणी है, समुद्रों में जल में, जैसे यज्ञशाला में यज्ञमान विद्यमान है, और जल को ले करके, वह मेखला में जल का व्यवधान करता है, और जल का व्यवधान करके, उसका यह दूषित वायुमण्डल हो जाता है अथवा जब यह दूषित तरंगें, समुद्रों से मिलान करती हैं, वह समुद्र उसका शुद्धिकरण करते हैं, और समुद्र जब दूषित अथवा अपने जल में में, अपने में प्रवेश करते हैं, तो उनमें जो रहने वाला पृथ्वी मण्डल है, अथवा उसमें वास करने वाला, एक नृत हो रहा है। इसमें नाना प्राणी है। जैसे मछली हैऔर भी बहुत सी योनियां, समुद्र में मानी गई हैं, जो उसका शुद्धिकरण करती हैं, इसीलिए यह एक अनुपम जगत है, ये चार प्रकार की सृष्टि कहलाती है। 19.04.1991

53 सृष्टि की प्रतिष्ठा

ये जो चारों प्रकार की सृष्टि है, यह कहाँ प्रतिष्ठित होती है?हमारे यहां प्रतिष्ठा का बड़ा प्रसंग आता है।तो उन्होंने कहा हे प्रभु! यह कहाँ प्रतिष्ठित हो जाते हैं? तो उस समय याज्ञवल्क्य कहते है हे देवी! यह जो चारों प्रकार की सृष्टि है, यह पृथ्वी में ओत प्रोत हो जाती है, पृथ्वी में प्रतिष्ठित हो जाती है, क्योंकि पृथ्वी ही पिण्ड का मूल कारण है और पिण्ड भी पृथ्वी के कारण बना करता है, और जब पिण्ड बनता है, तो नाना प्रकार के पिण्ड बनते हैं, यह गुरुत्व के साथ, यह पृथ्वी का एक पिण्ड है और उस पिण्ड में भी चारों प्रकार की सृष्टि का व्यवधान है और यह सृष्टि भी पिण्ड रूप में विद्यमान हैं।

तो पंच महाभूतों का लोक और इसमें आत्मा वास करने वाला है, तो हे देवी! यह जो, चार प्रकार की सृष्टि का व्यवधान हो रहा है अथवा इसमें जो प्रतिष्ठा को प्राप्त हो रही है, पृथ्वी में प्रतिष्ठित हो जाती है। 19.04.1991

54 चार प्रकार की सृष्टि

ये सर्वत्र जो जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है। चाहे ये पृथ्वी मण्डल हो, चाहे बुध हो, चाहे मंगल हो, चाहे सूर्य या कोई भी मण्डल हो, परन्तु उसमें चार प्रकार की सृष्टि है। उनमें सबसे प्रथम सृष्टि स्थावर कहलाती है। स्थावर में ये जितना भी वनस्पति विज्ञान है, ये सब उसमें कटिबद्ध है। दूसरे जो सृष्टि का व्यवधान है, वह अण्डज सृष्टि कहलाती है। जो अण्डे से जन्म लेने वाला समाज है, अण्डे से जन्म लेने वाले प्राणी है, वे सब अण्डज कहलाते है। परन्तु उनमें बड़े अवान्तर भेद है। उसमें अहिंसा वाले प्राणी भी अण्डज सृष्टि से उत्पन्न होते है और विषधर भी उसी के गर्भ में। 28.03.1988

55 विभिन्न लोकों में स्थावर सृष्टि

स्थावर सृष्टि के सम्बन्ध में तुम्हें वर्णन किया था कि स्थावर सृष्टि में कितना वनस्पति विज्ञान है, वह बड़ा अनूठा माना गया है। क्योंकि यह जितना भी वृक्ष इत्यादि वनस्पति विज्ञान है, यह वनस्पतियों का जो भार है, इस ब्रह्माण्ड में वह सर्वत्र स्थावर सृष्टि कहलाती है।वह स्थावर सृष्टि पृथ्वी पर भी है, वह चन्द्रमा में भी है, वह सूर्यमण्डल में भी है, और वह बुध में भी है, वह शनि में विद्यमान है, मंगल मण्डल में भी वह सृष्टि विद्यमान है, क्योंकि जहां प्राणी रहता है, वहीं यह वनस्पति विज्ञान माना गया है, और वनस्पति विज्ञान को जानने वाले, वैद्यराज भी माने गए हैं, और वैद्यराज अपनें में तपा रहा है उसी स्थावर सृष्टि को, स्थावर सृष्टि में कुछ खनिज तत्व को ले करके, अग्नि में उसको तपा करके, खरल कर रहा है। तो वह नाना प्रकार के वनस्पति विज्ञान में लगा हुआ है, चाहे वह पृथ्वी मण्डल का प्राणी हो, कृषक हो, चाहे वह मंगल इत्यादि ओर किसी भी लोक लोकान्तरों का क्यों न हो, तो यह स्थावर सृष्टि बड़ी विचित्र है और उसके चार प्रकार माने गएहैं।

चिकित्सा प्रणाली में तो सभी जितनी वनस्पति हैं, चाहे वह फैलने वाली हों, चाहे वह ऊर्ध्वा गति को गमन करने वाली हों, चाहे वह वृतियों में रत रहने वाली हो, वह सर्वत्र औषध विज्ञान के रुप में विद्यमान रहता है। जैसे कनक है, उस कनक को यदि हम रात्रि को जल में प्रवेश करकेऔर प्रातःकालीन उसको खरल करके, दुग्ध बना करके और उसे तपा करके पान करते है, तो इस प्रकार का पान करने वाला, और उसमें एक मृचिका औषध होती है, उसे पान करने वाले के शरीर को, कदापि भी वृद्धपन नही आता। शरीर को त्यागा जा सकता है, परन्तु वृद्धपन नही आता, वृद्ध वह प्राणी होता है जिसके अंगों में शिथिलता जाती है और वह शिथिलता आ करके वह रूग्ण रहने लगता है, रूग्ण को वृद्धपन कहते हैं, शरीर को त्यागने को परिवर्तन कहते हैं

तो स्थावर सृष्टि में ऐसी ऐसी औषध है, जिनको खरल बना करके और शरीर पर मर्दन कर लिया जाता है, यह जो काष्ठ में रहने वाली अग्नि है, यह भी उस प्राणी को दग्ध नही कर सकती, उसे भस्म नही कर सकती है। 02.03.1990

56 परमाणुओं से गति

प्रभु का रचाया यह जगत जो दृष्टिपात आ रहा है, यह कितना विचित्रता में परिणत हो रहा है। सबसे प्रथम प्रभु का महत और इस महत से जो गति चली, महत से जो एक प्रबलता चली उससे अन्तरिक्ष के परमाणुओं में गति आ गई। जब अन्तरिक्ष के परमाणुओं में गति आई और वायु के परमाणुओं से गति आ जाने के पश्चात, जल के परमाणुओं में गति आ गई। जल बन गया और जब जल जिसे हमारे यहाँ रज कहते हैं, जिसको हमारे यहाँ अमागृति कहते हैं। जल, रजस्थल होता है। सूर्य जब तपता है तो पृथ्वी के परमाणु एकत्रित हो जाते हैं, स्थूल रूप में आ जाते हैं, यह पृथ्वी का मण्डल बन जाता है। यह कैसी सुंदर प्रभु की रचना है, जिसके ऊपर मानव को विचार विनिमय करना बहुत आवश्यक है।

ऋषि ने कहा कि हे राजन! तारा मण्डलों के प्रकाश से ये लोक लोकांतरों की उत्पत्ति इस प्रकार हो जाती है, क्योंकि जल के परमाणुओं में जो रज होता है जैसे रजस्थल, रज नाम पृथ्वी का है और स्थल नाम जल का है क्योंकि पृथ्वी के परमाणु जल में रमण करते रहते हैं। आज

यही स्वीकार नहीं कर लेना चाहिए, कि हमारा यही समुद्र है, यही जल है। परमात्मा की सृष्टि में जहाँ भी लोक होगा, वहाँ जल के परमाणु होंगे, वहीं जल होगा और जैसा ग्रीष्म ऋतु में जो जल है वह कहाँ चला जाता है?

सूर्य अपनी किरणों में अपने में धारण कर लेता है और वे जो किरणें हैं उन्हीं परमाणुओं को अन्तरिक्ष में विराजमान कर देती हैं। जब भी सूर्य की किरणें तेज हुईं और मेघों का उत्थान होते ही वृष्टि प्रारंभ हो जाती है। यह प्रभु की रचना कितनी विचित्र है। इसी को तो ऋत कहते हैं, इसी को तो महानता में परिणित किया गया है। 08.03.1969

57 सृष्टि का सृजन

एक समय महर्षि जालवी से यह प्रश्न किया गया कि यह गुरुत्व क्या है?तो उन्होंने कहा कि गुरुत्व ये तीन पदार्थ माने गये हैं, तीन प्रकार के परमाणु हैं, गुरुत्व तेजोमयी और तरलतव ये तीन परमाणु मान गए हैं, इसके ऊपर विज्ञान निहित रहता है, जब सृष्टि का प्रारम्भ होता है, तो महत्तत्व से उस धारा का जन्म होता है, और उस तेजोमयी धारा का जब जन्म होता है, तो वह अन्तरिक्ष में जाती है, अन्तरिक्ष में जब गति होनी प्रारम्भ होती है, तो परमाणु जागरूक हो जाते हैं, और वह परमाणु तेजोमयी, गुरुत्व और तरलत्व ये परमाणु जब गतिवान होते हैं, तो ये तीन प्रकार के परमाणु वायु में भ्रमण करने प्रारम्भ हो गए हैं और जब यह एक दूसरे से मिलान करते हैं, तो ये नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों का जन्म हो जाता है, यह नाना प्रकार के पिण्डों का निर्माण हो जाता है, माता के गर्भ में, एक बिन्दु के द्वारा जाता है, और वह बिन्दु ही तरलत्व है परन्तु गुरुत्व उसमें निहित रहता है रेतस रहता है। 06.07.1991

58 पंच महाभूत

महात्मा जालवी से यदि यह कहा गया कि आत्मा का लोक क्या है? तो महात्मा जालवी ने कहा कि आत्मा का जो लोक है वह पंच महाभूत है पंच महाभूतों से निर्माण किया हुआ यह मानव शरीर जो माता के गर्भस्थल में जिसका निर्माण होता है, तो यह आत्मा का गृह कहलाता है, इसमे वह वास करता है, इसमें सबसे प्रथम तेजोमयी है और तेजोमयी के पश्चात तरलत्व तरल पदार्थ है, और गुरुत्व कहलाता है, जिसमें पार्थिव तत्व होते हैं, उसके रूपों में, तेज गति है, गति वायु का रूप कहा जाता है। कृन्धन हो करके वह रमण कराता रहता है।

तो यह पंच महाभूत कहलाता है। पंच महाभूतों का यह आत्मा का शरीर है, आत्मा इसमें वास करने वाला, परन्तु यह पंच महाभूतों का वृत कहलाया जाता है। यदि साधक अग्नि के तत्वों को जान लेता है, तेजोमयी बन जाता है, तोयह जो वायुमण्डल में परमाणुवाद गमन कर रहा है, अग्नि के परमाणुओं को अपने में सिंचन कर लेता है, अग्नि के परमाणुओं का सिंचन करके, अग्नि को जान लेता है। अग्नि चाहे वह गृहपथ्य हो, चाहे वह गार्हपथ्य हो, चाहे वह वैश्वानर हो, चाहे वह अग्नि और भी नाना प्रकार के रूपों में रमण करने वाली हो, उसके पश्चात वह तरलत्व, तेजोमयी को जानने लगता है, क्योंकि वह तेजोमयी के तरल पदार्थ है, तरल कहते हैं आपो को, और आपो कहते हैं जल को, जिन कारणो से जल की रहने वाली, वस्तु का अवृत हुआ है, निर्माण हुआ है, उसमें से जो भी धातु जल में रमण कर रही है, उसको वह भलि भाँति, योगाभ्यास प्राण की शक्ति से जान लेता है, और मन को गम्भीरता में संलग्न करा देता है। 14.07.1991

59 त्रिवर्धा परमाणु

हमारे यहां जितने भी विज्ञानवेत्ता है, चाहे वह लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ने वाले हों, चाहे वह किसी भी रुप में जाने वाले हों इसी प्रकार वह अपने में त्रिवर्धा का वर्णन करते हैं, तीन प्रकार के परमाणु, मंगल मण्डल का विज्ञानवेता भी, तीन प्रकार के वैज्ञानिकों को अपने में, परमाणुओं को एकत्रित करता है, वशिष्ठ मण्डल का वैज्ञानिक भी उसी प्रकार से अपने में अवधान करता है।

यह संसार त्रिवर्धा माना गया है, तीन प्रकार की विद्याओं में परिणत है, ज्ञान, कर्म और उपासना, हम जब ज्ञानी, याग किसे कहते हैं? जब हम याग के द्वारा अपने क्रियाकलाप करेंगें, ज्ञान का कर्म से समन्वय रहता है, हमें ज्ञान होना चाहिए, ज्ञान के पश्चात कर्म होना चाहिए और जब ज्ञान और कर्म हमारे दोनों सिद्ध हो जाते हैं, तो हमें उपासना करनी चाहिए। 31.10.1991।

60 चार प्रकार की सृष्टि

यह जो मुझे संसार दृष्टिपात आ रहा है, यह कितने प्रकार का जगत है? महर्षि याज्ञवलक्य मुनि बोले कि हे देवी! यह जो संसार है, यह चार प्रकार की सृष्टियों में विभक्त हो रहा है, चार प्रकार की आभाओं में विभक्त हो रहा है, उन्होंने कहा सबसे प्रथम स्थावर सृष्टि और द्वितीय अण्डज सृष्टि है और तृतीय जंगम सृष्टि कहालाती है और चतुर्थ में उदभिज सृष्टि कहलाती है।

तो यह चार प्रकार की सृष्टि कहलाती है, सबसे स्थिर रहने वाली जगत, जिनमें नाना प्रकार की वनस्पतियां, वृक्ष इत्यादि यह सब स्थावर सृष्टि कहलाती हैं। और दूसरी सृष्टि का नाम अण्डज है, उस अण्डज के नाना प्रकार के भेदन माने गए हैं, अण्डज सृष्टि में कितने प्रकार के प्राणी हैं, कितने प्राणी वास करते हैं? जो पिण्ड से वायु में गमन करने वाला, यह एक अण्डे से जन्म लेता है, रेंगणे वाला प्राणी भी अण्डे से जन्म लेता है, जो गृत रहने वाला प्राणी है, वह भी अण्डे से जन्म लेता है, जैसे सर्प इत्यादि हैं, वह सब अण्डज सृष्टि कहलाती है। अण्डे

से जन्म लेने वाला है, और पक्षी गणों में, जो अन्तरिक्ष के उड़ान उड़ने वाला, वह भी अण्डज सृष्टि वाला कहलाता है, इसके अवान्तर भेद माने गए हैं। 31.10.1991

61 स्थावर सृष्टि

आज मैं उन भेदनों में न जाता हुआ, स्थावर सृष्टि में स्थिर रहने वाली, यह सृष्टि कहलाती है। इसमें जितना भी वृक्ष है, वह सर्वत्र स्थावर सृष्टि में हैं, और स्थावर सृष्टि में नाना प्रकार की वनस्पतियां है, जो प्रदूषण को निगलने वाली हैं, और वही मृतक बन करके, अपने स्वरुप में आ करके, साकल्य बन करके, अग्नि में उनको भस्म किया जाता है, तो वह प्रदूषण को निगल जाती है। इसी प्रकार किसी वनस्पति का अग्नि तत्व प्रधान है, तो किसी में जल तत्व प्रधान है, किसी में गुरुत्व प्रधान है, ये चारों प्रकार की आभा में रत रहने वाला यह स्थावर सृष्टि कहलाती है।

स्थावर सृष्टि, जब मेरे पिता ने, सृष्टि का प्रारम्भ किया, तो प्रारम्भ करते ही, जब यह सृष्टि की रचना हो गई, तो धीमे धीमे यह संसार कुछ सांत्वना को प्राप्त हुआ, तो इसमें सबसे प्रथम वनस्पति का जन्म हुआ, जल के सन्निधान मात्र से, वनस्पति का जन्म हुआ, और वनस्पतियों में नाना प्रकार के वृक्षों का जन्म हुआ, तो इसी प्रकार उसके पश्चात अण्डज सृष्टि का जन्म हुआ, अण्डे से उत्पन्न होने वाले एक अण्डज है, जो समुद्र के तट पर अपने अण्डज दे करके, वह उसे अपने में सिंचने लगता है, बहुत दूरी से कोई नेत्रों से सींच रहा है, कोई अपने नीचे दबा करके उसे सींच रहा है।

कितने अवान्तर भेदन माने गए हैं आज मैं जब सृष्टि को और प्रभु की रचना के ऊपर विचार विनिमय करता हूँ, तो अन्तरात्मा गदगद हो जाता है, कि कितने प्रकार का प्रभु का यह जगत है, जिसके ऊपर मानव अपने में मानवीयता का, अपने में अपनेपन को ही धारण करता रहता, एक कच्छवा प्राणी है, जो अण्डे से उत्पन्न होने वाला है, वह समुद्र के जलाशय मेंस्थिर करता है, और वह अपने जहां ईंगला, पिंगला सुषम्णा का, नेत्रों से समन्वय होता है, उसके प्रकाश से सींचने लगता है, यह प्रभु का कैसा अनूठा जगत है। 31.10.1991

62 चतुर्सृष्टि

तो यह परमपिता परमात्मा का रचाया हुआ एक भव्य भवन है, और यह यज्ञशाला है, जिसके ऊपर विद्यमान हो करके, यह चारों प्रकार की सृष्टियों का निर्माण होता है, और वही यागिक रूपों में परिणत रहने वाले माने जाते हैं, जैसे अण्डल सृष्टि है, वह भी नाना प्रकार के यागों मे परिणत रहती है, स्थावर सृष्टि उसी में वनस्पतियों का व्यवधान होता रहता है, नाना प्रकार की वनस्पतियाँ अपने में अपनेपन का भान करके जीवन शक्ति के लिए हुए वह इस भव्य यज्ञशाला में अपने रूप में परिणत हो रही हैं। तो इसी प्रकार अण्डज सृष्टि है.अण्डज सृष्टि में जैसे सर्प इत्यादि योनियाँ हैं, और भी विषैली योनियाँ हैं, वायुमण्डल में जो दूषित वायु बह रहा है, उसे वह अपने में धारण करके यज्ञशाला में याग कर रहे हैं, अपना शुद्धिकरण करते हुए, अशुद्धियों को निगलते रहते हैं।इसी प्रकार जंगम सृष्टि है, इसमें मानव से ले करके पशु तब वह सर्वत्र श्वास के द्वारा कोई, अपने में द्रव्य के द्वारा पान करके इस याग में परिणत हो रहे हैं। 26.02.1992

63 लोकों की स्थिति

प्रत्येक लोक अंडाकार

यह ब्रह्माण्ड सर्वत्र एक अण्डाकार बना हुआ है और जब यह अण्डाकार है तो यज्ञवेदी का निर्माण कैसे हो? तो जब अण्डाकार का विभाजन हुआ तो अण्डाकार में से ही ये नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की रचना हुई। प्रत्येक लोक, अंडाकार में ही निर्मित है। ये पृथ्वी भी उसी रूपों में है। सूर्य भी उसी रूपों में, बृहस्पति भी उसी रूपों में, ध्रुव मण्डल भी उसी रूपों में है। नाना मण्डल भी उसी प्रकार के है। 05.03.1979

64 लोकों के मध्य में अवकाश

एक लोक उस आंगन में है, एक लोक उस आँगन में, एक मध्य में, तो मध्य में अवकाश हैं। जब मध्य में अवकाश प्राप्त हुआ तो, उन्होंने वेद के मन्त्र से ये विचारा कि ये अंडाकार, एक-एक अंडाकार जैसे चकोण होता है। जैसे हमारे यहाँ बारह कोण, अष्ट कोण होता है। तो इसी प्रकार लोक लोकान्तर अपनी-अपनी स्थली पर स्थिर है। तो स्थिर होने के नाते उसके मध्य में अवकाश है। जब उसके मध्य में अवकाश माना गया है, तो उसी के आधार पर ऋषि मुनियों ने कहा कि इस प्रकार हमें यज्ञशाला का निर्माण करना चाहिए।प्रत्येक लोक के साथ में वरुण है, अग्नि है। अग्नि की वे सूक्ष्म धाराए है जो इनको, एक दूसरे को आकर्षण शक्ति से स्थिर किए रहती है।

65 एक दूसरा मण्डल दुसरे के लिए खनिज उत्पादक

तो आदि ऋषियों ने जब इसको विचारा, तो विचारने से प्रतीत हुआ कि इस प्रकार से यज्ञवेदी का निर्माण होगा। और वह जो अवकाश है उसमें कोई वस्तु है, उसमें कोई हमें भरण करनी है। जैसे पृथ्वी है, पृथ्वी में अवकाश है। उसके अवकाश में कोई वस्तु भरण है। खनिज एक

दूसरे आंगन से, दूसरे आंगन में गति करता रहता है। जैसे मानव के शरीर में रक्त गति करता है, जिस प्रकार इस वसुन्धरा के गर्भ में, पृथ्वी के गर्भ में एक दूसरा खनिज एक दूसरे खनिज से मिलान करता है, वह उसको सुगठित बनाता है ओर भी नीचले स्थल में पहुंचोगे तो वहाँ पिपाद नामक जल गति कर रहा है। शक्तिशाली जल है। ओर भी निचले स्थान में जाओगे तो वहाँ पर्वतीय कणों के आँगन, धातुओं में गति कर रहे है। ओर निचले स्थानों में जाओगे, तो सूर्य जल को शक्तिशाली बना रहा है। अब कोणों में जाओ, जिसभी कोण में जाओगे, उसी कोण में तुम्हें खनिज प्राप्त होंगे। उसके गर्भ में जाने से यह प्रतीत होता है कि प्रभु ने जो अण्डाकार जगत बनाया है। अण्डाकार जो पृथ्वी का मण्डल बनाया है। अथवा नाना लोकों का निर्माण किया है। तो वो एक दूसरा लोक एक दूसरे लोक में खनिज की उत्पत्ति कर रहा है।

जैसे पृथ्वी मण्डल हैं पृथ्वी मण्डल के उसकी जो तरंगे है वे मंगल को अभायित कर रहे हैं और मंगल शुक्र को आभायित कर रहा है और शुक्र चन्द्रमा को आभायित कर रहा है और चन्द्रमा गन्धर्व लोकों को आभायित कर रहा है और चन्द्रमा से जो प्रकाश आता है, वह सूर्य से आता है। सूर्य उसको प्रकाशित कर रहा है। तो एक दूसरा मण्डल एक दूसरे मण्डल को प्रकाश में ले जा रहा है। एक दूसरा मण्डल एक दूसरे में खनिज की उत्पत्ति कर रहा है। एक दूसरा मण्डल एक दूसरे की आभा में युक्त हो रहा है। 05.03.1979

सूर्य मण्डल की चर्चाए, वहां अग्निमयी शरीर वाले प्राणी रहते हैं चन्द्रमा में तमोगुणी प्राणी रहते हैं। मंगल में पार्थिव तत्व वाले प्राणी रहते हैं। 31.03.1990

66 शब्द का वाहन अग्नि

यह द्वितीय वाक्य है कि वहाँ किसी भी तत्व वाला प्राणी रहता हो। जैसे सूर्य मण्डल में अग्नि तत्व प्रधान प्राणी रहता है।

ध्रुव मण्डल में वायु और जल वाला प्राणी रहता है। बृहस्पति मण्डल में अप्रताप और पृथ्वी तत्व वाला प्राणी रहता है। मंगल में पार्थिव तत्व प्राणी रहता है।

आज का वैज्ञानिक, पृथ्वी के गर्भ में कितना धातु है, कितनी दूरी पर है, यह पूर्ण रूप से नहीं जान पाया। एक खनिज को जाना है, उसके द्वितीय खनिज को नहीं जाना, कि निचले विभाग में कौन सा खनिज है। उसको नहीं जाना और न ही दृष्टिपात हुआ, परन्तु प्रयास हो रहा है, निर्धारित किया जा रहा है। अब मैं तुम्हें नाना प्रकार के यन्त्रों की चर्चाएं प्रकट कर रहा हूँ, जिससे राष्ट्र के राष्ट्र भस्म हो जाएं। अनुसन्धान में युक्त रहने वाली, जो विज्ञानमयी तरंगें हैं, वे तरंगें शब्दों तक सीमित रहती हैं। यह वैज्ञानिक जानता है, कि शब्द अन्तरिक्ष में गति करता है। शब्दों का जो वाहन है, वह अग्नि है। वेद के मन्त्रों में आता है, शब्द का जो वाहन माना जाता है, वह अग्नि है। प्रभु का वाहन भी अग्नि ही माना जाता है। 05.12.1986

67 अन्य लोकों में प्राणी की स्थिति

जेष्ठाय नक्षत्र में वायु तत्व प्रधान है। वहाँ जो प्राणी हैं, मानव है, वे वायु तत्व में विचरण करने वाले होते हैं। कहीं कहीं ऐसा माना जाता है कि जहाँ पार्थिव तत्व अधिक नहीं होंगे, वहाँ प्राणी किस प्रकार रह सकते हैं? मैं यह कहा करता हूँ कि गंधर्व योनियां, जो वायु मण्डल में विचरण करती हैं, तो हमारे यहाँ पार्थिव तत्व को क्यों प्रधानता दी गई है, और सूर्य में अग्नि तत्व को क्यों प्रधानता दी गई है, जब वहाँ प्राणी स्वीकार नहीं करते तो इतने बड़े लोक लोकान्तरों का भी वर्णन नहीं आएगा। परन्तु सब लोकों में आत्मा रहती है। 26.07.1967

68 तीन प्रकार के सौर मण्डल

राजा जनक ने पुनः प्रश्न किया महाराज! जब यह चन्द्रमा नहीं रहता, सूर्य नहीं होता, उस समय हमारे नेत्रों का देवता कौन होता है? उन्होंने कहा कि हे राजन! जब यह चन्द्रमा, सूर्य नहीं होता, तो हमारे नेत्रों के प्रकाशक ये तारागण होते हैं, जिन्हें हम नाना मण्डल कहते हैं। नाना प्रकार के मण्डलों से प्रकाश आता है। उसी प्रकाश में हमारे नेत्र प्रकाशमान रहते हैं। उसी प्रकाश से हम अपना कर्त्तव्य करने को तत्पर रहते हैं। हे राजन! उस परमात्मा की सृष्टि में इस ब्रह्माण्ड में तीन प्रकार के सा। सौर मण्डल कहे जाते हैं। एक सौर मण्डल का अधिपति सूर्य कहलाया जाता है, द्वितीय सौर मण्डल का अधिपति बृहस्पति कहलाया जाता है और तृतीय मण्डल का अधिपति ध्रुव कहलाया जाता है। ये तीन प्रकार के सौर मण्डल हैं। इन सौर मण्डलों में नाना प्रकार के सूर्य हैं, नाना चन्द्रमा हैं, नाना मंगल हैं, नाना बुध हैं, नाना प्रकार के मण्डल कहलाए जाते हैं। हम उसके प्रकाश में अपना कर्त्तव्य करने में तत्पर रहते हैं। ऐसे ऐसे लोक लोकांतर हैं, जिसमें नाना सूर्य समाहित हो जाते हैं। नाना पृथ्वियां हैं, नाना बुध और वृहस्पतियां हैं। इतने विशाल विशाल मण्डल हैं, आज वैज्ञानिक गण उसका अनुसंधान करते हैं तो प्रतीत होता है, कि प्रभु की कैसी उत्तम सृष्टि है, कि सब लोक लोकांतर अन्तरिक्ष में विराजमान हैं, परन्तु एक दूसरा लोक एक दूसरे मण्डल तक उनका मिलान नहीं होता। जब समय आता है तो जो सूर्य का प्रकाश आज हैं वह करोड़ों वर्षों के पश्चात न रहेगा, जो क्रांति चन्द्रमा में है, वह कुछ समय के पश्चात नहीं रहेगी। इसका अभिप्राय क्या है, उसका समय भी आना है यह कैसी विचित्रता

कि सब लोक लोकातंर अन्तरिक्ष में रहते हैं परन्तु एक दूसरे के आकर्षण शक्ति से रहते हैं। वह प्रभु कितना सुदंर वैज्ञानिक है, कितना महान है कि उसकी जो आकर्षण शक्ति है किसी भी काल में सूक्ष्म नहीं होती। जब सूक्ष्म होती है तो लोकों का एक पिण्ड बन जाता है। पिण्ड बन करके परमाणु बन जाते हैं यह संसार प्रलय काल को प्राप्त हो जाता है। 08.03.1969

69 बुध, मंगल की आकर्षण शक्ति में यन्त्र

चन्द्र मण्डल पर, चन्द्र से ऊँचा लोक बुध है, उस पर उनका प्रायः अनुसन्धान रहा। जिस समय यंत्रों का प्रादुर्भाव करके वे यन्त्रों को वायु मण्डल में त्याग देते थे। वेदों में इस प्रकार की पुनीत विद्या आती रहती है। महाराजा बभ्रुवाहन ने और घटोत्कच्छ दोनों ने अपनी विज्ञान शालाओं में ऐसे यन्त्रों को त्याग दिया। वायु मण्डल में, जो चन्द्रमा के उपरोक्त भाग में, बुध की और मंगल दोनों की आकर्षण शक्ति का मिलान होता है। उस मिलान में वह आज भी भ्रमण कर रहे हैं। आज जब हम यह विचारने लगते हैं इस पृथ्वी मण्डल का प्राणी, जब सूर्य मण्डल के ऊपर ले भाग में पहुंचेगा, चन्द्रमा के कक्ष से, अक्रेति से, उसकी आकर्षण शक्ति से जब वह उसके कक्ष से दूरी पहुंचेगा, उस समय उन्हें यह प्रतीत होगे। ''अस्विति'' नाम का यन्त्र महाराजा बभ्रुवाहन ने निर्माण किया हुआ था और 'सोमाकृतिक' नाम का यन्त्र था, जो महाराजा घटोत्कच्छ ने निर्माण किया था। वह उसी प्रकार भ्रमण कर रहे हैं। उस समय महाभारत का संग्राम हुआ था। महाभारत के संग्राम में इस प्रकार के यन्त्र वायुमण्डल में त्याग दिए गए थे। 01.08.1970

70 विभिन्न लोकों में यज्ञ

चन्द्र एवं सूर्यादि मण्डलों में भी यज्ञ किए जाते हैं। महानन्द जी ने मुझे प्रेरणा दी है कि यहाँ पृथ्वी मण्डल पर यज्ञ हो रहा है, तो इसी प्रकार के यज्ञ सूर्य मण्डल में, चन्द्र मण्डल में, बुध में, मंगल इत्यादि लोक लोकान्तरों में, बुद्धिमानों की, वेद की आभा के द्वारा होते रहते हैं। क्योंकि वेद नाम प्रकाश का है। जिस प्रकार का प्राणी है, उसी प्रकार का वेदों में ज्ञान और विज्ञान निहित रहता है। जैसे सूर्य मण्डल है, उसमें अग्नि प्रधान है।तो अग्नि प्रधान वाले लोक में, उसी प्रकार की समिधा आग्नेय प्राणी अपने यज्ञ विचार आते है। सूर्य लोक में 'जातवेद' नामक अग्नि में यज्ञ होता है। 'जातवेद' अग्नि विचारों से प्रदीप्त होती है। मंगल मण्डल में पृथ्वी के समान यज्ञ होते हैं। उसमें अग्नि कौन सी प्रदीप्त होती है? जिसमें यज्ञ करते हैं, जिसमें वह समिधा भस्म होती है। तो कहा जाता है वह अग्नि 'जात वेद' नाम की अग्नि है।'जातवेद'नाम की अग्नि कौन सी होती है? जातवेद नाम की अग्नि वह होती है, जो 'जा' और 'त' मिल करके जिस अग्नि का निर्माण होता होता है, वह जो यजशाला है, वह भी आग्नेय है, और उसमें भस्म कौन सी सामग्री होगी? ऋषि कहते हैं वह एक समिधा है। आग्नेय ही विचार है, उसी प्रकार का प्राणी, उसी प्रकार की लेखनी बद्ध करके 'स्वाहा' कह रहा है।

''जातवेद'' नाम की अग्नि कौन सी है? ''जातवेद'' नाम की अग्नि वह है जो विचारी जाती है। वह कौन सी अग्नि है? जिसे विचार रूपों से प्रदीप्त किया जाता है। जब एक विद्वानों का ब्रह्मयज्ञ हो रहा है, जब ब्रह्मयज्ञ होता है, तो वहाँ मृत्यु के ऊपर विचार विनिमय होता है। कहीं द्यौलोक के सम्बन्ध में विचार विनिमय होता है। जैसे मंगल मण्डल है, वहाँ पार्थिवतत्व प्रधान है, उसी प्रकार की समिधा। इसी प्रकार की सामग्री। वहाँ इसी प्रकार की लौकिक अग्नि में यज्ञ किया जाता है। प्रत्येक इन्द्रिय को ब्रह्ममय मानकर, विषयों की सामग्री बनाकर, यज्ञ किया जाता है। 25.02.1972

71 नाना सौर मण्डल

मैं लोक लोकांतरों की गणना करने नहीं आया हूँ। विचार यह देने आया हूँ कि इस प्रभु के राष्ट्र में, इस प्रभु के जगत में तीन प्रकार के सौर मण्डल कहलाए जाते हैं। उन सौर मण्डल में प्रभु के राष्ट्र में एक सौर मण्डल का अधिपति सूर्य है, द्वितीय सौर मण्डल का अधिपति बृहस्पति है, तृतीय सौर मण्डल का अधिपति ध्रुव कहलाया गया है। और ऐसे ऐसे प्रभु के राष्ट्र में अनन्त मण्डल कहलाए जाते हैं। एक आकाश गंगा है, उस आकाशगंगा में नाना प्रकार के सौर मण्डल हैं, नाना ध्रुव हैं, नाना जेठाय हैं, नाना गन्धर्व हैं।

उस प्रभु के राष्ट्र में नाना आकाशगंगाएं, नाना सौर मण्डल हैं। यह तो प्रभु का विज्ञान है, प्रभु का राष्ट्र है। इसको ऋषि मुनियों ने नेति नेति उच्चारण किया है। क्यों कहा है? क्योंकि परमात्मा जिस प्रकार अनन्त है, उसी प्रकार, उसकी विज्ञान रचना भी अनन्त ही मानी गई है। 16.03.1972

72 विभिन्न लोकों के वैज्ञानिक

आज का वैज्ञानिक जो लोक लोकान्तरों का वैज्ञानिक है, वह पृथ्वी मण्डल पर अनुसन्धान करने वाले वैज्ञानिक के समान विचार कर रहा है। इसी प्रकार का मंगल का वैज्ञानिक भी विचार कर रहा है। इसी प्रकार सूर्य मण्डल का वैज्ञानिक भी विचार विनिमय कर रहा है और भी नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों का वैज्ञानिक विचार विनिमय कर रहा है। परन्तु आज हमारा वैदिक साहित्य तो आदि काल से ही यह उच्चारण कर रहा है। क्योंकि वैदिकता क्या हैं? आज प्रत्येक मानव को यह विचार आता रहता है, कि वैदिकता है क्या? ''वैदिकता वही

है जो लोक लोकान्तरों के विज्ञान में परमात्मा की जो सम्पन्न विद्या है।'' 25.02.1972।

73 प्रलय काल में लोकों की स्थिति

परन्तु जब प्रलय काल आता है, तो प्रलय काल में ये लोक लोकान्तर एक पिण्डाकार के रूप में परिणत हो जाते हैं, और वह पिण्डाकार महत्त तत्व में परिणत होते हुए, ये प्रकृति, आत्मा और परमात्मा तीनों भिन्न भिन्न हो जाते हैं। ऐसा प्रायः वैदिक साहित्य स्वीकार करता है। हमारा अभिप्राय यह कि विज्ञान के युग में विज्ञान की प्रतिभा प्रायः हमारे मस्तिष्कों में चली आई है। महर्षि भारद्वाज मुनि दालभ्य, प्रवाहण, सेमभूनि आदि नाना ऋषियों के वर्णन में केवल यही आता है, कि उन्होंने ऊँचे से ऊँची उड़ान उड़ी। 25 02 1972।

विभिन्न लोकों के वैज्ञानिक

मंगल मण्डल से गुप्त विभाग प्रायः पुरातन काल में भी आता रहा है। और मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने प्रकट किया है, कि महाभारत काल में जो अर्जुन जी थे, वह उस समय चन्द्रमा में यानों के द्वारा गए और वहाँ विज्ञान को प्राप्त करने आए। इस प्रकार का प्रायः वैज्ञानिकों का लोकों में यातायात भी रहा है, परम्परा से रहा है आज भी बनने वाला है, बनता रहता है।

संसार के इस ब्रह्माण्ड के वैज्ञानिकों का, सूर्य मण्डल का जो वैज्ञानिक लृतकेतु है और मंगल का जो श्वेतकेतु है और जो बृहस्पति का जो रोहिणी केतु जो ये तीन वैज्ञानिक हैं इनका यह विचार है कि हम चन्द्रमा और सूर्य के मध्य में एक ऐसा स्थल बनाना चाहते हैं, जिसमें ब्रह्माण्ड के वैज्ञानिक विराजमान हो करके उस पर कुछ विचार विनिमय कर सकें। संसार का वैज्ञानिक उसमें आता चला जाए। इस प्रकार का जो विज्ञान मानव के विचारों में आता रहता है, संसार और ब्रह्माण्ड के विचारों में आता रहता है। परन्तु इससे मुझे ऐसा प्रतीत होता है वह विज्ञान सफल हो भी सकता है, नहीं भी हो सकता। परन्तु इस प्रकार का वैज्ञानिकों का विचार है। आधुनिक इस पृथ्वी मण्डल का जो वैज्ञानिक है, वह तो यह विचार रहा है कि पृथ्वी मण्डल और जहाँ पृथ्वी की आकर्षण शक्ति समाप्त होती है, और चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति और पृथ्वी की आकर्षण शक्ति जहाँ दोनों की समान है, वहाँ एक स्थल बनाना चाहिए। वहाँ एक ऐसा स्थल बनाना चाहिए जिससे यहाँ का यान जाए और वहाँ कुछ समय तक विश्राम करके आगे यान रमण करने वाला बने। वैज्ञानिक यह विचार विनिमय करता है। परन्तु ब्रह्माण्ड का वैज्ञानिक यह विचारता है कि चन्द्रमा का ऊपरला जो कक्ष है और बृहस्पति के बराबर त्रिकोण वाला जो स्थल है और जहाँ मंगल कीपरिधि समाप्त होती है और सूर्य की परिधि बहुत निकट आ जाती है, वहाँ एक स्थल बनना चाहिए। जहाँ संसार का, ब्रह्माण्ड का वैज्ञानिक विराजमान हो करके विचार विनिमय करने वाला बनें। तो इस प्रकार की विचार धारा ब्रह्माण्ड के वैज्ञानिकों की प्रायः चलती रहती है। 26.02.1972

74 वायु प्रधान वाले लोक

एक वैज्ञानिक यह विचार विनिमय करता है कि मैं चन्द्रमा की यात्रा करने जा रहा हूँ। द्वितीय कहता है कि मैं मंगल की यात्रा में सफल होना चाहता हूँ। शुक्र के लिए कल्पनाबद्ध रहता है। तो नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में उसकी महान विडम्बना होती है। एक कल्पना बनाता है, परन्तु उस कल्पना के साथ साथ नाना प्रकार के यन्त्रों को जानने का प्रयास करता है। वह उन यन्त्रों में पहुंच जाता है, जहाँ वायु तत्व और परमाणु अधिक होते है। और अग्नि तत्व उससे सूक्ष्म होते हैं, जहाँ जल परमाणु सूक्ष्म होते हैं। इसी प्रकार उन परमाणुओं को सन्निधान से एकत्रित करता है। सन्निधान करने के पश्चात उनका युक्ति युक्त निदान करके, एक यन्त्र को निर्धारित कर लेता है। उस यन्त्र में वह विराजमान हो जाता है। ऊपर के लोकों को जाने वाले जितने भी यन्त्र होते हैं। उनमें वायु की प्रधानता अधिक होनी चाहिए। अग्नि उससे सूक्ष्म होनी चाहिए। क्योंकि अग्नि के परमाणु ऊर्ध्वगति को प्राप्त होते हैं। जब वैज्ञानिक यन्त्र बनाकर वायु के वेग में जब अग्नि का सन्निधान होता है। तो उसकी प्रक्रिया उसमें प्राण की अवरेतगति होती है, उसके पश्चात ऊर्ध्वागति को प्राप्त होना उसका एक स्वाभाविक हो जाता है। 29.07.1973

75 मंडलों की आकर्षण शक्ति

जहाँ एक दूसरे मण्डल को आकर्षण शक्ति है। एक स्थान ऐसा है, वायु मण्डल में, जिसको हम सौर मण्डल कहा करते हैं। एक स्थल ऐसा हैजहाँ तीन सौर मण्डलों की परिधि, उनकी सीमा प्रायः प्राप्त होती हैं। वहाँ कोई भी वस्तु यदि निर्धारित की जाए, तो वह स्थिर हो जाती है। क्योंकि उसमें एक दूसरे में आकर्षण शक्ति है।

हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में गन्धर्व लोकों का प्रायः वर्णन आता रहता है। गन्धर्व लोक उन्हें कहा जाता है जहाँ एक दूसरे की आकर्षण शक्ति एक दूसरे से सुगठित रहती है'अत मिलन नहीं हो पाता। वायु मण्डल में भ्रमण कर रहे हैं, परन्तु एक दूसरा मण्डल एक दूसरे से मिलान नहीं कर पाता। कैसी विचित्रता है प्रभु की? 04.05.1976

76 प्रलय काल की स्थिति

परन्तु जब प्रलय काल में ये लोक लोकान्तर एक पिण्डकार के रूप में परिणित हो जाते हैं, और वह पिण्डाकार महत्त तत्व में परिणित हुए, यह प्रकृति, आत्मा और परमात्मा तीनों भिन्न भिन्न हो जाते हैं। 04.05.1976

77 प्रत्येक मण्डल में जीवन

पुरातन काल के वैज्ञानिकों को आधुनिक काल का वैज्ञानिक यह कहता है कि वह गौ धृत को पान करने वाले वैज्ञानिक नहीं थे। मैं यह कहा करता हूँ कि हमारे यहाँ जितनी भी भू गर्भ और जितना भी आकाशगंगा के नाना लोक लोकान्तर हैं उनका हमारे ऋषि मुनियों का अध्ययन रहा है। परन्तु जितना भी विज्ञान रहा है वह मस्तिष्कों में नहीं। परन्तु वह पोथियों में और प्रायः बाह्य जगत में आता रहा है। मैं यह जानना चाहता हूँ। जब यह विज्ञान नहीं था, तो यह विज्ञानपूर्व ऋषियों ने, पूर्व आचार्यों ने नहीं जाना तो आज यह कैसे जाना गया? आज संसार की कौन सी ऐसी पोथी है, ऐसा कौन सा विचार है, जो विज्ञान में आज के मानव ने जाना है। परन्तु पुरातन काल में मैंने यह कहा कि विज्ञान इतना ऊंचा है, इतना महान है कि जहाँ यन्त्र अन्तरिक्ष में गति कर रहा है, आज का जो विज्ञान है वह नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में जाने के लिए विचार विनिमय कर रहा है। परन्तु यहाँ जो पृथ्वी का वैज्ञानिक मंगल की कल्पना कर रहा है, और मंगल का वैज्ञानिक पृथ्वी की कल्पना कर रहा है, और ध्रुव का वैज्ञानिक जेठाय नक्षत्रों की कल्पना कर रहा है। कल्पना ही नहीं, परन्तु वह वैज्ञानिक अपनी जीवनी शक्ति को लेकर, वह विज्ञान की तरंगों को लेकर के तरंगित हो रहा है। जहाँ यह पृथ्वी है, जहाँ जल है, जहाँ वायुगति कर रहा है, अग्नि की तरंगें विद्यमान हैं वहाँ जनजीवन अनिवार्य होगा। चाहे कोई भी लोक लोकान्तर हो, यह पृथ्वी है और कोई पृथ्वी हो, मंगल हो, चन्द्रमा हो चाहे वह सूर्य मण्डल क्यों न हो, बृहस्पति और जेठाय नक्षत्र क्यों न हो। 18 03 1978

78 जीवन के तत्व

आज के मानव चन्द्रमा में जीवन का भाव भी स्वीकार करते हैं और अभाव भी स्वीकार करते हैं।भाव भी, अभाव भी। परन्तु में यह उच्चारण करता हूँ कि जहाँ पार्थिवता है, पर्वतों की माला है, वहाँ वृक्ष अवश्य होगा और जहाँ पर्वतों की माला है, वहाँ जल भी होगा, जहाँ पर्वतों की माला होगी वहाँ जीवन भी होगा, जहाँ जीवन होगा वहाँ राष्ट्र भी होगा।

प्रत्येक मानव को वैज्ञानिक बनना चाहिए। यहाँ प्रत्येक मानव को मानवता की आभा में रमण करना चाहिए। क्योंकि मानव जीवन ही एक जीवन है, आज जिससे मानव बनते हैं। 18.03.1978

लोकों में प्राणियों का आवागमन इस समय जो संसार के प्राणियों की गति हो रही है वह समय दूर नहीं है जब यहाँ जितने अन्तरिक्ष में लोक लोकांतर हैं वहाँ वैज्ञानिकों का आदान प्रदान होने जा रहा है। क्योंकि मंगल का प्राणी मंगल का वैज्ञानिक पृथ्वी पर भ्रमण करने आता है और यहाँ का प्राणी मंगल में चला जाएगा कुछ काल के पश्चात और चन्द्रमा में गति करने वाले चन्द्रमा के प्राणी यहाँ गति करेंगे। 09.04.1978

इसी प्रकार वैज्ञानिक, जब विज्ञान के युग में प्रवेश करता है, वैज्ञानिक क्षेत्रों में प्रवेश करता है, तो वह उड़ान उड़ता है, यह पृथ्वी मण्डल है। मुझे पृथ्वी मण्डल से बाह्य उड़ान उड़नी चाहिए। वह मंगल में उसकी उड़ान, मन के संकल्प के द्वारा जाती है, और मंगल से उड़ान उड करके वह नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की माला बना लेता है। वहाँ का जितना भी क्रिया कलाप है, वहाँ की जितनी भी धाराएं हैं; चित्रणता है यह मन यौगिक बन करके उसका चित्रण कर लेता है। और चित्रण करके वह बाह्य जगत में मन के संकल्प के द्वारा वह यन्त्रों का निर्माण करता है। 23.04.1979

79 विभिन्न लोकों की यात्रा

तरंगों को अपने में धारण करता हुआ, वह मनोनीतता से विचारता है। उन तरंगों का, उन परमाणुओं का विभाजन करता है। तो जो वह विभाजन कर लेता है, एक अणु से, परमाणु, दूसरे परमाणु से मिलान करता है। कहीं परमाणुओं से शक्तिशाली जो औषध है, साकल्य है, अग्नि ने जिसका रूपान्तर कर दिया है, उसके स्वरूप को वह परिवर्तित करता है। वैज्ञानिक अपनी विज्ञानशाला में उन तरंगों को अपने में ग्रहण करता है, और ग्रहण करके उसमें से नाना यन्त्रों का निर्माण करने लगता है। जब यन्त्रों का निर्माण हो जाता है तो वैज्ञानिक यह विचारता, यह उड़ान उड़ता रहता है उनके द्वारा वह कहीं सूर्य मण्डल की यात्रा करता है। कहीं उन्हीं तरंगों को ले करके वह मंगल में चला जाता है। कहीं वह शुक्र में गति करने लगता है। नाना लोक लोकान्तरों के प्राणीमात्र की आवास, आदान प्रदान को वह जानने लगता है। उसमें जानकारी द्वारा गति करने लगता है। क्योंकि वह अनुभव का विषय नहीं, प्रत्यक्षवाद का विषय बन जाता है। 04.09.1979

80 पृथ्वी चन्द्रमा के मध्य त्रेता कालीन यन्त्र

राजा रावण के विधाता कुम्भकरण ने और ब्रह्मचारी सुकेता ने ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु और कवन्धि ये तीन ब्रह्मचारी थे, जिन्होंने भारद्वाज की निर्माशाला में, यन्त्र का निर्माण किया था और वह यन्त्र भारद्वाज की निर्माणशाला से उन्होंने पृथ्वी चन्द्रमा के मध्य में स्थिर किया

और अपने यन्त्र से उड़ान उड़ करके, अनुसन्धानशाला में जाते और दोनों मण्डलों का परीक्षण करते रहे हैं। परन्तु वह जो परीक्षण हो रहा था, नीचे उनकी तरंगें आ रही थीं, उनको दृष्टिपात किया जा रहा था। यह भारद्वाज की विज्ञानशाला की वार्ताएं हैं।

परन्तु राजा रावण के यहाँ बहुत सी विज्ञानशालाएं, इस प्रकार की थीं। आज भी हो सकती हैं। जो पुरातनकाल में थीं, वह वर्तमान में भी हो सकती हैं।

परन्तु आधुनिक काल में वह कर्म नहीं किया। संसार में अन्न का दोष होने से, आहार और व्यवहार पवित्र न होने से, वैज्ञानिकों के मस्तिष्कों में दूरिता और निराशा के अंकुर उत्पन्न हो करके, प्रजा को त्रास देना शुरू कर दिया। इनको यह त्रास क्यों देते हैं? कि हमने यह जाना है। अरे! तुमने यह जाना है, यह ऐसा कोई वाक्य नहीं है।

यह नवीन वाक्य नहीं है परन्तु इसके जानने के साथ, तुम्हारी मानवता भी पवित्र होनी चाहिए। तुम्हारी मानवता महान होनी चाहिए।

भारद्वाज की विज्ञानशाला के वैज्ञानिक यहाँ से उड़ान उड़ते हैं, लोक लोकान्तरों की यात्रा कर रहे हैं। एक लोक में नहीं, बहत्तर बहत्तर लोकों का भ्रमण करके, इस पृथ्वी पर अपना यातायात बना रहे हैं। 23.02.1980

81 विभिन्न लोकों में भी दस प्राण

द्वितीय जो शरीर है, आत्मा का वह सूक्ष्म कहलाता है। तो सूक्ष्म तन्मात्राओं में सूक्ष्मतम में, पंच तन्मात्राएं होती हैं, और ज्ञान और प्रयत्न होता है, जहाँ हम इसे बुद्धि अथवा मन के रूप से उसका वर्णन करते रहते हैं, परन्तु यह दस प्राण होते हैं, जिन प्राणों की मात्राओं से यह परमात्मा का जो भव्य भवन है, यह स्थिर रहता है, वही दस प्राणों को तुम और भी नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों को दृष्टिपात करोगे, चाहे वह चन्द्रमा में प्रवेश कर जाओ, वहाँ भी दस प्राणों का व्यवधान है, और भी नाना प्रकार के मण्डल मंगल में चले जाओ, तो वहाँ भी इसी प्रकार प्रतिभा का प्रायः वर्णन होता रहा है, तो विचारवेत्ता कहते हैं, कि जितने भी लोक लोकान्तर हैं, वे एक सूत्र में पिरोए हुए है, और वह जो सूत्र है, वह ब्रह्मसूत्र कहलाता है और उसी में यह सर्वत्र गृह पिरोए हुए हैं, तो यह एक ब्रह्माण्ड की आभा में दृष्टिपात होता रहता है, तो यह जो परमात्मा का रचाया हुआ भव्य भवन है, जिस भवन में वह निर्माण करता है, उसी में रम रहा है, तो हम सदैव उसकी उपासना करते हुए, विचारते हुए कि हमारा जो सूक्ष्म शरीर है, इसमें सत्रह तत्व कहलाते हैं, दस प्राण है, और मन, बुद्धि है और इसी में पंच तन्मात्रा प्रकृति की कहलाती है। 14.07.1991

82 लोकों में संघर्ष

पृथ्वी के ऊपर नाना प्रकार का संघर्ष होता रहता है, सूर्य मण्डल में भी नाना संघर्ष होते रहते हैं, चन्द्रमा में भी नाना प्रकार के परमाणुओं के संघर्ष होते रहते हैं, इसी प्रकार मंगल में भी और बुध इत्यादि लोकों में भी नाना प्रकार के संघर्ष होते रहते हैं। परन्तु उन संघर्षो की चर्चा, यह तो परमाणु रचना का स्वभाव है, संघर्ष होना ही रचना का स्वभाव माना गया है। कोई वस्तु रचती है, तो उस पर संघर्ष होता रहता है, वह किसी काल में क्षुद्र रूप में, किसी काल में वही गुरुता के रूप में परिणत हो जाता है।

वैज्ञानिक जनों ने परमात्मा की प्रतिभा को, परमाणुओं के एक दूसरी तरंगों को जान करके, यन्त्रों का निर्माण करते हैं और द्यौ में प्रवेश हो जाते हैं। द्यौ में रत्त रहने वाला अपने में, रतता को रमण करता रहता है। 13.03.1992

83 विभिन्न लोकों में आवागमन

आज जो विज्ञान है, वह अन्तरिक्ष के गृहों में रमण कर रहे हैं, कहीं चन्द्रमा की परिक्रमा हो रही है, कहीं मंगल में जाने वाले यन्त्रों का, मंगल में जा करके, अपनी आभा में जाने वाले है। 24.05. 1976

84 लोकों की यात्रा

एक समय, मुझे महर्षि भारद्वाज मुनि ने एक वाक्य बड़ा आश्चर्य का प्रकट किया था।उनका यान जब उनके आश्रम में गति करने लगा, तो वह गति करता हुआ, पृथ्वी से उड़ान उड़ करके, जब वह 'शुक्र में पहुंचां, शुक्र से उड़ान उड़ी, तो मंगल में चला गया, मंगल से उड़ान उड़ी, तो स्वाति नक्षत्र में चला गया, स्वाति नक्षत्र से उड़ान उड़ी, तो रोहिणी कृतिका में चला गया; कृतिका से उड़ान उड़ी, तो उड़ेनकेतु मण्डल में चला गया; उड़ेनकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो मृचि मण्डल में पहुंचा, तो एक मण्डल का प्रकाश आ रहा था, तीव्र गति से और मृचि मण्डल से उसका समन्वय हुआ, तो मृचि मण्डल से समन्वय हो करके, सूर्य से हुआ और सूर्य से हो करके चन्द्रमा से होता हुआ, जब वह पृथ्वी की दिशा को आने लगा, तो वह दिशा में भ्रमित हो करके, वह प्रकाश बृहस्पति के आंगन को चला गया।

परिणाम यह हुआ कि वह जो प्रकाश है, वह ऐसे मण्डल का प्रकाश है, जो इस पृथ्वी को प्रकाशित नहीं करने वाला था। इस तक उसकी ज्योति आ ही नहीं सकती। तो जब वह बृहस्पति के आंगन में रमण करता हुआ, पुनः द्वितीय दिशा बन गई, तो पृथ्वी से ओझल हो गया। 09 10 1989

विभिन्न लोकों में, विभिन्न तत्व प्रधान वाले पशु
आज जब हम ध्रुव मण्डल में जाते हैं, मंगल में जाते हैं, बृहस्पति में जाते हैं, और भी नाना लोक लोकान्तरों में परिणित होते हैं, तो एक ही आभा दृष्टिपात होने लगती है, और हम घृतों को विचारने लगते हैं। उनका घृत एक नित्य कहलाया गया हैं। वास्तव में जैसे सर्वस्य प्रकृति का एक ऋत और सत्य होता है। एक सत्य की ही उसमें आहुति प्रदान की जाती है। इसी प्रकार मानव को अपने जीवन में ऐसी आभा को अपना लेना चाहिए, जिसको वेद का पवित्र ज्ञान कहते हैं।
उदर की पूर्ति करना, यह वेद का ज्ञान नहीं कहलाता। वेद का ज्ञान वह होता है, जिसका आत्मा से ही प्रायः सम्बन्ध रहता है। आत्मा का ही अनुमोदन किया जाता है, वहीं तो पवित्र ज्ञान होता है। आज हमें इस पवित्र ज्ञान को जानना चाहिए। नाना प्रकार के पशुओं पर विचार विनिमय करना चाहिए। कहीं अग्नि तत्त्व की प्रधानता वाले पशु होते हैं, कहीं जल की प्रधानता वाले पशु हैं, कहीं वायु की प्रधानता वाले पशु होते हैं, क्योंकि पंच महाभूत के बिना अप्रेत नहीं होता, लोक नहीं होता। क्योंकि परमाणुवाद वहाँ भी होता है। 09.10.1989

85 प्रत्येक लोक में पूर्णिमा

हम परमपिता परमात्मा के अनुपम जगत को विचारने में रत्त हो जाए और उसको जानते रहे, कि उसको जानना ही हमारा कर्तव्य है। इसीलिए मन को जानना और मन को एकाग्र करना है, तो प्राणों का संघात अनिवार्य है, और प्राणों की तरंगों में जो अन्नाद का उत्पन्न होना है, वह बहुत अनिवार्य है। क्यौंकि यह मन ही लोक लोकान्तरों की माला बना लेता है, यह मन ही अणु और परमाणुओं की माला बना लेता है, और यही निहारिकाओं की माला बना लेता है, और माला बना करके यह आत्मा के समीप चला जाता है, और प्राण के सहित आत्मा के समीप जाता है और क्यौंकि यह इसका प्रतिनिधि है, आत्मा का प्रतिनिधि है। यह उसी में रत्त रहने वाला है। तो इसको हमें जानना है। तो हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए और पूर्णिमा के दिवस जो चन्द्रमा, जो अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त होता है, यही पूर्णिमा प्रत्येक लोक लोकान्तरों में एक ही रहस्यतम को लिए रहती है, यदि हम मंगल मण्डल में जाते हैं, तो वहाँ भी उसका रहस्यतम दृष्टिपात आता है। यदि हम वशिष्ठ मण्डल में जाते हैं, तो वहाँ भी चन्द्रमा का यही रहस्तम दृष्टिपात आता है, यदि हम अरूण्धति मण्डल में चले जाते हैं, तो वहाँ भी चन्द्रमा का यही रहस्यतम आता है, वह अमृत देता रहता है। इसी प्रकार यदि हम बुध में जाते हैं तो वहाँ भी इसी प्रकार का रहस्यतम है, और यदि हम शुक्र में अमृतां में जाते हैं तो वहाँ भी यही रहस्यता रहती है।
तो रहस्य केवल एक, कि वह चन्द्रमा के पक्षो में पक्षित रहता रहता है, पन्द्रह दिवस शुक्ल प्रक्ष के हैं और पन्द्रह ही दिवस, कृष्ण पक्ष के कहलाते हैं। पूर्व कालों में मुझे स्मरण है जब मेरे पूज्यपाद गुरुदेव रूग्ण हुए और जब उनका रूग्ण समाप्त हो गया, तो उन्होंने यह विचारा कि मैं अपने शरीर को त्यागूंगा, तो वह अपने शरीर को अपनी वृतियों को शुक्ल पक्ष में ले गए, यहाँ शुक्ल पक्ष का अभिप्रायः यह है कि हमें ज्ञानी बनना चाहिए और जब वह आध्यात्मिकवेता बन जाता है और आध्यात्मिक विज्ञान को जान लेता है उस समय वह प्राणायाम के द्वार वह अपनी उस विद्या को जान करके, प्राण के द्वारा, प्राणायाम के द्वारा जब शुक्ल पक्ष में अपनी वृतियों को, अपने ज्ञान को ले करक, ज्ञान का नाम ही शुक्ल पक्ष है। जब ज्ञान में चले गए तो अपने शरीर को प्राणायाम के माध्यम त्यागते रहे। 21.02.1991

86 अमावस्या

यहाँ नाना ऋषि मुनि अपने में, ज्ञान और विवेक में ले गए है, जब शुक्ल प्रक्ष उनके जीवन में आ गया है, शुक्ल पक्ष का अभिप्रायः प्रकाश है और कृष्ण पक्ष का अभिप्रायःअन्धकार कहा जाता है।आध्यात्मिकवाद में और भौतिकवाद में वह शुक्ल प्रक्ष, चन्द्रमा अपनी कलाओं से अमृत देता रहता है और उस अमृत को अपने में बिखेरता रहता है, एक दिवस वह आता है, कि वह अमावस्य के दिवस, एक भी अंकुर चन्द्रमा का नही होता और एक दिवस ऐसा आता है, कि अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त हो करके, र्णिमा का चन्द्रमा बन करके, वह अमृत को सोम को देता रहता है, सोम को देना ही प्रतिपदा से ले करके पूर्णिमा तक, अपनी पन्द्रह दिवस शुक्ल प्रक्ष के देता है और कृष्ण पक्ष वह अपने में अपने को सूक्ष्म बनाता रहता है। पूर्णिमा के दिवस प्रतिपदा आती है, वह एक कला चली गई, द्वितीय आती है तो दो कला चली गईं, इसी प्रकार वह कलाओं से विस्मृत हो जाता है, और वह अमावस्या का दिवस बन करके, वह अन्धकार में परिणत हो जाता है। वाह रे मेरे प्रभु! तेरा विज्ञान किनता अनुपम है, तेरे विज्ञान का जो मैं बखान करने लगूं.तो हे प्रभु! मुझे कोई मार्ग प्राप्त नही होता है, कि मैं क्या उदगीत गाने लगूं तेरे सम्बन्ध में, हे प्रभु! तेरा इतना अनुपम यह रहस्यतम जगत है, इसका जो व्यवधान है, वह बड़ा विचित्र है।
मैं चन्द्रमा के ऊपर ही अपने विचार देता रहूँ तो वर्षो चला जाएगा परन्तु यह चन्द्र विज्ञान, मेरे समाप्त नही हो सकेगा।हे प्रभु! इतने विशाल मण्डल में क्रियाकलाप होते रहे हैं, प्रकाश आता रहा है, एक दूसरे से समन्वय होता रहा है। वेद की आख्यिका यह कहती है, कि यह शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष दोनों अपने को बड़े पूर्णता को प्राप्त होते रहे हैं। जब एक पदा चली जाती है, उसमें अमृत की सूक्ष्मता, द्वितीय

चली गई अमृत की सूक्ष्मता और दिवस आता है तो अमृतमयी चला जाता है। इसीलिए आध्यात्मिकवादी विचारता है, कि तेरा जीवन अमावस्या की भाँति नही होना चाहिए, तेरा जीवन तो पूर्णिमा के दिवस होना चाहिए, परन्तु इसमें एक आध्यात्मिकवाद यह भी कि ये कलाएं चली जाए, अमावस्या आ जाए, अन्धकार आ जाए, तो हे मानव! तू उसमें अपने को विस्मृत मत करना, तूझे निराशा में नही रहना चाहिए, तू सदैव अपने में गम्भीर मुद्रा में, जब द्विपदा और पूणिमा का दिवस यदि तू सिद्ध कर ले, तेरे हृदय में अभिमान की मात्रा नही आनी चाहिए, अभिमानी मत बनो, क्योंकि शुक्ल प़क्ष, कृष्ण पक्ष, अन्धकार, प्रकाश में दोनो अन्धकार आ जाए, तो उसमें तुम अपने को इस प्रकार विस्मृत मत करो, यदि प्रकाश ही प्रकाश आ जाए, सब प्रकार की विद्या भी हो, द्रव्य भी हो, ममत्व भी हो, सर्वत्रता तुम्हारे द्वारा हो, तो उसमें अभिमान मत करो, यह ज्योति परमपिता परमात्मा अभिमान से रहित है, इसीलिए मानव को भी अभिमान से रहित हो जाना चाहिए। 21.02.1991

87 विभिन्न लोकों में जीवन

चन्द्रमा में भी जीवन है, बृहस्पति में भी जीवन है, मङ्गल में पार्थिव तत्त्व प्रधान है, सहानूभूति लोकों में भी तत्त्व प्रधान पृथ्वी ही मानी जाती है। बृहस्पति मण्डल में अग्नि और वायु की प्रधानता है, इसी प्रकार ध्रुव मण्डल में अकृति और आसवानी इन दोनों तत्त्वों का अधिक मिश्रण रहता है, जेठाय में अगति और पार्थिव तत्व प्रधान स्वीकार किया गया है। सूर्य मण्डल में अग्नि तत्त्व स्वीकार करते हैं। वेद में सम्पन्न विद्याओं का वर्णन आता रहता है। 22.08.1969

88 करोड़ों वर्ष पूर्व विज्ञान विमर्श

एक समय महर्षि शाण्डिल्य मुनि का काल था और महात्मा अष्टावक्र का काल था। वायु मुनि महाराज का काल था। आज से करोड़ों वर्षों पूर्व का काल था। साहित्य यह कह रहा है कि उनके काल में वे बड़े महान वैज्ञानिक थे। जहाँ वे योगी थे, वहाँ वे वैज्ञानिक भी थे। प्रकृति को अच्छी प्रकार जानते थे। 04.05.1976

89 पृथ्वी लोक

पृथ्वी संसार की नाभि

तो इसीलिए यह नाभि है, यह पृथ्वी संसार की नाभि है।चाहे वह विज्ञानवेता इस पृथ्वी का हो, चाहे विज्ञानवेता मंगल का हो, चाहे किसी भी लोक लोकान्तरों का विज्ञानवेता क्यों न हो, परन्तु विज्ञान के वांगमय में यह गति, वह अनुसन्धान प्रारम्भ किया, तो पृथ्वी के गुरुत्व को ले करके, अनुसन्धान किया है। इस गुरुत्व को जान करके, माता वसुन्धरा के गर्भ में मानव ने जाने का प्रयास किया है, और जब उसके गर्भ में जाने के लिए तत्पर हुआ है, तो विज्ञान में रत्त हो गया है, अपने में आभा में रत्त हो गया है।

वेद का वाक् कहता है कि विज्ञानवेता गुरुत्व परमाणु के ऊपर अनुसन्धान करता हुआ, इस माता वसुन्धरा की गोद में वह सदैव परिणत होता रहा है, उसी परमाणु का मिलान वह तरलत्व परमाणुओं से करता है और तरलत्व परमाणुओ का निर्माण, तेजोमयी परमाणुओं से करता हुआ, वह मानव अपने में अनुसन्धान करता रहता है और अन्वेषण करता हुआ, वही मानव ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ना प्रारम्भ करता है, तो विज्ञान अपने में सार्थक बन जाता है, और वह सार्थक बन करके राजा के राष्ट्र में जो विज्ञान है, अपनी चरम सीमा पर चला जाता है। तो यह पृथ्वी वसुन्धरा के रूप में कहलाती है। 21.02.1988

विचारक अनुसन्धान करता, उग्र रूप बनाता है। अपने में विराट रूप बनाता है, तो, एक एक परमाणु से मानव नृत्त करने लगता है, और नृत्त कैसे होता है? जैसे प्रातःकाल सूर्य उदय होता है, और रात्रि उन किरणों में नृत करती है, समाप्त हो जाती है। इसी प्रकार विज्ञान अपने में कितना अनूठा नृत्त करता रहा है, वह अपने में उग्र रूप धारण करता हुआ, यन्त्रों का निर्माण करता है। यहाँ का वैज्ञानिक हो, इसीलिए यह पृथ्वी गुरुत्व कहलाती है, इस पृथ्वी को ले करके ही मानव अनुसन्धान करता रहता है, और विचारता रहता है, लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ता है। तो विज्ञान भी मानव के द्वारा एक सार्थक रूप में होना चाहि, जिससे वह परमपिता परमात्मा की प्रतिभा को जान करके और इस संसार रूपी सागर से पार हो जाए, क्योंकि सागर से ही तो पार होना है, जिसमें मान और अपमान से मानव घिरा हुआ है, इसी से तो पार होना है।

तो महर्षि वैशम्पायन मुनि महाराज ने अपना विचार व्यक्त करते हुए यह कहा कि राजा को अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना है, तो अपने को उग्र रूप को धारण करना है, अपनी प्रत्येक इन्द्रियों पर नृत करना है, जैसे विज्ञानवेता जैसे अपने में लघु मस्तिष्क और पार्थिव तत्व बन करके जैसे विज्ञान में रत्त हो जाता है, इसी प्रकार तू अपने में जैसे यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, देवताओं को पुकार करके, एक एक वेदमन्त्र में जो स्वाहा कहता है, उसमें जो परमाणु विद्या है, उसमें जो भी नृत कहलाता है, वह द्यौ लोक को प्राप्त होता

रहता है।
तो राजा के राष्ट्र में एक ऐसा समाज होना चाहिए, जिससे उस समाज में नम्रता और मानवीय दर्शनों का बखान होता रहे, और मानवीय दर्शन जब, मानव के समीप आता है, तो वह राजा स्वयं अपने को मानव दर्शन को, चिन्तन में लाने वाला हो और क्रियात्मक उसका जीवन हो, जिससे राष्ट्र में ब्रह्मवेत्ता बन करके और ब्रह्मनिष्ठ बन करक, ब्रह्मवेत्ताओं के समाज का निर्माण करता हुआ, राजा, अपने में महानता का दर्शन करता चला जाता है। 21.02.1988

90 पृथ्वी मण्डल का समन्वय प्रत्येक लोक से

यह ब्रह्माण्ड नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों वाला है। इस पृथ्वी मण्डल के तत्त्वों से, प्रत्येक मण्डल का समन्वय रहता है, इससे कहीं सुगन्ध की धातु का निर्माण हो रहा है, कहीं रत्नों की धातु का निर्माण हो रहा है, कहीं जल को शक्तिशाली बनाया जा रहा है। ये नाना प्रकार के व्यंजनों को जन्म देने वाली है। नाना रसों का स्वादन इसी के गर्भ स्थल में वशीभूत हो रहा है। नाना सूर्य की किरणें आती रहती हैं। द्यौ मण्डल से प्रकाश आता रहता है। सूर्य उसका माध्यम बना हुआ है। इस पृथ्वी को तेजोमयी बना रहा है। एक मण्डल का सम्बन्ध नहीं रहता, नाना ध्रुव मण्डल इत्यादियों का भी समन्वय होता रहता। मंगल और चन्द्र इत्यादियों का समन्वय होने से ये जो पृथ्वी है, ये पृथा कहलाती है। कहीं अरुंधति मण्डल है, कहीं वशिष्ठ मण्डल है।
इन नाना प्रकार के मण्डलों के समन्वय में सब की पृथ्वी गाथा गा रही है। ये जो ब्रह्माण्ड है इसकी गाथा कौन गा रही है? पृथ्वी गाती चली आ रही है। गान के रूप में गा रही है। पाचों प्रकार का रसोस्वादन इसे प्राप्त होता रहता है। परन्तु यह जो रसों का स्वादन है वह प्रत्येक लोक लोकान्तरों की आभा में रमण कर रहा है। चाहे वह चन्द्रमा का प्राणी हो, चाहे वह मंगल मण्डल का प्राणी क्यों न हो, चाहे वह बृहस्पति मण्डल का हो वस्तुतः वह जो पाचों प्रकार का रस है। वो इस पृथ्वी में है। तो कोई और मण्डलों में विद्यमान हैं परन्तु इस ब्रह्माण्ड की गाथा पृथ्वी गा रही है। 05.11.1982

91 सृष्टि की प्रतिष्ठा

महर्षि प्रवाहण मुनि ने गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज से यह प्रश्न किया कि महाराज! यह संसार किसमें ओतप्रोत हो जाता है? चार प्रकार की सृष्टि नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में दृष्टिपात आती हैं। जब हम पृथ्वी के गर्भ से ऊर्ध्वा में गति करते हैं, मंगल मण्डल में प्रवेश करते हैं तो मंगल में भी प्रायः हमें इसी प्रकार की सृष्टि दृष्टिपात आती है। जब हम, ऋषि मुनियों के वांगमय में प्रवेश करते, लोक लोकान्तरों में जाने की, उनकी उड़ानें रही हैं, जब हम शुक्र मण्डल में प्रवेश करते हैं तो वहाँ भी प्रायः हमें चारों प्रकार की सृष्टियाँ दृष्टिपात आती हैं। इसी प्रकार और भी नाना प्रकार के मण्डल हैं। परन्तु सर्वत्र ब्रह्माण्ड में प्रायः ये चारों प्रकार की सृष्टियों का अवधान है। ये परमपिता परमात्मा का अनूठा जगत है, इस जगत में, तो मैं विशालता के रूप में जाना नहीं चाहता हूँ, परन्तु यह जानना चाहता हूँ कि प्रभु! ये चारों प्रकार की जो सृष्टियाँ हैं, ये किसमें प्रतिष्ठित होती है? किसमें ओत प्रोत हो जाती है? किसमें ये समाहित हो जाती है?
ऋषि ने जब यह प्रश्न किया तो गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज, इसका उत्तर देने लगे। उन्होंने कहा कि महाराज! ये जो दृष्टिपात आने वाला जगत है, चाहे निहारिका, आकाशगंगाओं और सौर मण्डलों में व्यक्त रहने वाला जगत हो, यह जो संसार है, यह सर्वत्र पार्थित्व में समाप्त हो जाता है। ये जो दृष्टिपात आ रहा है, यह पृथ्वी में ओत प्रोत हो जाता है। क्योंकि ये गुरूत्व अपने में समाहित हो जाता है और गुरुत्वता के रूप में दृष्टिपात आता रहता है। तो वेद की आख्यिका कहती है कि ये चारों प्रकार की सृष्टि वाला जगत, ये पृथ्वी में ओत प्रोत हो जाता है। ये उसी में प्रतिष्ठित हो जाता है, जहाँ से जिसका प्रारम्भ होता है वहीं उसका समापन हो जाता है। ये प्रकृति की एक नियमावली मानी गयी है। जहाँ जिसकी प्रतिभा का रूपान्तर होता है वहीं उसकी आभा में यह जगत भी समाहित हो जाता है।

92 पृथ्वी की प्रतिष्ठा

जब ऋषि ने इस प्रकार उत्तर दिया कि यह सब गुरुत्व पृथ्वी में ओत प्रोत हो जाता है। तो महर्षि प्रवाहण ने नतमस्तक होकर कहा, हे प्रभु! पृथ्वी की प्रतिष्ठा क्या है? क्योंकि ये पृथ्वी भी तो कहीं न कहीं प्रतिष्ठित हो जाती है। ऋषि ने कहा कि यह जो पृथ्वी है यह पृथ्वी आपों में ओत प्रोत हो जाती है। जल में ओत प्रोत हो जाती है, जितना गुरुत्व है इसको धारण करने वाला, इसको अपने में समाहित करने वाला, यह आपो कहलाता है।
हे प्रभु! आपो ज्योति की प्रतिष्ठा क्या है? यह किसमें ओत प्रोत हो जाता है? उन्होंने कहा आपोज्योति अग्नि में प्रतिष्ठित हो जाता है। यह अग्नि अपने में समाहित कर लेती है। यह अग्नि कही अणु रूप में है, कहीं परमाणु के रूप में विद्यमान रहती यही तो संसार के ज्ञान और विज्ञान का मूलक बना हुआ है, कि यह अग्नि ही काष्ठों में रहने वाली है, यही अग्नि कहीं बढ़वानल अग्नि बनकर के समुद्रों में रहती है, यही अग्नि कहीं लोक लोकान्तरों का सूत्र बनी हुई है। जो यह अणु के रूप में विद्यमान रहती है

93 पृथ्वी प्राणी का छह माह तक चन्द्र मण्डल में प्रवास

महर्षि भारद्वाज मुनि के यहां जब एक यन्त्र का निर्माण हुआ था, वह तुम्हें प्रतीत होगा, उस यन्त्र में यह निर्माण किया, वह यन्त्र कैसा विचित्र कि एक दूसरे में पिरोया हुआ, एक ऊर्ज्वा में पिरोया हुआ लोकों का दर्शन ऊर्ज्वा को प्राप्त करने के लिए वह वैज्ञानिक यन्त्र अन्तरिक्ष मार्ग में उड़ान उड़ने लगा।

एक समय उस यन्त्र में विराजमान हो करके महाराज कुम्भकरण अपनी उड़ान उड़ता है, कजली वनों से, वह भारद्वाज मुनि के आश्रम से उड़ान उड़ता हुआ वह कहां विचारता है, कि मुझे जीवन सत्ता को प्राप्त करना है यह जीवन सत्ता कहां कहां विद्यमान हैं? तो कौन? राजा रावण के विधाता कुम्भकरण, ब्रह्मचारी सुकेता और ब्रह्मचारिणी शबरी ये तीनों अपने यन्त्र में विद्यमान हो करके भारद्वाज के यहां उड़ान उड़ता है।

अब जीवन सत्ता को प्राप्त करने के लिए सबसे प्रथम उनका यान मंगल में पंहुचा है, मंगल से पूर्व भी वह सबसे प्रथम चन्द्रमा में पहुचा, चन्द्रमा में दृष्टिपात किया, कि इसमें बड़ी ऊर्ज्वा है, वह ऊर्ज्वा कहां से लेता है? वैज्ञानिकों ने विचारा ऊर्ज्वा कहां से लेता है छह माह तक महाराजा कुम्भकरण, ब्रह्मचारी सुकेताऔर ब्रह्मचारिणी शबरी उस चन्द्र मण्डल में रहे, चन्द्रमा में अपने में यह निश्चय कर लिया, कि इस चन्द्रमा में तो जीवनसत्ता है, जीवन कहां रहता है? जहां प्रकृति के पंच महाभूत है, वहीं जीवन सत्ता है चाहे वह किसी भी द्वार पर, किसी भी स्थली पर चले जाए।

छह माह के पश्चात यह निश्चय कर लिया, कि इसमें जीवन सत्ता है और जीवन सत्ता भी किसी से कटिबद्ध है, मंगल से उड़ान उड़ी, वह चन्द्रमा से उड़ान उड़ करके, वह बुध में लगभग तीन माह तक वह रहे और तीन माह तक ही अनुसन्धान किया, उसमें जीवन सत्ता किस किस प्रकार से है?

94 महाराजा कुम्भकरण, ब्रह्मचारी सुकेता और ब्रह्मचारिणी शबरी की लोक यात्राएं

तो जीवन सत्ता का अभिप्रायः यह है, कि जहां मानव आत्मा के सहित अपने में जीवित रहे, अपने शरीर को धारण किए रहे, वहां एक जीवन सत्ता का उन्हें एक अनुभव होता है, वहां से भी तीन माह के पश्चात उड़ान उड़ते हैं, उड़ान उड़ करके यह शुक्र में पंहुचे, जहां दैत्यराज प्राचीन अतीत के काल में एक महाराज शुक्राचार्य हुए हैं, महात्मा शुक्राचार्य भी अपने योग शक्ति के द्वारा, योग विद्या, प्राण की ऊर्ज्वा संकल्प शक्ति के द्वारा, वह शुक्र मण्डल की यात्रा करते रहे हैं। शुक्र में वशिष्ठ गति रही है और वहां अपने में यन्त्रों के परमाणुओं के द्वारा, यानों का निर्माण करके और अपने में संकल्पमयी योग हो, अहा असुति में प्रवेश करके, उसका वह गमन करते रहे हैं। तो वहां शुक्र मण्डल में वह लगभग वह दो माह रहे और दो माह तीन दिवस रहे, और वहां ऊर्ज्वा को प्राप्त करने लगे, वहां वनस्पतियां हैं, और वनस्पतियों के साथ वहां एक प्राणी रहते हैं, और प्राणी अपने में, वह भी उसी आहार को करते रहे, वहां से उड़ान उड़ता है, तो जीवन सत्ता को प्राप्त करने के लिए वह मंगल में पहुचे, मंगल में एक वर्ष तक रहे, क्योंकि मंगल का वायुमण्डल इस पृथ्वी मण्डल के जैसा ही है, सदृश्य वहां का वायुमण्डल है।

एक वर्ष तक वह महाराजा कुम्भकरण, ब्रह्मचारी सुकेता और ब्रह्मचारिणी शबरी, तो वहां के वैज्ञानिकों से वहां के राजवाहक क्रियाकलाप करने वालों से, उनकी चर्चाएं हुईं, उनकी वार्ताएं होती रही, एक वर्षों तक सर्वत्र राष्ट्र का मंगल मण्डल की, उन्होंने यात्रा की और यात्रा करने के पश्चात, एक वर्ष के पश्चात अपने वाहन में विद्यमान हो करके, वहां से वह गमन करते हैं।परन्तु उससे पूर्व वह क्रियाकलाप भी करते रहे, उसके पूर्व वह वैज्ञानिक अब वैज्ञानिक स्तर पर अपनी वार्ता प्रगट करते रहे, वैज्ञानिकों से वार्ता होती रही, मुझे एक समय वर्णन कराया था क्या आधुनिक काल में भी दूसरे मण्डल के यन्त्र इस पृथ्वी मण्डल पर भ्रमण करते रहते हैं और पृथ्वी मण्डल के यन्त्र भी दूसरे लोकों में भ्रमण करते रहते हैं, वह ऊर्ज्वा वाला यान आगे रमण करता है, मंगल से उड़ान उड़ता हुआ वह मृचिका मण्डल में पंहुचा है और मृचिका मण्डल में भी वनस्पतियां है, जलाशय उन्होंने दृष्टिपात किए लगभग एक जलाशय के तट पर एक माह दो दिवस उस जलाशय के तट पर रहे अपने में क्रियावान रहे।

95 वाणी की पृथ्वी परिक्रमा

क्योंकि यह जो वाणी है, इसमें सतोगुण प्रधानता होती है, और मुखारविन्द से उत्पन्न होती है।

तो एक क्षण समय में, पृथ्वी की दो सौ चारौसी बार परिक्रमा कर जाती है।और जिस समय इस वाणी में रजोगुण प्रधानता होती है उस समय तीन सौ चारौसी बार एक क्षण में पृथ्वी की परिक्रमा कर आती है, और जब तमोगुण प्रधान होता है तो उस समय यह चार सौ चारौसी बार, एक क्षण समय में, इस पृथ्वी की परिक्रमा कर देती है।

ऋषि कहते हैं कि हे मानव! तू इस वाणी से अशुद्ध उच्चारण मत कर। यदि इस तेरी अशुद्ध की हुई वाणी का, किसी महापुरूष के मस्तिष्क

से मिलान हो गया, तो हो सकता है कि तमोमयी वाणी योगी की बुद्धि को भ्रष्ट न कर जाए। ऐसा हमारे ऋषिजन कहते हैं कि हे मानव! आज तू इस वाणी से अशुद्ध उच्चारण न कर। यदि तेरी वाणी का अस्तित्व न रहा, तो संसार में तेरी मानवीयता का विनाश हो जाएगा। इसलिए ऋषि कहते हैं कि आज हमें इसके सूक्ष्मतम रहस्यों को जानना है। जिससे आज हम स्थूल शरीर को जानने वाले बनें।

96 पार्थिव तत्व बोध से अन्य लोकों के विज्ञान में गति

इसी प्रकार जब भौतिक विज्ञान या मानवीय क्षेत्रों में गति करते हैं या विज्ञान की उपलब्धियों में जाते हैं, तो वह जो पृथ्वी पार्थिव तत्व है, सबसे प्रथम उसके परमाणु में पार्थिकता में रत होता है। और पार्थिकता को जान करके आगे विज्ञान की उपलब्धियां होती रहती हैं, जिस भी मानव ने अब तक सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक जो भी विज्ञानवेत्ता बना है, चाहे वह इस पृथ्वी मण्डल पर रहने वाला हो, चाहे वह मंगल में वास करने वाला हो, चाहे वह बुध में रहने वाला हो, किसी भी लोक लोकान्तरों में क्यों न हो, परन्तु वह सबसे प्रथम भौतिक, इस पृथ्वी के परमाणुओं को ही, गुरुत्व को जानने के पश्चात ही आगे वह विज्ञान में गति करता रहता है।

तो इसी प्रकार मैं माला के उन सूत्रों की विवेचना तुम्हें प्रगट करने आया हूँ, क्योंकि यह माला मुझे बहुत प्रिय लगती है, यह ऋषि मुनियों की एक विशाल उपलब्धियां है, जो वेद के वांगमय से उन्होंने जानने का प्रयास किया है।

तो माला का सबसे प्रथम मनका है वह पार्थिव कहलाता है। परन्तु गुरुत्व को सर्वत्र ही ब्रह्माण्ड में, लोक लोकान्तरों में, किसी न किसी रुप में विद्यमान रहता है। परन्तु पृथ्वी के परमाणुओं को गुरत्व कहते है। वह गुरुत्व आभा में रत रहने वाले हैं। तो उन्होंने गुरुत्व को जानने का प्रयास किया।

महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज के यहां नाना प्रकार की धाराओं का जन्म होता रहा है। भारद्वाज मुनि के यहां यह निर्णय होने लगा विद्यालयों में, ब्रह्मचारियों के, आचार्यों के मध्य में, नाना प्रकार के योगियों के सम्बन्ध में कि विज्ञान की सबसे प्रथम जो उपलब्धियां हैं, या इस ब्रह्माण्ड का सबसे प्रथम मनका जो हैं, वह पार्थिव तत्व कहलाता है। गुरुत्व रुप में वह हमें दृष्टिपात आने लगता है, तो यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा कैसे गा रही है?

उन्होंने कहा है कि यह जो पृथ्वी, यह ब्रह्माण्ड की यह गाथा में रत हो रही है, अपनी आभा में वह गति करने वाली है।तो हम उस आभा में सदैव अपने में रत रहना चाहते हैं। तो यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा कैसे गा रही है, उसको हम जानना चाहते हैं ?

97 तीस लाख पृथ्वियाँ

तो गुरुत्व कया है? विचारो मे आता है गुरुत्व पृथ्वी का पार्थिव तत्व माना गया है, तो विज्ञानवेत्ता, जब गुरुत्व के ऊपर विचारते विचारते यहाँ तक पहुँचा है। महर्षि भारद्वाज की विज्ञानशाला में और शिकामकेतु उद्दालक की विज्ञानशाला में, जब विज्ञानवेता पहुँचा और विज्ञानवेता ने अनुसंधान किया, जब पार्थिव तत्व के ऊपर अन्वेषण किया, तो तीस लाख पृथ्वियों को ऋषियों ने दर्शन किया। विज्ञानवेताओं ने तीस लाख पृथ्वियों को जाना है। तीस लाख पृथ्वियों की माला बनी हुई है, और उस माला को धारण करने वाला कोई है तो वह सूर्य कहलाता है, तो तीस लाख पृथ्वियां एक सूर्य मण्डल मे समाहित हो जाती है। इतना विशाल मण्डल है, यह सूर्य मण्डल जिमें ऐसी ऐसी तीस लाख पृथ्वीयाँ समाहित हो जाती है और यह जो सूर्य मण्डल है, जब इसके ऊपर विज्ञानवेत्ताओं ने विचार विनिमय किया, अनुसंधान किया, ऋषि मुनियों को और विज्ञानवेत्ताओं को दृष्टिपात हुआ, कि एक सहस्र सूर्य इस प्रभु के ब्रह्माण्ड मे उन्हें दृष्टिपात आने लगे, एक सहस्र सूर्य की माला बनी हुई है उस माला को धारण करने वाला बृहस्पति मण्डल बन गया। बृहस्पति मण्डल, इतना विशाल मण्डल है, जिसमे लगभग ऐसे सहस्र सूर्य समाहित हो जाते है। 09.01.1988

98 तीस लाख पृथ्वियां

जब वैदिक साहित्यवादी विज्ञान के क्षेत्र में पहुंचे तो वैज्ञानिक जनों ने इस पृथ्वी के ऊपर अन्वेषण किया तो तीस लाख पृथ्वियों तक ऋषि पहुँचे, जिन्होंने उन्हें जानने का प्रयास किया और वे पृथ्वियां एक सूत्र में पिराई गई हैं। वह सूत्र तेजोमयी कहलाता है वह सूत्र सूर्य का तेजोमयी ब्रह्म है जिसमें पिरोने से माला बन गई है। 30 लाख पृथ्वियों की एक माला बनी है। कितना विशाल एक माला का क्षेत्र है। इसी प्रकार वे मालाएं कौन से तेजोमयी सूत्र में पिरोई गई हैं और तेजोमयी सूत्र में पिरोने से ब्रह्म उसका सुमेरु कहलाता है, माला का जो सुमेरु है वह ब्रह्म एक माला नहीं, सूर्य मण्डलों की भी माला बनती है। तो इतना विशाल यह सूर्य है जिसमें 30 लाख पृथ्वियों की माला बनके समाई हुई है और सहस्र मनकों ;सूर्यों की आगे माना बनी है और उन्हें एक दूसरे में पिरोया गया है। जब चित्त की वृत्तियों को मानव अपने में धारण करता रहता है अनुशासन के द्वारा तो वह ब्रह्माण्ड का एक अनुशासन बनता है। और अनुशासन बनकर के जो सूर्य मण्डलों में जो तरंगे हैं, वे जो तेजोमयी तरंगे हैं, वे तरंगे कहाँ समाहित होती हैं? उन समूहों को जानकर के एक बृहस्पति मण्डल कहलाता है। उसमें एक सहस्र सूर्यों की माला बनी हुई है और वह सूर्यों की माला और वह जो पृथ्वियों की माला है, उन मालाओं के ऊपर एक सुमेरु कहलाता

है और वह सूमेरु ब्रह्मसूत्र कहलाता, तो ऋषि मुनियों ने बाह्य जगत को अध्यात्मवाद में उसका समन्वय किया है। 16.05.1991

99 पृथ्वी तत्व से विज्ञान विमर्श

ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने सबसे प्रथम यही कहा कि वेद में भिन्न प्रकार के मन्त्र आते है, उनमें नाना प्रकार की आख्यिकाएं आती रही है, परन्तु विज्ञान की एक आभा उन्होंने प्रगट की, तो विज्ञान अपने में जब भी विज्ञान पनपा है, तो इस पृथ्वी को अग्रणीय बनाया है और पृथ्वी के ऊपर अनुसन्धान किया है, तो इसमें से नाना प्रकार का खाद्य और खनिज पदार्थो का जन्म होता है, उन्हीं परमाणुओं को मिलान करते हुए उनके एक दुसरे से समन्वय करते हुए नाना प्रकार के यन्त्रों को निर्माणित किया, इन यन्त्रों में विद्यमान हो करके, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की यहाँ उड़ाने उड़ी गई है, और उसमें रमण किया गया है।

जब महर्षि विश्वामित्र के यहाँ नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, और अध्ययन करके उन्होंने विज्ञान के ऊपर अन्वेषण किया और भारद्वाज मुनि के यहाँ भी इस प्रकार की विज्ञानशालाओं का निर्माण किया गया, जिनमें नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ी गई, जब भी वैज्ञानिक इस पृथ्वी मण्डल पर, पृथ्वी के ऊपर अन्वेषण किया, सबसे प्रथम पृथ्वियों को जाना जाता है, नाना पृथ्वियों की माला बनती रहती है, जैसे माला नाना प्रकार के मनको को, एक सूत्र में पिरोया जाता है, उस सूत्र में यह माला बन करके प्रायः हमें दृष्टिपात आती रहती है, वह कैसी माला है।

100 तेरह लाख पृथ्वियां

हे देवी! तुम्हें यह प्रतीत है, जब वायुमण्डल से, वैज्ञानिक, जब भारद्वाज के आश्रम में प्रवेश हो गए, तो यह विचारते रहते थे, तो इतना गम्भीर अनुसन्धान बन गया, क्या एक दूसरे की माला को धारण करने लगा, एक समय वह अभिमान कर रहा है, कि मैं बहुत प्रबल हो गया हूँ, मैं बहुत विशेष बन गया हूँ, और एक परमात्मा की सृष्टि में आगे कोई विशेष नही रह जाता।आज पृथ्वी का वैज्ञानिक जब अनुसन्धान करता है, तो पृथ्वी की गणना करता है, तो वह केवल तेरह लाख पृथ्वियों की गणना, अब तक हो सकी है।परन्तु जब भारद्वाज मुनि के आश्रम की गणना करने लगे हैं, तो उन्होंने तीस लाख पृथ्वियों की गणना की, शिकामकेतु उद्दालक के वैज्ञानिकों के काल में, उन वैज्ञानिकों ने तीस लाख गणना की है। आज मैं उससे पूर्व काल में ले जा रहा हूँ, विचार विनिमय क्या, कि उन पृथ्वियों की माला बनी है, और जब पृथ्वियों की माला बनती है, तो उस माला को धारण करने वाला सूर्य कहलाता है, सूर्य अपने में मण्डल कहलाता है, पृथ्वियों का ऊर्जा दे रहा है, पृथ्वियों को चक्र में अर्पित कर रहा है, और इसकी माला को अपने में धारण कर रहा है। इसी प्रकार एक सहस्र सूर्यों की माला बनती है, और उस माला को धारण करने वाला, बृहस्पति कहलाता है।बृहस्पति इन नाना सूर्यों को धारण करने वाला है, अपने में माला बना करके, जैसे साधकजन, एक मनकों की माला बना करके, उसको सुमरणी बनाता है, उससे परमात्मा का चिन्तन सुमरण करता है।इसी प्रकार यह बृहस्पति नाना सूर्यों की माला बना करके और यह सुमरण करता है, सुमरणी बना लेता है, सूत्र बन करके, इसी प्रकार एक सहस्र बृहस्पतियों की सुमरणी बना करक, आरुणि अपने में धारण कराता है, यह प्रभु का ब्रह्माण्ड, बड़ा अनन्तमयी हैं, बड़ा विचित्रत्व माना गया है।उसकी माला बना करके, वह धारयामि बन रहा है।

एक सहस्र ध्रुवों की माला बना करके ही, आरुणि मण्डलों को अपने में धारण कर रहा है, और एक सहस्र, ध्रुवों मण्डलों की माला बना करके, पुष्य नक्षत्र अपने में धारण कर रहा है, और एक सहस्र पुष्य नक्षत्रों की माला बना करके, वह स्वाति नक्षत्र अपने में धारण कर रहा है। एक सहस्र स्वाति नक्षत्रों की माला बन करके, वह अचंग मण्डल अपने में धारण कर रहा है, कई इसको मूल भी कहते हैं, और एक सहस्र अचंग मण्डलों की माला त्रेतकेतु अपने में धारण कर रहा है, एक सहस्र त्रेतकेतु मण्डल अपने में धारण करके, चन्द्र अपने में धारण कर रहा है।तो इतने मण्डलों का एक सौर मण्डल बनता है मण्डलों का एक सौर मण्डल बनता है इसकी इसकी गणना करते करते ईकाई में रमण करने लगता है, अनन्तता को प्राप्त हो जाता है।

101 पिण्ड रूप में संसार

वह परमपिता परमात्मा कितना उज्ज्वल है और वह जल ही, यह आपो ही, तो अमृत देने वाला है। यही तो गुरुत्व पिण्ड का स्वामी है। माता के गर्भस्थल में रजस्तव है, परन्तु यदि उसमें गुरुत्व नही है, तो बाल्य का, हम जैसे प्राणियों का पिण्ड नही बनेगा, एक अण्डे में पिण्ड बन रहा है, परन्तु, वह नाना प्रकार की योनियों में भास रहा है, एक जरायुज में पिण्ड बन रहा है, माता के गर्भस्थल में, परन्तु वह भी नाना प्रकार की योनियों में भास रहा है, इसी प्रकार यह संसार एक पिण्ड रूप में विद्यमान होता हैं।

आज जब मैं सूर्यों की चर्चा करता रहता हूँ, तो कहीं सूर्य का वर्णन आता है, यह सूर्य इतना विशाल पिण्ड है, इसमें तीस लाख पृथ्वियाँ, तीस लाख पिण्ड बन करके, पृथ्वी सूर्य में समाहित हो जाती हैं, और एक सूर्य कहलाता है, इसी प्रकार एक दूसरे की आभा में कई कालों में तुम्हें प्रगट कराई हैं, एक दूसरा पिण्ड, दूसरे पिण्ड में प्रवेश कर रहा है, अरे, यह जगत पिण्ड रूप में विद्यमान हैं। और उसका मूल कहाँ,

उसके गर्भ में केवल गुरुत्व है, केवल गुरुत्व है, पार्थिवता है तो यह निर्माण करने वाला चैतन्य देव है, परन्तु माता के गर्भ से ले करके और बाह्य जगत में जितना भी पिण्डाकार जगत दृष्टिपात आ रहा है, वह सर्वत्र उस परमपिता परमात्मा की रचना का व्यवधान है, अमृत है। देवत्व है। 25.04.1991

102 पृथ्वी अनुसन्धानशाला

यह पृथ्वी अनुसन्धानशाला है, जहां पृथ्वी के परमाणुओं का आदान प्रदान किया जाता है, अनुसन्धान किया जाता है। अन्नाद की वृद्धि कैसे होती है ?इसके ऊपर वैज्ञानिक लगे हुए हैं ओर यह पृथ्वी में, परमाणु कैसे गमन कर रहा है, कैसे जल शक्तिशाली बन रहा है, जो सूर्य की किरणों को, आदान प्रदान, जल को शक्तिशाली बनाया जाता है।

उन्होंने कहा भगवन ! यह पृथ्वी अनुसन्धानशाला है। उसके पश्चात वह जल अनुसन्धानशाला में ले गए, जहां जल का प्रवाह गमन कर रहा है, जिस प्रकार जल के तत्व कहां और किस प्रकार के खनिज को जन्म देते हैं, खाद्य को जन्म देते हैं, इस प्रकार का अन्वेषण हो रहा है उन्होंने कहा हे भगवन! यह मेरे यहां जल अनुसन्धानशाला है उसके पश्चात अग्नि अनुसन्धानशाला में पंहुचे क्या यह अग्नि अनुसन्धानशाला है जहां अग्नि के ऊपर विचार विनिमय हो रहा है, अग्नि कहीं गृहपथ्य नाम की बन करके रहती है, कहीं गार्हपथ्य अग्नि बन करके रहती है, कहीं वैश्वानर है, तो कहीं आह्वनीय नाम की अग्नि रमण कर रही है। वही अग्नि शब्दों को द्यौ में प्रवेश करा रही है, वही अग्नि शब्द को ले करके, द्यौ मे प्रवेश करा देती है, वही अग्नि जो काष्ठों में रमण करने वाली है, यही अग्नि माता के गर्भस्थल में विद्यमान है, जो शिशु का पनपा रही है, उष्णता दे रही है, वही अग्नि मानव के हृदय में, शरीर में विद्यमान है। जो अन्न को तपायमान करती रहती है, वही अग्नि, ब्रह्मचर्य, ब्रह्मचारी के हृदय में विद्या में प्रविष्ट होती रहती है, वही अग्नि गृहपथ्य में, माता पिता को बल देने वाली है, इस प्रकार अग्नि के ऊपर अन्वेषण हो रहा था।

वहां से उन्होंने भ्रमण किया, और सूर्य अनुसन्धानशाला में पंहुचे, महाराज! यह मेरे यहां विज्ञानशाला है, यहां सूर्य की ऊर्ज्वा के साथ में, यन्त्र गमन करता रहता है, और यहां ऐसे ऐसे यन्त्रों का निर्माण हो रहा है, जो अन्तरिक्ष में रमण कर रहा है, सूर्य की किरणों के साथ ऊर्ज्वा में रमण करने वाले वैज्ञानिक हैं, और वह लोक लोकान्तरों की यात्रा करते रहते हैं, यहां इस प्रकार का चन्द्रमा के ऊपर विज्ञानशाला है, यह मेरा पुत्र नारान्तक है, यह चन्द्रशाल है, यहां चन्द्रमा के ऊपर अनुसन्धान होता है। ऋषि ने नारान्तक से चर्चा की और उन्होंने कहा नारान्तक तुम्हारी कितनी गति है, उन्होंने कहा चन्द्रमा में जाने की मेरी एक रात्रि और एक दिवस में मुझे इतना समय पर्याप्त हैं, जो मैं चन्द्रमा में चला जाता हूँ।

उन्होंने कहा धन्य है, ओर भी वार्ता उन्होंने कही, कि यह मेरे यहां विज्ञानशाला है, जो अन्तरिक्ष की यात्रा होती रहती है, उन्होंने वैज्ञानिकों से नारान्तक से चर्चा की, कि तुम कैसे गति करते हो?उन्होंने कहा प्रभु! मैं एक यन्त्र में विराजमान होता हूँ, यहां से मेरा यान रमण करता है। सबसे प्रथम वह यान मेरा चन्द्रमा में जाता है, और चन्द्रमा से उड़ान उड़ता है, तो बुध में चला जाता है। और बुध से उड़ान उड़ता है, तो यह शुक्र में चला जाता है, और शुक्र से उड़ान उड़ता है, तो यही मेरा यान मंगल में प्रवेश कर जाता है, मंगल से उड़ान उड़ता है, तो यही मेरा यान यन्त्र अश्वति लोकों में प्रवेश हो जाता है, और अश्वेति मण्डलों से जब उड़ान उड़ता है, तो यही मेरा यान है, मृचिका मण्डल में प्रवेश करता है और मृचिका मण्डल से जब उड़ान उड़ता है, तो यह स्वाति नक्षत्र में प्रवेश होता है और स्वाति नक्षत्र से उड़ान उड़ता है, तो यह मौनकेतु मण्डल में प्रवेश करता है, और वहां से जब उड़ान उड़ता है, तो यह पुष्य नक्षत्र में प्रवेश करता है, और पुष्य नक्षत्र से उड़ान उड़ता है, तो उड़ान उड़ता हुआ, यह वशिष्ठ मण्डल में प्रवेश कर जाता है, और वशिष्ठ मण्डल से उडान उड़ता हैं, तो यह अरूणधति मण्डल में चला जाता है, और अरूणधति मण्डल से उड़ान उड़ करके, यह तत्वकेतु मण्डल में प्रवेश करता हुआ, यह बहत्तर लोकों का भ्रमण करके, यह पुनः यान मेरे आश्रम में प्रवेश हो जाता है।

तो जब इस प्रकार ऋषि ने वर्णन कराया, तो महर्षि ने कहा ये विद्याएं तुमने कहां से प्राप्त की हैं?उन्होंने कहा हमारे जो पूज्यपाद महर्षि भारद्वाज मुनि हैं, हमने सब विद्या उनसे प्राप्त की हैं। भारद्वाज मुनि महाराज विज्ञान के मर्मज्ञ थे, उसके मर्म को जानते, यही विद्या उद्दालक गोत्र के शिकामकेतु उद्दालक से प्राप्त की थी, ओर शिकामकेतु उद्दालक ने यही विद्या महर्षि मृचि गोत्र में, व्रेतकेतु थे उनसे उन्होने प्राप्त की थी। 14.10.1991

103 पृथ्वी अनुसंधान शाला

उसके पश्चात विज्ञान भवन में ले गए, तो जहां पृथ्वी के ऊपर अनुसन्धान हो रहा था, उन्होंने कहा प्रभु! यह मेरे यहां विज्ञान है, विज्ञानशाला है।पृथ्वी, विज्ञानशाला, यहां पृथ्वी के ऊपर अनुसंधान हो रहा है, यहाँ नाना वैज्ञानिक, पृथ्वियों के ऊपर अनुसन्धान कर रहे है, पृथ्वियों में कितना परमाणु, कितनी दूरी पर कौन सा खनिज, कितनी दूरी पर है? कौन सा खाद्य कैसे उत्पन्न होता है? और कैसे यह बलवती हो

सकता है?

104 पृथ्वी का चक्र

एक सप्ताह में सात दिवस होते हैं। इन सप्त दिवसों में किस दिवस में प्रकृति का कोई तत्त्व विशेष गति करता है और किसी में अवरुद्ध होकर मध्यम करता है, किसी में विशेषता, किसी में तीव्र गति करने वाला। यह जो पृथ्वी का चक्र है यह भी स्वर विज्ञान के ऊपर आधारित रहता है। यह जो पृथ्वी का आधार है वह प्राण है और यह प्राण इस मानवीय शरीर में भी कार्य कर रहा है। इसी प्रकार स्वर विज्ञान से ही इस पृथ्वी की गति को जाना जाता है। ऋषि कहता है कि जब मानव स्वर विज्ञान पर जाता है तो जब नाभि केन्द्र से प्राण चलता है वह ब्रह्मरन्ध्र में जाता है। ब्रह्मरन्ध्र में ऐसी ऐसी पंखड़ियां लगी हुई हैं जिन पंखड़ियों में से परमाणुओं की उद्बुद्धता होती रहती है। तरंगें चलती रहती हैं। इन तरंगों को ले करके जब प्राण बाह्य जगत में जाता है, बाह्य क्षेत्र में जाता है तो यह जितना भी ब्रह्माण्ड है, जितने भी लोक लोकान्तर हैं उनमें जो तरंगें उत्पन्न होती हैं, उनमें जो परमाणु उत्पन्न होते हैं वह उस योगी के ब्रह्मरन्ध्र से उन पंखड़ियों में जो परमाणुवाद उत्पन्न होता है। कोई मण्डल ऐसा नहीं जिसमें वह परमाणु निहित न हों। वह परमाणु उत्पन्न होता रहता है। इसलिए उसमें पंच महा भौतिक जो परमाणु हैं उन्हीं परमाणुओं के अन्तर्गत प्रत्येक लोक लोकान्तर गति कर रहा है, यह ब्रह्माण्ड गति कर रहा है, ब्रह्मरन्ध्र में जो पंखड़ियां हैं योगी उन पंखड़ियों को जानता है और जान करके पंच महाभौतिक परमाणु हैं इनके ऊपर वह अधिपथ्य कर लेता है। ये जो पंच महाभूत हैं ये सर्वत्र प्रकृति का एक चक्र है। सर्व प्रकृति के निर्माण की सामग्री है। उस सामग्री को जानने वाला योगी यह जानता है कि कौन से लोक में कौन-सा तत्त्व प्रधान है।

105 चन्द्रमा में जीवन

आज का प्राणी यह उच्चारण कर रहा है कि मैं चन्द्रमा में गया, वहाँ जीवन नही है। उन भोले प्राणियों को यह स्वीकार कर लेना चाहिए, कि उनका आगमन केवल उत्तरी भाग में हुआ है, उत्तरी भाग क्रोथकुत लेख एक रेखा है, उस रेखा के कुछ पार पंहुचने का इसको अवसर प्राप्त हुआ है, आगे चल करके जीवन प्राप्त होगा, यहाँ तो केवल पृथ्वी के, वायु के अप्रीति जनो के कुछ कणों की ही प्रतिभा प्रतीत होती है। आगे चल करे जलाशय भी हैं और गृह भी हैं जहाँ जलाशय होगा, वहाँ पृथ्वी की प्रतिभा है। परन्तु जैसा वहाँ पार्थिव जीवन मानव का है, इस प्रकार का जीवन चन्द्र मण्डल में नही स्वीकार किया जाता। हम भी नही करते हैं, क्योंकि जैसे यहाँ इस पृथ्वी मण्डल में पार्थिव तत्त्व और वायु तत्त्व दोनों प्रधानता में स्वीकार किए गएं हैं। वहाँ जल तत्त्व और वायु तत्त्व अधिक प्रधानता में माने गएं हैं, हमारे धर्मज्ञ शास्त्रों में और वेद में उसको पिशाच मानव कहते हैं, क्योंकि यह जो पिशाच योनियां हैं, उनका भी जैसे मानव का शरीर होता है, उसी प्रकार का है परन्तु यह जो मानव पृथ्वी मण्डल का है उसको वह दृष्टिपात आना सम्भव हो जाता है।

अब जीवन मानव को कैसे प्राप्त होगा? मानव को जीवन उस काल में प्रतीत होगा, जब वह उसी प्रकार वाणी से उच्चारण करेगा। उनका धर्म क्या है? उनका धर्म मानवता है, जैसे यहाँ हम मानवता की प्रतीति स्वीकार करते हैं, उसी प्रकार वहाँ भी प्रतीति किया करते हैं, चन्द्रमा में जीवन स्वीकार करने से ही, चन्द्रमा को लोक व गृह कह सकते हैं। क्योंकि गृह की मीमांसा ही यह है, कि जहाँ प्राणी भ्रमण कर सकता हो, गृह का निर्माण कर सकता हो, आगे चल करके हमारे यहाँ यह भी स्वीकार करते हैं, कि इस पृथ्वी मण्डल का पार्थिव तत्त्व वाला प्राणी, जहाँ हमारी आकाशवाणी जा रही है, चन्द्रमा में केवल उसका जीवन छह माह से अधिक नही चल सकेगा। क्योंकि वायु उसे शुष्क कर सकती है, क्योंकि वहाँ वायु की प्रधानता है, और वहाँ जल की प्रधानता अधिक होने के नाते, अधिक तत्त्व अग्रात और तत्त्ववादी अप्रह समाप्त हो जाते हैं, परन्तु उस काल में रह सकेंगें। जब पृथ्वी की जो कृतिकि होती है, उसकी जो तरंगें होती हैं, उनको एकत्रित करके जब ले जाएंगें, तो वहाँ उसके द्वारा जीवित रह सकेंगें, अन्यथा उसका जीवन समाप्त हो जाएगा। मैं यह उच्चारण करने के लिए तत्पर हो जाता हूँ, कि आगे चल करके यह प्राणी भ्रमण कर सकते हैं, परन्तु जहाँ जीवन की मीमांसा है, कि जीवन रहेगा अथवा नही, वहाँ कृषि होगी, गृह बनाएगें कार्यालय होंगें और क्या क्या होगा, परन्तु यह पृथ्वी मण्डल के प्राणियों के लिए असम्भव बात है। 22.08.1969

106 चन्द्रमा के प्राणियों का आहार

जैसे हम इस पृथ्वी मण्डल पर अन्न आहार करते हैं, तो चन्द्र मण्डल के प्राणियों के द्वारा कौन सा आहार है? वहाँ वायु प्रधान और जल प्रधान दोनों के मिश्रण से जो अन्न उत्पति होती है, उस अन्न को पान करते हैं, जो उसके अनुकूल होता है। जैसे वहाँ के अन्न में पृथ्वी के कण अधिक होते हैं, वहाँ उसमें वायु और जल के कण अधिक होते हैं और उसको पान करना ही उनके लिए अनुकूल होता है।

इस पृथ्वी मण्डल का प्राणी कितने समय में भ्रमण कर सकता है? परन्तु इसको अभी अधिक समय लगेगा। शीघ्रता में अभी भ्रमण करने में इतनी सफलता नही पा सकेगा। क्योंकि आगे चल करके नाना प्रकार की बाधाएं, नाना प्रकार के गृहस्थी, नाना प्रकार के पर्वतों की ऊँची ऊँची आकृति उनके समीप आएगी। उनसे जाना इनके लिए एक महान कठिन कार्य होगा। उन मार्गों को प्राप्त करने से सफलता को

अवश्य प्राप्त हो जाएंगें, परन्तु उसके लिए समय की आवश्यकता रहेगी। 22.08.1969

107 चन्द्रमा का समाज

चन्द्रमा में प्राणी रहते हैं, उनके कार्यालय हैं, उनका राष्ट्र भी है, उनकी प्रजा भी है, वहाँ नाना प्रकार के भोग विलासों की सामग्री उनके अनुकूल होती है, जो सब प्राणी मात्र के लिए होती है। ऐसा ऐसा व्यापार होता है, अब मानव अपनी अल्प बुद्धि से न जान सके, तो वह द्वितीय वाक्य है। एक मानव यह उच्चारण कर सकता है, कि आज हम इसको कैसे स्वीकार करें, कि चन्द्रमा में प्राणी रहते हैं, जब आज का वैज्ञानिक, प्रकट नहीं कर रहा है, इसका उत्तर यह है कि आज का वैज्ञानिक जब अभी तक वहाँ पंहुच ही नही पाया है, तो वह तुम्हें उत्तर भी क्या दोगे। जब उसे प्रतीति ही नही हुई। यन्त्रों के द्वारा तो उत्तर भी क्या दे सकता है। अब यदि हमें कोई उच्चारण करने लगे कि आप जो उच्चारण करते हैं, वही सत्य है, यह कैसे स्वीकार हो? इसका सार्वभौम वेद प्रमाण है। 22.08.1969

108 चन्द्रमा में जीवन

आज हम चन्द्रमा में जाएंगें, तो क्या हम उन प्राणियों को दृष्टिपात कर सकते हैं, जो चन्द्रमा में विश्राम करने वाले है? क्या उनके कार्यालयों को हम दृष्टिपात करेंगें? क्या यन्त्रों के द्वारा जाने के पश्चात, यन्त्रों के द्वारा हम वहाँ भ्रमण कर सकते हैं? कार्यालयों में जा सकते हैं? या हमें किसी यन्त्र की आवश्यकता होगी उन प्राणियों को दृष्टिपात करने के लिए? तो जब यहाँ का प्राणी जाता है, वह यन्त्र के द्वारा भी वहाँ के प्राणी को दृष्टिपात कर सकता है और बिना यन्त्र के भी दृष्टिपात कर सकता है, कार्यालयों को भी दृष्टिपात कर सकता है, जब तुम्हें वहाँ पृथ्वी दृष्टिपात आती है, तो तुम्हें वहाँ के प्राणी भी दृष्टिपात आएगें, परन्तु उनका वातावरण, उनकी जो वाणी है उसको तुम जान नही पाओगे। उनकी वाणी में अन्तर है। परन्तु यह भी माना गया है, दृष्टिपात किया गया है, कि वहाँ का जो सुन्दरवाद है वह बहुत ही सुन्दर है। इतना सुन्दर है, कि मानव अप्प्रतियों में रमण कर सकता है। 23.08.1969

109 मानधुक रेखा पर यान

हम चन्द्रमा में जाना चाहते हैं, चन्द्रमा की यात्रा में हम सफलता को प्राप्त हुए। इसका तो मुझे बड़ा आनन्द हैं, मेरा हृदय तो बड़ा ही प्रसन्न रहता है, जब मैं यह दृष्टिपात करता हूँ कि आज का मानव चन्द्रमा के तट पर पंहुच गया है, मानधुक रेखा के समीप चला गया है, क्योंकि द्रव्य होता ही ऐसे कार्यों के लिए है। द्रव्य भोग विलास के लिए अधिक नही होता। भोग विलास की सामग्री तो मानव के लिए नाम मात्र की होती है। आज इस प्रकार के भौतिकवादी होती है, उनमें अभिमान हो क्यों? प्रकृति के तत्त्व होने के नाते, परन्तु वह भी एक विशेष प्रकार के यागी होते हैं, जो अपने जीवन की आशा को त्याग करके, वह मृत्यु के मुखारबिन्द में जाते हैं, मृत्यु से उन्हें भय नही होता। योगी भी इसी प्रकार का होता है कि उसे भी मृत्यु का भय नहीं होता। इन्हें तो जानकारी के लिए यह संसार से और प्रकृतिवाद में उदासीन उन कार्यों में होता है प्रकृतिवाद में क्या हैं? ज्ञानवाद में ब्रह्म की चेतना नही है। दोनों की तुलना तो एक तुल्य नही होती, परन्तु मृत्यु से दोनों का भय नही होता। दोनों निर्भय होते हैं। भौतिकवादी भी और आध्यात्मिकवादी भी इसी प्रकार मुझे बड़ी प्रसन्नता है। 23.08.1969

110 रसना का चन्द्रमा से सम्बन्ध

हमारे शरीर में जो रसना है, उस रसना का सम्बन्ध चन्द्रमा से रहता है। और वह जो चन्द्रमा हैं, वह अमृत को बिखेरने वाला है। वह रसों का प्रतिनिधित्व कहलाता है। चन्द्रमा सर्वत्र रसों का प्रतिनिधित्व करता है। तो वह रसों को ले करके, वह रसना उन्हें अपने में अनुभव कर रही है। जब रसना अनुभव करती है, एकांत स्थली में विद्यमान होने वाला ऋषि, वैज्ञानिक विचार रहा है। जो चन्द्रमा की कांति आ रही है, चन्द्रमा से जो रस आ रहा है, वह वनस्पतियों को रसमयी बना रहा है। वह चन्द्रमा अमृतमय कहलाता है। उसको आचार्यो ने अमृत माना है। परन्तु उसका सम्बन्ध मानव की रसना से रहता है।

111 समुद्र से चन्द्रमा द्वारा रस ग्रहण

आचार्य कहते हैं रसना का सम्बन्ध चन्द्रमा से है। वह चन्द्रमा जहाँ रसों का प्रतिनिधि, वहाँ अमृत को बिखेरता रहा है। वह चन्द्रमा कौन कहलाता है? चन्द्रमा समुद्रों से जलों को लेता है, अन्तरिक्ष में स्थिर कर देता है।

112 चन्द्रमा में जलतत्व और वायुतत्व के प्राणी

उतरी भाग क्रोधकुत लेख एक रेखा है उस रेखा के कुछ पार पंहुचने का इसको अवसर प्राप्त हुआ है आगे चल करके जीवन प्राप्त होगा।यह तो केवल पृथ्वी के, वायु के अप्रीति कणों की ही प्रतिभा प्रतीत होती है। आगे चल करके जलाशय भी हैं और गृह भी हैं जहाँ जलाशय होगा, वहाँ पृथ्वी की प्रतिभा है परन्तु जैसा वहाँ पार्थिव जीवन मानव का है, इस प्रकार का जीवन चन्द्र मण्डल में नही स्वीकार किया जाता। हम भी नही करते हैं, क्योंकि जैसे यहाँ इस पृथ्वी मण्डल में पार्थिवतत्व और वायुतत्व दोनों प्रधानता में स्वीकार किये गए हैं। वहाँ जलतत्व और वायुतत्व अधिक प्रधानता में माने गए हैं। हमारे धर्मज्ञ शास्त्रों में और वेद में उसको पिशाच मानव कहते हैं।क्योंकि यह जो

पिशाच योनियां हैं, उनका जैसे मानव को शरीर होता है उसी प्रकार का है परन्तु यह जो मानव पृथ्वी मण्डल का है उसको वह दृष्टिपात आना सम्भव हो जाता है। 22.08.1969

113 चन्द्रवासियों का धर्म मानवता

जीवन मानव को कैसे प्राप्त होगा?मानव को जीवन उस काल में प्रतीत होगा, जब वह उसी प्रकार वाणी से उच्चारण करेगा। रहा यह वाक्, उनका धर्म क्या है? उनका धर्म मानवता है। जैसे यहाँ, हम मानवता की प्रतीति स्वीकार करते हैं, उसी प्रकार वहाँ भी प्रतीति किया करते हैं, चन्द्रमा में जीवन स्वीकार करने से ही, चन्द्रलोक, गृह कह सकते हैं। क्योंकि गृह की मीमांसा ही यह है कि जहाँ प्राणी भ्रमण कर सकता हो, गृह का निर्माण कर सकता हो। आगे चल करके हमारे यहाँ यह भी स्वीकार करते हैं, कि इस पृथ्वी मण्डल का, पार्थिवतत्व वाला प्राणी, जहाँ हमारी आकाशवाणी जा रही है, चन्द्रमा में केवल उसका जीवन छः माह से अधिक नही चल सकेगा, क्योंकि वायु उसे शुष्क कर सकती है, क्योंकि वहाँ वायु की प्रधानता है और वहाँ जल की प्रधानता अधिक होने के नाते, अधिक तत्व अग्रात और तत्ववादी अप्रह समाप्त हो जाते हैं। परन्तु उस काल में रह सकेंगे, जब पृथ्वी की जो कृतीकि होती है, उसकी जो तरंगें होती हैं, उनको एकत्रित करके, जब ले जाएगें, तो वहाँ उसके द्वारा जीवित रह सकेंगे, अन्यथा उसका जीवन समाप्त हो जाएगा।
आगे चल करके यहाँ के प्राणी भ्रमण कर सकते हैं.परन्तु वहाँ जीवन की मीमांसा है, कि ये जीवित रहेगें अथवा नही, वहाँ कृषि होगी, गृह बनाएगें, कार्यालय होंगें और क्या क्या होगा, परन्तु ये पृथ्वी मण्डल के प्राणियों के लिए असम्भव बात है। 22.08.1969

114 चन्द्रवासियों का आहार

अब प्रश्न यह आता है कि जैसे हम इस पृथ्वी मण्डल पर अन्न आहार करते हैं, तो चन्द्र मण्डल के प्राणियों के द्वारा कौन सा आहार है? वहाँ वायु प्रधान और जल प्रधान दोनों के मिश्रण से जो अन्न उत्पति होती है, वे उस अन्न को पान करते हैं। जो उसके अनुकूल होता है। जैसे यहाँ के अन्न में, पृथ्वी के कण अधिक होते हैं, वहाँ उसमें वायु और जल के कण अधिक होते हैं और उसको पान करना ही उनके लिए अनूकुल होता है।
अब रहा यह वाक्य कि यह पृथ्वी मण्डल का प्राणी, कितने समय में भ्रमण कर सकता है?परन्तु इसको अभी अधिक समय लगेगा। शीघ्रता में अभी भ्रमण करने में इतनी सफलता नही पा सकेगा। 22.08.1969

115 चन्द्र प्राणी के दर्शन

आज हम चन्द्रमा में जाएगें तो क्या हम उन प्राणियों को दृष्टिपात कर सकते हैं, जो चन्द्रमा में विश्राम करने वाले है।, क्या उनके कार्यालयों को हम दृष्टिपात करेंगें, क्या यन्त्रों के द्वारा जाने के पश्चात यन्त्रों के द्वारा हम वहाँ भ्रमण कर सकते हैं, कार्यालयों में जा सकते हैं, या हमें किसी यन्त्र की आवश्यकता होगी, उन प्राणियों को दृष्टिपात करने के लिए? तो मैंने इसका उतर बहुत पूर्व काल में दिया था और वह यह था कि जब यहाँ का प्राणी जाता है, वह यन्त्र के द्वारा भी वहाँ के प्राणी को दृष्टिपात कर सकता है और बिना यन्त्र के भी दृष्टिपात कर सकता है, कार्यालयों को भी दृष्टिपात कर सकता है, जब तुम्हें वहाँ पृथ्वी दृष्टिपात आती है, तो तुम्हें वहाँ के प्राणी भी दृष्टिपात आएगें परन्तु उनका वातावरण उनकी जो वाणी है, उसको तुम जान नही पाओगे। उनकी वाणी में अन्तर है। परन्तु यह भी माना गया है कि दृष्टिपात किया गया है, कि वहाँ का जो सुन्दरवाद है, वह बहुत ही सुन्दर है, इतना सुन्दर है कि मानव अप्प्रतियों में रमण कर सकता है। मानव केवल यन्त्रों के द्वारा अपनी कृति के द्वारा, पृथ्वी मण्डल के कुछ तत्वों को लेकर वहाँ छह माह तक जीवित रहने की सम्भावना है, उसके आगे इस पार्थिव तत्व के मानव का वहाँ रहना असम्भव है, रहा यह वाक्य कि सूक्ष्म शरीर वाला कोई आत्मा रहना चाहता है तो उसके लिए कोई असम्भव नही हैं, उसके लिए कोई भी लोक असम्भव नही है, उसके लिए सूर्य भी असम्भव नही हैं।

116 चन्द्रमा की मानसुख रेखा

हम चन्द्रमा में जाना चाहते हैं, चन्द्रमा की यात्रा में हम सफलता को प्राप्त हुए, इसका तो मुझे बड़ा आनन्द है, मेरा हृदय तो बड़ा ही प्रसन्न रहता है, कि आज का मानव चन्द्रमा के तट पर पंहुच गया है, मानसुख रेखा के समीप चला गया है, क्योंकि द्रव्य होता ही ऐसे कार्यों के लिए है। द्रव्य भोगविलास के लिए अधिक नही होता। भोगविलास की सामग्री तो मानव के लिए नाम मात्र की होती है।आज जो इस प्रकार के भौतिकवादी होती है, उनमें अभिमान क्यों हो? प्रकृति के तत्व होने के नाते।परन्तु वह भी एक विशेष प्रकार के योगी होते हैं, जो अपने जीवन की आशा को त्याग करके, वह मृत्यु के मुखारबिन्द में जाते हैं, मृत्यु का भय नही होता। वे तो जानकारी के लिए, इस संसार से और प्रकृतिवाद में, उदासीनता को प्राप्त होते हैं।जानकारी के लिए कि इस मानव शरीर का क्या बनेगा?एक योगी उदासीनता से उन कार्यों में होता है, प्रकृति में क्या हैं, ज्ञानवाद में ब्रह्म की चेतना नही है। दोनों की तुलना तो एक तुल्य नही होती, परन्तु मृत्यु से दोनों का भय नही होता। दोनों निर्भय होते हैं। भौतिकवादी भी और आध्यात्मिकवादी भी।

117 चन्द्र मण्डल पर प्राणी

इसी प्रकार यहाँ का चन्द्र मण्डल का वैज्ञानिक जिसको स्वानिन कहते हैं, परन्तु वह जो स्वानिन है, वह भी वैज्ञानिक है। परन्तु वह शानाकृति लोक में उसका यन्त्र जाता रहता है, जिससे चन्द्रमा की प्रतिभा मिलान करती रहती है। आगे पृथ्वी तक आने के लिए, उनका जो वायु मण्डल है, उनकी जो अत्यन्त धातु है, वह यहाँ तक तो आने के लिए तत्पर रहती है, क्योंकि शक्तिशाली भी है, अग्निन भी है, अब रहा यह कि मैं इन वाक्यों में, विज्ञान के युग में क्यों जाऊं। मैं विज्ञान के युग में जाना नही चाहता। आज मानव को मैं इस वाक्य को इसीलिए उच्चारण कर रहा हूँ कि मानव को यह अभिमान न हो जाएं, कि हम पृथ्वी मण्डल के प्राणी वैज्ञानिक हैं। संसार में जितना भी प्रभु का मण्डल है, जितना भी यह प्रभु का ब्रह्माण्ड है, जहाँ जहाँ प्राणी रहते हैं, उन सभी प्राणियों की इच्छा भी है, द्वेष भी है, वैज्ञानिक भी है आध्यात्मिक वेत्ता और योगी इत्यादि भी हैं। आज यही नही जान लेना चाहिए कि हम पृथ्वीवादी ही इस प्रकार के हैं, क्योंकि पृथ्वी मण्डल पर वास्तव में ऐसा होता रहता है, आज नही परम्परा से होता चला आया है। राजा हिरण्यकश्यप का जो पुत्र, जिसको प्रहलाद कहते थे, उसका जीवन मुझे स्मरण है। प्रहलाद जी थे, वह ध्रुव मण्डल तक पंहुच गएं थे। उस काल में, उनका इतना महान, प्रबल विज्ञान था। 23.08.1969

118 चन्द्रमा में पिशाच योनि

महा पिशाच भी रहते हैं। पिशाच उन्हें कहते हैं जिनका पुण्य अधिक होता है और पाप सूक्ष्म, वह यहाँ के संसार का उच्च अध्ययन करते हुए देवयान में जाने का प्रयत्न करते है। देवयान से निचले स्थान में आने से उन्हें पिशाच कहते हैं। वह अन्तरिक्ष में रमण करते हुए अपने पर विचार करते हुए सोचा करते हैं, कि प्रकाश मिले तो हम प्रकाश में रमण करें। जैसी मुझे सूचना मिली है, इस चन्द्रमा में पिशाच योनियाँ रहती हैं।

लोमश मुनि महाराज ने एक समय निर्णय दिया और इन्होंने मुझसे अब से लाखों वर्ष पूर्व कहा था कि गुरुदेव! मैं चन्द्रमा में गया चन्द्रमा में मैंने देखा, कि वहाँ शीतल अनुगच्छति महान योनियाँ रहती हैं, जिनको पिशाच कहते हैं। उन पिशाच योनियों के वहाँ सब ही कुछ हैं। उनके कार्यालय भी हैं। परमपिता परमात्मा के गुणगान के सुन्दर सुन्दर स्थान भी हैं। परन्तु आज मुझे लोमश मुनि के आदेशों की कुछ पुनरूक्ति नहीं करनी है। मैंने तो भाई देखा नहीं, वैसे ही उच्चारण करूं, परन्तु सुना अवश्य है। 28.07.1963

119 चन्द्रभानु यान

मैं लंका के विश्वविद्यालयों की चर्चा करता रहा हूँ, यहाँ भारद्वाज मुनि की संरक्षणता में, मुनि के चरणों में, नाना ब्रह्मचारी ओत प्रोत हो करके, नाना विज्ञान की चर्चाएँ करते। क्योंकि भारद्वाज मुनि ने ही राजा रावण के पुत्र नारान्तक को चन्द्र यात्री बनाया। भारद्वाज मुनि ने चन्द्रमा की यात्रा की शिक्षा प्रदान की थी। परन्तु इस विद्या को महाराजा कुम्भकरण भी जानते थे। उस काल में महाराजा कुम्भकरण ने एक यान का निर्माण किया था। जिस यान का नाम चन्द्रभानु यान कहलाता था। एक यान था, जिसका नाम गरुड़केतु यान था। एक यान था, जिसको कागावृणितकेतु यान कहते थे। लंका में, कागावृणितकेतु ऐसा यान था, जिस पर विद्यमान हो करके, पृथ्वी से मानव गति कर रहा है और चन्द्रमा की परिक्रमा करता हुआ, बुध मण्डलों के और मंगल के यातायात बने हुए थे। 14.05.1984

120 चन्द्र मण्डल में वायु प्रधानता

चन्द्र मण्डल पर आज का वैज्ञानिक जीवन को स्वीकार नही करता है, मैंने अपने प्यारे पुत्र को बहुत पूर्व काल में कहा था कि जीवन होता है। कि हम चन्द्र मण्डल में वायु और जल को प्रधानता देते हैं, परन्तु महानन्द जी ने भी कल के वाक्यों में यह कहा था, आज भी यह उच्चारण इनके मन में एक शंका उत्पन्न हो रही है और वह यह कि जब वहाँ चन्द्र मण्डल में वायु प्रधानता है, तो पृथ्वी मण्डल का वैज्ञानिक उसमें वायु का अभाव क्यों उच्चारण करता है? परन्तु यह बड़ा ही गहन प्रश्न है, इसके ऊपर वास्तव में विचार विनिमय करना है और इसका विचार यह है कि हम पृथ्वी मण्डल से जाते हैं अथवा पार्थिव तत्व को ले करके जाते है। तो जहाँ वायु में पार्थिव तत्व अधिक नही होता, जहाँ अग्नि का मिश्रण कुछ अधिक होता है, वहाँ पार्थिव तत्व वाले को वायु सूक्ष्म प्रतीत होती है और क्योंकि यन्त्र भी उसी के आधार पर बने हुए हैं, यन्त्र भी पृथ्वी मण्डल के परमाणुओं से सुगठितता अधिक होने के नाते, पार्थिवता अधिक होने के नाते, वायु की प्रधानता भी स्वीकार की गई है। इसी प्रकार हमारा जो पृथ्वी मण्डल है इसमें कहां हम पार्थिव तत्व प्राप्त कर सकते हैं ?और हम यह वायु तत्व तीनों को एक समय, तीनों को एक समानता में विचार करते हैं, क्योंकि जल और पार्थिकता की प्रधानता मानी गई है, परन्तु ऐसा हमारे यहाँ सृष्टि के प्रारम्भ में स्वीकार किया गया है। आगे आचार्यों ने यह कहा कि वायु की प्रधानता की विशेषता ही है चन्द्र मण्डल में, कि वायु वहाँ इस प्रकार की है, क्योंकि वायु का इतना वेग इसीलिए है कि वहाँ मृत मण्डल के प्राणी को इसीलिए सूक्ष्म प्रतीत होता है, कि वह इस वायु में पार्थिव कण अधिक न होने के कारण कुछ ऐसा प्रतीत होता है, परन्तु वायु की प्रधानता हम वास्तव में स्वीकार

करते हैं अब हम यह वाक् कैसे स्वीकार करें कि इसका हमारे द्वारा प्रमाण क्या है।
हमारे यहाँ वेद कहता है, आचार्य वेद का प्रमाण हमें प्राप्त करा रहा है, कि ऐसा ही चन्द्रमा में स्वीकार किया जाता है कि वायु की प्रधानता, परन्तु जल का मिश्रण है। इसीलिए चन्द्रमा में शीलता की प्रधानता स्वीकार करते हैं, चन्द्रमा की कान्ति, जब पृथ्वी मण्डल पर आती है वह कान्ति जब किसी रूप में आती है, तो जल की प्रधानता होती है, शीतलता आच्छादित होती है और शीतलता क्यों? इतनी दूरी तक पृथ्वी मण्डल तक आने तक इतनी शीतलता रहती है, कि वह अमृत प्रदान कर सके और कृषि करने वाले कृषक को इस अन्न में अमृत की, वह ओत प्रोतता करा सके, तो वह चन्द्रमा की शीतलता में मिश्रित होता है, वह प्रमाण भी प्राप्त होते हैं और इसका अनुभव भी इसी प्रकार से प्राप्त होता रहता है। 31.08.1969

121 चन्द्र मण्डल पर धटोत्कच्छ के यन्त्र

यह जो प्रकृति का प्रवाह है, यह केवल इस पृथ्वी मण्डल का ही नहीं है। आज प्रत्येक लोक लोकान्तरों में, जिस लोक में प्राणी रमण करते हैं, वे प्राणी सर्वत्र विज्ञान के युग में ही रमण कर रहे हैं। क्योंकि विज्ञान का जो युग है, यह जो विज्ञान है, नाना प्रकार की तन्मात्राओं वाला विज्ञान, तो परम्परागतों से एक रस में रमण करने वाला है।परन्तु आज का मानव चन्द्रमा की यात्रा, मंगल की यात्रा शुक्र में जाने के लिए तत्पर हुआ है। मंगल तक नहीं पहुंच पाया। और शुक्र में यन्त्रों का प्रवाह चल रहा है। उसके निकट तो नहीं जा सका है। परन्तु अभी दूरी है, यन्त्रों का प्रवाह चल रहा है। इसी प्रकार चन्द्रयान के लिए इस पृथ्वी मण्डल का प्राण, यह कल्पना कर रहा है कि आज हम ऐसी धातु को जानना चाहते हैं, जिस धातु को जान करके, उसको यहाँ मण्डल पर लाया जाए और उससे किन्हीं यन्त्रों का और भी निर्माण किया जाए। चन्द्र मण्डल तथा सूर्य मण्डल के ऊपर भीमसेन के सुपुत्र घटोत्कच्छ के बनाए हुए यान आज भी भ्रमण कर रहे हैं।
आज का जो वैज्ञानिक है, वह पर्वतों के आँगन में विश्राम कर रहा है, उनका यन्त्र कक्ष में भ्रमण कर रहा है। जब तैं यह दृष्टिपात कर रहा हूँ, तो चन्द्रमा से ऊपरले जो मण्डल हैं, द्वापर काल के भीम और घटोत्कच्छ के यन्त्र अब तक रमण कर रहे हैं। उससे ऊपर के यन्त्र भी रमण कर रहे हैं। उन्होंने इससे ऊँचे अप्रत्यज्ञ लोकों की, जिसको हमारे यहाँ ऋषि क्रातकेतु यन्त्र कहा जाता है, जो सूर्य मण्डल के कक्ष से ऊँचा भ्रमण कर रहा है।
मंगल ग्रह की यात्रा सुगम है। वहाँ से नाना धातुएं सुलभ हैं, इस पृथ्वी मण्डल का मानव भौतिकवादी है, अध्यात्मवादी नहीं है। आज का जो भौतिक विज्ञान है, वह चन्द्रमा के कक्ष में ही नहीं, परन्तु आगे बढ़ा है।आगे इसकी उन्नति ओर भी होने वाली है। यह चन्द्रमा के कक्षों में भी जाएगा। बृहस्पति के द्वारा भी आज का विज्ञान जा सकता है। परन्तु विचार केवल मुझे तो ऐसा भी तो जगत प्रतीत होता रहा है कि इसमें चन्द्रमा एक मानव समाज बनाने के लिए विचार रहा है, यंत्रों के द्वारा यहाँ स्थूल, अपूत मानव बना भी सकता है।परन्तु इस पृथ्वी मण्डल का, आज का समाज, आज का राष्ट्रवाद, आज का जो मानव है, वह तो अग्नि के निकट विराजमान हो गया है। आज का जो जगत है, न तो मंगल की यात्रा ही इसके लिए, आज के विज्ञान के लिए कोई असम्भव है, सर्वत्र सम्भव है। मैं यह कहा करता हूँ कि मंगल की यात्रा करना इसके लिए सुलभ है, वहाँ से नाना धातु प्राप्त हो सकती है। पार्थिव प्राणी रमण करते रहते हैं, परन्तु चन्द्रमा में तो पर्वत हैं, प्राणी भी इस प्रकार के, जो इन्हें दृष्टिपात नहीं आते, क्योंकि यह इन स्थूल यंत्रों से दृष्टिपात करना चाहते हैं, वह उस प्रकार के प्राणी हैं, अरे! यह तो सार्वभैम सिद्धान्त हमारे यहाँ वैदिकता में माना गया है, जिस मण्डल में पर्वत हैं, जल इत्यादि है, वहाँ प्राणी का वास भी अवश्य ही रहता है। 04.08.1971

122 चन्द्रमा का यात्री, सोमकेतु

आज का मानव यह कहता है कि हमारा विज्ञान बहुत विशाल हो गया है। चन्द्रमा की नाना प्रकार की वनस्पतियां क्या वहाँ से पृथ्वी के, पार्थिव रज लेकर पृथ्वी मण्डल तक आ पहुंचे। परन्तु उस काल में यह विज्ञान ऊँचा बनेगा, जब चन्द्रमा का प्राणी इस पृथ्वी मण्डल पर, यह उस यान में विराजमान हो करके आ जाएगा। आज का मानव चन्द्रमा की यात्रा नहीं कर सका है। चन्द्रमण्डल पर प्राणी नहीं रहते। अभी तक यह राष्ट्र में कहाँ पहुंचे हैं। यह अवश्य माना जाता है कि वहाँ जैसा पृथ्वी पर प्राणी रहता है, ऐसा प्राणी चन्द्रमण्डल पर नहीं रहता। वहाँ जल और वायु की प्रधानता वाली प्राणी रहता है। आज का मानव कहता है कि चन्द्रमा पर हमारा जीवन क्यों सुरक्षित नहीं रहता? इसका मूल कारण यह है कि चन्द्रमण्डल का जो वायुमण्डल है, वहाँ पार्थिव परमाणु वायु में अधिक रमण नहीं करते हैं, इसलिए मानव शरीर वहाँ जीवित नहीं रह पाता और वह अपने जीवन को समाप्त कर देता है। यहाँ बहुत से वैज्ञानिक हुए।

123 नाना लोकों में विज्ञान की गति

राजा रावण के काल में चन्द्रमा और पृथ्वी दोनों की जहाँ आकर्षण शक्ति, एक दूसरे को आकर्षित करती है, वहाँ स्थानों के निर्माण किए गए। चन्द्रमण्डल का जो विज्ञान है, वहाँ आज से लगभग 200 वर्ष आगे का वहाँ विज्ञान है, इस पृथ्वी मण्डल के विज्ञान से लगभग 150

वर्ष ऊँचा माना गया है। इसी प्रकार मंगल मण्डल का जो विज्ञान है इस पृथ्वी मण्डल के प्राणियों के विज्ञान से लगभग 50 वर्ष आगे चला गया है। इसी प्रकार नाना प्रकार के वैज्ञानिक नाना लोक लोकान्तरों में होते रहते हैं क्योंकि प्रभु के राष्ट्र में नाना पृथ्वियां हैं, नाना मण्डल हैं, नाना मंगल हैं, नाना चन्द्रमा हैं, नाना यहाँ बुध माने गए हैं।

यह तो संसार है, एक दूसरे लोक को जानने की, मानव को प्रेरणा होती रहती है। एक दूसरे लोक के प्राणी, एक दूसरे लोक के प्राणी को जानना चाहते हैं, निकट आना चाहते हैं। परन्तु विज्ञान की वेदी इतनी विशाल है, कि मानव इससे चकित रहता है। विज्ञान इतना विशालता में चला गया है। आज के संसार ने इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया है, कि किस प्रकार के यन्त्रों का प्रहार होते ही राष्ट्र के राष्ट्र अग्नि के मुख में जा सकते हैं। परन्तु आज के विज्ञान ने कोई ऐसा यन्त्र नहीं बनाया जो राष्ट्र अग्नि के मुख में चला जाए, वह यन्त्रों के द्वारा, विज्ञान के द्वारा, उसके जीवन की रक्षा हो सके। रक्षा का कोई साधन नहीं बना है। 23.08.1971

124 योगी की चन्द्रमा की यात्रा

यह कैसा संघर्ष हो रहा है, कहीं अच्छाईयों का संघर्ष है, तो कहीं दुरिता का संघर्ष हो रहा हैं, और उसकी ध्वनियां बन रही है, और ध्वनि मानव के श्रोत्र अन्तर्मुखी बन करके, जो योगेश्वर होता है, उन ध्वनियों में परमात्मा का दिग्दर्शन करता हैं और जो विज्ञानवेता होता हैं, वहाँ ऐसे ऐसे विज्ञान के निर्माण, आविष्कार होते रहते हैं, कि सूर्य की किरणों के साथ में, चन्द्रमा की आभा में भी रमण करने लगता हैं, क्योंकि चन्द्रमा प्रायः वह शीतल परन्तु, चन्द्रमा की कान्ति के साथ में वह गमन कर जाता हैं, और गमन करता हुआ चन्द्रमा के स्वरूप में चन्द्रमा में गति करने लगता है। 27.10.1989

125 चन्द्रमा रयि के रुप में

तो महर्षि पिप्पलाद मुनि महाराज और जिज्ञासुओं का इस प्रकार पशु के ऊपर अपना मन्तव्य प्रारम्भ होता रहा। उन्होंने अपना यही निर्णय दिया है कि यह संसार कहीं चन्द्रमा, रयि के रूप में रहता है, कहीं मिथुन के रूप में रहता है। तो नाना प्रकार के अपना मन्तव्य दिया। ऋषि उनको श्रवण करते रहे। तो जिज्ञासुओं को जब यह ज्ञान हो गया कि ब्रह्म की आभा में हम सदैव रमण कर रहे हैं और यह जो ब्रह्माण्ड, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों के रूप में दृष्टिपात आ रहा है, वह सर्वत्र, ऋत से बना हुआ, एक दूसरा लोक की दूरी के मध्य से भी ऋत और सत रहता है। उसमें एक सूत्र से सर्वत्र जगत पिरोया हुआ है। उसी से पिरोया हुआ होने से एक माला दृष्टिपात आती रहती है। यह माला के सदृश उन्होंने अपना निर्णायत्मक दिया।

तो इस प्रकार प्रकृति और ब्रह्म का वर्णन होता रहता है और ऋषि मुनियों की अपनी अपनी मन्तव्य की गाथाएं रही हैं। उनके विचार विनिमय करने का एक बड़ा विचित्र माध्यम रहा है। तो हम जिज्ञासु बनें। सबसे प्रथम परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में और विवेक को उत्पन्न करें। विवेकी बन करके प्रकृति का सर्वत्र ज्ञान प्रायः हमें होना चाहिए और जब हम जिज्ञासु बन करके आचार्यो के समीप विद्यमान होते है, तो आचार्य तुम्हें, ब्रह्मा का ज्ञान कराएगे, अथवा उसी में तुम रत्त हो जाओगे। 03.10.1992

126 चन्द्रमा का समन्वय समुद्रों से

हम चन्द्रमा के प्रकाश में प्रकाशित, चन्द्रमा को बना करके, अपने कार्यों में रत्त हो जाते हैं। यह चन्द्रमा कान्ति के देने वाला है, अमृत को बहाने वाला है, यह चन्द्रमा ही पूर्णिमा के दिवस इसका समन्वय समुद्रों से होता है, यह सोम बन करके, सोम को अपने में धारण कर लेता है यही अन्तरिक्ष में, परमाणु रूप में परिणत होता है, यही सोम की वृष्टि करता है। यह सोम कहलाता है। वेद ने चन्द्रमा को सोम कहा है, अमृत कहा है। जब, कृषक इस पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना कर देते है, उस समय यह चन्द्रमा अपनी महान कान्ति के द्वारा उसमें सोम की वृष्टि कर देता है। सोम का भरण कर देता है, वह सौम्य बन करके कृषक प्रसन्न हो रहा है। मेरी कृषि कितनी सुन्दर उपज रही है, वह प्रसन्नीय बन रहा है, माता की रसना के निचरले विभाग में एक चन्द्रकेतु नाम की नाड़ी होती है, उस नाड़ी का सम्बंध चन्द्रमा से और कान्तियों से होता है। परन्तु उस नाड़ी का सम्बन्ध, आन्तरिक जगत में, माता की पुरातत नाम की नाड़ी से होता है। पुरातत नाम को नाड़ी का सम्बन्ध माता की लोरियों से होता है, लोरियों से पंचम नाड़ी बन करके चलती है। जो बालक माता के गर्भस्थल में, हम जैसे शिशु रहते है वह अमृत को पान कर रहे है, उन नाड़ियों के द्वारा वह चन्द्रमा का अमृत माता के गर्भस्थल में, नस नाड़ियों के द्वारा अमृत पान कर रहा है। 05.01.1983

127 चन्द्रमा नाना रसों का भण्डार

यह चन्द्रमा नाना प्रकार के रसों का एक भण्डार है और यह दूसरों से सहायता लेता है। सूर्य से इसमें प्रकाश आता है। यह उसी को शीतल बनाकर के रसों का प्रतिनिधित्व करने वाला है। तो ये अन्वेषण अथवा चिन्तन का एक विषय बना हुआ था। अन्तर्हृदय में इन वाक्यों को वे चिन्तन में ला रहे थे। चिन्तन में लाते हुए जब वह जागरुक हुए अपनी ध्यान अवस्था से जगत में आए तोदोनों ब्रह्मचारी विद्यमान हैं।

जब दोनों ब्रह्मचारी विद्यमान हैं, तो ब्रह्मचारी सुकेता ने कहा प्रकृति के उग्ररूप को जानना ही भौतिक विज्ञान कहलाता है। इस प्रकृति के उग्ररूप में क्या है? परमाणुवाद है। उस परमाणुवाद में क्या हैं? नाना तरंगें हैं, नाना ब्रह्माण्ड निहित रहते हैं। उन्होंने कहा महाराज! यह कैसे जाना जाए? 05.02.1985

128 नाना लोकों का क्रियाकलाप

जैसे पृथ्वी मण्डल पर क्रियाकलाप है, ऐसे ही चन्द्रमा में भी क्रियाकलाप है, ऐसा ही मंगल में क्रियाकलाप माना गया है। 13.04.1988

129 चन्द्रमा का वशिष्ठ रूप

चन्द्रमा की दो ईकाई बन जाती है, और दो ईकाई बन करके उससे वशिष्ठ मण्डल का समन्वय हो गया है, इसीलिए चन्द्रमा को वशिष्ठ कहते हैं, क्योंकि वह सोम है, चन्द्रमा ब्रह्मज्ञान में, ब्रह्मज्ञानी जो होता है, उसे वशिष्ठ कहा जाता है, राष्ट्र वेत्ताओं में वह शिरोमणि होता है, उसका नाम भी वशिष्ठ कहलाता है और आत्मा का नाम भी वशिष्ठ कहा जाता है, वशिष्ठ कहते हैं जो अपने में शिरोमणि हो, हमारी अन्तरात्मा में जो विद्यमान है वह वशिष्ठ आत्मा है क्योंकि यदि वह वशिष्ठता में, यदि आत्मा न हो, तो शरीर न रहेगा। जैसे स्वाहा का नाम भी वशिष्ठ है, वशिष्ठ नाम स्वाहा को कहते हैं, जैसे यज्ञशाला में जब यज्ञमान विद्यमान होता है और वह जब स्वाहा उच्चारण करता है, तो वह वशिष्ठ कहलाता है, और वशिष्ठ वह यज्ञमान का आत्मा होने से यज्ञमान कावशिष्ठ होने से, वशिष्ठ की आभा में रत्त हो जाता है, और वह स्वाहा शब्द ही वशिष्ठ कहलाता है, क्योंकि स्वाहा का अर्थ है, त्याग वृत्तियाँ और निस्वार्थता उसमें विद्यमान होती है तो वही द्यौ में प्रवेश करता रहा है। 18.02.1991

130 चन्द्रमा के द्वारा सोम की वृष्टि

हमारे आचार्यों ने चन्द्रमा की दो व्याख्याएं की हैं। एक व्याख्या यह है कि यह चन्द्र-मण्डल है। एक व्याख्या यह है कि जब सोम की वृष्टि होती है तो यह ब्रह्माण्ड एक चन्द्र स्वरूप बन करके सोम की वृष्टि करता रहता है। जैसे पृथ्वी को यह चन्द्रमा सोम से भर देता है। 23.04.1979

131 चन्द्रमण्डल में सौम्य प्रकृति वाला प्राणी

चन्द्र मण्डल में सौम्य प्रकृति वाला प्राणी रहता है उनका सौम्य विचार होता है। वहां भी योग प्रभाकृत होता रहता है। उसमें भी ब्रह्मरन्ध्रों में नृत्य की प्रतिभा रहती है। लोक लोकान्तरों में जहां जिस तत्व की प्रधानता रहती है, उसी प्रकार के वहां विचार होते हैं। उन्हीं का घृत बनता है। सूर्य आदि अग्नि मण्डल में विचारों का घृत बनता है, तथा पार्थिव तत्व प्रधान वाले लोगों में पशु इत्यादियों द्वारा ही वस्तुओं का घृत बनता है, तथा पार्थिव तत्व वाले लोकों में पशु इत्यादियों द्वारा ही वस्तुओं का घृत बनता है। इसी प्रकार लोक लोकान्तरों में यज्ञ होते हैं तथा उनसे संबंध हो जाता है।

132 विज्ञान क्या है?

विज्ञान किसे कहते हैं, विज्ञान कहते हैं मनन और चिन्तन को, विज्ञान कहते हैं जो मनन किया है उसका साकार रूप बनाना है। साकार रूप कैसे बनता है? एक समय राजा अश्वपति के यहाँ यह विचार आया अध्ययन किया, गुरुओं के द्वारा, कि राजा को विज्ञानवेत्ता बनना चाहिए।

तो राजा विज्ञानवेत्ता कैसे बनता है? नाना प्रकार के परमाणुओं और उनका जो उद्गीत गाना है, उद्गीत गाने के जो रहस्य है, उसे यन्त्रों में निहित करना है, अपने में दृष्टिपात करना है, और विज्ञान की धाराओं में रत्त रहना है, विश्वविद्यालयों में, अपने राष्ट्र के विश्वविद्यालय में विद्यमान ब्रह्मचारियों को राजा कहता है, कि हे ब्रह्मचारियों! मैं भी विज्ञानवेत्ता बनना चाहता हूँ, चन्द्रमा के विज्ञान को जानना चाहता हूँ, चन्द्रमा का विज्ञान क्या है? वह शीतल है वह वायु में शरद ऋतु और हेमन्त ऋतु से उसका समन्वय रहता है, वह अमृत की वृष्टि करने वाला है, जब राजा इस प्रकार अपने में मनन और चिन्तन करता है।

राजा अश्वपति के यहाँ एक समय, एक भव्य समाज एकत्रित हुआ और वह भव्य समाज में, ऋषिवर, अपना-अपना मन्तव्य और विचार देने के लिए, उपस्थित हुए, तो महाराजा अश्वपति ने अपने पुरोहित वृहेति श्वेति नाम के मुनि महाराज को वहाँ का सभापति नियुक्त किया। और सभापति की आज्ञा पा करके अपना-अपना उद्गीत गाने लगे, प्रश्न यह था कि राजा अपने राष्ट्र को कैसे उन्नत बना सकता है? और कैसे राजाअपने में महापुरूषों की रक्षा कर सकता है। 19.02.1991

133 मंगल का वायुमण्डल

एक समय भारद्वाज मुनि ने महाराजा कुम्भकरण की परीक्षा ली। उन्होंने कहा हे कुम्भकरण! क्या तुम यानों के सम्बन्ध में जानते हो? महाराज! आपकी महिमा से कुछ ही जानता हूँ। तो मंगल में कैसा वायुमण्डल है?

तो महाराजा कुम्भकरण अपने यान में विद्यमान हो करके, पृथ्वी की उड़ान उड़कर के मंगल में पहुंचा। मंगल का जो वायुमण्डल है वहपृथ्वी जैसा ही है। जैसा पृथ्वी मण्डल पर है, ऐसा ही प्राणी रहता है, परन्तु विज्ञान इस पृथ्वी से सदैव ऊर्ध्वा में रहता है।

तो, वे मंगल में पहुंचे, तो उस काल में वहाँ का एक वैज्ञानिक त्रिटीतवन्तकेतु कहलाता था। त्रिटितवन्तकेतु से उनकी वार्त्ता होती, वार्त्ता करके वह पृथ्वी पर पुनः भारद्वाज मुनि के आश्रम में आ पहुंचे। भारद्वाज मुनि ने कहा कि धन्य है, कि तुम्हारा विज्ञान, महान है। इसी प्रकार हमारे यहाँ विज्ञान सदैव महानता पर गति करता रहा है, मानवीय मस्तिष्कों में, तरंगवाद में, क्योंकि एक ही सूत्र में सर्वत्र लोक लोकान्तर पिरोए हुए से दृष्टिपात होते है, क्योंकि एक ही सूत्र इसमें दृष्टिपात होता है। 02.02.1982

134 मंगल यात्री मेधनाद

महाराजा इन्द्रजीत मेघनाद ने अपनी पत्नी सुलोचना को ले करके मंगल की यात्रा करते रहते थे।, क्योंकि यान से, यातायात के साधन है, तो साधन मानव के समीप रहने चाहिए। तो इस प्रकार का विज्ञान और क्रियाकलाप, त्रेता के काल में होता रहा है। महाराजा कुलीश गोत्र के ये राजा थे। 03.02.1982

इस भौतिकवाद के आंगन में प्रत्येक मानव विज्ञान में गति कर रहा है। परन्तु यह जो विज्ञान है यह प्रत्येक मानव के मस्तिष्क में विद्यमान है। प्रत्येक मानव यदि साधनों से उपार्जित हो जाए, तो वह सूर्य की यात्रा भी करने लगता है, चन्द्रमा का यात्री भी बन जाता है, मंगल और बुध में रमण करता है और भी नाना प्रकार के लोकों में गति करने लगता है परन्तु यह कैसे? यह आध्यात्मिक मार्ग वाला जितना व्यक्ति है, वह इस मार्ग से हो करके ही गति कर रहा है, यदि भौतिकवाद को जानता हुआ, मानव पारायणता को प्राप्त नहीं होता, तो वह आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता नहीं बन सकता, क्योंकि आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता, उसी काल में बनता है जब वह इस संसार से उपराम हो जाता है और उपराम तब होता है, जब इसको जान लेता है। यदि हम मानव शरीर को नहीं जानते, इस मानवीय ब्रह्माण्ड को नहीं जानते, तो हम बाह्य जगत को भी नहीं जान सकते। बाह्य जगत में जितना भी क्रिया कलाप हो रहा है वह मानव के आन्तरिक जगत में भी हो रहा है। 04.03.1982

वैज्ञानिक पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश कर रहे है, अन्तरिक्ष में यन्त्र गति कर रहे है, चन्द्रमा की यात्रा में लगे हुए है, मंगल की यात्रा कर रहे है। जब मैं यह विचारता हूँ, कि यह धर्म और आत्मा का कितना दर्शन करते है। तो उसमें, वे शून्य हो जाते है। 04.03.1982

135 मंगल यात्री कुम्भकरण

कुम्भकरण जी ने जब राज्य सभा में यह वर्णन कराया, तो उन्होंने कहा मैं इस धातु को जान करके, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों का यात्री बना हूँ यात्री बन करके, उस समय मैं यात्रा में भ्रमण करता हुआ गुरुदेव की आज्ञा पा करके, एक समय हम मंगल लोक में पहुंचे थे। तो मंगल लोक के एक विज्ञानवेत्ता ने यह कहा कि यह जो तुम लोक लोकान्तरों में भ्रमण कर रहे हो, यह तो नकारात्मक है, मैं यह जानने के लिए तत्पर रहता हूँ कि तुम्हारा राष्ट्र जहाँ से तुम्हारा आगमन हुआ क्या है? वह महान सुचरित्रता उसके द्वारा होनी चाहिए। क्योंकि सुचरित्रता ही लोक लोकान्तरों में परिणत करा देती है, सुगन्धि देने लगती है।

जब उन्होंने यह वार्ता प्रगट की, तो मैं शान्त हो करके पुनः अपने आश्रम में आ पहुँचा। आश्रम में आकर के यन्त्रों के द्वारा अपने को शान्त दृष्टिपात किया। तो मैं विचारने लगा, विचारते विचारते मैं पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा पहुँचा तो तब उन्होंने मुझे निर्णय कराया कि यह यथार्थ है कि तुम सबसे प्रथम अपने राष्ट्र, अपने समाज को महान बनाओ, उसके पश्चात तुम्हारा राष्ट्र पवित्र बनेगा। उन्होंने कहा मेरी इच्छा यह है मैं अणु और परमाणुओं की शिक्षा देता रहता हूँ, अपने विचार व्यक्त कहता रहता हूँ। मानव को यौगिकता के द्वारा और भौतिकवाद की प्रतिभा के अनन्य प्रकारों से उसका उद्गीत गाता रहता हूँ, अथवा उसका उद्गीत गाते गाते अन्त में मैं मौन हो जाता हूँ 06 11 1986

136 मंगल मण्डल में महाराजा अर्जुन

एक समय महाराज अर्जुन मंगल मण्डल से यहाँ आए, तो महाराजा दोणाचार्य ने कहा हे पुत्र! तुम क्या प्राप्त करके आए हो ?उन्होंने कहा कि महाराज! आपकी अनुपम कृपा से मैंने वहाँ नाना प्रकार के वैज्ञानिको से जानने का प्रयास कि, या मैंने यह जो ब्रह्मास्त्र है भगवन! इसको मैंने वहाँ प्राप्त किया है और एक कृति भी यन्त्र है यहाँ उसकी सूक्ष्मता मानी जाती है, विज्ञान में, मानव जब वैज्ञानिक बनने के लिए चलता है, तो वहाँ ज्ञान की प्रतिभा किस प्रकार की है? उस समय महाराजा अर्जुन ने कहा कि हे भगवन! हे प्रभु! वहाँ वेदों का पवित्र ज्ञान है, और वह सुमति से प्राप्त करते हैं, इसी के आधार पर वहाँ विज्ञान की प्रतिभा मानी जाती है। परन्तु रहा यह वाक् कि विज्ञान को हम किस रूप में स्वीकार करते हैं अथवा वेदों का ज्ञान हम किस रूप में स्वीकार करते हैं यह एक महाविचार का विषय रह गया था

उन्होंने कहा वहा भी ब्रह्मण है ब्रह्मवेत्ता हैं ब्रह्म विचारक हैं, विचारक होने के नाते वेद पर अधिक से अधिक अनुसन्धान होता है। 21.08.1969

137 बृहस्पति और मंगल लोक में प्राणी

प्रकृति में जितना विज्ञान है, वह चाहे चन्द्र मण्डल का हो अथवा शुक्र का हो, बुध का हो, या किसी भी लोक लोकान्तर का हो, उसको जानने में वह सब प्रकाश स्तम्भ हो जाता है, क्योंकि वह चेतना सर्वत्र है, जो सर्वत्र चेतना है, उस चेतना को जिसने जान लिया है, जो ब्रह्म की सर्वत्र चेतना को जान लेता है, वह इसका अधिपथ्य कर ही लेता है क्योंकि आत्मा संसार में महान और सूक्ष्म है। सूक्ष्म होने के नाते उसको प्रकृति व्यापती नही है, क्योंकि प्रकृति इस प्रकार जब नही व्यापती तो उसको लोक लोकान्तर भी नहीं व्यापते।

हमारे यहाँ ऐसा माना गया है कि बृहस्पति मण्डल में वायु प्रधान है परन्तु वायु प्रधान में पार्थिव तत्व वाले जो शरीर जाते हैं, तो, वहाँ वह जीवित नही रह पाएगे, क्योंकि उनका प्राणान्त हो जाएगा, क्योंकि वहाँ केवल उनकी प्रतिभा अकृत रह सकेगी, तो इसीलिए जैसे वायुमण्डल के पार्थिवता में आ जाएं तो वह पार्थिवता में जीवित नही रह सकेंगे, क्योंकि उनका जीना, हम तो वास्तव में स्वीकार नही करते, उनका जो शरीर है, वह आत्मा का जो शरीर है, परन्तु वह एक दूसरे लोक में सुगठितता नही है, अब मंगल मण्डल के जो प्राणी हैं वह पृथ्वी मण्डल पर जीवित रह सकते हैं क्योंकि पृथ्वी मण्डल के प्राणी मंगल मण्डल पर जीवित रह सकेंगे क्योंकि मंगल में पार्थिव तत्व प्रधान है और इस पृथ्वी मण्डल पर भी पार्थिव तत्व प्रधान है।

हम योग के द्वारा इन पर सब पर अपना अधिपथ्य कर सकेंगे, इससे अन्तरात्मा को शान्ति भी प्राप्त होगी और एक द्वितीय मार्ग यह है कि हम एक दूसरे परमाणु को जानते हैं, परन्तु जब हम परमाणुवाद में जाते हैं एक परमाणुवाद को हम जानते हैं तो दूसरा परमाणु विराजमान है, इसके साथ साथ दूसरा परमाणु इससे सूक्ष्म है, जब हम उसको जानते हैं तो उससे सूक्ष्म परमाणु उसके साथ है परन्तु जब इस प्रकार तृतीय परमाणु को जानते हैं, तो चतुर्थ परमाणु उसके साथ साथ लगा हुआ है, परन्तु जब हम चतुर्थ परमाणु को जानते हैं, पंचम परमाणु उसके साथ लगा हुआ है और उसके साथ लगा हुआ होने के, हम सात प्रकार के परमाणुओं को जानते हैं। अब इसमें कुछ परमाणु हैं, कुछ महापरमाणु है, कुछ एक दूसरे से सूक्ष्म परमाणु होते हैं, उन परमाणुओं में भी सूक्ष्मवाद है जैसे वायु के परमाणु हैं, वायु के परमाणु लगभग साठ हजार प्रकार के, सूक्ष्म से सूक्ष्म होते चले गएं हैं, एक स्थूल है, उससे सूक्ष्म से सूक्ष्म, तो साठ हजार तक उसकी सूक्ष्मता मानी है। अब जैसे हमारे यहाँ अग्नि के परमाणु हैं, एक अग्नि का परमाणु जो गृहपथ्य नाम की अग्नि है, वह माता अपने गृह में प्रविष्ट करती है उसकी प्रतिष्ठा करती है, एक अग्नि यज्ञशाला में परिणत होती है यज्ञशाला में जो अग्नि प्रदीप्त होती है, यज्ञशाला में जो अग्नि हम प्रदीप्त करते हैं सामग्री उसमें अर्पित करते हैं, जितने प्रकार की सुगन्धिदायक वनस्पतियां होंगी, उतने ही प्रकार की सूक्ष्मता उनमें होती चली जाती हैं, ऐसा हमारे यहाँ यद्यपि विशेषज्ञवेत्ताओं ने स्वीकार किया है कि जब यज्ञमान यज्ञ करता है, और यज्ञमान की जो भावना है, यज्ञमान की भावना में, एक प्रकार के परमाणु, स्वाहा के साथ में उत्पन्न होते रहते हैं, वह जो परमाणु हैं, जो प्राण के द्वारा उत्पन्न होते हैं, जो हमने अन्न इत्यादि वनस्पतियां पान की हैं, उनके तो परमाणु बनेंगे, परन्तु उनमें कितने प्रकार के सूक्ष्म से सूक्ष्म होते चले जाते हैं तो कितना महान यह अनुसन्धान है।

138 मंगल मण्डल में पार्थिव तत्व

अब रही मंगल मण्डल की चर्चाएं, क्योंकि मंगल मण्डल में पार्थिव तत्व प्रधान स्वीकार करते हैं। परन्तु पृथ्वी मण्डल का जो प्राणी है, उनसे उन प्राणियों का कुछ सूक्ष्म है, उनका इतना स्थूल नही है, इसका कारण क्या है? उसका केवल कारण यह है कि पार्थिव तत्व तो प्रधान है परन्तु पार्थिव तत्व प्रधान होने के कारण जल का मिश्रिण सूक्ष्म होता है, जल में मिश्रण सूक्ष्मवाद होना ही इतना नही, परन्तु उसमें अग्नि में प्रतिकृति होती है।जहाँ चित्त मण्डल से इतना कृतियां में वहाँ वायु में पृथ्वी में अग्नि में अधिक प्रचण्डता होगी उस काल में सूर्य प्रकाश देने वाला है।वहाँ सूर्य का प्रकाश इस प्रकार का आता है जिससे मानव का जो स्थूल, जो उसका शरीर है वह पृथ्वी मण्डल से सूक्ष्म होता है क्योंकि हमारे यहाँ कुछ ऐसा माना गया है सोनाम ईश्वत नाम की जो रेखा होती है, जो मंगल मण्डल पृथ्वी के मध्य में होती है और मध्य का उसका जो अप्रोत भाग होता है वह माधुरी लोकों से उसका सम्बन्ध होता है। उस रेखा का जो सम्बन्ध होता है, वह पृथ्वी तीन मण्डलों का समूह प्राप्त होता है। तीन मण्डलों की सीमा होती है।मंगल, ध्रुव और पृथ्वी तीनों की सीमा होती है, तो सीमा होने के कारण पृथ्वी मण्डल का प्राणी जाता है, तो शुक्र का शुक्र में विधोम् नाम की रेखा होती है, उससे उसका समन्वय हो जाता है। तो चारों मण्डलों का एक ध्रुव आस्वात त्रीणि अणवेत धातु नाम का दोनों में मिश्रण रहता है, सब प्रकार की रेखाओं में इनका मिश्रण रहने से, एक दूसरे से वहाँ प्राण की गति सन्नोत होती है, जो विशेष प्राण होता है उसकी गति में जैसे गति शान्त होती है कही मध्यम हो जाती है और कहीं उसमें क्योंकि तीव्रता आ जाती है, इसीलिए क्योंकि एक दूसरे मण्डल से दूसरे मण्डल का मिलान न हो सके क्योंकि उसमें त्राहि माम् त्राहि माम न हो जाए, ऐसा हमारे यहाँ स्वीकार किया गया है।

जब पृथ्वी मण्डल का प्राणी चलता है तो वह यन्त्र को उस आँगन से ले जाना होता है, जहाँ इन लोकों का मिलान होता है, रेखाओं का

एक दूसरे से और एक मार्ग सोम भाग नाम का मार्ग होता है, उस सोम भाग नाम के मार्ग से यन्त्र जब पृथ्वी मण्डल का जाता है, तो मंगल में जाता है, वह मंगल मण्डल में चला जाता है और एक और जो हमारे यहाँ यनति नाम की एक रेखा है, जिसका सम्बन्ध जिसको हम शुक्र मण्डल कहते हैं, शुक्र और मंगल की रेखाओं से दोनो का समन्वय होता है, यदि यन्त्र उस आँगन को चला गया, उस यनति रेखा के साथ साथ चला गया, तो चही यन्त्र शुक्र में जा करके अपना अस्तित्व बना सकता है तो ऐसा हमारे यहाँ कुछ विज्ञानशालाओं विज्ञानवेत्ताओं ने स्वीकार किया।

सोमकेतु नाम का जो वैज्ञानिक है, वह 120 समय पृथ्वी की यात्रा करके मंगल को चला गया है। यहाँ इस पृथ्वी मण्डल पर उनको उड़ान तश्तरियों के नाम से वर्णन किया गया। सोभागिनी, रेभव केतु, स्वाचिनी उनका एक यन्त्र था, जो समुद्र में अर्पित हो गया था। मानव को उसके कुछ अवशेष भी प्राप्त हुए। आज का जो वैज्ञानिक है, आज के मानव ने तो केवल यही निश्चय किया है जहाँ मंगलमय राष्ट्रों का निर्माण है।

परम्परागतों में मुझे स्मरण है जब दुग्ध का पान किया जाता, तो विज्ञान के ऊपर अधिक बल था, विज्ञानशाला ऐसी कैसी कैसी विज्ञानशाला चन्द्रमा में मंगल में और बुध में और शुक्र में जाने वाली विज्ञान शाला जानी यातायात भी होता रहता था। 24.08.1969

139 महाराजा गणेश जी की मंगल यात्रा

एक समय गणेश जी की यह इच्छा हुई कि जैसे मेरा उदर है, जैसे मेरा मुखारबिन्दु है। नासिका के छिद्रों में प्राण गति कर रहा है, इन्हीं से यह प्राण कहाँ तक गति करता है? वायु में गति करने वाला, अन्तरिक्ष में परमाणु था, उस परमाणु को वह एकत्रित करने लगे, बहुत समय हो गए, अपने यान को वे दृष्टिपात करने लगे, कि मैं यह जानना चाहता हूँ, कि कितनी पृथ्वियाँ हैं? और इन पृथ्वियों में किस किस प्रकार के प्राणी रहतें हैं?

एक महाराजा गणेश जी उस काल में ऐसे थे, ऐसे शिक्षित थे, वैज्ञानिक थे, जो यान को लेकर मंगल में गति कर रहे है। एक यान उनके आश्रम में, उनके राष्ट्र में एक यान, उस काल में, मंगल मण्डल का आया। मंगल मण्डल के यान को शुक्रेतु यान कहते थे।

जैसे ही वह यन्त्र पृथ्वी मण्डल पर आया, महाराजा गणेश जी ने, पिता की आज्ञा पाकर के, ऐसे यन्त्र का निर्माण किया, जिससे उस यन्त्र को उन्होंने ग्रहण कर लिया और उसके ऊपर अनुसन्धान किया गया, तो यह प्रतीत हुआ उन्हें, कि मंगल में प्राणी रहता है। मंगल में मानव रहता है। मंगल में वेद की आभा रमण करती है। उन्होंने बहुत काल में, इस प्रकार के यन्त्र को जाना।

140 मंगल, बुध की आकर्षण शक्ति पर यन्त्र

द्वापर के काल में, घटोतकच्छ, श्वेति और बभ्रुभान, इन्होंने किसी काल में अन्तरिक्ष में एक यन्त्र का निर्माण किया था, जहाँ मंगल और बुध दोनों की आकर्षण शक्ति का मिलान होता है, वहाँ उस यन्त्र को उन्होंने स्थिर करने का प्रयास किया। और उसकी छाया समुद्र में प्रवेश करती रहती है और छाया के अन्तर्गत जो यन्त्र आ जाता है, वह यन्त्र भस्माभूत हो जाता है। ऐसा दृष्टिपात आता है।

141 अर्जुन छह माह मंगल मण्डल में

आचार संहिता पवित्र और विज्ञानमयी थी, वे यहाँ की ममता को त्याग करके, हिमालय में महाराजा शिव के द्वारा, उन्होंने यन्त्रों का निर्माण किया और अर्जुन छह माह तक, वह अपने यन्त्र के द्वारा मंगल मण्डल में रहकर के विज्ञान की प्रतिभा को प्राप्त कर की। वहाँ, बब्रीक ने भी उस यन्त्र को लेकर वहाँ जाने का प्रयास किया। महाराजा घटोत्कच्छ चन्द्रमा की यात्रा में चन्द्रमा में गति करते थे, हर छह माह में वह बब्रीक चन्द्रमा चले जाते हैं।, त्रेता का काल इतना विचित्र रहा है। द्वापर का काल इतना विचित्र रहा है। विज्ञान में भी अग्रणीय रहा है। इसी प्रकार पातालपुरी क्या, हिमालय की कृतिका क्या, सब राजाओं के वैज्ञानिक एकत्रित होकर के अपनी एक आचार संहिता बनाते थे, आज का विज्ञानी भी ये विचार रहा है, कि हम एक आचार संहिता बनाएँ। हम एक विज्ञान की आचार संहिता बना करके और मानव आदर्शवादी विज्ञान को बनाएँ। ऐसा विचारते रहते हैं, परन्तु ये जो राष्ट्रवाद है, ये नाना रूढ़ियाँ नहीं होने देतीं। ये दूरी कर देती हैं। नाना प्रकार की रूढ़ियों से मानव को, राष्ट्र को पार होना है। इस संसार को, इस राष्ट्रवाद को, वही ऋषि मुनियों की, यहाँ जैमिनी जैसे महापुरुष, जहाँ, गौतम जैसे महापुरूष, अपने वेदों की लेखनियाँ बद्ध कर रहे है। एक सूत्र पर एक एक पोथी का निर्माण हो रहा है। वेद का एक मन्त्र है, उसी मन्त्र के ऊपर एक पोथी का निर्माण हो रहा है। कहीं कणाद लेखनीबद्ध कर रहे है, कहीं गौतम कर रहे है, कहीं जैमिनी कर रहे है, कहीं व्यास कर रहे है, कहीं नाना ऋषि इत्यादि, अपने में लेखनियाँ बद्ध कर रहे हैं, और वैज्ञानिक अपनी लेखनियों को बद्ध करके विज्ञान के युग में प्रवेश कर रहे हैं। और जब आत्मबल नहीं रहता, यह विचार रहता है राजा के अन्तर्हृदय में, कि तू वहाँ चला जाएगा, तो तेरी मृत्यु हो जाएगी। 27.02.1985

हमारे अन्तर्हृदय में वह सदैव विद्यमान रहते हैं और उसकी भी मनोनीत अनुपम जो क्रियाएँ हैं वह चाहे इस पृथ्वी मण्डल में हों, चाहे मंगल

और बुध और सूर्य मण्डल में क्यों न हों, परन्तु उसका जो क्रियाकलाप चल रहा है, अथवा उसमें जो क्रियाएँ रत्त हो रही हैं वे उस महान मेरे देव की प्रतिभा कहलाती हैं अथवा ये उसकी महानता का दिग्दर्शन हो रहा है, जिस महानता के दिग्दर्शन को ले करके मानव परम्परागतों से ही विचार विनिमय करता रहा है। नाना प्रकार की शालाएँ, नाना प्रकार का विचार मानव के समीप आता रहता है और जितने भी दार्शनिक हुए हैं अथवा विज्ञानवेत्ता हुए हैं वे सर्वत्र देव की प्रतिभा अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान को चिन्तन में लाने का एक विषय बनाते रहते हैं। और उसके ऊपर मनन और चिन्तन होता रहता है। 28.02.1985

142 मंगल मण्डल में महाराजा अर्जुन

त्रेता के काल में मंगल मण्डल में महाराज अर्जुन का वास हुआ था तो मंगल मण्डल से वह ब्रोहत नाम की एक औषध को लाए, और उस औषध में यह विशेषता रही है, कि उसी औषध की एक वृतिका, एक वनस्पति रही है, उसे उन्होंने खरल किया और मृचिका और मौनकृतिका, एक पर्वतों में औषध होती है, उसको खरल बना करके, तपा करके, उसका पिपाद बना करके, शरीर पर मर्दन करने अग्नि में वह स्वतः भ्रमण कर सकता है।अग्नि उस प्राणी को भस्म नही कर सकती है, क्योंकि उसका जो नृत है, वह औषध बड़ा विचित्र माना गया है। तो यह वनस्पति विज्ञान, स्थावर सृष्टि संसार में निहित रहती है। यह पृथ्वी मण्डल का क्या, यह ब्रह्माण्ड का कोई भी मण्डल है, जहां यह औषध विज्ञान न हो, और प्रायः वेद के मर्म को जानने वाले बुद्धिमान न हो। 02.03.1990

143 महाराजा अर्जुन तीन वर्ष तक मंगल

द्वापर का काल जब महाराजा अर्जुन लगभग तीन वर्ष तक मंगल मण्डल में रहे। तो मंगल में रहने का अभिप्राय क्या कि नाना प्रकार के विज्ञान जानने के लिए। इसी प्रकार अपने मानवत्व को विचित्र बनाने के लिए इस महान विज्ञान को जानने के लिए हमें वास्तव में विचित्र बनाना है। उसके पश्चात यह मेधावी क्षेत्र कहलाया जाता है।

144 मंगल मण्डल के वैज्ञानिक

मंगल मण्डल में जाईए। मंगल मण्डल के प्राणियों के जीवन की कितनी धाराएं होंगी, वहाँ का वायुमण्डल, वहां का जो भोजन इत्यादि है, वह तुम्हें पृथ्वी मण्डल जैसा प्राप्त होगा, क्योंकि वहाँ पार्थिव तत्व अधिक माना गया है। वहाँ सुविधाए भी सुन्दर होती हैं, विज्ञान भी परिपक्व होता है, भौतिक विज्ञान यहाँ का पृथ्वी मण्डल से पराकाष्ठा को प्राप्त होता ह, और प्रबल होता है, क्योंकि उन्होंने ऐसी ऐसी धातुओं को अब तक प्राप्त कर लिया है।

वहाँ एक वैज्ञानिक जिसका नाम सोमनानिक नाम का वैज्ञानिक है, जो मंगल मण्डल का है। परन्तु उसका यन्त्र पृथ्वी मण्डल तक की यात्रा करता रहता है जिसको सानभुति यन्त्र कहते है, सोमभावली यन्त्र कहते हैं, वह यन्त्र पृथ्वी मण्डल मेंऔर समुद्रों की यात्रा करता रहता है, उस यन्त्र में इतनी महान शक्ति होती है कि यहाँ पृथ्वी मण्डल का वैज्ञानिक, अब से सौ वर्ष के पश्चात, इतनी सूक्ष्म धातु को नही जान पाएगा, मंगल मण्डल का एक वैज्ञानिक है, जिसका नाम सौनिक है, उस वैज्ञानिक ने यह जाना है, कि यह जो मेरा यन्त्र पृथ्वी मण्डल तक जाने को तत्पर होता है, तो यहाँ मंगल मण्डल का प्राणी, पृथ्वी की परिक्रमा करके, पृथ्वी की सब जानकारी लेकर वापिस चला जाता है, आज तक, एक सौ बीस समय वहाँ का प्राणी, वहाँ से यहाँ आया है और चला गया है।

मंगल का वैज्ञानिक बहुत ही सुन्दर है और महान भी है और उनके द्वारा महानता की प्रतिभा है।

चन्द्र मण्डल का वैज्ञानिक जिसको स्वानिन कहते हैं, वह जो स्वानिन है, वह शानाकृति लोक में, उसका यन्त्र जाता रहता है, जिससे चन्द्रमा की प्रतिभा का मिलान करती रहती है।

आगे पृथ्वी तक आने के लिए उनका जो वायु मण्डल है, उनकी जो अत्यन्त धातु है, वह यहाँ तक तो आने के लिए तत्पर रहती है, क्योंकि शक्तिशाली भी है।

मानव को यह अभिमान न हो जाए कि हम पृथ्वी मण्डल के प्राणी वैज्ञानिक हैं, संसार में जितना भी प्रभु का मण्डल है, जितना भी यह प्रभु का ब्रह्माण्ड है, जहाँ जहाँ प्राणी रहते हैं, उन सभी प्राणियों में इच्छा भी है, द्वेष भी है, वैज्ञानिक भी है, आध्यात्मिकवेता और योगी इत्यादि भी हैं।

145 मंगल मण्डल में महाराजा अर्जुन

महाराजा अर्जुन मंगल मण्डल में तीन वर्ष और तीन मास तक रहे। उन्होंने वहाँ जाकर के मंगल मण्डल के प्राणियों से वार्ता प्रकट की। वार्ता प्रकट करते हुए उन्होंने मंगत केतुक नाम की एक पुस्तक लिखा थी 18.02.1970

146 होलिका की मंगल यात्रा

वह जो होलिका थी, जिसको हमारे यहाँ उनकी भोजाई कहा जाता था, वह कृतिका में रमण करने वाली थी।सदैव विज्ञानशाला में रमण

करने वाली थी, विज्ञान के नाना यन्त्रों में परिणत हो गई थी। ऐसा हमने श्रवण किया है, वह होलिका मंगल की यात्रा करती रहती थी। वह लोक लोकान्तरों की यात्रा में सफलता को प्राप्त हो गई थी। उसी का बालक फिरणी नाम का वैज्ञानिक था। जिसके द्वारा नाना यन्त्रों में वह परिणत रहती थी। उसे भी यह अभिमान था, कि प्रभु कोई वस्तु है ही नहीं, क्योंकि परमाणुवाद में जाने के बाद मानव अपनी वास्तविक चेतना को नष्ट कर देता है, उसमें अभिमान होता है। अपने कर्त्तव्य के ऊपर उसे बड़ा गौरव होता है। प्रकृति का यह स्वभाव होता है, कि जो प्रकृति से निष्ठा करता रहता है, यह प्रकृति उसे अभिमान लाती है, क्रोध लाती है, काम की वासना में परिणत कर देती है और उसे नीचे गिरा देती है। जो प्रकृति से उपराम होकर चलता है, इस चेतना को अपना स्वामी स्वीकार करता है, वह आध्यात्मिक विज्ञान में पारंगता को प्राप्त हो जाता है। प्रकृति के गर्भ से दूर होता हुआ, इस चेतना के गर्भ में चला जाता है, जिसको हमारे यहाँ वसुन्धरा कहा जाता है। वसुन्धरा के गर्भ में जाने के पश्चात उसे वहाँ केवल ब्रह्म ही ब्रह्म, प्रतीत होता है। उसे ब्रह्म ही दृष्टिपात होने लगता है कि प्रकृति का जो कण कण है वह ओ३म् रूपी धागे में पिरोया हुआ है, इसलिए मैं दूसरी चेतना को कैसे स्वीकार कर पाऊंगा, न कोई और चेतना है।

147 मंगल के वैज्ञानिक पृथ्वी पर

हमारे यहाँ दो प्रकार के विचार हैं। एक तो यह है कि वे जो सूर्य की रश्मियां हैं, वे जेठाय नक्षत्र के द्वार से होती हुई, पृथ्वी मण्डल पर आती हैं। कुछ वैज्ञानिक यह कहते हैं परम्परा क्यों, यह नहीं? जेठाय नक्षत्र की रश्मियां तो बहुत ही बलवती हैं।

परन्तु वह नक्षत्र केवल बृहस्पति के आँगन में हो करके, पृथ्वी मण्डल पर आते हैं। परन्तु विचार यह कि वहाँ का वैज्ञानिक अन्वेषण कर रहा है और वहाँ का वैज्ञानिक, विज्ञान के यन्त्रों का निर्माण करके, उनका अन्वेषण, उनकी कृति क्रियात्मक में लाना चाहता है, कि यन्त्र कितना शक्तिशाली है। परन्तु जैसे मंगल का वैज्ञानिक है। मंगल के वैज्ञानिक की चर्चाएं मैंने पुरातन काल में की हैं। वहाँ का वैज्ञानिक इस पृथ्वी मण्डल पर आया, परन्तु यहाँ यन्त्रों को भी दृष्टिपात किया गया। उन यन्त्रों में उनका गुप्तचर विभाग भी यहाँ पृथ्वी मण्डल पर आया। परन्तु वह कुछ समुद्रों की तरंगों में प्रायः वह गुप्तचर अपने आँगन में रमण कर रहे हैं। वे यहाँ के प्राणियों से कुछ मध्यम हैं। परन्तु वे कुछ समय में अनुसन्धान करके चले जाएंगे।

148 मंगल में पार्थिव तत्व की प्रधानता

भगवन मैंने श्रवण किया है कि तुम स्वाति मंगल की यात्रा यानों के द्वारा कर लेते हो। उन्होंने कहा हां, मैंने महर्षि प्रवाहण जी से विज्ञान को जाना है। और विज्ञान की गति के आधार पर मंगल लोक की यात्रा करता हूँ। उन्होंने कहा मंगल में कौन सा तत्त्व प्रधान माना गया है? तो ऋषि ने कहा कि वहाँ पार्थिव तत्व प्रधान है, वहाँ पार्थिव प्राणी रहते हैं, परन्तु वहाँ का विज्ञान, वहाँ की प्रतिभा इस पृथ्वी मण्डल से कई गुना ऊँची मानी गई है।

वाह रे मेरे प्यारे प्रभु! तू कितना वैज्ञानिक है। तेरा विज्ञान कितना नितान्त है, कितना गम्भीर है, मानव तो विचारता ही रहता है, अल्पज्ञता होने के कारण। एक दूसरे लोक का दूसरे लोक से मिलान नहीं हो पाता। पर जब यह प्रलय काल आता है, तो सबसे प्रथम मण्डलों का प्राण और मन एक आभा में परिणत होता हुआ, अपने में रमण करता रहता है।

सुकेता मुनि ने कहा आज तुम्हें यह प्रतीत हो गया होगा कि सब में धर्म समाया रहता है। इसीलिए जैसे मंगल मण्डल की, मैंने यात्रा की है, उस मंगल में भी धर्म है। परन्तु उसमें पार्थिव धर्म है। विचारक धर्म है। इसी प्रकार प्रत्येक लोक लोकान्तरों में यह वाक्य सुनते हैं, कि वहाँ के तत्वों की प्रधानता भिन्न भिन्न रहती है। क्योंकि जिस मण्डल में जो तत्व प्रधान है, उसी तत्व को प्रधानता वाला प्राणी करता है। तो सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक अनन्ता में परिणत रहता है। 28.03.1973

149 मंगल लोक का वैज्ञानिक

यहाँ भौतिक संसार में एक मंगल लोक का वैज्ञानिक है। उसका यान इस पृथ्वी मण्डल पर आता रहता है। यहाँ से चित्र ले जाता है, चला जाता है। कोई यन्त्र यहाँ दृष्टिपात भी किया गया है, परन्तु यह मंगल लोक का वैज्ञानिक है। एक बृहस्पति मण्डल का वैज्ञानिक उड़ान उड़ रहा है, और वह यह चाहता है कि मैं ध्रुव लोक में जाना चाहता हूँ। परन्तु आधुनिक काल का वैज्ञानिक समुद्रों की यात्रा कर रहा है, समुद्रों के गर्भ में यात्रा कर रहा है, इस अन्तरिक्ष के गर्भ में यात्रा कर रहा है, और भी निचले स्थलों में यात्रा कर रहा है, लोक लोकान्तरां में जाना चाहता है और भी यात्रा कर रहा हैं

आज के विज्ञान ने अभी तक यह नहीं जाना है कि कोई ऐसा भी यन्त्र होता है, जैसे सूर्य की किरणें आती हैं, प्राण नाशक किरणों को साथ लाती रहती हैं, उनसे प्राणों की रक्षा कैसे होती हैं? यहाँ प्राण नाशक उनको जानकर के, वह जो किरण है, वह जो एक रेखा है पृथ्वी के मध्य में वह परमाणुओं को शीतल बनाती है और पृथ्वी पर आती है, वह प्राणवर्धक कहलाती है।

अनुसन्धान करने से प्रतीत हुआ कि साकल्य आदि ऋषियों से कि एक यन्त्र दृष्टिपात कर रहा हैं, और उस यन्त्र में यह विशेषता है कि मैं

हूँ।ऐसा जो संसार को नष्ट कर सकता हूँ, वह यन्त्र होने से तरंगों को एकत्रित करता रहता है, और यन्त्रों में जब वह प्राणवर्धक तरंगें ओत प्रोत हों जाती हैं।

तो परिणाम यह कि यह रेखा नग्न रह जाती है। औ नग्न रह करके जिस राष्ट्र को नष्ट करना हो वह राष्ट्र परमाणुओं को अपने यन्त्र में धारण कर लेता है औ रेखा नग्न रह जाती है, सूर्य की किरणें अग्नि वाहनी, उसी राष्ट्र को नष्ट कर सकती हैं, जिस राष्ट्र के ऊपरले भाग में उस रेखा के परमाणुओं को अपने में धारण कर लेती है।

150 मंगल में प्राणी

आज का विज्ञान कहता है कि प्रत्यक्षवाद होना चाहिए। आज का विज्ञान यह कहता है कि मंगल में प्राणियों का अभाव हो गया है। परन्तु बहुत पुरातन काल में मैंने कहा था कि इस मंगल में प्राणी हैं और वे प्राणी इस पृथ्वी मण्डल पर आते हैं और प्राणी आ करके जहाँ से चित्र लेकर के वह अपने मंगल मण्डल को प्राप्त हो जाते हैं। इस पृथ्वी मण्डल का जो प्राणी है, उन वैज्ञानिकों को दृष्टिपात भी नहीं कर सका। वह कहीं कहीं समुद्रों की तरंगों में वह भस्म हो गया। मृतक बन गया। परन्तु उसका यान समुद्रों की तरंगों में आभायित हो गया। उसका यन्त्र अवृत हो गया।

परन्तु वहाँ का प्राणी इस पृथ्वी पर आता है। यहाँ का प्राणी अभी गया नहीं, परन्तु अभी तो उसका यान जा रहा है। यान से यह अनुमान अनुमानित हो रहा है। परन्तु अनुमान में कुछ संशय रहती है। जब प्राणी वहाँ प्रवेश करेगा, प्राणी वहाँ पहुंचेगा तो राष्ट्रीयता प्राप्त होगी।

151 मंगल का राष्ट्र

ऐसी राष्ट्रीयता नहीं जैसी आधुनिक वर्तमान काल की राष्ट्रीयता इस पृथ्वी मण्डल पर है। एक दूसरा राष्ट्र एक दूसरे को नष्ट करने के लिए तत्पर विराजमान है। एक राजा अपनी प्रजा को अपने में ग्रहण करने के लिए तत्पर है। इसी प्रकार एक राजा है वह अपनी प्रजा को नहीं चाहता। प्रजा के वैभव को संग्रह करके अपने में आन्नदित होना चाहता है। परन्तु ऐसा राष्ट्र नहीं। वह राष्ट्र ऐसा है जहाँ वैज्ञानिक यन्त्रों की आभा है जहाँ राष्ट्र विज्ञान की तरंगों में प्रजा को सुखद देने वाला है। किसी प्रकार विज्ञान का कुछ दुरुपयोग नहीं हुआ है। 04.09.1979
आधुनिक काल का वैज्ञानिक नाना प्रकार के यन्त्रों में संलग्न है। एक वैज्ञानिक ने यह घोषणा की है कि वह जो पृथ्वी के अंतर्गत जो एक रेखा है शोमभानुक कृतिक नाम की रेखा है। उस रेखा के प्राण वायु को यदि हम अपने में धारण कर लेते हैं यन्त्रों के द्वारा अपने में खींच लेते हैं, तो सूर्य की किरण नग्न हो करके आएगी। वह राष्ट्र का राष्ट्र भस्म हो जाएगा। आधुनिक काल का वैज्ञानिक इस विज्ञान में लगा हुआ है।

आधुनिक काल का प्राणी लोक लोकान्तरों की घोषणा कर रहा है। उड़ान उड़ रहा है। परन्तु जब प्राचीन काल के विज्ञान को दृष्टि पात करते हैं, तो ऐसा दृष्टिपात होता है कि विज्ञान का अभी जन्म भी नहीं हुआ है। इस विज्ञान का, भौतिकवाद के विज्ञान का अभी जन्म भी नहीं हुआ है।

152 मंगल और बृहस्पति के वैज्ञानिक

एक समय बृहस्पति के कुछ वैज्ञानिकों ने और मंगल के कुछ वैज्ञानिकों में जिनमें एक वैज्ञानिक का नाम सुनीतिकेतु था, सुनीतकेतु ने एक समय मंगल में अपने यन्त्र का परीक्षण किया। परीक्षण करने से मंगल में कुछ गढेले हो गए। जब गढेले हो गए और विष राष्ट्र में, मण्डल में प्रवाहित होने लगा, तो उस समय ऐसा कहा जाता है वैज्ञानिकों ने अन्तरिक्ष में एक यान का प्रादुर्भाव किया और वह जब यान गति करने लगा, मंगल का यान पृथ्वी से मिलान करता हुआ, वह बुध से मिलान करता हुआ और वह शुक्र के द्वार पर होता हुआ, उनका वह यन्त्र विभक्त हो गया। तो शुक्र में भी गढेले हो गए। जब गढेले हो गए, उसमें से तीक्ष्ण तरंगें उत्पन्न होने लगीं। तो जब वह गोलाकार वाले मण्डल में गति करने लगे, सूर्य की किरणें उन गढेले की पूर्ति कर देती हैं। वह पूर्ति हो गई। 04.09.1979

153 मंगल का वैज्ञानिक उर्ध्वागति वाला

भारद्वाज मुनि के यहाँ से एक यान उड़ान उड़ता है और वह मंगल पर जा करके आक्रमण करता है, क्योंकि मंगल का वैज्ञानिक पूर्वकाल से एक महान् बना हुआ है। आज भी जो वर्तमान का काल चल रहा है उस काल में भी मंगल का वैज्ञानिक ऊर्ध्वा में गति कर रहा है। नाना प्रकार के यान इस पृथ्वी मण्डल पर आ रहे हैं। नाना प्रकार के यान मंगल से आ रहे हैं, नाना प्रकार के यान बुध में आ रहे हैं, नाना प्रकार के यान गति करते हुए शुक्र लोक में आ रहे हैं।

तो नाना प्रकार के लोकों में उसके यान भ्रमण करते हैं। कहीं मानव को ले जाता हैं, कहीं मानव को उसका चित्र ले करके उसको त्याग देते हैं। कहीं उनका यान वृत्तियों में अपने में विकृति के रूप में विकृत हो जाता है। प्राणीमात्र को नष्ट कर देती है।

कुछ ही समय हुआ है मंगल के वैज्ञानिकों ने बुध मण्डल पर आक्रमण किया और आक्रमण करके वह अग्नि विस्फोट विकृतियों के रूप

में उसका जीवन अस्वस्थ हो गया और जीवन के अस्वस्थ होने पर वही मंगल अपने में कृतिरूप बन गया है। 20.09.1985

154 जय विजय मंगल में

महात्मा कपिल मुनि महाराज के यहां आध्यात्मिक और भौतिकवाद दोनों एक रूप में लाने के लिए सदैव तत्पर रहे है। जय और विजय दोनों अपने यंत्रों में विराजमान हो करके, मंगल में पहुंचे और मंगल में एक समय ऐसा कौतुक हुआ, कि जय और विजय के समीप, दोनों के यहां जब वह कृतियों में रत होने लगे, तो यन्त्र को त्याग करके, वहां से गमन किया। मंगल के वैज्ञानिकों ने जब मंगल को अंकित करने लगे, तो वह बड़ी आयु वाला था, वह वायु का भण्डार शिरोधार्य, वह अपने पृथ्वी मण्डल पर आ गए और उनका यान वही अदृश्य हो गया, ऐसे ऐसे यन्त्र प्रायः निर्माणत होते रहे है, मंगल में जाना, मंगल से चले आना, जय और विजय ने, लोक लोकातंरों का भ्रमण भी क्रिया, जय और विजय अपने में बड़े अद्वितीय थे, बड़े महानता का कृत करते रहते थे।

155 मंगल में पार्थिव तत्व

भगवन! यह जो याग का क्रियाकलाप है, क्या वह लोक लोकान्तरों में होता या पृथ्वी मण्डल में ही होता है। वेद का मन्त्र उदगीत गाते हुए ऋषि ने कहा हे भगवन! यह पृथ्वी मण्डल है, यहाँ गुरुत्व प्रधान रहता है यहाँ पार्थिव तत्व प्रधान रहता है। इसी प्रकार हमारे यहाँ कही जल प्रधान है, तो कही अग्नि प्रधान है, जैसे सूर्य मण्डल, उसमें अग्नि प्रधान है और अग्नि के विशेषज्ञ, अग्निमय प्राणी कहलाते हैं, इस प्रकार का धातु पिपाद, प्रभु के राष्ट्र में है, जो अग्नि उसे नष्ट नहीं कर सकती, ऐसे तरंगो के परमाणुओं को एकत्रित करके उसका लेपन किया जाता है। 15.04.1989

156 महाराजा अर्जुन का मंगल प्रवास

विज्ञान अपने में बड़ा अनूठा माना गया है। महाराज अर्जुन एक वर्ष का अभ्यास करने से, यन्त्रों का निर्माण किया गया और यन्त्रों में इन्द्र की सहायता से, यन्त्र का निर्माण हुआ और वह उसी यन्त्र में विद्यमान हो करके लगभग तीन वर्ष तक, उन्होंने मंगल में भ्रमण किया और मंगल के वैज्ञानिकों से, उन्होंने शिक्षा का अध्ययन किया और अध्ययन करने से हमारे यहां जो इन तीन प्रकार के परमाणुओं को जानता रहता है, जिनके नाना प्रकार माने गए हैं, वह लोक लोकान्तरों का यात्री बनता है, और यात्री बन करके वहाँ के विज्ञान की, वहाँ के वायुमण्डल को जानने के लिए तत्पर होता है, क्योंकि मंगल का जो वायु मण्डल है, वह प्रायः ऐसा ही वायुमण्डल, जैसा पृथ्वी मण्डल का वायुमण्डल है। परन्तु उसमें सूक्ष्म सा भेदन माना गया है, वहाँ का वैज्ञानिक, जब पृथ्वी पर आता है, तो हमारे वैज्ञानिकों से वार्ता प्रगट कर सकता है। परन्तु यहां का वैज्ञानिक उनके वैज्ञानिकों से वार्ता करने में असमर्थ रहता है उसक विज्ञान बहुत ऊर्ध्वा में गमन करता है, तो विचार केवल यह कि हमारे यहां विशेष प्रकार के परमाणुओं से मानव नाना प्रकार की उड़ाने उड़ता रहता है।

157 मंगल में भी पृथ्वी सदृश प्राणी

एक समय व्रेतकेतु ने मंगल के कई लोको में भ्रमण किया और जब वे इस पृथ्वी मण्डल पर आए, तो वे गाड़ीवान रेवक के समीप जा पहुँचे, गाड़ीवान उनके गुरू थे, गाड़ीवान रेवक ने कहा कहो ऋषिवर! आप मंगल से आए हैं। तो वायु मण्डल की आभा प्रकट करो?तो ऋषि कहता है कि मंगल मण्डल में याग होता है। अहिंसा में रमण करनो वाला प्राणी है। वहाँ अहिंसा की आभा मानवीय क्षेत्र में रमण करती रही है। एक मण्डल नहीं, नाना मण्डलों की विवेचना आती रहती है। जहाँ लोक लोकान्तरों में कर्म काण्ड का प्रसंग आता रहता है, वहाँ इस पृथ्वी मण्डल पर समाज मानव सर्वांग कहलाता है। जैसे नाना प्राणी ओर भी रमण करते रहते है। तो मानव योनि एक ऐसी योनि है, जो सर्वांग है।इन प्रवृत्तियों का वर्णन, वैदिक साहित्य में प्राप्त होता रहता है। वैदिक साहित्य में जीवन में दसों इन्द्रियों का वर्णन होता रहा है। तो यह सर्वांग जो प्राणी है। ये नाना प्रकार की उड़ान उड़ता रहता है। चाहे पृथ्वी मण्डल पर हो, चाहे वह मंगल में रहता हो, चाहे वो बुध में रहता हो, किसी भी लोक का प्राणी हो, परन्तु वह सर्वांग है। इसीलिए अहिंसा परमो धर्म को जानता है। यह इसके गर्भ में ओत प्रोत होता रहा है। तो जब रेवक मुनि ने उनसे कहा कि हे पुत्र! तुम मंगल में पहुँचे, तुमसे कुछ वार्त्ता हुई? तो वेद का ऋषि कहता है, कि वहाँ भी प्राणी, हमारे इस पृथ्वी मण्डल, जैसे ही प्राणी गमन करते है। परन्तु वहाँ यागशालाएँ भी हैं, पूजाएँ भी होती रहती है। विज्ञान यहाँ से सहस्त्रों वर्ष अग्रणी विज्ञान माना गया है।

यही महाभारत के काल में महाराजा अर्जुन ने भी प्रकट कराया था। तो मैं लोक लोकान्तरों में चला गया हूँ। मैं इनमें जाने के लिये तो नहीं आया था। वेद का ऋषि कहता है। हे प्राणी! तू नाना लोकों में, सूर्य मण्डल और शनि में भी गति कर सकता है। 21.11.1981

आधुनिक काल का वैज्ञानिक मंगल और चन्द्रमा तक पहुँचा है। मंगल और चन्द्रमा की परिक्रमा कर रहा है। मुझे दधीचि और अश्वनि कुमार जैसे वैज्ञानिक और वैद्यराज भी थे, वे वाहनों में विद्यमान हो करके, शनि की परिक्रमा कर रहे थे, । कितना विशाल विज्ञान इस मानव के मस्तिष्कों में नृत करता रहा है।

हे ममत्व को धारण करने वाली! तेरा पुत्र तेरी गाथा गा रहा है। गाथा गाता ही रहता है। जैसे पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। लोकों से अग्नि की तरंगें आ करके, धातुओं का निर्माण कर रही है। निर्माण होता रहता है। और इससे राष्ट्रीयता का निर्माण होता है। यदि पृथ्वी के गर्भ में, वसुन्धरा के गर्भ में, खनिज, खाद्य नहीं होंगा तो यहाँ राष्ट्र का निर्माण भी नहीं हो सकता, इस सम्पदा के ऊपर ही राष्ट्र का निर्माण होता है और यह सम्पदा आती कहाँ से, सूर्य से, सूर्य की किरणों से, सम्पदा वसुन्धरा के गर्भ में कहाँ से आती है? लोक लोकान्तरों से आती है। क्योंकि ये ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। 21.11.1981

158 मंगल मण्डल में आचार्य मृचिका

उन्होंने कहा हे भगवन! आप इस प्रकार की जिज्ञासा, अपने हृदय में क्यों कर रहे हैं, ऐसी द्वेष भावना को क्यों अपने में लाना चाहते हैं, यदि इसके हृदय में यह समाहित हो गया, कि इन्द्र का मेरा संग्राम होगा, तो तुम्हें विजय कर लेगा, उसके पश्चात भी त्रिपुरी को ले सकता है, आप ऐसी भावना बनाते ही क्यों हैं, तो इसके हृदय में यह समाहित रहा।

मेघनाथ जी ने इस विद्या का अध्ययन कर, चमत्कार दिखाते हुए, विद्या को उन्होंनें दृष्टिपात कराते हुए, उन्होंने कहा अच्छा, मातेश्वरी! अब मुझे आज्ञा दीजिए, अब मैं अपनी लंकेश में जाना चाहता हूँ। उन्होंने कहा धन्य हैं, हे ब्रह्मचरिष्यामि! तुम तो ब्रह्म की चरी को जानने वाले हो, जो प्राणों की प्रतिक्रिया को जानता हैं, जो प्राणों के स्वरूप को जानता है, वह वास्तव में, ब्रह्मचरिष्यामि कहलाता हैं। उन्होंने एक वाक् ओर कहा कि क्या तुम विशेष प्राण को, सामान्य प्राण से मिलान कराना जानते हो?उन्होंने नतमस्तिष्क हो करके कहा कि यह मैं नही जानता, यह मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जानते हैं। मैं इसको नही जानता हूँ, मैं जिज्ञासा तो कर रहा हूँ, कि मैं उस प्राण को और जानूं, जिससे मेरा सामान्य प्राण, विशेष प्राण से समन्वय हो जाए। तो मैं इस ब्रह्माण्ड में, यह जितना प्रभु का ब्रह्माण्ड है, जो लोक लोकान्तर है, जो एक ब्रह्म सूत्र में पिरोया हुआ जगत है, उसको मैं दृष्टिपात करूं, मैं अभी तक दृष्टिपात नही कर सका हूँ। यह उन्होंने अपने वाक्यों का स्पष्टीकरण किया और स्पष्टीकरण करके उन्होंने कहा धन्य है तुम बड़े स्पष्टवादी हो क्योंकि ब्रह्मचारी तो वास्तव में सत्यवादी होता है उन दोनों ने कहा तुम अस्त्रों में कोन से अस्त्रों शस्त्रों को जानते हो।

उन्होंने कहा मातेश्वरी! मैं ब्रह्मास्त्र को जानता हूँ, मैं नागफांश यन्त्रों को जानता हूँ, मैं वामास्त्रों को जानता हूँ, अन्य अस्त्रों शस्त्रों में मेरी प्रायः बड़ी गति रही है, क्योंकि दो वर्ष तक, मैंने मंगल मण्डल में, एक मृचिका नामक आचार्य को अपना गुरु बनाया, उससे मैंने इस विद्या का अध्ययन किया है और मैं नाना प्रकार की विद्याओं को ले करके, मैं इस मृत मण्डल में, अपने पृथ्वी मण्डल पर आ गया हूँ।

159 मंगल यात्री महाराजा अर्जुन

द्वापर के काल में महाराजा अर्जुन ने यह विद्या, महाराजा शिव से प्राप्त की थी, हिमालय में जा करके और वह अस्त्रों शस्त्रों को प्राप्त करने के लिए, अध्ययन करने के लिए, वह मंगल मण्डल में पंहुचे, क्योंकि मंगल मण्डल का जो विज्ञान है, वह इस पृथ्वी मण्डल के विज्ञान से सौ वर्षों तक आगे रमण करता रहता हैं, केवल, यह सब अनुशासित रहने वाले हैं, कि मंगल मण्डल है, बृहस्पति हैं, कोई भी लोक लोकान्तरों हो परन्तु अपने प्रभु के अनुशासन में रमण करते हैं, इसी प्रकार मानव को भी अपने में अनुशासित रहना चाहिए और जब अनुशासन रहता है, तो प्रत्येक इन्द्रियों पर अनुशासन करता है, और इन्द्रियों पर जो अनुशासन करना जानत, है वह जनक कहलाता है। इसीलिए राजा को जनक बनना चाहिए, जनक उसे कहते हैं, जो ममता मोह में मोह से दूर होता है, अथवा जो ज्ञान में अग्रणी होता हैं, और वह राष्ट्र का पालन भी कर रहा हैं, परन्तु वह उदासीन भी रहता है, इसलिए उन्हें जनक कहते हैं।

160 मंगल में ओषध विज्ञान

जब इस प्रकार का विवेक मानव को हो जाता है, औषधियों के सम्बन्ध में, अपने गुणों का वर्णन करने के लिए औषध उन्हें स्वपनवत में, उनके गुणों की प्रतिभा का भान कराती रहती है, और वह औषध अपने गुणों का वर्णन कराती रहती है, सोमकेतु मुनि महाराज जब एक समय इसका अनुसन्धान अन्वेषण कर रहे थे, तो वाचकस्ति एक औषध होती है, उसका जब अन्वेषण करने लगे, तो एक समय रात्रि समय यह उन्होंने स्वपनवत में कहा वाचकेतु औषधा सम्भूति में प्रवेश करती हुई, मैं मानव के जीवनता से वातों में प्रदान कर देती हूँ और, यदि उसका भा वाचो अग्नि में तपा करके पुट लगा करके, यह पान कराया जाए तो ऐसे औषध विज्ञान अपने गुणों का प्रायः वर्णन करती रहती थी।

तो परमपिता परमात्मा के ब्रह्माण्ड में यह अनन्तमयी जगत है, इसीलिए परमपिता परमात्मा का उदघोष हमारे जीवन में होना चाहिए, क्योंकि परमपिता परमात्मा इस संसार के एक एक कण कण में व्याप्त है, औषध विज्ञान में भी व्यापक हो रहे हैं, उसके व्यापकता में एक अभ्युदय होता रहता है, जिसको मानव अपने में पान करता रहता है, और उस ब्रह्माण्ड को मापता रहता है, ब्रह्माण्ड को मापते मापते औषध कहीं, ऐसा हमें भान होता है कि प्रायः लोक लोकान्तरों में भी प्रायः औषध विज्ञान का चलन रहा, है क्योंकि मंगल मण्डल में इस

प्रकार की औषधियों का भी प्रायः चलन रहा है, और बुध में भी रहा है, लोक लोकान्तरों की प्रतिभा में जाना नही चाहता हूँ यह औषध विज्ञान हमारे यहाँ एक बड़ा विशेष विशिष्टतव माना गया है।

आज हमारे यहाँ कुछ औषधियों का एक एकोकीकरण माना गया है जिन औषधियों का एकोकीकरण हमारे औषध विज्ञान में सूर्य की किरणों की पुटों में, उनकी पुटिता होती रहती है और उनका पठन पाठन भी विचित्र होता रहता है।

तो उस विज्ञान को हमें अपनाना है, यह विज्ञान है। यह सार्थक विज्ञान इसको पान करते हुए हम, हूत करते हैं, उसकी सुगन्ध तरंगें बन करके, वायु मण्डल में प्रवेश कर जाती है और वायुमण्डल से वही तरंगें, सूर्य चन्द्रमा की कान्ति के साथ, वही तरंगें परमाणु बन करके पुनः, एकोकीकरण का भोग करते रहते हैं।

तो ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने भी इसके ऊपर अंगिरस मुनि महाराज ने भी इसके ऊपर बहुत सा अन्वेषण किया है मानव का कर्तव्य है, क्योंकि आयु को दीर्घ बनाना है, आयु के वेद में प्रवेश करना है, प्रकाश में हमें रत्त रहना हैं, हम तो प्रायः पुरातन काल में पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा इस प्रकार का अन्वेषण करते रहते थे, आयु की दीर्घता में परिणत होती रहती थी, परन्तु जो सिद्ध आत्माए इस प्रकार की औषधियों का पान करके अपने में यौगिक प्रतिक्रियाओं में उनका भास होता रहा हैं, हम बहुत से औषध विज्ञान मे रत्त हो जाए।

तप किसे कहते हैं?और हम पूजा वृति, जब पूजा वृति बनाते हैं, तो पूजा कहते हैं ?तीव्र प्रवृति का नाम ही पूजा है। तीव्रता में जाना किसी को जानते जानते अन्तिम छोर पर चले जाए, तो वह उसकी पूजा कहलाती है। आपो की पूजा का अभिप्रायः, अग्नि की कोई पूजा करना चाहता है, यह अग्नि तेजोमयी है, जब तेजोमयी में जाते हैं, यही अग्नि भिन्न भिन्न प्रकार के स्वरूपों को धारण करती है।

161 मंगल मण्डल

जब महाराजा अर्जुन इन्द्र के द्वार पर पंहुचे, और इन्द्र के संरक्षणता में तपस्या की, और तपस्या करने के पश्चात, अस्त्र शस्त्रों की विद्या का, उन्होंने शिक्षण किया, और वह शिक्षा को प्राप्त करते रहे। उसके पश्चात वह अपने यन्त्रों को निर्माण करके, मंगल मण्डल में भी प्रायः वे भ्रमण करने के लिए और अपने अस्त्रों शस्त्रों की विद्या पान करने के लिए भी, मंगल में वह पंहुचे।, मंगल मण्डल में उनका वास रहा, क्योंकि मंगल मण्डल का जो प्राणी है, अथवा वहाँ का जो वायुमण्डल है, वह पार्थिव तत्वों से, इसके कुछ समकालीन माना गया है।तो इसी प्रकार जैसे बुध मण्डल का भी और अरूण्धति और वशिष्ठ मण्डल का भी इसी प्रकार वायुमण्डल हमारे यहाँ स्वीकार किया गया है। महाराजा शिव ओर उसके पूर्व काल में गणेश जी और महाराजा हनुमान जी इन दोनों की बड़ी मित्रता, विज्ञान की थी, वह समुद्र के तट पर विद्यमान हो करके अन्वेषण करते रहे।

आत्मा का जो शरीर है। यह गृह, यह मानव का शरीर है, पंच महाभौतिक कहलाता है। इसको संचालन आत्मा करता है। और यह जो पार्थिव तत्वों को ले करके इसमें जल है, अग्नि है, और, इसी में पार्थिकता है, इसी में वायु है, इसी में अन्तरिक्ष है।तो इसका निर्माण उसी प्रकार का है, जैसे शरीर का निर्माण माता के गर्भ में हुआ और माता के गर्भ में, इसी प्रकार निर्माण हुआ, जैसे परमपिता परमात्मा ने इस संसार रूपी ब्रह्माण्ड का निर्माण हुआ, जैसे परमपिता परमात्मा ने इस संसार रूपी ब्रह्माण्ड का निर्माण किया है।

तो एक दूसरे को दृष्टिपात करते हुए, एक दूसरे का निर्माण हो रहा है। तो निर्माणवेत्ता, यह जो गृह का पार्थिवता, जब गृह का स्वामी निर्माण करता है, और गृह स्वामिनी दोनों का अपना एक विचार विनिमय होता हैं, तो हम एक गृह का निर्माण करें तो जब गृह का, निर्माण करते हैं तो उसके लिए द्रव्य एकत्रित करते है, और वह जो द्रव्य है, सबसे प्रथम वह पिण्डाकार के रूप में, गृह को एकत्रित करते है और पिण्डों से बहुत विशाल पिण्ड का निर्माण करता हैं। गृह एक प्रकार का पिण्ड है, और उस पिण्ड में जो हमारे मानव शरीर में गति है या ब्रह्माण्ड में गति है, उसी प्रकार ग्रह में भी गति होती रहती है, जैसे इसमें अन्तरिक्ष भी है, इसी में आपोमयी जल भी है, और इसी में पार्थिव तत्व भी माना गया है। 20.01.1992

बड़ी माधुर्यता के साथ चन्द्रमा के प्राणियों का वर्णन आ रहा था, जेठाय नक्षत्र में रहने वाले प्राणियों का वर्णन आ रहा था, मङ्गल में रहने वाले प्राणियों का वर्णन भी था।

एक सार्वभौम सिद्धान्त प्रगट किया था, कि जहाँ यह पञ्च महाभूत होते हैं, वहाँ प्राणी हुए बिना नही रह सकता। प्रभु की सृष्टि में कोई भी लोक लोकान्तर जहाँ वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी और अन्तरिक्ष पांचों तत्त्व हों, वहाँ प्राणी न हो, यह असंभव है। जहाँ आकाश होगा, वहाँ तो मार्ग भ्रमण करने के लिए होगा और जहाँ वायु होगी, वहाँ श्वांस लेने वाली प्राणी अवश्य होंगें। जहाँ पृथ्वी के अङ्कुर होंगें और जल के अङ्कुर होंगें वहाँ उसी प्रकार के प्राणी होंगें।

162 मंगल यात्री महाराजा अर्जुन

द्वापर काल में महाराजा अर्जुन थे, वे मंगल मण्डल की यात्रा करते समय वैज्ञानिक बन कर के आए। भीम का पुत्र घटोत्कच थे। हमारे यहाँ

शुक्र मण्डल की यात्रा करते थे, जैसा मंगल की यात्रा अर्जुन करते थे, उसी प्रकार शुक्र और चन्द्रमा की यात्रा हमारे यहाँ घटोत्कच्छ इत्यादि किया करते थे। भगवान कृष्ण, शुक्र और धृति लोकों की यात्रा किया करते थे। 17.01.1970

163 पार्थिव मानव का मंगल पर केवल छह माह प्रवास

यन्त्रों के द्वारा, अपनी कृति के द्वारा, पृथ्वी मण्डल के कुछ तत्वों को ले करके, वहाँ छह माह तक जीवित रहने की सम्भावना है, उसके आगे इस पार्थिव तत्त्व के मानव का असम्भव है, रहा यह वाक्य कि सूक्ष्म शरीर वाला कोई आत्मा रहना चाहता है, तो उसके लिए कोई असम्भव नही हैं, उसके लिए कोई भी लोक असम्भव नही है, उसके लिए सूर्य भी असम्भव नही हैं। 23.08.1969

164 मङ्गल मण्डल के वैज्ञानिक

मङ्गल मण्डल में जाईए। मङ्गल मण्डल के प्राणियों के जीवन की कितनी धाराएं होंगी, वहाँ का वायुमण्डल, वहां का जो भोजन इत्यादि है, वह तुम्हें पृथ्वी मण्डल जैसा प्राप्त होगा, क्योंकि वहाँ पार्थिव तत्त्व अधिक माना गया है। वहाँ सुविधाए भी सुन्दर होती हैं, विज्ञान भी परिपक्व होता है। भौतिक विज्ञान यहाँ का पृथ्वी मण्डल से पराकाष्ठा को प्राप्त होता है और प्रबल होता है, क्योंकि उन्होंने ऐसी ऐसी धातुओं को, अब तक प्राप्त कर लिया है, वहाँ एक वैज्ञानिक जिसका नाम सोम नानिक नाम का वैज्ञानिक है, जो मङ्गल मण्डल का है, परन्तु उसका यन्त्र पृथ्वी मण्डल तक की यात्रा करता रहता है, जिसको सानभुति यन्त्र कहते है, सोमभावली यन्त्र कहते हैं, वह यन्त्र पृथ्वी मण्डल में और समुद्रों की यात्रा करता रहता है, उस यन्त्र में इतनी महान शक्ति होती है, कि यहाँ पृथ्वी मण्डल का वैज्ञानिक अब से सौ वर्ष के पश्चात, इतनी सूक्ष्म धातु को नही जाने पाएगा। मङ्गल मण्डल का एक वैज्ञानिक है, जिसका नाम सौनिक है, उस वैज्ञानिक ने यह जाना है कि यह जो मेरा यन्त्र पृथ्वी मण्डल तक जाने को तत्पर होता है, तो यहाँ मङ्गल मण्डल का प्राणी पृथ्वी की परिक्रमा करके, पृथ्वी की सब जानकारी लेकर वापिस चला जाता है, एक सौ बीस समय वहाँ का प्राणी, वहाँ से यहाँ आया है और चला गया है।

वहाँ का वैज्ञानिक बहुत ही सुन्दर है और महान भी है और उनके द्वारा महानता की प्रतिभा है, मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से एक समय प्रार्थना की थी, कि हे प्रभु! लोक लोकान्तरों में क्या होता है, तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने बड़े रूपों में निरूपण किया है। 23.08.1969

165 मंगल मण्डल का जो प्राणी है वह पार्थिव तत्व वाला कहलाता है।

वेदों का ज्ञान विज्ञान उसी चेतना में पिरोया हुआ है। यदि वह सूत्र में नहीं रहेगा तो माला के मनकों का भी अपना कोई अस्तित्व नहीं रहेगा। आज हमें उस वेदी पर जाना है, जिस वेदी पर जाने के पश्चात हमारे जीवन में एक महानता का दिव्यदर्शन होता है।

आज का मानव तो चन्द्रमा पर विश्राम कर रहा है। वहाँ उपग्रह जा रहे हैं, यान जा रहे हैं और आप केवल आत्मा और परमात्मा और मानवता की चर्चा प्रकट करते रहते हैं। 23.08.1971

166 मंगल मण्डल

मंगल मण्डल का जो प्राणी है अथवा वहाँ का जो वायुमण्डल है, वह पार्थिव तत्त्वों से इसके कुछ समकालीन माना गया है, तो इसी प्रकार जैसे बुध मण्डल का भी और अरूण्धती ओर, वशिष्ठ मण्डल का भी इसी प्रकार का वायुमण्डल हमारे यहाँ स्वीकार किया गया है। 20.01.1992

167 मङ्गल मण्डल में आध्यात्मिक विज्ञान

मंगल ग्रह में निवास करने वालों का इसी प्रकार का योगाभ्यास, इसी प्रकार का विज्ञान तथा इसी प्रकार का राष्ट्र माना जाता है । मंगल ग्रह पर " ऋद्धिकेतु " नाम का आध्यात्म वेत्ता है जिसकी आध्यात्मिक विज्ञान में बहुत प्रगति है । उसकी आत्मा की गति विशाल है । उसकी आत्मा इस पृथ्वी मण्डल पर रमण करके वापस चली जाती है।

168 अरूण्धती मण्डल, वशिष्ठ मण्डल

उन्होंने कहा हे प्रभु! मंगल से ऊर्ध्वा गति में गति करने वाला, जो अरुन्धती मण्डल और वशिष्ठ मण्डल कहलाता है उसमें कौन सा तत्त्व प्रधान कहलाया जाता? उन्होंने कहा उसमें तरलत्व कहलाता है। तरलत्व ही प्राणी रहते है, वहाँ जलाशयों की प्रधानता मानी गई है। अरुन्धती मण्डल और वशिष्ठ दोनों मण्डलों में यह विशेषता कहलाती है। परन्तु महर्षि याज्ञवक्ल्य मुनि महाराज ने यह कहा हे ब्रह्मचारियों! तुम अपनी चर्चा करो, तुम विज्ञान के वांगमय में जाने का प्रयास न करो। जब विज्ञानवेत्ता आएंगे, कुम्भकरण जी आएंगे। 28.07.1982

169 अरूण्धती मण्डल

मैं जब वशिष्ठ मुनि महाराज के चरणों में विद्यमान रहती तो मुझे यह सौभाग्य प्राप्त होता रहा है, कि मैं, अरूण्धति मण्डल के ऊपर मेरा अध्ययन रहा हैं, इसीलिए मेरा नामोकरण भी अरूण्धति कहलाता है, मेरा अरूण्धति जो मण्डल है, वह वशिष्ठ मण्डल और अरूण्धति मण्डल साथ साथ गमन करते रहते हैं और दोनों के ऊपर मैंने अध्ययन किया गया है, अरूण्धति मण्डल की धाराएं आती रहती हैं, और

वे धाराएं इस पृथ्वी मण्डल पर आती हैं, और पृथ्वी मण्डल पर जा करके, वे पृथ्वी के गर्भ में, वह स्वर्ण के जो परमाणु गमन कर रहे है, उससे उसकी छाया जब अवृति होती है, तो उमसें एक अवृतियों को धाराओं को प्रदान किया जाता है।तो यह अरूण्धति मण्डल जब इसकी छाया चन्द्र मण्डल पर जाती है, तो चन्द्रमा की कान्ति पर, स्वर्ण सहित धाराओं का जन्म हो जाता हैं।जब अरूण्धति मण्डल की जो कान्तियां हैं, यही कान्तियां जब मंगल पर जाती है, तो वहाँ विज्ञान के परमाणुओं की, उपलब्धि करता रहता है, यह अरूण्धति मण्डल इतना विशाल है, जब माता के गर्भस्थल में अरूण्धति की छाया जाती हैं, तो वह बुद्धि की स्थापना कर देती है, बाल्य को बुद्धि आती है, क्योंकि बालक के लघु मस्तिष्क में, एक वृतिका अरूणकेतु नाम की नाड़ी होती है, उस नाड़ी का समन्वय अरूण्धति मण्डल में जो धाराएं होती है, उससे उसका समन्वय हो जाता है, तो विशेष बुद्धि उसे प्राप्त हो जाती है। 29.09.1990

170 अरुण्धती मण्डल और वशिष्ठ

उन्होंने कहा कि उसमें तरलतव कहलाता है। तरलतव ही प्राणी रहते है, वहाँ जलाशयों की प्रधानता मानी गई है। अरुण्धती मण्डल और वशिष्ठ दोनों मण्डलों में यह विशेषता कहलाती है।

महर्षि याज्ञवक्ल्य मुनि महाराज ने यह कहा-हे ब्रह्मचारियों! तुम अपनी चर्चा करो, तुम विज्ञान के वांगमय में जाने का प्रयास न करो। जब विज्ञानवेत्ता आएंगे, कुम्भकरण जी आएंगे तो मैं उनसे स्वतः वार्त्ता प्रगट कर सकता हूँ। उनके प्रश्नों में तुम अपने में क्यों इन प्रश्नों की युक्तियाँ बना रहे हो। 28.07.1982

171 अरुण्धती मण्डल में प्राणी

भगवान राम ने कहा कि अरून्धती कौन है? अरून्धती माता हैं। क्योंकि माता का नाम भी अरून्धती था, उन्होंने कहा कि हे प्रभो! हे राम! यह जो अरून्धती है यह एक मण्डल कहलाता है। यह मण्डल सूर्यमण्डल से निचले भाग में रहता है। इसी के आसन पर वशिष्ठ मण्डल रहता है, वह भी अपनी आभा में गति करता रहता है। तो भगवान राम ने पुनः कहा कि हे माता! यह अरून्धती मण्डल क्या है? तो अरून्धती ने कहा कि यह जो मण्डल है, यह लोक है इसमें प्राणी अपना वास करते हैं, इसमें विज्ञान की भिन्न-भिन्न प्रकार की तरंगें निहित रहती हैं। विज्ञानवेत्ताओं ने इसके ऊपर अपना बहुत अन्वेषण और चिन्तन प्रारम्भ किया है। 29.10.1985

172 अरुण्धती मण्डल का प्रभाव

माता अरून्धती से पुनः राम ने कहा कि माता! यह अरून्धतीमण्डल क्या हैं? उन्होंने कहा कि हे राम! यह अरून्धती मण्डल मानव जीवन का साथी हैं, जब माता के गर्भस्थल में शिशु विद्यमान होता है। तो छठे माह का जब गर्भाशय हो जाता है, सप्तम् प्रारम्भ होता है और सप्तम् का भी जब समापन होता है, तो अष्ठम् का प्रारम्भ होता है तो अरून्धती मण्डल की छाया आती है और अरून्धती मण्डल की छाया आ करके, वहाँ जो बालक, जो माता कुशल होती हैं उसको मेधावी प्रदान करती हैं। वही तरंगें तरंगित होती रहती हैं।

माता अरून्धती के इन शब्दों को पान करके राम ने कहा कि माता! यह जीवन कैसे प्रदान करती रहती है? उन्होंने कहा कि अरून्धती की छाया सूर्य की किरणों से समन्वय करती है, उन किरणों से मिलान हो करके चन्द्रमा की कान्ति में प्रवेश कर जाती है और चन्द्रमा की कान्ति का समन्वय माता की रसना के निचले विभाग में पुरातत्व नाम की नाड़ी से होकर लोरियों से समन्वय हो करके उसकी छाया उसमें प्रवेश हो जाती है। 29.10.1985

173 अग्नि का प्रतिनिधित्व सूर्य

परन्तु यह जो सूर्य है, यह सूर्य, चाहे नाना सूर्य हों, परन्तु ये अग्नि के स्वरूप का प्रतिनिधित्व करते हैं, इसीलिए ये दूसरों की छाया नहीं बन पाते हैं। यदि ये दूसरे की छाया बन जाएं तो, इसकी छाया तो नाना मण्डल बन सकते हैं। जब तक चन्द्रमा और पृथ्वी के मध्य और राहू और केतु के मध्य जब छाया या प्रतिनिधित्व होता है, तो पृथ्वी में एक ऐसी उष्ण शक्ति उत्पन्न हो जाती है, जिसके उत्पन्न होने से जितना प्राणी-मात्र विषैला है, वह बाह्य वायुमण्डल में आ जाता है। 18.02.1980

174 सूर्य की विभिन्न किरणें

महर्षि कण्व ने, एक यन्त्र जो उनके समीप रहता था। उस यन्त्र की ऊर्ज्वा वह सूर्य से लेते थे और कभी किसी-किसी काल में वह चन्द्रमा से ऊर्ज्वा लेते थे। तो उन्होंने यंत्रों से ऊर्ज्वा ली और दोनों ब्रह्मचारियों को दिग्दर्शन कराया कि यह सूर्य की ऊर्ज्वा है। इस सूर्य की ऊर्ज्वा में यह मेरा यन्त्र गति कर सकता है। तो सूर्य की जो नाना प्रकार की किरणें हैं, उन किरणों में एक किरण का नाम ऊषा है, द्वितीय का नाम कान्ति है। तो कान्ति और ऊषा दोनों का मिलान करके एक सूर्य की मृगी नामक एक तरंग, किरण कहलाती है उसके ऊपर यंत्रों में उन्होंने यंत्रित कर दिया और जब यंत्रित कर दिया, तो सूर्य की किरण के साथ वह यन्त्र गति करने लगा। जब गति करने लगा तो गति करता हुआ,

जिस भी लोक से, उस किरण का समन्वय होता था, उसी लोक के चित्रों को लाकर के ऋषि के आश्रम में प्रवेश करने लगा। 05.02.1985

175 लोकों की स्थिति अरबों खरबों सूर्य

यह आठ वसु हैं जहाँ बसने वाले प्राणी रहते हैं। ब्रह्मचारी कवन्धि और भारद्वाज मुनि महाराज का, जब दोनों का संवाद हुआ, ब्रह्मचारी कवन्धि को, भारद्वाज मुनि ने यही निर्णय कराया है, कि जितने भी लोक लोकान्तर हैं, आकाशगगाएं है, मेरी विज्ञानशाला में, यह जो यन्त्र विद्यमान हैं, एक यन्त्र के द्वारा तीन सौ बहत्तर आकाश गगाएं मुझे दृष्टिपात आती हैं और इन आकाश गंगाओं का जितना विस्तार है।यह वर्णन करते हुए, भारद्वाज मुनि ने कहा मेरी जो आकाशगंगा है एक समय जब ब्रह्मचारिणी सबरी और ब्रह्मचारी सुकेता एक ही आकाश मण्डल के सूर्यों की गणना करने लगे, तो उनको अरबों खरबों एक ही आकाश गंगा में सूर्य दृष्टिपात आने लगे। एक ही आकाश गंगा में जब अरबों खरबों सूर्यों की गणना कर ली तो उन्होंने कहा एक आकाश गंगा में जहाँ इतने सूर्य हैं ऐसी तीन सौ बहत्तर आकाशगंगाएं मेरी विज्ञानशाला में दृष्टिपात आती हैं, विचार आया कि इसमें आठ वसु हैं और आठों से आकाश गंगा को विभक्त कर दिया है।ये आकाशगंगाएं कहलाती है। आकाशगंगा में वर्णन नहीं किया जा सकता, कितने अणु, चन्द्रमा कहलाते हैं।

176 सूर्य मण्डल में आत्मा

वास्तव में तो दिव्य आत्माओं के लिए कोई लोक ऐसा नहीं रहता, जिस लोक में वह न जा सके। परन्तु उसके पश्चात भी साधारण वाक्य यह कि सूर्य मण्डल में विचारों का यज्ञ होता है, विचारक यज्ञ होता है, विचार के साथ साथ अंतर्ध्यान हो जाते हैं। क्योंकि वह आत्मा सूर्य मण्डल में जाती हैं, जो इस पृथ्वी मण्डल पर कुछ तपी हुई आत्मा होती है, इनका सूर्य मण्डल में प्रवेश होता है। पार्थिक तत्व से उनका विशेष सम्बन्ध नहीं होता। उनका अन्तःकरण अग्नि से तपा हुआ होता है, उसमें अग्नि तत्व वाले शरीरों की प्रधानता प्राप्त हो जाती है। इसी प्रकार जैसे मंगल का मण्डल है, उसका प्राणी इसी प्रकार का योगाभ्यास, इसी प्रकार का विज्ञान, इसी प्रकार का राष्ट्र, प्रायः वहाँ माना जाता है। चन्द्र मण्डल सौम प्रकृति वाला प्राणी, अधिक रहता है। वहाँ सौम विचार होता है। वहाँ भी योग प्रभा कृत्त होता रहता है, उसमें भी ब्रह्मरन्द्रों में नृत्य की प्रतिभा होती है। 13.04.1971

177 सूर्य विद्या पर पोथियाँ

मुझे वह समय स्मरण है जब यहाँ इतनी सुन्दर सुन्दर पोथियाँ थी, जो सूर्य विद्या पर नाना प्रकार की पोथियाँ विराजमान थी। महाराज भीम ने एक पोथी का निर्माण किया था, महर्षि व्यास मुनि की सहायता से, सोमभुनि ऋषि की सहायता से, जैमिनी मुनि की सहायता से। जिसमें लगभग दो हजार पृष्ठ थे। जो सूर्य विज्ञान के ऊपर ही एक पोथी विराजमान थी। वह पोथी कहाँ गई? वह अग्नि के मुखारविन्द में परिणत हो गई। मैंने उस स्थान का वर्णन किया था, जिस स्थान में, पाण्डवों ने आ करके जहाँ उनका यज्ञ चलता था। जब वन उन्हें प्राप्त हुआ था। 16.10.1971

हमारे यहाँ यह जो विज्ञान है, एक प्रकार का वन है, जिसमें जाने के पश्चात, मानव को वास्तव में कोई मार्ग प्राप्त नहीं होता। कोई समय था जिसके सम्बन्ध में बहुत कुछ विचार विनिमय होता रहा है। उत्तर प्रश्नावली में भी बहुत कुछ इस सम्बन्ध में टिप्पणियाँ भी करते रहे हैं। 17.10.1971

178 आकाश गंगा में अनन्त सूर्य

एक ऐसे ऋषि सोमकेतु हुए, जो इस महानता तक पहुंचे। परन्तु सोमकेतु ऋषि महाराज एक आकाश गंगा में, वह पचानवें खरब, नवासी अरब, उन्नचस हजार, बावन सूर्यों की गणना कर चुके थे। उससे ऊर्ध्वा में कोई वैज्ञानिक नहीं पहुंचा।

जहाँ तक मुझे स्मरण है इस संसार का बहुत सा जगत और संसार रूप में हैं परन्तु ऐसा कोई ऋषि नहीं हुआ, जो इतना विज्ञानमयी बन गया हो, पहुंच गया हो, परन्तु उन्होंने सात सौ ऐसी आकाश गंगाओं का भी दर्शन किया, और उन आकाशगंगाओं में पचानवें खरबों तक, आकाश गंगाओं को, इससे विशेष आकाश गंगाओं को, सूर्य गणित कर चुके थे। 12.09.1981

179 सूर्य किरणों में महान विज्ञान

महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ रावण का जितना भी वंशलज था वह विज्ञान में रत्त रहता था और विज्ञानवेत्ता महाराजा कुम्भकरण और ब्रह्मचारी सुकेता इन्हीं उपदेशों को ले करके वह पृथ्वी के गर्भ में पहुँच गए, वह पृथ्वी के गर्भ में जहाँ खनिजों का निर्माण हो रहा था। और वह निर्माण कौन कर रहा था सत्य में जो ज्योति आ रही थी, उस ज्योति के सन्निधान मात्र से ही उसके भिन्न भिन्न प्रकार के स्वरूप बन गए। वहाँ स्वर्ण का निर्माण भी हो रहा है, वहाँ रत्नों का निर्माण भी हो रहा है। उसी पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की धातुओं का चयन हो रहा है। जल को शोधित किया जा रहा है। वह जल को शक्तिशाली बना करके वाहन उस जल से गति करते हैं, तो पृथ्वी के गर्भस्थल में सूर्य द्यौ से प्रकाश लेता है, और वह प्रकाश नाना रूपों को ले करके पृथ्वी से उसका सन्निधान होता है। उसके सन्निधान मात्र से ही, उन

नाना किरणों के रजोगुणी, तमोगुणी और सतोगुणी रूप बन करके इस पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की धातुओं के पिपाद बन रहे हैं। निर्माण हो रहा है और वह निर्माण हो करके वह विज्ञान का और राष्ट्र की मौलिक सम्पत्ति को उत्पन्न किया जाता है। तो परिणाम क्या?एक एक किरणों के भिन्न भिन्न प्रकार के स्वरूप माने गए हैं। तो नाना प्रकार की किरणों के स्वरूपो में एक महान् विज्ञान निहित रहता है।

तो महाराजा कुम्भकरण ने कहा कि प्रभु! उन किरणों को हम यन्त्रों में कैसे ला सकते हैं? तो महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ इस प्रकार की विज्ञानशालाएँ थीं, कि जिन विज्ञानशालाओं में, उन किरणों का निरोध किया जाता था। वे किरणें जल को, पृथ्वी के गर्भ में, शक्तिशाली बना करके, उसके रूप का परिवर्तन कर रही थी और राष्ट्र के वैज्ञानिक जन पृथ्वी के गर्भ से इस जल को ले करके उसका शोधन करके वाहनों में कार्य रूप देते थे।परन्तु भारद्वाज के यहाँ एक ऐसी विज्ञानशाला थी, जहाँ सूर्य की किरणों को, यन्त्रों में लिया जा रहा था, और उन सूर्य की किरणों से वाहन गति करते थे, गति करते रहें हैं।

तो राजा रावण के यहाँ इस प्रकार के वाहन गति करते थे जो सूर्य की किरणों से कहीं कोई यन्त्र सूर्य की परिक्रमा कर रहा है। कोई मंगल की परिक्रमा कर रहा है, कोई चन्द्रमा की परिक्रमा कर रहा है, कोई शनि की परिक्रमा कर रहा है। उन्हे सूर्य से प्रकाश, किरणों से यन्त्रों में गति रहती है। 02.03.1982

180 सूर्य किरणों से यन्त्र गति

हमारे यहाँ भारद्वाज मुनि महाराज ने महाराजा कुम्भकरण इत्यादियों को, नाना प्रकार की आभाएँ वर्णित कराई। वह विज्ञान उस काल में महनत्ता में गति करता रहा है। एक समय भारद्वाज मुनि महाराज से यह कहा कि यह विज्ञान इस प्रकार का विज्ञान जब वैदिक साहित्य में विद्यमान है, तो हमारे राष्ट्र में इस वैदिकता का अध्ययन होना चाहिए। भारद्वाज ने कहा, तुम्हारे यहाँ होता रहता है, विद्यालयों में होता रहता है, विश्वविद्यालयों में होता रहता है। तुम्हारे यहाँ नित्य प्रति याग का चयन होता रहता है, याग होता रहता है। वह याग कहलाया जाता है जिस याग में सुगन्धि से तुम वायुमण्डल को पवित्र बनाते हो, यह जो वायुमण्डल है, इस वायुमण्डल में परमाणु गति कर रहा है, शब्दों के साथ गति कर रहा है। आभा में रहने वाला यह विज्ञान है। परन्तु इस विज्ञान, इस परमाणुवाद को, और साकल्य अग्नि की धाराओं पर विद्यमान करके वह अन्तरिक्ष में गति कर रहा है। 02.03.1982

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव भारद्वाज मुनि की चर्चा करते रहते हैं। भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला जो उनका विज्ञान सूर्य में गति करना, मंगल में गति करना, बुध में गति करना, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में गतियाँ होती रहती थीं। वह भी यहाँ से दूरी नहीं। उन कजली वनों में तपस्या की और विज्ञान की एक भूमिका बनती रहती थी। 19.01.1983

181 सूर्य का चित्रावली से दर्शन

वही यन्त्र वही संग्राम की प्रतिक्रिया हिमालय की कन्दराओं में अपने राष्ट्र में विद्यमान हो करके महाराजा शिव और पार्वती उनको दृष्टिपात करते रहते थे, यहीं तक नहीं, जब सूर्य में किसी भी प्रकार का अग्नि के प्रचण्ड से आक्रमण हो करके, और सूर्य में गढेला बन जाता है। तो ऐसे चित्र महाराजा शिव के द्वारा थे, कि जैसे उनका वहाँ आक्रमण हुआ। परमाणुओं का आक्रमण हुआ, सूर्य में गढेला हुआ, उसका चित्र महाराजा शिव के यन्त्र में प्रवेश करता था। और वह उन्हें दृष्टिपात होता रहता था। 17.03.1983

182 महाराजा हनुमान व महाराजा अर्जुन सूर्य विज्ञानी

महाराजा हनुमान, अर्जुन सूर्य विज्ञान के पंडित थे। सूर्य की किरणों द्वारा रोग का शमन महाराजा अर्जुन ने सूर्य विद्या पर नाना प्रकार की पोथियों के निर्माण किए। हमारे यहाँ पूर्व काल में ऐसा कहा जाता है कि सूर्य की कितनी विद्या होती हैं? सूय की नाना प्रकार की किरणों के ऊपर जिनका अप्रेत होता रहता है। ऐसा हमारे यहाँ महाराजा हनुमान जी को प्रतीत था। हनुमान जी सूर्य विज्ञान के बड़े प्रकांड पंडित थे।

एक समय भगवान राम ने उनसे कहा हे हनुमन्त! मेरी ऐसी अभिलाषा है कि आज तुम सूर्य विज्ञान की कोई वार्ता प्रकट करो। आज मैं यह जानना चाहता हूँ कि संसार में रोगों का विनाश कैसे होता है। 01.08.1970

183 सात प्रकार की मुख्य किरणें

सूर्य किरणें होती हैं, सात प्रकार की मुख्य किरणें होती हैं। परन्तु वास्तव में तो सहस्रों प्रकार की किरणें होती हैं। परन्तु यहाँ ऐसा माना गया है। जैसे वायु है, पृथ्वी है, अग्नि है, जल हैंअन्तरिक्ष है, इस प्रकार की जो ये पंच महाभौतिक हैं, इन्हीं किरणों का जैसा जिसका रंग होता है, श्वेत होती है, हरित होती हैं, ललित होती है, इसी प्रकार का, जैसा इनका रंग रूप होता है। उसी प्रकार की किरणें होती हैं सूर्य में। वे जो किरणें होती हैं। मानव के शरीर में केवल पंच महाभूत कार्य कर रहे हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और अन्तरिक्ष इत्यादि अपना कार्य कर रहे हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि, अन्तरिक्ष, वायु ये पंच महाभूत कार्य कर रहे हैं। मानव के द्वारा, पृथ्वी का तत्व सूक्ष्म हो जाता है तब मानव में

रुग्ण होता है। उनकी रुग्णता में पृथ्वी का जो विचार होता है, पृथ्वी का जो प्रवाह होता है वह सूक्ष्म हो जाता है। अग्नि का प्रवाह सूक्ष्म हो जाता है और वायु का प्रवाह सूक्ष्म हो जाता है उसी प्रकार की किरण को लाया जाता है। उस किरण के लिए मानव को क्या क्या करना होगा? वही किरण उस मानव के शरीर में वहीं प्रभावित हो जाती है। उस मानव का रोग शान्त हो जाता है। उसी किरण के आधार से, उसका निदान किया जाता है, इसका श्वेत नाम का प्रतीक होता है, स्वर्ण में अग्नि की प्रधानता मानी गई है। वह स्वर्ण जैसी धातु का प्रतीक बनाया जाता है। उसका एक 'अक्रात'' यन्त्र बनाया जाता है। सूर्य की किरणों का उसमें जब प्रवाह होता है, तो मानव के अंग को भी शुद्ध बनाता चला जाता हैं, जिस प्रकार की धाराएं, सूर्य वैज्ञानिक पुरुषों ने अपना अपना विचार व्यक्त किया है, उन्होंने 'सूर्य अस्त्र' नाम के यन्त्रों का निर्माण किया। जिससे मानव अग्नि के प्रभाव को अपने में धारण कर सकते हैं, ऐसा भी कहा जाता कि मानव सूर्य के कक्ष में भी भ्रमण कर सकता है।आज जो मानव सूर्य की किरणों के विज्ञान को जानता है वह ऐसे यन्त्रों को बना देता है। जब सूर्य की किरण के साथ साथ वह यन्त्र रमण करने लगते हैं और वे सूर्य की कक्षा में चले जाते हैं। ऐसा हमारे यहाँ वैज्ञानिकों ने कहा है। 01.08.1970

184 सूर्य मण्डल में गढ़ेले

आज का वैज्ञानिक यह उच्चारण कर रहा है, कि सूर्य मण्डल के गदेले आ गए हैं। सूर्य मण्डल में इस प्रकार की कृति अवस्था आ गई है। परन्तु इससे आधुनिक काल के वैज्ञानिक को कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। वह तो परम्परा से ही प्रायः ऐसा होता रहा है। जिस लोक का वैज्ञानिक जितना भी अन्वेषण करता है जितना भी वह परीक्षण करता है, उतना ही वहाँ का विज्ञान विकसित होता रहता है। रहा यह कि हमारे यहाँ जैसे सूर्य की रश्मियां आती हैं, उन रश्मियों का जो प्रभाव है, वह पृथ्वी मण्डल पर कैसा आता है? और अन्य लोकों पर कैसा आता है? परन्तु जैसे वैज्ञानिकों के परीक्षण से आ गए हैं उसमें प्रतिक्रिया अशुद्ध आ गई है। तो इससे मानव को भयभीत नहीं होना चाहिए। क्योंकि उनका प्रभाव अशुद्ध नहीं होता। यहाँ तक प्रायः नहीं आता। वहाँ का जो मानव समाज है वहाँ का जो राष्ट्र है उस पर किसी प्रकार का प्रभाव हो सकता है क्योंकि वे जो किरणें हैं, रश्मियां हैं, वह अग्नि के द्वारा प्रचंड की हुई आती हैं। वायु की धाराओं में रमण करती हुई, अग्नि की रश्मियों सूर्य का प्रकाशित करती रहती हैं। उसमें अग्नि की प्रधानता होती है। कुछ ऐसे लोक हैं, जिनमें वायु और जल दोनों की प्रधानता होती है। वहाँ उन किरणों से दूषितपने का संदेह रहता है। परन्तु जहाँ पार्थिव तत्व होता है, उन लोकों में उसका कोई विशेष प्रभाव कदापि नहीं हुआ करता। 25.02.1972।

185 सूर्य मण्डल के यान

इसी प्रकार एक वैज्ञानिक सूर्य मण्डल में जाना चाहता है तो उसे अग्नि के परमाणुओं को अधिक लेना होगा, क्योंकि जिस लोक में जो तत्व प्रधान है, उसी तत्व के परमाणु अधिक ले करके उसके यान का निर्माण करना होता है। यह तो सर्वत्र सिद्ध है कि पंच महा भौतिक जो परमाणु हैं वह सर्वत्र लोकों में भ्रमण करते हैं जैसे सूर्य मण्डल में जाओ तो वहाँ अग्नि तत्व प्रधान है, वहाँ पार्थिव भी है, जल भी है, वायु भी है, परन्तु जैसे पृथ्वी में पार्थिव तत्व प्रधान हैं। इसी प्रकार उसमें अग्नि प्रधान है। जिस भी लोक में तुम रमण करोगे, जिसमें गति करना चाहते हो, उसी प्रकार के परमाणुओं की तुम्हें जानकारी करनी होगी। अब विचार यह आता है कि हम यह कैसे जानें कि कौन से लोक में कौन सा तत्व प्रधान है। जैसे सूर्य है, उसमें ताप अधिक है, ताप के नाते उसमें अग्नि अधिक है। जैसे चन्द्रमा है, उसमें शीतलता है। तो उसमें वायु और जल की प्रधानता दोनों हैं, परन्तु प्रधानता तो जल तत्व की मानी जाती है, परन्तु वायु की और तत्वों की अपेक्षा पुट अधिक होती है। जैसे मंगल है, तो मंगल में यह सिद्ध हो जाता है क्योंकि शान्त मुद्रा को दृष्टिपात करके उसके लोक में जब यान जाता है, तो उसके मार्ग में धूल आती है, उसके मार्ग में पृथ्वी के परमाणु पृथ्वी के अवशेष आने प्रारम्भ हो जाते हैं तो उससे यह सिद्ध हो गया कि वहाँ पार्थिवता अधिक है। इस प्रकार लोकों की गतियों में वैज्ञानिक जन इस प्रकार जाने का प्रयास करते हैं।

उस ऋषि बालक ने नाना प्रकार के लोकों में जाने के यानों का तब निर्माण किया और अन्त में उन यानों के निर्माण करने वाले विज्ञानवेत्ताओं ने अन्त में यह विचारा कि वह जो प्रभु है, वह विज्ञानमय है, जिसका यह जगत निर्माण किया हुआ है, उसमें जो लोक लोकान्तरों की जो रचना है, इसीलिए वह निर्माण करने वाला है, नियन्ता कहलाता है। उसे हमें अपने मनस्तत्व को समर्पित कर देना है, क्योंकि उसके इस भौतिकवादी, इस विज्ञान की अपेक्षा, यदि हम परमात्मा को जानेंगे, तो यह विज्ञान हमारे लिए न होने के तुल्य हो जाएगा। इस विज्ञान में कोई वास्तविकता नहीं है। 01.08.1973

186 सूर्य किरणों से यान निर्माण

पुरातन का विज्ञान आधुनिक काल का विज्ञान, आज का मानव यात्रा कर रहा है अन्तरिक्ष की, पुरातन का अपने यन्त्र को सूर्य की किरणों से, स्थिर करके, सूर्या की किरणों से, वह यान गति करता रहता था। परन्तु आधुनिक काल का विज्ञान सूर्य के ऊपर कुछ अनुसन्धान कर रहा है। उसका यह विचार है, आधुनिक काल के वैज्ञानिकों का, कि सूर्य की जो नाना प्रकार की किरणें हैं, जो प्रातःकाल होते ही, विद्युत

को बिखेरना प्रारम्भ कर देती हैं और विद्युत मानव को जीवन देती है हम इन किरणों को जानना चाहते हैं। हम उन कान्तियों को अपने यन्त्रों में लाना चाहते हैं! परन्तु वह इतनी सफलता में अब तक नहीं पहुंचे हैं जितनी सफलता पुरातन काल में थी।
पुरातन काल में महात्मा ध्रुव और देवर्षि नारद मुनि अपना विद्यालयों मे मानो देखो, वह हिमालय की कंदराओं में विद्यमान थे। विचार कर रहे थे आचार्य से ये प्रश्न किया क्या हे भगवन! मैं सूर्य की किरणों को अपने में कैसे आदान-प्रदान कर सकता हूँ? उन्होंने ब्रेल, अस्वातम्, कृतिका ये नाना प्रकार की धातु ले करके उसका एक यन्त्रों का निर्माणित किया। परन्तु सूर्य की किरण जैसे आती रही, निचले भाग में वहाँ का परमाणुवाद एकत्रित होता रहा। सूर्य की किरणों में, एक सर्ववस्तुत हैजिसे हम शक्तिशाली जन्म कहते हैं, जो खनिजों के रूप में, पृथ्वी के गर्भ में रहता है वह परमाणु रूप से, सूर्य की किरणों के साथ, गमन करता रहता है। वह परमाणुवाद उसमें आना जैसे ही प्रारम्भ हुआ, यन्त्रों के द्वारा निचले स्थलो में यन्त्र विद्यमान है उससे परमाणुवाद एकत्रित हो रहा है। उस परमाणुवाद के द्वारा, यन्त्र का निर्माण होने जा रहा है। यन्त्र का जब निर्माण हुआ तो सूर्य की किरण के साथ वह विज्ञान गति करता रहता है। 19.03.1983

187 बुध लोक

परन्तु आचार्य ने प्रश्न का उत्तर देना प्रारम्भ किया, उन्होंने कहा कि इस चन्द्रमा से ऊर्ध्वा गति में बुध कहलाता है। बुध में पार्थिव तत्व प्रधान वाले प्राणी रहते है, वहाँ तत्त्व वृत्तियों में रत्त रहने वाले, वहाँ राज्य है राष्ट्रीय व्यवस्था है, वहाँ विज्ञानशालाएं है, यज्ञशालाएं है, भिन्न भिन्न प्रकार के प्राणी वहाँ अपने में वास करते है। 28.07.1982

188 बुध में पार्थिव तत्त्व प्रधान

तो यह उच्चारण करते हुए ब्रह्मचारी तो मौन हो गएं। परन्तु आचार्य ने प्रश्न का उत्तर देना प्रारम्भ किया, उन्होंने कहा कि चन्द्रमा से ऊर्ध्वा गति में बुध कहलाता है। बुध में पार्थिव तत्त्व प्रधान वाले प्राणी रहते है वहाँ तत्त्व वृत्तियों में रत्त रहने वाले, वहाँ राज्य है राष्ट्रीय व्यवस्था है, वहाँ विज्ञानशालाएं है, यज्ञशालाएं है, भिन्न-भिन्न प्रकार के प्राणी वहाँ अपने में वास करते है।
उन्होंने कहा कि-हे प्रभु! मंगल से ऊर्ध्वा गति में गति करने वाला, जो अरुण्धती मण्डल और वशिष्ठ कहलाता है उसमें कौन-सा तत्त्व प्रधान कहलाया जाता है? 08.07.1982

189 गन्धर्व लोक

मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय हम गन्धर्व लोक में चले गये। उस गन्धर्व लोक में जब चले गएं तो वहाँ श्वेतकेतु नामक राजा यह अनुसंधान कर रहा था कि मैं नेत्रों से सुदृष्टि ही पान करूँगा। मैं नेत्रों से कुदृष्टिपात नहीं करूँगा। तो वे जब नेत्रों का अनुसन्धान कर रहे थे अथवा परीक्षण में रहते थे। ध्रुवागति में दृष्टि रहती थी और ऊर्ध्वागति में रहती थी। मध्य क्षेत्र में नहीं रहती थी, उनके नेत्र में एक अनुपम ज्योति आने लगी और वह ज्योति कैसी? जिस मानव को वे दृष्टिपात करते थे वही मानव प्रसन्न दृष्टिपात आने लगा। मानो यह अपने नेत्रों से दृष्टिपात करके अग्नि की आभा प्रकट कर देता है तो वह रसातल को चला जाता है। वह भस्म भी हो जाता है। 30.07.1978
मुझे स्मरण है। बेटा! एक समय गन्र्धव लोक में पंहुचे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गन्धर्व लोक में चले गये। वहाँ पांच ऋषि विद्यमान थे। और वह पांच ऋषि कौन कश्यप, विभाण्डक, कुलकेतवत ऋषि महाराज, शकुन्तिकान्त और सोमकेतु यह पांच ऋषि विद्यमान थे। परन्तु यह ऋषि यह अभ्यास कर रहे थे। यह नाभि का अभ्यास कर रहे थे। और यह जान रहे थे कि नाभि केन्द्र को जानने से उन्होने एक वाक्य वेदो में आख्यिाकाए श्रवण की नाभ्याम चित्रम ब्रीही व्रतयाम जन्म ग्रीती क्रता वेद की आख्यिकाएँ स्मरण आ गयी। और वेद की आख्यिकाएँ यह कह रही थी कि क्या इसका अनुसन्धान करने से नाभि द्वारा मानव के चित्त की जागरूकता हो जाती है जो मानव का आन्तरिक चित्त है उस चित्त में जो संस्कार है अंकुर रूपो में विद्यमान है वे सौ जन्म के क्या लांखो जन्मो के संस्कार को जागरूक करी लेता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जब उनके द्वार पर पंहुचे तो शकुन्तिकान्त ऋषि महाराज से कहा कि महाराज!? तो उस समय महात्मा कश्यप कहते हैं कि हम अपने संस्कारों को जागरूक कर रहे हैं, हम उनका दृष्टिपात करना चाहेत हैं। कौन-सा संस्कार किस प्रतिध्वनि पर आएगा? किस कर्म के करने से आयेगा और कैसे वह सूक्ष्म बन सकता है? यह अभ्यास करना चाहते हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव आश्चर्यचकित हो गए और महर्षि कश्यप ने यही कहा कि आओ महाराज! विराजो! वे विराजमान हो गए।
वे अभ्यास कर रहे थे नाभि केन्द्र का, क्योंकि मूलाधार से जब प्राण, मन दोनों गति करते हैं और नाभि केन्द्र में जब प्रवेश करते है तो उनके चित्त जागरूक हो जाते हैं। जैसे वृद्धावस्था में जब कोई बाल्यकाल के क्रियाकलाप को जिन्हें निश्चित कर देता है, उन्हें स्मरण कर देता हे तो बाल्यकाल के संस्कार मानव के उद्बुद्ध हो जाते हैं। इसी प्रकार वह अपने प्राणों की डुगडुगी से, मन की आभा से, क्योंकि प्रकृति का एक सूक्ष्म तंतु माना गया है। उस सूक्ष्म तंतु में प्रकृति का सर्वत्र विज्ञान विद्यमान रहता है। इसी प्रकार जो मानव नाभि केन्द्र को जागरूक करने वाला होता है वह चित्त के संस्कारों को उद्बुद्ध करके लाखों करोड़ों जन्मों के संस्कार उस मानव के समीप आ जाते हैं किस जन्म में

तूने कौन-सा क्रियाकलाप किया था, कौन-सा अध्ययन किया था? अध्ययन करने की शैली उसके समीप आ जाती है।
मुझे स्मरण आता है ऋषि कहते हैं कि यदि चित्त को कोई संस्कार नहीं होता तो संसार में मानव शरीर के होने का कोई कारण नहीं होता है। मानव का यदि कोई कारण बनता है संसार में आने का तो वे चित्त के संस्कार हैं। वे ही मानव को उद्बुद्ध करके इस पृथ्वी-मण्डल पर लाते हैं। 05.07.1978

190 गन्धर्व लोक

जैसे हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में गन्धर्व लोकों का प्राय वर्णन आता रहता है। गन्धर्व लोक उन्हें कहा जाता है जहाँ एक दूसरे की आकर्षण शक्ति एक दूसरे से सुगठित रहती है। अहा! वहाँ मिलन नहीं हो पाता। कैसा सुन्दर प्रभु का विज्ञान है, इस प्रभु का कितना ऊँचा धर्म है, वायु मण्डल में भ्रमण करते हुए भी, एक मण्डल एक दूसरे से मिलान नहीं कर पाता। कैसी विचित्रता है प्रभु की। 25.02.1972।

191 गन्धर्व लोक की धातु

इस गन्धर्व मण्डल आतल में पारत्व एक धातु उसमें विद्यमान रहती है। वही द्यौ में प्रकाशित होती रहती है और वही अपने में अभ्युदय होता हुआ, सूर्य प्रकाश के मूल में प्रकाश देता हुआ ऊर्ज्वा देता हुआ, जाता हैं, तो बहुत से वैज्ञानिक ऐसे हुए हैं, जिन्होंने सूर्य की किरणों के साथ अपने यन्त्रों को, सूर्य की परिक्रमा के लिये परिणत किया है। 01.01.1987

192 बृहस्पति मण्डल में जल तत्व की प्रधानता

आज हमें वैज्ञानिक बनना चाहिए। परन्तु कैसा सुन्दर वैज्ञानिक? लक्ष्मण जैसा वैज्ञानिक, जिन्होंने बेटा! छह माह में इस रेखा को जाना। परन्तु वह रेखा उन परमाणुओं की बनी हुई थी, उस परमाणुवाद की बनी हुई थी, जो अग्नि के परमाणुओं को निगल जाए। और जल की धाराओं को निगलने की उसमें शक्ति थी। परन्तु उसमें जो वायु, जिसको हमारे यहाँ बृहस्पति कहते हैं। बृहस्पति मण्डल में जल तत्व प्रधान होने के नाते, जैसे पृथ्वी मण्डल में पार्थिव तत्व प्रधान है, इसी प्रकार बृहस्पति मण्डल में जल प्रधान होने के नाते, उनकी जो तरंगे हैं, वायु मण्डल में भ्रमण करती रहती हैं। द्यौ लोकों में वे धाराए रमण करती रहती हैं। वे धाराएं सब एक ही आँगन में विचरण करने वाली होती हैं। 03.08.1971

193 बृहस्पति मण्डल में विज्ञान

एक समय बृहस्पति मण्डल के प्राणियों ने कुछ काल में अपने मण्डल पर परीक्षण किया। वह जो परीक्षण था, वह इस प्रकार का था कि बृहस्पति में ऐसे गढेले अन्धड़ तथा विंध्स आ गए कि उसकी जो छाया थी, वह सूर्य मण्डल पर पड़ी। परन्तु सूर्य मण्डल की जो आभा थी, वह दूषित हो गई। दूषित हो जाने से सूर्य मण्डल का जो प्राणी था, वह एक चौथाई रह गया, तीन विभाग उसका समाप्त हो गया। इस प्रकार की छाया उस काल में प्रायः आई। उसकी छाया शनि मण्डल में आई, तो शनि मण्डल का प्राणी भी इतना समाप्त हो गया।परन्तु उसकी छाया जब बुध पर आई, बुध से पृथ्वी पर त्रिकोण हो करके जब उसकी रश्मियां आईं, तो पृथ्वी मण्डल का प्राणी भी मृत्त होने लगा। उन्होंने इसका प्रयास किया कि इस दूषित वायु मण्डल को किस प्रकार हम शोधन कर सकते हैं। 04.05.1976

194 बृहस्पति मण्डल

एक समय बृहस्पति मण्डल के प्राणियों ने अपने मण्डल पर परीक्षण किया और वह जो परीक्षण था, वह इस प्रकार का था कि बृहस्पति में ऐसे ऐसे विस्फोट हुए और तूफान आ गए कि उसकी जो छाया थी, वह सूर्य मण्डल पर पड़ी। उससे सूर्य मण्डल की जो आभा थी, वह दूषित हो गई। ऐसा ऋषियों ने प्रकट किया है, उनके साहित्य में ऐसा प्राप्त होता रहा है, कि सूर्य मण्डल का जो प्राणी था, उस समय वह एक चौथाई रह गया, तीन विभाग उसके समाप्त हो गए। इस प्रकार की छाया, उस काल में प्रायःआई, उसकी छाया शनि मण्डल में आई, तो शनि मण्डल का प्राणी भी इतना ही समाप्त हो गया। अनन्तर उसकी छाया जब बुध पर आई, बुध से पृथ्वी पर त्रिकोण हो करके जब उसकी रश्मियां आईं तो पृथ्वी मण्डल का प्राणी भी मरने लगा। 25.02.1972।

195 महान विचारों वाला बृहस्पति लोक का प्राणी

नाना यानों का निर्माण करता है और यान का निर्माण करके वह चन्द्रमा में गमन कर रहा है, कोई मंगल का गमन कर रहा है, कोई बृहस्पति में जा रहा है। परन्तु वह जानता है कि चन्द्रमा में जाने से, मैं इस पृथ्वी मण्डल में आ सकूंगा, और नहीं आ सकूंगा। परन्तु ऐसा विचार जब बृहस्पति वाला प्राणी उड़ान उड़ता है, तो सिद्व होता है कि वह कितना महान है, उसके विचारों में कितनी महानता है, उसे मृत्यु का भी भय नहीं हो रहा है, परन्तु वह उड़ान उड़ता है पृथ्वी से और वह द्यौ लोक को प्राप्त होता है। वह महान योनियों को प्राप्त हो जाता है। 06.03.1976

196 ध्रुव मण्डल में जीवन

आज जब मैं यह पान करता हूँ कि हमारे यहाँ महर्षि ध्रुव, ध्रुव मण्डल में पहुंचे, तो नारद ने उनसे कहा कि ध्रुव मण्डल में तुमने क्या पाया? उन्होंने कहा प्रभु! मुझे तो वहाँ जीवन प्राप्त होता है। मुझे तो वहाँ जीवन प्रतीत होता है। वहाँ तो योनियां रहती हैं। परन्तु इस प्रकार प्रत्येक लोक लोकान्तरों में, जैसा वहाँ का वायु मण्डल है, वहाँ भी चारों प्रकार की सृष्टि इसी प्रकार की है। परन्तु जैसा तत्व प्रदान होता है, उसी तत्व का वहाँ खनिज खाद्य है, उसी प्रकार का वहाँ प्राणी मात्र है। वहाँ उसी प्रकार का विज्ञान है। विज्ञान की मात्रा भी उसी प्रकार है। अनुसन्धान, अन्वेषण सर्वत्र होते रहते हैं। परन्तु वहाँ के वैज्ञानिक यन्त्रों में, उस विज्ञान को दृष्टिपात करते हैं। इसी प्रकार क्योंकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने इस विज्ञान पर कुछ अनुसन्धान किया है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव इस पर अच्छी तरह अन्वेषण करते रहते हैं। परन्तु आज हम तो इतना उच्चारण कर सकते हैं, कि आज हम उस विज्ञान की रश्मियों को अच्छी प्रकार जानने का प्रयास करते रहें। 26.02.1972

197 महात्मा ध्रुव की ध्रुव यात्रा

हमारे यहां किसी प्रकार की संसार में भाषा हो। कोई भी भाषा हो, चाहे चन्द्रमा की भाषा हो, चाहे वह मंगल की भाषा हो, वह किसी भी राष्ट्र की भाषा हो, वह जिस राष्ट्र की भाषा हो, उस भाषा में यदि चरित्र नहीं है। जिस भाषा में यदि आधुनिक काल का वैज्ञानिक, चन्द्र की क्या, सूर्य की क्या, मंगल की यात्रा में अपने को सफल स्वीकार करता है और यह कहता है कि मैं मंगल में चला गया हूँ। यह जो मंगल मण्डल है इस में मानव का यान गति कर गया है। जब मैं यह विचार ले करके महात्मा ध्रुव और महात्मा नारद मुनि की विज्ञानशाला में प्रवेश करता हूँ, देवर्षि नारद और महात्मा ध्रुव, जब उनका विद्यालय मुझे स्मरण आता है, तो महात्मा ध्रुव अपने यान में विद्यमान हो करके सूर्य की किरणों से विद्युत को ले करके, वह नाना स्वाति लोकों की परिक्रमा करता रहा है, जो मंगल से भी ऊर्ध्वा में मण्डल गति करने वाले हैं।

यह जो विज्ञान है इसकी स्थिरता भी मानव के तप के द्वारा रहती हैं यदि मानव में तप नहीं है। मानव वैज्ञानिक तपस्वी नहीं है, तो विज्ञान भी स्थिर नहीं रह सकता। विज्ञान कणों में परिणत हो जाएगा या विनाशता में परिणत हो जाएगा। आधुनिक काल का वैज्ञानिक तो ऐसा यन्त्र भी निर्माणित नहीं कर सका है, जो मानव एक स्थली पर, किसी प्रकार की उद्दण्डता कर गया है और वह उदण्ड वाला प्राणी वहाँ से चला गया है, परन्तु उसका कोई ऐसा यन्त्र भी अभीतक निर्धारित नहीं हुआ, जो उसका चित्र ले ले।

परन्तु पुरातन काल के ऐसे वैज्ञानिक हुए हैं, भारद्वाज और वशिष्ठ मुनि आश्रम में, उद्दालक आश्रम में, ऐसे ब्रह्मचारी हुए हैं, एक मानव चला गया है, ढाई घड़ी के पश्चात भी उस मानव का चित्र लिया जा रहा है। यदि इस प्रकार का विज्ञान राजा के राष्ट्र में आ जाए, तो राजा के राष्ट्र में, जो नष्ट करने वाले जो पामर प्रवृत्ति के व्यक्ति हैं, उन व्यक्तियों को, उनका ह्रास हो सकता है, या उनको कारागार में स्थिर किया जा सकता है। नाना ऊर्ध्वा में क्रिया कलाप करने वाला, अशुद्धियों में न रह जाए, ऐसा विज्ञान की, विज्ञान में सार्थकता विद्यमान रहती है। आधुनिक काल का विज्ञान उस यन्त्र को निर्माणित नहीं कर सकता है। 19.03.1983

198 प्रह्लाद जी की ध्रुव यात्रा

आज ही नही जान लेना चाहिए कि हम पृथ्वीवासी ही इस प्रकार के हैं, क्योंकि पृथ्वी मण्डल पर वास्तव में ऐसा होता रहता है, आज नही, परम्परा से होता चला आया है। राजा हिरण्यकश्यप का जो पुत्र, जिसको प्रहलाद कहते थे, उसका जीवन मुझे स्मरण है। प्रहलाद जी वे ध्रुव मण्डल तक पंहुच गए थे, उस काल में उनका महान और प्रबल विज्ञान था। यह जो हमारा विज्ञानवाद रहा, यह वाक्य है कि प्रकृति से स्वभाव उत्पन्न होता रहता है, माता का पुत्र है, उसके समीप आते ही माता की लोरियों से स्वभाविक दुग्ध उत्पन्न हो जाता है। इसी प्रकार यह जो प्रकृति है, जब इसके तत्वों को तुम जानने लगोगे, इसमें से नाना प्रकार की धातुओं को एक दूसरे में मिलान करने की शक्ति तुममें आ जाएगी, उस समय अपने आप ही उसके स्वभाव से ही, क्योंकि जैसे प्रभु का सन्निधान मात्र है, इसी प्रकार नाना प्रकार के परमाणुवाद को, एक दूसरे से मिलान करने से, प्रकृति का स्वभाव उमड़ आता है। वह प्रकृति के स्वभाव के द्वारा ही, नाना प्रकार के यन्त्रों की उत्पति हो जाती है। आज जो चन्द्रमा में जाने वाले यन्त्र है, उसमें कई धातु इस प्रकार की है, जो विशेष मानी गई हैं।

मुझे स्मरण है कि इससे भी सूक्ष्म जो धातु है, जैसे स्वानागृति आस्वानी धातु है, त्रिगण अनथ नाम की धातु है दोनों का मिलान करते रहो, तो यह जो विद्युत है, इस विद्युत से सहस्रों गुणी, जो अधिक शक्तिशाली तरंगें वायुमण्डल में और आन्तरिक में भ्रमण करती हैं वह स्वाभाविक ही दोनों प्रकार के परमाणुओं के मिलान करने से, वह परमाणु आने प्रारम्भ हो जाएगें। परन्तु वह जो मंगल मण्डल से, इस पृथ्वी मण्डल से यन्त्र आता है, उस यन्त्र से जो एक सौ पांच गुणा शक्तिशाली वह यन्त्र कहलाता है। इन धातुओं को मिलाने वाले वैज्ञानिक होने चाहिए। 23.08.1969

199 महात्मा ध्रुव, ध्रुव मण्डल में

देवर्षि नारद मुनि महाराज के विद्यालय में, उनकी विज्ञानशालाओं में महात्मा ध्रुव, ध्रुव मण्डलों की यात्रा करते रहे हैं। नाना प्रकार के

लोक लोकान्तरों में यातायात बनाना, विज्ञान के वांगमय में होता रहा है।
नाना प्रकार के ज्ञान और विज्ञान के वांगमय में जब अग्नि का, उनके अपने स्थान को चुनौती प्रदान की जाती है तो अग्नि का प्रमुख स्थान रहा है। यह अग्नि ही द्यौ लोकों में प्रवेश करती हुई, ये सूर्य मण्डल को उसमें ऊर्ज्वा देकर के यह सूर्य ऊर्ज्वावादी है।
उसी आभा में रत्त होने वाले ऋषि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा कि हे ऋषिवर प्रवाहण जी! तुमने यह जान लिया होगा, कि यह अग्नि ही हमारे प्रकाश का द्यौतक है, अग्नि ही प्रकाश के देने वाली है। यह एक अणु के रूप में विद्यमान रहती है।
एक समय ऋषि मुनियों ने उद्धृत करते हुए कहा कि जब एक अणु का विभाजन किया गया, तो दिव्यदृष्टि से ऋषि मुनियों ने अणु को दृष्टिपात किया, तो सर्वत्र ब्रह्माण्ड, उसमें दृष्टिपात आने लगा। एक एक, अणु अणु में परमाणुवाद में, ब्रह्माण्ड का ब्रह्माण्ड निहित रहता है। 01.01.1987

200 ध्रुव लोक की यात्रा

भारद्वाज मुनि के यहाँ एक यन्त्र ऐसा था, जिस यन्त्र में विद्यमान होकर के, ध्रुव मण्डल की यात्रा में सफलता को प्राप्त हुए। ओर भी नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में गमन करते रहें। विचार केवल यह है कि उनका एक यान सूर्य की परिक्रमा कर रहा है। एक यान मंगल की परिक्रमा कर रहा है और मंगल से उपराम होकर के वह श्वेती नक्षत्र की परिक्रमा कर रहा है। 27.01.1989

201 ध्रुव लोक में कम्पन्नता

परन्तु वह जो मेरा अनुपम प्रभु हैं, वह जो संसार का रचयिता अनुपम देव है, उसकी ऐसी महान विचित्रता है, कि उससे इनका मिलान नही होता और यदि इनका मिलान हो जाए तो प्रलय काल हो जाता है, जिस काल में प्रलय काल होता है प्रलय काल में सबसे प्रथम ध्रुव में कम्पनता होती है और ध्रुव के अधीन जितने लोक है, उनमें कम्पनता होती है परन्तु कहीं कहीं हमें ऐसा भी प्राप्त होता है कि सबसे प्रथम कम्पनता सूर्य के अधीन जितने लोक है उनमें हुआ करती है, परन्तु उनको प्रायः नही माना जाता, ऐसा माना जाता है कि सबसे पूर्व ध्रुव में कम्पनता हुई, उसके पश्चात ध्रुव के अधीन लोक हैं, उनमें कम्पनता होती है और उनमें जहाँ कम्पनता हुई उसके पश्चात जितने अधीन रहने वाले जहाँ उसमें कम्पनता हुई तो बृहस्पति में कम्पनता प्रारम्भ होने लगती है।बृहस्पति के जितने अधीन हैं उनमें कम्पनता हुई और जब यह कम्पनता बृहस्पति में है, तो सूर्य में भी कम्पनता हुई, जहाँ सूर्य में कम्पनता हुई तो सूर्य के अधीन जितने पृथ्वी आदि लोक है उनमें कम्पनता होने लगती है और इन सबमें कम्पनता होती रही। इन्ही से अब मानव मात्र और जितने शरीर धारी प्राणी हैं उन सब का विनाश हो जाता है और जितने लोक हैं, एक दूसरें में मिलान होता हुआ, उनके कण कण हो जाते हैं, इनका एक एक परमाणु हो जाता है, परमाणु हो करके यह जो प्रभु का रचाया हुआ ब्रह्माण्ड है।
यह एक दूसरे का लोक इतना सहायक है, एक दूसरे से एक दूसरा लोक क्रियात्मक हो रहा है, दोनों लोक आपस में इनका मिलान, जहाँ इनकी छाया एक गृह में आ जाती है, उसी समय यह जो सूक्ष्म मण्डल होते हैं, उनमें किसी न किसी प्रकार की आपत्ति आना प्रारम्भ हो जाती है। उसका कारण यह कि पृथ्वी पर जितने वायु, अग्नि इत्यादियों का प्रभाव था, परन्तु या तो उनमें उग्र गति हो जाती है या मध्यम गति हो जाती है उनमें किसी न किसी प्रकार की हानि अवश्य हो जाती हैं। 30.10.1965

202 ध्रुवयान

महात्मा ध्रुव, देवर्षि नारद मुनि के द्वारा योगाभ्यास करते थे। संकल्प करते थे। तो ध्रुवयान की कल्पना बन गई। ध्रुवयान की मन से कल्पना बनी। मन को ध्रुव मण्डल में ले गए और ले जा करके उसके पश्चात ध्रुव यान का निर्माण किया। 20.04.1979

203 ध्रुव मण्डल गमन का यन्त्र

आगे उन्होंने भ्रमण करते हुए नाना प्रकार के आग्न्येस्त्र, ब्रह्मास्त्र, वरूणास्त्र नाना प्रकार के अस्त्रों शस्त्रों का उन्हें दिग्दर्शन कराया।
उन्होंने कहा प्रभु! यह मेरा यन्त्र हैं, इस यन्त्र को महर्षि सुकेता और ब्रह्मचारी दोनों के द्वारा इस यन्त्र का निर्माण किया है, वह यन्त्र सूर्य की परिक्रमा कर रहा है, एक यन्त्र का निर्माण ब्रह्मचारिणी शबरी और पणपेतु मुनि महाराज के सहयोग से एक ऐसे यन्त्र का निर्माण किया है, जो ध्रुव मण्डल की परिक्रमा कर रहा है।तो नाना प्रकार का विज्ञान हमारे यहाँ, उन तथ्यों को हम जानते रहते हैं, उनके चित्रों का, उनके क्रियाकलापों को हम सदैव अपने में धारयामि बनाते रहते हैं, तो जब ऋषि ने यह वर्णन कराया, तो सर्वत्र उनकी विज्ञानशाला को उन्होंने दर्शन किया और दर्शन करने के पश्चात, ऋषि मुनि एकान्त स्थलियों पर विद्यमान हो गए, अपने अपने आसन पर विद्यमान हो करके, भारद्वाज मुनि का आसन अपने में अद्वितीय था, उन्होंने जब अपने में, शान्त मुद्रा में मुद्रित हो गए। 24.06. 1987।

204 शनि मण्डल की विशालता

तेरह लाख पृथ्वियाँ गति कर रही थीं, इसी प्रकार नाना प्रकार की किरणें, प्रत्येक पृथ्वी को तपायमान कर रहीं थी। वही किरणें, इस पृथ्वी

को तपा रही हैं, वही किरणें द्वितीय पृथ्वी को तपा रही हैं, वहीं किरणें तृतीय पृथ्वी को तपा रही हैं। वही किरणें जा करके चन्द्रमा को शीतलवत बना रही हैं। वही किरणें मंगल को प्रकाश दे रही हैं। वही किरणें बुध में प्रवेश कर रही हैं। वही किरणें बृहस्पति में प्रवेश करती हुई, बृहस्पति को आभायुक्त बना रही हैं।

वे किरणें भिन्न भिन्न प्रकार की आभाओं में रत्त हो रही हैं। आगे ऋषियों ने विचारा, एक शनि मण्डल है, उस शनि मण्डल के अन्तर्गत जब उसके गर्भ में पहुंचे अपनी समाधिष्ठ के द्वारा तो एक ही शनि मण्डल के गर्भ में जब प्रवेश किया तो एक ही शनि मण्डल इतना विशाल मण्डल है जिसको पांच सूर्य प्रकाशित कर रहे हैं पांच सूर्यों का प्रकाश उसे प्रकाशित कर रहा है और वह प्रकाश आ रहा है वह प्रकाश में रत्त हो रहा है। वहाँ प्रकाश की प्रतिभा अस्वत हो रही है। 05.03.1984

205 शनि मण्डल

शनि मण्डल है, एक स्वाति नक्षत्र है और एक जेठाय नक्षत्र है, इन तीनों मण्डलों का त्रिकोण बन जाता है, जिस काल में त्रिकोण बनता है, उस काल में यह प्राण जल में प्रवेश करके अग्नि की धाराओं में, अग्नि जलों में प्रचण्ड हो जाती है, उस समय जल प्लावन आते रहते हैं। 03.05.1980

206 सम्भूति लोक

हमारा जो जीवन है, हमारे जीवन में जो एक मानवीय धारा हैं, उन धाराओं को हमें जानने के लिए सदैव तत्पर रहना हैं। तो वेद का ऋषि कहता है, कि यह जो संसार है, इसका सम्भूति लोकों से इसका समन्वय है।

तो यह कैसी अनुपम वृत्ति हैं, तो इसीलिए यह अनुशसित हो रहा हैं, सूर्य, चन्द्रमा सब अनुशासित हैं। अग्नि अपने में अनुशासित हो रही हैं, परन्तु कहीं अग्नि काष्ठ में रहने वाली है, कहीं अग्नि समुद्रो में प्रदीप्त होने वाली हैं, जिसे बड़वानल नाम की अग्नि कहते हैं, कहीं वही अग्नि, सूर्य में ऊर्ज्वा बन करके रहती हैं, वही अग्नि है, जो वह लोक लोकान्तरों में, भ्रमण करा देती है। गति वायु से हैं, अग्नि से तेज प्राप्त होता हैं, और उसी तेजस को ले करके, हम लोक लोकान्तरों का शमन करने लगते हैं। 21.02.1988

207 सप्तर्षि मण्डल

हमारे यहाँ सप्तर्षि जो मण्डल है सप्तर्षियों का वर्णन आता है। प्रत्येक ऋषि, प्रत्येक देवता का ज्ञाता था, इसीलिए उनका नाम गौतम, कश्यप, भारद्वाज, विश्वामित्र, जमदाग्नि इत्यादि कहलाते थे। वह सप्तर्षि मण्डल कहलाता था। उन ऋषियों का मण्डलों से समन्वय रहता था। हमें नो द्वार के ऊपर संयम करते हुए याग करना है। यह संसार रूपी याग है। हमें इसके ऊपर अनुसन्धान करना है।

परन्तु ब्रह्मचारियों ने कहा प्रभु! आठ होता क्यों होने चाहिएं? उन्होंने कहा कि आठ वसु कहलाते हैं, जिनमें प्राणी रहते हैं अथवा रमण करते हैं, वह आठ वसु हैं। वह आठ होता होने चाहिएं। इस संसार में आठ वसु कहलाते हैं।

एक एक आकाश गंगा है। एक एक आकाश गंगा में करोड़ों करोड़ों स्वाति नक्षत्र कहलाते हैं। करोड़ों करोड़ों सूर्य मण्डल कहलाते हैं। यह आठ वसु कहलाते हैं। आठ की आभा में रमण किया गया है। आठ इसलिए क्योंकि आठ वसु हैं जो पार्थिव तत्त्व वाले लोक हैं, वह आठ वसु कहलाते हैं जिसमें प्राणी रहते हैं। जैसे मंगल है, बुध है, स्वाक्रीति है, शनि है। इसमें सबमें पार्थिव प्राणी रहते हैं और अग्नेय प्राणी शृंगि मण्डल में रहते हैं और जल आभायित परमाणु चन्द्र मण्डल में रहते हैं। 01.10. 1981

208 अश्वपति कालीन वैज्ञानिक सुधन्वा

महाराजा अश्वपति के काल में एक सुधन्वा नामक वैज्ञानिक हुआ, वह वैज्ञानिक गुरुदेव के समीप विराजमान होता, तो उस वैज्ञानिक की इतनी सूक्ष्म उड़ान थी कि वह अपने यन्त्रों से अन्तरिक्ष में जो शब्द जाता थ, उसका चित्र यन्त्र से लेता था, परन्तु जब वह वैज्ञानिक चित्र लेता था, परन्तु उन प्राणियों का भी लेता रहता, जो माँस इत्यादि का भक्षण करते हैं, जो असुर वाक्यों को पान करते हैं, जो असुर परम्परा से हैं, जितना भी पान करते, उनके चित्रों को वह अपने यन्त्रों में, नाना प्रकार की भूमिका को स्वीकार करते थे। वैदिकता में जिनका आहार शुद्ध और पवित्र होता है जब उनकी तरंगें आती, उन तरंगों में सतोगुण होता था, और जिनके आहारों में अशुद्धवाद है, उसमें रक्तभरी विचारधारा की तरंगें उनको दृष्टिपात आती रहती थी।परन्तु जब यह विचार आते हैं तो नाना वैज्ञानिक उनके द्वार पर आते और वह सुधन्वा अपने विचारों से यह कहते कि महान बनो, विचित्र बनो, यह सम्पदा हैं, अन्यथाआहार मानव को समाप्त कर जाएगा हे मानव! तू अपने विचारों के मार्ग पर ले जा, वेद यही तो कहता है जब यह विचार आता है जिनते भी संसार के महापुरूष होते हैं उन महापुरूषों का जो आहार होता है वह पवित्र होता है। 06.03.1976

209 अश्वपति कालीन विज्ञान

महाराजा अश्वपति के यहाँ एक वैज्ञानिकों का समूह, हमारे वैदिक साहित्य में दो प्रकार के विज्ञान की उपलब्धि हुआ करती है, एक हमारे

यहाँ भौतिक विज्ञान कहलाता है, भौतिक विज्ञान क्या कहता है?भौतिक विज्ञान में नाना प्रकार का अणुवाद, परमाणुवाद अपने में रत रहा है, उसी आधार पर मानव एक एक परमाणु का मिलान करता है, दूसरे परमाणु का सुगठित करा देता है, उसी से नाना प्रकार की सूर्य से ऊर्ज्वा ले, रके पृथ्वी से गुरुत्व ले करके, अग्नि से तेजोमयी ले करके, आपोमयी ज्योति बनाते हुए, वह नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करने लगता है, वह निर्माणवेता बन जाता है, कोई यान इस चन्द्रमा में जाने वाला है, कोई यान सूर्य की परिक्रमा कर रहा है, कोई यान ध्रुव की परिक्रमा कर रहा है, कोई यहाँ से मंगल में प्रवेश कर रहा है, नाना प्रकार का विज्ञान मानव के समीप उपलब्धियों में अभ्योदय होता रहता है।

वैदिक साहित्य में नाना प्रकार का विज्ञान अपने में रत रहा है, उस विज्ञान के लिए परम्परागतों से मानव प्रयास करता रहा है, कि विज्ञान पराकाष्ठा पर होना चाहिए, विज्ञान अपने में महानता की ज्योति वाला होना चाहिए, तो जब यह विचार आता रहता है कि हमारा विज्ञान अपने में यह भौतिकवाद कहलाता है। 19.05.1987

210 राजा अश्वपति

राजा अश्वपति ने कहा प्रभु! मेरे यहाँ आपका निरीक्षण होना चाहिए, प्रायः मेरा जो क्रियाकलाप है, वह प्रायः ऊर्ध्वा में है अथवा नही तो इसमें महर्षि वैश्म्पायन के कथन से, वह राजा के राष्ट्र में, उन्होंने भ्रमण किया और राजा के राष्ट्र में सुसज्जित रूपों से, प्रत्येक प्राणी अपने में क्रियाशील हो रहा है, राजा भी स्वयं अपने में क्रियाशील है, तो महर्षि वैश्म्पायन, अपने में मग्न हो करके, वह तुम्हारा राष्ट्र अश्व से घिरा हुआ है, अश्व कहते हैं, राजा को और राज्यता से प्रत्येक राष्ट्र अपने में पिरोया हुआ दृष्टिपात हुआ, तो कर्तव्यवाद की एक वेदी को अपनाना ही यह राष्ट्र का सबसे प्रथम, मुख्यतः एक कर्तव्य होता है, जैसे यज्ञशाला में यज्ञमान का क्रियात्मक और मानवीयता से उसका जीवन घिरा हुआ होना चाहिए, मन, कर्म और वचन से घिरा हआ होना चाहिए, जैसे पृथ्वी संसार की नाभि के रूप में कही जाती है, यह पृथ्वी नाभि के रूप में इस प्रकार है, जैसे मानव के, जैसे माता के शरीर में एक नाभि है, और नाभि से, प्रत्येक नाभि का समन्वय होता है, उसी नाभि का समन्वय, माता जब बलवती होती है, तो युवा काल को प्राप्त होती है, तो हम जैसे शिशु उसमें विद्यमान होते हैं, तो वह नस नाड़ियों के द्वारा ही, वह नाभि माध्यम बन करके, वह इस मानव शरीर की नाभि के रूप में मानी गई है। माता बाल को जन्म देती है, परन्तु वह अपने में अमृत को प्रदान करती हुई, वह शिशु को ऊर्ध्वा में गति बनाने में लगी रहती है। 21.02.1988

211 विद्यालयों की आचार संहिता

आचार संहिता के सम्बन्ध में विद्यालयों के ऊपर दायित्व रहता है, और विद्यालयों का दायित्व आचार्यों के समीप, आचार्य जन विद्यालय को ऊँचा बनाते हैं, महान ऊँचा बनाते हैं, ब्रह्मचारी अपने, विद्यालयों को ऊँचा बनाते हैं, तो हमारी आचार संहिता होनी चाहिए। महर्षि वैशम्पायन मुनि महाराज ने अपने बड़े सुन्दर विचित्रमयी विचार देते हुए कहा हे राजन! तेरे राष्ट्र में एक समाज यौगिक होना चाहिए, तेरे राष्ट्र में एक समाज बुद्धिजीवी ऐसा होना चाहिए, जिससे तेरे राष्ट्र में कुरूतियां न हो, तेरा राष्ट्र, एक दूसरे में पिरोया हुआ एक दूसरे में, एक दूसरे को स्वीकार करता चला जाये। 21.02.1988

212 करोड़ों वर्ष पूर्व के वैज्ञानिक

यह जो विज्ञान है, यह ऋषियों के मस्तिष्क में रहा है। प्रायः वैज्ञानिक इसका अनुसन्धान करते आए हैं। इससे भी पुरातन काल में महर्षि दालभ्य जी के काल में, उससे भी पूर्व काल महर्षि शांडिल्य मुनि का काल था और महात्मा आचार्य अष्टावक्र का काल था। वायु मुनि महाराज का काल था। आज से करोड़ों वर्षों पूर्व का काल था। उस काल का साहित्य यह कह रहा है कि उनके काल में वे बड़े महान वैज्ञानिक थे। जहाँ योगी थे, वहाँ वैज्ञानिक भी थे। प्रकृति को अच्छी प्रकार जानते थे। 25.02.1972।

213 महात्मा कपिल मुनि

महात्मा कपिल मुनि महाराज जहां दर्शनों के मर्म को जानते थे, वहां वह तपस्वी थे। वहां वह अस्त्रों शस्त्रों की विद्या भी जानते थे।महात्मा कपिल मुनि महाराज ने कहा हे राजन! तुम इस प्रकार वृतियां में रत न हो, उन्होंने कहा कि हम संग्राम करेंगें। उन्होंने कहा बहुत प्रिय।उन्होंने जय और विजय को आज्ञा दी, जय और विजय उनके यहां, वह धनुर्यागी, वह याग करते थे। धनुर्विद्या में महात्मा कपिल जी बड़े पारायण थे, वह धनुर्विद्या के आधार पर, उन्होंने संग्राम करना प्रारम्भ किया। जैसे ही एक दो यन्त्रों का, जय और विजय ने वहां प्रहार किया, तो उनकी बहुत सी सेना नष्ट हो गई, सर्वत्र सेना जब नष्ट हो गई, तो राजा को यह प्रतीत हुआ, कि तुम्हारी सेना नष्ट हो गई, और वह जय और विजय ने की है। राजा ने जब यह स्वीकार कर लिया, तो महात्मा कपिल मुनि के आश्रम में सब विद्यमान हैं, और राजा सगर और उनके पुत्र असंमजस दोनों ने वहां से गमन किया और भ्रमण करते हुए, महात्मा कपिल के आश्रम में पंहुचें, महात्मा कपिल ने राजा को दृष्टिपात

करके, उनका नमः किया, अभिवादन किया और उन्होंने अपनी गाथा का वर्णन किया।
राजा सगर ने यह कहा हे भगवन! आप मेरे आश्रम में गमन कीजिए, उन्होंने कहा मैं इस समय नही जा पाऊंगा। उन्होंने कहा मेरी सेना किसने नष्ट की हैं? उन्होंने कहा यह जय और विजय ने की हैं, तुम्हारा अश्वमेध याग करने वाला, अश्व भी यहीं विद्यमान हैं। जब वे जय और विजय से संग्राम करने के लिए तत्पर हुए, तो उस समय महात्मा कपिल ने कहा हे जय और विजय! तुम यन्त्रों में बड़े पारायण हो, तुम यन्त्रों से नाना लोकों की आभा में रत रहने के लिए तत्पर रहे हो, तो जब यहां पृथ्वी मण्डल पर, महात्मा कपिल और भी नाना प्रकार के जैसे विद्यालय से जहां परमाणु विद्या पर अन्वेषण होता रहता था, मंगल मण्डल में मृचिका नामक एक वैज्ञानिक था, जो अपने विद्यालय में धनुर्विद्या में पारायण था।
तो एक समय महात्मा कपिल ब्रह्मचारी जय और विजय, अपने यन्त्रों के द्वारा मंगल मण्डल में पंहुचें, क्यांकि यन्त्रों में विद्यमान हो करके लोकों में गमन किया जाता है, जब वह मंगल में पहुंचे, तो जय और विजय ने छह छह माह तक मंगल मण्डल में जा करके अस्त्रों शस्त्रों की विद्या का अध्ययन किया था, और उसी विद्या को ले करके, जब महात्मा कपिल मुनि महाराज से उन्होंने अपना वर्णन कहा कि प्रभु! हमने इस विद्या को जान लिया है, वह ऐसे यन्त्रों का निर्माण करना जानते थे, जिन यन्त्रों को वायुमण्डल में त्यागने से ही सर्वत्र वायुमण्डल शून्य गति को प्राप्त हो जाता है, और प्राणी मात्र शून्यता को प्राप्त हो जाता है।
महात्मा कपिल ओर ब्रह्मचारियों की इस प्रकार की वार्ता प्रारम्भ होती है ओर वह भी लोक लोकान्तरों में रमण करते रहते हैं जय ओर विजय ने परास्त कर दिया और यह कहा हे राजन! अब तुम क्या करना चाहते हो? 18.05.1990

214 महात्मा कपिल का समुद्र मंथन

राजा सगर ने भी याग के लिए अपना क्रियाक्लाप बनाया, महात्मा कपिल मुनि महाराज के यहां आध्यात्मिकवाद और भौतिक याग दोनों होते रहे है। महात्मा कपिल मुनि महाराज के यंत्रों में विद्यमान हो करके, समुद्र की रसातल पर, समुद्र की आभा में रत होते रहे, और समुद्रों का जो विज्ञान है, उनके समीप रहा।परन्तु महात्मा कपिल मुनि महाराज के यहां जय और विजय ने ऐसे ऐसे यन्त्र निर्माणित किए थे, एक समय यंत्रों में विद्यमान हो करके और उन्होंने वहां से गमन किया। 05.12.1987

215 जय विजय की शुक्र

तो वह महात्मा कपिल मुनि आश्रम से जय और विजय दोनों एक समय शुक्र की यात्रा से आ रहे थे, वह शुक्र की यात्रा में जब विश्वस्त हो गए, तो वह उसी यन्त्र में अपने को वृत्त करते हुए, अपने जैसी वार्ता को उन्होंने स्वीकार किया, बुध में, मंगल में, शुक्र में, लोक लोकातंरों की यात्रा होती रहती थी, उस यात्रा का फलस्वरूप बड़ा विचित्र बन गया। हमारे यहां धनुर्याग प्रायः होता रहा है धनुर्यागों के यंत्रों में विद्यमान हो करके वह ब्रह्मचारी अपने में खिलवाड़ करके लोकों की यात्रा करते रहे। 05.12.1987

216 महर्षि तत्त्वमुनि की विज्ञानशाला से बहत्तर लोकों की यात्रा यान

एक समय मैं, ब्रह्मचारीजन, पूज्य वशिष्ठ मुनि महाराज भ्रमण करते हुए कजली वनों में पहुँचे, महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ, जो यहाँ विद्यमान है। इनका विज्ञान बड़ा विचित्र है, इनके यहाँ विज्ञान की उड़ान को दृष्टिपात करके हम महर्षि तत्त्वमुनि महाराज के विद्यालय में पहुँचे। महर्षि तत्त्वमुनि महाराज दद्दड़ गोत्र में उनका जन्म हुआ है और वह दो सौ, चौरासी वर्ष के अखण्ड तपश्चर, जब उनके समीप पहुँचे तो उन्होंने कहा कि आओ, भगवन! और उन्होंने अपने विद्यालय का निरीक्षण कराया।
जब विद्यालय को दृष्टिपात कराने लगे, तो उनके विद्यालय में एक विज्ञानशाला थी, जिस विज्ञानशाला में नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, उन्होंने उस समय एक उपग्रह में अपना यन्त्र, अन्तरिक्ष में त्यागा। और जब अन्तरिक्ष में उड़ाने उड़ने लगे तो, उसमें श्वेताशुन्धि और व्रेतकेतु ब्रह्मचारी दोनों ने विद्यमान होकर के उड़ान उड़ी हैं और उड़ान उड़ते ही सबसे प्रथम वह चन्द्रमा में पहुँचा। चन्द्रमा से उड़ान उड़ी तो वह बुध में चला गया, और बुध से उड़ान उड़ी तो वह शुक्र में चला गया, और शुक्र से उड़ान उड़ी तो वह मंगल मण्डल में चला गया और मंगल मण्डल से उड़ान उड़ी, तो कृतिका मण्डल में चला गया, और कृतिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो रोहिणीकेतु मण्डल में चला गया और रोहिणी केतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह अरुन्धती मण्डल में, चला गया अरुन्धती मण्डल से उड़ाने उड़ी तो वशिष्ठ मण्डल में चला गया, और वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ी, तो विश्वाकृतिका मण्डल में चला गया, जब कृतिका मण्डल में यान पहुँचा तो उसने जब वहाँ से उड़ान उड़ी तो व्रेतकेतु मण्डल और व्रेतकेतु मण्डल से वह स्वाति और मूल नक्षत्रों में चला गया, तो वहाँ उसकी गति भिन्न हो गई। तो मैंने यह दृष्टिपात किया कि बहत्तर लोकों काभ्रमण करके वह यान पुनः महर्षि तत्त्वमुनि महाराज के विद्यालय में प्रवेश कर गया। 27.01.1988

217 महर्षि तत्व मुनि महाराज

महर्षि तत्व मुनि महाराज के विद्यालय से यान गमन करता है, ब्रह्मचारी उसमें विद्यमान हैं, पृथ्वी से उड़ान उड़ता है, चन्द्रमा में गमन करता है, चन्द्रमा से उड़ान उड़ता है, तो वह शुक्र में चला जाता है शुक्र से उड़ान उड़ता है तो वह बुध में चला जाता है, बुध से उड़ान उड़ता है तो मंगल में चला जाता है, मंगल से उड़ान उड़ता है, तो मृचिका मण्डल में चला जाता है, मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो घटोत मण्डल में चला जाता है, घटोत मण्डल से उड़ान उड़ता है तो वृतिका मण्डल में चला जाता है वृतिका मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो व्रेतकेतु मण्डल में चला जाता है, व्रेतकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो वह बहत्तर लोकों का गमन करके, वह पुनः ऋषि के आश्रम में यान गमन करता रहा है। 11.04.1987

218 बहत्तर लोकों की यात्रा

महर्षि तत्व मुनि महाराज ने कहा कि हमारे विद्यालय में एक समय ब्रह्मचारियों ने, वैज्ञानिकों ने, एक यन्त्र का निर्माण किया था। जो यन्त्र में विद्यमान हो करके लोक लोकातंरों की, जैसे एक माला बनी हुई है, उस माला में वह यन्त्र गमन करने लगता है, जैसे हमारा यन्त्र नाना लोकों में क्या, बहत्तर लोकों की यात्रा किया करता था, और यात्रा अब भी होती रहती है।

तो वेद का ऋषि कहता है, आचार्य तत्व मुनि महाराज ने कहा कि हमारे यहां एक यन्त्र का निर्माण हुआ था, जिस यन्त्र में विद्यमान हो करके, ब्रह्मचारी ज्ञान विज्ञान के वांगमय में प्रवेश करते हुए, वह सबसे प्रथम चन्द्रमा की यात्रा में सफलता को प्राप्त हुए, और चन्द्रमा से ही अपनी उड़ान उड़ते हुए, वह बुध की यात्रा में सफलता को प्राप्त हुए और बुध से जब यह उड़ान उड़ते थे, तो बुध से वह शुक्र से प्रवेश कर गए थे और शुक्र से जब उन्होंने उड़ाने उड़ी, तो वह मंगल मडंल में प्रवेश कर गए और मंगल से जब उड़ान उड़ी तो, भृचिका मण्डल में प्रवेश कर गए और भृचिका मण्डल से जब उड़ान उड़ी तो श्वेतभानु मण्डल में प्रवेश कर गए श्वेतभानु मडंल से उड़ाने उड़ी, तो वृशि मडंल में प्रवेश कर गए और वृशि मडंल में उड़ान उड़ी, तो वह अरुण्धति मण्डल में चले गए अरुण्धति मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वशिष्ठ मण्डल में प्रवेश कर गए, तो इस प्रकार वह बहत्तर लोको का भ्रमण करने के पश्चात वह यन्त्र पृथ्वी मण्डल पर आ गया। 28.11.1987

219 आचार्य तत्व मुनि महाराज

महर्षि तत्व मुनि महाराज के विद्यालय में, ऐसे ऐसे यन्त्र विद्यमान थे, उनका निर्माण होता था, एक यन्त्र में विद्यमान हो करके, वह लोक लोकान्तरों की यात्रा करते थे, जब आज ब्रह्मचारी ऊर्ध्वा में गति करने लगे, विज्ञानशाला में, अपनी विज्ञान की तरंगों को जानने लगे, यन्त्रों में पारंगत होने लगे।तो एक समय, ब्रह्मचारी भारद्वाज और रेंगणी व्रेतकेतु ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारी श्वेति तीनों ब्रह्मचारियों ने, आचार्य तत्व मुनि महाराज ने, अपने यान में विद्यमान कर दिया और यान में विद्यमान करते हुए यान उनके आश्रम से, विद्यालय की उड़ान उड़ता है और उड़ान उड़ता हुआ, पृथ्वी के आश्रम से उड़ान उड़ करके, सबसे प्रथम वह चन्द्रमा में चला गया और चन्द्रमा में उसने उड़ान उड़ी, तो बुध में चला गया, बुध से उड़ान उड़ी शुक्र में चला गया, शुक्र से उड़ान उड़ी, तो मंगल में चला गया, मृगल से उड़ान उड़ी, तो मृचिका मण्डल में चला गया, मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो रोहिणी मण्डल में चला गया, रोहिणी मण्डल से उड़ान उड़ी, तो कृतिका मण्डल में चला गया, कृतिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वृति सोमकेतु मण्डल में चला गया, सोमकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो ब्रह्म नक्षत्र में प्रवेश हो गया, वहाँ से उड़ान उड़ी तो पुष्य नक्षत्र में चला गया, पुष्य नक्षत्र से उड़ान उड़ी, तो वशिष्ठ मण्डल में चला गया, वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह अरूण्धति मण्डल में चला गया, अरूण्धति मण्डल से उड़ान उड़ी, तो मृचिका सोमकेतु मण्डल में प्रवेश कर गया, मूल यह कि बहतर लोकों का भ्रमण करके, वह यान पुनः उसी तत्व मुनि महाराज के आश्रम में प्रवेश कर गया।

आस्था वाला विज्ञान ऋषि मनियों के मस्तिष्कों में परम्परगतों से नृत करता रहा है, नाना प्रकार के यानों का निर्माण, अणुविद्या के ऊपर अध्ययन होता रहा, अग्नि के ऊपर नाना प्रकार का अन्वेषण होता हुआ तो तत्व मुनि महाराज अपने ब्रह्मचारियों को एक पंक्ति में विद्यमान करके उन्हें नाना प्रकार की शिक्षा प्रदान करना नाना प्रकार के तत्व की वार्ता प्रगट करना परमाणु विद्या के क्या आध्यात्मिकवाद नाना प्रकार के विज्ञान की वह अध्ययन करते। 16.07.1988

220 महर्षि तत्व मुनि

ये तीन प्रकार के परमाणुओं को ले करके, विज्ञानवेत्ता अपने में उड़ान उड़ना प्रारम्भ कर देता है, और विज्ञानवेता कहाँ तक उड़ान उड़ता है? कि लोक लोकान्तरों की यात्रा में रमण करने लगता है, वह लोकों की यात्रा में रत्त होने लगता है, जब महर्षि तत्व मुनि महाराज के यहाँ नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, तो रावण के विधाता कुम्भकरण भी, उसी विद्यालय में अध्ययन करते रहे और श्वेताश्वेतर भी वही अध्ययन करते रहे।महर्षि भारद्वाज रावण का जितना भी वंशलज था, वह उनके गुरु कहलाते थे, विज्ञानवेता थे, और विज्ञान की धाराएँ, वह प्रायः रमण कराते रहते थे। 05.03.1991

तो जब वह विराजमान होते, तो विज्ञान की आभा में सदैव रत्त रहे हैं और विज्ञानवेता बन करके, विज्ञान की नाना प्रकार की तरंगों को

जानने में सदैव तत्पर रहे है, तो जब महर्षि तत्त्व मुनि महाराज अपने बड़े, पूर्ण विज्ञान वेता थे, अपने में पूर्ण आध्यात्मिकवेता थे, अपने में शांतिप्रियता में रत्त रहने वाले थे, वह दर्शनो के गर्भ में जब प्रवेश करते, तो दर्शन ही प्रतीत होने लगता था, और जब विज्ञान के गर्भ में पहुंचे, तो पृथ्वी के गर्भ में जाना, पृथ्वी के गर्भ में, कितनी दूरी पर कौन सा खनिज है, और कहाँ कहाँ पर क्या क्या क्रियाकलाप कर रहा है, यह सर्वत्र ऋषि मुनि अपने में जानते रहे हैं, तो ऋषि तत्व मुनि महाराज के यहाँ नाना प्रकार का अध्ययन प्रक्रियाओं में रत्त होता रहा है। 05.03. 1991।

221 वेदज्ञ महर्षि तत्त्व मुनि महाराज

तो महर्षि तत्त्व मुनि महाराज ने एक यन्त्र का निर्माण किया, क्योंकि उनके यहाँ जहाँ विद्यालय में वेद मंत्रों का अध्ययन कराया जाता और वेद मंत्रों में, उसकी वेद के द्वारा यज्ञशाला का भी निर्माण होता रहता था, और यज्ञशाला में जो तरंगें उत्पन्न होती, उन तरंगों को अपने हृदय की तरंगों से मिलान करना और उनके ऊपर अन्वेषण करना और अन्वेषण करके, उसको क्रियात्मकता में लाने का सदैव क्रियाकलाप बना रहा, उन्होंने एक समय ब्रह्मचारियों का सम्मेलन किया और नाना ब्रह्मचारी सर्वत्र विद्यमान हो गए और उन्होंने ब्रह्मचारियों के मध्य में एक वाक् उद्गीत रूप में गाया, ऋषि तत्त्व मुनि महाराज ने कहा ब्रह्मचारियों! तुम अपने को पूर्णता को ग्रहण किए रहते हो, और तुम सदैव ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहते हो, वेद के मार्ग में गमन करते रहते हो, क्योंकि वेद का जो मार्ग वह प्रकाश मार्ग हैं। क्योंकि वेद नाम ही प्रकाश का है, जो मानव के अंतः करणीय जीवन में महान कहलाता है, उसी का नाम वेदज्ञ कहलाया जाता है। तो हे ब्रह्मचारियों! मैं तुमसे यह ओर जानना चाहता हूँ, कि जब तुम इस विज्ञान में, यह वेद का अध्ययन करके, तुम्हें कोई वस्तु प्राप्त होती है, उन्होंने कहा प्रभु! जो आप हमें निर्णय कराते हैं, उस निर्णय किए हुए, पर हम अपने में मनन करते हैं। 05.03.1991।

222 तत्व मुनि महाराज

तत्व मुनि महाराज के आश्रम में ब्रह्मचारियों ने एक मंत्र का प्रातःकालीन नैतिकता की शिक्षा होना, उसमें याग होना और याग के पश्चात कुछ ब्रह्मचारी विद्यमान हो जाते, और वह जो याग में से तरंगे उत्पन्न हो रही हो, उसको दृष्टिपात करते और दृष्टिपात करके गुरु के समीप विद्यमान हो करके कहते प्रभु! ये तरंगे उत्पन्न हुई और इन तरंगों में इतनी विशाल विशाल तरंगें हैं, कि हम उसे ऊर्ध्वा नहीं प्राप्त कर सकेंगे। महात्मा तत्त्व मुनि महाराज ने कहा हे ब्रह्मचारियो! यही तो हमारे यहाँ विज्ञानवेता की, एक महानता कहलाती है, क्योंकि विज्ञान इसी से तो उत्पन्न होता है, क्योंकि तीन ही प्रकार के परमाणु है, जिनको परमाणु, जल के परमाणु, पृथ्वी में मिलान कर दिए जाते हैं तो पिण्ड बन जाता है, और वही जब अग्नि के परमाणु उसमें समावेश कर दिए जाते हैं, भावना की जाती है, तो उन्हीं भावना के देने से यन्त्र का निर्माण हो जाता है।

याज्ञिक पुरुष होते हैं, याग करते हैं, और याग करके मन, कर्म और वचन को एकाग्र करके जब हूत करते हैं, तो उनका चित्र, अंतरिक्ष में गमन करने लगता है, वह द्यौ में प्रवेश हो जाता है। क्योंकि अग्नि द्यौ में रत्त रहने वाली है, तो इस प्रकार, जब तुम्हारी भावनाओं की पुट इसमें प्रविष्ट हो जाती है, तो हम यंत्रों का निर्माण करना प्रारम्भ कर देते हैं, तो इस प्रकार जब उन्होंने अपना मंतव्य दिया, तो विज्ञानवेताओं ने वहाँ ओर अनुसंधान किया। 05.03.1991

223 महर्षि तत्व मुनि के यहाँ विज्ञान चर्चाएँ

महात्मा तत्व मुनि महाराज के यहां ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे तो अध्ययन करके उनके यहां नाना प्रकार की प्रयोगशाला थी, जहाँ उनके यहां चन्द्र विज्ञान और सूर्य विज्ञान के ऊपर अन्वेषण होता रहता था, वहाँ नाना लोक लोकान्तरों में यातायात के यन्त्रों का निर्माण भी होता रहा है।

महर्षि तत्व मुनि महाराज के यहां नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, और वह ब्रह्मचारी अपने में अध्ययन की वृतियों में रत हो करके, वह नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करते, जब निर्माण करते, तो एक समय महात्मा तत्व मुनि महाराज ने कहा ब्रह्मचारियों! जाओ, उड़ान उड़ो और लोक लोकान्तरों में जाने का प्रयास करो, महर्षि भारद्वाज और महर्षि सोमकेतु के पुत्र वृधि और दोनों ब्रह्मचारी अपने यन्त्र में विद्यमान हो गए और विद्यमान हो करके ऊर्ध्वा में उड़ाने उड़ने लगे, जब वह उड़ान उड़ने लगे, तो पृथ्वी मण्डल से जब उन्होंने उड़ान उड़ी, तो सबसे प्रथम वह मंगल मण्डल में, वह सबसे प्रथम बुध में पंहुचे और बुध मण्डल से उड़ान उड़ते हुए शुक्र में पंहुचे और शुक्र से उड़ान उड़ करके, वह मंगल में पंहुचे, वायुमण्डल में प्राण ऐसा ही वायुमण्डल है, जैसा पृथ्वी तल पर वायुमण्डल कहलाता है, मंगल में नाना प्रकार के वैज्ञानिक अपने में नाना विज्ञानशालों में रत रहे हैं, और इसी प्रकार आगे उड़ान उड़ते हुए, वह मंगल से उड़ान उड़ी, तो वह स्वाति में चले गए और स्वाति मण्डल से जब उड़ान उड़ी, तो वहाँ जल प्रधान वाले प्राणी रहते हैं, स्वाति से उड़ान उड़ करके, वह व्राणकेतु मण्डल में पंहुचे और व्राणकेतु मण्डल में वहाँ का वायुमण्डल भी उन्होंने दृष्टिपात किया और आगे उड़ान उड़ते हुए वह वशिष्ठ मण्डल में

पंहुचे वशिष्ठ मण्डल में भी पार्थिव तत्व प्राणी गमन करते है। और अरूण्धति मण्डल में और वशिष्ठ मण्डल में प्रायः दोनों में इस प्रकार का प्रायः नृत होता रहा है।
तो जब अरूण्धति मण्डल से आगे उन्होंने उड़ान उड़ी, तो वह त्रेतकेतु मण्डल में चले गए और त्रेतकेतु मण्डल से जब उन्होंने उड़ान उड़ी, तो वह रोहिणीकेतु मण्डल में प्रवेश हो गए और रोहिणीकेतु मण्डल से उड़ान उड़ करके, कृतिका मण्डल में और वहाँ के वायुमण्डल को दृष्टिपात करके, वह ब्रह्मचारी तत्व मुनि महाराज के आश्रम में, जो अध्ययन करते थे, वह बहत्तर लोकों का भ्रमण करते हुए और वहाँ के नगर को दृष्टिपात करके, वह पुनः शनै शनै इस पृथ्वी मण्डल पर आ गए तो उन्होंने तत्वमुनि ने प्रश्न किया, हे ब्रह्मचारियों! तुमने कहाँ कहाँ भ्रमण किया उन्होंनें कहा प्रभु! आपको हम तो निर्णय कराते रहे हैं, अब हम अमुक मण्डल में चले गए है, अमुक मण्डल में चले गए हैं, अमुक प्राणियों से वार्ता प्रगट कर रहे हैं। 17.04.1991

224 महाराजा तत्व मुनि

महाराजा तत्व मुनि महाराज के यहाँ, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में जाने वाले यन्त्रों का भी अध्ययन करते रहे हैं, और उनके आधार पर, उनका अध्ययन करना, वह अपने यानों में विद्यमान हो करके, लोक लोकान्तरों की यात्रा करते रहे। 08.05.1991

225 महर्षि भारद्वाज का यान बहत्तर लोकों में

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिस यान में विद्यमान हो करके ब्रह्मचारिणी शबरी, ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धि ये तीनों यान में विद्यमान हुए और महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ से उस यान से, सबसे प्रथम पृथ्वी से उड़ान उड़ी तो सबसे प्रथम वह चन्द्रमा में पहुँचा और चन्द्रमा से उड़ान उड़ करके वह बुध में पहुँचा। बुध से उड़ान उड़ी तो शुक्र में चला गया और शुक्र से उड़ान उड़ी तो वही यान मंगल में पहुँचा और मंगल से उड़ान उड़ी तो मृचिका मण्डल में चला गया और मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी तो श्वेतकेतु मण्डल में प्रवेश कर गया और श्वेतकेतु मण्डल से उड़ान उड़ीं तो व्रहेतकेतु मण्डल में उन्होंने प्रवेश किया और व्रहेतकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी तो अरुन्धती मण्डल में चला गया और अरुन्धती मण्डल से उड़ान उड़ी तो वशिष्ठ मण्डल में चला गया वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ी तो रोहिणी केतु मण्डल में चला गया, रोहिणी केतु मण्डल में उड़ान उड़ी तो मृचिका मण्डल में चला गया, मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी तो रेणकेतु स्वाति मण्डल में प्रवेश कर गया।
तो उस यान ने बहत्तर लोकों में भ्रमण करने के पश्चात लगभग पांच वर्ष, पंद्रह माह, पंद्रह दिवस में वह यान भारद्वाज के आश्रम में पुनः प्रवेश कर गया। इतने समय तक यान रमण करता रहा। ब्रह्मचारी बहुत सी प्राण विद्याएं जानते थे। खेचरी मुद्रा में, शीतली प्राणायाम भिन्न भिन्न प्रकार के प्राणों की विद्या को जानते थे इससे अपनी पोषक, अपने शरीर को स्थिर करते रहते थे। 31.12.1987
ब्रह्माण्ड में तारामण्डलों की माला बनी हुई है, तारामण्डल अपने में बड़े विचित्र दृष्टिपात आते हैं, जब भी विज्ञानवेत्ता संसार में पनपा है, तो उस विज्ञानवेता ने गुरूत्व परमाणु के ऊपर अन्वेषण किया है। चाहे वह इस पृथ्वी मण्डल का प्राणी है चाहे वह मंगल इत्यादि मण्डलों का प्राणी क्यों न हो, उन्होंने अनुसंधान किया है, गुरुत्व परमाणु के ऊपर। क्योंकि गुरूत्व, तेजोमयी और तरलत्व ये तीन ही परमाणु होते है। वायु उनको गति देता है और अन्तरिक्ष अवकाश को प्राप्त हो जाते है।

226 महर्षि भारद्वाज मुनि का विज्ञान

जब भारद्वाज मुनि के यहाँ ब्रह्मचारी सुकेता और ब्रह्मचारी कवन्धि दोनों अन्वेक्षण कर रहे थे और अन्वेक्षण करते हुए, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ते रहते थे। तो गुरूत्व, तरलत्व और तेजोमयी तीन प्रकार के परमाणुओं से वाहनों का निर्माण होता है और वह निर्माण हो करके उस पर विद्यमान हो करके लोक लोकान्तरो में भ्रमण करते।
मुझे वह काल स्मरण है जब महर्षि भारद्वाज मुनि का यन्त्र अन्तरिक्ष में रमण कर रहा है वह यहाँ ऋषि के आश्रम से अपनी उड़ाने उड़ता है वह सबसे प्रथम चन्द्रमा में जाता है चन्द्रमा से अपनी उड़ाने उड़ता हुआ वही यान, बुध में जाता है बुध से उड़ान उड़ करके वही शुक्र में जाता है शुक्र से उड़ान उड़ता है वही मंगल में जाता है मंगल से उड़ान उड़ता है तो स्वाति नक्षत्र में जाता है जब स्वाति से अपनी उड़ान उड़ता है तो वशिष्ट मण्डल में चला जाता है और वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ता है तो अरूणधति में प्रवेश हो जाता है अरूणधति मण्डल से उड़ान उड़ता है तो मृचिका मण्डल में प्रवेश करता है मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो रोहिणीकेतु मण्डल में प्रवेश करता है रोहिणीकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता है तो मूलकेतु मण्डल में प्रवेश कर जाता है मूलकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो भामान्तु मण्डल में प्रवेश करता है, भामान्तु मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो अखलेश्वर मण्डल में प्रवेश कर जाता है और अखलेश्वर मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ तो मौन मृचिका में प्रवेश हो जाता है और मौन मृचिका से अपनी उड़ान उड़ता है तो रोहिणी में प्रवेश हो जाता है जब रोहिणीमण्डल से उड़ान उड़ता है तो वह केतु मण्डल में चला जाता है केतु मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ वह बहत्तर लोकों का भ्रमण करके वह पुनः

भारद्वाज के आश्रम में प्रवेश होता रहा है। 26.06.1992

227 भारद्वाज मुनि का यन्त्रवाद

नाना प्रकार का यन्त्रवाद भारद्वाज मुनि ने जिनके यहाँ वृहस्पति में जाने वाले यान थे, मंगल में जाने वाले यान थे और उन्होंने ध्रुव यान के ऊपर निर्माण किया, परीक्षण चल रहा था, और भी नाना लोक लोकान्तरों में उनकी प्रति प्रायःथी। ऋषि ने यह सिद्ध किया कि विज्ञान होना चाहिए, दोनों प्रकार का, परन्तु आध्यात्मिकवाद इसलिए अनिवार्य है क्योंकि उसमें विवेकी पुरुष होने चाहिए। 07.08.1973

228 महर्षि भारद्वाज का वेद से विज्ञान विचार

महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने एक समय विचारा कि वेदमन्त्र यह कहता है, कि यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है, गाथा का अभिप्रायः क्या है, उसको निर्णय करा रही है, कि उसका कोई सूत्र, उसका कोई ऊर्ध्व वृत्तियां हैं, उन्होंने कहा कि यह पृथ्वी अपने में पूर्ण, वेद का मन्त्र यह कहता है, कि तीस लाख पृथ्वियां हैं, जो एक माला के रुप में रहती है।और उन पृथ्वियों का यदि कोई सूत्र है, तो वह सूर्य कहलाया जाता है। वह सूर्य उनका सूत्र कहलाया जाता है।तीस लाख पृथ्वियां सूर्य मण्डल में समाहित हो रही हैं, उन्हें वह धारण कर रहा है, उन्हें वह माला बना करअपने में पिरो रहा है, उन्हें ऊर्ज्वा दे रहा है, सता प्रदान कर रहा है। वही द्यौ से प्रकाश ले करके इनको प्रकाशित कर रहा है। 78.92.028

229 महर्षि भारद्वाज मुनि लोक यात्रा

तत्व मुनि महाराज की आयु दौ सौ पचासी वर्ष की आयु थी, विज्ञानशालाओं में नृत्त करने लगे, और विचारने लगे। परन्तु ऊँची ऊँची उड़ाने उड़ने लगे, परन्तु जब परीक्षा फल आता, किसी से मैं प्रथम रहता, तो किसी में द्वितीय रहता है। परन्तु महर्षि तत्व मुनि महाराज के यहां एक यन्त्रशाला थी, ऐसी विज्ञानशाला थी, कि उसमें यन्त्रों में विद्यमान हो करके, अन्तरिक्ष में उड़ान उड़ते रहते थे भारद्वाज मुनि बोले कि प्रभु! मैं एक समय यन्त्रों में विद्यमान हो करके, अन्तरिक्ष की यात्रा करने लगा।और सबसे प्रथम मेरा जो यान था, वह चन्द्रमा में पंहुचा और चन्द्रमा से उड़ाने उड़ता हुआ, वह बुध में चला गया और बुध से उड़ान उड़ी, तो मंगल में चला गया और मंगल से उड़ान उड़ी, तो शुक्र में चला गया और शुक्र से उड़ाने उड़ी तो मृचि मण्डल में प्रवेश हो गया और मृचि मण्डल से उड़ान उडी, तो रेणकेतु मण्डल में प्रवेश कर गया, और रेणकेतु मण्डल से उन्होंने उड़ान उड़ी, तो वह स्वाति नक्षत्र में चला गया, और स्वाति नक्षत्र से उड़ान उड़ता है, तो अरूणधति मण्डल में चला गयाऔर अरूणधति मण्डल से उड़ता हुआ, वह वशिष्ठ मण्डल में प्रवेश कर गया, इस प्रकार कृतिका मण्डलों में प्रवेश कर गया, और कृतिक मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ, वह रोहिणीकेतु मण्डल में चला गया, और रोहिणी केतु मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ, मृचिवासु मण्डल में प्रवेश हो गया, और मृचिवासु मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ, वह कृतिभानु मण्डल में प्रवेश कर गया, तो वेद का ऋषि कहता है प्रभु! मैं बहत्तर लोकों का भ्रमण करता हुआ, वह यान आचार्य के आश्रम में प्रवेश कर गया। 78.92.065

230 महर्षि भारद्वाज द्वारा लोकों की तीन स्थलियों पर विज्ञानशाला

भारद्वाज मुनि महाराज, जो विज्ञानशाला से उड़ान उड़ करके, अपनी स्थली पर, भारद्वाज मुनि के काल में तीन स्थली ऐसी थीं, जिस पर जा करके भारद्वाज मुनि के शिष्यगण अनुसन्धान करते रहते थे, और वह अनुसन्धान कैसे थे? पृथ्वी और चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति में एक स्थल बना हुआ था। एक स्थल जहां मंगल और बुध की, जहाँ दोनों स्थलियों का विज्ञान होता था, एक स्थल वहाँ नियुक्त किया गया था। एक स्थान जहाँ शुक्र और श्वेनकेतु एक मण्डल कहलाता है, दोनों का जहाँ मिलन होता है, वहाँ एक स्थली का निर्माण किया गया था। तो भारद्वाज का यान उड़ान उड़ता, तो चन्द्रमा और पृथ्वी की आकर्षण शक्ति में स्थिर हो जाता। वही मंगल और बुध की स्थलियों पर स्थिर हो जाता, परन्तु यान अन्तरिक्ष में रहते रहे। उनकी आयु भी विशाल मानी गयी। 13.11.1983

231 महर्षि भारद्धाज

हमारे यहाँ भारद्धाज जैसा वैज्ञानिक उस काल में भी नहीं था। परन्तु जिनकी निष्ठा, जिनका केवल अनुसन्धान ही कार्य था। नित्य प्रति वह योगाभ्यास करते, उनका एक कर्म था, अपने जीवन का, सबसे प्रथम वह प्रातःकाल में अपने आसन को त्यागते, जब रात्रिकाल में, जब भी निद्रा से उठ जाते थे, निद्रा से दूर होते ही, उसी काल में गायत्री छन्दों का पठन पाठन करते थे, चिन्तन करते थे धातुओं को जानना उनका कर्तव्य था। प्रातःकाल होता, अपने कार्यों से निवृत्त हो करके, उसके पश्चात उनका ब्रह्मयज्ञ चलता था। ब्रह्मयज्ञ के पश्चात, देवयज्ञ करते थे, देव यज्ञ करने के पश्चात भोजन इत्यादियों का पान करने के पश्चात, उनकी एक अनुसन्धानशाला थी। विचारकशाला थी, उसमें परमाणुवाद का निरीक्षण करते थे। यन्त्र बनाते, यन्त्रों का निर्माण चलता रहता था। वे सर्व यन्त्र, महाराज भारद्धाज ने भगवान राम को अर्पित कर दिए थे। जब रावण से संग्राम हुआ था उनका। राजा रावण के यहाँ भी विशाल यन्त्र थे। क्योंकि रावण को, भी इस विद्या को, महर्षि भारद्वाज ने ही प्रदान की थी, वह शिक्षा, उसके पश्चात रावण ने कुछ महर्षि सोममुक से प्राप्त की थी। इसके पश्चात उन्होने ब्रह्मा से

भी यह शिक्षा ग्रहण की थी। रावण ने इस विद्या को लेकर के अपने राष्ट्र में विज्ञान का प्रसार किया। अपने पुत्रों को वैज्ञानिक बनाया और अपने विधाता कुम्भकरण को वैज्ञानिक बना दिया। 02.08.1970

आधुनिक काल में उनके प्रति एक प्रचलित वार्ता है कि कुम्भकरण छह माह की निद्रा में तल्लीन हो जाते थे और छह मास वह जागरुक रहते थे। ऐसा कहा जाता है, परन्तु ऐसा मुझे दृष्टिपात कराया गया था, कि महाराज कुम्भकरण पर्वतों पर अपनी अनुसन्धान शाला में छह मास के लिए चले जाते थे। छह मास में वह अपनी रात्रि के रूपों में, अपने को यह स्वीकार करते थे, मैं राष्ट्र में नहीं हूँ संसार में नहीं हूँ, मेरा कर्तव्य है कि अपनी अनुसन्धानशाला में विराजमान रहूँ। इतना विज्ञान उनके द्वारा था। मेघनाद को भी उन्होंने शिक्षा प्रदान की थी। कुम्भकरण जैसा वैज्ञानिक जिनका छह मास तक का अभ्यास था, वे संसार की वस्तुओं में लोलुप्त नहीं होते थे। अहः ऐसा उनका जीवन रहता था, वह राष्ट्र में आते, रावण को विज्ञानशास्त्रों में, उनके वैज्ञानिकों को शिक्षा देते। इस प्रकार उनका जीवन छह मास के लिए लुप्त रहता था। छह मास के लिए उनका जीवन संसार में, राष्ट्र में रहते थे। राष्ट्रीयकरण विचार विनिमय होता रहता था। इस प्रकार का विज्ञान हमारे यहाँ प्रायः रहा है। 02.08. 1970

232 महर्षि भारद्वाज व नारान्तक की विज्ञान चर्चाएँ

महर्षि भारद्वाज से एक समय रावण पुत्र नारान्तक ने एक वाक्य कहा कि हे भगवन्! हे गुरुदेव! आप हमारे पूज्य है। हमारे गुरुदेव हैं। मैं यह जानना चाहता हूँ कि आप की जो आभा है, जो विज्ञान है, यह चन्द्रमा तक सीमित रहता है, मंगल तक सीमित रहता है, शुक्र तक सीमित रहता है, और भी किसी लोक लोकान्तरों की यात्रा कर सकते हैं, अथवा नहीं? उन्होंने कहा तुम सर्वत्रता में ही भ्रमण कर सकते हो। शुक्र की यात्रा क्या तुम बृहस्पति की यात्रा भी कर सकते हो। परन्तु विचार यह है कि तुम्हें अपनी धाराओं को, अपने वातावरण को भी उसी प्रकार का बनाना होगा, जो वहाँ का वातावरण होता है। यदि वातावरण मानव के विपरीत हो गया तो मानव की मृत्यु प्रायः हो जाती है। द्वितीय लोक लोकांतरों में जाने से मानव की मृत्यु इसलिए होती है, क्योंकि वहाँ का वातावरण, वहाँ का वायु मण्डल, वहाँ का प्राण वायु, वहाँ का परमाणुवाद इतना दूषित हो जाता है, कि इस पार्थिव पिंड को यह जो लिंगमय शरीर माना है, यह उन परमाणुओं को अपने में समाहित नहीं कर सकता। इसीलिए प्रायः मानव की मृत्यु हो जाती है। प्राणान्त हो जाते हैं। क्योंकि वह परमाणु इतने शक्तिशाली हैं इतने महान है, अथवा यह भी विचार किया जा सकता है कि वह इतने शक्तिशाली नहीं है, जो इन परमाणुओं में मिश्रित हो करके, इन दोनों परमाणुओं का मिलान होकर, इन दोनों की शक्ति एक ही तुल्य, एक ही आत्मिक विचरण करती चलीं जाए। ऐसा हमारे यहाँ प्रायःमहर्षि भारद्वाज ने अपने शिष्य गणों से निर्णय कराया। 03.08.1971

233 महर्षि भारद्वाज का विज्ञान विमर्श

महर्षि भारद्वाज मुनि एक समय विराजमान थे और राजा रावण के पुत्र नारान्तक और राजा रावण के विधाता कुम्भकरण भी उस यज्ञशाला में विराजमान थे। यज्ञ कर रहे थे, कुछ अनुसन्धान चल रहा था। परमाणुओं का मिलान कर रहे थे।

तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने कुम्भकर्ण जी से एक वाक्य कहा था, कुम्भकरण का बाल्यकाल का नाम अश्विनीकेतु था। अश्विनीकेतु से वह प्रश्न कर रहे थे। परन्तु कुम्भकरण का नामोच्चारण इसलिए करने लगे, क्योंकि वह बलवान था, बलिष्ठ था, हृदय का विशाल था। जैसे कुम्भ में जल होता है, जल शीतल होता है, सौम्य होता है, उसी प्रकार उनका भी स्वभाव शीतल और सौम्य रहता था।

कर्ण का अर्थ श्रवण इन्द्रिय है। उसका मस्तिष्क इतना विशाल था, जेसे कि कुम्भ का आकार होता है, वह नाना प्रकार की वस्तुओं को श्रवण करने वाला कुम्भकरण था। महर्षि भारद्वाज उसे कहते थे।

तो कुम्भकरण में यह विशेषता थी कि वह निद्रा को बहुत सूक्ष्म पान करते थे। उन्हें निद्रा बहुत ही सूक्ष्म आती थीं। उन्हें कम क्यों आती थी? क्योंकि वे सदैव अनुसधान में लगे रहते थे। एक समय महर्षि भारद्वाज मुनि ने यह कहा कि आज तुम्हें यन्त्र में विराजमान हो करके उड़ान उड़नी है। तो उन्होंने कहा प्रभु! आज्ञा हो। 11.03.1972

234 महर्षि भारद्वाज

एक समय महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने एक यान का निर्माण किया। उस यान को स्वांकेतिचक्राण यन्त्र कहा जाता था।

वह मंगल की परिक्रमा करता रहता था और मंगल की परिक्रमा के लिए महर्षि भारद्वाज ने तथा राजा रावण के विधाता कुम्भकर्ण ने और नाना वैज्ञानिकों ने उसमें ऐसे परमाणुओं को एकत्रित किया जो परमाणु वायु की धाराओं में रमण करते रहते हैं। अग्नि की धाराओं में रमण करते रहते हैं। अन्तरिक्ष की धाराओं में रमण करते रहते हैं। जो विद्युत के रूपों में प्रकाशित होते रहते हैं, उन परमाणुओं को एकत्रित करने के लिए, जब उन्होंने एक यान बनाया, यान बनाकर के ऋषि ने ऐसा कहा है कि यह जो यान है, इसकी जो आयु है हमने दसहजार वर्षों की आयु का यह यान वायु मण्डल में त्याग दिया है। 25.02.1972।

235 वैज्ञानिक महर्षि भारद्वाज

तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने ऐसे यानों को वायु मण्डल में प्रसारित कर दिया था, जो लगभग मंगल के आँगन में, मंगल की परिक्रमा करता रहा, जैसे 'आस्वाति मण्डल' है, वह मंगल के पूर्व ऊर्ध्व के भागों में रमण करता है। परन्तु उसकी परिक्रमा उसने प्रारम्भ की। एक यान दो मण्डलों की परिक्रमा करने वाला हो। ऐसा यान महर्षि भारद्वाज ने इतनी लंबी आयु का वायु मण्डल में प्रसारित कर दिया था। 25.02.1972।

236 ऋषि

ऋषि कहते ही उसको हैं, जो अनुसन्धान करने वाले हों, जो इस प्रकृति के परमाणुओं पर अपना अनुसन्धान, अपना अधिपत्य करने वाले हों। उसे ही ऋषि कहा जाता है, तपस्वी कहा जाता है। 24.02.1972

237 महर्षि भारद्वाज का चित्रावली यन्त्र

हमारे यहाँ पुरातन काल में महर्षि भारद्वाज ने एक चित्रावली बनाई थी और वह चित्रावली सर्वत्र राष्ट्रों में परिणत रही। उन चित्रावलियों पर एक स्थल बनाया जाता था। उस स्थल पर चित्रण होता और वह लगभग सौ सौ योजन दूरी, इससे भी अधिक सहस्रों सहस्रों योजन दूर उनकी चित्रावली यन्त्रों में प्रायः रमण करने लगती थी। आज भी वह विराजमान हैं। आज भी वह विकास कर रही है। वर्तमान काल में भी वह चित्रावली दृष्टिपात आती है। परन्तु आज का विज्ञान उस धारा पर नहीं पहुंचा है। महर्षि भारद्वाज ने एक यन्त्र बनाया था। उस विज्ञान में उसको ''चरितकेतु'' यन्त्र कहते थे। उस यन्त्र में यह विशेषता थी, कि एक हजार वर्ष पूर्व जिसका निधन हो गया है, यदि उसके रक्त का एक बिन्दु प्राप्त हो जाता था, तो उस यन्त्र में यदि उस रक्त के एक बिन्दु को लाया जाए तो उसका, उस यन्त्र में वास्तविक चित्र दृष्टिपात आने लगता था। परन्तु वह विज्ञान अब कहाँ ह? 25.02.1972।

इस प्रकार का यान अथवा यन्त्र महर्षि भारद्वाज श्वेतकेतु और महर्षि दालम्भ जी ने बनाया था। एक मानव के उस स्थान पर से चले जाने के पश्चात भी लगभग पांच घड़ी के पश्चात, उस मानव का चित्र लिया जा सकता था। आज वह विज्ञान कहाँ है? जब मैं इन यान एवं यन्त्रों पर विचार विनिमय करता हूँ, तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि आज का विज्ञान न होने के तुल्य है, और जो है उस विज्ञान का तो दुरुपयोग हो रहा है। 25.02.1972।

238 महर्षि भारद्वाज

महर्षि भारद्वाज की जो उड़ान थी, यह पृथ्वी से लेकर, सूर्य मण्डल तक रहती थी। सूर्य मण्डल से ऊर्ध्वागति का जो मण्डल है, वह बृहस्पति है, और ध्रुव कहलाया जाता हैं, उन मण्डलों तक की उनकी क्रियात्मक उड़ान थी।

उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था, जिस समय वे छब्बीस वर्ष की अवस्था के थे, और वह यन्त्र किस प्रकार का था, वह यन्त्र ऐसा था कि उस यन्त्र का आस्वाति समुद्रों से प्रहार करते ही समुद्रों में से, इस प्रकार का तेज उत्पन्न होता था, इस प्रकार का उत्थान होता था उससे मेघ बन जाते थे और मेघ बन करके, वृष्टि प्रारम्भ हो जाती थी, हर प्रकार के यानों का निर्माण भी होता रहा, क्योंकि यह परमाणुवाद ही तो हैं, जिस अग्नि से, जिन परमाणुओं से सूर्य समुद्रों को तपाता हैं, इसी प्रकार वैज्ञानिक द्यौ और अग्नि के उन शक्तिशाली परमाणुओं को एकत्रित करके, मेघों को उत्पन्न कराने वाला भी बन सकता हैं ये वेदों में विद्याएं आती है।

ऋषि ने वृष्टिकेतु यन्त्र का निर्माण किया था।हमारे यहाँ ऋषि मुनि भिन्न भिन्न प्रकार की उड़ान उड़ते रहे हैं। 11.03.1972

239 महर्षि भारद्वाज

महर्षि भारद्वाज विराजमान थे। भारद्वाज ने कहा बोलो ब्रह्मचारी! तुम्हें जितना कार्य मैंने निर्णित किया था, वह कर लिया ? ब्रह्मचारी बोला प्रभु! मैंने किया तो है, परन्तु मेरा अन्तरात्मा तो यह कह रहा है कि मुझे अपने को प्रभु को समर्पित कर देना चाहिए।

महर्षि भारद्वाज ने कहा हे ब्रह्मचारी! यह जो तुम कार्य कर रहे हो प्रकृति विज्ञान का, इसको भौतिकवाद तो कहते ही हैं, परन्तु इसकी जानकारी तुम्हारे मस्तिष्क में होनी चाहिए और क्रियात्मक भी तुम्हारे मस्तिष्क में होना चाहिए। उसके पश्चात तुम प्रभु का विज्ञान भी क्रियात्मक जानने का प्रयास करो। ब्रह्मचारी ने आश्चर्य के इन शब्दों को ग्रहण किया और यानों में परिणत हो गया और यानों का निर्माण करने लगे। इस सम्बन्ध में ऋषि ने ऐसा कहा कि हम जब यज्ञशाला में विराजमान होते है, तो हमारे द्वारा यन्त्र होते हैं और वे यन्त्र वायुमण्डल में से परमाणु को लेते हैं, और उन परमाणुओं को एकत्रित करते हैं, उन परमाणुओं से हम यानों का निर्माण करते हैं। 01.08.1973

240 महर्षि भारद्वाज

नाना प्रकार का यन्त्रवाद, महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ बृहस्पति में जाने वाले यान थे, मंगल में जाने वाले यान थे, और भी नाना लोक

लोकान्तरों में उनकी गति प्रायः थी।परन्तु ऋषि ने यह सिद्ध किया कि विज्ञान दोनों प्रकार का होना चाहिए। 06.08.1973

241 महर्षि भारद्वाज का दो मण्डलों की परिक्रमा करने वाला यान

एक समय महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने एक यान का निर्माण किया। उस यान को 'स्वांकेति चक्राण' यन्त्र कहा जाता था। वह मंगल की परिक्रमा करता रहता था, और मंगल की परिक्रमा के लिए महर्षि भारद्वाज ने राजा रावण के विधाता कुम्भकरण ने तथा नाना वैज्ञानिकों ने उसमें ऐसे परमाणुओं को एकत्रित किया, जो परमाणु वायु की धाराओं में स्मरण करते रहते हैं, अन्तरिक्ष की धाराओं में रमण करते रहते हैं, जो विद्युत के रूपों में प्रकाशित होते रहते हैं। उन परमाणुओं को एकत्रित करने के लिए जब उन्होंने एक यान बनाया, यान बना करके, ऋषि ने ऐसा कहा है कि यह जो यान है, इसकी जो आयु है हमने दस हजार वर्षों की आयु का यह यान वायु मण्डल में त्याग दिया है। तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने ऐसे यानों को वायु मण्डल में, प्रसारित कर दिया था जो लगभग मंगल के आँगन में मंगल की परिक्रमा करता रहा, जैसे आस्वाति मण्डल है, वह मंगल के पूर्व ऊर्ध्व के भागों में स्मरण करता है, परन्तु उसकी भी परिक्रमा उसने प्रारम्भ की। एक यान दो मण्डलों की परिक्रमा करने वाला हो, ऐसा यान महर्षि भारद्वाज ने इतनी आयु का वायु मण्डल में प्रसारित कर दिया था।

ऋषि कहते ही उसको है, जो अनुसन्धान करने वाले हों। जो इस प्रकृति के परमाणुओं पर, अपना अनुसन्धान, अपना अधिपत्य करने वाले हों। उसे ही ऋषि कहा जाता है, तपस्वी कहा जाता है। 04.05.1976

242 भारद्वाज ऋषि को 13 लाख वर्ष पूर्व तक का विज्ञान बोध

आज का वैज्ञानिक इन यन्त्रों को निर्माण करने जा रहा है। भारद्वाज मुनि महाराज ने तेरह लाख वर्षों पूर्व इन यन्त्रों को जान लिया था। परन्तु आज का वैज्ञानिक विश्लेषण कर रहा है। ऐसे ऐसे यन्त्र जिससे राष्ट्र का राष्ट्र भस्म हो जाए। ऐसा यन्त्र की राष्ट्र अपने आँगन में विराजमान है, और लगभग एक सहस्र योजन की दूरी पर वह राष्ट्र को भस्म करके वह यन्त्र विश्वस्त हो सकता है। ऐसा वैज्ञानिक बन रहा है, परन्तु हे भोले हे प्राणियो! यदि तुम विज्ञान को ऊँचा बनाते चले जा रहे हो, इसका मैं कोई विरोधी नहीं हूँ, परन्तु जहाँ प्राणियों के नष्ट होने के लिए प्रयास किया जाता है। अरे, वहाँ प्राणियों के जीवन रक्षा का भी तो कोई प्रयास होना चाहिए। प्राणीमात्र में जीवन होना चाहिए और वह जीवन कैसे आएगा? वह विवेक से आएगा, आध्यात्मिकवाद से आएगा। 24 05 1976

परन्तु जहाँ इन नाना प्रकार की तरंगों को, चित्रावलियों को जानता रहता है वह बाह्य मन और प्राण के द्वारा जानता है, अपने मस्तिष्क से बाह्य जगत में ले जाता है मस्तिष्कों की तरंगों को बाह्य जगत में, जो नाना तरंगें जैसे सूर्य से उत्पन्न होती हैं, अग्नि से धारा का जन्म होता और वायु से होता है, उनको एक दूसरे में मिलान करता हुआ यन्त्रों का निर्माण कर रहा है, वह वायुयान बना रहा है, वह चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है, मंगल में जा रहा है।

महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ विज्ञानशाला में एक समय ब्रह्मचारी सुकैता अपने यान में विराजमान हो करके, वह पृथ्वी से उड़ान उड़ करके सबसे प्रथम वह शुक्र में जाता है, शुक्र से चन्द्रमा में जाता है, चन्द्रमा से उड़ान उड़ करके मंगल में जाता है एक ही यान के द्वारा।

ऋषि कहता है एक यान से बहत्तर लोकों में रमण करके वह यान पृथ्वी पर आ जाता है। तो ब्रह्मचारी सुकेता जमदग्नि गोत्र में उनका अवरोह था, ब्रह्मचारी सुकेता यानों का भ्रमरण करके, मन के द्वारा नाना लोकों का भ्रमण करके ऊँची उड़ान उड़ना, यह तो आश्चर्य नहीं, परन्तु यह बाह्य जगत है, इसमें क्या है, इसमें राष्ट्रीयता है, इसमें विनाश है, इसमें अन्धकार है क्योंकि एक ही अंग को जाना है, प्रभु की प्रथम महान प्रतिभा को नहीं जाना है, और प्रतिभा को वह प्राणी जानता है, जो बाह्य और आंतरिक दोनों का समन्वय करता हुआ, जो इस संसार को जानता है, आध्यात्मिकवादी है और जो बाह्य जगत को जानता है, वह अपनी अंतरात्मा की चेतना से वंचित रहता है, वह भौतिकवादी कहलाता है, इसलिए भौतिकवाद और आध्यात्मिकवाद दोनों का समन्वय हो करके जो प्राणी इस संसार में उड़ान उड़ता है, वह उड़ान महान उड़ान होती है, और जो एक ही अंग को ले करके उड़ान उड़ता है, वह उड़ान ऐसी होती है भौतिकवाद की उड़ान उड़ने वाले प्राणी की जो उड़ान है, वह विचित्र तो है, परन्तु उस विज्ञान का, उस जानकारी का दुरुपयोग होने का संदेह बना रहता है।

तो वास्तव में उसका दुरुपयोग हो जाता है, अग्नि के कांड हो जाते हैं, वही विज्ञान अग्नि में परिणित हो जाता है, दुरुपयोग हो करके वह राष्ट्र का समाज का घातक बनकर के अग्नि अग्नि बिखर जाते हैं। जो यंत्रों में स्थिर कर देते हैं और जब आध्यात्मिकवाद भौतिकवाद दोनों को ले करके मानव गति करता है विज्ञान की गति करता है और आंतरिक जगत से ब्रह्माण्ड को जानता है उसमें नम्रता का जीवन होता है, उसमें विज्ञान का दुरुपयोग नहीं होता, वह एक महान कहलाता है, वह परमात्मा के द्वार पर चला जाता है। 06.06.1976

243 महर्षि भारद्वाज की विज्ञान चर्चा

एक समय भारद्वाज मुनि महाराज के यहाँ ब्रह्मचारी सुकेता और महर्षि पनपेतु मुनि महाराज की कन्या शबरी इन तीनों ने एक यन्त्र का निर्माण किया था। वह यन्त्र इस प्रकार का था कि महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज के आश्रम में उसका निर्माण हुआ। उस यन्त्र में विद्यमान

हो करके महाराजा कुम्भकरण बहत्तर लोकों का भ्रमण किया करते थे। वह जब पृथ्वी से उड़ान उड़ते, तो चन्द्रमा में जाते, चन्द्रमा से उड़ान उड़ी तो मंगल में चले गए, मंगल से उड़ान उड़ी, तो बुध में चले गए, बुध से उड़ान उड़ी, तो शुक्र में चले गए। एक ही यन्त्र में विद्यमान हो करके बहत्तर लोकों का भ्रमण किया करते थे। महाराजा रावण के यहाँ विज्ञान कितनी विशालता में परिणत होता रहा है। 01.10. 1981

244 महर्षि भारद्वाज मुनि के काल में तीन स्थली

महर्षि भारद्वाज मुनि के काल में तीन स्थली ऐसी थीं जिस पर जा करके भारद्वाज के शिष्यगण अनुसन्धान करते रहते थे और वह केसे अनुसन्धान थे? जो पृथ्वी और चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति में एक स्थल बना हुआ था। जहाँ मंगल और बुध दोनों का मिलान होता है। एकस्थल वहाँ नियुक्त किया गया था, एक स्थान जहाँ शुक्र और श्वेणकेतु एक मण्डल कहलाता है, दोनों का जहाँ मिलन होता है वहाँ एक स्थली का निर्माण किया गया था। तो भारद्वाज का यान उड़ान उड़ता तो चन्द्रमा और पृथ्वी की आकर्षण शक्ति में स्थिर हो जाता। वही मंगल और बुध की स्थलियों पर स्थिर हो जाता। परन्तु यान अन्तरिक्ष में रहते रहे। उनकी आयु भी विशाल मानी गयी। 01.10.1984

245 महर्षि भारद्वाज कि विज्ञान शाला

भारद्वाज की विज्ञानशाला में भगवान् राम विद्यमान हैं, लक्ष्मण विद्यमान हैं। और ब्रह्मचारी सुकेता, देवर्षि नारद मुनि महाराज विद्यमान हैं। चारों ने भारद्वाज की अध्यक्षता में एक गोष्ठी की, और विचारा कि अन्तरिक्ष में ऊर्ध्वागति वाले यान का निर्माण कर सकते हैं, तो ब्रह्मचारी सुकेता एक यान में विद्यमान हो गए, ब्रह्मचारी कजली वेश और ब्रह्मचारी रोहिणी केतु तीनों यान में विद्यमान हो करके, पृथ्वी से उड़ान उड़ी और लगभग ढाई घड़ी में चन्द्रमा में चला गया। और ढाई घड़ी चन्द्रमा में जाने के पश्चात वही यान ढाई घड़ी में बृहस्पति मण्डल में पहुंच गया और ढाई घड़ी के पश्चात वह मंगल में चला गया और मंगल की उड़ान उड़कर अंडज में चला गया। परिणाम यह कि वह यान बहत्तर लोकों का भ्रमण करके भारद्वाज की विज्ञानशाला में आ गया। यह विज्ञान हमारे ऋषि मुनियों के मस्तिष्क में ही नहीं, परन्तु क्रिया में रहता था। यह राष्ट्र की सम्पदा बन करके रहता था। क्योंकि विज्ञान राष्ट्र की एक सम्पदा है। राष्ट्र विज्ञान के ऊपर स्थिर रहता है। इस प्रकार का विज्ञान परम्परा से मानवीय मस्तिष्कों में रहा है, ऋषि मुनियों की आभा में रहा है। आज का वैज्ञानिक यन्त्र पृथ्वी के गर्भ में जाने के लिए तत्पर है, पृथ्वी के कुछ गर्भ को जाना है। 05.12.1986

246 महर्षि भारद्वाज का आश्रम

अरूण्धति मण्डल में वह वैज्ञानिक यन्त्र लगभग तीन माह रहा, वहां के वायुमण्डल को उन्होंने दृष्टिपात किया, वहां से उड़ान उड़ी तो वशिष्ठ मण्डल में क्या अरूण्धति से वशिष्ठ में पंहुचे, वशिष्ठ मण्डल का वायुमण्डल भी ऐसा ही प्रतीत हुआ, एक ऊर्ज्वा में एक प्राण सत्ता प्राप्त होती रही है, तो यान जब वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो वह म्रेतकेतु मण्डल में पंहुचा है तो म्रेतकेतु मण्डल में प्रवेश हो करके, वहां अग्नि तत्व की प्रधानता है, जिससे सूर्य का समन्वय माना गया है, वहां से भी उड़ान उड़ता है तो पुनत्रेति मण्डल में प्रवेश हो गया, जिसको जिस मण्डल में कुछ रहती है जब उस मण्डल में पंहुचे, तो लगभग वह छह माह तक मण्डल में रहे, वहां का वायुमण्डल शीतल है, वृचिका है, वहां पार्थिव तत्व और आपो तत्व दोनो में प्रधानता है, वहां से उड़ान उडता हुआ, वह यान बारह वर्षों में बहत्तर लोकों में भ्रमण किया, उस यान ने, तो बहत्तर लोकों में, बारह वर्षों तक यान ने भ्रमण किया। बारह वर्ष के पश्चात वह यन्त्र पुनः पृथ्वी मण्डल पर, महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में आ गया।

बहत्तर लोकों तक वह जा करके ऊर्ज्वा को प्राप्त करते चले गए हैं वह जीवन सत्ता उन्हें प्राप्त होती चली गई, वह जीवन सत्ता कहां नही हैं, वैज्ञानिक यौगिक क्षेत्रों में रत होता है ऐसा अनुभव में और भारद्वाज मुनि से भी ऐसा प्रतीत हुआ है। प्रत्येक मण्डल में, जहां भी कोई मण्डल है, जो किसी में पिरोया हुआ है, जैसे एक मानव मानव का साथी बना हुआ है, मानव, मानव में पिरोया हुआ है जैसे प्रभु की विचित्रता, यहीं तो दृष्टिपात आती है।माता से माता में पुत्र पिरोया हुआ है, और पिता में पुत्र पिरोया हुआ है, पुत्री पिरोयी हुई है, पति में पत्नी पिरोयी हुई है, और पत्नी पति में पिरोयी हुई है, इसी प्रकार यह पृथ्वी जीवन सत्ता में पिरोयी हुई है, नाना प्रकार के खाद्य और खनिज में पिरोयी हुई सी, दृष्टिपात आती है।जैसे मानव के शरीर में, प्रत्येक इन्द्रियां हैं, एक दूसरे में पिरोयी हुई है रूप को दृष्टिपात करते हैं नेत्र, और रूप को दृष्टिपात करने वाले नेत्र हैं।और वह मन के साथ में वह पिरोए हुए हैं वह रूप मन के द्वारा पिरोया हुआ है, मन के आगे चलते हैं।तो वह रूप क्रियात्मकता में परिणत होता है, वह रूप क्रियात्मकता में आ गया है और वही क्रिया में आ करके मैंभोगता बना है। 05.12.1985

247 महर्षि भारद्वाज की विज्ञान जिज्ञासा

तो, जब ऋषि ने यह वर्णन कराया, तो सर्वत्र उनकी विज्ञानशाला को, उन्होंने दर्शन किया और दर्शन करने के पश्चात, ऋषि मुनि एकान्त स्थलियों पर विद्यमान हो गए, अपने अपने आसन पर विद्यमान हो करके, भारद्वाज मुनि का आसन, अपने में अद्वितीय था। जब अपने में

शान्त मुद्रा में मुद्रित हो गए, तो महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज से महर्षि रेवक मुनि महाराज ने यह प्रश्न किया ऋषिवर! हम यह जानना चाहते हैं, कि जो विज्ञान आपने जाना है, नाना प्रकार की चित्रावलियों को जाना है, और आपने ब्राह्मस्त्र, वरूणास्त्र और ऐसे ऐसे यन्त्र हैं, जिस यन्त्र के प्रहार से, राष्ट्र के राष्ट्र भस्म हो सकते हैं, समद्रों का जल प्लावन के रूप में परिणत हो सकता है। तो प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं, कि यह जो विज्ञान आपने जाना है, और विज्ञान इससे पूर्व काल में भी हुआ है, और आपके यहाँ, क्योंकि आपने आपके वंशलज थे, क्योंकि भारद्वाज गोत्र बड़ा विशाल गोत्र रहा हैभारद्वाज गोत्रों में लगभग तुम्हारे ग्यारह सौ पचासवां वंशलज चल रहा है, और भारद्वाज का जो निकास हुआ है, वह हरितत गोत्रों से हुआ है, हरितत गोत्रों में इक्कीस हजार वंशलज समाप्त हो गए हैं, और हरितत गोत्रों का जो निकास हुआ है, वह वायु गोत्रों से उसका निकास हुआ है, और वायु गोत्रों में पच्चीस हजार पांच सौ बावन के लगभग, उतने वंशलज समाप्त हुए और वायु गोत्र का जो निकास हुआ, वह मरीचि गोत्रों से हुआ है, मरीचि गोत्रों से भी इतने वंशलज समाप्त हो गए हे प्रभु! और मरीचि गोत्रों का जो निकास हुआ है, वह ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से हुआ है, और तुम्हारा जो गोत्र चला आ रहा है, वह बड़ा विचित्र हैऔर तुम्हारे गोत्रों में भी विज्ञानवेता कोई नही हुआ, सब ब्रह्मवेता हुए हैं, ब्रह्मनिष्ठ हुए हैं, हम यह जानना चाहते हैं कि आपके हृदय में जा इस प्रकार विज्ञान की उपलब्धि हुई है, उसके मूल में क्या हैं?वह कहां से प्राप्त हुई है? 24.06.1987

248 भौतिक और आध्यात्मिक वैज्ञानिक महर्षि भारद्वाज

भारद्वाज मुनि जब विद्यालय में अध्ययन करते रहते थे, उनका नाम ब्रह्मचारी श्वेताश्वेतर भारद्वाज था, जो महर्षि तत्व मुनि महाराज के द्वारा अध्ययन करते रहते थे। तो एक समय उनके यहाँ नाना प्रकार के जो अणु विद्या, परमाणुओं को जानने वाले, लोक लोकान्तरों में जाने वाले यन्त्रों का आविष्कार होता रहता था, तो उस विद्यालय में, यन्त्रों में विद्यमान हो करके, नाना ब्रह्मचारी लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ते रहते थे, लोक लोकान्तरों में जाना, यह यातायात बनाना, यह सर्वत्र परम्परागतों से हमारे यहाँ विज्ञान में एक मानवीयत्व माना गया है, जहाँ योगाभ्यास करने वाला, योगीजन लोक लोकान्तरों की यात्रा करता है, इसी प्रकार यन्त्रों के द्वारा भी लोक लोकान्तरों में मानव रत रहा है। तो भारद्वाज मुनि के यहाँ एक यन्त्र का निर्माण हुआ था, बहुत पुरातन काल हो गया है, जिसमें महर्षि श्वेताश्वेतर भारद्वाज और उसके सहयोगी बनें, उसमें महर्षि तत्व मुनि महाराज और एक यज्ञदत नाम के ब्रह्मचारी भी अध्ययन करते थे, यज्ञदत और श्वेताश्वेतर और रेंगणी वृतिका और उद्दालक गोत्र में शिकामकेतु मुनि महाराज, शिकामकेतु ब्रह्मचारी भी अध्ययन करते थे, उनकी विज्ञान में बड़ी विचित्र उड़ाने रही हैं, उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था, जिस यन्त्र में विद्यमान हो करके वह उड़ान उड़ते रहते थे। सबसे प्रथम पृथ्वी मण्डल से आश्रम से, विद्यालय से, वह जब उड़ान उड़ते, तो सबसे प्रथम वह मंगल में चले जाते थे, उन्होंने कहा मंगल से ऊँचे भी कोई लोक है, सबसे प्रथम निचले लोक में जाना चाहते हैं। तो तत्व मुनि महाराज ने उन्हें व्यक्त कराया और वेद के मन्त्रों के द्वारा धातु पिपाद को जाना गया, तो सबसे प्रथम जब उन्होंने उड़ाने उड़ी, तो उड़ान उड़के सबसे प्रथम वह चन्द्रमा में चले गए, चन्द्रमा से उड़ान उड़ी, तो वह बुध में चले गए, बुध से उड़ाने उड़ी, शुक्र में चले गए, शुक्र में उड़ाने उड़ी तो मंगल में चले गए और मंगल से उड़ाने उड़ी, तो रेणकेतु मण्डल में चले गए, रेणकेतु मण्डल से उड़ाने उड़ी, तो मृचिका मण्डल में चले गए, मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह अरूण्धति मण्डल में प्रवेश कर गए, अरूण्धति मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वशिष्ठ में चले गए, वशिष्ठ से उड़ान उड़ी, तो कृतिका मण्डल में प्रवेश कर गए, कृतिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो रोहिणी केतु मण्डल में चले गए, रोहिणी केतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वृतिका मण्डल में प्रवेश कर गए, इस तरह वे बहत्तर लोकों का भ्रमण करते हुए, वह अपने ही कक्ष में रमण करता हुआ वह तत्व मुनि के विद्यालय में पुनः प्रवेश कर गया। तो यह विज्ञान अपने यहाँ बड़ा सार्थक रहा है, विद्यालयों में इसके ऊपर अन्वेषण होता रहा है और वैदिक मन्त्रों को ले करके अपने में एक एक शब्द, एक एक तरंग का, दूसरी तरंग का समन्वय करते हुए, वह प्रत्येक वेदमन्त्र की प्रतिभा निहित रहती है, क्योंकि : वह अग्नि में ही विद्यमान है, जिसके ऊपर हमारे आचार्यजन भिन्न भिन्न प्रकार का अध्ययन करते रहे है। दो प्रकार के विज्ञान की प्रतिभा हमारे यहां प्रायः वैदिक साहित्य में मानी गयी है, जब भी वेदमन्त्र के ऊपर अध्ययन करना प्रारम्भ किया, तो दोनों प्रकार के ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा का जन्म हुआ। सबसे प्रथम हमारे यहां आध्यात्मिकवाद उसके पश्चात भौतिक विज्ञान या यह उच्चारण किया जा सकता है, कि सबसे प्रथम हमारे यहां भौतिक विज्ञान माना गया है, और भौतिक विज्ञान के पश्चात आध्यात्मिकवाद का प्रारम्भ होता है, हमारे यहां जितना भी ज्ञान और विज्ञान है, चाहे वह अन्तरिक्ष में गमन करने वाली प्रतिभा हो, चाहे वह पृथ्वी के गर्भ में रमण करने वाली हो, चाहे अणु और परमाणु के रूप में रत करने वाली हो, जिस भी काल में मानव ने गम्भीर अध्ययन किया है, वह भौतिक विज्ञान के मार्ग से हो करके आध्यात्मिकवाद में प्रवेश होता रहा है। क्योंकि आध्यात्मिक विज्ञान में तब तक मानव प्रवेश नही हो जाता है, जब तक वह भौतिक विज्ञान को अच्छी प्रकार न जान लें, उसके विशाल स्वरूप को अपने में घटित न कर लें, तब तक वह आध्यात्मिक विज्ञान में प्रवेश नही कर सकता। हमारे यहां परम्परागतों से नाना प्रकार के यागों का वर्णन आता रहता है, परन्तु उसमें भिन्न भिन्न प्रकार के याग हैं जैसे

अग्निष्टोम याग का वर्णन है, वाजपेयी याग का वर्णन है, ओर भी जैसे अश्वमेध और अजामेध नाना प्रकार के यागों का चयन होता रहा है। 04.07.1987

249 महर्षि भारद्वाज के यन्त्र

महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा प्रभु! यह यन्त्र है और यह यन्त्र जब मेरे आश्रम से उड़ान उड़ता है।तो यह सबसे प्रथम पृथ्वी मण्डल की उड़ान उड़ करके, यह चन्द्रमा में प्रवेश करता है, और चन्द्रमा से उड़ान उड़ता हुआ, यह बुध में प्रवेश कर जाता है, और जब बुध में चला जाता है, तो बुध से शुक्र में प्रवेश कर जाता है, शुक्र से मंगल मंगल में प्रवेश कर जाता है, मंगल से उड़ान उड़ता है, तो मृचिका मण्डल में प्रवेश कर जाता है, मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ, वह स्वाति मण्डल में चला जाता है, स्वाति मण्डल में उड़ान उड़ता हुआ, रेणकेतु मण्डल में चला जाता है, रेणकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो मानकेतु मण्डल में उड़ान उड़ता है, तो मान कृतिका मण्डल से उड़ान उड़ करके, यह अरूण्धति मण्डल में चला जाता है, अरूण्धति मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो वशिष्ठ में चला जाता है, वशिष्ठ से उड़ान उड़ता है, तो रोहिणीकेतु मण्डल में चला जाता है, रोहिणीकेतु मण्डल से उड़ान उड़ करके, यह गन्धर्व मण्डल में चला जाता है, गन्धर्व से उड़ान उड़ता है। तो सुनीति मण्डल में प्रवेश कर जाता है, सुनीति मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ यह विश्वमित्र मण्डल में प्रवेश कर जाता है, उसमें प्रवेश करता हुआ, श्वानकेतु मण्डल में प्रवेश करता हुआ।मूल यह है कि यह यान बहत्तर लोकों का भ्रमण करता हुआ, बहत्तर लोकों में भ्रमण करके, यह यान भारद्वाज की विज्ञानशाला में प्रवेश कर जाता है।

तो नाना विज्ञान अपने में बड़ा अद्वितीय रहा है, बड़ा अनूठा रहा है, परन्तु, भारद्वाज मुनि महाराज ने कहीं वरूणास्त्र, कहीं आग्नेयास्त्र, यह सब दृष्टिपात कराया।उन्होंने यन्त्रों में, जो यन्त्र सूर्य की किरण ऊर्ज्वा को धारण करता हुआ, कोई यन्त्र सूर्य की परिक्रमा कर रहा है, कोई ध्रुव की परिक्रमा कर रहा है, कोई शनि की परिक्रमा कर रहा है, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ी जा रही हैं। 12.07.1987

हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम अपने में यह स्वीकार करें, कि हमारा जीवन कितना महान वृत्तियां में रत्त रहना चाहिए।आओ, आज मैं तुम्हे एक सूत्र में, माला के मनकों को वृत्तियों मे रत्त कराना चाहता हूँ। 02.08.1987

250 भारद्वाज की विज्ञानशाला विज्ञान की प्रतिभा

ब्रह्मचारियों ने कहा प्रभु! हमें निर्णय कराईए, उन्होंने, निर्णय कराना प्रारम्भ किया। उन्होंने कहा हमारी विज्ञानशालाओं में भारद्वाज की विज्ञानशाला में, हमारे पूर्वजों की विज्ञानशाला में भी, अब तक जो सृष्टि का कर्म है, विज्ञान की जो प्रतिभा है, विज्ञान को उन्होंने इतना जाना है, कि तीस लाख पृथ्वियों तक इस ब्रह्माण्ड को मापा।परन्तु ब्रह्माण्ड को यही तक नहीं मापा, उन्होंने कहा कि तीस लाख पृथ्वियों की माला बनी है, और उस माला को धारण करने वाला यह सूर्य कहलाता है। यह सूर्य इतना विशाल मण्डल है, जैसी यह पृथ्वी है, ऐसी ऐसी तीस लाख पृथ्वियां सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती है, यह उनको धारण करता रहता है। परन्तु जो लघु मस्तिष्क वाले योगेश्वर होते है, जो ब्रह्मरन्ध्र से, ऊर्ध्वा भाग में, प्रतिभा में मस्तिष्क में चले जाते है, तो उससे यह प्रतीत होता है, कि जैसा यह सूर्य मण्डल है, ऐसे ऐसे एक सहस्र सूर्य, जिनको बृहस्पति अपने में धारण करता रहता है, उनकी माला बना करके, वह अपने में धारण कर रहा है। कैसी विचित्र माला है, मेरे प्रभु के ब्रह्माण्ड की, ऋषि यहीं तक शान्त नहीं हो जाते है, वैज्ञानिकों ने योगाभ्यास के द्वारा यह निर्णय कराया कि यह बृहस्पति मण्डल है, ऐसे ऐसे एक सहस्र बृहस्पतियों की माला बन करके, उसको आरूणि मण्डल अपने में धारण कर लेता है। आरूणि मण्डल पर जा करके ऋषि मौन नहीं हो जाते है, एक सहस्र आरूणि मण्डलों की माला बनी, जिसको ध्रुव मण्डल अपने में धारण कर रहा है। उसको धारण करता हुआ, अपने में अनुसंधान करता हुआ, आचार्य कहता है, योगेश्वर कहता है, लघु मस्तिष्क में जो उसे दृष्टिपात आ रहा है, जो उसे अनुभव में ला रहा है, वह कहता है कि एक सहस्र ध्रुव मण्डलों की माला बनी, उसे मूल नक्षत्र अपने में धारण कर रहा है। एक सहस्र मूल नक्षत्रों की माला बनी, जिसको स्वाति नक्षत्र अपने में धारण कर रहा है। एक सहस्र स्वाति नक्षत्रों की माला बनी, जिसको रेणवृतिका धारण कर रहा है। एक सहस्र रेण कृतिकाओं की माला बनी, जिसको अचंग मण्डल अपने में धारण कर रहा है, एक सहस्र अचंग मण्डलों की माला बनी, जिसको कृति काञ्चकु वाच मण्डल अपने में धारण कर रहा है, एक सहस्र काच्चकु मण्डलों की माला बनी, जिसको गन्धर्व अपने में धारण कर रहा। 15.08.1987

251 महर्षि भारद्वाज के यन्त्र

भारद्वाज मुनि की विज्ञान शाला में एक यन्त्र का निर्माण हुआ था, जिस यन्त्र में विद्यमान हो करके मानव वायु का सेवन कर रहा हो उससे, वह यन्त्र, महाराजा शिव से हिमालय की कन्दराओं में उन्होंने प्राप्त किया था, और उस यन्त्र में ऐसे कृतिभा रूप था, कि वह मंगल में जा रहे हैं, तो वायु का सेवन हो रहा है। चन्द्रमा की यात्रा कर रहे हैं, तो वहाँ भी वायु का सेवन हो रहा है, अन्नाद की इच्छा नही रही शरीर में,

तो विचार आता रहता है, यह सब प्राणी की प्राणत्व क्रिया कहलाती हैं। जैसे मेधा वृति प्राणायाम होता है, जैसे संकल्पोमयी प्राणायाम होता है, संकल्पोंमयी जगत है, जो प्राण की प्रतिक्रिया है। 14.11.1987

देवर्षि नारद के यहां ध्रुव, विद्यालयों में अध्ययन करते थे, वृतियां प्राप्त हो गई थी। धनुर्याग में नाना प्रकार के परमाणु अस्त्रों का निर्माण होना चाहिए, आग्नेयास्त्र, वरणास्त्र ब्रह्मास्त्र, अहिल्या यन्त्र नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण होना चाहिए। यह विचार दे ही रहे थे इतने में ही, श्वेति ने कहा हे प्रभु! हमारे विद्यालय में हमने अहिल्या यन्त्र का निर्माण किया है, अहिल्या नाम पृथ्वी का है, और यन्त्रों का निर्माण करके दस दस योजन पृथ्वी के गर्भ के खनिज और जो भी उसमें परमाणु गति कर रहा है, वह यन्त्रों में साक्षात्कार दृष्टिपात आ रहा है।जब उन्होंने इस प्रकार का वर्णन किया, तो ऋषि आश्चर्य में हो गए, उन्होंने कहा धन्य है। वेद के आचार्य ने जब ऐसा वर्णन किया, तो ब्रह्मचारी बड़े शान्तचित हो करके, उनके वाक्यों को श्रवण करने लगे। उन्होंने कहा तुम्हारा यह बाह्य जगत और आन्तरिक जगत दोनों का समन्वय होना चाहिए, दोनों का मिलान होते हुए, क्योंकि जब तक विज्ञान में आध्यात्मिकवाद और भौतिक दोनों का समावेश नहीं होता, तब तक विज्ञान अपने में सार्थक नहीं हुआ करता है। यदि केवल एक भौतिक विज्ञान ही तुम्हारी आभा में रहा, तो भौतिक विज्ञान से तुम अपंग हो जाओगे, और यदि उसी भौतिक विज्ञान में आध्यात्मिक विज्ञान प्रवेश कर जाएगा, उसमें दोनों का मिलन हो जाएगा, दोनों सार्थक हो करके, तुम्हारा विद्यालय आध्यात्मिक और भौतिकवाद, दोनों में पारायण हो करके, तुम्हारा राष्ट्र और समाज और तुम्हारा विज्ञान एक सार्थक रूपों में परिणित हो जाएगा। 27.11.1987

252 ब्रह्मचारी श्वेताश्वेतर भारद्वाज

विद्यालय में महाराजा तत्व मुनि महाराज ने कहा कि यह ब्रह्मचारी श्वेताश्वेतर भारद्वाज विद्यमान है।भारद्वाज मुनि महाराज यंत्रों में विद्यमान हो करके, लोक लोकातंरों की प्रायः यात्रा भी होती रही है, तो महर्षि तत्व मुनि महाराज ने अपना वक्तव्य देते हुए कहा यह ब्रह्मचारी सदैव लोको की यात्रा करते रहे है, ऋषि ने कहाकि हमारे विद्यालय में परमाणु विद्या, जब वेद की विद्या हमारे समीप आती है, वेद में कई प्रकार की विद्याओं का वर्णन है, वास्तव में तो ज्ञान, कर्म, उपासना ही प्रायः होती रहती है ज्ञान, कर्म और उपासना, उपासना का अभिप्रायः यह है जब हम ज्ञान में प्रवेश हो जाते है, तो ज्ञान के आधार पर कर्म करते है, कर्म करने के पश्चात, जब कर्म में पारायणता प्राप्त होती है, उसके पश्चात, उसकी उपासना की जाती है।उपासना का अभिप्रायः क्या है? उपासना कहते है, किसी भी वस्तु को जान लेने के पश्चात क्रियात्मकता में लाने के पश्चात उसका सदुपयोग करना ही, उपासना के तत्वों में, विचारों में स्वीकार किया गया है। 28.11.1987

253 महर्षि भारद्वाज

जब माता पिता ने यह वाक् उच्चारण किया, मेरी चार वर्ष, चार दिवस की आयु थी तो कुछ समय के पश्चात मेरा उपनयन संस्कार हुआ और महर्षि तत्व मुनि महाराज के विद्यालय में मेरा प्रवेश कराया, जब विद्यालय में प्रवेश हो गया, विद्यालय में प्रवेश होने के पश्चात, मैने वेद का प्रारम्भ किया, तो मैने वेद के अध्ययन में परमाणु विद्या का अध्ययन किया, परमाणु विद्या अपने में बड़ी महान विद्या है, क्योंकि परमाणुवाद से राष्ट्र ऊँचे बनते हैं, परमाणुवाद से राष्ट्र गृह ऊँचा बनता है, प्रत्येक मानव ऊँचा बनता है और विद्यालय भी परमाणुवाद से ऊँचे बनते हैं। जब मैंने इस परमाणु विद्या का अध्ययन प्रारम्भ किया, तो एक समय तत्व मुनि महाराज ने कहा ब्रह्मचारी! तुम यह जो अध्ययन कर रहे हो भारद्वाज! तुम्हारे वंशलज में तो कर्मकाण्ड का बड़ा महत्व माना गया है, और ब्रह्मविद्या का बड़ा महत्व है, इसीलिए तुमने इस विद्या का अध्ययन क्यों प्रारम्भ किया? उन्होंने कहा प्रभु! मुझे माता पिता की प्रेरणा प्राप्त हु, मैं उस प्रेरणा के आधार पर मैंने परमाणु विद्या का अध्ययन किया। उनके यहाँ एक नियमावली बनी हुई थी, क्या ब्रह्मचारी परमाणु विद्या के ऊपर अध्ययन करना और यन्त्रों के ऊपर एक एक अणु के ऊपर अध्ययन होता रहा। 16.07.1988

254 महर्षि भारद्वाज आश्रम से लोक यात्रा

एक समय महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ यन्त्रों में विद्यमान हो करके ब्रह्मचारी, सुकेता ब्रह्मचारी, कवन्धि यन्त्रों में विद्यमान हो करके राजा रावण के पुत्र नारान्तक उसमें विद्यमान हो करके, भारद्वाज मुनि के यहाँ से, इस पृथ्वी मण्डल से उड़ान उड़ते हैं और पृथ्वी मण्डल से उड़ान उड़ करके, वह चन्द्रमा में चले गए, चन्द्रमा से उड़ान उड़ी, वह बुध में चले गए और बुध से उड़ान उड़ी, तो वह मंगल में चले गए और मंगल से उड़ान उड़ी तो मृचिका मण्डल में चले गए और मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो क्रेतकेतु मण्डल में प्रवेश कर गए, क्रेतकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो शौनित मण्डल में प्रवेश कर गए, शौणित मण्डल से उड़ान उड़ी, वह वशिष्ठ मण्डल मे चले गए और वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ी तो अरूणध मण्डतिल में चले गए, अरूणधति मण्डल से उड़ान उड़ी, तो श्वेतकेतु मण्डल में चले गए, श्वेतकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो पुष्य नक्षत्र में चले गए, पुष्य नक्षत्र से उड़ान उड़ी, तो सोहितवृति मण्डल में चले गए और सोहित मण्डल से उड़ान उड़ी, तो मूल कृतिका मण्डल में चले गए कि बहत्तर लोकों का भ्रमण करके, वह यान पुनः महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में प्रवेश

हो गया। 19.10.1988

255 महर्षि भारद्वाज आश्रम में धनुर्याग

तो यह सब धनुर्विद्या में आता है, तो महर्षि विश्वामित्र के यहाँ, जहाँ धनुर्याग होता रहता था, वहाँ धनुर्याग, महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ भी होता रहा, आज हम अपने में तपश्चर को धारण करते चले जाएऔर विज्ञानवेता बन करके, आध्यात्मिकवाद में प्रवेश कर जाए, क्योंकि आध्यात्मिक विज्ञानवेता ही परमपिता परमात्मा को प्राप्त करता है। 15.09.1988

256 महर्षि भारद्वाज सहित महर्षि तत्वमुनि की लोक यात्रा

तो महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा कि एक समय हमारे यहां, मेरे पूज्यपाद तत्वमुनि महाराज के यहां, जिस यन्त्र में हम विराजमान हो करके, लोकों की यात्रा करने लगे, तो उस समय सबसे प्रथम यान में विराजमान हो करक, यान जब उड़ान उड़ने लगा, तो सबसे प्रथम वह पृथ्वी मण्डल से वह चन्द्रमा में पंहुचा और चन्द्रमा से जब उस यान ने उड़ान उड़ी, तो वह बुध में पहुंचा और बुध से जब उड़ान उड़ी, तो शुक्र में पंहुचा, शुक्र से उड़ान उड़ी, तो वह मंगल में पहुचा, और मंगल से जब उड़ान उड़ी, तो मृचिका मण्डल में प्रवेश कर गया, और मृचिका मण्डल से जब उड़ाने उड़ी, तो क्रोतकेतुम मण्डल में प्रवेश कर गया, क्रोतकेतुम मण्डल से जब उड़ान उड़ी, तो स्वाति नक्षत्र में प्रवेश कर गया और स्वाति नक्षत्र से जब उड़ान उड़ी, तो वह वशिष्ठ मण्डल में प्रवेश कर गया, वशिष्ठ मण्डल से जब उड़ान उड़ी तो अरूण्धति मण्डल में चला गया, अरूण्धति मण्डल से जब उड़ान उड़ी, तो कृतिका भानु मण्डल में प्रवेश हो गया, कृतिका भानु से जब उड़ान उड़ी, तो वसुति मण्डल में प्रवेश हो गया, और वसुति मण्डल से जब उन्होंने उड़ान उड़ी तो वह मूल वृति में मृचि मण्डल में प्रवेश कर गया और मृचि मण्डल से जब उड़ाने उड़ी, तो सोमभानु मण्डल में प्रवेश कर गया, महर्षि भारद्वाज मुनि बोले कि हे ब्रह्मचारियों! मैं तुम्हें इस क्षेत्र में, विशेष नही, केवल यह उड़ाने उड़ रहा हूँ, कि हमारा यान बहत्तर लोकों का भ्रमण करके और वह पुनः पृथ्वी मण्डल पर प्रवेश कर गया। 07.01.1990

257 लोकों की यात्रा

एक समय भारद्वाज कहते है, कि मैं और यह सुनीता ब्रह्मचारी थे, महर्षि तत्वेतर ऋषि महाराज के पुत्र दोनो यन्त्र में विद्यमान हो करके ओर अन्तरिक्ष में आचार्य ने हमें उड़ाने में बड़ा कृत कर दिया।

भारद्वाज कहते हैं कि जब यन्त्र गमन करता है, तो यन्त्र उड़ान उड़ते, सबसे प्रथम यन्त्र चन्द्रमा में पंहुचा और चन्द्रमा से उड़ाने उड़ी, तो वह बुध में चला गया और बुध से उड़ाने उड़ी, तो शुक्र में चला गया, शुक्र से उड़ाने उड़ी, तो वह मंगल में चला गया, मंगल से उड़ाने उड़ी, तो वह मृचिका मण्डल में चला गया, मृचिका मण्डल से उड़ाने उड़ी, तो वह वशिष्ठ मण्डल में चला गया, वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ी, तो अरूण्धति में चला गया और अरूण्धति से उड़ान उड़ी, तो रोहिणीकेतु मण्डल में प्रवेश कर गया, रोहिणीकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो कृतिका मण्डल में प्रवेश कर गया, कृतिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो श्वेनकेतु मण्डल में प्रवेश कर गया, वह श्वेनकेतु मण्डल से उड़ाने उड़ी, तो वह वगा गति मण्डल में प्रवेश कर गया, वगा गति मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ, वह मृचिका मण्डल में प्रवेश कर गया और मृचिका से उड़ाने उड़ी, तो वह स्वाति में चला गया, और स्वाति से उड़ाने उड़ी, तो वह पुष्य नक्ष्ज्ञत्र में प्रवेश कर गया। 25.01.1990

258 महर्षि भारद्वाज को विज्ञान प्रेरणाएँ

तो वह बहत्तर लोकों का भ्रमण करके और वह यान तत्व मुनि के आश्रम में प्रवेश कर गया, तो भारद्वाज ने कहा प्रभु! यह जो मुझे प्रेरणा प्राप्त हुई है, मेरी माता की प्रेरणा है, पितर का आदेश है, पिता की प्रेरणा है, आचार्यों की प्रेरणा, मुझे तत्व मुनि महाराज की प्रेरणा से, उस परमाणु विद्या के ऊपर अध्ययन प्रारम्भ किया हैं, मैं इस प्रकृति के स्वरूप में प्रवेश कर गया हूँ, मैंने नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया, महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा प्रभु! मैं इन्हीं में संलग्न रहता हूँ, मुझे यह प्रेरणा मेरी माता ने दी है, क्योंकि माता संसार में सबसे महान प्रेरक होती है, वह प्रेरणा देने वाली होती है, वह प्रेरणा देने वाली होती है, इसीलिए जिस माता ने मुझे प्रेरणा दी हैं, उसी प्रेरणा के आधार पर, मैं अपने क्रियाकलाप में परिणत हूँ, आचार्य मुझे प्राप्त हो जाते हैं, मनस्तव के आधार पर। 25.01.1990

259 वैज्ञानिक भारद्वाज ऋषि

भारद्वाज मुनि से यह प्रश्न किया गया कि हे भगवन! आप ने जो इतना विज्ञान यह जाना है, नाना प्रकार के परमाणुवाद को जाना है, आपके यन्त्र कहीं ध्रुव की परिक्रमा कर रहे हैं, कहीं मंगल की परिक्रमा हो रही है, यह जो विज्ञान है, आपने कहां से प्राप्त किया? 08.04.1990

260 वैज्ञानिक महर्षि भारद्वाज

तो भारद्वाज मुनि महाराज मौन हो गए और मौन हो करके, यह कहा कि यह मेरी माता की देन है, क्योंकि माता ने मुझे यह पवित्र शिक्षा प्रदान की है, उन्होंने कहा कि भगवन! वह कैसे? हमें कुछ वर्णन कराईए?

हे प्रभु! एक समय, मेरे पिता का नाम रेंगणी भारद्वाज था, मेरा नाम श्वेताश्वेतर भारद्वाज है। मेरे प्यारे पिता, ब्रह्म का चिन्तन करते रहते थे, पंच यागों में लगे रहते थे, मेरी जो माता का नाम शकुंतका था और वह माता शकुंतका अपने में बड़ी विचित्र और वेदोक्त दद्दड़ीय गोत्रों में जिनका जन्म हुआ है, आध्यात्मिकवाद में वह रमण करती रहती थी, उन्होंने उस विद्या का अध्ययन किया है, जो विद्या वास्तव में वैदिक साहित्य में विद्यमान रहती है। माता के गर्भस्थल में शिशु पनप रहा है, परन्तु माता कहती है कथमोसि ब्रह्मचारी, उस आत्मा से कहती है कि हे आत्मा! जो तू मेरे गर्भस्थल में विद्यमान है, तू कौन है? इस प्रकार की वार्ता जब प्रगट कर रही है, माता जब बाल्य का उत्तर प्राप्त नही होता, तो प्राण, अपान दोनों को, एक सूत्र में ला करके, अपने हृदय स्थली में, अपने मनों की प्रवृतियों को ले जा करके, उसे योग स्थलियों में परिणत करके, उसे अपने अन्तर्हृदय की आत्मा से वार्ता प्रगट करती रहती है। हे मां! तू कितनी विचित्र बन सकती है, तेरी प्रतिभा कितनी विचित्रता में रमण कर रही है। 08.04.1990

261 माता की शिक्षा से वैज्ञानिक महर्षि भारद्वाज

महर्षि भारद्वाज कहते हैं, कि प्रभु माता के गर्भस्थल में, जब मैं विद्यमान था, तो माता मुझे अनुपम शिक्षा देती रहती थी, दर्शनों का अध्ययन करती रहती, वेदों के मन्त्रों का पठन पाठन करती रहती थी, और वह अपने में ही अपनेपन को दृष्टिपात करती रहती थी, उस समय, जब मैं इस संसार में आ गया, तो संसार में, जब माता वसुन्धरा की गोद में आ गया, जननी माता के गर्भस्थल से, तो मेरी तीन वर्ष और चार दिवस की आयु थी, मैं क्रीड़ा कर रहा था, माता ने मुझे बाल्य काल में भोज कराया, परन्तु मैं क्रीड़ा कर रहा था औरउस समय पिता ने कहा, याग के पश्चात, वह ब्रह्मयाग, प्रातःकाल होता था, जब पति और पत्नी अपनी एकान्त स्थलियों में विद्यमान होते हैं, तो वह ब्रह्म के स्रोत्रों का पठन पाठन करते हुए, अपने में श्रोत्रीय विचारों को ला करके, ब्रह्म की प्रतिभा का वर्णन करना, उसके विज्ञान को दृष्टिपात करना, वह ब्रह्मयाग है, अग्नि प्रदीप्त करके, जब हूत करता है, उसको देवयाग कहते हैं और इसके पश्चात पितर याग कहलाता है, पितर याग उसे कहते हैं, जहां पितर होते हैं, और उनसे मानव शिक्षा लेता है, उनको भोज कराता है तो उन्होंने कहा हे शकुंतका! आज हमें पितर याग करना है, बहुत समय हो गए हैं, आज पुनः इच्छा जागरूक हुई है, कि जो वहां, उनके वंशलज में, पिता, महापिता, पड़पिता जो संसार में थे, उनको निमन्त्रित किया, और निमन्त्रित करके, उनको भोज कराया, भोज कराने के पश्चात, आशीर्वाद लिया और उनसे कुछ ब्रह्म, ज्ञान की चर्चाएं प्रगट कीं, और ब्रह्म ज्ञान की चर्चा प्रगट करके, आचार्य जनों ने कहा हे रेंगणी भारद्वाज! तुम्हारा जीवन पवित्र ह, तुम्हारा जीवन गम्भीरता में रमण करता रहता है, तुम अपने जीवन में क्रियात्मकता में परिणत करने वाले हो, इसीलिए हमारा अन्तर्हृदय, बहुत ही प्रशंसनीय है, हमारा जो गोत्र हैं, यह बड़ा विचित्र गोत्र चला आया है, इसमें सब ब्रह्मवेता और सब ब्रह्मनिष्ठ होते चले आए हैं याग सम्पन्न हो गया, पितर जन, अपने गृह, अपने आश्रम मेंउन्होंने प्रवेश किया, तो रेंगणी भारद्वाज ने, मेरे से कहा कि हे बाल्य! तुमने भोज किया अथवा नही? तो उस समय मैंने एक वाक् मिथ्या उच्चारण कर दिया, कि मैंने भोज नही किया, पिता ने मेरी माता से कहा देवी! तुमने बाल्य को भोज नही कराया है?उन्होने कहा प्रभु! मैंने भोज कराया है, यह मिथ्या उच्चारण कर रहा है, यह असत्य कह रहा है। 08.04.1990

262 मिथ्या उच्चारण से मात्र दोष

माता पिता अपने में बड़े आश्चर्य में चकित हो गए, ओर यह कहा कि हे भारद्वाज! हे श्वेताश्वेतर! ! हमारा जो यह वंश है, यह बड़ा विचित्र है, हमारा यह वंश भारद्वाज कहलाता है। और भारद्वाज गोत्रों में यह जो हमारा गोत्र चल रहा है, यह भारद्वाज का अमृत गोत्र है, जिसमें दस हजार वंशलज हो गए हैं और इससे पूर्व जो हमारे भारद्वाज गोत्रों का जो निकास हुआ है, वह दद्दड़ीय गात्रों से निकास हुआ है ओर हरितत गोत्रों में इसी प्रकार पांच सौ इक्कसठ जो वंशलज थे, वह समाप्त हो गए, उनमें कोई भी ऐसा मिथ्यावादी नही हुआ है, और हमारे जो गोत्र का, हरितत गोत्र का, जो हमारा जो निकास हुआ है, वह अंगिरस गोत्र से हुआ है, ओर अंगिरस गोत्र में भी ऐसा नही हुआ, उसके एक लाख वंशलज समाप्त हो गए, उसमें भी कोई मिथ्यावादी नही हुआ, और अंगिरस गोत्रों का जो निकास है, वह मृचिका गोत्रों से हुआ है, और मृचिका ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा के पुत्र कहलाते थे।

जब उन्होंने यह कहा, तो ऋषि बड़े आश्चर्य में हो गए और उन्होंने कहा हे बाल्य! तुमने यह मिथ्या शब्द क्यों उच्चारण किया है? माता ने कहा हे बाल्य तुम्हें प्रतीत है कि इस माता के गर्भस्थल में मिथ्यावादी पुत्रों का जन्म होता है, तोउस माता का गर्भाश्य दूषित हो जाता है। हे बाल्य! मैं दूषित हो गई हूँ, वही शब्द माता पिता के शब्द, मेरे अन्तःकरण में अंकित हो गए। वह याग समाप्त हो गया, अपनी अपनी स्थली पर विद्यमान हो गए ओर जब मुझे वेदारम्भ के लिए विद्यालय में प्रारम्भ किया, महर्षि तत्व मुनि महाराज के यहां, तो महर्षि तत्व मुनि महाराज, दो सौ चौरासी वर्ष के ब्रह्मचारी थे, उस समय जिस समय मेरा प्रवेश कराया गया ओर मैंने जो वेद की विद्या का अध्ययन प्रारम्भ किया, तो मैंने परमाणु विद्या को लियाऔर परमाणु विद्या को ले करके, परमाणुवाद के ऊपर मेरा अन्वेषण होने लगा, मेरी विज्ञान

में गति होती रही और यह नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण भी ऋषि के आश्रम में करता रहा, क्योंकि उनके यहां नाना प्रकार की विज्ञानशालाएं विद्यमान थी, उनमें मैं विद्यमान हो करके परमाणुवादों के ऊपर अन्वेषण करता रहा। 08.04.1990

263 महर्षि भारद्वाज की प्रथम लोक यात्रा

महर्षि तत्व मुनि महाराज के एक यन्त्र का निर्माण हुआ था, जिस यन्त्र में मैं विद्यमान हो करके लोक लोकान्तरों की यात्रा करता रहा, आश्रम में एक यन्त्र का निर्माण हुआ, जो अन्तरिक्ष की यात्रा करेगा और तुम्हें उस यात्रा में जाना है, कौन ब्रह्मचारी ऐसा है जो उसमें गमन करेगा? मैं उसमें एक विश्वसनीय था, और मैं उस यन्त्र में विद्यमान हो करके, ऋषि के आश्रम से, वह यान जब उड़ान उड़ता है, वह यन्त्र जब उड़ान उड़ने लगा, तो सबसे प्रथम आचार्य के आश्रम से उड़ान उड़ी, तो सबसे प्रथम वह चन्द्रमा में पंहुचा और चन्द्रमा से उन्होंने उड़ान उड़ी, तो वह बुध में चला गया, बुध से उड़ान उड़ी, तो शुक्र में चला गया, शुक्र से उड़ान उड़ी, तो मंगल में चला गया, मंगल से उड़ान उड़ी, तो रोहिणीकेतु मण्डल में चला गया, और रोहिणी केतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह मृचिका मण्डल में प्रवेश हो गया और मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो अरूण्धति मण्डल में चला गया और अरूण्धति मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह वशिष्ठ मण्डल में प्रवेश हो गया, और वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ी, तो विश्वकेतु मण्डल में प्रवेश कर गया, और विश्वकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह मरकस्तुत मण्डल में प्रवेश हो गया और करस्तुत मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह मूल नक्षत्र में चला गया, और मूल नक्षत्र से उड़ान उड़ी, तो वह गुरुवेतु मण्डल में प्रवेश कर गया और गुरुवेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह कातुक मण्डल में चला गया, कातुक मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह पुष्य नक्षत्र में चला गया, बहत्तर लोकों का भ्रमण करते हुए, वह यान ऋषि के आश्रम में प्रवेश हो गया है।

तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा, गाड़ीवान रेवक से कि जिस समय मेरा परीक्षाफल आता, वेदों का अध्ययन करता हुआ, परमाणुवाद में रत होता रहा, जब परीक्षाफल आता, तो किसी में मैं प्रथम श्रेणी में आता, उनसे किसी से मैं अग्रणीय बन जाता, और कुछ में द्वितीय श्रेणी में प्रवेश करता रहा, मेरी विद्या पराकाष्ठा पर चली गई, तो उस समय जब मैंने अपनी सम्पन्न जितनी विद्या विद्यालय में मुझे दी जा सकती थी, वह विद्या मैंने सर्वत्र पारायणता में परिणत कर दी और उसे अपने में ग्रहण कर लिया, भारद्वाज कहते हैं प्रभु! जब मुझे ऋषि ने यह कहा कि तुम्हारा दीक्षान्त होना है, तुम्हें दीक्षित होना है, और तुम्हारा विद्या काल समाप्त हो गया, उन्होंने कहा ब्रह्मचारी आओ, मैं तुम्हें कुछ उपदेश देता हूँ, तत्व मुनि महाराज ने मुझे दीक्षित बनाया, और दीक्षा देना प्रारम्भ किया और उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारी! जिस विद्यालय में तुमने अध्ययन किया, इस विद्यालय स्थली को तुम्हें पवित्र बनाना है, और जिस स्थली पर तुमने वेदों का अध्ययन किया, वेदों में जितना ज्ञान और विज्ञान तुमने जाना है, इसको तुम्हें क्रियात्मकता में लाना है, हे ब्रह्मचारी! तुम्हें ब्रह्मवर्चोसि बनना है, तुम्हें ब्रह्मचारिष्यामि बनना है। उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारी! अब तुम विद्यालय को त्यागने के लिए विद्यमान हो गए हो, और तुम्हें यह विद्यालय त्याग करके, जो विद्या तुमने अध्ययन की है, इस विद्या को तुम्हें क्रियावान देना है और क्रियात्मकता में रमण करते हुए, तुम्हें उस विद्या के ऊपर, वेद की पवित्र विद्या को विज्ञान के आश्रित बनाना है, उस समय आचार्य ने मुझे उपदेश दिया, कि तुम्हें ब्रह्मचारी रहना है, ब्रह्मचरिष्यामि बनना है, प्रत्येक श्वास के साथ में, तुम्हें उस श्वास का, मनका बना करके तुम्हें ब्रह्मसूत्र की माला बनानी हैं, और उस माला को जो ब्रह्मचारी अपने में धारण कर लेता है, वह ब्रह्मचरीष्यामि बन जाता है। जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया, तो उनके चरणों की वन्दना की, और यह कहा प्रभु! आप का आशीर्वाद चाहिए, आपने जो मुझे विद्याएं दी हैं, उस विद्या को मैं क्रियात्मकता में लाऊंगा, और तपस्या में परिणत हो जाऊंगा, उन्होंने यह वाक् उच्चारण करके चरणों की वन्दना करते हुए, मैंने ऋषिवर! उस विद्यालय को त्याग दिया और विद्यालय को त्याग करके, आचार्य से दीक्षा ले करके, मैंने एक अनुसन्धानशाला अथवा एक यज्ञशाला का निर्माण किया है, जहां मैं विज्ञान में रत रहता हूँ और विज्ञान के तथ्यों को जानता रहता हूँ। 08.04.1990

264 माता विश्वविद्यालय

जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन कराया, तो ऋषि अपने में मौन हो गए महर्षि भारद्वाज मुनि बोले कि यह मेरी माता की देन है, माता ऐसा विश्वविद्यालय है, जो माता अपने गर्भस्थल में शिक्षा प्रदान कर देती है, वह विद्यालयों में ही प्राप्त होती है, आचार्यों के द्वार ही नही प्राप्त होती है और जो आचार्यों के द्वारा शिक्षा प्राप्त हो जाती है, वह सम्पर्क से हुआ करती है, इसीलिए माता भी अमृत को देने वाली है, उसी के गर्भस्थल में हम पनपते रहते है। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा कि हे प्रभु! यह जो मुझे विज्ञान की देन है, यह मेरे माता और पिता की देन है, वह यह उच्चारण नही कर सकते थे, मेरा गर्भाश्य दूषित हो जाता है, तो मैं इस विद्या में नही जा सकता, क्योंकि हमारे वंशलजों में तो आध्यात्मिकवेता, ऋषि होते चले आए हैं, मैंने इस विज्ञान की शिक्षा को, क्योंकि वह माता की देन है, माता ने धिक्कारा, बाल्यकाल में, और वही संस्कार मेरे अन्तःकरण में अंकित हो गए और वही विद्या मेरी अध्ययन करना प्रारम्भ किया, मैं इसीलिए विज्ञानशाला का निर्माण किया और विज्ञानशाला में सदैव रत रहता हूँ। 08.04.1990

265 मन प्राण की समावेशिता

महर्षि तत्व मुनि महाराज के द्वारा अध्ययन करते रहते थे, अध्ययन करते करते, एक समय, जब वह बाल्य अध्ययन कर रहा था, तो विज्ञान में भी इतना ही पारायण था, महर्षि तत्व मुनि महाराज के यहां परमाणु विद्या के ऊपर बड़ा अध्ययन होता रहा, उस ब्रह्मचारी रोहिणी को कहा कि तुम अन्तरिक्ष की यात्रा करो, अपने यन्त्रों में विद्यमान हो जाओ, वैज्ञानिक यन्त्रों में विद्यमान हो करके, ब्रह्मचारी रोहिणी यान में विद्यमान हो गया, और यान में विद्यमान हो करके, यान उड़ान उड़ने लगा, जब यान उड़ान उड़ने लगा, तो पृथ्वी मण्डल से महर्षि तत्व मुनि महाराज के आश्रम से, वह यान उड़ान उड़ता है तो सबसे प्रथम, वह मंगल मण्डल में पंहुचा, और मंगल में जाने के पश्चात कुछ समय वहां वास किया और मंगल से उड़ान उड़ी, तो वह शुक्र में चला गया, और शुक्र से उड़ान उड़ करके, वह बुध में चला गया और बुध से उड़ान उड़कर मंगल में चला गया और मंगल को दृष्टिपात करके, वहां से उन्होंने उड़ान उड़ी, तो वह मृचिका मण्डल में चला गया और मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह कृति मण्डल में प्रवेश हो गया, ओर कृति मण्डल से जब उड़ान उड़ी तो वह क्रेतकेतु मण्डल में प्रवेश कर गया, और क्रेतकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वशिष्ठ मण्डल में चला गया और वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह अरूण्धति मण्डल में प्रवेश कर गया, अरूण्धति मण्डल में छह माह तक, उसने वास किया वैज्ञानिक ने, और वहां से उड़ान उड़ी, तो वह मौन वृतिका मण्डल में प्रवेश हो गया, और मौन वृतिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह विश्वकेतु मण्डल में प्रवेश हो गया, और विश्वकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह वाहन केतु मण्डल में प्रवेश हो गया, और वहान केतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह कृतिभानु मण्डल में प्रवेश हो गया, और कृतिकानु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह रमेति मण्डल में प्रवेश कर गया और रमेति मण्डल में जब प्रवेश किया, तो वहां छह माह तक, उन्होंने पुनः वास किया और वहां से भी उड़ान उड़ी, तो वह वासन मण्डल में प्रवेश हो गए और वासन मण्डल से उड़ान उड़कर वह गन्धुनि मण्डल में प्रवेश कर गए ओर गन्धुनि मण्डल से, वह उड़ान उड़ करके वह मूल नक्षत्र में अपने को वास किया, और मूल नक्षत्र में एक माह तक, वह रहे, वहां से उड़ान उड़ करके, वह नरवेतु मण्डल में प्रवेश कर गए। तो वह बहत्तर मण्डलों का भ्रमण करने के पश्चात, वह पुनः बहत्तर लोकों में भ्रमण करते हुए, वह ऋषि के आश्रम में प्रवेश हो गया। वह ब्रह्मचारी जब अध्ययन कर रहा था, तो उस समय तत्व मुनि महाराज ने कहा हे बाल्य! तुम लोकों का अध्ययन करने के पश्चात, तुम्हारा आश्रम में वास हो गया है, मेरा अन्तरात्मा बहुत प्रसन्न है, तुम अपने में महान हो, विज्ञान में रत होने वाले हो, एक समय महर्षि तत्व मुनि महाराज एक मध्य रात्रि में उससे वार्ता प्रगट करने लगे, कि हे ब्रह्मचारी! मैं यह जानना चाहता हूँ, जैसे तुम भौतिक विज्ञान में इतनी उड़ान उड़ रहे हो, और लोकों को ले गए हो, मैं यह जानना चाहता हूँ, कि तुम आध्यात्मिकवाद में कितने पारायण हो। 07.04.1990

266 महर्षि भारद्वाज कालीन विज्ञान

भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में, ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धि, स्वेतकेतु और हरीवृतकेतु मुनि ने जब इन पृथ्वियों की माला बनाना प्रारम्भ किया, तो उन्होंने तीस लाख पृथ्वियों को मांपने का प्रयास किया और तीस लाख पृथ्वियों की माला बनी, परन्तु वहीं माला सूर्य में प्रवेश हो गई, सूर्य इतना विशाल मण्डल है, जैसी हमारी यह पृथ्वी है, ऐसी ऐसी तीस लाख पृथ्वियां हैं, जो सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती है, तो इसके ऊपर भी और भी विचार विनिमय, कि एक सहस्र सूर्यो की माला बनी है, जो बृहस्पति में समाहित हो जाती है, तो एक दूसरे लोकों की माला बनती रहती है। यह ऐसा विशाल मण्डल है, जिसके ऊपर मानव सृष्टि के प्रारम्भ से और वर्तमान के काल तक अन्वेषण करता रहा है। परन्तु यह अनन्तमयी ब्रह्माण्ड प्रायः दृष्टिपात आता रहता है। यह पृथ्वी वसुन्धरा है, और इसी में प्रत्येक प्राणी वशीभूत हो रहा है।वैज्ञानिक जब अपने में लोक लोकान्तरों में प्रवेश होता है, तो वहाँ भी पृथ्वी के अवशेष प्राप्त होते रहते है, क्योंकि जहाँ, किसी लोक में पृथ्वी प्रधान है, तो, किसी में जल प्रधान है, तो किसी में अग्नि तत्व प्रधान माना गया है, वायु उन्हें गति कराने वाला है और अन्तरिक्ष में वह भ्रमण करते रहते है। 12.03.1991

267 महर्षि भारद्वाज के वैज्ञानिक शिष्य

भारद्वाज मुनि के यहां नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, यह रावण का जितना भी वंशलज था, वह सर्वत्र भारद्वाज का शिष्य कहलाता था, राजा रावण के पुत्र नारान्तक अपने यन्त्रों में विद्यमान हो करके गमन करते रहे हैं, जब यहां भारद्वाज एक उपाधि कही गई।महर्षि भारद्वाज और महर्षि दुर्वासा मुनि दोनों अपने में अनुसन्धान करते थे, तो महाराजा अर्जुन ने एक वर्ष तक उनकी विज्ञानशाला में उनके आश्रम में नाना प्रकार के विज्ञान का अध्ययन किया, तो महर्षि दुर्वासा और, महर्षि भारद्वाज विद्यमान हो करके, अपने यन्त्रों में मंगल की और भी नाना मण्डलों की यात्रा करते रहे हैं। 19.04.1991

268 महर्षि भारद्वाज के अंतरिक्ष यात्री

इसी प्रकार जब महर्षि तत्व मुनि महाराज के यहां और भारद्वाज मुनि के यहां भी इसी प्रकार ब्रह्मचारी कवन्धि ब्रह्मचारी सुकेता और

ब्रह्मचारिणी शबरी और राजा रावण के विधाता वरुणकेतु, जिनको कुम्भकरण कहा जाता है, वे अपने में जब अध्ययन करते थे, तो अध्ययन करते ये पांचो यात्री अपने यन्त्र में विद्यमान हो करके भारद्वाज मुनि ने, अन्तरिक्ष में गमन कराया, जो सूर्य की किरणों के साथ में जो यन्त्र गमन करेगा, वह यन्त्र सार्थक कहलाया जाता है। जब वह यन्त्रों में विद्यमान हो करके, गमन करने लगे, तो वह यहां से उड़ान उड़ करके, सबसे प्रथम मंगल में जा पंहुचे और मंगल के वायुमण्डल में विद्यमान हो करके, वहाँ से वह शुक्र में चले गए, शुक्र का वायुमण्डल अग्नि को प्रधानता लिए हुआ रहता है, पृथ्वी मण्डल से सामान्यतव में आगे जब उसे, शुक्र मण्डल से जब उड़ान उड़ी, तो वह बुध में चले गए, बुध का वायुमण्डल तरलत्व कहलाया जाता है। परन्तु वहाँ से उन्होने से उड़ान उड़ी, मंगल में लगभग, वहाँ तक उन्होंने वास किया और वहाँ के वैज्ञानिकों से उसकी वार्ता प्रगट की, क्योंकि यह जो वैदिकता है, वैदिक जो भाषा है, इसको देव भाषा कहा जाता है, जिसको देव वाणी कहा जाता है, इसको वेद को जानने वाला, उसके स्वरों के प्रकारों को जानने वाला, ब्रह्माण्ड के लोकों की वार्ता को जान सकता है यह जो भाषाओं का, संसार में एक प्रकार का नृत हो रहा है, एक दूसरे से कटिबद्ध रहता है, उसकी भाषा उसमें रमण कर रही है और उसकी भाषा उसमें रमण कर रही है। 19.04.1991

269 महर्षि भारद्वाज अणु शक्ति में शोध

जब ऋषि ने वेदमन्त्रों को ध्वनि से उच्चारण किया तो भारद्वाज मुनि ने कहा महाराज! वेद मन्त्र यह कहता हैं, हमने वेदों में अध्ययन किया है, कि एक बिन्दु से मानव का निर्माण होता है, एक वाक्य यह कि एक आश्रम में एक मानव रहता है, उस मानव के चित्र वायुमण्डल में गति करते रहते हैं। वायुमण्डल में चित्र गति करते रहते हैं, तो जब उन्होंने यह वर्णन कराया, तो ऋषियों ने कहा महाराज! बहुत धन्य! तो उन्होंने कहा तुम हमें अपनी विज्ञानशाला का दृष्टिपात कराईए। तो महर्षि भारद्वाज मुनि उस समय इस विज्ञान में, परमाणु शक्ति में, अणुशक्ति में उनका बहुत अधिपत्य था। भारद्वाज के चित्रावली यन्त्रों में विज्ञान दर्शन उन्होंने ऋषि मुनियो को ले करके गमन किया और अपनी विज्ञानशाला में सबसे प्रथम उन यन्त्रों में ले गए, जिन यन्त्रों का ऋषि ने निर्माण किया था और यह कहा भारद्वाज ने कि महाराज! इस यन्त्र में यह विशेषता है कि एक मानव एक स्थली पर विद्यमान है और उस मानव के गमन करने के पश्चात मेरा यह यन्त्र उस मानव का चित्र ले लेता है। उन्होंने कहा धन्य है। 19.07.1982

270 महर्षि भारद्वाज की विज्ञानशाला

भारद्वाज मुनि ने अणुशक्ति का उन्हें दिग्दर्शन कराया। उन्होंने कहा कि महाराज! यह वरूणास्त्र है, इस वरूणास्त्र में यह है कि यदि इसको वायुमण्डल में त्याग दिया जाए और राष्ट्रों में अग्नि प्रदीप्त हो गई है यन्त्रों से, तो यह वरूणास्त्र उस अग्नि को शान्त कर सकता है। यह शान्त करने वाला है। जैसा मैंने यन्त्र को वायुमण्डल में त्याग दिया और पच्चीस राष्ट्रों का विनाश होने जा रहा है, परन्तु उसके साथ ही उन्होंने कहा मैं इसको त्यागूंगा, तो यह उस अग्नि को अपने में धारण कर लेगा और धारण करके उस अग्नि को नहीं लगने देगा। वह उनकी रक्षा कर सकता है। भारद्वाज का लोक लोकान्तरों विज्ञान, उन्होंने आगे दिग्दर्शन कराया कि महाराज! मेरे यहाँ यह यन्त्रशाला है। इन यन्त्रों में यह है कि एक एक यन्त्र वायुमण्डल में गति कर रहा है, उनकी छाया मेरे यन्त्रों में आ रही है। एक यन्त्र है मेरा, जो सूर्य की परिक्रमा कर रहा है, एक यन्त्र है जो बृहस्पति की परिक्रमा कर रहा है, एक यन्त्र है जो मंगल की परिक्रमा करके बुध मण्डल में उसकी स्थिति हो जाती है। वह यन्त्र और उनकी छाया मेरी इस विज्ञानशाला में आ रही है। यन्त्र आ रहे हैं, उनके क्रियाकलाप आ रहे हैं। किस प्रकार का प्राणी कहाँ कहाँ वास करता है, कौन कौन से लोक में, किस प्रकार का क्रियाकलाप है, उसके चित्र, मेरे यहाँ आते रहते हैं।

जिसको हम वेदों में, दर्शनों में अध्ययन करते रहते हैं और विचारते रहते थे। तो उन्होंने, उन्हें दिग्दर्शन कराया, नाना प्रकार के यन्त्रों को दृष्टिपात कराने लगे। नाना यन्त्रों को दृष्टिपात कराते हुए उन्होंने कहा मेरे यहाँ एक यान ऐसा है, जिस यान में मानव विराजमान हो करके, पृथ्वी मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो वह चन्द्रमा में चला जाता है, चन्द्रमा से उड़ान उड़ी, तो मंगल मे चला गया, मंगल से उड़ान उड़ी, बृहस्पति में चला गया, बृहस्पति से उड़ान उड़ी, महेशकेति मण्डलों मे चला गया। वहाँ से स्वाति मण्डल में पहुंच गया, स्वाति मण्डल से उड़ान उड़ी, तो रोहिणी मण्डलों में चला गया, रोहिणी मण्डलों से उड़ान उड़ी, शनि की परिक्रमा करके बहत्तर लोको का भ्रमण करके वह यान पुनः पृथ्वी मण्डल पर आ गया। तो यह जो विज्ञान है, ऋषि मुनियो के मस्तिष्कों में परम्परागतों से, नृत्य करता रहा है, आभा में परिणत होता रहा है। 19.07.1982

271 महर्षि भारद्वाज भौतिक वैज्ञनिक क्यों बने

ऋषि मुनियो ने उस विज्ञान शाला को दृष्टिपात किया और दृष्टिपात करके, वह मौन हो गए। अणु, परमाणु, महापरमाणु तिस्रेणु इत्यादियों का उन्होंने सर्वत्र दिग्दर्शन किया। दर्शन करने के पश्चात, वह शान्त हो गए। तो महर्षि प्रवाहण और महर्षि शिलक दोनों सभा में उपस्थित हुए और दोनों ने एक स्वर में, भारद्वाज मुनि से कहा कि प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं, हमारी एक प्रबल इच्छा रही है, हम यह जानना

चाहते हैं, कि यह जो तुम्हारा वंशलज है, यह भारद्वाज कहलाता है और भारद्वाज गोत्रों का जो निकास है, वह दद्दड़ीय गोत्रो का हरितत गोत्रों से हुआ है, उन्होंने कहा गोत्रों का निकास अंगिरा गोत्रों से हुआ है, अंगिरस गोत्रों का निकास ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से हुआ है। हम यह जानना चाहते है कि तुम्हारे इस वशंलज में कोई भी ऐसा पुरूष नहीं हुआ जो वैज्ञानिक हुआ हो, जो परमाणु विद्या को जानने वाला हो, परन्तु यह तुम्हारे हृदय में जो प्रेरणा जागरूक हुई है, विज्ञान की, यह कहाँ से जागरूक हुई है?

भारद्वाज मुनि महाराज क्योंकि उनका नामोकरण श्वेताश्वेतर भारद्वाज था, श्वेताश्वेतर भारद्वाज ने कहा कि तुम्हारा प्रश्न बड़ा विचित्र और कठिन है, उन्होंने कहा प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं, कि इसका कुछ अनुमोदन कीजिए। भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा कि यह प्रेरणा जो मुझे प्राप्त हुई है, यह माता पिता से हुई है। 19.07.1982

272 महर्षि भारद्वाज के आश्रम में पूज्य महानन्द जी

परन्तु वह जो मङ्गल मण्डल से, इस पृथ्वी मण्डल से यन्त्र आता है, उस यन्त्र से जो एक सौ पांच गुणा शक्तिशाली, वह यन्त्र कहलाता है। रहा यह वाक्य कि इन धातुओं को मिलाने वाले वैज्ञानिक होने चाहिएं, मुझे स्मरण है, जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आश्रम में शिक्षा अध्ययन करता था, उस समय मेरा जीवन तो एक आश्चर्यजनक रहा है, परन्तु जीवन को क्यों उच्चारण करूं, केवल वाक्य यह उच्चारण करना है कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक समय मुझे आज्ञा दी, कि आप भारद्वाज आश्रम में पंहुचो। जब मैं उनके आश्रम में पंहुचा, तो उनके आश्रम में महर्षि रेवक और महर्षि पिप्पलाद दोनों ऋषि विराजमान थे। वह ब्रह्म और प्रकृति की चर्चा करने आए थे। जब दोनों यह चर्चा करने लगे, तो मैं भी वहाँ पंहुचा। वहाँ एक दूसरी धातु का मिलान हो रहा था, महर्षि भारद्वाज की विशेष विज्ञानशाला थी, जहाँ ब्रह्मचारियों की विद्या अध्ययन कराते थें, महर्षि भारद्वाज, ब्रह्मचारियों से यह भी कहा करते थे, कि तुम इस विद्या को जान लो और इसका प्रयोग भी कर लो, इसको सब कुछ करो, परन्तु इससे आचरण की भ्रष्टता हो जाती है, इसीलिए इसके ऊपर तुम अधिक न जाओ। ब्रह्म की चेतना को अधिक जानने का प्रयास करो। 23.08.1969

273 ब्रह्म चेतना से अंतरात्मा का विकास

महर्षि भारद्वाज जी ने जब ऐसा कहा, तो मैं बड़ा व्याकुल होकर के अपने गुरुदेव के द्वार आया और प्रश्न किया, कि महर्षि भारद्वाज ऐसा क्यों उच्चारण कर रहे हैं, क्योंकि संसार में मानव का विकास विज्ञान से होता है, जितना विज्ञान होता है उतनी ही सुविधाए होती है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि नहीं, पुत्र! ऐसा नहीं होता है इसीलिए कहा है, क्योंकि ब्रह्म की चेतना से मानव की अन्तरात्मा का विकास होता है, तो अन्तरात्मा का जो विकास होता है, वह भौतिक विज्ञान से सहस्रों, लाखों गुणा अधिक होता है, इसीलिए उसको जानने के लिए अधिक बल दिया करते थे।

उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि हमारे ऋषि मुनि इस विद्या और इस विज्ञान की परम्परा को जानते हैं, हमारा तो जन्म सिद्ध अधिकार है। क्योंकि जिसने अपने सूक्ष्म, कारण और स्थूल तीनों शरीरों को जाना है, उसके यहाँ यह जो कहीं भौतिक विज्ञान है, वह उससे दूर नही होता। एक योगी सूक्ष्म शरीर वाला है और एक भौतिक विज्ञानवेत्ता है, वह केवल अपने यन्त्रों द्वारा जाता है, परन्तु सूक्ष्म शरीर वाला जो है वह सर्वश लोकों में भ्रमण कर आता है, अग्नि उसको भस्म नही कर सकती, जल उसको नष्ट नही कर सकता, वायु उसको तीव्र गति नही दे सकती। जब तीव्र गति नही दे सकती, क्योंकि वहाँ तत्त्वों का समूह रहता है और उसको अग्नि नष्ट नही कर सकती, तो उसके लिए चन्द्रमा की और सूर्य की यात्रा करना बहुत सहज हो जाता है। परन्तु आज का मानव कहता है, कि यह केवल कल्पना मात्र है, क्योंकि ऐसे योगी अब क्यों नही हैं? परन्तु योगी है, जो पर्वतों की कन्दराओं में विराजमान हैं, जो अपनी यात्रा कर लेते हैं, शान्त हो जाते हैं। 23.08.1969

उन गतियों को संयम में करने वाला, एक महान वैज्ञानिक चन्द्रमा में जाने वाला यन्त्र, मङ्गल में जाने वाला यन्त्र, बुध में जाने वाला यन्त्र, इन सब यन्त्रों पर वह एक स्थान में निश्चित करके उसके स्वभाव को परिवर्तित करता रहता है। 78.92.248

274 महर्षि भारद्वाज का जीवन

मुनिवरों! यह काल मुझे स्मरण है कि जिस समय सात वर्ष का बालक हुआ था, उस समय उपनयन किया तो उपनयन संस्कार करने के पश्चात उसे आचार्य कुल में प्रविष्ट कर दिया आचार्य कुल में जब वह प्रविष्ट कर दिया तो उस समय महर्षि तत्त्वमुनि महाराज ज्ञान और विज्ञान में पारंगत थे क्योंकि उस समय उनकी ६०४ वर्ष की आचार्य कुल में भारद्वाज का प्रवेश हुआ तो शिक्षा प्रारम्भ होने लगी जब शिक्षा का प्रारम्भ हुआ तो उसकी रूचि जो अथवा मस्तिष्क था वह विज्ञान के मार्ग को चल दिया परन्तु देखो, विज्ञान के मार्ग को प्राप्त करने लगे वह बालक बाल्यकाल में ही आचार्य कुल में धातुओं के ऊपर प्रश्न करते यह प्रश्न करते हे भगवन! मैं सूर्य मण्डल में जाना चाहूँ तो किन-किन धातुओं से यान का निर्माण हो सकात है आज मैं यदि वायुमण्डल में से शब्दों की चित्रावली लेना चाहता प्रारम्भ करूं तो

उसमें कौन-कौन से धातुओं की आवश्यकता है यह प्रश्न करते रहते और ऋषि भली भांति उत्तर देते रहते मुझे वह स्मरणहै बेटा! आज मैं यह कहा करता हूँ कि संसार को यदि ऊँचा बनाना है तो मेरी प्यारी माताओं को ऊँचा बनाना होगा अन्यथा यह संसार ऊँचा नही बनेगा। 12.10.1972

275 महर्षि भारद्वाज मुनि ने एक संहिता

बनाई थी वह भारद्वाज संहिता कहलाती थी, इस संहिता का प्रायः पठन-पाठन चलता था संहिता मे विज्ञान की अनेक धाराओं का वर्णन आता है। 28.10.1972

आयुर्वेद का जो सम्बन्ध है वह चन्द्र विज्ञान से है। क्योंकि चन्द्रमा औषधियों में रस प्रदान करने वाला है, रस को भरण करने वाला है और उससे अधिक जो सम्बन्ध है वह सूर्य से है। क्योंकि सूर्य उनको तपाता है। जैसे रस का भरण करना चन्द्रमा का कार्य है इसी प्रकार तपाने का कार्य सूर्य का है। अब जब सूर्य तपा देता है तो उससे गति अप्रेत वायु में मानी जाती है। जो वायु है वह तपे हुए को शुष्क बना देती है, आस्थापन कर देती है। और वायु चन्द्रमा को पुनः परमाणु दे करके उन्हें पुनः रस का भरण करके जल का उस औषधि का आश्रय ले करके हम जल के द्वारा शोधन करते हैं। कुछ औषधिएं अग्नि के द्वारा शोधन होती हैं। वह एक मूल औषधि बन करके मानव की आयु प्रबल होती है। श्वास की गति में धीमापन आता है, मन में शान्ति आती है क्योंकि औषधियों को हमारे यहाँ सोम कहते हैं। आयुर्वेद पंडित यह कहता है कि हे मानव! यदि तू अपने जीवन को ऊँचा बनाना चाहता है, तू अपने जीवन को आयुष्मान बनाना चाहता है तो तेरा मन प्रसन्न रहना चाहिए। क्योंकि मन का सम्बन्ध चन्द्रमा से है और चन्द्रमा से मन रस लेता है और मन के ही कारण यह पृथ्वी में औषधि हैं। इन औषधियों का मन से सम्बन्ध है इसलिए मन अधिक से अधिक प्रसन्न रहना चाहिए। 01.08.1973

276 महर्षि भारद्वाज

महर्षि भारद्वाज विद्या को अध्ययन करता रहा। अध्ययन करते हुए उन्होंने विद्या को पूर्ण कर लिया। एक समय तत्त्व-मुनि महाराज बोले, हे ब्रह्मचारी! तुम्हारी विद्या पूर्ण हो गई है, अब तुम विद्यालय को त्याग दो! आचार्य दीक्षान्त में कहता है, हे ब्रह्मचारी! तुम विद्यालय को त्याग रहे हो। आज से विद्यालय की यही शिक्षा है कि तुम मिथ्यावादी मत बनो! सत्य कथन, सत्य उच्चारण करने में तत्पर रहना। अन्यथा मौन-व्रत रहना। ज्ञान और विज्ञान में तुम्हारी गति होनी चाहिए। यह उपदेश दे करके ऋषि ने अंतिम चरण में भारद्वाज को विद्यालय से विदा किया।

भयंकर वनों में जाकर उन्होंने विचारा कि मुझे करना क्या है? जिस विद्या का अध्ययन किया था, उन्होंने एक स्थली पर जाकर, कजली वनों में एक यज्ञशाला का निर्माण किया। सबसे प्रथम दो-कोण की यज्ञशाला का निर्माण किया। तृतीय-कोण यज्ञशाला का निर्माण किया। पंच-कोण की यज्ञशाला का निर्माण किया। नाना ऋषि उनके समीप आने लगे। ब्रह्मचारी अध्ययन के लिए आने लगे। क्रियात्मक शिक्षा की प्रणाली प्रारम्भ हो गई।

मुझे स्मरण आता रहता है वे चौबीस कोणों की यज्ञशाला का निर्माण करने वाले बनें, उसके पश्चात जो परमाणु-वाद उत्पन्न होता था, उस परमाणु को एकत्रित करने लगे और परमाणु एकत्रित करते, उनमें जब तरंगें उत्पन्न होने लगीं। तो वे यन्त्रों का निर्माण करने लगे। उन्होंनेअपनी विज्ञानशाला में नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण कर लिया। वे वैज्ञानिक बन गए। 02.05.1979

इस संसार में किस-किस प्रकार का वैज्ञानिक, किस-किस काल में हुआ? मुझे वह काल स्मरण आता रहता है। महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ नाना प्रकार की विज्ञानशालाएं थी। उन विज्ञानशालाओं में ऐसे वैज्ञानिक थे, जिन वैज्ञानिकों की उड़ान लोक-लोकान्तरों में रहती थी। जहाँ भी छाया प्रवाह होता था, आधुनिक काल में उसको ग्रहण के रूप में प्रकट किया जाता है। 22.02.1980

277 रेंगणी भारद्वाज

एक समय जिन्हे, माता सोमवृत्तिका शकुन्तका कहते थे, रेंगणी ब्रह्मचारी से, वह अपने स्वामीत्व को अपने गृह में, प्रातःकालीन याग हो रहा था, जब प्रातःकालीन याग हो रहा था, तो शकुन्तका ने, एक समय रेंगणी भारद्वाज से कहा हे प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ, कि आज के वेद के मन्थन में, एक ऐसा प्रकरण आ रहा था, जिसको मैं जानना चाहती हूँ।

रेंगणी भारद्वाज ने कहा देवी! उच्चारण करो, तुम क्या जानना चाहती हो? उन्होंने कहा हे प्रभु! वेद मन्त्र में यह आ रहा था, ओतं ब्रह्मा ओतं रूद्रा ओतं वाचन्नमं व्रतं ब्रीहि व्रतं देवाः जैसे ही देवी ने यह वाक् उच्चारण किए, तो महर्षि रेंगणी भारद्वाज ने कहा कि हे देवी! जैसे एक लोक दूसरे में पिरोया हुआ रहता है, जैसे एक मानव ब्रह्मसूत्र कहलाता हैं, उस ब्रह्मसूत्र में ये जगत पिरोया हुआ है, जैसे मधुमक्खी है मधुमक्खी एक विशेष धिराज मक्खी कहते हैं उसमें सर्वत्र मक्खियाँ पिरोयी हुई रहती है उसमें औसत बनती रहती है इसी प्रकार यह मानवीयतव एक दूसरे में पिरोया हुआ यह दृष्टिपात आता है, जैसे वेद का मन्त्र कहता है, कि यह जगत अपने में गुरुत्व से ले करके, एक

माला बन जाती है, और वह माला क्या है?, देवी ने कहा हे भगवन! यह जगत कैसे उच्चारण किया, उसी समय यह जगत अपने में ही जगत है, यह उसका ऊत्तर मिला, परन्तु पुनः उन्होंने कहा भगवन! अग्निमय जगत। 02.08.1987

278 चाक्राणी गार्गी और कागभुषुण्ड जी की विज्ञान चर्चाएँ

तो जब ऋषि ने यह वर्णन किया तो चाक्राणी गार्गी ने कहा हे प्रभु! एक समय मैंने पृथ्वी विज्ञान को ओर उसके परमाणुओं को ले करके मैं भ्रमण करते हुए कागभुषुण्ड जी के द्वार पर पंहुच गई थीं जब कागभुषुण्ड जी के द्वार पर पंहुचीं, तो मैंने यह प्रश्न किया कि इस पृथ्वी को पृथा क्यों कहते हैं? उन्होंने कहा कि इसमें गुरुत्व है, इसीलिए इसे पृथा कहा जाता है, इसे वसुन्धरा कहते हैं, क्योंकि इसके गर्भ में हम धारण करते रहते हैं, एक समय महर्षि भारद्वाज मुनि के द्वार पर पंहुचे, तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने यह प्रश्न किया, कि महाराज! जैसे ही तुम्हारा यान, तुम्हारा यन्त्र जैसे स्वाति नक्षत्र में पंहुचा, तो स्वाति नक्षत्र में ये चारों प्रकार की सृष्टियां हैं अथवा नही, तो ऋषि ने यह वर्णन कराया कि ये चारों प्रकार की सृष्टियां प्रत्येक लोक लोकान्तरों में दृष्टिपात आती है। 78.92.012

279 महर्षि कागभुषुण्ड जी की अंतरिक्ष उड़ान

जब वह ब्रह्मचारी अड़तालीस वर्ष का हुआ, तो महाराजा सुग्रीव की कन्या से उसका संस्कार हुआ, महाराजा सुग्रीव और दोनों विधाता थे। उनकी कन्या से जो संस्कार हुआ, तो उस संस्कार के पश्चात एक पुत्र को जन्म दे करके, उस कन्या का निधन हो गया। निधन हो जाने के पश्चात माता ने पुनःकहा कि पुत्र! तुम संस्कार कराओ। उन्होंने कहा कि मातेश्वरी! अब मैं परमात्मा के विज्ञान में जाना चाहता हूँ, अब मैं इस प्रकृतिवाद को जानना चाहता हूँ, मुझे संस्कार की इच्छा नहीं। क्योंकि पितर याग का मेरा उद्देश्य पूर्ण हो गया है। पितर याग क्या है? मेरे पितरों ने जो याग किया था, मुझे उत्पन्न किया। मैंने एक पुत्र को जन्म दिया, मेरी पत्नी समाप्त हो गई। उसका कार्य पूर्ण हो गया।

जब इस आभा में नाना वैज्ञानिक विराजमान हैं, उन्होंने अपने शरीर के प्राणों को अध्ययन करना प्रारम्भ किया। एक समय वह कागभुषुण्ड जी के द्वार पर पहुंचे और कागभुषुण्ड जी से यह कहा कि महाराज! मुझे शिक्षा दीजिए। कागभुषुण्ड जी जो इस विद्या को जानते थे, वे अन्तरिक्ष में उड़ान उड़ना भी जानते थे, पृथ्वी में, समुद्र के आँगन में भी अपनी गति को जानते थे कागभुषुण्ड जी इतने वैज्ञानिक थे, इतने योगेश्वर थे, मुझे जब उनका जीवन स्मरण आता है तो हृदय गद् गद् हो जाता है। मैं यह कहा करता हूँ कि कागभुषुण्ड जी जैसा बनना चाहिए, जो अन्तरिक्ष में गति करने वाला हो। 04.05.1976

280 महर्षि कागभुषुण्ड

महर्षि कागभुषुण्ड जी ने वर्णन करते हुए कहा कि तुम्हारा विद्यालय महान बनता रहे, मेरी ऐसी सदैव कामना बनी रहती है। तुम्हारे विद्यालय में धनुर्याग, तुम्हारा सार्थक होने जा रहा है, अस्त्रों शस्त्रों का निर्माण हो गया है और उनके ऊपर क्रियाक्लाप हो रहा है यह विद्यालय सदैव तुम्हारा महान बन करके और संसार का प्राणी पृथ्वी के प्राणी भी आ करके यहां विद्या अध्ययन करे मंगल मण्डल के प्राणी भी आ करके तुम्हारे यहां अध्ययन कर सकते है, ऐसा मुझे अनुभव स्मरण है, मंगल का वैज्ञानिक इस पृथ्वी मण्डल पर आता रहा है और यहां का वैज्ञानिक मंगल मण्डल में जाता रहा है यातायात बना हुआ, अस्त्रों शस्त्रों में विचारणीय कृतियां नृत होती रही है। 27.11.1987

281 महर्षि शिकामकेतु उद्दालक की विज्ञानशाला

शिकामकेतु उद्दालक मुनि के यहाँ पति पत्नी अपनी विज्ञानशाला में, यज्ञशाला में प्रथम याग करते, उनकी तरंगों के ऊपर अन्वेषण करते रहते। अन्वेषण करते करते, उन्होंने एक ऐसे यन्त्र का निर्माण किया था, जिसे यज्ञमान या जो भी स्वाहा कहता, उसके चित्र बनकर के वह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान होकर के द्यौ में प्रवेश हो जाते है। शिकामकेतु उद्दालक गोत्र में बड़े विचित्र ऋषि थे, उन्होंने बड़ा महान तप किया। पचास वर्ष के तप करने के पश्चात जब यन्त्रों में प्रवेश किया तो एक सौ पांच वर्ष की आयु होते ही उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया, जिसमें अपने पूर्वजों का दर्शन करने लगे। वह पिता, महापिता, पडपिता, जो अन्तरिक्ष में शब्द और शब्दों के साथ में चित्र, चित्रों के साथ में उनका क्रियाकलाप उन्हें दृष्टिपात आता रहता। 12.02.1989

282 याज्ञिक वैज्ञानिक महर्षि शिकामकेतु

महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि ने कहा हे प्रभु! हम, पति और पत्नी इस मार्ग के लिए गमन कैसे करते है? यह हमारा एक साहित्य है, एक विचार है, पत्नी ने एक समय कहा प्रभु! मुझे आज एक स्वप्नवत हुआ है, कि मेरा जो यह मन है यह आत्मा के प्रकाश में रत्त करता हुआ, कहीं मंगल मण्डल में चला गया है और मंगल मण्डल से द्यौ लोक को तरंगे चली गई है। तो प्रभु! इसका साकार कैसे हो सकता है? तो मेरी देवी, शकुन्तका ने कहा इसका साकार रूप होना चाहिए। तो उसके माध्यम से, हम नाना प्रकार के यागों का चयन करते रहते है, जब मैं अपने विद्यालय स, महर्षि तत्वमुनि महाराज दद्दड़ गोत्रीय से अध्ययन करता था, तो महर्षि तत्वमुनि महाराज के विद्यालय में,

जहाँ नाना प्रकार के आध्यात्मिकवाद की प्रेरणा प्राप्त होती रहती, वही हमें ऋषि भौतिक विज्ञान की तरंगों में भी तरिंगत करते रहते। 28.12.1987

283 उद्दालक मुनि की प्राण साधना

परमाणुओं को ला करके, प्राण सत्ता के द्वारा, लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ने लगता है, उद्दालक मुनि को यह प्राण सत्ता यह सिद्ध हो गई कि वह साधना में परिणत हो गए।प्रायः वह पृथ्वी से साधना के द्वारा, कुछ यन्त्रों के द्वारा, वह मंगल में चले गए, उन्होंने ध्रुव तक भ्रमण किया। तो यह विज्ञान हमारे यहां परम्परागतों से, ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में से गमन करता रहा हैं, और उस नृतिका को हमें दृष्टिपात करना चाहिए। 02.03.1990

284 महर्षि शिकामकेतु की विज्ञानशाला

वह तारामण्डलों का प्रकाश है, विज्ञानवेताओं ने जब विज्ञान के ऊपर अन्वेषण किया, यहां महर्षि शिकामकेतु उद्दालक गोत्र के ऋषियों ने और महर्षि भारद्वाज इत्यादियों ने इसके ऊपर बड़ा अनुसन्धान किया है।महर्षि विश्वामित्र के यहां जब धनुर्याग होता था, तो वहां भी प्रायः इस प्रकार का अनुसन्धान होता रहा है।महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि की यज्ञशाला में विज्ञानशाला में, जब वह प्रवेश हुए, तो जब वह तारा मण्डलों की गणना करने लगे, वह पृथ्वियों की गणना करने लगे, तो उनकी विज्ञानशाला में तीस लाख पृथ्वियों की गणना की, वे तीस लाख पृथ्वियाँ, जब एक समूह बन करके, जितना विशाल यह सूर्य मण्डल है, इसमें ऐसी ऐसी तीस लाख पृथ्वियाँ, उसमें समाहित हो जाती हैं। जब इस प्रकार ऋषि ने वर्णन किया, उन्होंने कहा हे राजन! इतना विशाल यह सूर्य मण्डल है, परन्तु जब सूर्य की हम गणना में लगते है। तो एक सहस्र सूर्य, इतना विशाल यह बृहस्पति मण्डल, उसमें एक सहस्र सूर्य इसमें समाहित हो जाते हैं। वह इतना विशाल मण्डल है, और एक सहस्र बृहस्पति मण्डलों, एक आरुणि मण्डल में समाहित हो जाते हैं, और आरुणि मण्डल इतना विशाला मण्डल है, परन्तु एक सहस्र आरुणि मण्डल, ध्रुव मण्डल में समाहित हो जाते हैं। एक सहस्र ध्रुव मण्डल, स्वाति नक्षत्र में ओत प्रोत हो जाते हैं, एक सहस्र स्वाति नक्षत्र, पुष्य नक्षत्र में समाहित हो जाते हैं, और एक सहस्र पुष्य नक्षत्र, मूलकेतु नक्षत्र में ओत प्रोत हो जाते हैं, एक सहस्र मूलकेतु नक्षत्र मौनकेतु मण्डल में ओत प्रोत हो जाते हैं, एक सहस्र मौनकेतु मण्डल, ब्रीहित लोक में प्रवेश हो जाते हैं, एक सहस्र ब्रीहित मण्डल, वह गन्धर्व में प्रवेश कर जाते है।

तो गन्धर्व इस माला के मनकों का, अन्तिम मनका कहलाता है। तो जिस प्रकार वेद का ऋषि वर्णन करने लगा, तो ऋषियों ने कहा हे राजन! इतने मण्डलों का एक सौर मण्डल बन जाता है, इतने मण्डलों का एक सौर मण्डल है और एक अरब पिचानवें करोड़ नवासी लाख, उन्नचसवें हजार, और पांच सौ बावन के लगभग इतने सौर मण्डलों की एक आकाशगंगा बनती है, इतनी विशाल आकाशगंगा है, वेद का उदगीत गाने वाला कहता है, कि इतने सौर मण्डलों की ऐसी ऐसी आकाश गंगाएं, प्रभु के राष्ट्र में, अनन्तमयी एक अरब, नवासी करोड़, उन्नचस लाख और पांच सौ बावन, के लगभग इतनी आकाशगंगाओं की एक अवन्तिका बन जाती है, और पौने दो अरब, अवन्तिका की एक निहारिकाओं बन जाती है।ऋषि अब यहां आ करके मौन हो गया, और वह कहते हुए कि यह परमात्मा का अन्नत ब्रह्माण्ड है।ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा हे राजन! तुम जान गए होगे, तारा मण्डलों का धीमा धीमा प्रकाश आ रहा है, उसी प्रकाश से हम अपनी पगडण्डियों को ग्रहण करते हैं, वह हमें पथ प्रदर्शक बना देते हैं। 16.12.1991

285 महर्षि शिकामकेतु के यहाँ चित्रावली दर्शन

एक समय महर्षि शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ नाना ऋषियों का गमन हुआ और ऋषियों को जब उन्होंने आतिथ्य दिया, तो उन्होंने कहा प्रभु! हम कुछ चित्रावलियों का दर्शन करने के लिये आए हैं। तो शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ, ऐसी विज्ञानशाला थी, जिनमें शब्दों को और शब्दों के साथ में चित्र और चित्रों के साथ में क्रियाकलाप, उनके यंत्रों में दृष्टिपात आते रहते। उनके पूर्वज के सौंवे महापिता, उनके पिच्चहत्तरवें महापिता, ऐसे क्रियाकलापों में रत्त रहते थे, जिनका क्रियाकलाप, एक समय उनका योग भ्रष्ट हो गया और उनके जो शब्द थे, वे अन्तरिक्ष में, अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, वही भ्रष्ट प्रतिक्रियाएं वायुमण्डल में चित्रों में परिणित हो गई। वे चित्रों में जब परिणित हो गई, तो उस समय शिकामकेतु उद्दालक ने ऋषियों को दर्शन कराया कि मेरे पिच्चहत्तरवें महापिता हैं, इनका, योगवृत्ति भ्रष्ट हो गया, उनकी प्रवृत्ति, जब साधना में भ्रष्ट हो गई, तो वे ही अशुद्ध परमाणु, अशुद्ध शब्द, चित्रों में रत्त हो गए हैं और वही शब्द, चित्र सब दृष्टिपात आ रहे हैं। 09.10. 1989

286 पूर्वजों के दर्शन

तो उन्होंने कहा प्रभु! मैं यह निश्चय कर गया हूं, कि मैं अपनी योग साधना में, या चित्त की साधना में, संसार की साधना में रहूँ, तो मैं, प्रभु! आपकी शरणागत रह करके, आपका स्मरण करता रहूँ, मैं अशुद्धता में परिणित न हो जाऊं जिससे मेरी आत्मा को आभास पहुंच जाए

और मैं, प्रभु के राष्ट्र में भ्रष्ट हो जाऊं। एक प्रति स्रोत है, जिससे मानव सदैव जानता रहा है, क्योंकि विज्ञान अपनी आभा में विचित्रता में उड़ाने उड़ता रहा है। तो ये विचित्र, विज्ञान की उड़ान है, क्योंकि महर्षि शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ, वे सौवें महापिता तक के उन्होंने यंत्रोंसे दर्शन किए।

287 महर्षि षटांगकेतु की वैज्ञानिक चर्चाएँ

हे देवी वेदमन्त्र यह कह रहा है कि हम लोक लोकान्तरों में भी गमन कर सकते हैं। उन्होंने कहा कि प्रभु हमें उस विज्ञान को अपने आंगन में प्रवेश करना चाहिए। कुछ समय के पश्चात एक यन्त्र का निर्माण किया था। और यन्त्र में उन्होंने कहा कि हे देवी! आओ, आज हम लोकों का भ्रमण करके आते हैं, उन्होंने कहा बहुत प्रियतम महर्षि षटांगकेतु उनकी पत्नी श्रेय और एक ब्रह्मचारी वीरेन्द्रकेतु तीनों याग में विद्यमान हो गए और विद्यमान हो करके वहां से जिस यन्त्र को उन्होंने जाना, वह यन्त्र सूर्य की ऊर्ध्वा में गति करने लगा। तो सबसे प्रथम पृथ्वी से उड़ान उड़ता हुआ वह यान बुध में चला गया। जब बुध से उड़ान उड़ी, तो मंगल में चला गया। मंगल से उड़ान उड़ी तो वह रोहिणी केतु मण्डल में चला गया। जब रोहिणीकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी तो वह तृतिका मण्डल में चला गया। वहां से वह मृचिका मण्डल में प्रवेश कर गया। वहां से वह अरूणधति मण्डल में चला गया। वहां से वशिष्ठ मण्डल में चला गया। वहां से रेवाचुक मण्डल में चला गया। वहां से बृचगाथुन मेघमण्डल में चला गया। वह यान लोकों का भ्रमण करके पुनः पृथ्वी पर आ गया। 31.03.1990

वैज्ञानिक श्रुतिवान ऋषि

इसीलिए मेरी इच्छा यह है, कि यह जो समाज है, इसमें कर्तव्यवाद अपनी आभा में निहित रहना चाहिए। वही तो राष्ट्र को और समाज को ऊँचा बनाता है, तो राजा के इन वाक्यों को पान करने वाले वैज्ञानिकों ने कहा प्रभु! प्रयत्नशील हैं।क्योंकि विज्ञान की जो उग्र क्रिया है, उसको निम्नता में लाना ही हमारे लिए एक महान कहलाता है। तो इसीलिए हम उसे कर्तव्यवाद में लाना चाहते, उस काल में एक श्रृतिवान नामक ऋषि महाराज थे, श्रृतिवान ऋषि महाराज ने एक यन्त्र का निर्माण किया था, जो लोक लोकान्तर और भी नाना प्रकार के अभ्यों में उदय होता रहता है, उसमें वह चित्रावली भी विद्यमान हैं, और अन्तरिक्ष में से तरंगे स्वतःआना, चित्रों का भी वहाँ दर्शन होता रहता था, समाजिक चित्र और जो हमारे शब्दों के साथ में गति करने वाले जो चित्र थे, जो हमारे पूर्वज चले गयें हैं, जो सहस्रों वर्षों पूर्व हमारे पूर्वज चले गए हैं, उनके शब्द अन्तरिक्ष में जो गमन करते थे, उनके चित्र यन्त्रों में दृष्टिपात आते रहते थे, उसी प्रकार के उन्होंने यन्त्रों का निर्माण किया था, राजा को उन्होंने दृष्टिपात कराया। 19.05.1987

भ्रमण करते हुए, उन्हें आग्न्येस्त्र, ब्राह्मस्त्र, वरूणास्त्र नाना प्रकार के अस्त्रों शस्त्रों का दिग्दर्शन कराया।उन्होंने कहा प्रभु! यह मेरा यन्त्र हैं, इस यन्त्र के यहाँ, महर्षि सुकेता और ब्रह्मचारी दोनों ने इस यन्त्र का निर्माण हो रहा है, वह यन्त्र सूर्य की परिक्रमा कर रहा है। एक यन्त्र का निर्माण ब्रह्मचारिणी शबरी और पणपेतु मुनि महाराज के सहयोग से, एक ऐसे यन्त्र का निर्माण किया है, जो ध्रुव मण्डल की परिक्रमा कर रहा है, तो नाना प्रकार का विज्ञान हमारे यहा, उन तथ्यों को हम जानते रहते हैं, उनके चित्रों का, उनके क्रियाकलापों को हम सदैव अपने में धारयामि बनाते रहते हैं। 24.06.1987

288 सोम भानु ऋषि द्वारा यज्ञाग्नि से निर्मित परमाणुओं से यन्त्र निर्माण

अग्नि से अग्न्याधान करके, वैश्वानर अग्नि की धाराओं को जानने वाला वैज्ञानिक अपने वाहन में विद्यमान हो करके सूर्य लोक की यात्रा करता है। मंगल की यात्रा करता है। मैंने बहुत पुरातन काल में दृष्टिपात किया। एक समय सोमभानु ऋषि अपने आसन पर विद्य्रमान थे। उनकी विज्ञानशाला में भिन्न भिन्न प्रकार की यज्ञशाला का निर्माण हो रहा था और प्रत्येक यज्ञशाला में अग्नि प्रदीप्त हो रही थी। और नाना प्रकार की औषधियों का, वनस्पतियों का याग हो रहा था। स्वाहा हो रहा था, और जब स्वाहा हो रहा था, तो ऋषि अध्ययन कर रहा था, कि कौन सी यज्ञशाला की अग्नि कहाँ जा रही है? कौन सी यज्ञशाला की अग्नि क्या क्या उत्पन्न करती है? उन परमाणुओं को वह नाना यन्त्रों में, अपने में धारण करके उससे यन्त्रों का निर्माण कर रहे थे। जो तेजोमयी अग्नि सूर्य में प्रदीप्त रहती है उस अग्नि को वह अपने यन्त्रों में धारण कर रहे थे। उस यज्ञशाला की अग्नि को ले रहे थे। उनकी तरंगों को ले करके उनका समन्वय करके, उनसे यज्ञशालाओं में ऐसी औषधियों का आह्वान कर रहे थे, अर्पित कर रहे थे, जिनसे पारे की जो धातु है, उसके परमाणु एकत्रित कर रहे थे। और एकत्रित करके, उन अग्नियों के द्वारा वाहनों का वे निर्माण कर रहे थे। वाहन का निर्माण करके उस वाहन को वे अन्तरिक्ष में त्याग रहे थे। उन यानों को निचले स्थान में गति दी जा रही थी। वह यान सूर्य लोक की यात्रा कर रहा था। केवल पृथ्वी के जल को ऋषि ने त्याग दिया। अग्नि के परमाणुओं से ही वाहन गति कर रहे हैं। यज्ञशाला में जो वैश्वानर नाम की अग्नि प्रदीप्त हो रही थी। उस अग्नि में जो परमाणु औषधियों के द्वारा, वनस्पतियों के द्वारा उपस्थित हो रहे थे, उनको अपने में धारण करता हुआ, उस अग्नि के परमाणुओं से वायुमण्डल में वह ध्रुव की यात्रा कर रहा है। ध्रुव यान का निर्माण हो रहा है। पारस एक धातु होती है। उस धातु की सहायता से वह यान ध्रुव की यात्रा कर रहा है।

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में ऋषि मुनि केवल सूर्य की किरणों से वाहन को गतिमान करते थे। यज्ञशाला की अग्नि से ही वह परमाणुओं को एकत्रित करके उन परमाणुओं से ही यान गति कर रहा है। जल के द्वारा अग्नि का शोधन किया जाता है ओर अग्नि के शोधन से ही यान का निर्माण हो रहा है। 20.04.1977

289 महान वैज्ञानिक बाल क्रीति ऋषि

एक उद्दालक गोत्र में, एक ऋषि हुए है, उस ऋषि का नाम बाल क्रीति कहते थे। बाल क्रीति जो ऋषि थे, वह एक समय सूर्य की किरणों का अनुसन्धान कर रहे थे। अनुसन्धान करते हुए, वह रसना के अग्रभाग में सूर्य की किरणों को लेते थे। अग्रभाग में, जब सूर्य की किरणों को लेते थे, तो उनमें जो पंच महाभौतिक, जिह्वा स्वादन हो रहा है, वह किरणों में विद्यमान था। वह जिह्वा तपायमान होने लगी। विचार आया उस जिह्वा में शक्ति प्रदान हो जाती है। और वाणी में वह अग्रणों में छिद्र कहलाते है, उन छिद्रों में, एक आभा, एक कृति उन छिद्रों में तेज आ जाता था, सूर्य की किरणें प्रवेश कर जाती थी। और जब सूर्य की किरणें, उसमें प्रवेश करती है तो वही वैज्ञानिक पृथ्वी स्थल पर, एक यन्त्र का निर्माण करता है। उन धातु पिपादों को जानता है और यन्त्रों का निर्माण करता हुआ उन किरणों को, अपने में ग्रहण करता हुआ, तेजस्वी बनता है और उन किरणों से वह स्वर्ण वाहिनी किरण है, एक वाहन वाहिनी किरण है नाना प्रकार की किरणों को जानने वाला, महान वैज्ञानिक बन जाता है।

290 वैज्ञानिक कृतिभानु भारद्वाज ऋषि

उद्दालक गोत्र में ऋषि हुए हैं महाराजा 'विश्वेकृतिभानु ऋषि' 'कृतिभानु भारद्वाज ऋषि' विज्ञान में सदैव रमण करते रहते थे। एक समय वह भयंकर वन में विद्यमान हो करके यन्त्रों का निर्माण करने लगे। और विचारने लगे। विज्ञान में रमण करने वाला ऋषि यह विचार रहा है। आभा में रमण कर रहा है। सम्भूति में गति करता हुआ वह कह रहा है कि मैं वायु स्पर्श वाले यन्त्रों का निर्माण करना चाहता हूँ।

उन्होंने कुछ यन्त्रों का निर्माण किया और उन यन्त्रों में इस परिक्रमा में, वायु के वेग में रमण करने वाला जो शब्द है, उसको उन्होंने जाना। जान करके वह स्पर्श हो रहा था। इस स्पर्श में वह चित्रावलियों में दृष्टिपात आने लगा। यह जो स्पर्श भावना होती है, उनके साथ साथ उसको मनोनीतता विद्यमान होती है। तो वह जो विज्ञानमयी स्वरूप है, वह महान कहलाया जाता है।

आज हमें विज्ञान के क्षेत्र में जाना है। यदि हम आन्तरिक जगत में प्रवेश करते हैं, तो प्राणों का आदान प्रदान हो रहा है। परमाणुओं का आदान प्रदान हो रहा है और परमाणुओं का आदान प्रदान होकर विज्ञान के स्वरूप में हम रमण करते हैं।

यदि क्रोध के यन्त्रों का निर्माण किया जाए। एक मानव क्रोधित हो रहा है, रजोगुण छा रहा है, रजोगुण के छाने पर वायु मण्डल में वे तरंगें विद्यमान होती हैं। वैज्ञानिक जन उन क्रोधमयी तरंगों को एकत्रित करते हैं, तो उससे अणुवाद की उत्पत्ति होती है। अणु शक्ति की उत्पत्ति हो जाती है और उन परमाणुओं के अणुओं को एकत्रित करके एक दूसरे से मिलान करते हैं। एक दूसरे का समन्वय करते हैं और एक दूसरे का समन्वय करने के पश्चात उसमें एक महान धारा उत्पन्न होनी प्रारम्भ हो जाती है। उसमें भयंकर अग्नि के परमाणु होते हैं और अग्नि भी भिन्न भिन्न प्रकार की होती है।

एक समय विज्ञानवेत्ताओं में, दार्शनिकों में विचार विनिमय हो रहा था। रात्रि का काल था। आन्तरिक जगत से यह जो जगत है इस जगत में से एक पूंछ वाला, जो एक तारा मण्डल की आभा में, पुच्छाकृति कहलाता है। वह एक तेजोमयी स्वरूप उन्हें दृष्टिपात आने लगा, तो ऋषियों ने वैज्ञानिकों ने यह कहा कि महाराज यह क्या है? तो उन्होंने यन्त्रों में उसकी छाया ली और यह कहा कि यह जो शनि मण्डल है, और शनि मण्डल में जो सूर्य शनि को प्रकाशित कर रहे हैं, उस सूर्य और शनि के मध्य में बृहस्पति आ गया है। और बृहस्पति के अभ्युदय होने से अग्नि की, सूर्य की जो तेजोमयी किरण थी 'त्रुटकेतु' जो किरण कहलाती हैं वह उसके भाग से जब मिलान किया उन्होंने, तो उस भाग से वह छिन्न होकर के वह बृहस्पति की आभा में कुछ विभाग में छिन्न होकर के, वह हमें दृष्टिपात हो रही है। तो कहीं कहीं ऐसा होता है, कि सूर्य और पृथ्वी के मध्य में चन्द्रमा आ जाता है, वह छाया ग्रस्त हो जाता है। इसी प्रकार यह प्रायः संसार में होता रहता है। और संसार की धाराओं में इसी प्रकार का एक दूसरे से एक दूसरा वृत होता है। 22.02.1980

बाह्य जगत में आ करके कहीं चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है, कहीं मंगल की यात्रा कर रहा है। कहीं पृथ्वी के गर्भ को जान रहा है। कहीं वायु के तत्वों को जान रहा है। यह केसे जानता है? मानव के सूक्ष्म शरीर में, पिण्ड में सर्वत्र ब्रह्माण्ड विद्यमान है। परन्तु उस ब्रह्माण्ड को जानने की, तप करने की आवश्यकता है। जब मानव तप करता है। तप करने से वह जो अंकुर हैं, वह स्वाभाविक रूप से जागरूक हो करके वैज्ञानिक बनते हैं। यह जो मन और प्राण है एक सूत्र में आ करके वही इन्द्रियों के द्वारा विभक्त हो करके इसीलिए उसे योग की इच्छा होती है क्योंकि योग के तत्व भी इसमें विद्यमान रहते हैं। तो हमें इस मानवीय दर्पण को विचारना चाहिए। मानव दर्पण को, मानव विज्ञान को और बाह्य जगत वाले विज्ञान को समन्वय करना नहीं जानता। तो वह योगेश्वर नहीं बन सकता।

आज जब मानव से यह कहा जाता है हे मानव! तू अपने मानवीय दर्शन को जानने का प्रयास कर। मानव दर्शन को नहीं जानता अग्नि की तरंगों को जानता है। अग्नि की तरंगों का अपने जीवन से जो समन्वय होता है, उसको नहीं जानता। जब अग्नि की तरंगों का अपने मानवीय जीवन से समन्वय होता है, उससे आधुनिक काल का वैज्ञानिक दूर जा रहा है। कि मानव के जीवन में विज्ञान से कितना समन्वय रहता है? आधुनिक काल वैज्ञानिक का मंगल में यान जा रहा है। मंगल में यन्त्र जा रहा है, चन्द्रमा में जा रहा है। आज यन्त्रों पर यन्त्र जा रहे हैं। राष्ट्र के और समाज के गर्भ में प्रवेश करते हैं और समाज के उनसे यह कहा जाता है कि तुम्हारा जीवन कितना पवित्र है। तुम्हारा जीवन कितना सुरक्षित है। मानव, मानव से त्रासता को प्राप्त हो रहा है। मानव, मानव से मिलान करने के लिए तत्पर नहीं है। जहाँ मानव, मानव से मिलान करने में प्रसन्नता होती थी, उल्लास होता है, वहाँ मानव, मानव से भयभीत होता हुआ, अपने जीवन को मानवता में प्रकट नहीं कर रहा है। परन्तु जब मैं अपने पूज्य पाद गुरुदेव से कहा करता हूँ कि इस मानव समाज में अग्नि प्रदीप्त होने वाली है, तो पूज्यपाद गुरुदेव कहते हैं यह कटु शब्द है।

291 महर्षि सोमकेतु

महर्षि सोमकेतु ज्ञान और विज्ञान दोनों में पारायण थे। क्योंकि जितना वह जानते थे, उनके समकालीन अन्य बहुत सूक्ष्म जानते थे। परन्तु वास्तव में यह पारायणता का जहाँ प्रसंग आता है, वहाँ हमें तो ऐसा प्रतीत होता है, कि संसार में, इस प्रभु के राष्ट्र में, प्रभु के गर्भाशय में, कोई भी मानव पूर्ण नहीं है, क्योंकि कोई भी मानव पारायण नहीं है। पारायण उसे कहते हैं जो सर्वत्र ब्रह्माण्ड की आभा को जानने वाला हो। तो कोई भी मानव इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड की आभा को नहीं जानता।

एक एक निहारिका ऐसी है इस ब्रह्माण्ड में, चार अरब, तैंतीस करोड़ वर्षों के पश्चात इस पृथ्वी मण्डल पर उसका प्रकाश नहीं आता, तो यहाँ पारायण उच्चारण करना, मुझे ऐसा प्रतीत होता है, कि इन शब्दों को उच्चारण ही नहीं करना चाहिए, क्योंकि कोई भी मानव यहाँ संसार में पारायण नहीं है।

292 अनन्त निहारिकाएं

महर्षि सोमकेतु के समीप जिस काल में हम जाते थे, उनसे वार्ता प्रकट करते थे तो सोमकेतु से यह उच्चारण करते थे कि महाराज! आप तो विद्या में पारायण हैं, तो सोमकेतु स्वतः यह उच्चारण करते थे, कि मैं कैसे पारायण हूँ। यहाँ संसार में तो प्रभु ही पारायण हो सकता है, जो कि विज्ञानमयी स्वरूप है, जिसका यह जगत विज्ञान में दृष्टिपात आ रहा है, परन्तु उस प्रभु के राष्ट्र में नाना प्रकार की विद्याएं हैं, नाना प्रकार का ज्ञान और विज्ञान है, परन्तु जितनी मानव की आवश्यकता है, उतना वह इस संसार रूपी समुद्र में से प्राप्त कर लेता है, और यहाँ नाना प्रकार की धाराओं में नाना विद्याएं रमण कर रही हैं। सोमकेतु कहते थे, कि इस संसार की इस आभा को हम और गम्भीरता से रमण करते हैं, निहारिकाओं में जाते हैं, तो एक निहारिका को जानते हैं, तो दूसरी निहारिका उपस्थित हो जाती है। तो हमारे यहाँ अब तक, जब से सृष्टि प्रारम्भ हुई है, ऐसा उच्चारण किया जाता है, कि लगभग इस प्रभु की सृष्टि में जितने वैज्ञानिक हुए, उनमें से ऐसे ऋषि हुए हैं, जो सात सौ आकाश गंगाओं को जान पाए। परन्तु सोमकेतु सात सौ आकाश गंगाओं में पहुंच गए थे, उनकी श्रुति पहुंची, उनका विज्ञान चला गया। परन्तु उसके पश्चात भी सोमकेतु कहते हैं, कि अनन्त निहारिकाएं हैं।

महर्षि सोमकेतु मुनि महाराज का जो कर्म था, प्रातःकालीन वह याग करते थे। याग के पश्चात उसमें जो तरंगें उद्बुद्ध होती थीं, उन तरंगों को जानते रहते थे, उन तरंगों में वह रमण करते रहते, अपनी गति, अपनी श्रुति पहुंचाते, और उसके पश्चात उनको जान करके उसके पश्चात वह यन्त्रों का निर्माण करते थे उसके पश्चात यन्त्रों में जो निहारिकाओं के दर्शन होते थे, उनमें लोक लोकान्तरों के भी दिग्दर्शन करना, नाना सूर्यों को दृष्टिपात करना।

293 महाराजा मार्कण्डेय

जब महाराजा मार्कण्डेय ऋषि महाराज ने इस चन्द्रमा और पृथ्वी दोनों की आकर्षण शक्ति के द्वारा अपना स्थान बनाए हुए थे। अपना यन्त्र बनाए हुए थे, तो महाराजा शिव और पार्वती दोनों यन्त्र में लगभग छः माह तक मार्कण्डेय ऋषि महाराज का संग होता था।ऋषि मुनियों का जीवन और वैज्ञानिको का जीवन, परन्तु आहार और व्यवहार जब पवित्र होते हैं, तो मानव के मस्तिष्क की जो ग्रंथियाँ हैं, उनका स्पष्टीकरण हो जाता है। वह प्रभु की आभा में रमण करते रहते हैं। 17.03.1983

294 महर्षि मार्कण्डेयका वैज्ञानिक विमर्श

एक समय मार्कण्डेय ऋषि ने एक चन्द्रमा और पृथ्वी के मध्य में एक स्थली का निर्माण किया था। उस स्थली पर यन्त्र विद्यमान रहते थे। एक समय किसी काल में माता पार्वती ओर शिव ने यह दृष्टिपात किया अपने यन्त्रों के द्वारा यहाँ कोई छाया आ रही है। दोनों अपने यान में विद्यमान हुए और वह मार्कण्डेय मुनि के यान में प्रवेश हो गए। यान में प्रवेश हो करके पुनः जब पृथ्वी पर आए तो उसके ऊपर चिन्तन

का एक समूह होने लगा।
आधुनिक काल का विज्ञान कोई यन्त्र ऐसा निर्माणित नहीं कर सका है, जिस विज्ञान की धाराएँ, चन्द्रमा और पृथ्वी दोनों की आकर्षण शक्ति में विद्यमान हो करके, वहाँ कोई स्थली का निर्माण हो सके। अतीत के वैज्ञानिकों ने पूर्व काल में उन्होने ऐसे यन्त्रों का निर्माण किया था। 13.11.1983

295 महर्षि मार्कण्डेय का यन्त्र

सतोयुग के काल में महर्षि मार्कण्डेय ऋषि महाराज, महर्षि कृतिका, नेत्रकेतु ये तीनों वैज्ञानिक अपने यन्त्र में विद्यमान हो करके ये पृथ्वी और चन्द्रमा के मध्य में जब स्थिर हो गए। स्थिर होने से वह यन्त्र उन्हें दृष्टिपात आ रहा था। माता पार्वती और शिव दोनों की दिव्य दृष्टि थी और वे दिव्य दृष्टि से यन्त्र को दृष्टिपात कर रहे थे। हिमालय की कन्दराओं में विद्यमान हो करके पान कर रहे थे। माता पार्वती ने अपने पति से कहा भगवन! यह क्या है? तो जब वह अपने यान में विद्यमान हो करके अन्तरिक्ष में पहुंचे, दृष्टिपात किया। तो वह महर्षि मार्कण्डेय मुनि महाराज का यन्त्र था। जब यह दृष्टिपात किया, वहाँ से वार्ता प्रकट कर पृथ्वी मण्डल पर आए रहा अणुवाद परमाणुवाद का प्रश्न, परन्तु राजा रावण के यहाँ इस प्रकार के यन्त्र विद्यमान थे, जिन यन्त्रों से सेना संग्राम कर रही हैं और कौन इन्द्रजीत, रावण का पुत्र मेघनाद वह यन्त्र प्रहार कर रहा है। नीचे जल ही जल हो गया और ऊर्ध्वा में अग्नि की वृष्टि हो रही है, सेना अग्नि में भस्म होने लगी। भगवान राम को भारद्वाज मुनि ने एक वरुणास्त्र अस्त्र दिया था। माता अन्नाणि ने भी एक यन्त्र माता सीता को प्रदान किया था। उस यन्त्र का जब उन्होंने प्रहार किया, तो अग्नि समाप्त हो गई। आज का विज्ञान अग्नि प्रदीप्त कर सकता है, परन्तु उसको शान्त नहीं कर सकता। आज के विज्ञान ने इतना जाना है। 23.02.1980

296 मार्कण्डेय ऋषि

एक समय मार्कण्डेय ऋषि ने चन्द्रमा और पृथ्वी के मध्य में एक स्थली का निर्माण किया था। उस स्थली पर यन्त्र विद्यमान रहते थे। एक समय किसी काल में माता पार्वती और शिव ने यह दृष्टिपात किया अपने यन्त्रों के द्वारा कि यहाँ कोई छाया आ रही है। दोनों अपने यान में विद्यमान हुए और मार्कण्डेय ऋषि के यान में प्रवेश हो गए। यान में प्रवेश हो करके पुनः जब पृथ्वी पर आए तो उसके ऊपर चिन्तन का एक समूह होने लगा। जिस विज्ञान की धाराएँ चन्द्रमा और पृथ्वी दोनों की आकर्षण शक्ति में विद्यमान हो करके वहाँ कोई स्थली निर्माण हो सके। अतीत के वैज्ञानिकों ने पूर्व काल में ऐसे यन्त्रों का निर्माण किया था।

297 शिव याग

तो मार्कण्डेय मुनि महाराज विज्ञान में बड़े महानता में परिणत होते रहे हैं, जो महाराजा शिव के द्वारा अन्वेषण करते रहे हैं, तो महाराजा शिव ने कहा चलो, समुद्र के तट पर याग करेंगें। तो मुझे स्मरण आता रहता है महर्षि लोमश, कागभुषुण्डण्ड और जामवन्त इत्यादि वहां से गमन करते हैं और महाराज शिव से कहा प्रभु! आप याग का उसका प्रारम्भ कीजिए, तो उन्होंने कहा बहुत प्रियतम, तो वह वहां से भ्रमण करते हुए, समुद्र के तट पा आ गए।
तो उन्होंने विजय याग घोषित किया, हम विजयी हो जाए विद्वानों की, महापुरूषों की, एक सूची बनाई।उसमें सबसे प्रथम महर्षि विभाण्डक मुनि को चुनौती प्रदान की, द्वितीय उन्होंने वशिष्ठ मुनि को चुनौती, और तृतीय लोमश और शृंगी इत्यादियों को उन्होंने निमन्त्रित किया। और यह कहा कि याग को पूर्ण कराया जाए तो सब ऋषि मुनियों ने विद्यमान हो करके, शिव याग का पूजन किया और शिव याग उसे कहते हैं, वैदिक साहित्य में शिव नाम के राजा भी हैं, शिव परमात्मा को भी कहते हैं, शिव नाम आत्मा का भी हैऔर शिव नाम प्राणों को भी कहा गया है, जिससे हमारा प्राण हनन न हो जाए, हम ऐसी भावना से, और ऐसी साकल्य के द्वारा अग्नि में हूत करें, वह देवताओं का मुख हैऔर देवताओं के मुख में जब हूत करेंगें, तो वही देवता हमारे अन्तर्हृदयों में क्रियाकलाप करेंगें, तो वही आत्मा का लोक बना हुआ है, उसी में वह आत्मा का गृह है, आत्मा उसी पंच महाभूतों को लिए क्रियाकलाप कर रहा है। 31.10.1991

298 महर्षि मार्कण्डेय

हमारे यहां एक मार्कण्डेय ऋषि हुए है जो भा कृति ओर श्वेतं गोत्रों में कहलाए गए, परन्तु उनमें यह विशेषता थी कि वह विज्ञानवेता बहुत महान विज्ञान में रत रहते थे, और वैज्ञानिक यन्त्रों में विद्यमान हो करके, वह चन्द्रमा और पृथ्वी की जहां सीमा का सन्निधान होता है, वहां यन्त्रों को स्थिर किया करते, और वहीं विज्ञान में, अपने में, परमाणु और अणु का भी विभक्त होना, उनके लिए स्वाभाविक अभ्योदय हो गया था जिससे मार्कण्डेय ऋषि का नामोकरण अपने में बडी स्थलियों से रहा है। 02.11.1991।

299 मार्कण्डेय ऋषि

मार्कण्डेय ऋषि महाराज जो कि भौतिक विज्ञान-वेत्ता थे। परन्तु ऋषिराज, भौतिक विज्ञान-वेत्ता की आध्यात्मिक विज्ञान में भी इतनी ही

गति कहलाती थी। आध्यात्मिक विज्ञान भी उनका इतना उज्ज्वल बन गया था।
भौतिकवाद को जानना यह प्रकृतिवाद में रमण करना है। और नाना प्रकार के परमाणुओं को जानता हुआ विज्ञानवेत्ता लोक-लोकान्तरों को अपनी माला बना लेता है। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता अपने में इतने महान् उज्ज्वलता को प्राप्त हो जाते हैं कि पृथ्वी का विचार उनके समीप नहीं रहता। वह तो कैवल उस विज्ञान में चले जाते हैं कि इन परमाणुओं को हम कैसे मिलान करें।? क्योंकि शब्द अन्तरिक्ष में जाता है। ये शब्दों की रचना कैसे हो रही है? क्योंकि शब्द आ रहा है, रचना हो करके, चित्र के साथ में अन्तरिक्ष में गति कर जाता है। कैवल शब्द। ब्रह्म लोक में शब्दों की रचना होती रहती है। मेरा देव! कितना प्रतिभाशाली है? कितना वैज्ञानिक है। 18.04.1979

300 शब्द की गति

ऋषि ये कहते हैं कि मानव के कण्ठ से शब्दों की रचना हुई और रचना हो करके अन्तरिक्ष में गति कर गया शब्द। शब्द ज्यों का त्यों है और वह चित्र के समीप ज्यों का त्यों है। चित्र के समीप अन्तरिक्ष में गति कर गया। परन्तु शब्द ज्यों का त्यों बना रहा। तो शब्दों की रचना हो रही है। 18.04.1979

301 पिण्ड ब्रह्माण्ड गति एक तुल्यता

तो मानव के मस्तिष्कों में आध्यात्मिकवाद और भौतिकवाद ये परम्परा से ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में नृत्य करती रही है। यह नृत्यता है। क्योंकि मार्कण्डेय जैसे महामुनि सदैव अन्तरिक्ष-यात्रा करते रहते थे। प्रत्येक मानव का कर्त्तव्य है कि वे इन तारा-मण्डलों की माला बनाता रहे। तारा-मण्डलों की माला एक सूत्र में पिरोई हुई है। मार्कण्डेय ऋषि कहते हैं कि महाराज! जब मैं यह जानता हूँ कि यह जो नाना प्रकार का मण्डलवाद है, यह एक किसी सूत्र में पिरोया हुआ है और वह जो सूत्र है वह क्या है? मैं इसको जानने में लगा हुआ हूँ। मैं उस सूत्र को जानना चाहता हूँ जो लोक अपनी-अपनी आभा में गति कर रहे हैं। वह गति कैसी विचित्र गति है। गतियों में भी गति हमें दृष्टिपात आती है। वह जो सूत्र है, वे चेतना-रूपी जो सूत्र है, उसको हम जानना चाहते हैं। उसको हम प्राण-रूप से वर्णन करते हैं, या उसी चेतना को हम रूप-रूप में दृष्टिपात करते हैं। अब जैसे मानव के शरीर में मानव के प्रत्येक परमाणु, उनका यह जो मानवीय शरीर है। वह एक सूत्र में पिरोया हुआ एक-एक परमाणु है। एक-एक गति कर रहा है, एक-एक ब्रह्माण्ड की आभा और वह एक सूत्र में पिरोया हुआ है। तो प्रभु! इसीलिए यह मानव और ब्रह्माण्ड की दोनों की एक ही कल्पना मानी जाती है। जैसे यह पिण्ड है, ऐसे ही यह प्रभु का बनाया हुआ, रचा हुआ जो अनुपम जगत है इस जगत में जो गतियां हो रही हैं। वे ही गति हमारे शरीर में नृत्य कर रही हैं। और वह जो नृत्यता हो रही है उसी का नाम हमारे यहाँ एक गतिमान कहा जाता है। गतिशील होने वाला यह ब्रह्माण्ड है जैसे आत्मा के कारण ये परमाणुवाद एक सूत्र में पिरोया हुआ है। इसी प्रकार ये जो ब्रह्माण्ड है, लोक-लोकान्तर हैं, ये भी एक सूत्र में पिरोएं हुए हैं।
हम अपने इस प्रतिभाशाली देव की सदैव आराधना करते रहें। यह हमारा देव है। इसने मानव-शरीर रूपी इस पिण्ड की रचना की है। इसने ब्रह्माण्ड को रचा है। जो रचयिता है रचना कर रहा है। रचनाकार के ऊपर हमें अनुसन्धान करना हमारा जीवन, इसी से हमारे जीवन का सम्बन्ध रहना चाहिए।

302 महाराजा शिव और मार्कण्डेय ऋषि की चर्चाएँ

यही बात मार्कण्डेय ऋषि महाराज शिवजी से उच्चारण कर रहे थे। क्योंकि महाराज! मैं यह जानना चाह रहा हूँ कि वह जो चन्द्रमा के अन्तर्गत जो शब्द ध्वनि हो रही है। वह मैं यंत्रों के द्वारा जानना चाहता हूँ। क्योंकि ये भौतिक विज्ञान हमारे यहाँ परम्परा से ही मानवीय मस्तिष्कों में, एक आभा में परिणत होता रहा है।
महाराज शिव ने मार्कण्डेय ऋषि से यह कहा था कि हे मार्कण्डेय! तुम आध्यात्मिकवाद भी जानते हो? उन्होंने कहा, प्रभु! मैंने आध्यात्मिकवाद को अपना आश्रय बनाया है। यदि मैं आध्यात्म्किवाद को अपना आश्रय नहीं बनाऊँगा, तो इस भौतिकवाद में प्रकृतिवाद के तंतुओं को जानने में मेरे में अभिमान की मात्रा उत्पन्न हो सकती है। और वह जो अभिमान है वह मेरी मृत्यु का कारण बनता चला जाएगा।
प्रभु। इसीलिए मैं आध्यात्मिक-विज्ञान जो हमारे समीप आता है उससे मुझे ज्ञान का प्रकाश होता रहता है। यह जो ज्ञान का प्रकाश है और अनन्त भण्डार में चला जाता है तो इससे मुझे अभिमान उत्पन्न नहीं होता। और जब अभिमान नहीं होता, उस अभिमान के न होने के कारण ही मैं आध्यात्मिक विज्ञान का आश्रय लेकर के और भौतिकवाद में मेरी पारायणता होने पर भी सदैव उत्सुक सा बना रहता हूँ और इच्छा बनी रहती है कि मैं नाना संसार को जानने की मेरी उत्सुकता होनी चाहिए। 18.04.1979

303 महर्षि साकल्य मुनि

योगी ऋषिजन ही उत्तम वैज्ञानिक हुए, जब मैं वैज्ञानिक की उड़ान में जाता हूँ तो हमारे यहाँ कितनी कितनी उड़ान उडी है वैज्ञानिकों ने।

किस किस प्रकार के वैज्ञानिक हुए यहाँ। यहाँ महर्षि भारद्वाज हुए। महर्षि भारद्वाज विज्ञान में बड़े महान पारंगत कहलाए जाते थे। उन की अन्तरिक्ष में बड़ी उड़ान रही है। इस से पूर्व भी महर्षि शाकल्य जी हुए हैं। उन की भी विज्ञान में बड़ी उड़ान रही हैं। इसी प्रकार हमारे यहाँ सतोयुग में महाराजा गरुड़ हुए हैं। उनकी भी बड़ी उड़ान रही है। हमारे यहाँ यह कहा जाता है कि विष्णु का जो वाहन है वह गरुड़ कहलाया जात है। परन्तु गरुड़ की उड़ान लोग लोकान्तरों में विचरण करती रहती थी। 03.08.1971।

304 महर्षि शाकल्यमुनि महाराज

महर्षि शाकल्यमुनि महाराज से यह कहा गया कि महाराज! आप जन्म जन्मान्तरों से किस आभा में परिणत रहे है?तो उनके शिष्यो ने जब यह कहा, तो उन्होंने कहा कि मैं सूर्य मण्डंल में भी, चन्द्र मण्डल में भी, मेरा गमन रहा है, और मंगल में भी रहा है। परन्तु मैं लोक लोकान्तरों की प्रतिभा में रत्त होता हुआ, मानवीयतव में प्रवेश करता हुआ, अपने चित्त के मण्डल में जब सिमट गया, तो सिमट जाने से, मेरा अन्तरात्मा इस गति को प्राप्त हो गया, कि मैंने मोक्ष की पगडण्डी ग्रहण कर ली। 06.05.1989

305 महात्मा दधीचि द्वारा यंत्रों पर पुस्तक लेखन

उस रेखा में यह विशेषता होती है, कि यदि आज परमाणुवाद प्रारम्भ हो जाता है, तो उस रेखा में, उस यन्त्र में इतनी शक्ति होती है, कि उन तीक्षण परमाणुओं को ऐसे निगल जाता है, जैसे वर्षाकाल में जल को पृथ्वी निगल जाती है। इसी प्रकार वेदों में इसका प्रायः विधान भी आता हैं। महर्षि दधीचि ने लोकान्तरों में ले जाने वाले, यंत्रों पर एक ग्रन्थ रचा था।

मुझे स्मरण है, महात्मा दधीचि ने अपने जीवन में एक पोथी का निर्माण किया था। वह पोथी विज्ञान के आधार पर थी। परमात्मा की कृपा से उसको दृष्टिपात करने का सौभाग्य भी प्राप्त होता रहा है। उस पोथी में चन्द्रयान और बृहस्पति यान दोनों यानों के निर्माण की प्रक्रिया थी। आज हम चन्द्रमा में चले जाए। नाना प्रकार के यंत्रों का हम निर्माण करते रहते हैं, क्योंकि विज्ञान तो हमारा जन्म सिद्ध अधिकार होता है। हमें वैज्ञानिक बनना चाहिए। मानव को वैज्ञानिक बनना चाहिए। क्योंकि विज्ञानमय यह संसार है। क्योंकि एक माता के गर्भस्थल से प्यारे पुत्र का जन्म होता है वह विज्ञानशाला में आ जाता है। यह जो जगत है, यह जो संसार है, यह परमपिता परमात्मा का एक विज्ञान भवन है। इसमें प्रत्येक मानव विज्ञान के युग में भ्रमण कर रहा है, विज्ञानशाला में आ जाता है, कृषक के गृह में उत्पन्न होता है तो कृषि विज्ञान उसके द्वारा आ जाता है। यदि और भी नाना प्रकार क यंत्रों के, गृह में आ जाता है, तो यंत्रों का निर्माण करने लगता है। इसी प्रकार विज्ञान उस का जन्म सिद्ध अधिकार होता है। माता के गर्भ में होता है, पृथक् होता है, माता की लोरियों का स्वतः ही पान करने लगता है। यह उस बालक का विज्ञान है। इसी प्रकार ऊर्ध्वागति होती है। उनका शोधन करने लगता है। उनको चुनने लगता है। अपने उदर को भी वैज्ञानिक रूपों से ही परिणत करने लगता है, भ्रमण करने लगता है। 03.08.1971

306 वैज्ञानिक महर्षि दधीचि

एक समय महर्षि भुंजु मुनि महाराज महात्मा दधीचि के आश्रम में प्रविष्ट हुए महात्मा दधीचि से महर्षि भुंजु ने एक वाक्य कहा कि यह जो उष्ण है यह किसके गर्भ में ओत प्रोत रहती है।

महात्मा दधीचि ने कहा कि हे ऋषिवर! यह जो उष्णता है, यही तो उस प्रकृति को एक सूत्र में लाती है, परमाणु मात्र में जो गति आ रही है, वह गति उष्णता से आ रही है, यही उष्णता मानव का जीवन है, सूर्य मण्डल का जीवन है।

307 शंभुति ऋषि का विज्ञान विमर्श

हमारे यहाँ उद्दालक गोत्र में एक महर्षि शंभुति ऋषि हुए हैं और शंभुति ऋषि महाराज एक समय अपनी एकान्तस्थली में विद्यमान थे। रात्रि के काल में उन्हें एक स्वप्न आया और वह स्वप्न क्या आया? कि उनके जो पितामह नहीं थे और पितामह दूर थे वह उनके द्वारा याग कर रहे थे। स्वाहा उच्चारण कर रहे थे। परन्तु उसे जब जागरूकता हुई, तो उन्होंने विचारा यह स्वप्न कैसा हुआ? मेरे चित्त में संस्कार प्रायः विद्यमान थे। चित्त में जो संस्कार होते हैं, उन्हें मानव स्वप्न में दृष्टिपात करता है। परन्तु वह विचारने लगा, चिन्तन करने लगा। चिन्तन करते हुए वे विज्ञान के गर्भ में चले गए। चित्त के ऊपर मनन करने लगे। मनन करते हुए उन परमाणुओं को एकत्रित करने लगे। तो ऋषि ने बहुत समय के पश्चात यन्त्र का निर्माण किया और यन्त्रों का निर्माण करके वह यान अन्तरिक्ष में गति करने लगा। 21.02.1980

308 महर्षि भृंगी आश्रम में महात्मा कुम्भकरण

एक समय पुलस्त्य ऋषि महाराज के पौत्र कुम्भकरण महर्षि भृंगी आश्रम में प्रविष्ट हो गए। महर्षि भृंगि जी ने अपने आसन को बहुत दूर क्षेत्र में जाकर के स्थिर कर लिया स्थिर करने के पश्चात आदि अभैनु ऋषि महाराज ने कहा कि महाराज! तुम वैज्ञानिक बने हो, क्या तुम भी अपने आसन को ऊर्ध्वागति को प्राप्त करा सकते हो? उस समय उन्होंने कहा कि भगवन! आप को प्रतीत है, कि मैं तो राजा रावण के राज्य का एक सूक्ष्म सा वैज्ञानिक हूँ, महर्षि भारद्वाज आश्रम का एक सूक्ष्म वैज्ञानिक हूँ। परन्तु ये परमपिता परमात्मा के राष्ट्र के वैज्ञानिक

हैं। मैं इनकी तुलना किस प्रकार कर सकता हूँ। तो जो परमात्मा के राष्ट्र का वैज्ञानिक बन जाता है, वह तो मुनि बन जाता है, परन्तु जो भौतिक विज्ञानवेत्ता होता है, वह तो मृत्य को प्राप्त हो जाता है। भौतिक विज्ञान, राष्ट्रीय विज्ञान, परमाणु विज्ञान के गर्भ में मृत्यु का स्रोत होता है, परन्तु जो मानव पंडित बन कर के ऋषि बनता है, ऋषि बन करके जो मुनि बनता है, वह अपनी प्रवृत्तियों पर संयम करता है, उन का वशीकरण करता है, उस साकल्य को एकत्रित करके लोक लोकान्तरों के अपने मन में ही ध्यानावस्थित होकर के परिणत हो जाता है, उनको दृष्टिपात कर लेता है वह प्रभु के राष्ट्र का वैज्ञानिक होता है। 03.08.1971।

आज के मानव की जो उड़ान है, वह एक महान है। परन्तु इतनी महान नहीं है, जितना पुरातन समाज था। हम सभी उसकी कल्पना कर सकते हैं। आज का मानव चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है, चन्द्रमा पर विश्राम कर रहा है। परन्तु यह हमारे लिए कुछ आश्चर्य नहीं है। क्योंकि यह परम्परा से हमारे यहाँ रहा है। 04.08.1971।

309 अथर्वा की विज्ञानशाला

बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए कहा कि दोनों ही विद्याएं यौगिक मानी जाती हैं। मानव के मस्तिष्क में दोनों प्रकार की उड़ान परम्परा से रही है। आदि ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा की चर्चाएं कीं। अथर्वा अपनी विज्ञानशाला में विराजमान हैं, वैद्यशाला में विराजमान हो करके, नाना प्रकार की उड़ान उड़ रहा है। अणुवाद की उड़ान उड़ रहा है और इसकी उड़ान उड़ता हुआ लोकों की गणना करने लगता है। चन्द्रमाओं की गणना करने लगता है। मंगल मण्डलों की गणना करने लगता है। पृथ्वी की गणना करने लगता है और वेद को विचारविनिमय करते हुए यह कहता है कि यह प्रभु का जगत अनन्त है, इसको मैं सीमा में नहीं ला सकता। 06.05.1976

310 वैज्ञानिक महर्षि याज्ञवल्क्य

महर्षि याज्ञवल्क्य जहाँ ब्रह्मविचारक थे, ब्रह्मवेत्ता थे, वहाँ उनकी विज्ञानशाला में लोकों की उड़ान उड़ी जाती थी। मुझे वह काल स्मरण है जब ब्रह्मचारी कलन्धी, गार्गी', दोनों ब्रह्मचारियों में यह वाद उत्पन्न हुआ कि आकाशगंगा क्या है? तो आकाशगंगाओं की गणना करने लगे। परन्तु निबटारा नहीं हुआ। मध्य रात्रि का काल था, चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त था, जब अपने कक्ष को त्याग करके याज्ञवल्क्य मुनि के कक्ष में प्रवेश किया और उन्हें जागरूक किया और कहा प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं, कि यह आकाशगंगा क्या है? हम वेद का मन्त्र अध्ययन कर रहे थे।

आकाशगं वैदृवृतं गंगवृत्ति वृत्ता: लोका हिरण्यं ब्रभे कृत्यां रुद्रो उताहत्सो सुप्रता, हे भगवन्! इस मन्त्र का हम अध्ययन कर रहे थे और इस वेद मन्त्र में यह आ रहा था, कि आकाश गंगा तो लोकों का क्षेत्र है। प्रभु! क्या यह सत्य है?

याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा कि हे ब्रह्मचारियों! तुम मेरे यहाँ अध्ययन करते हो, तुम्हें यह प्रतीत है कि यह मेरी वैधशाला है, जहाँ विद्यालय में यज्ञशाला है। वहाँ वैद्यशाला भी है, और वहीं विज्ञानशाला है। इस विज्ञानशाला में यह यन्त्र विराजमान है, इन यन्त्रों से दृष्टिपात करो। ब्रह्मचारी कलन्धी को और गार्गी दोनों को प्रत्यक्ष दृष्टिपात कराने लगे। उन यन्त्रों में आकाश गंगाएं दृष्टिपात आने लगीं। उन्होंने कहा कि हे ब्रह्मचारियो! तुम्हें प्रतीत है कि जब मैं एक आकाशगंगा में पहुंचा, तो उस आकाशगंगा के सूर्यों की गणना करने लगा, तो मैंने लगभग तीन खरब, पांच करोड़ और पांच सौ सूर्यों की जब गणना की तो उसके पश्चात मैंने ध्रुव मण्डलों की गणना की। जब मैंने दो अरब के लगभग ध्रुव मण्डलों की आकाशगंगा में गणना कर ली, तो जेठाय नक्षत्र में पहुंच गया और जब जेठाय नक्षत्रों की गणना करने लगा तो एक अरब जेठाय नक्षत्र एक आकाशगंगा में गणना कर ली, तो मैं मौन हो गया और यह कहा कि यह तो परमात्मा का अनन्त मण्डल है, जैसे परमात्मा अनन्त है, इसी प्रकार उसका ब्रह्माण्ड और उसका अपना स्वरूप भी अनन्त माना जाता है। 06.05. 1976

311 आकाशगंगाएँ

याज्ञवल्क्य मुनि कहते है कि हे ब्रह्मचारियों! जब मैंने इन यन्त्रों के द्वारा एक आकाश गंगा दृष्टिपात की और आगे उड़ान उड़ी तो द्वितीय आकाश गंगा दृष्टिपात आने लगी। मैंने 272 आकाश गंगाएं अपने यन्त्रों के द्वारा दृष्टिपात की हैं। ब्रह्मचारी कलन्धी मौन हो गया और गार्गी भी मौन हो गई। मौन हो करके उन्होंने कहा कि प्रभु! यह तो अनन्त मण्डल हैं परन्तु अब क्या किया जाए उन्होंने कहा कि हे ब्रह्मचारियो! यह मानव की परमाणुवाद की उड़ान है, ऊँची उड़ान है, परम्परा से यह उड़ान हमारे यहाँ उड़ी जाती है। तो यह जो विज्ञान का क्षेत्र है, यह विशाल क्षेत्र है, परमात्मा की कृति वाला क्षेत्र है, परन्तु यदि इसमें अभिमान न हो, प्राणी को तो अणुवाद के ही सहारे रमण करता हुआ, यह लोकों को प्राप्त हो जाता है, परन्तु इसमें अभिमान की मात्रा प्रायः आ ही जाती है, क्योंकि यह अणुवाद का क्षेत्र है, प्रकृति का क्षेत्र है। 06.05.1976

जिन चित्राविलयों में रमण करके मानवता समाप्त हो जाती है विज्ञान का दुरुपयोग होता है। विज्ञान के दुरुपयोग को पान करने वाला राजा

नहीं होना चाहिए। अन्यथा यह राष्ट्र, यह समाज अपवित्र बन जाता है। इसलिए राजा को चाहिए, कि अपनी राष्ट्रीय पद्धति में ऐसा कोई विचार, ऐसा कोई चित्रण नहीं होना चाहिए जिससे अश्लीलता आ जाए। ब्रह्मचारियों का ब्रह्मचर्य दूषित हो जाए, ब्रह्मचर्य के दूषित होने क्या बनता है?कि नाना प्रकार के रोग बलवान हो जाते हैं। नाना प्रकार के रोग हो जाते हैं और उन रोगों के हो जाने का परिणाम क्या होता है कि शरीरों में नाना विष आ जाते हैं और विष के आने पर और नाना प्रकार के रोग हो जाते हैं। उसका परिणाम यह है कि वह रोगों में परिणत रहते हैं। 24.05.1976

312 याज्ञवल्क्य मुनि महाराज

बारह वर्ष का तप करके दर्शनों का अध्ययन करके मन को अनुशासन में लाने के पश्चात ब्रह्मचारियों को शिक्षा दे रहे हैं। वे ब्रह्मचारी ज्ञान और विज्ञान में पाण्डित्य में विचित्र हैं।

आज का ब्रह्मचारी कैसे ऊँचा बने? आज का वैज्ञानिक यह कहता है, कि हम गो धृत भी पान नहीं करते, हम चन्द्रमा में चले गए हैं, आज का मानव कहता है, अरे! चन्द्रमा से तुम्हारे राष्ट्र का अनुशासन बन गया। आज जब मैं यह प्रश्न करूंगा तो कुछ भी नहीं प्राप्त होगा। 24.02.1977

313 महर्षि याज्ञवल्क्य के यान की वर्तमान में गति

तो यह विज्ञान है। आधुनिक जगत में तो इस विज्ञान का प्रारम्भ ही नहीं हुआ है। आधुनिक जगत में तो विज्ञान इतने अधूरेपन में है कि उसका अभी विचार भी नहीं आया। मैं यह नहीं कहता हूँ कि विज्ञान नहीं हैं, विज्ञान है। परन्तु विज्ञान का सदुपयोग राजा की एक सभा में होना चाहिए, और राजा की सभा में इसी प्रकार की आभा रहनी चाहिए।

एक यन्त्र हमारे यहाँ महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि ने निर्मित किया था। जो यन्त्र वायुमण्डल में गति कर रहा हैं परन्तु पृथ्वी के अन्तरिक्ष में परमाणु गति कर रहे हैं। उन परमाणुओं को एकत्रित किया और सौ सौ वर्ष परमाणु स्थिर कर दियाऔर उसी से यान गति कर रहा है। ऐसे भी परमाणु हैं, परन्तु आज अन्तर्द्वन्द्व आ रहा है। आज जो विज्ञान की उड़ान उड़ी जा रही है, पृथ्वी के गर्भ में, जितना खनिज का निर्माण हो रहा है, उसको मानव निकालता जा रहा है।

अरे मानव! वह समय दूर नहीं है, यदि ओर कोई धातु का निकास, वैज्ञानिकों ने नहीं किया, तो एक समय वह आने वाला है, कुछ ही समय पश्चात, कि मानव की श्वाँस लेते ही उसकी मृत्यु हो जाएगी।

पृथ्वी में जो जीवन शक्ति है वह एक एक परमाणु का समन्वय भी तो कहलाता है और जिसको मानव अंतरिक्ष में भिन्न रूपों में परिणत कर रहा है। तो इससे यह प्रतीत होता है, कि कोई समय है, उस समय की आभा में वह रमण कर रहा है, आभायित हो रहा है परिणत हो रहा है, आनदित हो रहा हैं। 18.03.1978

314 माता चाक्राणी की विज्ञान चर्चाएँ

तो चाक्राणी बड़ी प्रसन्न हुई, उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! आप मेरे अन्तःकरण में ज्ञान को भरण कर रहे हैं, तो चाक्राणी ने कहा प्रभु! और कुछ निर्णय कराईए, उन्होंने कहा देवी! यह वर्णन क्या, यह तो माला है, और मानव जो जो धारण करना जानता है, जो प्रतिष्ठा में प्रतिष्ठित होना जानता है, वह मालाओं को जानता है, ब्रह्माण्ड को अपनी प्रवृतियों से मांप लेता है और मांपता हुआ, मृत्युंजय बन जाता है, तो मृत्यु से पार वही होता है, जो परमात्मा के अनूठे जगत को जान लेता है, परमात्मा के अनूठे जगत को जान करके सागर से पार होने का प्रयास करता है। 19.04.1991

315 महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि का उपदेश

जब ऋषि ने वर्णन किया वेद का वाक् कहता है इतने सौर मण्डलों को एक उसमें मण्डलों का एक सौर मण्डल बना, एक अरब छयानवें करोड़, उन्नतीस लाख, उन्नंचसवी हजार, पांच सौ इक्कसठ के लगभग की एक अवन्तिका बनी और उतने ही अवन्तिकाओं की एक निहारिका बनी, यहां आ करके ऋषि अपने में मौन हो गया और यह कहता है कि प्रभु की सृष्टि में क्या है? हे प्रभु! तेरा कितना विशाल मण्डल है, हे प्रभु! मैं अभिमान करूं, तो किसके ऊपर अभिमान करूं, मैं किसी को मृत्यु दे करके, मैं मग्न हो जाऊं, तो किसके ऊपर मग्न हो जाऊं प्रभु तेरा ब्रह्माण्ड कैसा है, तेरी महिमा को स्मरण करते करते, जन्म जन्मान्तर समाप्त हो जाएंगे, हे प्रभु! तेरा अनन्तमयी जगत है। हे प्रभु! यदि मैं सृष्टि को विचारता रहूँ, तो सहस्रों जन्म हो जाए और मैं इसके ऊपर विचार विनिमय करता रहूँ, तो हे प्रभु! मेरी आयु सूक्ष्म रहेगी, तेरा जगत इतना अनुपम है। तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने अपना यह उपदेश दे करके, यह कहा कि हे चाक्राणी! परमपिता परमात्मा का यह अनुपम जगत है, यह तीन प्रकार की, यह जो पंच महाभूत हैं, इसी के अन्तर्गत, ये नाना प्रकार का मण्डल अपने में गतिशील हो रहा है, इसमें गुरुत्व है, तरलत्व है, तेजोमयी है और वायु मण्डल है, वह वायु गति देती है, और जहाँ गति करता है, तो एक दूसरे में ओत

प्रोत होता हुआ, जगत दृष्टिपात आ रहा है। हे देवी! मैं तुम्हें यह निर्णय करा रहा हूँ, कि यह जगत प्रतिष्ठित रहता है, तो हे देवी! आज यह निर्णय दे रहा हूँ, कि यह जो तीन प्रकार का परमाणुवाद है, जिसमें यह जगत ओत प्रोत है, इसी में आत्मा का लोक है, इसी में ब्रह्माण्ड है, और मानव का जो शरीर है, यह सूक्ष्म है, ब्रह्माण्ड और पिण्ड दोनों की कल्पना करो और कल्पना करते हुए, इसके ऊपर विचारा करो, कि यह प्रभु का जगत है, आत्मा ब्रह्म है, परमात्मा परब्रह्म है, जैसे एक पंच महाभूतों वाले शरीर को अपना लोक बना लेता है, और सर्वत्र ब्रह्माण्ड रहता है, वह परमपिता परमात्मा परब्रह्म कहलाता है। 19.04.1991

316 महर्षि आश्रम में विज्ञानशाला

महर्षि बाल्मीकि के आश्रम में राम के दोनों पुत्र लव और कुश थे, विज्ञानशाला भी उनके द्वारा थी। यानों के निर्माण होते। हमारे वैदिक साहित्य में वह जो परमात्मा की वेद रूपी वाणी है, उस वाणी में यह भौतिकवाद, परमाणुवाद, अग्निवाद, सर्व विद्या उसमें ओत प्रोत है। 01.08.1973

317 शमभानुक ऋषि की विज्ञान चर्चाएँ

उद्दालक गोत्र के शमभानुक ऋषि महाराज अपनी विज्ञानशाला में शिवभानुकैतु उनकी पत्नी शिवलता वे दोनों अपने में अनुसन्धान कर रहे थे। अनुसन्धान करते हुए उन्होंने अपने पितरों के चित्रों को जो अन्तरिक्ष में गति कर रहे थे, उनको यन्त्र में दृष्टिपात आने लगे। जब वे यंत्रों में दृष्टिपात आने लगे, तो वेद के ऋषि ने बहुत अनुसन्धान किया। उन्होंने कैवल आध्यात्मिक अनुसन्धान ही नहीं, भौतिक विज्ञानवेत्ता बन करके आध्यात्म्कि विज्ञान का आश्रय लेकर के उन्हें अपने दशवें महापिता के दर्शन होने लगे। उन यन्त्रों में जब दशवें महापिता के दर्शन होने लगे, तो एक समय मध्य-रात्रि का समय था। मध्यरात्रि के समय उनको एक मन्त्र स्मरण आया। वह वेदमन्त्र कह रहा था, पितरम होतारम् ब्रह्म लोकाम् जीव्याहम् गतिः विष्टाम् दिव्यम् चित्राः कि देवताओं के चित्र इस मानव को दृष्टिपात आते हैं। उन्होंने यन्त्रों का निर्माण किया और इन यन्त्रों में उनको भी अपने महापिताओं के दर्शन होने लगे। 18.04.1979

318 ब्रह्मचारी सुकेता की अन्तरिक्ष यात्रा

जब ब्रह्मचारी सुकेता अपने यान में विद्यमान हो करके अन्तरिक्ष यात्रा करने चले। तो सबसे प्रथम चन्द्रमा में पहुंचे। चन्द्रमा से उड़ान उड़ करके बृहस्पति में पहुंचे। जब बृहस्पति से अपनी उड़ान उड़ी तो बुध में जा पहुंचे। बुध से उड़ान उड़ी तो वह मंगल में जा पहुंचे, मंगल से उड़ान उड़ी तो शुक्र में जा पहुंचे। शुक्र से उड़ान उड़ी तो वह श्वेतकेतु मण्डल में जा पहुंचे। परन्तु इन लोकों की उड़ान उड़ने के पश्चात वह बहत्तर मण्डलों का भ्रमण करके यान के सहित महर्षि भारद्वाज के द्वार पर जा पहुंचे। 01.05.1980

आधुनिक काल का जो वैज्ञानिक है वह आहार व्यवहार पर विचार नहीं कर रहा परन्तु वह चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है। 02.05.1980

319 ब्रह्मचारी सुकेता

ब्रह्मचारी सुकेता का रोहिणी गोत्र में जन्म हुआ। उनके जो पडपिता थे, सोधुक नाम के वैज्ञानिक, परन्तु वे महाराजा प्रजापति के जो पिता थे, जिनका महर्षि जगदड मुनि गौत्र कहलाता था, उस जगदडीय गोत्र में राजा अश्वपति का जन्म हुआ, प्रजापति के यहाँ। परन्तु प्रजापति के जो महापिता थे, वे महर्षि जमदग्नि और 'रुआसन' गौत्र में उनके पुरोहित कहलाते थे 'अस्वातक' नाम के। अस्वातक नाम के ब्रह्मचारी उनके पुरोहित थे। उनके यहाँ ऐसे ऐसे वैज्ञानिक थे, वह ऐसे उर्ध्वागति वाले वैज्ञानिक थे, कि जब वह यन्त्र में विराजमान होते, तो यन्त्र वायु मण्डल में गति कर रहा है, जैसे मंगल की यात्रा करनी है, तो मंगल की यात्रा कर रहा है, और एक यन्त्र उसकी सांस्कृतिक विचारको के लिए यन्त्र उसके समीप है। वायु मण्डल में जो परमाणु गति कर रहा था, उस परमाणु का चित्र, उस शब्द का चित्र, यन्त्र में दृष्टिपात आ रहा था। वायुयान जा रहा है, मंगल की यात्रा है। उसमें जो चित्रावली अन्तरिक्ष में गति कर रही है, उसको वह दृष्टिपात करता जा रहा है। वह यान गति कर रहा है, मंगल मण्डल में जा रहा है, उसी मंगल मण्डल से, वह यान बुध में जा रहा है, वही यान है, जो शुक्र की गति कर रहा है। उन्होंने एक यान, एक एक यन्त्र को इतना विचित्र जाना, इस प्राण विद्या को जानते हुए, मुनि महाराज के जो महापिता थे 'सन्धातुक' नामक ऋषि के चरणों में इस विद्या को पान किया था। 23.05.1975

320 यान यात्री ब्रह्मचारी सुकेता

कौन वैज्ञानिक है? जो लोकों की यात्रा कर रहा है? आधुनिक काल का वैज्ञानिक चन्द्रमा में चला गया, उसी में वह ऐसा हो गया कि संसार को विजयी कर लिया है। यहाँ ब्रह्मचारी सुकेता अपने यान में विद्यमान हो करके गति करता है। वह अर्ध रात्रि क्या, चार पहर उसके आँगन में चन्द्रमा में गति करने लगता है और इसी प्रकार एक ही यान है और 72 लोकों का भ्रमण करके पृथ्वी मण्डल पर यान आ रहा है। उसका यन्त्र आ रहा है। इस प्रकार का विज्ञान अब तक पृथ्वी मण्डल तक नहीं आ पहुंचा है। विज्ञान अभी जन्म ले रहा है। 18.03.1978

321 ब्रह्मचारी सुकेता की लोकों की यात्रा

इस पृथ्वी से ले करके नाना लोक लोकान्तरों में ऋषियों का यातायात रहा है। अथवा उनका गमन होता रहा है। जब ब्रह्मचारी सुकेता, भारद्वाज मुनि के आश्रम से एक यान में उड़ान उड़ी, मंगल से उड़ान उड़ता है श्वेतलोकों में, तो वह बहत्तर लोकों का भ्रमण करके पुनः अपनी यन्त्रशाला में, विज्ञानशाला में प्रवेश करता रहा है। हमारे यहाँ ऊँची उड़ान उड़ने वाले वैज्ञानिकों ने अपनी शाला में विद्यमान हो करके ध्रुव मण्डलां की यात्राएं की हैं। 23.04.1979

322 वैज्ञानिक देवी शकुंतका

महर्षि शाण्डिल्य गोत्र में महर्षि 'सोमभानुक' ऋषि हुए हैं। उनकी कन्या का नाम शकुन्तका था। वह शकुन्तका महर्षि आदित्य मुनि महाराज के चरणों में विद्या अध्ययन करती थी। उनकी परमाणु विद्या के ऊपर गति थी। ऋषि के आश्रम में भी विज्ञान की चर्चा होती रहती थी। विज्ञान के अंगों के ऊपर वेदमन्त्र लिया, उनकी व्याख्या वैज्ञानिक रूपों से होती रही। शकुन्तका ने इक्कतीस वर्ष की आयु में, उस विदुषी ने गन्धर्व लोक में जाने के लिए एक यन्त्र का निर्माण किया। उस कन्या ने जब यान का निर्माण किया, तो ऋषि मुनियों ने उसका बड़ा भव्य स्वागत किया। हमारे यहाँ मेरी पुत्रियों ने, माताओं के हृदय में परम्परा से ही ज्ञान और विज्ञान के जानने की प्रवृत्ति रही है। 23.05.1975

323 महाराजा शिव और माता पार्वती की विज्ञान चर्चाएँ

एक समय महाराजा शिव और माता पार्वती अपने कैलाश आसन पर विद्यमान थे। दोनों का जो विचार था वह एक सूत्र में दोनों क इस योग्य था। क्योंकि वे सदैव ज्ञान और विज्ञान दोनों के ऊपर अनुसन्धान करते रहते थे। एक समय माता पार्वती अपनी उत्पन्न दिव्य ज्योति से, यन्त्रों की सहायता से अन्तरिक्ष को दृष्टिपात करने लगी। प्रातःकाल का समय था। प्रातःकाल में जब वह अपने लोक-लोकान्तरों की माला अपने मन रूपी सूत्र में पिरो रही थीं, तो उन्हें अन्तरिक्ष में एक यत्र दृष्टिपात आने लगा। तब वह अपने देव से बोली, हे प्रभु! यह यन्त्र मुझे दृष्टिपात आ रहा है। यह यन्त्र क्या है? तो महाराजा शिव ने उस यन्त्र को दृष्टिपात किया और उन्होंने कहा, देवी! यह एक यन्त्र है, परन्तु यह चन्द्रमा के और भूमण्डल दोनों के आवान्तर अग्रवृत-कैतु गतियों में गति कर रहा है। उन्होंने कहा, तो महाराज! यन्त्र कैसे दृष्टिपात करना चाहिए? तो माता पार्वती और महाराजा शिव दोनों अपने यन्त्र में विराजमान हो करके अन्तरिक्ष की यात्रा के लिए गति करने लगे। वे गति करते रहे। जहाँ पृथ्वी के आकर्षण की परिधि का समापन होता है और चन्द्रमा के आकर्षण की परिधि का प्रारम्भ दोनों की एक अवान्तर गति में जब वे पहुंचे, तो एक यन्त्र के समीप अपने यन्त्र को स्थिर किया और महर्षि मार्कण्डेय ऋषि का वह यन्त्र विद्यमान था। वहाँ माता पार्वती और शिव दोनों को दृष्टिपात करके महर्षि ने उन दोनों के शरीर से स्पर्श किया और स्पर्श करके उनसे आशीर्वाद लिया। 18.04.1979

324 महाराजा शिव और माता पार्वती की महर्षि मार्कण्डेय ऋषि से अन्तरिक्ष में विज्ञान चर्चाएँ

उन्होंने कहा कि तुम्हें कितना समय हो गया है? इस प्रकार तुम्हारा यन्त्र, यह जो यान है, यह कब से यहाँ विद्यमान है। उन्होंने कहा कि हमारा जो यह यान है, इसको १२ वर्ष हो गए हैं, और बारह वर्ष से यह यान यहीं विद्यमान है। हम कुछ अनुसन्धान कर रहे हैं। महर्षि मार्कण्डेय ऋषि महाराज और उनके शिष्य श्वेतकैतु और ब्रुणवर्ण कवि भी ये तीन महर्षि वहाँ विद्यमान थे जो कुछ अनुसन्धान कर रहे थे। उनके जीवन में सदैव अग्नि व्याप्त रहती थी। क्योंकि अग्नि ही तो मानव के मस्तिष्कों को उठा देती है। अब वह कुछ अग्नि के द्वारा मानव के ज्ञान-रूपी जो तंतु होते हैं, वे प्रकाश में आ जाते हैं, गतियां करने लगते हैं अथवा नृत्य करने लगते हैं। अब वह जो व्रतमयी जीवन है, वही तो ज्ञान और विज्ञान में मानव को ले जाता है। 18.04.1979

325 माता पार्वती और महाराजा शिव का चिंतन

माता पार्वती और शिव दोनों का कुछ चिन्तन चल रहा था। तो ब्रह्मचारी कवन्धी और रेवक मुनि दोनों ने एक स्वर में कहा, हे भगवन! हम जानना चाहते हैं, यह कौन सा ध्यान कहलाता है, जिससे मानव लोक लोकान्तरों की तरंगों से तरंगित होता रहता है? कौन सी ऐसी आभा है? उस समय उन्होंने कहा कि यह पार्वती से प्राप्त किया जाए। पार्वती से प्रश्न करने लगे, हे मातेश्वरी! यह आपके पुत्र गणेश जी हैं, वैज्ञानिक हैं, ये लोकों की यात्रा करने वाले हैं। सदैव अनुसन्धान करते रहते हैं। परन्तु हम यह जानना चाहते हैं कि यह कौन सी आभा है, जो इस प्रकार रमण करती रहती है?

326 माता पार्वती और महाराजा शिव के अनुसंधान

माता पार्वती भी अपने में अनुसन्धान कर रही है और शिव भी संकल्पमयी अपना अनुसन्धान कर रहे हैं ओर प्रजा भी उनके यहां अनुसन्धान का अनुकरण करते रहें हैं तो किसी काल में उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था, जिस यन्त्र में यह विशेषता रही है, कि उस यन्त्र को ले करके वह मानव संग्राम कर रहा है ओर संग्राम करते हुए उसका वध करना चाहता है। तो उसकी जो शक्ति है वह कई गुणी बन करके वह उस राजा को अपने में विजय कर लेती है, वह आर्कषण शक्ति कहलाती है और जब तक वह सत्ता रहती है, तब तक उस

मानव के या वैज्ञानिकों के प्राणों का हनन नही कर सकता, यही माता पार्वती और शिव ने महात्मा मार्कण्डेय मुनि महाराज के आश्रम में प्राप्त किया था। मार्कण्डेय जी, ऋषि कहलाते थे, जो अपने में विज्ञानवेता थे, और विज्ञान की तरंगों को ले करके पृथ्वी और चन्द्रमा, दोनों की आकर्षण शक्ति एक ही रुप में हो जाती, वहां उन्हों अपने आश्रम का निर्माण किया ओर वह उसी आर्कषण शक्ति पर स्थिर रहे ओर यन्त्रों का समूह किया। 02.09.1990

327 महाराजा शिव

हमने कुछ ऐसा श्रवण किया, ऐसा स्मरण भी आता रहा है, क्या विज्ञानवेता अपने में बड़े महान रहे हैं, वह राजा शिव जो विज्ञानवेता है, अपने में विज्ञान की उड़ाने उड़ रहा है और कैसी विचित्र उड़ाने हैं।

वह शिव कहलाता है, जो विज्ञानवेता है, और यन्त्रों में विद्यमान हो करके, अपने में अनुसन्धान करते हैं, उन्होंने ऐसे ऐसे यन्त्रों को जाना, जो परास्त नही कर सकता है, परन्तु ऐसी ऐसी विचारधाराएं, वैदिक साहित्य में आती रहती हैं, जहां ज्ञान और विज्ञान अपने में बड़ा सार्थक बन करके रहा है, जब यन्त्र का निर्माण कर लिया, तो हिमालय के धिराज थे, उन्होंने नाना प्रकार के इस प्रकार यन्त्रों का निर्माण किया।

एक समय महात्मा गणेश जी, जो उनके पुत्र कहलाते थे, परन्तु हनुमान की सहायता से उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था। जिस यन्त्र में विराजमान हो करके, वह चन्द्रमा की यात्रा करते रहें और चन्द्रमा की यात्रा में सफलता को प्राप्त हो करके, वहां से ज्ञान और विज्ञान की बहुत सी आभाओं को ले करके पृथ्वी मण्डल पर आ गए।

तो शिव ने एक यन्त्र का निर्माण किया था, जिसमें स्वर शक्ति थी, एक समय जब रावण को यह प्रतीत हुआ, कि महाराजा शिव के द्वारा एक ऐसी अमोघ शक्ति है, और वह यन्त्र उन्होंने मार्कण्डेय जी की सहायता से प्राप्त किया है। जिससे जो मानव संग्राम कर रहा है, और जब तक वह यन्त्र उनके समीप रहता है, उनकी तरंगें आती रहती हैं और उन तरंगों के सहित, कोई भी मानव उसका वध नही कर सकता। 02.09.1990

328 महाराजा शिव और पार्वती

महाराजा शिव और पार्वती दोनों ही विज्ञान में रत रहते थे, और विज्ञान की वह उपलब्धि वह उनके द्वारा थी, यन्त्रों के ऊपर विद्यमान हो करके, वह लोक लोकान्तरों की यात्रा भी होती रही है। नाना प्रकार की जो यात्रा है, यात्री बन करके, वह कहीं मंगल में रमण करता है, वहां के प्राणियों से अनुभव करता है। जिस काल में मानव बहुत ऊँची उड़ाने उड़ता रहता है, भगवान कृष्ण और अर्जुन जब इन्हें वन की प्राप्ति हो गई थी, तो भयंकर वन में, दोनों अपने में विद्यमान हो गए, क्योंकि उनका मित्र सखा भाव था और अपने हृदय से हृदय का मिलान करते रहते थे।भगवान कृष्ण ने कहा हे अर्जुन! तुम्हें कुछ करना है, और तुम्हें अपने में सफल रहना है, अस्त्रों शस्त्रों का निर्माण करना है, उन्होंने कहा बहुत प्रियतम, जैसी प्रभु! आपकी इच्छा हो, मैं वैसा ही कर पाऊंगा।उन्होंने कहा तुम विज्ञान के युग में प्रवेश हो जाओ, और वैज्ञानिक बन करके वैज्ञानिक यन्त्रों को तुम साकार में लाने का प्रयास करो। 07.09.1990।

329 भगवान शिव की उपासना

भगवान शिव की उपासना करनी चाहिए, क्योंकि शिव कहते हैं, परमपिता परमात्मा को, जो हमारा निर्माण, हमारे अनुशासन में निहित करने वाला है, परन्तु शिव के और भी नाना प्रकार के पर्यायवाची शब्द हैं, हमारे यहां वैदिक साहित्य में बहुत सी औषधियों का नामोकरण भी माता पार्वती और शिव के नामों से उनको सम्बोधित किया जाता हैं, यह ब्रह्माण्ड अपने में बड़ा विचित्र बन करके रहा औषधि विज्ञान भी अपने में एक महान बन करके रहा है, जिस पर मानव अपने में विचार विनिमय करता रहा है। तो भगवान शिव जो कल्याण करता है, जो रजोगुण में रत रहने वाला है, उसकी हम उपासना करते चले जाए, यह हमारा उपास्य देव है, वह हमारा देवत्व है, परन्तु हमारे यहां शिव याग का वर्णन आता रहता है। और शिव कहते हैं, उसका जो विज्ञान है, वह प्रतिभा में रत रहता है, ज्ञान और विज्ञान की उड़ाने उड़ने वाला ही संसार में महान और पवित्र बनता है।

तो शिव की उपासना करना, शिव के साकार रुप को बनाना है, तो विज्ञानवेता बनना है, तो शिव याग होता है, जो अपने एक ही स्रोत्रों से याग किया जाता है, वह अपने में महान और पवित्र, जो अपने को ब्रह्म मेंऔर ब्रह्म को अपने में, शिव अपने में रत करने लगता है, वह अपने में अपनेपन को ही विचारता रहता है। मैं एक ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूँ, जहां ऋषि अपने में विद्यमान हो करके, वह द्यौ लोक में जाना चाहता है।जो अपने चित्त मण्डल में प्रवेश करना चाहता है, वह भयंकर वनो में, कुछ ऋषि मुनि विद्यमान है, वह अपने में यह चर्चा कर रहे हैं, कि आध्यात्मिक याग को कैसे सफल बना सकते हैं? ओर भौतिक विज्ञान की कैसे पुट लगा सकते हैं? तो

विचारवेताओं में यह गोष्ठियां हो रहीं हैं, और इस प्रकार के विचारों की उपलब्धियां हो रही हैं। 07.09.1990

330 महाराजा शिव और पार्वती

महाराजा शिव और पार्वती दोनों वैज्ञानिक थे। जब महाराजा शिव विज्ञान के द्वारा, यह चिन्तन करने लगे कि माता के गर्भस्थल में जो नाभि है और वह जो सूर्य किरण जाती है वह नाभि के द्वारा जाती है। वह कैसे जाती है?

उन्होंने एक समय एक चाक्राति सूर्यणाम्-त्राकटाक नाम का एक यन्त्र निर्मित किया था। तो उस यन्त्र में सूर्य की एक त्रट्-नाभ्याम् नामक एक किरण होती है और उस नाभ्याम् किरण के जानने के लिए उन्होंने तप किया और तप करने के पश्चात चिन्तन किया।

महाराजा शिव, मार्कण्डेय ऋषि महाराज से वार्त्ता प्रगट करके, माता पार्वती और शिव दोनों पुनः अपने यान में विद्यमान हो करके कैलाश पर आ गए अपने आसन पर आ गए। वे भी अनुसन्धान करते रहते थे। क्योंकि मानव का अनुसन्धान एक नैतिक गुण है। क्योंकि मस्तिष्क में नाना प्रकार की उपज होती रहती है। और उन उपजों को जानना कर्त्तव्य हैं और जो हमारी सांसारिक उपज है वहीं तो मस्तिष्क को मलिन बना देती है। क्योंकि ज्ञान और विज्ञान में कदापि वृद्धपन नहीं होता। ज्ञान-विज्ञान सदैव नवीन बन रहते हैं। सदैव आभा में परिणत रहते हैं। 18.04.1979

331 महाराजा गणेश द्वारा एक सौ इक्कत्तर मंडलों की यात्रा

एक समय महाराजा गणेश जी ने एक यन्त्र का निर्माण किया जिस यन्त्र को चुंहेतकेतु यन्त्र कहते थे। चुंहेतकेतु यन्त्र में विद्यमान हो करके वह पृथ्वी की परिक्रमा करते थे। पृथ्वी की परिक्रमा की, उन्होंने यन्त्र में और शक्ति दी। मंगल की परिक्रमा करने लगे और पुनः उन्हे शक्ति प्रदान हुई तो वह मंगल की परिक्रमा करने लगे ऐसे उन्होंने एक सौ इकहत्तर मण्डलों की उन्होंने परिक्रमा की और परिक्रमा करके, उन्होंने यह जाना, कि किन किन लोंको में कौन कौन सा तत्व प्रधान है, और किस किस तत्व प्रधान के प्राणी रहते हैं। क्योंकि परमाणु तो तीन ही हैं, परमाणु पांचों में नहीं रहते। परमाणु तो पृथ्वी का है, और जल का है, और अग्नि का है। परन्तु तीन प्रकार के परमाणु जगत में रहते हैं। एक पार्थिक तत्व वाला, एक जल प्रधान वाला और एक अग्नि तत्व प्रधान वाला। ये तीन परमाणु हैं। जो अन्तरिक्ष में गति करते हैं। वायु इन परमाणुओं को लिए हुए, इस अन्तरिक्ष में गति कर रहा है। गति करता हुआ इन्ही परमाणुओं को लेकर के, लोक लोकान्तरों में उन्होंने अपनी आभा को प्रगट किया। उसके पश्चात उन्होंने एक समय यह विचारा कि मेरे मस्तिष्क में, ऐसा क्यों ? क्योंकि मैं मानव हूँ, इस मानव के मस्तिष्क में, ऐसी कौन सी वाहक नाड़ी है, जिन नाड़ियों से वह लोकों को जानता है? तो वेद के आचार्यो ने बहुत अनुसन्धान किया। ब्रह्मचारी कवन्धी और महर्षि रेवक दोनों जिज्ञासु थे।

गणेश जी ने उनसे प्रश्न किया कि महाराज! मैं यह जानना चाहता हूँ, कि मेरे मस्तिष्क में, क्योंकि मानव का जैसे एक वृक्ष है, और वृक्ष वह ऊर्ध्वा में कहलाता है। वृक्ष की ऊर्ध्वा गति है। जैसे वृक्ष की नीचे को जड़ होती है। ऐसे ही मानव की जड़ ऊर्ध्वा कहलाती है। उस ऊर्ध्वा जड़ में कौन सा परमाणु, कौन सा तत्व है? कहाँ वे नाड़ियाँ रहती हैं, जहाँ वह अन्तरिक्ष में गति करता है, तो महाराजा गणेश जी और रेवक मुनि और कवन्धी का विचार विनिमय होने लगा।

332 महाराज गणेश ब्रह्माग्नि

तो जैसे ही महाराज गणेश जी ने, इस वेदमन्त्र के ऊपर चिन्तन और लेखनीबद्ध की, तो उन्होंने कहा कि वाक् तो तुम्हारा यथार्थ है, परन्तु यह वेदमन्त्र तो कुछ ऐसा कहता है, कि नाना शनि हैं, और जो अग्नि की धाराओं को, अग्नि उनको रथ बना करके गतियाँ दे रही हैं। वेद मन्त्र कुछ ऐसा कह रहा है। एक ब्रह्माग्नि है, वह जो ब्रह्माग्नि है, वह इस रथ को बना करके, नाना लोक लोकांतरों के रथ बनाकर के उनको गतियाँ दे रही हैं, और उनमें विशेषता यह है, एक मण्डल एक लोक दूसरे लोक से प्रतिभाषित नहीं हो रहा है। यह इसको ब्रह्माग्नि कहते हैं, विचित्र अग्नि कहते हैं, इसके ऊपर मानव परम्परागतों से अनुसन्धान करता रहा है।

तो महाराजा गणेश जी ने जब ऐसा कहा तो दोनों शान्त हो गए। मुद्रित हो करके, शोभिनी ने कहा कि महाराज! हम आपके चरणों में इसीलिए आए हैं क्योंकि आपका बहुत अनुसन्धान है, आपका बहुत अध्ययन है। तो महाराजा गणेश जी ने कहा मेरी माता इसका उत्तर दे सकेंगी और मैं जितना जानता हूँ मैंने इतना उत्तर दिया है।

तो माता पार्वती के समीप पहुंचे।जब माता पार्वती के समीप पहुंचे, तो माता ने कहा आओ, पुत्रों! उन्हे आसन दिया, और कुछ आतिथि किया और उन्होंने कहा तुम्हारा क्या प्रश्न है? उन्होंने कहा, मातेश्वरी! हम ब्रह्माग्नि को जानना चाहते हैं। वह जो ब्रह्माग्नि है, जो इस ब्रह्माण्ड के प्रत्येक लोक लोकान्तरों को रथ बना करके, जैसे पृथ्वी को सूर्य की किरणें रथ बना करके, वाहन बन करके, पृथ्वी को गति दे रही हैं, और हम सब प्राणी इस पृथ्वी ऊपर विद्यमान हैं, तो यह पृथ्वी रथ के तुल्य है, और यह गति इसमें हम सब विद्यमान हैं तो हम ब्रह्माग्नि को जानना चाहते हैं जो ब्रह्माग्नि सब लोक लोकान्तरों का रथ बनाए हुए है।

333 महाराजा गणेश

मैं महाराजा हनुमान और गणेश की चर्चा कर रहा था। गणेश का, लक्ष्मी का, दोनों का समन्वय रहता हैं जहाँ गणेश रहते हैं वहाँ लक्ष्मी रहती है। गणेश जी का अभिप्राय जहाँ महाराजा शिव के पुत्र का नाम गणेश था, वहाँ गणपति जो गुणों का स्वामी है, गुणों का स्वामी कौन है? हमारे यहाँ गण नाम प्राण को कहा गया है और जो प्राणों का स्वामी है प्राणेश्वर है, वह गणपति कहलाता है और जहाँ गणपति रहता है मानव के शरीरों में वहाँ लक्ष्मी श्री वास करती है। श्री हमारे यहाँ सरस्वती को कहते हैं, ज्ञान को कहते हैं, विज्ञान को कहते हैं। भिन्न भिन्न प्रकार के इसके स्वरूप माने गए हैं और जिन गृहों में लक्ष्मी का पूजन होता है वह गृह पवित्र बनते हैं। 29.09.1981

334 विजय याग

उन्होंने कहा गणेश जी तुमने विज्ञान को बहुत जाना है, गणेश जी उपस्थित हो करके, बोले कि प्रभु! मेरे साथी हनुमान जी यही विद्यमान हैं, हम दोनों ने एक ही आचार्य से, ब्रह्म विद्या और यह जो पदार्थ विद्या है, इसको जाना है, जिसको वैज्ञानिक विद्या कहा जाता है, हमने बहुत से यन्त्रों का निर्माण किया, जो सूर्य की किरणों के साथ गमन करते हैं, कोई चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है, कोई मंगल की परिक्रमा कर रहा है, परन्तु हमने बहुत से यन्त्रों को जाना है, ओर वह यन्त्रों को जानने का अभिप्रायः यह कि प्रभु का जो परमाणुवाद है, उसको रचाया हुआ है, उस परमाणुवाद का उपयोग करना ही, उसी को निहारना हैओर सृष्टि को निहार करके, विज्ञान का सदुपयोग करना, यह कर्तव्यवादी बन जाएगा, और जब विज्ञान अपने में, अपने में वैज्ञानिक कर्तव्यहीनता में विज्ञान को ले आते हैं, तो वह दुष्कर बन जाता है, वह दुष्कर विनाश करने वाला बनता है।तो इस प्रकार के क्रियाकलाप किए जाए, तो वह अपने में बड़े प्रसन्न हुए, और प्रसन्न हो करके, महाराजा शिव ने आज्ञा दी, जाओ, तुम याग करो, समुद्र के तट पर याग करो, परन्तु हम तुम्हारे सहयोगी रहेंगे, और दूरिता को नष्ट करने का प्रयास करो।

ऋषि मुनियों ने एक ही अपने अन्तर्हृदय से उनकी प्रशंसा की और यह कहा कि प्रभु! धन्य है, आपका विज्ञान बहुत अद्वितीय कहलाता है, महाराज शिव के यहां, ऐसे ऐसे यन्त्र विद्यमान थे, जो मार्कण्डेय जी की सहायता से, उन्होंने यन्त्रों को जाना, परन्तु वह चन्द्रमा और पृथ्वी के मध्य में उनके ऐसे स्थान से जहां विद्यमान हो करके, चन्द्रमा की यात्रा और बुध की यात्रा में, वह सफलता को प्राप्त होते रहे, इस प्रकार के यन्त्र उन्हें विराजमान हो करके, वह ऐसा स्थान है, एक स्थली पर जहां चन्द्रमा की भी सीमा अव्रत होती है, और बुध की होती है, और मंगल की भी होती है, और वही शुक्र की होती है, वहां से यन्त्र विद्यमान हो करके सर्वत्र लोकों में वैज्ञानिक भ्रमण करते रहे हैं। 31.10.1991

335 महान वैज्ञानिक भगवान राम

हमारे यहाँ विज्ञान परम्परागतों से ही था। रावण के यहाँ बहुत प्रबल विज्ञान रहा था। भगवान राम बहुत ही विशाल वैज्ञानिक थे। उनकी सेना में नल और नील बड़े महान वैज्ञानिक थे। इसी प्रकार और भी नाना वैज्ञानिक थे। भगवान कृष्ण का विज्ञान, भीम, घटोत्कच्छ और भी जैसे महाराजा अर्जुन के पुत्र, बभ्रुवाहन हुए, अर्जुन हुए और भी नाना जैसे द्रोणाचार्य उनका विज्ञान बहुत ही विशाल रहा था। जब संग्राम होता था, तो उन्होंने अपने यन्त्रों को चन्द्रमा के कक्ष से भी ऊपरी भाग में त्याग दिया। वे भ्रमण कर रहे हैं। यह कोई आश्चर्य नहीं। यह परम्परागतों उसी प्रकार का विचार रहता है। यन्त्रालयों की परम्परागतों में भी, प्रायः इसी प्रकार की धाराएं रमण करती रही हैं। क्योंकि यन्त्रों के संग्राम को दृष्टिपात करना, उनको कहीं से कहीं स्थापित करना यह सदैव ही हमारे यहाँ रहा है। हमारे तो वैदिक साहित्य में इसकी मौलिकता प्राप्त होती रही है। 04.08.1971

336 भगवान राम की घ्राण इन्द्रियाँ

भगवान राम जब वन में भ्रमण कर रहे थे, अपने गुरु जी के सहित, तो उनकी घ्राण इन्द्रियाँ बड़ी विशेष थी।उन्होंने निषाद से कहा हे निषाद! यह तो भूमि है, ऐसी मुझे गन्ध आ रही हैं, जैसे यह भूमि अन्न के उपजने के योग्य हो, इसमें तुम अन्न उत्पन्न करो, ऐसी भूमि का नाम अहिल्या कहा जाता हैं, तुम इस भूमि से उपज करो, तुम्हारा राष्ट्र सम्पन्न, तो निषाद ने ऐसा ही किया तो इस भूमि उपज योग्य बन गई, भूमि कल्याण में परिवर्तित हो गई।

राम, महर्षि विश्वामित्र के विद्यालय में अध्ययन कर रहे थे और धनुर्विद्या का अध्ययन कर रहे थे, तो विश्वामित्र ने राम से कहा राम! जाओ, इस पृथ्वी के धातु पिपाद को जान करके, मुझे निर्णय दो, तो राम और एक मृचिका ब्रह्मचारी दोनो गमन करते हुए समुद्र के तट पर पंहुचे, और समुद्र के तट पर जब उन्होंने वहाँ का वायुमण्डल दृष्टिपात किया, तो वायुमण्डल में नाना प्रकार के धातु पिपाद की, उन्हे गन्ध आने लगी, उन्होनें वही यन्त्रों का निर्माण किया और पृथ्वी के गर्भ से और भी नाना प्रकार की धातुओं को वह अपने में लाना प्रारम्भ करते, उन्होंने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा भगवन! हमने कुछ जाना भी है, और वह गन्ध हमें इस प्रकार की आती है, तो इस प्रकार घ्राण इन्द्रियों

का विषय यह बड़ा विचित्र है। 21.02.1988

337 वैज्ञानिक लक्ष्मण

परम वैज्ञानिक महर्षि भारद्वाज के शिष्य रघुवंशी लक्ष्मण जी थे। माता सीता जी की रक्षा के लिए खींची गई, रेखा का विज्ञान महर्षि से सीखा था।

राजा रावण के यहाँ क्या नहीं था, कितना विज्ञान था, चन्द्रयान थे, मंगलयान थे, शुक्रयान थे, परन्तु चरित्र नहीं रहता था।

तुम्हें प्रतीत है लक्ष्मण के द्वारा कितना चरित्र था, विज्ञान भी बहुत था, परन्तु चरित्र भी बहुत था, गृह त्यागने के पश्चात रघुवंश में उत्पन्न होने वाले भगवान् राम, उन्होंने संसार से मिलन करने की प्रेरणा की। अपने हृदय में, उस शक्ति को धारण किया, कि संसार से मिलन किया जाए। यह जो संसार एक दूसरे की अग्नि में प्रदीप्त होने जा रहा है, इससे मिलान किया जाए। एक दूसरे के हृदय का हृदय से मिलान होना चाहिए। 03.08.1971

338 सोमतीति रेखा

यह सबसे प्रथम पठन पाठन की प्रक्रिया थी, उनके द्वारा। उसके पश्चात वह छः माह तक महर्षि भारद्वाज आश्रम में परिणत हुए। वहीँ आश्रम में महाराजा लक्ष्मण ने उस रेखा को जानने का प्रयास किया, जिस रेखा को हमारे यहाँ ऊचे 2 महापुरुषों में ही प्राप्त होती है। वह किस प्रकार की रेखा है? कि जिस रेखा में यह जो नाना प्रकार को परमाणुवाद है, इन परमाणुओं की, इस अणुओं की धारा यन्त्र से दूरी न जाए, वह यन्त्र इनकी अग्नि को ऐसे निगल जाता था जैसे वर्षाकाल में पृथ्वी, जल को अपने में शोषण कर जाती है। इसी प्रकार वह जो भयंकर अग्नि यंत्रों से उगली जाती थी, उस विशाल अग्नि को वह अपने में शोषण कर जाता, जिसको सोमतीति नाम की रेखा कहा जाता था। जिसको भगवान कृष्ण भी जानते थे और लक्ष्मण भी जानते थे। पंचवटी पर रावण आ पहुंचा, तो पंचवटी के अंतर्गत उन्होंने एक रेखा का निर्माण किया और यह कहा हे मातेश्वरी! इस रेखा से तुम्हे बाहर नहीं होना। कितना विज्ञान था? उस विज्ञान की हम कल्पना भी नहीं कर सकते, कितना विज्ञान था उस समय। जो आँगन में रहने वाला, वह भस्म न होता हो, परन्तु जो बाहर से आने वाला प्राणी उस रेखा में भस्म हो जाता। उसके अन्तर्गत आते ही भस्म हो जाता था। कितनी विशालता थी उसमें। वह क्या विज्ञान था? उसको हमें आज विचारना है, उसको अपने क्रियात्मक में लाने का प्रयास करना चाहिए। क्योंकि वही तो हमारा जन जीवन कहलाया गया है, वही तो वेद का एक महान विचार है जिसको लाना है, हमें।

महर्षि भारद्वाज की, उस रेखा को लाना है हमें। महर्षि भारद्वाज उस रेखा को जानते थे, जिसको महर्षि शाण्डिल्य भी जानते थे।

महर्षि दधीचि उसी रेखा को जानते थे, हमारा कौन सा ऋषि ऐसा नहीं, जिन्होंने उस रेखा को नहीं जाना, परन्तु वह विज्ञानता वहीं तक कृत रहती है जहाँ तक उस रेखा का प्रतिनिधित्व मानवता में परिणत होता रहता है। 03.08.1971।

339 महाराजा हनुमान, शोभनी ऋषि, गणेश जी और माता पार्वती

तो माता पार्वती ने कहा हे पुत्रों! जैसे माता अपने पुत्रों को धारण करती है, तो माता उस समय रथ कहलाती है, परन्तु माता रथ है और माता का नामोकरण ही उस समय आह्वनीय अग्नि कहलाती है। माता का नाम ही उस समय ब्रह्मवर्चोसि अग्नि कहलाती है। जिस आभा में यह मानव विद्यमान रहता है, जिसको ब्रह्मवर्चोसि कहते हैं। ब्रह्मवर्चोसि है, ब्रह्माग्नि से इसका समन्वय रहता है। ब्रह्माग्नि से समन्वय रह करके, यह उस ब्रह्मवर्चोसि परमाणुओं के ऊपर, प्रत्येक मानव उसके ऊपर विद्यमान हो करके, गति कर रहा है, और कैसे गति कर रहा है? जो मानव समाधिष्ठ होने वाला है, वह इसका उत्तर दे सकता है। मैं तो केवल इतना उत्तर दे सकती हूँ कि यह जो ब्रह्माण्ड है, यह ब्रह्माग्नि के ऊपर विद्यमान हो करके, यह सर्वत्र गति कर रहा है, और गति करके यह रथ बना हुआ है, मैं तो इतना जानती हूँ।

तो, महराज हनुमान, शोभनी ने कहा कि मातेश्वरी! हमारी संतुष्टि नहीं हुई। तुम्हारे उत्तरों से, हमारी सन्तुष्टि नहीं हुई, हम ब्रह्माग्नि को ओर रूप से भी जानना चाहते हैं।उन्होंने कहा कि तुम महाराजा शिव के द्वार पर जाओ। जिस महाराजा शिव के कण्ठ में सर्पो की माला रहती है। वह जब ध्यान मुद्रित हो जाते हैं, तो सिंह उनके चरणों की वन्दना करते हैं। सर्पराज कण्ठ में ओत प्रोत हो जाते हैं। ऐसे महापुरुष के द्वार पर जा करके तुम्हें इसका उत्तर तुम्हें प्राप्त होगा।

महाराजा हनुमान, शोभनी ऋषि, गणेश जी और माता पार्वती ये चारों भ्रमण करते हुए, उस स्थली पर पहुंचे, जहाँ महाराज शिव अपने में तपस्वी जीवन व्यतीत कर रहे थे। उस समय वह बारह वर्ष के लिए तपस्या में चले गए थे और तप करने के लिए उन्होंने यह कहा था, अपनी देवी से, कि हे देवी! मैं इस भौतिक विज्ञान से उपराम हो गया हूँ, मैं ऊब गया हूँ, इससे मैं उपराम होना चाहता हूँ। स्थित होना चाहता हूँ, मैं तपस्या करने जा रहा हूँ, ब्रह्मवर्चोसि बनना चाहता हूँ।

वह भयंकर वनों में तप कर रहे हैं। और अपनी समाधि में ओत प्रोत हैं। कण्ठ में सर्पो की माला है। चरणों की वन्दना करने वाले सिंहराज

हैं। त्रिवर्धा, त्रिगुणों को ले करके और त्रि दोषों को एक सूत्र में लाने का वह प्रयास कर रहे थे। 05.03.1984

340 महाराजा हनुमान

सूर्यकेतु नामक एक पोथी का निर्माण महाराजा हनुमान ने किया था। सूर्य विज्ञान के ऊपर नाना रूपों में उन्होंने उस पोथी का निर्माण किया। पोथी को आधुनिक जगत में महाभारत काल के पश्चात जैन काल में अग्नि के मुखारबिन्दु में परिणत कर दी गई थी। आज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह कहा है कि कटु उच्चारण करना हमारा धर्म नहीं। परन्तु सच उच्चारण करना तो हमारा मौलिक गुण कहलाता है। 09.03.1979

341 महाराजा हनुमान

बहुत से महापुरुष हमारे यहाँ ऐसे हैं जिन्होंने आकुंचन-शक्ति के ऊपर बहुत अनुसन्धान किया। जैसे महाराजा हनुमान थे। हनुमान जी जब आकुंचन-शक्ति के ऊपर अध्ययन करते थे। उनकी आकुंचन-शक्ति उनकी बलवती बन गई थी। मुझे स्मरण आता रहता है, त्रेता के काल में जब महाराज हनुमान आकुंचन-शक्ति के ऊपर अनुसन्धान करते थे। अपने शरीर को विशाल बनाना और सूक्ष्म बनाना। ये गतियां योगाभ्यास के द्वारा आती हैं। 22.04.1979

342 हनुमान जी के गुरु स्वातिकेतुक ऋषि महाराज।

मुझे स्मरण आता है महाराजा हनुमान जी के गुरु थे, उनका नाम था स्वातिकेतुक ऋषि महाराज। स्वातिकेतुक ऋषि महाराज इस प्रकार के ऋषि थे, कि वे अपने प्राण और मन दोनों की आभा को जान करके मनन और चिन्तन करते थे। एक समय वह मनन करने लगे। जब मनन करने लगे, मन को प्राणों पर अर्पित कर दिया। प्राणों पर अर्पित करने के पश्चात वे चिन्तन करने लगे। 19.02.1980

343 महात्मा हनुमान और महर्षि कागभुषुण्ड की वैज्ञानिक चर्चाएँ

तो जब हनुमान जी से कागभुषण्डजी ने ये चर्चाएँ की, तो उन्होंने कहा प्रभु! आप अपना कुछ क्रियात्मक, अनुभूति प्रगट कराइए, जब हनुमान जी ने यह कहा तो कागभुषुण्डजी ने कहा कि हनुमान जी! एक समय मैंने बारह वर्ष का अनुष्ठान किया और बारह वर्ष में मैं पत्र और पुष्पों का चूर्ण बना करके उसको पान करता रहा, एक एक वर्ष का अनुष्ठान करने से, तो आत्मा बलवान और बलिष्टता को प्राप्त हो गया। जब वह बलिष्टता को प्राप्त हो गया, तो इससे हमें प्रतीत हुआ कि हमें अपने जीवन में बलिष्टता को लाना है, पवित्रता को लाना है, जिसके लाने के पश्चात मानव का जीवन पवित्र बनता है। अनुभूति आभा वाला हमारा जीवन बनता रहता है।

तो ऋषि ने कहा है कि मैंने भी एक समय अपान और प्राण दोनों को एक सूत्र में लाने का प्रयास किया और प्रयास करके उसमें ऊर्ध्वत्व को प्राप्त हो गया।

उनके अनुभव लेकर के महाराजा हनुमान ने भी जहाँ वह विज्ञान में पारायण थे, वहाँ ब्रह्मचरीष्यामि में भी पारायण थे। वे ब्रह्मचर्य की ऊँची ऊँची उड़ानें उड़ते रहते थे। हनुमान के जीवन में एक घटना है, कि उन्होंने अपने जीवन में एक सन्तान को जन्म दिया था।। जिस सन्तान को जन्म दिया वह पातालपुरी में अपने जीवन को व्यतीत करते थे।

हनुमान जी का एक ही पुत्र था, जिसे वह दीक्षा देने में लगे हुए थे, परिणत होने की धाराओं में रत्त रहना, वे महान बनते चले गए। तो मानव को अपनी मानवता और यौगिकता को अपने से दूरी नहीं जाने देना चाहिए। वे सदैव उसमें समावेश होती रहें। तो चित्त के मण्डल में जब वह दृष्टिपात करते थे तो उसे नाना कामधेनुएँ दृष्टिपात होने लगतीं। यह जो ब्रह्माण्ड है, जगत है यह महानता वाला प्रियतम है, जिसको अपना करके मानव को सागर से पार होने का प्रयास करना चाहिए, जब विद्यालयों में अन्वेषण करने वाला विज्ञान में रत्त होता है। 01.03.1985

344 महाराजा हनुमान की अंतरिक्ष यात्रा

महाराजा हनुमान एक मन्त्र को लेकर के चले, चित्रं दधि ब्रह्मा वाचो रचितं याकृतम्, कि मानव को यदि अपनी मानवता को ऊँचा बनाना है, पवित्रता को एक सूत्र में लाना है, महानता का दिग्दर्शन करना है, विचित्रता की धाराओं को अपने में लाने का प्रयास करना है, तो इनका जीवन इस सम्बन्ध में एक अग्रणीय बन करके रहा है, जिसके ऊपर मानव अपनी मानवता को न्यौछावर कर देता है। वे नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करते हैं, हनुमान के द्वारा एक यन्त्र ऐसा था, जिस यन्त्र में विद्यमान होकर के, वे चन्द्रमा और पृथ्वी दोनों की आकर्षण शक्ति जहाँ मिलन करते हैं, वहाँ अपने यन्त्र को स्थिर करते और स्थिर करके वह यन्त्र, उनका सूर्य की ऊर्ज्वा से गति करता है, सूर्य की ऊर्ज्वा में रत्त रहता है, उनकी महानता का दिग्दर्शन अपने में महान रहा है, विचित्र रहा है। हम अपने जीवन में सदैव महान की महानता को जानना चाहते हैं, जिसको जानकर के मानव को एक मानवता का भास हो गया, मानव की प्रतिभा उसके समीप आ जाए।

वे सूर्य की किरणों के द्वारा नाना प्रकार का अनुष्ठान करते रहे और उस अनुष्ठान का परिणाम यह हुआ, कि वें अध्यात्मवाद और भौतिकवाद

दोनों में रत्त रहते थे, दोनों में सुगठित होकर के, दोनों की धाराओं में प्रायः वह परिणत रहे। तो महाराज हनुमान के एक ही पुत्र था, उसके पश्चात वह ब्रह्मचरिष्यामि। ब्रह्मचारिष्यामि का अभिप्रायः क्या है? कि जो एक ही सूत्र में अपने ब्रह्म को चरी में परिणत कर देता है, वह ब्रह्मचारिष्यामि कहलाता है।
मानव को अपने जीवन का परिचय दे देना चाहिए और वह परिचय क्या है? जिस परिचय को ले करके, मानव विज्ञान में परिणत हो जाता है, योग में प्रवेश कर जाता है। तो चित्त के मण्डल में और अपनी वृत्तियों के मण्डल में भी अन्तर्द्वन्द्व रहता है, इन दोनों में अन्तर्द्वन्ता रहती है, परन्तु यह बड़ा आश्चर्य और वृत्तियों की विशेष एक आभा में कहलाता है।
तो हमें अपने जीवन को ऊँचा बनाना है। हे माता! तुझे वेद वसुन्धरा के नामों से वर्णन करता रहता है, तू वसुन्धरा कहलाती है। हे माता वसुन्धरा! तू प्रायः हमारा कल्याण करने वाली है।माता वसुन्धरा! हम तेरे ही गर्भ में, यह सब दृष्टिपात होने वाला अनुपम जगत है, जगत के ऊपर तुम विचारों और परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए, अपने देव की महिमा का गुणगान गाना चाहिए। जिस आनन्दमयी गान गाने से मानव के हृदय में पवित्रता आती है। गान एक पवित्रतम क्रियाकलाप है, भिन्न भिन्न रूपों में हमें वह दृष्टिपात आता रहता है, जिसको दृष्टिपात करने के पश्चात जीवन एक महान् और पवित्र बन करके रहता है।
वह सूर्य विष्णु कहलाता है, पालन करने वाला है, पालना का अध्ययन, मानव का समावेश हो जाता है। इसीलिए उसकी धारा को हमें जानना है। माता का इसमें बड़ा सहयोग रहता है, यह वसुन्धरा है और वसुन्धरा के गर्भ में यह सर्व ब्रह्माण्ड विराजमान है। 01.03.1985

345 महाराजा हनुमान और गणेश जी का यन्त्र निर्माण

एक समय महाराजा हनुमान और गणेश जी ने एक यन्त्र का निर्माण किया, इसको स्वाति नक्षत्र, स्वाति वेदकेतु कहते हैं। स्वाति वेदकेतु क्या है? एक यन्त्र को उन्होंने जाना, उस यन्त्र में, सर्वत्र अपने में विद्यमान हो करके, उस यन्त्र के समीप जाना, उसकी आभा को जानना, उसकी मानवीयता पर विचार विनिमय करना।
वास्तव में प्रभु का कोई परिचय दे नहीं पाता, क्योंकि प्रभु अनन्तता में रत्त रहने वाला है। वह एक आभा को अपने में धारण करके और जीवन को पवित्र बनाने में लगा हुआ रहता है। तो महाराज हनुमान के जीवन में ये नाना घटनाएँ, नाना विचार विनिमय होते रहे हैं। जिन विचारों को लेकर महाराजा हनुमान इस संसार को निहारता रहा है। उन्होंने एक समय, अपने यान का निर्माण किया। इस यान को स्वावृत्तिका कहते हैं। वह यान को अमृत करते हुए, सूर्य की किरणों के साथ, उस यान में विद्यमान होकर के वह गति किया करते थे। उस गति का परिणाम यह होता, जिनके ऊपर हमारा जीवन प्रायः ऊँचा बने, प्रायः हम उस धारा में रत्त रहने वाले हों।
अपने यानों में विद्यमान होकर के मंगल में क्या, बुध में क्या, और चन्द्रमा से आगे नाना लोकों में उड़ान उड़ना, उनका एक क्रियाकलाप बन गया था।
उनकी धाराएँ उनको अपने में जहाँ वह परमाणुओं के ऊपर अन्वेषण करते, उसी के उपरांत में वे नाना प्रकार के विज्ञान में वह सदैव रत्त रहने वाले, नाना प्रकार के विज्ञान में रत्त रह करके अपने को ऊँचा बनाना, जीवन की धाराओं को पवित्रता की वेदी पर ले जाना, ये भी मानव का कर्त्तव्य कहलाता है।
महाराजा हनुमान की भाँति अपने में यन्त्रों में विद्यमान हो करके, उड़ान उड़ता हुआ, सूर्य की किरणों के साथ, मंगल में चला गया, मंगल के कुछ वैज्ञानिकों से उनका मिलन हुआ, और मिलन होकर के वार्ताएँ प्रगट की। 01.03.1985
यह भौतिक विज्ञान अपने में बड़ा ऊर्ध्वा में गमन करता है क्योंकि पांच प्रकार की जो प्रवृत्तियाँ हैं प्रकृति का जो स्वरूप है वह पांच प्रकारके रूपों में विद्यमान रहता है। 02.03.1990

346 सूर्य विद्या के विशेषज्ञ महाराजा हनुमान

महाराजा हनुमान पवन पुत्र कहलाते थे वे माता अंजना के पुत्र थे। महाराजा महीवृतकेतु की कन्या का नाम अंजना था। अंजना के पति महाराजा पवन कहलाते थे। महाराजा महीन्द्र के राजकुमार पवन कहलाते थे।
जब वह बाल्यकाल से माता अन्जना के गर्भ में क्रीड़ा करता रहता था। बाल्यकाल में वह विचारता रहता, कि माता यह सूर्य क्या पदार्थ है? यह सूर्य क्या है?
तो माता उसे यह शिक्षा देती थी कि पुत्र! यह जो सूर्य है यह प्रकाशक है, यह प्रकाश को देने वाला है। नाना प्रकार की किरणें आ करके हमारे को प्रकाशित करती रहती हैं।
माता जब यह विचार देती रहती तो एक समय बाल्यकाल में इस बालक ने यह कहा कि माता! मेरा हृदय तो ऐसा कह रहा है, कि सूर्य की आभा को मैं अपने में निगलना चाहता हूँ। अपने में धारण करना चाहता हूँ। उन्होंने कहा कि पुत्र! वह भी समय आएगा। माता के स्थल

में होने वाला बालक हनुमान वह सारी सूर्य विद्या का विशेषज्ञ बना। माता की अनुपम शिक्षा थी। सूर्य के विज्ञान को जानने वाला, सूर्य को जितनी विद्या है, प्रकाश है उसे वह स्वयं अपने में निगलता रहता था। 04.05.1976

347 वैज्ञानिक महाराजा हनुमान

महाराजा हनुमान बहुत ऊंचा विज्ञान जानते थे, कि वह अपने यान से उड़ान उड़ते हुए वह सूर्य की किरणों की आभा में रमण कर रहा है और वे किरणों से ही यान की शक्ति को प्राप्त कर रहा है। किरणों से यान गति कर रहा है, और वह गति करता हुआ, सूर्य की किरणों से यान का निर्माण। वह लंका में माता सीता की खोज के लिए उसी यान से आ पहुंचे वह कहाँ है? जब समुद्र से दूर होने लगे तो वह उस यान में गए थे, वह यान सूर्य की किरणों से गति करता था। यहाँ ऐसे यान ऐसी ऐसी विज्ञान की तरंगें को जानना चाहिए, जो महान् सूर्य की किरणों से गति करने वाला हो। '

आधुनिक काल का वैज्ञानिक अब तक ऐसा वाहन निर्मित नहीं कर सका है, जो सूर्य की किरणों से गति करने वाला हो। चन्द्रमा की शीतलता के द्वारा उन आभा की किरणों को ले करके गति करने वाला हो।

हनुमान जी सूर्य विज्ञान को जानते थे। आधुनिक जगत ने जाना नहीं और यह कहने लगा कि सूर्य को हनुमान ने अपने मुखारबिन्दु में धारण कर लिया। कंठ में धारण कर लिया था। अरे! कंठ में नहीं, उनके कंठ में सूर्य का विज्ञान और ज्ञान था। वे इसको प्रसारित करते रहते थे, उसी में वे आभायित रहते थे। इसीलिए वह विज्ञान महान कहलाता है। 18.03.1978

348 महाराजा हनुमान

महाराजा हनुमान का जीवन कितना ज्ञान और विज्ञान में रमण करने वाला था। सूर्य की जितनी विद्याएं थीं, वह सर्वत्र विद्याओं को निगलने वाला एकोकी हनुमान कहलाता था। एक समय महाराजा हनुमान और शिव पुत्र गणेश हिमालय कन्दराओं में एक स्थली पर विद्यमान थे। दोनों का विचार विनिमय चल रहा था, कि महाराज! यह सूर्य क्या है? यह प्रकाश देता ही रहता है।

तो वे अनुसन्धान शालाओं में विद्यमान हो करके, यह विचारने लगे कि कितने लोकों को सूर्य प्रकाश देता है। दोनों ने विचारा। मनन और चिन्तन करने से वैज्ञानिक यन्त्रों से, उन्हें यह प्रतीत हुआ कि मंगल और चन्द्रमा, बुध और इससे सम्बन्धित जो लोक हैं, उन सबको प्रकाश देने वाला सूर्य ही कहलाता है। उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ। उन्होंने सूर्य विद्या पर अनुसन्धान किया। सूर्य क्या क्या करता है? इसी सूर्य विद्या को ले करके भगवान राम महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के चरणों में विद्यमान हो करके कलाओं के ऊपर विचार विनिमय करने लगे। सबसे प्रथम द्यौ है, इस द्यौ से सहायता ले करके चन्द्रमा प्रकाश देता है। द्वितीय रूपों में हमारे यहाँ वायु मानी गयी है, जो संसार को प्राण देता है। तृतीय यह अग्नि कहलाती है, लौकिक जो मानव को जन जीवन, समाज को प्रकाशमय अथवा ज्योति और तेजोमय बनाता है।

349 महाराजा हनुमान कि सूर्य विज्ञान पर पुस्तक

भगवान गणेश जी अपने आँगन में विद्यमान हो करके हनुमान के समीप विद्यमान हो करके अनुसन्धान करते रहे। वह सूर्य विद्या पर अपना निरीक्षण करते रहे। महाराज हनुमान ने दो हजार पृष्ठों की एक पोथी का निर्माण किया था, जो सूर्य विद्या पर उन्होंने लेखनियां बद्ध कीं। उन लेखनियों में क्या था?

कि सूर्य कितना विज्ञानमयी कहलाता है? उन्हांने यन्त्रों का निर्माण भी किया और वह यन्त्र से? जो सूर्य की ज्योति को ले करके रात्रि काल में उनको जानना और उन्हीं में रत रहना। यह जो पृथ्वी है, इस पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार का खनिज और खाद्य विद्यमान है, वह सूर्योमयी कहलाया गया है।

यह सूर्य ऐसा अनुपम देव है, जो प्रातःकाल से सायंकाल तक प्रकाश देता रहता है, उसी प्रकाश से प्रत्येक मानव प्रकाशित रहता है। वही प्रकाश तेजोमयी द्यौ कहलाता है।

एक समय गार्गेपथ्य ने ब्रह्मचारी कवन्धि से यह कहा था कि हमारा जो अन्तरात्मा है, अनुपम ज्योति है, सूर्य का प्रकाश है वह कोई प्रकाश नहीं है, जो आत्मा का प्रकाश सदैव अपने में अनुभव करता रहता है। अन्धकार छाया हुआ है, कोई प्रकाश नहीं है।परन्तु आत्मा के प्रकाश से मानव प्रकाशित होता रहता है। इसी प्रकार सूर्य की ये जो कलाएं हैं, इन कलाओं के ऊपर जो भौतिकवाद विज्ञान की तरंगें उत्पन्न होती हैं, उन्हीं को सदैव मानव जानता रहता है।

एक समय महाराजा हनुमान और गणेश जी भ्रमण करते हुए स्वेनात ऋषि के, द्वार पर पहुंचे। महाराजा स्वेनात ऋषि अपनी स्थली पर विद्यमान थे। विद्यमान होने के पश्चात वह सूर्य के ऊपर अनुसन्धान कर रहे थे। वह सूर्य का प्रकाश, आत्मा के प्रकाश से समन्वय कर रहे थे। ऋषि ने यह निर्णित किया, कि सूर्य का प्रकाश उस द्यौ के प्रकाश से भी ऊर्ध्वागति वाला प्रकाश है, इसको जान करके मानव अनुपमता को प्राप्त हो जाता है। 29.09.1981

तो महाराजा हनुमान और गणेश जी दोनों जब ऋषि के द्वार पर पहुंचे, तो ऋषि से उन्हांने यही कहा कि महाराज! हम वैज्ञानिक बनना चाहते हैं, हम सूर्य विद्या के ऊपर अपना अनुसन्धान करना चाहते हैं। 29.09.1981

350 महाराजा हनुमान का पादुका यन्त्र

तो महाराजा गणेश जी ने, हनुमान जी ने पादुका नामक एक यन्त्र का निर्माण किया था। उस पादुका यन्त्र में यह विशेषता थी कि प्राण शक्ति का उन्होंने उसमें सृजन किया।

जिस पादुका पर विद्यमान हो करके इस पृथ्वी से उड़ान उड़ने लगे और पृथ्वी से उड़ान उड़ते हुए वह मंगल में पहुंच गए। मंगल से उड़ान उड़ी तो बृहस्पति में पहुंच गए और जब पुनः मंगल में आए तो मंगल के वैज्ञानिकों ने उनके यन्त्र को कटिबद्ध करना चाहा। उस समय स्वेताम् वृहीणिम नाम के मंगल मण्डल में एक वैज्ञानिक रहते थे। जब उन्होंने उस यन्त्र को अपने राष्ट्र में, मंगल में रहने के लिए प्रतीति की और अपने यन्त्रों का एक रूपान्तर उसके ऊपर आक्रमण किया तो हनुमान और गणेश जी दोनों उस यन्त्र को ले करके अन्तर्ध्यान हो गए और यन्त्र को ले करके वह पृथ्वी मण्डल पर आ गए।

आधुनिक काल में भी ऐसे वैज्ञानिक यन्त्रों का निर्माण हो गया है जो यन्त्र इस पृथ्वी मण्डल पर आते हैं, समुद्र के तटों पर वह यन्त्र प्राप्त होते रहते हैं। परन्तु मैं आज आधुनिक काल के विज्ञान को तो इतना परिश्रमी नहीं जान पाता परन्तु वह यन्त्र जब पृथ्वी पर आ गया।

एक समय दोनों वैज्ञानिक अपनी आभा में रमण कर रहे थे उस समय माता पार्वती और शिव दोनों कहीं से भ्रमण करते हुए उनकेद्वार पर आ गए, उनकी विज्ञानशाला में आ गए।

उन्होंने कहा हे बाल्य! तुम क्या कर रहे हो? उन्होंने कहा हे मातेश्वरी, हे पितृजन! हम यन्त्रों का निर्माण कर रहे हैं। आज हमने एक ऐसा यन्त्र निर्माणित करना है, जिन यन्त्रों में मानव के जीवन को वायुमण्डल से सहायता प्राप्त होती रहे और उस मानव को शत्रु विजय न कर सके। उन्होंने ऐसे यन्त्र का भी निर्माण किया, जिस यन्त्र में मानव को सहायता प्राप्त होती थी। संग्राम कर रहा है, परन्तु यन्त्र सहायता दे रहा है, दूसरा मानव शत्रु से विजय नहीं हो रहा है, तो इस प्रकार के यन्त्रों का भी उन्होंने प्रायः निर्माण किया। परन्तु एक यन्त्र ऐसा निर्माण किया, उन्होंने, जिस यन्त्र में विद्यमान हो करके, समुद्र के निचले स्थल को माप करके, वह तट पर आ गए, उन्होंने एक ऐसे यन्त्र का निर्माण किया, पार्वती और शिव की सहायता से, कि यन्त्र को धीमे धीमे अन्तरिक्ष में ले गए और जहाँ इस पृथ्वी की आकर्षण शक्ति समाप्त होती है और चन्द्रमा की आकर्षण शक्ति का मिलान होता है, उस यन्त्र को वहाँ स्थिर कर दिया और उस यन्त्र में विद्यमान हो करके बहत्तर मण्डलों का भ्रमण किया करते थे।

हनुमान जी की मृत्यु नहीं होती थी। हनुमान जी के शरीर की आभा इतनी विचित्र बनी रहती थी।महाराजा गणेश जी ने एक चुंगेत नाम के यन्त्र का निर्माण किया था, और चुंगेत नाम का जो यन्त्र था उसमें वह विद्यमान हो करके इस पृथ्वी की परिक्रमा करता हुआ, मंगल की परिक्रमा करता हुआ, सूर्य की किरणों के साथ सूर्य में प्रवेश कर जाता था।

तो हमारे यहाँ, हमारी वैदिक सम्पदा में, वैदिक विज्ञानशाला में नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण होता रहा है, और उसमें ज्ञान और विज्ञान प्रायः आत प्रोत रहता है। 29.09.1981

351 महाराजा हनुमान

हमारे यहाँ महाराजा हनुमान हुए। महाराजा हनुमान ने एक पोथी का निर्माण किया था। वे सूर्य-विद्या पर बहुत अनुसन्धान करते थे। सूर्य विद्या पर अनुसन्धान करने वाला कोई कोई वैज्ञानिक होता है, जो गम्भीरता से अध्ययन करता है। महाराजा हनुमान एक समय अपनी एकांत स्थली में विद्यमान हुए और अनुसन्धान करने लगे। अनुसन्धान जब सूर्य की किरणों पर करने लगे, तो वैज्ञानिक वह सफल होता है जो अपनी किरणों को, जिस विज्ञान में जाना चाहता है उस विज्ञान की सम्पूर्णता को तो वह गम्भीरता से ही जानता है। परन्तु जितना वह जानता है उसका, उसके जीवन पर अनुभूति होनी चाहिए। अनुभूति हो करके वे किरणों के द्वारा अपने जीवन को तपाते, धातु को तपाते, उससे यंत्रों का निर्माण करते। उन यन्त्रों में विद्यमान हो करके अन्तरिक्ष की यात्रा करते थे। ऐसा भी एक यन्त्र बन सकता है, किसी धातु से, वह गति करने वाला न हो, वह सूर्य की किरणों के साथ और सूर्य की किरणें उस यन्त्र को अपने में ले जा सकती हैं। परन्तु किरणों के साथ में भी यन्त्र गति कर सकता है।

परन्तु यह ज्ञान, यह विज्ञान तुम्हें कहाँ प्राप्त होगा यह विज्ञान वैदिक साहित्य में तुम्हें प्राप्त होगा, जब वेद का अध्ययन करोगे। वेद कहता है सूर्य देव है, वह देता रहता है। नाना प्रकार की तरंगें देता रहता है और कैसी तरंगें देता है? मानव के जीवन में तपोवन बनाता है।

महाराजा हनुमान और देवर्षि नारद की जब मैं तुलना करने लगता हूँ विज्ञान में दोनों समकालीन कहलाते थे। 18.02.1980

352 वैज्ञानिक गरूड़ व सम्पाति

तो मुनिवरों! देखो, मुझे ऐसा स्मरण है, महाराजा सम्पाति और गरूड़ दोनों एक ही मां के पुत्र थे। परन्तु दोनों विज्ञान में रत्त रहते थे, वैज्ञानिक थे। मानो समुद्रों के तटों के आश्रित रहने वाले मानो उनका एक सूक्ष्म राज्य था। उस राज्य में वह अप्रात रहते थे। परन्तु एक समय महाराजा सम्पाति और गरूड़ दोनां अपने यान में विद्यमान हो करके सूर्य की यात्रा के लिए चले, परन्तु जब वह सूर्य की यात्रा के लिए चले, तो दोनों मानो देखो, किसी कारण से, यन्त्र में किसी प्रकार की मानो देखो, रूग्णता आ गई, रूग्णता आ जाने के पश्चात महाराज सम्पाति तो अपने राष्ट्र में, उस यान के माध्यम से वहां आ गये, परन्तु महाराजा गरूड़ को मानो देखो, यत्र ने कहीं दूरी या अन्तरिक्ष में शक्ति जाग्रों में परिणत कर दिया। परन्तु देखो, वह कही विंध्याचल आश्वानी मानो देखो, एक राष्ट्र था, उसमें प्रवेश कर गये, मानो देखो, वह दण्डक वनों में अपने जीवन को व्यतीत करने लगे, उन्होंने विचारा कि हमारा राष्ट्र और हम दोनों मानो मेरे विधाता सम्पाति समाप्त हो गएं होंगे। जब इस प्रकार का विचार बना तो वह गरूड़ अप्रणा स्वस्ति वह गरूड़ वहीं सूक्ष्म-सा मानो क्रियाकलाप करते रहते थे, और अपने उदर की पूर्ति करते थे।

राष्ट्र की प्रतिभा मानो देखो, महाराजा सम्पाति ने अपने में अपनाने की प्रवृत्ति की और देखो, राष्ट्र का पालन करते रहे, परन्तु देखो, पुनः राजा रावण ने वह सभा की और राजा रावण की सभा में यह निर्णय हो गया कि सम्पाति को विजय किया जाए। सम्पाति को मानो देखो, रावण ने यह कहा कि एक दूत को ऐसा निश्चित किया जाए, जो सम्पाति को यह निश्चित संदेश दें, कि देखो, रावण तुमसे संग्राम करने आ रहा है। तो मानो देखो, जब उनका यह संदेश, एक सम्भवत नाम का एक मानो देखो, सेना खन्धनी मानो देखो, वह सम्पाति के द्वार पर पहुंचा, महाराजा सम्पाति से उन्होंने सब वार्त्ता मानो देखो, वर्णित की, वर्णन करने के पश्चात मानो देखो, वह अपने में पूर्ण होने के पश्चात, वह तो चला गया। 04.01.1983

353 सम्पाति का राष्ट्र चिन्तन

परन्तु सम्पाति ने यह विचारा, रात्रि छा गई, काल रात्रि की गोद में जाने के पश्चात यह चिन्तन करने लगा कि यह क्या हुआ, मेरा विधाता तो मानो अन्तरिक्ष से वह तो मृत्यु को प्राप्त हो गया है और मैं यहां आ गया हूँ, मैं पालन कर रहा हूँ, प्रजा में किसी प्रकार की सूक्ष्मता नहीं है परन्तु मैं इस योग्य नहीं हूँ जो मैं राजा रावण की सेना में संग्राम कर सकूं, परन्तु देखो, महाराजा सम्पाति ने देखो, रात्रि समय में जब यह चिन्तन किया, उनकी पत्नी उनके समीप आई। पत्नी ने कहा-हे देव! आप कैसे चिन्तित हो रहे हैं, मैं नहीं जानती, लेकिन आपका जो चिन्तन है यह मानो रजोगुण, तमोगुण से सना हुआ, चिन्तन मुझे प्रतीत होता है। मेरे प्यारे महाराजा सम्पाति की पत्नी का नामोकरण मानो देखो, स्वस्तित कहलाता था, वह स्वस्तित होने के पश्चात उसका नाम श्रुति था। मानो श्रुति ने सम्पाति को कहा। सम्पाति को जब श्रुति ने यह कहा कि प्रभु! आपका चिन्तन बड़ा दूषित है। तो उन्होंने कहा-हे श्रुति! मैं आज बड़ा दुखित हो रहा हूँ, उसके मूल में यह है कि कल राजा, कुछ ही समय के पश्चात राजा रावण की सेना आ रही है, अब हमें क्या करना चाहिए? उन्होंने कहा-देव! हम इस योग्य नहीं है। यदि मैं अपने पिता से मानो त्रेतकेतु राजा, एक सूक्ष्म-सा राज्य था, वह उनके पिता थे। उन्होंने कहा कि यदि मैं अपने पिता से भी कहूँ, तो उसके पश्चात भी हम योग्य नहीं है उनका तो वह एक कृत्त है।

तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा-तो देवी! क्या करना चाहिए? उन्होंने अपने सेनापति स्वाति स्वान्धानकेतु को निमंत्रित किया और स्वान्धानकेतु से कहा कि महाराज! हम क्या करें, कि राजा रावण का यह मानो सन्देश आया है। उन्होंने कहा कि महाराज! हम कुछ कर नहीं पा सकते, आज्ञा दो, संग्राम करेंगे, राष्ट्र को हम मानो देखो, मृत्यु समय तक राष्ट्र की रक्षा करेंगे। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा कि नहीं, ऐसा नहीं। मेरे पुत्रों! मुझे ऐसा स्मरण है कि मानो देखो, सम्पाति ने अपने उस राष्ट्र को मेरे पुत्रों! देखो, प्रातःकाल होते ही यह निश्चय कर लिया कि राष्ट्र को हमें रावण को प्रदान कर देना चाहिए।

मेरे प्यारे! देखो, वह राष्ट्र कुछ समय के पश्चात मानो देखो, उस राष्ट्र को सम्पाति ने रावण को प्रदान कर दिया और रावण के एक सेनापति थे जिनका नाम खरदूषण था, वह खरदूषण वहां का अधिराज बनाया। परन्तु खरदूषण की एक भौजई थी, जिसका नामोकरण मानो देखो, सुरसा कहलाया जाता था, वह सुरसा वहां की मानो देखो, अधिराज बना दी और वह सेनापति के रूप में ही परिणत रही।

मेरे पुत्रों! ऐसा मुझे स्मरण है कि महाराजा! सम्पाति और उसकी पत्नी श्रुति मेरे पुत्रों! देखो, भ्रमण करते हुए, वे महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में पहुंचे और भारद्वाज मुनि महाराज ने मानो देखो, उन दोनों को आसन दिया और वह विराजमान हो गये। परन्तु महाराजा सम्पाति से, महर्षि भारद्वाज ने कहा-तुम ऐसे श्रुति अस्तो को, उन्होंने कहा कि प्रभु! हमारा राष्ट्र सम्ब्रह्वे उन्होंने कहा कि यह श्रवण तो मैंने भी किया है और यह तो मानो पृथ्वी पर एक मानो देखो, एक चर्चा का विषय बना हुआ है, परन्तु तुम यहां कुछ समय तक अपने जीवन को, उन्होंने वहां व्यतीत किया, कुछ विज्ञान में वह सहायक बनें। परन्तु उनके यहां देखो, गरूड़ भी उन्हें प्राप्त हो गया था। गरूड़ विधाता की भी उन्हें प्रतीति हो गई, क्योंकि भारद्वाज मुनि के यहां मानो देखो, वह भी एक विज्ञान का कुछ अनुसंधान करने लगे। 04.01.1983

354 महाराजा रावण का व्यापक राष्ट्र

तो मेरे पुत्रो! विचार-विनियम क्या है, महाराजा सम्पाति का राष्ट्र मानो देखो, रावण को प्राप्त हो गया। रावण उसका धिराज बन गया परिणाम यह हुआ कि राजा रावण का इतना व्यापक राष्ट्र बन गया कि उनके राष्ट्र में, न तो सूर्य उदय होता था और न अस्त होता था। तो मुनिवरों! देखो, ये गाथाएं मैं तुम्हें प्रगट कर रहा हूँ यह इतिहास, साहित्य है। परन्तु देखो, यह अप्रणा कृत्तियो भागवहे अस्वत कहलाता है परन्तु देखो, राजा रावण का जितना भी जीवन चरित्र है उस चरित्र की धाराएं मुझे भली भांति स्मरण है। परन्तु देखो, मैं उसमें उस गाथा को आध्यात्मिकवाद और यह बहुत प्रिय लगता है इन आभा के अन्दर, मेरे प्यारे! देखो, आज का हमारा विचार यह क्या कह रहा है मानो देखो, राजा रावण ने जब सम्पाति के राष्ट्र को अपना लिया, उसके पश्चात उन्होंने एक सभा की और सभा करने के पश्चात मानो देखो, उस सभा में दोनों प्रकार का मानो देखो, विचार प्रकट किया गया। राजा रावण के समीप दोनों विचार आने लगे, उन्होंने कहा, प्रजा से भी विचार आने लगे उन्होंने कहा प्रजा में, हे रावण! यह मानो देखो, यह भी कोई प्रतिभा नहीं है मानों प्रतिभा उसी राजा की सुन्दर होती है जिसकी किसी के ऊपर आक्रमण करने की प्रवृत्ति नहीं रहती, वह हिंसा की जो प्रवृत्ति राजा के हृदय में परिणत हो जाती है, उसके चरित्र की आभा को नष्ट कर देती है। 04.01.1983

355 अभिमान का राष्ट्र

मेरे प्यारे! देखो, जब यह वाक् उन्होंने श्रवण किया तो राजा रावण को क्योंकि देखो, वह जो स्वर्ण की आभा से मानो ज्ञान के ऊपर जो स्वर्ण का आवरण आ गया है वह आवरण मानो रावण के हृदय से दूरी नहीं हुआ। न होने के पश्चात मुनिवरों! देखो, वह चिन्तन देखो, जहां सुन्दर-सुन्दर चिन्तन राष्ट्र के प्रति महान चिन्तन होते थे, वहां मानो देखो, सुरा और सुन्दरी के चिन्तन में देखो, राजा रावण लग गया। क्योंकि जब राजा ऐसे लग जाते हैं तो जो उनके सहयोगी है, वह भी इसी में लग जाते है। क्योंकि राजाओं की प्रतिभा ही मानव की एक आभा कहलाती है, जिसके ऊपर मानो देखो, महारानी मन्दोदरी अपने में बहुत दुखित रहती थी और यह विचारती रहती थी कि हे प्रभु! आप ने यह क्या किया, मानो देखो, मेरा जो राष्ट्र है मानो हमने अश्वमेध याग क्या किया है, मानो देखो, इससे तो हम मानो बिना याग के प्रियता में रहते थे। परन्तु यह अभिमान का राष्ट्र बन गया है। पति के हृदय में सुरा और सुन्दरी की प्रतिभा आ गई है, यह कोई प्रियता नहीं है, परन्तु देखो, प्रार्थना करती रहती, राष्ट्र में बहुत से प्राणी इस प्रकार की प्रार्थना ही करते रहते, परन्तु देखो, उनके विधाता विभीषण भी प्रभु का चिन्तन में यही वार्त्ता कहते रहते। परन्तु देखो, उस समय जब यह अस्वात बन गया, तो मानो देखो, यह राष्ट्र के लिए श्राप बन गया, प्रजा में मानो इस प्रकार की प्रवृत्ति जब राजा में आ गई तो प्रजा में भी उसी प्रकार की प्रवृत्ति की उदबुद्धता हो जाती है। 04.01.1983

356 अभिमान का कारण

तो परिणाम यह मेरे पुत्रों! मानो देखो, सम्पाति का राष्ट्र उन्हें प्राप्त होते ही ओर अभिमान की मात्रा मानो जागरूक हो गयी, अभिमान जागरूक हो गया, क्यों जागरूक हुआ अभिमान? इसके मूल को नहीं जाना किसी ने, परन्तु कुछ ऐसा ऋषि मुनियों का, ऐसा कुछ अनुभव रहा है क्योंकि देखो, उनका हृदय इस प्रकार का नहीं था जो राष्ट्र की प्रतिभा को अपने में, वह धारण कर लेते। परन्तु देखो, वह दोषारोपण मानो उनके हृदय में प्रायः आना ही था, क्यों आना था? क्योंकि राष्ट्र का उसे अधिकार नहीं था, अधिकार क्योंकि देखो, जब ममत्वां ब्रह्म देवाः ब्रह्मे कृतो राजा वही होता है जो समाज को जीवन दे देता है, राजा वही होता है जो समाज को चरित्र और देखो, माता की रक्षा करने वाला बनता है। मानो राजा वही होता है जो सुरा और सुन्दरी दोनों को मानो देखो, राष्ट्र से दूरी कर देता है। मानो देखो, वही राजा पवित्र होता है। जिसमें जन्य संस्कार होते है। वह मानो देखो, एक राष्ट्र में विशेष कर प्रतिभा में, उसकी आभा में परिणत रहते है। 04.01.1983

357 राजा रावण के वैज्ञानिकों में दोष

राजा रावण के यहाँ इतना विज्ञान आ गया और वैज्ञानिकों में दूषितपना आ गया। वैज्ञानिक स्वर्ण में सुगन्धि लाने में लगे हुए थे। कुम्भकर्ण जैसा वैज्ञानिक और भी नाना वैज्ञानिक इस आभा में परिणत हो रहे थे, वे निद्रा को भी नहीं लेते थे और वे एकान्तस्थली में, हिमालय की कन्दराओं में विद्यमान हो करके परमाणुवाद के ऊपर अनुसन्धान करते थे। परमाणुवाद चलता रहता था।

एक समय कुछ वैज्ञानिक राजा रावण के समीप पहुंचे और राजा रावण के समीप जाकर के उन्होंने यह कहा-हे रावण! उनमें से कुम्भकरण कहता है जो उनका विधाता था कि तुम यह जानते हो कि मैं वैज्ञानिक हूँ। भारद्वाज मुनि महाराज के चरणों में विद्यमान हो करके मैंने विद्या का अध्ययन किया है। परन्तु आज जो मुझे अनुभूति प्राप्त हो रही है वह ऐसी है कि तुम्हारे राष्ट्र के जो वैज्ञानिक हैं, इनमें कुछ अन्न का दोष आ गया है। तुम्हारे राष्ट्र के जो वैज्ञानिक हैं इनके आहार में सूक्ष्मता आ गई है। इसको ऊँचा बनाया जाए। परन्तु इस काल का वैज्ञानिक भी यदि इस वाक्य को उच्चारण करता है तो राष्ट्र कहता है कि उसको पद से दूर कर दो। यह राष्ट्र के अहित की वार्त्ता प्रकट कर रहा है। वह पद से दूर कर दिया जाता है। राजा रावण के यहाँ विधाता कुम्भकरण यह कह रहा है परन्तु कुम्भकरण जी की वार्त्ता को शिरोधार्य

करके उन्होंने इस वाक्य को स्वीकार किया। तो वैज्ञानिक वह होता है, जो यथार्थ और परमाणुवाद की वार्त्ता प्रकट करता है। 22.02.1980

358 महाराजा गरुड़

गरुड़ नाम विज्ञान को तो कहा ही जाता है। गरुड़ की सूर्य लोक में क्या, ध्रुव मण्डल में, इन सर्वत्र लोकों में इनकी उड़ान रही है। परन्तु वह उड़ान कितनी विचित्र रहती है यह विचारना है। उन्होंने सब से प्रथम उस उड़ान के ऊपर विचार विनिमय किया था, कि हम किस प्रकार अपनी उड़ान उड़ सकते हैं, जिससे हम लोक लोकान्तरों को जानते रहें। ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में, उनके हृदय में ऐसी विशाल उड़ान प्रविष्ट रहती थी। चन्द्र क्या, मंगल क्या बुध क्या, शुक्र क्या, शनि क्या, नाना लोक लोकान्तरों में हमारे महान आचार्यों का गमन रहा है। यंत्रों के द्वारा भी उन का प्रायः गमन होता रहता था। महाराजा रावण के पुत्र नारान्तक ने चन्द्रमा, मंगल आदि ग्रहों की अनेक यात्राए की थी राजा रावण के राज्य में इतना विशाल विज्ञान था कि उसकी प्रतिभा का मेरे लिए वर्णन करना असम्भव हो जाता है। 03.08.1971।

आज का संसार तो चन्द्रमा की यात्रा करने के लिए तत्पर हो रहा है। मैं यह कहा करता हूँ कि मानव को यात्री बनना चाहिए। यात्री ही नहीं वहाँ विचार विनिमय भी करना चाहिए। अपने वैदिक विचार भी, विचार विनिमय भी किए जाने चाहिए, जिससे यह प्रतीत हो जाए, कि लोक लोकांतरों में किस प्रकार का धर्म है, अथवा नहीं, किस रूप में रहता है। यह उसी काल में हमें प्रतीत होगा, जब कि हमारे हृदय स्थल के विवेकी उद्गार, वैदिक उद्गार वहाँ वायुमण्डल में त्याग करके चले आए। 03.08.1971

359 महाराजा गरुड़

वह जो प्रकृति है, वह कितनी महान और सुन्दर मानी गई है। परन्तु इस विज्ञान का लाभ क्या है? इस विज्ञान का लाभ क्या है? इस विज्ञान का लाभ यह कि मानव के मस्तिष्क की उसके हृदय की उड़ान है। कहाँ तक उसके मस्तिष्क की उड़ान है? प्राचीन काल में महाराजा विष्णु के राज्य में गरुड़ नाम के श्रेष्ट वैज्ञानिक बृहस्पति तथा ध्रुवलोक तक यात्रा करते थे।

विष्णु राष्ट्र में जो महाराजा गरुड थे, नाना लोक लोकान्तरों तक उनकी उड़ान रही, बृहस्पति और ध्रुव तक उनकी उड़ान रही। हमारे ध्रुव नाम के आचार्य हुए हैं। उत्तानपाद के पुत्रों का जीवन सदा विज्ञान में परिणित रहा है।

उनका विज्ञान, जब वे भारद्वाज और ऋषि महाराज द्वारा पहुंचे, महर्षि रेमुणी और महर्षि सोमभानु ऋषि के द्वारा पहुंचा। उन्होंने उनके द्वारा शिक्षा को अध्ययन किया। उनका विज्ञान इतनी महान उड़ान में परिणित रहा, कि ध्रुव मण्डल तक उनकी उड़ान रही। वैज्ञानिक उन्नति करने पर, मानव को, चन्द्रमा पर सब कुछ प्राप्त होगा, मानव स्वार्थी बनकर अधर्म को धर्म मान बैठा है। मानव का जो मस्तिष्क है वह कितना विकसित हो सकता है, विचारना तो हमें यह है।

इस मस्तिष्क का निर्माण प्रभु ने किया है। मानव निर्माणवेत्ता ने वह अंकुर विराजमान कर दिए। इन अंकुरों को जान करके उस मानव का मस्तिष्क विकसित होता हुआ लोक लोकान्तरों की यात्रा करने के लिए तत्पर हो जाता है। इसी प्रकार का विज्ञान हमारे यहाँ परम्पराओं से मानव का जन्म सिद्ध अधिकार रहा है। कि आज का विज्ञान ओर भी गतिशील बनेगा, गतिशील बनता चला जाएगा, चन्द्रमा पर इन्हें जाकर के सब कुछ प्राप्त होगा। जब आगे यह रमण करेंगे, तो वहाँ का प्राणी मात्र इनको दृष्टिपात आए या न आए, चन्द्रमा पर जाना, मंगल में जाना, बृहस्पति में जाना और भी इत्यादि जिस प्रकार शुक्र में जाते हैं तो शुक्र में भी हमें पार्थिव प्राणी ही प्राप्त होते हैं और मंगल में भी। और भी नाना लोक हैं। परन्तु आज इन लोकों की गणना कराना हमारे लिए शोभनीय नहीं। उच्चारण करना केवल यह है कि मानवीय विज्ञान परम्परा से ऊँचा बनता रहा है। परन्तु जब भौतिकवाद में अध्यात्मिकवाद की पुट नहीं होती, धर्म की मर्यादा नहीं होती, अध्यात्मिक विज्ञान नहीं होता तो उस विज्ञान को कोई निगलने वाला नहीं होता। क्योकि भौतिक विज्ञान आध्यात्मिक विज्ञान का भोजन होता है। आध्यात्मिकवाद का भोजन क्या है? भौतिक विज्ञान। और भौतिकविज्ञान आध्यात्मिक वाद का भोजन है। इसीलिए हमारे ऋषि मुनियों ने यज्ञों को बहुत ही प्रधानता दी है और यह कहा है कि मानव को यज्ञ करना चाहिए। और क्योंकि यज्ञ द्वारा आध्यात्मिकवाद से उसका मिलान होता है, इसीलिए भौतिक विज्ञान, उस आध्यात्मिकवाद का भोजन बन करके इस प्रवाह को शान्त किया जाता है। 04.08.1971

360 गरुड़ का अभिप्राय

जिस राजा के राष्ट्र में विज्ञान पराकाष्ठा पर हो, जहाँ वैज्ञानिक पुरुष हों। वैज्ञानिक पुरुष अनुसन्धान करने वाले हों। गरुड़ इत्यादि का प्रायः वर्णन वैज्ञानिकों का आता रहता है। क्योंकि गरुड़ नाम का पक्षी तो प्रायः होता है।

परन्तु गरुड़ यहाँ वैदिक परम्परा में मन को कहा जाता है। गरुड़ अनुसन्धान और वैज्ञानिकों को कहा जाता है। जो विष्णु उस विज्ञान पर विराजमान हो करके जो लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ने वाले हों। क्योंकि हमारे यहाँ वैदिक ऋषियों ने कहा है यज्ञमान के लिए ब्राह्मण घोषणा करता है। यह कहता है यज्ञमान यज्ञवेदी पर विराजमान हो करके, तेरी गति पृथ्वी मण्डल से और मंगल मण्डल से हो करके, बृहस्पति लोकों तक होनी चाहिए, सूर्य मण्डल तक होनी चाहिए। ऐसा हमारे यहाँ प्रायः वैदिक साहित्य में प्राप्त होता रहता है। 04.05.1976

361 गरुड़

परन्तु वैदिक परम्परा में गरुड़, मन को कहा जाता है। गरुड़ अनुसन्धान करने वाले वैज्ञानिकों को कहा जाता है। उस विज्ञान पर विराजमान हो करके, जो लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ने वालें हो, उन्हें विष्णु कहा जाता है। हमारे यहाँ वैदिक ऋषियों ने कहा कि यज्ञमान के लिए ब्राह्मण घोषणा करता है। यह कहता है, यज्ञमान यजवेदी पर विराजमान हो करके, तेरी गति पृथ्वी मण्डल से और मंगल मण्डल से हो करके, बृहस्पति लोकों तक होनी चाहिए, सूर्य मण्डल तक होनी चाहिए। 25.02.1972।

362 वैज्ञानिक महर्षि नारद

यह विज्ञान हमारे यहाँ परम्परागतों से ही माना गया है। परमवैज्ञानिक, महर्षि नारद से विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करके, वैज्ञानिक यानों द्वारा ध्रुव लोक तक की यात्रा करते थे।

हमारे यहाँ एक राजा उत्तानपाद हुए। आज से लाखों वर्षो पूर्व, अनन्य लाख वर्ष हो गए हैं, उस काल में महाराजा उत्तानपाद हुए। उनके पुत्र का नाम ध्रुव था। जब केवल पांच वर्ष का पुत्र था, उस समय जब माता के आँगन में रमण करता था। क्योंकि उत्तानपाद की दो पत्नियाँ थी। वह ध्रुव जो ब्रह्मचारी था, माता उसे अपनी लोरियों का पान कराती रहती। और कुछ निर्माण की वार्त्ताएं प्रकट करती रहती थी। ब्रह्मचारी जब सात वर्ष का था, विडम्बना से युक्त था, तो उस समय नारद मुनि आ पहुंचे। नारद मुनि के समीप उन्होंने कहा प्रभु! मैं बड़ा दुखित हूँ। तो देवर्षि नारद मुनि अपनी विज्ञानशाला में गए। नारद मुनि उस समय हिमालय की कन्दराओं में अनुसन्धान कर रहे थे, ध्रुव ब्रह्मचारी का मस्तिष्क बड़ा तीव्र था। नारद मुनि ने यह जान लिया। यह तो ब्रह्मचारी बड़ा सुयोग्य है। उस समय उन्होंने यन्त्र बनाने प्रारम्भ कर दिए। उनके यहाँ धातु से नाना प्रकार के निर्माण होते रहते थे। कुछ ब्रह्मचारी भी शिक्षा ग्रहण करते रहते थे। परन्तु नारद जी के यहाँ ध्रुव ने ब्रह्मचारी भी शिक्षा ग्रहण करते रहते थे। उनके यहाँ ध्रुव यान का निर्माण किया गया था

तो ब्रह्मचारी ध्रुव ने, अपने ब्रह्मचर्य की ऊर्ध्वागति बना करके और भौतिक परमाणुओं का विज्ञान करते हुए, उन्होंने ध्रुवयान का निर्माण किया। उसमें महात्मा ध्रुव विराजमान हो करके ध्रुव मण्डल की यात्रा करते थे। हमारे प्राचीन वैज्ञानिक आचार्यो ने महर्षियों ने, लोक लोकांतरों की यात्राएं की थी। ध्रुव मण्डल कितना विशाल है। ध्रुव मण्डल जिसमें असंख्य सूर्य समाहित हो जाते हों, ऐसा जो ध्रुव मण्डल है, उस ध्रुव मण्डल को जानने का प्रयास, महात्मा ध्रुव ने किया। तो विज्ञान की जो आभाएं हैं, वे मानव के जीवन में परम्परागतों से आती रहती हैं। क्योंकि उन महात्मा ध्रुव की जो विवेचनाएं हैं हमारे यहाँ साहित्यकारों ने उसका बड़ा सुन्दर विवेचन किया। परन्तु विचार क्या? महात्मा ध्रुव कितने वैज्ञानिक थे। मैं उसके विज्ञान की सीमा को माप नहीं पा रहा हूँ। न मापना चाहता हूँ। विचार कवेल यह है कि हमारे यहाँ विज्ञान में पहुंचना कोई आश्चर्य नहीं माना जाना चाहिए। 22.02.1972।

363 नारद मुनि की विज्ञानशाला

आज का विज्ञान तो केवल प्रारम्भिक शिक्षा है। सूर्य को किरणों से जो यान चलने वाला था वह नारद मुनि की विज्ञानशाला में था। नारद मुनि महाराज सूर्य की किरणों के साथ वह अपने यान को ले जाते थे और सूर्य की किरणों के साथ, वह सूर्य मण्डल की यात्रा करके प्रातःकाल वह सूर्य की किरणों के साथ, पृथ्वी मण्डल पर आते थे। परन्तु जब इस प्रकार का विज्ञान, यहाँ रहा है, तो मैं कैसे उच्चारण करूं, कि यह विज्ञान भी कोई विज्ञान है। मैं यह नहीं कहता हूँ कि विज्ञान नहीं है, विज्ञान है। परन्तु वह विज्ञान कितना महान था जिस विज्ञान में विज्ञान हो, पाण्डित्य हो, दर्शन हो और यौगिकता हो, वह विज्ञानों से ऊँचा बनेगा। उस विज्ञान में बिडम्बना नहीं रहेगी। उस विज्ञान में महत्ता रहेगी। 24.02.1977

364 देवर्षि नारद

देव ऋषि नारद मुनि महाराज का नामकरण इस संसार में कौन नहीं जानता। उत्तानपाद का पुत्र ध्रुव उनकी विज्ञानशाला में यानों का निर्माण करता रहता था। वह अपने यान में विद्यमान हो करके ध्रुव की यात्रा करता था। जबकि आज का वैज्ञानिक चन्द्रमा और मंगल की यात्रा कर पाया है। सहस्रों चन्द्रमा ध्रुव की परिक्रमा करते हैं। इतना बड़ा ध्रुव मण्डल है। उसमें महात्मा ध्रुव अपने यान से यातायात किया करता था। 05.12.1986

365 चरण पादुका यन्त्र से लोक यात्रा

नारद मुनि महाराज के द्वारा एक चरण खड़ाऊ थी, वह पादुका कहलाती थी। चरण पादुका एक यन्त्र कहलाता था। चरण पादुका में ओत प्रोत हो करके वह यहाँ से चन्द्रमा में जा रहे हैं। चन्द्रमा से उड़ान उड़ी तो मंगल में गति कर रहे हैं। मंगल से उड़ान उड़ी तो बुध में जा रहे हैं, बुध से उड़ान उड़ी तो शनि मण्डल में जा रहे हैं। शनि मण्डल इतना विशाल मण्डल माना जाता है, कि जैसा हमारा पृथ्वी मण्डल है, एक शनि में ऐसे ऐसे पांच सूर्य प्रकाश देते हैं। एक समय देवर्षि नारद मुनि अपने यान के द्वारा जेठाय नक्षत्र में पहुंच गए। जेठाय नक्षत्र

कितना विशाल है? जैसा हमारा यह पृथ्वी मण्डल है, ऐसे तीस लाख पृथ्वियां सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती हैं और जैसा सूर्य मण्डल है ऐसे एक सहस्र सूर्य बृहस्पति में समाहित हो जाते हैं और एक सहस्र बृहस्पति आरुणि मण्डल में समाहित हो जाते हें और एक सहस्र आरुणि ध्रुव मण्डल में समाहित हो जाते हैं, और एक सहस्र ध्रुव मण्डल जेठाय नक्षत्र में समाहित हो जाते हैं। इतना विशाल प्रभु का जगत है। 05.12.1986

366 महात्मा ध्रुव और नारद मुनि दोनों ने एक यन्त्र का निर्माण

महात्मा ध्रुव और नारद मुनि दोनों ने एक यन्त्र का निर्माण किया था, जिस यन्त्र में दूसरे मण्डलों की, जैसे शनि मण्डल हैं उसकी प्रायः छाया आती रहती थी और इस छाया के आने के पश्चात छाया का परिणाम यह हुआ था कि उनके यन्त्र में जब छाया की कृतिका आयी, उन्होंने ये विचारा कि सूर्य किसी की छाया बन करके इसीलिए नहीं रहता, क्योंकि वह अग्नि का प्रतिनिधि है। वह द्यु-लोक से तरंगें लेता रहता है, तरंगित होता रहता है, और जो मण्डल हैं उनमें पार्थिवता है, किसी में जलवत है, किसी में अग्नेयवत है। परन्तु सूर्य एक ऐसा मण्डल है जो प्रकाश देता रहता है, वह तपाता रहता है। नाना पृथ्वियों को प्रकाश देता है, नाना चन्द्रमाओं को प्रकाश देता है और नाना कृतियों को प्रकाश देता है। इसी प्रकार ओर भी हैं क्योंकि सूर्य एक नहीं असंख्य हैं। जब असंख्य सूर्य हैं परन्तु सूर्य शब्द जो है यह एक वचन नहीं कहा जाता, यह बहु-वचन में प्रयोग आता रहता है। नाना सूर्य कहलाए जाते हैं, उन सूर्यों के आ जाने के पश्चात गणना करोगे तो तुम्हें दृष्टिपात आएगा। 18.02.1980

देवर्षि नारद मुनि महाराज ने एक यन्त्र का निर्माण किया था। जैसे सूर्य और पृथ्वी के मध्य में चन्द्रमा की छाया आ जाती है अथवा चन्द्रमा और सूर्य के मध्य में छाया आ जाती है। परन्तु यह तो प्रायः लोक-लोकान्तरों में होता रहता है। यह कोई नवीन वाक्य नहीं होता, यह कोई नवीनता नहीं है। 18.02.1980

367 वैज्ञानिक देवर्षि नारद

एक समय सतोयुग के काल में देवर्षि नारद जी ने, क्योंकि वे हमारे यहाँ विज्ञान में बड़े पारायण रहे हैं, उनके यहाँ ऐसे यन्त्र थे, ऐसी पादुका उन्होंने निर्मित की थीं, कि जिस भी लोक में जाना होता था आपकी पादुका में, अपने यन्त्र में विद्यमान हुए और वे किसी भी लोक में अपना यातायात बनाना उनका बहुत ही स्वाभाविक गुण था। वे विज्ञान में पारायण थे। क्योंकि ऐसे परमाणुओं को एकत्रित कर सकता है प्राणी, तो उन्होंने यंत्रों का निर्माण किया। 18.02.1980।

368 ध्रुव की लोक यात्रा की इच्छा

ध्रुव प्रश्न करते थे और देवर्षि नारद उनका उत्तर देते थे। एक समय महात्मा ध्रुव भयंकर बन में तपस्या करते चले गए। वह तपस्या क्या थी? वे यह जानना चाहते थे कि मैं अपनी इन्द्रियों पर संयम करता हुआ, मैं अपने को मौन बना करके, मैं नाना लोकों का यात्री बनना चाहता हूँ। यात्री बनने के लिए वह मौन हो करके तपस्या करने चले गए।

जब वह तप करने लगे, तो वह अन्न इत्यादि का पान करते, वे स्वयं तप करते थे। वे जप तप करते थे, तो तप करते-करते उन्हें बारह वर्ष हो गए। अपनी बारह वर्ष की तपस्या के पश्चात्वे नारद मुनि के चरणों में ओत-प्रोत हुए।

नारद मुनि ने कहा, कहो बाल्य! तुम्हारा तप पूर्ण हुआ? उन्होंने कहा कि महाराज! मुझे बारह वर्ष हो गए और बारह वर्ष की अनुभूति में मुझे कुछ ऐसा प्रतीत हुआ है कि यह कि यह जो परमाणुवाद है, अणुवाद है, इससे आगे भी कोई न कोई वाद अवश्य है। उस वाद के लिए मैं इन्द्रियों पर संयम करता रहा और इन्द्रियों के विषयों पर अनुसन्धान करता रहा। परन्तु अनुसन्धान में एक ही वाक्य विचार में आया है कि हम अपने को लोकों में ले जाना चाहते हैं। परन्तु लोक-लोकान्तरों का हमें यह प्रतीत नहीं होता कि हम अपनी उड़ान में कितनी सफलता को प्राप्त हो सकते हैं? यह हम आप से जानना चाहते हैं?

देवर्षि नारद बोले, हे बाल्य! तुमने अब तक तप में कुछ नहीं जाना! उन्होंने कहा, तप में तो वही वाक्य आते रहते हैं, जिन तपों में ही हमें जाना है।

मैं यह जानना चाहता हूँ भगवन्! कि सूर्य की जो नाना प्रकार की किरणें हैं, एक वेदमन्त्र ऐसा आया है, कि हे प्रभु! यह वेदमन्त्र यह कहता है कि सूर्य के आँगन में आ करके यह चन्द्रमा की छाया आ जाती है और कहीं पृथ्वी की छाया आ जाती है और कहीं उनकी भी छाया आ जाती है, चन्द्रमा बिना छाया के रहता है। क्या यह वेदमन्त्र यथार्थ है।

नारद मुनि ने अपने विचारों का विश्लेषण किया और उन्होंने कहा, हे बालक! यह छाया का जो स्वरूप तुमने वर्णित किया है कि छाया एक दूसरे पर आती रहती हैं, तुम्हें यह प्रतीत है कि एक प्राणी दूसरे की छाया में कटिबद्ध रहता है। जैसे वृक्ष है, वृक्ष अपनी ही छाया में आच्छादित होता रहता है। इसी प्रकार प्राणी है, वह अपने ही शरीर की छाया में आच्छादित छायावान् हो रहा है। इसी प्रकार एक मानव

एक दूसरे के आँगन में आ करके स्वतः छायावान् हो रहा है।
परन्तु यह सूर्य अपने में छायावान नहीं है, यह कैसे? हम यही जानना चाहते हैं। जैसे चन्द्रमा है और राहू और केतू है इन सबकी छाया आती रहती है। सबका एक दूसरे से सम्बन्ध होता रहता है। इसी प्रकार सूर्य का भी होता रहता है। परन्तु सूर्य की छाया इसीलिए बनती रहती है, जो मण्डल एक दूसरे के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। जैसे सूर्य के प्रकाश से पृथ्वी प्रकाशित हो रही है, इसी प्रकार जैसे मानव के नेत्र वे सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित हो रहे हैं, जो संसार को, भौतिक जगत को दृष्टिपात कर रहे हैं।
इसी प्रकार चन्द्रमा छायावान् बना रहा है। वह अपने में अरुचा कहलाता है। परन्तु सूर्य को ऐसा क्यों कहा है? सूर्य इसीलिए कहा है कि यह जो सूर्य मण्डल है यह प्रकाशमय कहलाता है। इस पर विशेष नाना प्रकार की अग्नि की जो तरंगें हैं, वे इसे तरंगित करती रहती हैं और वे इसे तरंगित करके, अग्नि इसको अपना अधिपति बना करके यह मण्डलों को प्रकाशित बनाती रहती है। चाहे इससे पृथ्वियां प्रकाशित हो रही हों और चाहे इसी सूर्य से शनिमण्डल प्रकाशित किया जा रहा हो।
एक समय, मुझे स्मरण है, देवर्षि नारद ने एक यन्त्र का निर्माण किया था, और उस यन्त्र में वे दोनों यह दृष्टिपात करने लगे थे। हमारे यहाँ कुछ ऐसा आता है, वैदिक साहित्य को विचारने से ऐसा प्रतीत है कि यह जो शनिमण्डल है, इस शनिमण्डल को, एक ही शनिमण्डल को पांच सूर्य प्रकाशित करते हैं। जो पांच सूर्य एक ही मण्डल को प्रकाशित करते हैं, परन्तु वह कितना बड़ा मण्डल है? कितना विशाल है? परन्तु अपना उसे स्वतः प्रकाश न होने के कारण, वह स्वतः सूर्यों के प्रकाश से प्रकाशित हो रहा है। 18.02.1980।

369 महर्षि वैशम्पायन

रसना के रसों का स्वादन करता रहता है, यहाँ तक करता है कि रसना के अग्रणीय भाग को, वह जल के परमाणुओं को अपने में सिंचन करने लगता हैं, अन्त में यह उदगीत गाने के लिए तत्पर हो जाता है, कि जल में कौन सा धातु पिपाद है? यहाँ तक जाता है जब विशेष धातु को जान लेता हैं, तो जो भी रस वायु में गमन कर रहा है, उसको वह ग्रहण करता हैं, उन रसों में भी भिन्न भिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाएं बन जाती हैं, आगे अनुसन्धान करता हैं, रसों के द्वारा, वायुमण्डल में, सूर्य से स्पर्श करके आ रही, किरणों के साथ में, तो उसका स्वादन, यह रसना अनुभव, उसका उदगीत गाने लगती हैं, चन्द्रमा की कान्ति में हो करके, वायु आती हैं, और वह रसना को स्पर्श करती है, तो वहाँ का वह अनुभव करा देती हैं, तो पृथ्वी में स्पर्श करके आती है। 21.02.1988

370 राजा रावण के समीप शिव यन्त्र

तो वह शक्ति महाराजा शिव के पास थी, और जब यह राजा रावण को प्रतीत हुआ कि ऐसी शक्ति महाराजा शिव के द्वारा है, ऐसा यन्त्र है, तो उन्होंने यन्त्र के लिए महाराजा शिव से प्रार्थना की, वन्दना की। सखा होने के कारण, वह यन्त्र उन्होंने प्रदान कर दिया। जिसका नाभि से समन्वय होता है, जिसका हृदय से समन्वय होता है, यन्त्र ला करके उन्होंने अपने यहां, अपने गृह में, एक स्तम्भ के मध्य में, उस यन्त्र को स्थिर कर दिया।परन्तु यन्त्र की तरंगें मानव को तरंगित करती रहीं, जब तक तंरगें उसमें हैं, तब तक वह नाभि और हृदय केन्द्र को सत्ता प्रदान करता रहता है, उसका वध नही कर सकते।
तो इस प्रकार का विज्ञान मानवीय मस्तिष्कों में बड़ा तत्पर हो करके रहा है, और वह उसी में परिणत हो गए है, जब राजा रावण और भगवान राम का संग्राम हुआ था, किसी काल में, उसमें यह विशेषता रही, क्या रावण की नाभि से, उस यन्त्र का समन्वय रहता था, और वह राम से नष्ट नही हो रहे थे, जब कई समय हो गए, राजा रावण और राम दोनों के संग्राम को, जब बारह दिवस को हो गए थे, तो सभा एकत्रित की, राम आश्चर्य में है, तो राम ने सभा में यह कहा कि भई! यह तो बड़ा आश्चर्य जनक है, कि रावण का वध नही हो रहा है, उन्होंने कहा यह आज तुम्हें प्रतीत भी हो रहा होगा उनके शस्त्रों से वध कर दिया रावण अपने रसातल को चला गया।
तो विचार क्या है हमारे यहां विदुषी दिव्या ऐसी ऐसी माताएं हुई हैं, जो इतना त्याग कर सकती हैं, वह त्याग और तपस्या की महान मूर्ति कहलाती हैं,
तो इस प्रकार का विज्ञान शिव के राज में रहा है, शिव नाम राजा को कहते हैं, जो हिमालय का राजा है। और शिव नाम हमारे यहां परमपिता परमात्मा को भी कहते हैं, जो लिंगमयी ज्योति कहलाता है, वह ज्योति है, और ज्योति को प्रदान करने वाला, परमात्मा के पर्यायवाची शब्द हैं उनके गौणिक नामों का वर्णन आता रहा है। शिव नाम, जो कल्याणकारी भी है, और वही संहार करने वाला भी है। हमारे ऋषि मुनियों ने बड़ी ऊर्ध्वा में कल्पनाएं की हैं, कि मानव का जो जीवन है, वह त्रिवात कहलाता है, यह सतोगुण, रजोगुण ओर तमोगुण में रत रहने वाला है। सतोगुण में विष्णु है, और रजोगुण में शिव है, और तमोगुण में ब्रह्मा है। ये तीन भावों का जन्म मानवीयता में उत्पन्न होता रहा है, और विचारवेता इसके ऊपर अन्वेषण करते रहे हैं। 02.09.1990

371 रावण राष्ट्र के अस्त्र

भगवान राम के काल में रावण राज्य में जहाँ आग्नेय अस्त्र, ब्रह्मास्त्र थे, वहाँ जलास्त्र भी माने गए हैं। जहाँ एक ने आग्नेय अस्त्र का प्रहार किया, दूसरे ने जलास्त्र का प्रहार किय, जिससे जल के परमाणु, अग्नि के परमाणुओं को निगल जाते है। जैसे अग्नि प्रदीप्त हो रही है, परन्तु जल का प्रहार करने से अग्नि शान्त हो जाती है। उसी प्रकार के राजा रावण के राष्ट्र में यन्त्र थे। राजा रावण के पुत्र इन्द्रजीत ने जिस समय एक अग्रोत केतु नाम के यन्त्र का प्रहार किया था, तो ऊपर से अग्नि की वर्षा हो गयी। राम की सेना अग्नि में जब भस्म होने लगी, तो उस समय भगवान राम ने एक जलास्त्र, जो महर्षि भारद्वाज से उन्हें प्राप्त हुआ था, उसका प्रहार करते ही, वह जो इन्द्रजीत के यन्त्र के जो परमाणु थे, जलास्त्र का प्रहार करते ही, अग्नि भी शान्त हो गई और वह अग्नि के परमाणुओं को, वह आपो शस्त्र निगलता चला गया। इसी प्रकार विज्ञान हमारे यहाँ परम्परा से रहा है"आज कोई नवीन नहीं है। आज का मानव यह कहता है कि केवल घोषणा ही घोषणा है। घोषणा नहीं है क्योंकि वेद में यह सर्वत्र विज्ञान की आभा प्राप्त होती है।

संसार कर्म की वेदी पर आ जाना चाहिए, मानवता की वेदी पर रहना चाहिए। विज्ञान मानवता को समाप्त कर देता है, भंयकर अग्नि के मुखारविन्द में परिणत हो जाता है। 23.08.1971।

372 राजा रावण राज्य में विज्ञान

भगवान राम कहते थे कि राजा रावण के राज्य को हमने विजय किया। परन्तु हमें यह प्रतीत है कि वहाँ कितना विज्ञान था। उनके यहाँ ऐसे ऐसे यन्त्र विद्यमान थे, जिन यन्त्रों में विद्यमान होकर के मंगल की क्या बुध और शुक्र आदि लोकों की यात्रा करने वाले यान विद्यमान थे। परन्तु उस विज्ञान के युग का क्या बना?क्योंकि उसमें चरित्र, धर्म और मानवता न थी। इसलिए धर्म होना चाहिए। 25.03.1977

क्योंकि बाह्य जगत में उस प्रभु का दिव्य दर्शन होता है और बाह्य जगत को जब आन्तरिक जगत में ले जाते हैं, तो जितना यह बाह्य जगत है यह अन्तर्मुखी हो करके, अन्तरात्मा में ही उसका दिग्दर्शन करता है। तो चाहे वह किसी भी मण्डल का प्राणी क्यों न हो, साधना तो प्रत्येक प्राणी करता है, चाहे वह सूर्य मण्डल का प्राणी ही क्यों न हो। मंगल का ही क्यों न हो। साधना तो मानव का एक आत्मीय भोजन है। आत्मीय एक तरंग है, जिस तरंग को अपने में दृष्टिपात करके वह तरंगित हो जाता है। 14.03.1978

373 रावण राष्ट्र में अग्नि

जिस समय राजा रावण के राष्ट्र में अग्नि यन्त्रों का निर्माण हो गया, जलास्त्रों का निर्माण हो गया, चन्द्रमा में यातायात बन गया, मंगल में यातायात बन गया, सर्वत्रता में यातायात बन गया, परन्तु पुरातन के काल में भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में जहाँ परमाणु शक्ति का अनुसन्धान किया जाता था, उसी यज्ञशाला में, उसी विज्ञानशाला में आध्यात्मिकवाद के परमाणुओं को भी जाना जाता था। 23.02.1980

वैज्ञानिक अपनी यन्त्रशाला में, विज्ञानशाला में यन्त्रों का निर्माण होना चाहिए। मैं इसका विरोधी नहीं, राजा यन्त्रों में विद्यमान होकर के पृथ्वी लोक का ही नहीं, मंगल लोकों की यात्रा करने वाला हो और बुध की यात्रा करने वाला हो। चन्द्र लोकों की यात्रा करने वाला हो। यहाँ ऐसे विष्णु राजा हुए हैं, जो अपने गरुड रूपी यन्त्र पर विद्यमान हो करके, वह यहाँ से उड़ान उड़ते हैं, मंगल और चन्द्रमा की उड़ान उड़ कर पृथ्वी पर आ जाते थे। इस प्रकार के राजा हुए हैं। यान होने चाहिए, विज्ञान होना चाहिए। 23.02.1980

374 रावण राष्ट्र में अनुसंधानशालाएं

जब उन्होंने सर्वत्र राष्ट्र का भ्रमण, सर्वत्र विज्ञानशालाओं का भ्रमण कराया, तो उन्होंने कहा कहो भगवन्! मेरा राष्ट्र आपको कैसा प्रतीत हुआ है? तो उस समय महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज ने कहा हे रावण! तुम्हारा राष्ट्र तो मुझे बहुत प्रिय लगा है। तुम्हारे राष्ट्र में ऊँचे ऊँचे भवन है, स्वर्ण के भवन है, तुम्हारे राष्ट्र में पृथ्वी अनुसन्धानशाला है, जल अनुसन्धानशाला है, तुम्हारे यहाँ चन्द्र अनुसन्धानशाला है, सूर्य अनुसन्धानशाला है, अग्नि अनुसन्धानशाला है, नाना प्रकार के यन्त्र बने हुए है, लोक लोकान्तरों में जाने के लिए, और तुम्हारे यहाँ चिकित्साशाला है और निर्माण मार्गशालाएँ है।हे रावण! मुझे ऐसा प्रतीत हुआ है, इस सर्वत्र दृष्टिपात करने के पश्चात कि तुम्हारी लंका में कुछ समय के पश्चात अग्नि प्रदीप्त हो जाएगी। जब उन्होंने यह कह, तो रावण ने नतमस्तक हो करके कहा प्रभु! यह ऐसा आपने क्यों कहा है? उन्होंने कहा है कि यह जो संसार है, यह जो राष्ट्रवाद है या मानववाद है, यह विज्ञान से कदापि ऊँचा नहीं बनता है। 27.03.1990

375 रावण काल की विज्ञान चर्चाएँ

तो इसमें राजा रावण के विधाता कुम्भकरण और अमृती ब्रह्मचारी, श्वेता के पुत्र और महर्षि प्रवाहण, जो शौलय के पुत्र शैल्यास्थ के पुत्र कहलाते थे। ये सभी एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके, अपने में अनुसंधान करने लगे और अनुसंधान करते करते उन्होंने यन्त्र का निर्माण किया और यन्त्र में यह विशेषता थी, कि यन्त्र कुछ उड़ाने उड़ने लगा अंतरिक्ष की, उन्होंने उड़ाने उडी, तो राजा रावण का पुत्र नारान्तक भी वहाँ अध्ययन करते थे, वह भी इसमें लग गए, तो जब निर्णयात्मक करने लगे, तो यंत्रों का निर्माण करते करते, उन्होंने आश्रम से उड़ान उड़ने के लिए एक यन्त्र का निर्माण किया, जो चन्द्रमा की यात्रा करता था, चन्द्रमा तक जाने का उन्होंने प्रयास किया, महर्षि तत्व

मुनि महाराज इसमें लग गए। ब्रह्मचारियों को यह कहते रहते, कि यदि तुम्हें विज्ञानेता बनना है, तो आगे ओर अध्ययन करो, और मनन और चिंतन करो, वह अध्ययन करने लगे, याग करते, नाना प्रकार की समिधाओं के द्वारा और उसमें अपने विचार देते, उन विचारों के ऊपर चिंतन होने लगा वह चन्द्रमा से ऊर्ध्व लोक में भी गमन करने लगे, वह लगभग ऋषि के आश्रम में, बारह वर्ष तक इस प्रकार का अनुसंधान होता रहा और इसके ऊपर उड़ाने उड़ते रहे। 05.03.1991

376 राजा रावण का वैज्ञानिक काल

आज मैंने अपने सूक्ष्म शरीर द्वारा श्रवण किया है, कि आज का प्राणी यह कह रहा है कि चन्द्रमा में जीवन नही हैं, आज के प्राणी ने वहाँ जाकर किया ही क्या है? हमारा परम्परा का विज्ञान तो यह कह रहा है, कि राजा रावण के पुत्र नारान्तक का एक पुस्तकम् था, जिसको विज्ञान अपरित कहा जाता था और उनका एक हस्त लिखित पुस्तकम् था, जिसको चन्द्र अपरिती यात्रा कहते थें, क्या करें आज वह पुस्तकें प्राप्त नही हो रही हैं, संसार के मानव का दुर्भाग्य है, कि वह सब पुस्तकें अग्नि के मुखारबिन्द में चली गईं। लेखनीबद्ध करने वाले भी समाप्त हो गए।

आज के प्राणी ने विज्ञान में दृष्टिपात ही क्या किया है? आज मानव के हृदय में यह संशय आ जाता है, कि वह मानव इस प्रकार से विज्ञान में प्रगति करता रहा, तो मानव परमात्मा को शान्त कर देगा। यह वाक्य मानव को अपने से दूर कर देना चाहिए। आज मानव नास्तिकवादी तो बन जाता है, परन्तु नास्तिकवादी में उसे कोई वस्तु जरूर प्राप्त करनी होगी। वह जो कह रहा है, कि यह सब संसार प्राकृतिक है, परन्तु प्रकृति का मूल भी कोई न कोई स्वीकार करना ही होगा। प्रकृति में स्वयं ज्ञान की कोई प्रतिभा नही हैं, ज्ञान का कोई न कोई प्रतीक, तुम्हें स्वीकार करना होगा।

आज के विज्ञानवादी ने चन्द्रमा में जाने वाला यन्त्र बनाया, परन्तु उस यन्त्र में वह ज्ञान की प्रतिभा न दे सके। जब ज्ञान की प्रतिभा दे देवेंगे तो हम स्वीकार कर सकते हैं, कि प्रतिभा शान्त हो सकती है, ज्ञान की प्रतिभा को मानव बना नही सकता। आज पृथ्वी में जो स्वर्ण बनता है, उस स्वर्ण के कणों को कोई वैज्ञानिक नही बना सकता, वह उन कणों का मिलान कर सकता है, कण अनादि माने जाते हैं। जब हम कणों की प्रतिभा, अनादि स्वीकार करते हैं और उनके बनाने वाला केवल एक चेतना से प्राप्त होता है। 22.08.1969

377 वैज्ञानिक अहिरावण

अहिरावण के यहां भी विज्ञान पराकाष्ठा पर था, ऐसी एक शक्ति थी, कि मानव के स्वरों के साथ में, उस शक्ति को लाना, तो वह मूर्छित हो जाते थे। समाज का समाज मूर्छित हो जाता था। ऐसे यान उनके यहां थे, कि वह चन्द्रमा की यात्रा में, मंगल और बुध की यात्रा करते रहते थे। तो इसी प्रकार उनके राष्ट्र का क्रियाकलाप चलता रहा। 13.10.1984

378 महाराजा कुम्भकरण का विज्ञान विमर्श

एक समय कुम्भकरण कुछ वैज्ञानिक तथ्यों को ले करके कुछ वार्ता करना चाहते थे। तो उन्होंने हमसे कुछ वार्ता प्रगट की है। हमने उनसे प्रश्न किया कि तुम हमारे पूज्यपाद से क्या प्रश्न करना चाहते हो? उन्होंने कहा मेरा प्रश्न उन्हीं से होगा। हमने कहा प्रभु! हमें उच्चारण कीजिए। उन्होंने कहा है कि मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह जो संसार है, वेद की भाषा में या वेद के मन्त्रों में परमाणुवाद का अपना क्या क्या महत्त्व माना गया है? एक तो उन्होंने यह प्रश्न किया।

और द्वितीय प्रश्न उन्होंने यह किया है कि मैं चन्द्रमा की यात्रा करना चाहता हूँ और चन्द्रमा की यात्रा उससे ऊर्ध्वा से बुध मण्डल कहलाता है। तो बुध मण्डल में, कैसा वातावरण है और वहाँ कैसे प्राणी रहते है?

एक तृतीय प्रश्न उन्होंने ओर किया, कि यह मंगल मण्डल है, मंगल मण्डल से ऊर्ध्वा में, वशिष्ठ और अरुन्धती मण्डल दोनों कहलाते है। अरुन्धती मण्डल में कौन सा प्राणी रहता है और कौन सा तत्त्व प्रधान है?

ये तीन प्रश्न महाराजा कुम्भकरण हमसे उच्चारण कर गए है, उन्होंने कहा महर्षि भारद्वाज के आश्रम में आपने संकेत क्यों नहीं, किया?महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से कहा प्रभु! उनके तो वह शिष्य कहलाते है, महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ तो उनका सर्वत्र, रावण का जितना वंशलज है वह सब विज्ञान की शिक्षा वहीं से प्राप्त हुई है। उनको हम वहाँ संकेत क्यों कर देते? तो यह उच्चारण करते हुए ब्रह्मचारी मौन हो गए। 28.07.1982

379 महाराजा कुम्भकरण का जीवन

महाराजा कुम्भकरण का जीवन इतना पवित्र रहा वह हिंसा में विश्वास नहीं करते थे, उनका अंहिसा में अटूट विश्वास था।पवित्र आहार करते थे वैज्ञानिकों को भी यही शिक्षा देते थे। परन्तु जब यह दृष्टिपात किया कि हमारा जो राष्ट्र विधाता जैसे पुत्र पिता से दु:खित हो गए है। उसी आभा में वह भी उसी की गति में गति करने लगे। एक समय उनकी पत्नी रम्भातकेतु ने कहा हे प्रभु! आप के जीवन की जो दशा

है, वह भिन्न बन गई है। उन्होंने कहा हां, देवी! भिन्न बन गई है, मैं जान रहा हूं। परन्तु वायुमण्डल, राष्ट्र का दूषित हो गया है। क्योंकि जेठे विधाता के दूषित होने पर। देवी ने कहा प्रभु! आप इस प्रकार दूषित क्यों हो रहे हैं। आप दूषित न होइए। 13.10.1984

380 महर्षि आश्रम में कुम्भकरण

इस महान विज्ञान को महर्षि भारद्वाज जानते थे। नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में जाना, मंगल में जाना, बुध में जाना, शुक्र में जाना, महर्षि भारद्वाज के यहाँ सदैव उनका प्रचलन रहता था, राजा रावण के विधाता जो कुम्भकरण थे, वे छः माह तक लंका में वास करते थे, और छः माह तक महर्षि भारद्वाज के आश्रम में अज्ञात रहा करते थे।

जिनको आधुनिक काल का समाज यह कहता हैं कि छः माह की निन्द्रा में तल्लीन रहते थे, वह अज्ञातवास में रहते थे, उनकी नाना प्रकार की विज्ञानशाला थी वह सदैव अणुओं में रमण करते रहते थे वहीं पर उनकी प्रगति होती रहती थी 69.77.020।

381 महाराजा कुम्भकरण के वैज्ञानिक यन्त्र

महाराजा कुम्भकरण का एक यन्त्र था, जिसको चित्राग्नि यन्त्र कहा करते थे, वह चित्राग्नि यन्त्र इस प्रकार का था, कि वह सर्वस्व जितने भी इस पृथ्वी पर लोक हैं, उन लोकों में जो जो यन्त्रों के केन्द्र से सम्बन्धित, चित्राग्न, वे उस यन्त्र में साफ साफ, सब केन्द्रों के चित्र आते रहते थे। महाराजा कुम्भरकण ने विज्ञान की लगभग 100 वर्षों के पश्चात उसको जाना। 100 वर्ष की आयु तक उन्होंने उस पर अनुसन्धान किया। परन्तु जितने भू मण्डल पर राष्ट्र थे, सब केन्द्रों का उनमें चित्रण आता, तो संसार के सब वैज्ञानिक दृष्टिपात करने के लिए पहुंचे। हमारे यहाँ कुम्भकरण को सबसे अधिक वैज्ञानिक माना गया है। कुम्भकरण एक समय हिमालय कन्दराओं में चले गए। हिमालय की कन्दराओं में उन्होंने महर्षि भुंजु महाराज से शिक्षा प्राप्त की। क्योंकि भुंजु मुनि महाराज, वायु मुनि महाराज के 1500वें प्रपौत्र कहलाते थे। भुंजु ऋषि महाराज के यहाँ पहुंचे और उनके द्वारा जा करके, उन्होंने कहा प्रभु! मैं तो आपकी शरण मे आया हूँ उन्होंने कहा कि क्या चाहते हो ब्रह्म पुत्र! उन्होंने कहा प्रभु! मैं विज्ञान चाहता हूँ। मैं अपने मस्तिष्क में विज्ञान को प्रतिमा चाहता हूँ। उन्होंने कहा तुम विज्ञान के अधिकारी हो अथवा नहीं? उन्होंने कहा कि मेरे मतिष्क का अध्ययन कीजिए। भुंजु ऋषि ने उनके मस्तिष्क को अध्ययन किया। उन्होंने कहा तुम अधिकारी हो और उन्होंने शिक्षा प्रदान की। उन्होंने नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण, नाना प्रकार के धातु, प्राण, महा, अणुओं का निर्देशन कराया। उनका दिग्दर्शन कराया। और निर्देशन दिया, तुम अपने विचारों में सुन्दर और प्रतिभा युक्त हो जाओ।

तो कुम्भकरण इस विद्या का अधिकारी था। कुम्भकरण ने सबसे प्रथम रावण को कहा था कि राम से तुम संग्राम मत करो, राम से संग्राम करने से तुम्हें लाभ नहीं होगा। यह कुम्भकरण की शिक्षा थी। परन्तु रावण अधिकारी नहीं था। राष्ट्र का अधिकारी न था। 02.08.1970

382 महर्षि भारद्वाज

वह वेदारम्भ करने लगे, उसी परमाणु विद्या के ऊपर अध्ययन होने लगा। अध्ययन करते हुए ऋषि के यहाँ नाना प्रकार की विज्ञानशालाएँ भी थी, और उनके यहाँ नाना प्रकार क कर्मकाण्ड की प्रतिभा भी निहित रहती, तो कर्मकाण्ड में प्रतीति हो जाए और ब्रह्मज्ञानी, ब्रह्मज्ञान का अध्ययन करे। परमाणु विद्या वाले, विज्ञान में रत्त हो जाए। तो, महर्षि श्वेताश्वेतर भारद्वाज अपने में अध्ययन करने लगे। जब परीक्षाफल आता, तो किसी में वह प्रथम आते, किसी में वह द्वितीय आते और कभी वह तृतीय आते रहे। परन्तु अपनी विद्या में, पूर्णता को प्राप्त होने लगे। उनके यहाँ नाना प्रकार की विज्ञानशालाएँ थी, महर्षि तत्वमुनि महाराज की आयु दो सौ चौरासी वर्ष की थी, जो अध्ययन कराते रहे। उनका जीवन बड़ा तपों में निष्ठ रहा। मुझे उनका विज्ञान, उनके विद्यालय में बड़ा पराकाष्ठा पर रहा है, वह यानों का निर्माण करते रहते थे, और यानों का निर्माण करके, उसमें ब्रह्मचारी विद्यमान हो करके, लोक लोकान्तरों की याा करते रहते थे। एक समय उनकी एक विज्ञानशाला में, एक यान का निर्माण हुआ, कि लोक लोकान्तरों की यात्रा होनी चाहिए। तो उन लोकों में श्वेत्ताश्वेतर भारद्वाज और वृतिका ब्रह्मचारी दोनों को कहा जाओ, तुम लोक लोकान्तरों की यात्रा करके आओ, जब महाराजा तत्व मुनि महाराज ने भारद्वाज गोत्रों से ऐसा कहा, तो उन्होंने कहा बहुत प्रियतम, यान में विद्यमान हो गए, और यान में विद्यमान हो करके, भारद्वाज मुनि, उस विज्ञानशाला में, यान में विद्यमान हो करके, वृतिका ब्रह्मचारी जब तत्व मुनि महाराज ने आज्ञा दी, तो उनका यान वहाँ से रमण करता है, और रमण करता हुआ, सबसे प्रथम वह मंगल में जाता है, और मंगल से उड़ान उड़ता है, तो वह बुध में चला जाता है, बुध से उड़ान उड़ता है, तो शुक्र में चला जाता है, वह शुक्र से उड़ान उड़ता है, तो मंगल में चला गया मंगल से उड़ान उड़ी, तो मृचिका मण्डल में चला गया, और मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो रोहिणीकेतु मण्डल में चला गया, रोहिणीकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वासुकेतु मण्डल में प्रवेश हो गया, वासुकेतु, मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह अरुण्धति मण्डल में चला गया, अरुण्धति मण्डल से जब उन्होंने उड़ान उड़ी, तो वह वशिष्ठ मण्डल में प्रवेश हो गया। वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ, वह रेणकेतु अभ्योदय मण्डल में प्रवेश कर गया और रेणकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो वसुकेतु मण्डल में प्रवेश कर गया, और वसुकेतु मण्डल में उड़ान उड़ता हुआ, गायत्राणि मण्डलों में प्रवेश हो गया। तो बहत्तर लोकों का

भ्रमण करके, वह यान, उनका उसी विद्यालय में पुनः, तत्व मुनि महाराज के यहाँ विराजमान हो। 20.11.1990।

383 महर्षि भारद्वाज और कुम्भकरण की चर्चा

त्रेता के काल में महर्षि भारद्वाज और कुम्भकरण की चर्चा होने लगी, वे परस्पर विचार देते रहते थे। जब वेदमन्त्र में तीनों गुणों का वर्णन आया, परमात्मा के वाची शब्दों की विवेचना आने लगी तो ऋषि ने कहा हे वैज्ञानिक तथ्यों के जानने वालो! यह वेद का मन्त्र यह कहता है कि यह जो संसार है यह तीन गुणों में व्याप रहा है। तो महाराजा कुम्भकरण ने कहा, महाराज! यह तो मैंने जान लिया, कि तीनों गुण हैं। परन्तु इन तीनों गुणों का विज्ञान से क्या सम्बन्ध रहता है? महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा, हे पुलस्त्य गोत्रों में जन्म लेने वालो! यह तो स्पष्ट हो रहा है कि तीनों गुणों में ही सर्वत्र विज्ञान गति करता रहता है। जहाँ पाँच इस प्रकृति की गति मानी जाती हैं वहाँ तीन गुण भी उसमें विद्यमान रहते हैं। तीनों ही गुणों में वह व्यक्त रहने वाला विज्ञानमयी धाराओं का रमण करता रहता है। 02.03.1982

384 महाराजा कुम्भकरण सतोगुण

महाराजा कुम्भकरण ने कहा, मैं यह जानना चाहता हूँ कि सतोगुण क्या है? उन्होंने कहा, सतोगुण पालन है, जैसे परमपिता परमात्मा सतोगुण में रमण करता हुआ, इस संसार का पालन कर रहा है। चाहे वह प्राणी पृथ्वी मण्डल का हो, चाहे वह मंगल में गति करने वाला हो चाहे वह बुध में रहने वाला हो, परन्तु सूर्य मण्डल के प्राणियों का किसी भी आभा में, चाहे वह परमाणुवाद शब्दों के रूप में परमाणु गति करने वाला हो, परन्तु वह परमाणुओं का सर्वत्र का एक पालन स्वरूप बना हुआ है। वह ब्रह्म का आयतन है।, आयतन कहते हैं कि ब्रह्म का गृह है। और ब्रह्म के गृह में वह वास कर रहा है। वह विष्णु बनकर के वास कर रहा है। इसी प्रकार जितना भी लालन पालन है वह माता के हृदय में रहता है। मानव के हृदयों में गति करने वाला है, तो उसे वेद कहता है विष्णु।

इसी प्रकार जितना भी संसार का शासनवाद है, हे कुम्भकरण! जितना भी शासन हम तुम कर रहे हैं, एक आचार्य हैं, विद्यालय में शिक्षा दे रहा है, परन्तु उसके हृदय से उद्गार उत्पन्न हो रहे हैं। निगली हुई विद्या का वह ब्रह्मचारियों के समीप वमन कर रहा है और ब्रह्मचारी उसको ग्रहण कर रहा है। परन्तु वह शिक्षा दे रहा है, वह उसका सतोगुण है। सत्य के ऊपर उसका विशुद्ध उच्चारण नहीं होता तो उसको दण्डित करता है उसको अनुशासन में लाने के लिए, वह उसका रजोगुण कहलाता है। वह सत्य को धारण कराने के लिए ही सत्य का पालन कराने के लिए ही, सत्य के सूत्र में रजोगुण विद्यमान रहता है। वह उसमें सतोगुण के ही सूत्र में रहता है। इसी प्रकार माता पिता अपने में यह चाहते हैं, माता कहती हैं। कि मैं पुत्र याग करना चाहती हूँ, पिता कहता है मैं पुत्र याग करना चाहता हूँ। तो वह उस तमोगुण के गर्भ में उत्पति की आभा विद्यमान रहती है। वह संकल्प है और वह संकल्प सतो में नहीं, रजो में रहता है। रजो में नहीं, वह तमो में भी रहता है। तो वह जो रजोगुण, तमोगुण की आभा रमण कर रही है वह भी सत्य के गर्भ में विद्यमान है, वह सत्य के गर्भ में है, क्योंकि माता का हृदय, माता का पुत्र है। पिता का हृदय, पिता की पुत्री है। वह सब सतो से सुगठित रहते हैं, इस प्रभु ने इस संसार को कैसे सूत्र में पिरोया है? कैसा सूत्र जिसमें रजोगुण, तमोगुण समाहित रहतें है। 02.03.1982

385 कुम्भकरण

इस पृथ्वी मण्डल से उड़ान उड़ करके, और वह मंगल मण्डल में जा करके, वहाँ से आग्नेय अस्त्रों का प्रहार करने वाला था। परन्तु वह नहीं हो सका, क्योंकि भारद्वाज मुनि ने राम को यह निर्णय करा दिया था, कि इस यन्त्र को तुम जान लो, तुम्हें यह किसी काल में काम आएगा। 09 03 1982

कुम्भकरण जी यान को ले करके चन्द्रमा में पहुंचे। वहाँ से यान से ही उस यन्त्र का प्रहार किया, उस यन्त्र का प्रभाव वायुमण्डल में छा गया, तो राम, जामवंत, सम्पाति और, सुबाहु ने मिल करके उस यन्त्र का जो प्रभाव, विषैले परमाणुओं को, अपने यन्त्र में निगल गए, थे। इस प्रकार का यन्त्रवाद आधुनिक काल में तो अब तक निर्माणित नहीं हुआ।

आधुनिक काल के, संसार के, पृथ्वी मण्डल के वैज्ञानिक जब समुद्र के तट पर विद्यमान होते हैं, तो समुद्र के तटों पर एक स्थली ऐसी बनी हुई है, वह स्थली ऐसी है जहाँ आधुनिक काल का यन्त्र जाता है, वह यन्त्र समुद्र में प्रवेश कर जाता है। तो वह भस्माभूत हो जाता है। यन्त्र का कोई द्वितीय भाग भी दृष्टिपात नहीं आता। इस प्रकार के विज्ञान के ऊपर आधुनिक काल के वैज्ञानिक इसके ऊपर चिन्तन करते रहते हैं, मनन करते रहते हैं कि यह क्या वस्तु हैं? समुद्र में ऐसा भाग क्यों है, आधुनिक काल के वैज्ञानिकों को उस यन्त्र की कोई प्रतिभा, उनके हृदय में नहीं आ समायी है। परन्तु एक वैज्ञानिक ने यह कहा है, कि इसमें मुझे ऐसा दृष्टिपात आता है, जो हमसे पूर्वकाल में वैज्ञानिक हुए हैं, उनका कोई यन्त्र अन्तरिक्ष में है, या समुद्र की तह में विद्यमान है। ऐसा एक वैज्ञानिक ने निर्णय दिया, परन्तु आधुनिक काल के वैज्ञानिक इस पर नाना प्रकार की टिप्पणियाँ कर रहे हैं, विचार में नहीं आ रहा है। 09.03.1982

386 साधक महाराजा कुम्भकरण

तो वायु का सेवन वायु प्राणायाम क्योंकि महाराजा कुम्भकरण अपने समय में बड़े साधक रहे हैं ब्रह्मचारिणी शबरी और ब्रह्मचारी सुकेता तो अपने में ब्रह्मवर्चोसि का पालन करते हुए, अपने में रत रहे हैं और वह वहां से वायुमण्डल को, अपने में पान करने लगे और उसी से अपने जीवनसत्ता को कुछ व्यतीत किया, कुछ आहार भी करते थे परन्तु वहां से उन्होंने गमन किया और गमन करके वहां से भ्रमण करते हुए वह उसके पश्चात अरूण्धति मण्डल में पंहुचे अरूण्धति मण्डल में जब प्रवेश किया, तो अरूण्धति मण्डल का वायुमण्डल जल प्रधानता में प्रतीत हुआ, जहां जल है, तो वहां प्राण सत्ता है जीवनसत्ता है जिस जीवनसत्ता को वैज्ञानिक जन अपने में धारण करते रहे हैं। 05 12 1986

387 नारान्तक की लोक यात्रा

राजा रावण के पुत्र, जो नारान्तक थे, उनके द्वार पर पहुंचे, उन्होंने कहा प्रभु! मेरे राष्ट्र में, यह चन्द्र अनुसन्धानशाला है यहाँ चन्द्रमा में जो यातायात बना हुआ है, उस पर नारान्तक अनुसन्धान करते है नाना वैज्ञानिक, उनकी विज्ञानशाला में थे। राजा रावण जब यह दृष्टिपात कराने लगे, तो ऋषि ने कहा हे नारान्तक। तुम्हारी चन्द्रमा में जाने की कितनी गति है? उन्होंने कहा हे प्रभु! मैं अपने यन्त्र में जब विद्यमान होता हूँ, तो जब मैं यहाँ पृथ्वी से, उड़ान उड़ता हूँ, तो मुझे एक रात्रि और एक दिवस पर्याप्त होते है चन्द्रमा में जाने के लिए, उन्होंने कहा धन्य है। 11.04.1982

राजा रावण के यहाँ एक वाहन था, जिस वाहन का नाम 'ऋणी लोकान्त्री यन्त्र' कहते थे, उस यन्त्र में विद्यमान हो करके नारान्तक इस पृथ्वी से उड़ान उड़ करके वह चन्द्रमा में, चन्द्रमा से उड़ान उड़ते मंगल में, मंगल से उड़ान उड़ते, वह शुक्र में, शुक्र से उड़ान उड़ते, वह बुध में, और बुध से उड़ान उड़ते वह रेंगनी कृति लोकों में रेंगनीकृति लोकों से उड़ान उड़ते स्वाति लोकों में, स्वाति लोकों से उड़ान उड़ते वह शनि मण्डल में, शनि मण्डल से उड़ान उड़ते तो कृति लोकों में वह यन्त्र बहत्तर लोकों का भ्रमण करके पुनः इस पृथ्वी मण्डल पर आ जाता था। इस प्रकार का विज्ञान राजा के राष्ट्र में निहित था। 11.04.1982

388 वैज्ञानिक रावण पुत्र नारान्तक

राजा रावण ने कहा यह मेरा पुत्र नारान्तक है, नारान्तक से जब ऋषि का परिचय हुआ तो ऋषि ने कहा कहिए नारान्तक! तुम्हारी क्या प्रशंसा है? उन्होंने कहा_प्रभु! मैंने चन्दमा में जाने वाले नाना प्रकार के यन्त्रों का अन्वेषण किया है और यत्रों का निर्माण किया है, मैं नित्यप्रति चद्रमा की यात्रा कर लेता हूँ क्योंकि मेरे यन्त्रों में इतनी गति है, मैं नित्यप्रति चन्द्रमा की यात्रा कर लेता हूँ, मैंने भगवन! इन यन्त्रों को जाना है। नाना प्रकार के यन्त्रों का मैंने अन्वेषण किया है और भी लोकों में जाने का मैं प्रयास कर रहा हूँ मंगल में जाने का भी प्रयास कर रहा हूँ, शुक्र में जाने के लिए मैं उत्सुक रहता हूँ, ऋषि का हृदय बड़ा प्रसन्न हुआ, ऋषि ने कहा रावण! वास्तव में तुम्हारी लंका तो बड़ी उन्नत हैं, तुम्हारी लंका में तो महान उन्नति हो रही है। 15.09.1969

यह जो बाह्य जगत है, आन्तरिक जगत है, इसमें जो भी कर्म हो रहा है, वह तरंगों के आधार पर, एक यज्ञ हो रहा है। क्योंकि इसमें आहुति दी जा रही है, कही वायु, कहींअग्नि, इसी प्रकार प्रत्येक तत्व की सामग्री बना करके मानव के प्रत्येक श्वास के साथ में परमाणुओं का निकास होता रहता है, वह जो परमाणुवाद है, उसी से वायुयानों का निर्माण होता है उसी से विकासवादी यन्त्रों का निर्माण, यदि चन्द्र लोक में जाना है, मंगल में जाना है, शुक्र में जाना है, सूर्य की प्रतिभा को जानना है, यह सब विचारधारा उसी परमाणुवाद में ही यह प्रतिष्ठित होती। 11.03.1970

यह जो सूर्य कला है वह महान कला कहलाई जाती है, नाना प्रकार की किरणों का सम्बन्ध पृथ्वी से होता है, कही वायु से होता है चन्द्र लोकों से होता है, शनि लोकों से होता है, मंगल लोकों से होता है, नाना प्रकार के बुध लोकों से भी इसका विशेष सम्बन्ध रहता है। 15.08.1970

389 राजा रावण पुत्र नारान्तक का लोक विमर्श

एक समय जब राजा रावण के पुत्र नारान्तक जब मंगल की यात्रा करने में सफल हो गए, तो उस समय रावण ने अपने पुत्र से एक वाक्य कहा था कि हे पुत्र! तुम मंगल की यात्रा में सफल हुए हो, मंगल की यात्रा कितने समय में की है? उन्होंने कहा हे प्रभो! जैसे चन्द्रमा में मेरा एक रात्री और एक दिवस में गमन हो जाता है, इसी प्रकार मंगल में मेरा दो रात्री और दो दिवस में गमन हो जाता है। राजा रावण ने कहा कि वहाँ किस प्रकार का उद्गार होता रहता है? उन्होंने कहा कि हे भगवन्! मेरा जो उद्गार है, जो मैंने वैदिक साहित्य के आधार पर, महर्षि भारद्वाज के द्वारा जाना, उसी उद्गार को प्रायः मैं मंगल पर त्याग कर चला आया। जब किसी काल में वहाँ पहुंचे, तो यह प्रतीत हो गया, कि वास्तव में वहाँ पार्थिव मण्डल जैसे ही प्राणी रहते हैं, विचरण करते हैं, आहार व्यवहार करते हैं। इस प्रकार की धारा का मुझे प्रतीत हो गया। ऐसा उन्होंने निर्णय कराया। महर्षि भारद्वाज उनके गुरुजन होते थे। लंका में जितना भी विज्ञान गया, वह महर्षि भारद्वाज के द्वारा

पहुंचा। वह उन्हीं की देन थी। आज जब हम उस साहित्य को दृष्टिपात करने लगते हैं, उनकी आभा को, महर्षि भारद्वाज के जीवन को, उनकी विज्ञानशालाओं को दृष्टिपात करने लगते हैं, तो एक विचित्रता ही विचित्रता प्रतीत होने लगती है। 03.08.1971।

390 नारान्तक

तो नारान्तक ने कहा प्रभु! हमारी भी इच्छा है, श्वेताश्वेतर के पुत्र रोहिणी वृति ने भी यही कहा कि प्रभु! हमारी भी इच्छा है, कि हम गमन करे, तो ऋषि ने आज्ञा दी कि तुम तीनों अपने यान में विद्यमान हो जाओ, यन्त्र में विद्यमान हो गए और वहाँ से वह सूर्य की किरणों से जो उन्होंने विद्युत को अपने में धारण किया था, उसी विद्युत की किरणों की पुट लगा करके, यन्त्र गमन करता है, और गमन करता हुआ, जब यह चन्द्रमा में पहुंचा, तो चन्द्रमा की, परिधि में गमन करने लगा और जब यह गमन करता करता, वहाँ एक स्थली पर इसे स्थिर कर दिया और स्थिर करने के पश्चात, अगले दिवस उन्होंने उड़ाने उड़ी, उड़ान उड़ करके, वह बुध मण्डल में पहुंचे, तो बुध मण्डल में पार्थिव तत्व वाला मानव रहता है, आगे बुध से जब उड़ान उड़ी, तो वह शुक्र में प्रवेश हो गए और शुक्र में जब उन्होने एक रात्रि वहाँ वास किया, रात्रि वास करके, उन्होंने वहाँ भ्रमण भी किया, अपने यंत्रों से परिक्रमा भी की, और वह परिक्रमा करते हुए, उसी यान में पुनः विद्यमान हो करके पुनः गमन करने लगे।

वह शुक्र से उड़ान उड़ने लगे, तो शुक्र से उड़ान उड़ करके, बह मंगल मण्डल तक पहुंचे, क्योंकि मंगल मण्डल में विज्ञान बहुत ऊर्ध्वा में गमन करता रहता है।जब यह पृथ्वी मण्डल का विज्ञान, अपने में आभा अव्रत बन जाता है।तो मंगल मण्डल का प्राणी उससे सौ वर्ष आगे रहता है।जब यह अपने को यह स्वीकार करता है, कि हम विज्ञान में पूर्ण हो गए हैं, तो मंगल मण्डल का जो प्राणी है। वह सौ वर्ष विज्ञान में, यहाँ से आगे रहता है, इस पृथ्वी मण्डल से, जब मंगल में पहुंचे, तो वहाँ विज्ञानवेताओं से उन्होंने चर्चा की और विज्ञानवेताओं से चर्चाएँ की, उनकी वार्ता को जानने का प्रयास किया। 05.03.1991

391 वैज्ञानिक रावण पुत्र नारान्तक

राजा रावण के पुत्र नारान्तक ने, वहाँ अध्ययन किया और छह माह तक अपने यान को वहाँ स्थित कर दिया, और वहाँ से शिक्षा ले करके वह अग्रणीय बन करके, अपने यान में उड़ाने उड़ने लगे, और उड़ाने उड़ते हुए, उसके पश्चात वह वशिष्ठ मण्डल में पहुंचे और वशिष्ठ मण्डल से वहाँ भी इसकी परिक्रमा करते हुए, अग्रणीय बने।तो अरुन्धति मण्डल में प्रवेश हो गये अरुन्धति मण्डल में जा करके, उन्होंने यह विचार विनिमय किया, कि अब हमें गुरु के आश्रम को चलना चाहिए, गुरु के आश्रम को गमन करना चाहिए, क्योंकि बहुत समय हो गए हैं। हम अब, पूज्मपाद गुरुदेव से वार्ता तो प्रगट कर लेते हैं, परन्तु वह इस पिपासा में लगे रहेंगे, कि किस दिवस मेरा होगा, जब ब्रह्मचारी आश्रम में पधारेंगे क्योंकि आचार्य देवता होते हैं और वह आचार्य और ब्रह्मचारी दोनों का जो परस्पर जो समन्वय होता है, वह बड़ा विचित्र होता है, जब उन्होंने अपनी गोष्ठी बनाई थी, उन्होंने तो वहाँ से अरुन्धति मण्डल में वह तीन दिवस तक रहे, और तीन दिवस तक उन्होंने बहुत सी चर्चाएँ की और चर्चाएँ क्या वहाँ का खनिज पदार्थ भी दृष्टिपात किया और भी नाना प्रकार के अन्नाद को दृष्टिपात किया, नारान्तक के कथनानुसार अपने यान को पुनः अरुन्धति मण्डल से वशिष्ठ में और वशिष्ठ से मंगल में और मंगल से बुध में ही प्रवेश कर गए और बुध से चन्द्रमा में और चन्द्रमा से पृथ्वी मण्डल पर जब आए तो, वहाँ से नाना प्रकार के चित्रों का उन्होंने आचार्य को दर्शन कराया।

आचार्य बड़े प्रसन्न हुए, रात्रि समय उनकी गोष्ठिया की, और यह कहा कि ब्रह्मचारियों! तुमने कैसे गमन किया? उन्होंने कहा प्रभु! जैसी आपकी अनुपम कृपा रही, हम उसमें अपने की सफलता को प्राप्त हो गए हैं। 05.03.1991

392 नारान्तक का अनुसंधान

राजा रावण, महर्षि कुक्कुट भ्रमण कराते हुए, नारान्तक की विज्ञानशाला में चले गए, राजा रावण ने कहा प्रभु! यह मेरा पुत्र नारान्तक है और नारान्तक अनुसन्धान करता रहता है, और चन्द्र यात्री भी है, उन्होंने कहा हे नारान्तक! तुम्हारी कितनी गति है? उन्होंने कहा प्रभु! एक रात्रि और एक दिवस, मेरे लिए चन्द्रमा में जाने के लिए पर्याप्त होता है। परन्तु तत्व मुनि महाराज से, भारद्वाज मुनि इत्यादियां से, हमने विज्ञान की बड़ी उपलब्धियाँ की है। विज्ञान अपने में महान सार्थक रहा है। यह जो यन्त्र तुम्हें दृष्टिपात आ रहा है। यह ऐसा यन्त्र है, जब यह मेरे विज्ञान भवन से उड़ान उड़ता है, तो सबसे प्रथम यह चन्द्रमा में जाता है, चन्द्रमा से उड़ान उड़ता है।तो यह बुध में चला जाता है।, बुध से उड़ान उड़ता है, तो शुक्र में चला जाता है, शुक्र से उड़ान उड़ता है तो मंगल में चला जाता है और मंगल से उड़ान उड़ता है तो यह स्वाति में प्रवेश हो जाता है, स्वाति से उड़ान उड़ता है, तो मृचि चला जाता है, मृचि मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो कृतिभानु में चला जाता है, कृतिभानु मण्डल से उड़ान उड़ता है तो यह व्रेती मण्डल में प्रवेश कर जाता है। व्रेती मण्डल से उड़ान उड़ता है तो अरुण्धति मण्डल में चला जाता है, अरुण्धति मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो वशिष्ठ में उड़ जाता है, यह यान ऐसा विचित्र है, बहत्तर लोकों का भ्रमण करके

और यह यान मेरे इस विज्ञान भवन में प्रवेश कर जाता है।
यह विज्ञान मैंने महर्षि भारद्वाज से, इस यन्त्र को मैंने प्राप्त किया, यह यन्त्र उन्होंने तत्व मनि महाराज से प्राप्त किया है, भगवन! यह यन्त्र हमारे यहाँ, बड़ी विशिष्ठता वाला यन्त्र है।
जब नारान्तक ने इस प्रकार वर्णन कराया, तो ऋषि के हर्ष की कोई सीमा न रही, उन्होंने कहा हे नारान्तक! वास्तव में तुम ऋषि हो, तुम्हारा जीवन तो बड़ा प्रियतम है, तुमने इतने विज्ञान को जाना, मेरा अन्तरात्मा बड़ा हर्षित हो रहा है। 08.09.1989

393 रावण पुत्र नारान्तक, बुध में

राजा रावण के पुत्र एक नारान्तक थे, वे यन्त्रों में विद्यमान हो करके, वह बुध मण्डल में पंहुचे, और बुध मण्डल में इस प्रकार की विद्या का उन्होंने अध्ययन किया। यह अध्ययन क्रिया, परम्परागतों से ही मानवीय मस्तिष्कों में हृदयग्राही रही हैं।तो जब स्वाति मुनि के यहाँ दोनो ब्रह्मचारियों को अवकाश प्राप्त होता, उसी काल में दोनों अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके, विचार विनिमय करते रहते थे।
तो एक दिन सांय काल के समय मेघनाद जी ने अंगद से कहा कि भगवन! यह जो प्राण है, यह क्या है?उन्होंने कहा कि हे भगवन! यह प्राण क्या नही है? उन्होंने कहा मैं तुमसे प्रश्न कर रहा हूँ। उन्होंने कहा मैं भी तुमसे प्रश्न कर रहा हूँ। उन्होंने कहा वाक् तो यथार्थ है, परन्तु एक दूसरे में जानने के लिए तत्पर हो जाओ, सांयकाल का समय था, उन्होंने कहा यह प्राण क्या है तुम यह जानना चाहते हो, और मैं यह जानना चाहता हूँ कि प्राण क्या नही हैं संसार में, तो दोनों का प्रश्न एक दूसरे में जटिल बन गया हैं, एक वृत बन गया हैं।
मेरा विचार यह आ रहा है, कि यह जो प्राण है, यह मानव का जीवन है, यह जो प्राण है, यह पृथ्वी से ले करके, यह जो माला बनी हुई है, यह प्राण के कारण बनी हुई।इसीलिए उन्होंने कहा प्राण कहाँ नही हैं, प्राण सर्वत्रता में विद्यमान रहता हैं। यह विशेष प्राण है और विशेष प्राण में जो सामान्य प्राण है, वह सर्वत्रता में, जड़वत में भी और चैतन्य की प्रतिभा में भी, सदैव निहित रहता हैं।उन्होंने कहा भगवन! यह हमने जान लिया मेघनाद जी बोले कि प्रभु! यदि हम प्राण में अपान का मिलान करा देते हैं, तो क्या बन जाता हैं?
उन्होंने कहा जब प्राण और अपान दोनो का मिलन होता है, तो उग्र क्रिया बन जाती है, उन्होंने कहा यदि दोनों प्राण के मध्य में, यदि हम सामान्य प्राण का मिलान कर देते हैं, तो क्या बन जाता है, उन्होंने कहा वह जो उग्र क्रिया है। 27.10.1989

394 मेघनाद का जीवन

इस प्रकार उनका अग्न्याध्यान होने लगा, तो दीपमालिका बन गई, उनकी नगरी, जो त्रिपुरी में थी, दीपमालिका बन गई।
तो विचार आता रहता है प्राण विद्या मानवीय मस्तिष्कों में रही है वेद के मन्त्रों में और मानवीयता में सदैव निहित रही हैं तो जब दीपमालिका बनी, तो महाराज इन्द्र, क्योंकि राजाओं में द्वेष भावना परम्परागतों से रही हैं, क्योंकि जब राष्ट्र बनता हैं, तो राष्ट्र में रजोगुण अवश्य आता है, और जब रजोगुण आता है, तो उसमें द्वेषाग्नि भी जागरूक होती हैं।
तो महाराजा इन्द्र को यह द्वेषाग्नि जागरूक हुई, कि हो सकता है, कि मेघनाद मेरी त्रिपुरी को विजय न कर ले, और मेरी त्रिपुरी को विजय कर लेगा, तो मेरा इन्द्र पद समाप्त हो जाएगा, यह भावना राजा इन्द्र के हृदय में प्रविष्ट हो गई थी, तो उन्होंने अपनी देवियों से कहा हे दिव्याओं! यह जो मेघनाद है, यह तो बड़ा बुद्धिमान, विज्ञान में पारायण हैं, यह क्रियात्मकता में योगेश्वर हैं, यह प्राण विद्या को जानता हैं, अस्त्रों शस्त्रों की विद्या भी जानता है, यह वरूणास्त्रों में पारायण हैं। यदि इसके हृदय में यह समाहित हो गया, कि मैं त्रिपुरी को विजय करना चाहता हूँ तो मेरी त्रिपुरी को विजय कर सकता हैं। 27.10.1989

395 श्रुति प्राण

तो उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारी! विज्ञान में तुम्हारी उड़ान बड़ी विचित्र हैं, परन्तु तुम प्राण के विषय में ओर क्या जानते हो?उन्होंने कहा, तुम जो प्रश्न करोगी, मैं उसका उत्तर देता जाऊंगा, उन्होंने कहा तुम श्रुति प्राण को जानते हो? उन्होंने कहा हां मैं श्रुति प्राण को जानता हूँ, उन्होने कहा कैसे जानते हो?
उन्होंने कहा मैं श्रुति प्राण को इसीलिए जानता हूँ, जो मेरे श्रोत्रों में, प्राणों की ध्वनियां आती हैं, उन ध्वनियों को संग्रह करता रहता हूँ, और मैंने स्वात नाम का एक यन्त्र का निर्माण किया है, जिनमें उन परमाणुओं को एकत्रित करता रहता हूँ, और यन्त्रों के द्वारा मैं यन्त्रों में स्थिर करता हुआ, अग्नि के समीप विद्यमान हो करके, मैं उन परमाणुओं का भिन्न भिन्न रूपों में, परमाणुओ की कृतियां बना लेता हूँ, जो जल के परमाणु हैं, अग्नि के परमाणु हैं, उन परमाणुओं को मैं भिन्न भिन्न करता हुआ, उनका मिलान करके, जिस अवस्था में मुझे लाने है, जिस यन्त्र में मुझे, उनपरमाणुओं को लाना है, उस यन्त्र का उससे मिलान हो जाता हैं। 27.10.1989

396 नाग फाश

जब ऋषि के तुल्य उन्होंने कहा धन्य है, तुम ब्रह्मचारी ही नही, तुम तो ऋषि हो, क्योंकि तुम्हारे अन्तर्हृदय में, तुम्हारी प्राणों के ऊपर, बड़ी

गम्भीर गति है, उन्होंने कहा ओर क्या जानते हो? उन्होंने कहा नाग प्राण का आश्रय ले करके, उदान प्राण का, मैंने एक यन्त्र का निर्माण किया है, उस यन्त्र में, यह विशेषता है, वह नागफाश कहलाता हैं, यदि मैं किसी को, प्राण सत्ता और नागफांश के द्वारा, सूर्य उदय होने से पूर्व, उसके रक्त, वह नागफांश कहलाता हैं। जो मैंने स्वाति मुनि के द्वारा इसका अध्ययन किया है, और इसको मैंने मृचिका नामक ऋषि है, उनके द्वारा भी अध्ययन किया है, हे मातेश्वरी! मैं इन विद्याओं को, कुछ संक्षिपत्ता से जानता हूँ।उन्होंने कहा कि तुम सब जानते हो, ? नही, प्रभु का विज्ञान बड़ा अनन्तमयी माना गया है, मैं सर्वत्रता को नही जानता, मैं उतना जानता हूँ, जितना मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया हैं।पूज्यपाद गुरुदेव को भी इस अवस्था में गणित नही कर सकता, कितना जानते हैं, कितना जानने की उनकी सीमा हैं, अध्ययन और क्रिया में लाने का उनका कितना अध्ययन है, हे मातेश्वरी! मैं तो प्रभु की सृष्टि में बहुत ही, निम्न हूँ, प्रभु का ज्ञान और विज्ञान बड़ा अनन्तमयी माना गया हैं।

ब्रह्मचारी ने कहा धन्य है हे मातेश्वरी! अब मुझे आज्ञा दीजिए। उन्होने कहा धन्य है ब्रह्मचारी! परन्तु उन्होंने एक वाक् कहा कि इन्द्रपुरी में आ करके, तुमने क्या अनुभव किया हैं?उन्होंने कहा कुछ नही, मैं अनुभव का वाक् तुमसे प्रगट नही करूंगा।

तो वहाँ से उन्होंने गमन किया, त्रिपुरी से गमन करते हुए वह पुनः ऋषि के आश्रम में आ गए, तो ऋषि स्वाति ने कहा हे ब्रह्मचारी! तुम कहाँ गए थे? तुम्हारा गमन कहाँ से हुआ है?उन्होंने कहा प्रभु! मैं त्रिपुरी में गया था और मैं त्रिपुरी में जा करके, कुछ विचार विनिमय हुआ, उन्होंने कहा कुशलतम, इन्द्र का राष्ट्र कैसा है, उन्होंने कहा प्रिय भगवन! बहुत ही कुशल है, आनन्दवत है।

तो ऐसा उच्चारण करके अपनी पंक्ति में विद्यमान हो गए तो प्राणों का जो संघात हैं, प्राणों की जो एक पवित्र विद्या है, यह एक बड़ी गहण विद्या है, अपने में बड़ी विचित्र विद्या रही हैं।

एक समय वह एकान्त स्थली में विद्यमान थे, और उनके पूज्यपाद गुरुदेव अन्धकार छाया हुआ है, उन्होने कहा हे मेघनाद! तुम दीपमालिका क्यों नही प्रकाशित करते हो उन्होंने कहा प्रभु! क्या करना हैं, कुछ अध्ययन करेंगें।

तो उन्होंने प्राण को अपान में प्रवेश करके उन्होंने आश्रम को दीपमालिका के रूप में परिवर्तित कर दिया उन्होंने कहा हे मेघनाद! इस विद्या में तुम पारायण हो गए हो, उन्होंने कहा प्रभु! यह तो आपकी अनुपम कृपा है, अनुपम देन हैं, क्या प्रभु, इस विद्या को मैं क्रियात्मकता में पान कर गया हूँ, इस विद्या को मेघनाद भी जानते थे, अंगद भी जानते थे, मृचिका कौतुक ऋषि के पुत्र भी इस विद्या को जानते थे।उनके यहाँ अनन्य ब्रह्मचारी अध्ययन करते रहते थे।तो हमारे यहाँ विद्यालयों में भिन्न भिन्न प्रकार की शिक्षाएं, वर्णित होती रही हैं।वृतियों में रत्त और ब्रह्मचारी उनका हृदय पवित्र बनाने में, आचार्य लगे रहते थे और विद्या देने में बड़े कुशल थे और उन्होंने मेघनाद जी से यह कहा कि तुम इस विद्या के अधिकारी हो अथवा नही? प्रभु! इसकी तो परीक्ष ले लीजिए

तो ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में यह विद्या अधिकारी को दी जानी चाहिए, अनधिकारी को नही देनी चाहिए, अनधिकारी को यह विद्या प्रदान करोगे, तो यह राष्ट्र और समाज का विनाश हो जाएगा और यदि इस विद्या को प्रदान करोगे, तो उनमें उनका नामोकरण ऊर्ध्वा में गमन करेगा और ये विद्याएं उनके मस्तिष्क में, उनकी आत्मा में यह विद्या उनकी वृतियों में सदैव निहित रहेगी। 27.10.1989

397 वैज्ञानिक मेघनाद

एक समय वैज्ञानिकों का एक समूह हिमालय की कन्दराओं में था, और उन्होंने राजा रावण के पुत्र मेघनाद यन्त्रों का निर्माण कर रहे थे, वैज्ञानिकों के सहित राम जब भ्रमण कर रहे थे, तो उन्हें पर्वतों से गन्ध आई, और वह जब रोहिणी व्रेतकेतु एक धातु होती है, उसकी जब गन्ध आई, तो उन्होंने कहा प्रभु! यहाँ तो कहीं यन्त्रों का निर्माण हो रहा हैं, वह विश्वामित्र और कुछ ब्रह्मचारी भ्रमण करते, उनके यन्त्रालय को उन्होंने दृष्टिपात किया।तो यह घ्राण इन्द्रियों का विषय है, उसे त्याग करके गमन किया, कहीं एक योगी भयंकर वनों में जब भ्रमण कर रहे थे, तो कागभुषण्ड जी और महर्षि लोमश मुनि महराज वह अपने में विचार विनिमय कर रहे थे, और विचार विनिमय करके वह विचार दे रहे थे, वायुमण्डल श्रोत्रों से, वायु की तरंगों से, उन्होंने यह ग्रहण कर लिया, जान लिया, कि यहाँ दो ऋषि विद्यमान है, और आत्मा की चर्चा कर रहे हैं, वह अनुभव वायुमण्डल से प्राप्त करना यह बड़ा सहज था। 21.02.1988

398 सुरसा

महाराजा खरदूषण उनके सेनापति थे। महाराजा सम्पाति से जो सुन्ध नामक राष्ट्र उन्होंने अपनाया था, सुरसा उस राष्ट्र की अध्यक्षता करती रही। सुरसा, श्वाम भानु उनके यहां एक वैज्ञानिक, रहते थे, जिन्होंने यहाँ सूर्य की किरणों के साथ यन्त्र गति करता था, वह श्वानू नामक जो वैज्ञानिक थे, सुरसा उनकी पुत्री थी। इनकी कन्या थी, यह बड़ी कुशलता को प्राप्त होती रहती थी। 13.10.1984

399 वैज्ञानिक जामवन्त

जामवंत जी वृद्ध थे और वैज्ञानिक थे। समुद्र के तटों पर वह विज्ञान के एक मचान को निर्माणित करते रहते थे, जिस मचान के द्वारा समुद्र

में ऐसे ऐसे यन्त्रों को निर्धारित करने वाले थे, जिन यन्त्रों में वायुमण्डल से एक यन्त्र आ रहा है, उस यन्त्र के जो ऊर्ध्वा भाग में आता है तो ऊपरी भाग में, अपने यन्त्र को, वह अपने में धारणकर लेता था। उस आकर्षण शक्ति से यन्त्र को अपने में खींच लेता था उसे नष्ट कर देता था। इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करने वाले महाराजा जामवंत थे, वे राजा थे। राजा रावण ने इन सबके राज्यों को पराधीन कर लिया, आधुनिक काल का जो विज्ञान है वह कुछ जानता है और कुछ निचली इकाई में रमण कर रहा है। आधुनिक काल का विज्ञान वायुयानों का निर्माण कर रहा है, आग्नेय अस्त्रों का निर्माण कर रहा है, परन्तु नाना प्रकार के यन्त्रों में यंत्रित हो रहा है, जब अग्नि काण्ड का प्रहार कर दिया जाता है, तो जलाशय यन्त्रों की कोई कृतिका दृष्टिपात नहीं आती।

जब भगवान राम और रावण का संग्राम हो रहा था, तो महाराजा कुम्भकरण जी ने, यन्त्र का प्रहार किया था। महाराजा मेघनाद ने भी एक यन्त्र का प्रहार किया था, वह यन्त्र ऐसा था, कि यन्त्रों का जैसे ही प्रहार किया, तो नीचे जलाशय बन गया और अग्नि की वृष्टि होनी प्रारम्भ हो गई, सेना नष्ट होने लगी, जब सेना नष्ट होने लगी, तो त्राहि त्राहि हो गई।

भगवान राम को महाराज जामवंत ने एक यन्त्र दिया था। भारद्वाज की शिष्या शबरी ने एक यन्त्र दिया था, उसको वरुणास्त्र कहते थे। उन्होंने वरुणास्त्र को जैसे ही प्रहार किया, उस अग्नि को निगल गया और जल को अपने में शोषण कर गया और उस यन्त्र का प्रभाव समाप्त हो गया। तो, इस प्रकार यन्त्रों का निर्माण परम्परागतों से होता रहा है।

आधुनिक काल के विज्ञान में वरुणास्त्रों का निर्माण हो गया है। वरूणास्त्रों में आधुनिक काल का राष्ट्र एक दूसरे राष्ट्र को नष्ट करने के लिए विचारधारा बना रहा है, निर्माणित कर रहा है। प्राणी मात्र को नष्ट करने के लिए यन्त्रों के निर्माण हो रहे हैं। वरुणास्त्रों का निर्माण भी होने लगा है, परन्तु इतना नहीं, जो महाराज इन्द्र के यहाँ से मेघनाद को प्राप्त हुआ था। जो भगवान राम को जामवंत से प्राप्त हुआ। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज से राम को प्राप्त हुआ था। 09.03.1982

विभिन्न लोकों में भगवन कृष्ण की यात्रा

भगवान कृष्ण यह भी जानते थे, कि मैं मंगल की यात्रा कर सकता हूं। मंगल की यात्रा करने के लिए, उन्होंने सौनिक नाम के एक यन्त्र को निर्धारित किया, था जिस यन्त्र में विराजमान होकर के उन्होंने ऐसे महान सूक्ष्म परमाणुओं को जानने का प्रयास किया, जो पंचम नाम का जैसे परमाणु, महापरमाणु, त्रिस्रेणु, चर्तुस्रेणु, पंचस्रेनु, अकरेती और सातवां जो स्रेणु होता है, उसको जान करके सातवां स्रेणु होता है, वह इतना सूक्ष्म और शक्तिशाली होता है, कि वह मंगल में यात्रा करने में सफल हो जाता है। भगवान कृष्ण यन्त्रों में विराजमान होते और वह लोकों की यात्रा कर लेते थे। परन्तु आत्मा रूपी यन्त्र को बना करके, लोक लोकान्तरों की क्या, परमात्मा के सर्वत्र ब्रह्माण्ड में भ्रमण कर लेते थे। 03.09.1969

400 वैज्ञानिक भगवान कृष्ण

तो जब वह उनके द्वार पर पंहुचे तो, भगवान कृष्ण ने कहा आओ, हे वैज्ञानिकों! विराजमान हो जाओ। विराजमान हो जाने के पश्चात भगवान कृष्ण ने कहा कहो बब्रीक, तुम्हारा आगमन कैसे हुआ? तुम तो तीनों ही महा विज्ञान के गर्भ में भ्रमण करते हो, आज तुम्हारा आगमन कैसे हुआ?

तो महाराजा बब्रीक ने कहा, हे प्रभु! यह वेदमन्त्र है और वेदमन्त्र कहता है क्या हमारा जो नेत्रों में प्रकाश आता है, क्योंकि निर्माण करने वाला प्रभु है। निर्माण होता है माता के गर्भ से। क्यांकि वही उसकी स्थली बनी हुई है तो यह निर्माण हो गया है और जिस वस्तु का निर्माण होता है वह जड़वत है। निर्माण करने वाला चैतन्य है। परन्तु, हम यह जानना चाहते हैं, उसमें ज्योतिर्लिंग को कौन भरण करता है?

तो इस चिन्तन में भगवान कृष्ण भी लग गए और भगवान कृष्ण ने उस समय यह कहा कि मेरे विचार में तो यह आता है कि यह जो अग्निम, उनमें जो प्रकाश आता है, वह एक अणु है, वह एक परमाणु है, वह एक अणु की कृतिका कहलाती है। वह प्रकाश अणु के गर्भ में एक आत्मा विद्यमान है, उस अणु कृति को हम आत्मा कहते हैं, कृतिका भी कहते हैं। वह इस शरीर में विद्यमान है और विद्यमान हो करके उस आत्मा का प्रकाश गति करता है। आत्मा का प्रकाश जब गति करता है, वही इस प्रकृति के परमाणुओं से मिलान करता हुआ, अपने में साकार और सूक्ष्म स्वरूप को धारण करता रहता है।

तो जब भगवान कृष्ण ने यह उत्तर दिया, तो उन्होंने कहा प्रभु! मैं विज्ञान की दृष्टि से दृष्टिपात करना चाहता हूँ। उन्होंने कहा, तो विज्ञान तो यह कहता है, वेद का मन्त्र भी तुमने दृष्टिपात किया होगा। हे वैज्ञानिकों! वेद का मन्त्र कहता कि एक परमाणु है और उस परमाणु के गर्भस्थल में एक सूक्ष्म परमाणु ओर है। उस परमाणु में इतनी शक्ति है, जब उसका विभाजन किया जाता है, कि जब उससे परमाणु संघर्ष करने लगते हैं, तो वह परमाणु अग्नि का चयन करते हैं। अग्नि का चयन करते हुए, वही सूक्ष्मवत बन करके, आत्म ज्योति के रूप में प्रगट होते रहते हैं उसे आत्म ज्योति कहलाते हैं, जो अनुभव का विषय है। वह इन्द्रियों का विषय नहीं है। प्रकृति का विषय नहीं है, तरंगों का

विषय नहीं है, वह समाधि और आनन्दवत का विषय कहलाता है।
तो उन्होंने कहा प्रभु! हमने एक यन्त्र का निर्माण किया है, उसके ऊपर तुम अपनी टिप्पणी दो। उन्होंने कहा कि हमने एक यन्त्र का निर्माण किया है, कि मंगल और बुध के मध्य में एक यन्त्र का निर्माण किया है, और उस यन्त्र का आयु लाखों वर्षों का है और उस यन्त्र से गति प्रवाह होते रहते हैं, समुद्रों से उसका मिलन होता है, तो उस मिलन में, उस दीपावली की छाया में, जो भी यन्त्र आ जाता है, वह भस्माभूत हो जाता है। उस यन्त्र का एक एक कण भी प्राप्त नहीं होता।क्योंकि वे परमाणु इतने शक्तिशाली हैं, इतनी शक्तिशाली ऊर्ज्वा है, जिस ऊर्ज्वा से सूर्य प्रकाश देता है, जिस ऊर्ज्वा से द्यौ अपने में द्यौ बनी रहती है, जिस जिस अग्नि के द्वारा, जिन जिन परमाणुओं से वह गति करने वाला जगत एक सूत्र में गति कर रहा है, वही इस प्रकार, ऐसा यन्त्र हमने निर्माणित किया है। उसकी छाया पृथ्वी पर आती है और पृथ्वी पर भी समुद्र के एक भाग में जाती है और समुद्र के जैसे ही भाग में पहुंचती, वहाँ से वह परमाणुओं को निगलना प्रारम्भ कर देता है। जब वह परमाणुओं का निगल लेता है, वह आभा प्रति नाम के परमाणु हैं, जिन परमाणुओं का समन्वय ले करके, हमने अन्तरिक्ष में से एकयन्त्रानम् वृत्त बनाया है और वह यन्त्र उसमें स्थिर है और उसकी छाया जाती है, वह यन्त्र, पृथ्वी मण्डल के यन्त्रों को अपने में निगल जाता हैं। अहा जब इस प्रकार के यन्त्र का, उन्होंने निर्णय कराया, तो भगवान कृष्ण ने कहा, भई! वाक् तो तुम्हारा यथार्थ है। चलो, यन्त्र को दृष्टिपात करते है। वह अपनी विज्ञानशाला में ले गए, विज्ञानशाला में उन यन्त्रों को उन्होंने दृष्टिपात किया। इस प्रकार का प्रतिपादन विज्ञान में युगों में प्रायः होता रहा है। 09.03.1982
विद्यालयों में विज्ञान की बहुत सी यहाँ आचार संहिताएँ थीं। एक आचार संहिता यहाँ घटोत्कच्छ के द्वारा निर्माणित हुई थी, जिसमें महाराजा बब्रीक, महाराजा अर्जुन, भगवान कृष्ण और गुरु द्रोणाचार्य ने विद्यमान हो करके एक आचार संहिता बनाई थी। उस काल में, यहाँ हिमालय के पार से एक वैज्ञानिक आया था, जिसका नाम भुवोवाचिक था।और भुवोवाचिक ने यहाँ आ करके, एक वेदमन्त्र को ले करके, एक पातालपुरी से भी एक वैज्ञानिक आया, जिसका नाम बब्रीक कहलाता था।उन्होंने आकर के यहाँ एक आचार संहिता बनाई। एक यन्त्र का निर्माण हुआ था, वह यन्त्र, धातुओं को मिश्रण करके, धातुओं का वृणीत करते हुए, एक समुद्र की उत्तरी ध्रुव के आँगन में, उसके ऊर्ध्वा भाग में, एक यन्त्र का निर्माण किया गया था। जिस यन्त्र की यह विशेषता थी, कि कोई भी धातु का यन्त्र, यदि पृथ्वी के जलों का, पृथ्वी की वृणियों का, कोई भी यन्त्र उसमें प्रवेश हो जाए, तो प्रवेश हो करके जहाँ उसकी छाया आ जाए, तो सर्वत्र को, उसकी छाया निगल जाती है।
जब निगल जाती थी तो वह यन्त्र महाराजा बब्रीक के द्वारा महाभारत के काल में रहा। जब महाभारत काल में वह यन्त्र रहा, वह यन्त्र उन्होंने अन्तरिक्ष में, जहाँ चन्द्रमा और पृथ्वी के कक्ष की, जहाँ सीमा थी कृतिका लगती है, वहाँ उन्होंने यन्त्र को स्थिर कर दिया और स्थिर करके जिसकी आयु लगभग दस हजार पचास वर्ष छः माह और पांच दिवस का कहलाता है। वह यन्त्र आज भी विद्यमान है, उसकी छाया वर्तमान के समुद्रों के तटों पर आती रहती है और उसकी छाया जब आती है, तो वह यन्त्र को विध्वंस कर देता है और उसका एक अंकुर भी प्राप्त नहीं होता। चाहे वो वायुयान हो, चाहे वह जलयान हो। कोई भी यान हो, परन्तु, वह नष्ट हो जाता है। प्राणी भी प्राप्त नहीं होता।
आधुनिक काल का विज्ञान अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके यह विचारता रहता है कि यह क्या कोई देव है? कुछ वैज्ञानिक उसे देव कहते है। कुछ वैज्ञानिकों ने यह कहा कि हमारे पूर्वकाल के जो वैज्ञानिक हैं, उसका यन्त्र है। परन्तु कुछ निर्णय नहीं कर सके हैं।
आधुनिक काल के विज्ञान की जो संहिता है, आचार संहिता, उसकी प्रणाली इतनी विचार और महानता में नहीं पहुँची है, जो पुरातन के विज्ञान को अपने विज्ञान में मापने वाला बन जाए। मापा नहीं जा रहा है। आधुनिक काल के यन्त्रों का आयु केवल सौ सौ वर्षो का ही बना है। परन्तु पुरातन के यन्त्रों की आयु लाखों लाखों वर्ष की बन करके स्थिर हो रही है, और गति कर रही है। कोई चन्द्रमा की गति कर रहा है, कोई मंगल की गति कर रहा है, कोई सूर्य की किरणों में रमण हो रहा है। 25.02.1985

401 भगवान कृष्ण का षोडश कला विमर्श

भगवान श्रीकृष्ण इन षोडश कलाओं को जानकर नित्य प्रति साधक साधक रहते थे और राष्ट्रीय विधान में भी राष्ट्रीयवेता रहते थे। प्रातः काल में जब रात्रि रहती थी, तारामण्डल अपना प्रकाश लिए हुए होते थे, रात्रि के गर्भ में, उस समय अपने स्थान को त्याग देना और चिन्तन करना निदिध्यासन करना, यौगिक परिक्रियाओं पर विचार विनिमय करना, विशालता को विचारना जैसे प्राचीदिग् है, दक्षिण दिग् है, प्रतीचि दिग् है और उदीची दिग् है, इन चारों दिशाओं को वह जानने का प्रयास करते रहते थे, उनमें कितना व्यापकयाद है, एक दूसरी दिशा में कितनी सुगठितता है, जैसे पृथ्वी है, इसमें कितना खनिज है, कितना खाद्य है, इन सब पर विचार विनिमय करना और वायु में कितनी तरंगे हैं, कितने वेग से भ्रमण करती है, किस किस समय में क्या क्या कार्य करती है, यह सब जानने का प्रयास करते रहे, कि समुन्द्र

में कितने प्रकार के प्राणी रहते हैं, किस प्रकार से उत्थान होता है, यह सब कुछ जानने का वह प्रयास करते रहते थे। इन बारह कलाओं को जानने के पश्चात, वह जानते थे, कि हम इन बारह कलाओं के ऊपर संयमी कैसे बन सकते हैं।उन्होंने विचारों में, एक लेखनीबद्ध की थी। उन्होंने कहा था हमें अपनी चारों कलाओं को अच्छी प्रकार नहीं जानेंगे तो इन पर संयम कर नहीं पाएगे, वे चारों कलाए कौन सी हैं? उनमें सबसे प्रथम मन कला, चक्षु कला, श्रोत्र कला और घ्राण कला, इन चारों कलाओं का ज्ञान होने के पश्चात हम इस संसार के ब्रह्मवेता, संसार के विज्ञानवेता, भौतिक औरआध्यात्मिक दोनों में विशालता को प्राप्त हो सकते हैं। इन सब कलाओं को जानने वाला संसार में एक महान योगी कहलाता है, किस प्रकार का योगी? आज कोई यह उच्चारण करने लगता है, कि मैं चन्द्रमा में, मंगल में और बृहस्पति में जाने वाले यन्त्रों का निर्माण करना चाहता हूं। 04.09.1969

402 महाभारत युद्ध में भगवान कृष्ण

जब महाभारत का संग्राम हुआ, उसमें भगवान कृष्ण ने एक सोमकृति नामक रेखा को स्थिर किया। उन्होंने जितने क्षेत्र में संग्राम होने वाला था, अणु शक्ति का, परमाणु शक्ति का संग्राम होने वाला था, परन्तु जब संग्राम हुआ, परमाणु जो शक्ति थी, उस रेखा से बाह्य जगत में नहीं जाती थी। परन्तु आधनिक काल ऐसा है द्वितीय राष्ट्र अपनी विज्ञानशाला में विद्यमान है और वह यन्त्रों का प्रहार कर रहा है, तो राष्ट्र भस्म हो सकता है, परन्तु उसको शान्त नहीं कर सकता। 23.02.1980

स्वाति मुनि का विद्यालय

द्वापर के काल में महाराज अर्जुन की मंगल मण्डल तक उड़ान रही, और मंगल में जा करके, वह विद्या का अध्ययन करते रहे, इसी प्रकार स्वाति मुनि के यहाँ प्राण विद्या को अपने में समेटने के लिए, बालि के पुत्र अंगद जी विद्यमान थे, उसमें नाना ब्रह्मचारी भी अध्ययन करते थे, स्वाति मुनि के यहाँ उस काल में दौ सौ ब्रह्मचारी केवल प्राण विद्या के अध्ययन के लिए तप कर रहे हैं, कि हमें प्राण विद्या को जानना है और प्राण को हमें उदान और समान सर्वत्र धाराओं को जानना हैं, ऋषि के यहाँ, जहाँ अंगद जी थे, वही राजा रावण के पुत्र मेघनाद जी भी, शिक्षा अध्ययन करते रहते थे, वह भी प्राण विद्या को अपने में धारयामि बनाने वाले, बड़े वैज्ञानिक थे, इन्द्र के यहाँ उन्होंने शिक्षा का अध्ययन किया, मंगल मण्डल में यन्त्रों के द्वारा, वह मंगल में जा करके, उन्होंने इस विद्या का अध्ययन किया। 27.10.1989

403 महाराजा अर्जुन और भीम के वैज्ञानिक पुत्र

महाराज बब्रीक, वभ्रुभान और घटोत्कच्छ ये पूर्व अपने ही एक ही हस्तिनापुर में जो एक वंशलज था। उस वंशलज में इनका जन्म हुआ। बभ्रुभान महाराजा अर्जुन का पुत्र था। बब्रीक भी उन्हीं का पुत्र था और यह घटोत्कच्छ भीम के पुत्र कहलाते थे। तीनों विशेषज्ञ वैज्ञानिक थे। ऐसे महान वैज्ञानिक थे, कि वेद के अगाध समुद्र में जाकर के, एक एक वेदमन्त्र के ऊपर अन्वेषण करते हुए, यह अपने में कृत्य करते रहते थे। उन्होंने एक यन्त्र, जो अग्नि की धाराओं में, अणु की प्रतिभा में रमण करते हुए, उस काल में उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था। एक समय भ्रमण करते हुए महर्षि समीक ऋषि महाराज बब्रीक के आश्रम में पहुंचे। जब बब्रीक की शाला में, उन्होंने प्रवेश किया, तो बब्रीक ने ऋषि का स्वागत किया और समीक ऋषि ने कहा हे वैज्ञानिको! तुम इस चिन्तन में किसी काल में पहुंचे हो, जैसे वेद का मन्त्र कहता है, प्रकाशां भविता प्रकाशां रूद्रा प्रकाशां नेत्रा द्यौ प्रकाशं लोकं ब्रह्मे, वेद का ऋषि कहता है कि हे ब्रह्मचारी! हे कृत्य करने वाले! हे वैज्ञानिक! यह मन्त्र क्या कहता है? यह मन्त्र यह कहता है कि इस मानव के नेत्रों का प्रकाशक कौन है?माता के गर्भस्थल में नेत्रों का निर्माण होता है, प्रत्येक इन्द्रियों का निर्माण होता है। निर्माणवेत्ता कौन है और उनमें ज्योति प्रदान करने वाला कौन है? इस ज्योतिर्मय लिंग को हम जानना चाहते हैं। 09.03.1982

404 महाराजा अर्जुन

यह राष्ट्रवाद मानवीयता में रत रहने वाला है, विज्ञान की ऊँची ऊँची उड़ाने उड़ता रहता है, कहीं सूर्य मण्डल की यात्रा कर रहा है, कहीं मंगल में यात्रित हो रहा है, कहीं बुध में जाने के लिए तत्पर हो रहा है, मानव अपनी यात्रा बनाता रहता है, यात्री बना रहता है।

त्रेता के काल की वार्ताएं हैं, कि महाराजा अर्जुन इतनी महान तपस्वी थे, वे तीन वर्ष तक मंगल मण्डलों में, आचार्यों से, वह अस्त्रों शस्त्रों की विद्या को प्राप्त करते रहें, तो वह अपने में मार्गशालाएं, मार्गों के निर्माण कर रहे हैं, लोक लोकान्तरों में जाना मानव ने अपने यातायात बनाए, परन्तु मानवीयता क्या है? कि इसके ऊपर मुझे कुछ विचार विनिमय करना है, कि मानव अपने में लोकों की यात्रा से ही पूर्णता को प्राप्त भी हो जाता है, महर्षि भारद्वाज मुनि के यहां नाना वैज्ञानिक जन अपने यन्त्रों में विद्यमान हो करके बहत्तर बहत्तर लोकों का वैज्ञानिक बना है, ब्रह्मचारी सुकेता से एक समय भारद्वाज मुनि ने कहा हे ब्रह्मचरिष्यामि! तुम लोकों की यात्रा करने चलने जाओ, यन्त्रों में विद्यमान हो करके, राजा रावण के पुत्र नारान्तक और ब्रह्मचारी कवन्धि और सुकेता तीन यात्री उड़ान उड़ने लगे हैं, महर्षि तत्व मुनि महाराज के आश्रम में, भारद्वाज मुनि भी अध्ययन करते थे, यात्री बन करके उडान उड़ना, जब उड़ान उड़ने लगे, तो सबसे प्रथम पृथ्वी से उड़ान उड़ता

है विज्ञानवेता, तो यहां से वह सबसे प्रथम चन्द्रमा में जाता है, चन्द्रमा से उड़ान उड़ता है, तो वह बुध में चला जाता है, बुध से उड़ान उड़ता है, तो वह शुक्र में चला जाता है, शुक्र से उड़ान उड़ता है, तो एक यन्त्र वह मंगल में चला जाता है, और मंगल से उड़ान उड़ता है, तो वह मृचिका मण्डल में प्रवेश हो जाता है, और मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो स्वाति रेणकेतु मण्डल में प्रवेश हो जाता है, रेणकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो वाणकेतु मण्डल में चला जाता है वाणकेतु मण्डल उड़ान उड़ी, तो वह अरुण्धति मण्डल में चला गया, और अरुण्धति मण्डल से उड़ान उड़ी, तो विश्वभान मण्डल में प्रवेश हो गया और विश्वभान मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वह वशिष्ठ मण्डल में चला गया, विचार क्या, बहत्तर लोकों का भ्रमण करके विज्ञानवेता इस पृथ्वी मण्डल पर आते रहे हैं। 08.08.1990

405 महाराजा अर्जुन का वैज्ञानिक पुरूषार्थ

जब मुझे महाभारत का वह काल स्मरण आता है, तो मैं अर्जुन के पुरूषार्थ और उनका जो क्रियाकलाप है, वह बड़ा विचित्र रहा है। उन्होंने विज्ञान के यन्त्रों में महान पुरूषार्थ किया और पुरूषार्थ इतना किया कि वह अपने यन्त्रों में विद्यमान हो करके, जो महाराजा इन्द्र की सहायता से उन्होंने यन्त्रों का व्यवधान किया और यन्त्रों में विद्यमान हो करके, वह मंगल की यात्रा करना और वहाँ के वैज्ञानिकों से नाना प्रकार की विद्या का अध्ययन करना, यन्त्रों को क्रियात्मकता में जानना, वह उनका विज्ञान, उनका पुरूषार्थ बड़ा विचित्र रहा है। 12.03.1992

406 महाराजा शिव और पार्वती

महाराजा शिव और पार्वती दोनों ही विज्ञान में रत रहते थे, और विज्ञान की वह उपलब्धि वह उनके द्वारा थी, यन्त्रों के ऊपर विद्यमान हो करके, वह लोक लोकान्तरों की यात्रा भी होती रही है। नाना प्रकार की जो यात्रा है, यात्री बन करके, वह कहीं मंगल में रमण करता है, वहां के प्राणियों से अनुभव करता है। जिस काल में मानव बहुत ऊँची उड़ाने उड़ता रहता है, भगवान कृष्ण और अर्जुन जब इन्हें वन की प्राप्ति हो गई थी, तो भयंकर वन में, दोनों अपने में विद्यमान हो गए, क्योंकि उनका मित्र सखा भाव था और अपने हृदय से हृदय का मिलान करते रहते थे।भगवान कृष्ण ने कहा हे अर्जुन! तुम्हें कुछ करना है, और तुम्हें अपने में सफल रहना है, अस्त्रों शस्त्रों का निर्माण करना है, उन्होंने कहा बहुत प्रियतम, जैसी प्रभु! आपकी इच्छा हो, मैं वैसा ही कर पाऊंगा।उन्होंने कहा तुम विज्ञान के युग में प्रवेश हो जाओ, और वैज्ञानिक बन करके वैज्ञानिक यन्त्रों को तुम साकार में लाने का प्रयास करो। 07.09.1990।

407 राजा के मोह से रक्त क्रान्ति

उन्होंने कहा प्रभु मेरा कोई विचित्र विचार नही बन रहा है। मुझे कोई निर्णय दीजिए, उन्होंने कहा कि यह है, कि तुम अपने में पुरूषार्थ करो, और यन्त्रों का संग्रह करने का प्रयास करो, जिससे वह काल आ रहा है, उस भविष्य काल में तुम्हें कुछ करना है। क्योंकि राष्ट्रवेता मोह ममता में परिणत हो जाता है, जब भी राजा को मोह हुआ है, उसी काल में रक्तभरी क्रान्ति आई है।

हे अर्जुन! जाओ, तुम तपस्या करो, और महाराजा शिव की तपस्या करो, और तुम मानवीय कृतियों में रत हो जाओ। तोअर्जुन ने यह कहा, तो भगवन! मेरी इच्छा यह है, कि मैं लोक लोकान्तरों की यात्रा में चला जाऊं, और जो लोक लोकान्तरों में बह रहा है, उसे मैं अपने में गृहण करुं। 07.09. 1990।

408 महाराजा अर्जुन का विज्ञान विमर्श

उन्होंने कहा बहुत प्रियतम! महाराज अर्जुन को उनकी कृतियां, उनके अनुभव की चर्चाएं, जब करता हूँ तो हृदय गदगद हो जाता है क्योंकि मानव को अपने अपने रूपों में रत करने वाला है, तो वह अपने में आज्ञा पा करके तपस्या में परिणत हो गए, और ऐसे यन्त्रों का निर्माण करने लगे, जिन यन्त्रों में विराजमान हो करके लोकों की यात्रा करते थे।

तो उस काल में यह कहा कि हे प्रभु! अब मैं गमन कर रहा हूँ, तो वह अपने यन्त्रों में विद्यमान होते और मंगल के लिए गमन करते हैं, मंगल में उनका प्रवेश हुआ, क्यांकि वहां उस समय एक विज्ञानवेता थे, और उस विज्ञानवेता के नामोकरण में, यह उनका जो विज्ञान हैं, उसमें वह निहित रहे, उन्होंने मंगल मण्डल में यह संकल्प किया था, कि मैं छह माह तक मंगल में रह करके, विद्या अध्ययन करूंगा और यन्त्रों का मुझे अनुभव हो जाएगा, यह एक आकांक्षा बनीअ।महाराजा अर्जुन अपने यन्त्र में विद्यमान हो करके, जब मंगल में प्रवेश कर गए, तो मंगल का विज्ञानवेता था, उस मंगल में विज्ञानवेता का नाम था सुधुनकेतु उनका नामोकरण था, और वह विज्ञान में बड़े पारायण थे, विज्ञान उनकी मौलिक प्रक्रिया कहलाती थी। विज्ञान अपने में बड़ा शाश्वत बन करके रहता है, तो विज्ञान की उस कक्षा को ग्रहण करने लगे, प्रातःकाल होता, अपनी क्रियाओं से निवृत हो करके, और वह विज्ञानवेता बनने के लिए, अस्त्रों शस्त्रों की विद्या को ग्रहण करने लगे, सुधेनवेतु विज्ञानवेता बड़े महान थे, जो यहां से शिक्षा ले करके मंगल में पंहुचे, मंगल का और पृथ्वी का कई समय यातायाता बनाया, सृष्टि के प्रारम्भ से, वर्तमान काल तक कई काल तक उसकी रुपरेखा बनी है।

मंगल मण्डल में जा करके, उन्होंने अस्त्रों शस्त्रों की शिक्षा का अध्ययन किया और वह शिक्षार्थी बन करके, उस मानव का एक ही वचन था, कि यहां बड़ा पुरूषार्थ और मार्मिकता की आभा की आवश्यकता हैं, अपने में बड़ी विचित्र एक वार्ता प्रत्येक मानव के समीप आती रहती है, क्योंकि मैं प्रकाश में हूँ, यह आकांक्षा बनती है कि मैं प्रकाश में चला जाऊं।

प्रत्येक मानव की यह आकांक्षा बनी हुई है जिसे मैं उदगीत रुप में गाना चाहता हूँ, छह माह तक, उन्होंने अस्त्रों की शस्त्रों की शिक्षा का अध्ययन किया और वह अपने यन्त्रों से और भी लोकों की यात्रा करते रहे हैं, तो विज्ञान अपने में बड़ा सार्थक माना गया है, विज्ञानवेता बन करके ही, विज्ञान की महान उपलब्धियां होती रहती हैं और उन्हीं के मूल में सर्वत्र ब्रह्माण्ड की, मैं कल्पना करता रहता हूँ, वह उस यन्त्र में विद्यमान हो करके, अपने में यह चाहते हैं, कि मंगल मण्डल का भ्रमण करूं, उन्होंने भ्रमण किया और छह माह तक उन्होंने, अस्त्रों शस्त्रों की विद्या का अध्ययन करते थे, उन्होंने बड़े महान मार्मिक यन्त्रों का निर्माण किया, क्योंकि वह जो यन्त्र अपने लोक में छह माह तक शिक्षा का अध्ययन, और विज्ञानवेता, विज्ञान की उपलब्धियां और ऐसे ऐसे यन्त्रों को उन्होंने जाना, क्योंकि यह एक काल का अभ्यस्त था, आज भी यह विवेचना कृतियों में रत रही हैं जैसे यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके अग्नि के मुखारबिन्दु में नाना प्रकार का साकल्य प्रदान करता रहा है और वह स्वाहा कह करके अपनी वाणी को, अपने शब्द को अग्नि की धाराओं पर विद्यमान करा देता है, इसी प्रकार विज्ञानवेता भी नाना प्रकार की तरंगों को जान करके, वह लोक लोकान्तरों की यात्रा में सफलता को प्राप्त हुए, मंगल मण्डल से अर्जुन छह माह में वह पृथ्वी मण्डल पर गमन करता है, क्योंकि वहां भी पार्थिव तत्व रुप माना गया है।, जैसे अर्जुन है यह अपने में महान मार्मिक विज्ञानवेता है और वह जब वह मंगल से आए, तो पुनः भगवान कृष्ण से उनका मिलान हुआ और कृष्ण से वार्ता प्रगट की, उन्होंने कहा प्रभु! हम आपकी संरक्षणता में कुछ विज्ञानवेता की एक धारा को जानना चाहता हूँ। 07.09.1990।

409 अर्जुन द्वारा शिव की तपस्या

उन्होंने कहा कि मैं यन्त्रों में रत रहना चाहता हूँ, उन्होंने कहा नही, अर्जुन! तुम शिव की तपस्या करो, शिव की तपस्या के लिए वह तत्पर हो गए, शिव बड़े विज्ञानवेता थे, और वह हिमालय की कन्दराओं में रह करके, जैसा अपना विचार, अपने राष्ट्र को ऊर्ध्वा में गमन कराने से, वह शिव कहलाते थे, और अर्जुन ने छह माह तक तपस्या की, पत्र और पुष्पों को पान करना, तपस्या करना, महाराजा शिव से उन्होंने नाना प्रकार के यन्त्रों का आह्वान किया, और यह कहा कि प्रभु! मुझे विज्ञानवेता बना दीजिए, मैं विज्ञानवेता और बनना चाहता हूँ। 07.09.1990।

410 अश्वेतकेतु यन्त्र

उन्होंने कहा बहुत प्रियतम छह माह के पश्चात, उन्होंने अश्वेत केतु यन्त्र प्राप्त किया, और वह सफलता को प्राप्त हुए, महाराजा शिव अपने में बड़े विज्ञानवेता थे, वह अपने में आध्यात्मिकवेता भी थे, और आध्यात्मिक और भौतिकवाद दोनों का मिलान करना, उनका कर्तव्य है। मैं भगवान शिव की चर्चा कर रहा था। शिव उसे कहते हैं, जो राष्ट्रवेता होता है, जो विचारों में महान और यन्त्रों में विज्ञान में विशेष कहलाता है, इस प्रकार महाराजा शिव अपने में ही, उस महान विज्ञान को दृष्टिपात करने लगे, वह विज्ञान अपने में बड़ा एक अनूठा है पवित्रता से युक्त है, प्रत्येक मानव अपने में मानवीयता का दर्शन करता रहे, विज्ञान की उड़ाने उड़ता रहे, परन्तु जहां ज्ञान और विज्ञान की उड़ान उड़ता है, वहीं एक संसार, एक नवीनता में दृष्टिपात आने लगता है।

हमारे यहां नाना प्रकार का यातायात बना रहा, नाना प्रकार की मानव कल्पना करता हुआ, मंगल की प्रतिभा में रत हो गया, तो यह अपने में बड़ा अनूठा जगत है, बड़ी अनूठी एक विचारधारा वैदिक साहित्य में, हमें प्राप्त होती रही है। एक एक वेद का मन्त्र, अपने में बड़ा सार्थक माना गया है, एक एक वेद के मन्त्र में, सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान विद्यमान रहा, जैसे भगवान शिव की चर्चा आती है भगवान शिव अपने में बड़े अनूठे क्रियाकलाप वाले थे, उनका ज्ञान और उनका, जो विचार शारीरिक जितनी भी प्रतिक्रियाएं, वह बड़ी अनूठी बन करके रही हैं, उसी विज्ञान की प्रतिभा में रत रहें, नाना प्रकार के यागों में वह परिणत रहे हैं।उन्होंने कहा कि एक धनुर्याग की रचना होनी चाहिए, धनुर्याग की रचना, वह उन्होंने महाकृतिका में, और भगवान शिव और कृष्ण जी के मध्य में उनके सानिध्य में वह रचना हुई, और वह ज्ञान और विज्ञान की रचना थी, जिससे मानव अपने में अपनेपन को विचारता रहे, नाना यन्त्रों का निर्माण करता, जिससे अपनी सहायता करता रहे। 07.09.1990।

411 महाराजा बर्बरीक और महाराजा घटोत्कच्छ द्वारा निर्मित यंत्रों का प्रभाव

महाराजा बर्बरीक और महाराजा घटोत्कच्छ के द्वारों एक यन्त्र का निर्माण हुआ था, यन्त्र अभी वर्तमान काल में भी विद्यमान है। वह बुध और मंगल की जहाँ आकर्षण शक्ति का एक रुपण हो रहा है वहाँ वह यन्त्र विद्यमान है। परन्तु ये यन्त्र महाराजा बब्रीत ने, जो पाताल पुरी के राजा कहलाते थे। महाराजा बब्रीत, बब्रुभान और भीम के पुत्र घटोत्कच्छ तीनों ने विद्यमान होकर के यन्त्र का निर्माण किया था और

बुध और मंगल की सीमा वह यन्त्र विद्यमान है।
परन्तु आज पृथ्वी मण्डल पर उस यन्त्र की छाया आ रही है। यन्त्र की छाया आते हुए, आधुनिक काल का जितना भी यन्त्रवाद है जो उस छाया के अन्तर्गत आ जाता है तो वह उसको भस्मीभूत कर जाता है।
आधुनिक काल के वैज्ञानिकों का यह कथन है कि ये कोई एक प्रेत, देव रहता है। उसको असुर भी कहते है। उसको किसी काल में राक्षस रूपों से भी उच्चारण करते हैं। आधुनिक काल का वैज्ञानिक जिन शब्दों का प्रतिपादन कर रहा है। परन्तु जब मैं यह विचारता हूँ कि वह यंत्रों की छाया में, यन्त्र चाहे वायुमण्डल का ही वायुयान हो, चाहे वह जलयान हो, वह कोई भी यान हो, उसकी छायामात्र से भस्म हो जाता है। वैज्ञानिकों को, उसका एक अंकुर भी प्राप्त नहीं होता है 14.05.1984

412 भीम पुत्र के यन्त्र

द्वापर के काल में जब महाराजा भीम का पुत्र घटोत्कच्छ ने यह विचारा कि मैं मंगल और पृथ्वी के मध्य का मार्ग जानना चाहता हूँ तो उन्होंने अच्छी प्रकार जाना। मंगल और पृथ्वी के मध्य को जो देखा है, उसका नाम सोममान नाम की रेखा गया है, परन्तु जो चन्द्रमा और पृथ्वी के मध्य की रेखा है, उसको सोम कृति नाम की रेखा गया है। 31.08.1969

413 वैज्ञानिक घटोत्कच्छ

मुझे महाभारत का वह काल भली भाँति स्मरण आने लगता है। जब भीम और उनके पुत्र घटोत्कच्छ दोनों विज्ञानशाला में विरानमान होते थे। और विज्ञानवेत्ता बन करके वे नाना प्रकार के अणुओं पर अपना अधिपत्य करते थे। महाराजा भीम और उनके पुत्र घटोत्कच्छ ने एक यन्त्र बनाया। जिसको चन्द्र विप्रति यन्त्र कहते थे। वह यन्त्र चन्द्रमा के ऊपर ले कक्ष में भ्रमण करने वाला था।
आज का विज्ञान चन्द्रमा की घोषणा कर रहा है, मंगल की घोषणा कर रहा है। परन्तु मुझे द्वापर का वह काल भली भाँति स्मरण है। जब वैज्ञानिक इस चन्द्रमा के कक्ष के ऊपरले भाग में पहुंचेंगे, तो वहाँ भीम और घटोत्कच्छ के जो यन्त्र हैं, आज भी अन्तरिक्ष में वे यन्त्र भ्रमण कर रहे हैं। आज भी वह चन्द्रमा के ऊपरले कक्ष में भ्रमण कर रहें हैं, उन्होंने लगभग इक्कीस प्रकार के यन्त्रों को उन्होंने अन्तरिक्ष में अप्रेत किया था। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है, वे यन्त्र आज भी हमारे यहाँ विज्ञान परम्परागतों से ऊर्ध्वा रहा है। 03.03.1976

414 द्वापर कालीन यान

यह संसार चन्द्रयान पर जाने से कदापि ऊँचा नहीं बना करता। द्वापर के काल में महाराज भीम और उनके पुत्र घटोतकच्छ दोनों की चन्द्रशालएं होती थी। जब वे चन्द्रशालाओं में विराजमान हो करके निर्माण करते थे, तो चन्द्रयान का निर्माण किया और चद्रमा से उपरले भाग में भ्रमण कर रहे हैं। यदि आज का मानव जब चन्द्रयान से उर्ध्वागति को पहुंचेगा उस समय उन्हें वह यान प्राप्त हो सकते हैं। वह यान कितने विशाल हैं।
एक समय व्यास मुनि आश्रम में महाराजा घटोतकच्छ विराजमान थे और वह उनसे विनय कर रहे थे, हे भगवन! मेरा विज्ञान विशालता को प्राप्त हो रहा हो और चन्द्रमा से ऊँचे हमारे उपग्रह पहुंच चुके हैं, परन्तु आप केवल वेदान्त की चर्चा प्रकट करते रहते हैं। तो व्यास मुनि ने कहा हे पुत्र! यह जो हमारा वेदान्त दर्शन है, तुम यह जानते हो, कि यह चद्रमा तक की वार्ता को नहीं जानता? यह तुम्हारे मन में विश्वास है, परन्तु यह वहाँ तक मानव को पहुंचाता है, वहाँ तक के यानों का निर्माण करता है, जहाँ यह नाना लोक लोकान्तरों का निर्माण होता है, उस निर्माणवेत्ता की वार्ता का स्पष्टीकरण करता है। घटोतकच्छ आश्चर्यचकित हो गए। उन्होंने कहा प्रभु! यह कैसे हो सकता है वेदान्त में ऐसा क्यों प्रकट किया? 23.08.1971

415 भीम उनके पुत्र घटोत्कच्छ के यन्त्र

द्वापर के काल में भीम और उनके पुत्र घटोत्कच्छ के बहुत से यान ऐसे हैं, जिन यानों को आज का वैज्ञानिक, जब चन्द्रमा के ऊपरले कक्ष में जाने का प्रयास करेगा, तो वे यान आज भी इन्हें प्रायः प्राप्त होंगे।
वह पुरातन काल का विज्ञान मुझे प्रायः स्मरण भी आता रहा है, उस विज्ञान की तुलना हम किसी काल से नहीं किया करते, क्योंकि अपने समय का विज्ञान अपने समय की ऊर्ध्व गति को प्रातः प्राप्त होता रहा है।
हमारे यहाँ महर्षि भारद्वाज आदि ऋषियों का भी यह कथन है कि एक यन्त्र का जब हम निर्माण करते हैं, उस यन्त्र में वायु की तरंगें और अग्नि की धाराओं का दोनों का मिश्रण करते हुए जल की उसमें पुट लगाते हुए हम ऐसे विशेष परमाणुओं को एकत्रित करते हैं। उन परमाणुओं को एकत्रित करके यदि हम एक सूक्ष्म से पात्र में, एक यान में स्थिर कर देते हैं और वह यान हमें चन्द्रमा के ऊपरले कक्ष में अथवा सूर्य मण्डल की वह परिक्रमा करने के लिए तत्पर हो जाता है। 25.02.1972।
हमने निश्चय किया है तो इस प्रकार का हम परमाणु एकत्रित करते हैं। उसे जब यान में स्थिर करते हैं, तो उस यान की एक एक क्या कई

लाख वर्ष की अवस्था के लिए उसमें परमाणुओं को भर देते हैं, और वह सूर्य की परिक्रमा करता रहता है। चन्द्रमा की परिक्रमा भी करता है, परन्तु जो वैज्ञानिक केवल दो वर्ष, चार वर्ष, पंचम, दशम वर्ष का परमाणु यन्त्र में परिणत कर सकता है, वह वैज्ञानिक अनुसन्धान करें, तो वह सहस्त्रों और लाखों पर भी जाने को तत्पर हो जाता है। 25.02.1972।

416 द्वापर काल का विज्ञान

द्वापर के काल में जब प्रवेश करता हूँ और घटोतकच्छ और भीम के विज्ञान को विचारता हूँ, तो आधुनिक काल का विज्ञान वहाँ नहीं पहुंच सका। नारान्तक के विज्ञान को विचारते हैं, जब वह अपने यान में उड़ान उड़ता था। अपने यान में सुकेता, जब मार्ग को अपने में ग्रहण कर लेता था, इतनी तीव्र गति वाला यान था। परन्तु वही यान, वहाँ से उड़ान उड़ता, मंगल से, शुक्र में चला जाता है। वहाँ भी दो ही घड़ी का मार्ग है। बहत्तर लोकों का भ्रमण करके पृथ्वी पर आ जाता था। 22.02.1980

417 अंतरिक्ष में घटोत्कच्छ का यन्त्र

आज भी घटोत्कच्छ का विज्ञान, जिसके यन्त्र वायु मण्डल में गमन कर रहे हैं, यहाँ का वैज्ञानिक जब भी अन्तरिक्ष में जाता है, चन्द्रमा के ऊपरले कक्ष में जाता है, मंगल के ऊर्ध्वा कक्ष में जाता है, तो उनका यान या तो नष्ट हो जाता है, या यान में किसी प्रकार की त्रुटियां आ जाती हैं, उन यन्त्रों का मिलन होता है तो उसे अशुद्ध कर देते हैं। 15.03.1992

418 बभ्रु बाहन के अंतरिक्ष में यन्त्र

बभ्रु वाहन का दूसरा यन्त्र जिसकी सहायता से इस पृथ्वी मण्डल वाले अन्य लोक लोकान्तरों के निवासी, लोगों का यथार्थ चित्र खींच लेते थे, उसके पश्चात उन्होंने ऐसे यन्त्र को जाना। जैसे किसी भी लोक से कोई यन्त्र चलता है। संसार के लिए, पृथ्वी मण्डल के लिए, द्वितीय लोक के लिए उसका चित्रण भी उस यन्त्र में उनके समीप आ जाता था। प्रायः उसको ''क्रोगा अनेक'' नाम का यन्त्र कहा जाता था। आधुनिक काल में तो यन्त्रों का प्रादुर्भाव ही नहीं हुआ है। जैसे मंगल मण्डल से कोई प्राणी चलता है। यन्त्रों से युक्त होकर के चलता है। उसका चित्रण उसमें प्रायः आ जाता था। ऐसा प्रायः हमें संसार को दृष्टिपात करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। घटोत्कच्छ तथा बभ्रु वाहन बभ्रीक के छोड़े यन्त्र अश्चित तथा सोमाकृति आज भी अन्तरिक्ष में भ्रमण कर रहे हैं।

उस समय हिरण्यकश्यप की जो भोजाई थी, उसके मन में एक ही विचार रहता था कि मैं मंगल मण्डल की यात्रा करती रहती हूं। उन्होंने शिवास्त्र, रेधनी अस्त्र सब मंगल मण्डल से प्राप्त किए थे, और भी नाना विज्ञान में वह पारंगत रहती थी। एक समय मामनिक ऋषि महाराज ने होलिका से कहा था कि हे देवी! तू मंगल की यात्रा करती है कभी तुझे चन्द्र मण्डल में भी जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है अथवा नहीं। उन्होंने कहा कि मैं चन्द्र मण्डल की यात्रा तो सदैव करती रहती हूं। नाना प्रकार के यन्त्रों के द्वारा चन्द्रमा की यात्रा में सफलता को प्राप्त होती रहती हूं। जब ऋषियों ने कहा कि जिसको हम चन्द्र मण्डल कहते हैं इसमें क्या है?

उन्होंने निर्णय कराया कि यह जो चन्द्र मण्डल है, वहाँ प्राणी रहते हैं, जिन्हें परमात्मा से जीवन प्राप्त होता है, उन्हें प्रकृति से जीवन प्राप्त होता है। जीवन की प्रतिभा उनके मस्तिष्कों में ओत प्रोत रहती है। वहाँ प्राणी वायु की प्रधानता में परिणत रहता है।

आधुनिक काल का वैज्ञानिक है यह कह रहा है कि वहाँ वायु प्रधान नहीं है किन्तु मैं यह कहा करता हूं कि वायु का वास्तविक स्वरूप क्या माना जाता है? वास्तव में पृथ्वी मण्डल पर जहाँ हम वायु का स्वरूप स्वीकार करते हैं कि इस वायु का स्वरूप स्थूल है, वृत्त है, उष्ण या शीतल है तो यह विचार नहीं आ पाता है परन्तु हमें यह सिद्ध होता है कि न तो वायु ऊष्ण है न शीतल है क्योंकि इसका जो स्वरूप है वही प्राणी और वायु की प्रधान मानी जाती है।

यहाँ भी जहाँ पार्थिव तत्व प्राणी रहते हैं, वहाँ भी गति होती है, जहाँ गति होती है वहीं वायु की प्रधानता होती है। जहाँ वायु में तीव्रता नहीं होती, जहाँ केवल मध्यमवाद होता है, ऊष्णवाद होता है वहाँ पृथ्वी के परमाणुओं को अपने में आकर्षण शक्ति के द्वारा ग्रहण कर लेती है। ग्रहण करने के कारण उसी की प्रतिभा वायु ग्रहण करती रहती है। ऊष्ण और शीतल बनाती रहती है। उसी के द्वारा अन्न की प्रतिभा का जन्म होता है, अन्न उत्पन्न होता है, वनस्पतियां उत्पन्न होती हैं क्योंकि परमाणुवाद को ग्रहण करने वाली वायु न हो तो हम प्रभु को स्वीकार ही क्यों करें। यही तो प्रभु का विज्ञान है।

तो उस समय होलिका ने ऋषि से कहा था कि हे प्रभु! वहाँ वायु की प्रधानता मानी जाती है। वहाँ जलाशय प्रबलता में प्राप्त हो जाते हैं। अन्तरिक्ष जो हम दृष्टिपात करते हैं वह एक जलाशय से भरा हुआ है क्योंकि जब यहाँ पृथ्वी मण्डल पर ग्रीष्म ऋतु आती है तो सूर्य की किरणें जल के परमाणुओं का सूक्ष्म रूप बना करके अन्तरिक्ष में ओत प्रोत करा देती है। जैसे एक योगी होता है उसका हृदय और बाह्य अन्तरिक्ष का हृदय दोनों का मिलान हो करके वह अगम्य हो जाता है इसी प्रकार जब सूर्य की किरणें टेढ़ी हो जाती हैं, एक महाभारत

संग्राम में महाराजा बभ्रुवाहन का संकल्प जिस समय महाभारत का संग्राम होने वाला ही था। उस समय अर्जुन के पुत्र बभ्रुवाहन अपने स्थान से महाभारत संग्राम के लिए कुरूक्षेत्र में पहुंचने के लिए अवतरित हो रहे थे। मार्ग में ही भगवान कृष्ण और महाराजा अर्जुन दोनों का समागम हुआ। दोनों सन्यासी रूप में थे। सन्यासी रूप में होने के नाते बभ्रुवाहन उन्हें अच्छी प्रकार जान न सका।

उन्होंने कहा कि आप कौन हैं? उसने कहा कि मैं बभ्रुवाहन हूँ, और मैं पातलपुरी का राजा हूँ। मैं आपके इस महाभारत के क्षेत्र कुरूक्षेत्र को दृष्टिपात करना चाहता हूँ। क्योंकि इसकी जो रज है, वह बड़ी पावन है।मैं उस धूलि को दृष्टिपात करना चाहता हूँ। जब उन्होंने यह वाक्य श्रवण किया तो महाराजा कृष्ण बोले कि क्या तुम संग्राम करने आए हो? उन्होंने कहा कि प्रभु! मैं संग्राम नहीं कर पाऊंगा। क्योंकि संग्राम करने के लिए मेरे पास सेना नहीं है। हाँ एक बात अवश्य है, कि मैं निश्चय करके आया हूँ, मैं अपनी माता से आज्ञा पाकर के आया हूँ, कि कुरुक्षेत्र में मैं उस स्थान मे रहूँगा, जिस स्थान से मैं यह दृष्टिपात करू सकूँगा, और कौन सा पक्ष परास्त होगा, उसी स्थान में मैं, उसी समय अस्त्रों शस्त्रों से युक्त होकर उसी दल में शामिल हो जाऊंगा। उन्होंने कहा कि तुम ऐसे बलवान हो, और स्वयं उस स्थान में रहोगे, जिनका दल परास्त होने वाला है। उन्होंने कहा कि हां महाराज! तुम्हारे द्वारा ऐसी क्या विशेषता है? उन्होंने कहा कि भगवन! मैंने अपने जीवन में तीन अस्त्रों शस्त्रों को जाना हैं। उन तीनों से मुझे पूर्ण विश्वास रहता है कि मेरा एक एक अस्त्र ऐसा है जो अट्ठारह अटठारह अक्षौहिणी सेना को एक ही समय में नष्ट कर सकता है।

जब उन्होंने यह वाक्य श्रवण किया तो पूछा कि इसकी परीक्षा क्या है? उन्होंने कहा कि भगवन! आप इसकी परीक्षा ले सकते हैं। यह मेरा अस्त्र है, इसे मैं आपके समीप ही, जो वृक्ष है, इसकी महाकृतियां में इसे अर्पित कर रहा हूँ और इसकी पत्ती पत्ती का छेदन करके यह अस्त्र मेरे द्वारा आ जाएगा, यही मेरे अस्त्र में विशेषता है। 29.07.1973

419 भगवान् कृष्ण और महाराज बभ्रुवाहन ब्रह्मास्त्र

भगवान् कृष्ण ने कहा कि हम परीक्षा चाहते हैं। उस समय महाराज बभ्रुवाहन ने ऐसा ही किया। अपने अस्त्रों का प्रहार कर दिया। और वह अस्त्र वृक्ष की पत्ती पत्ती को छेदन करने लगा। कुछ पत्तियां भगवान कृष्ण ने अपने पगों के नीचे कर ली थी। उस समय जब अस्त्र पत्ती पत्ती का छेदन कर रहा था और सूक्ष्म पत्तियां रह गई, तो महाराजा बभ्रुवाहन ने कहा हे भगवन्! आपके पगों को छेदन करके यह मेरे समीप आ सकता है। भगवान कृष्ण ने उनसे पगों को दूर कर लिया। उन पत्तियों का छेदन करके वह अस्त्र महाराज बभ्रुवाहन के समीप आ गया। उसी अस्त्र को हमारे यहाँ ब्रह्मास्त्र कहा जाता है।

ऐसा कहा जाता है कि महाराजा कृष्ण और अर्जुन ने यही विचारा कि इसका तो ऐसा भयंकर परिणाम हो सकता है कि यह महाभारत कुरुक्षेत्र में नहीं होने देगा। अब क्या करना चाहिए? अर्जुन ने कहा कि इससे कुछ और जानकारी करो। महाराजा कृष्ण बभ्रुवाहन से बोले हे बभ्रुवाहन! जब तुम इतने क्षत्रिय हो, इतने महान वैज्ञानिक हो, तो मैं यह जानना चाहता हूं कि तुम दानी कितने हो? उन्होंने कहा कि प्रभु! जो आप चाहोगे, वही दान मैं अर्पित करने वाला हूँ। तो उन्होंने कहा कि यह जो कंठ से ऊपर वाला भाग है इसे हमें अर्पित कर दीजिए। उन्होंने कहा कि भगवन! यह ऐसा व्यवहार क्यों? मैंने आपको जान लिया है आप तो कृष्ण हैं। आप ही इस महाभारत के रचयिता हैं। इसलिए आपको मैं यह दान दे रहा हूँ। आप मेरे कंठ से ऊपर वाले भाग को अर्पित कर लीजिए। उन्होंने कहा कि नहीं, हम आपके शरीर से दूर नहीं चाहते हैं। आप इस संग्राम को दृष्टिपात करो, परन्तु आप भुजाओं से अस्त्रों और शस्त्रों से कार्य नहीं कर पाओगे। उन्होंने कहा कि भगवन! यह मुझे स्वीकार है।

तो हमारे यहाँ ऐसे वैज्ञानिक होने चाहिए, राष्ट्रीयता जिनके मस्तिष्कों में होनी चाहिए। जिससे जीवन का एक उद्देश्य उनके समीप होता है। उसी काल में जब उन्होंने कहा कि प्रभु! यह शरीर आपका हो चुका है, तो तीनों प्राणी एक स्थान में विराजमान हो गए। तीनों का परिचय हुआ। क्योंकि वह अर्जुन के पुत्र थे, अर्जुन के चरणों को स्पर्श किया और कहा कि आप तो मेरे पिता हैं। आप यदि चाहते हैं तो हे पिता! आपको संग्राम की आवश्यकता नहीं है। मैं इस संग्राम को एक क्षण समय में समाप्त कर सकता हूँ।

महाराज अर्जुन ने कहा नहीं, हम ऐसा नहीं चाहते। महाराजा कृष्ण बोले कि हे बभ्रुवाहन! यह जो संग्राम हो रहा है, जैसा तुमने इस विज्ञान की प्रतिभा को जाना है कि तुम्हें इस संग्राम में निमन्त्रित किया गया है? उन्होंने कहा प्रभु! मुझे किसी ने निमन्त्रित नहीं किया है। और न मैं निमन्त्रण चाहता हूँ, क्योंकि इस संग्राम से तो हमारे परिवार का ही विनाश होने जा रहा है। भगवन! मैं एक वाक्य और जानना चाहता हूँ कि आप तो जनार्दन हैं, आप तो केशव है, परन्तु यह ऐसा क्यों हुआ? 29.07.1973

420 विज्ञान की अधिकता से विनाश

भगवान कृष्ण बोले कि यह इसलिए हुआ है इस समय विज्ञान की पराकाष्ठा, विज्ञान की प्रतिभा उज्ज्वल हो गई है। जब विज्ञान ऊँचे स्थान पर चला जाता है और उसमें आध्यात्मिकवाद नहीं रहता, ईश्वरवाद नहीं होता उस समय अभिमान की मात्रा प्रबल होती है। अभिमान

का परिणाम केवल विनाश हुआ करता है। इसलिए आज इसके विनाश का कारण उपस्थित है। मुझे तो केवल ऐसा ही प्रतीत हो रहा है। बभ्रुवाहन बोले कि संसार में ईश्वर भी कोई वस्तु होती है? उन्होंने कहा कि संसार में ईश्वर भी होता है। क्योंकि ईश्वर के न मानने से ही यह संग्राम है। 29.07.1973

421 ईश्वर को न मानना अंधकार का कारण

उस समय बभ्रुवाहन ने कहा प्रभु! मैं तो विज्ञान की प्रतिभा में परिणत होता हुआ, अब मैं बुध मे जाने का प्रयास कर रहा हूँ और मंगल में जाने वाले यन्त्रों के निर्माण में मैं कटिबद्ध हो रहा हूँ। कुछ काल से मेरी प्रबल कामना जागरूक हो रही है कि ईश्वर कोई वस्तु नहीं है। उन्होंने कहा कि अरे बभ्रुवाहन ईश्वर को न मानना ही संसार में अन्धकार है। और ईश्वर को स्वीकार करना ही प्रकाश कहा जाता है। जब मानव के हृदय में, राष्ट्र के गर्भ में ईश्वरवाद होता है, मानववाद होता है तो उस समय ऐसी रक्त भरी क्रांति नहीं हुआ करती हैं। क्योंकि रक्त भरी क्रान्ति का जो कारण होता है, वह ईश्वर को न मानना ही होता है। आध्यात्मिक विचारों से ऊँचे विचार होते हैं और ईश्वर से ही राष्ट्र का निर्माण ऊँचा हुआ करता है। राष्ट्र में दुर्बलता नहीं होती है। इसलिए आज राष्ट्र में प्रबलता न होने का कारण केवल ईश्वर की प्रतिभा को नष्ट कर देना है। आध्यात्मिकवाद को अपने से दूर कर देना है।

महाराज बभ्रुवाहन ने यह स्वीकार कर लिया तो उन्हांने कहा प्रभु! मैं तो ईश्वरवाद में विश्वास नहीं कर रहा था। आज मुझे यह ज्ञान हुआ है कि वास्तव में जब प्रकृति के गर्भ में जाते हैं, अणु परमाणुओं को एकत्रित करने लगते हैं, उस समय मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि प्रकृति ने तुझे इतना मोह लिया है, इतना ममतामयी में धारण कर लिया है। क्योंकि उस प्रकृति के गर्भ में जाने के पश्चात मैं ब्रह्मा चेतना को अपने से दूर कर देता हूँ। इसलिए आज से मैंने यह संकल्प धारण किया है कि मैं ईश्वरवादी बनूंगा और उसकी प्रतिभा को जानना, मेरा अनुसन्धान करना एक लक्ष्य रहेगा। जब यह वाकय कहा तो भगवान कृष्ण बोले अरे बभ्रुवाहन! क्या तुम ईश्वर पर अनुसन्धान कर सकते हो। ईश्वर पर आज तक कोई अनुसन्धान नहीं कर। 29.07.1973

रश्मिन हो जाती हैं, उसी समय समुद्रों से जलों का उत्थान आरम्भ होने लगता है। समुद्र के जल के परमाणु बन करके अन्तरिक्ष में ओत प्रोत हो जाते हैं। इन परमाणुओं का मिलान हो करके अग्नि के परमाणुओं द्वारा, इन्हीं के द्वारा वृष्टि हुआ करती है। 22.03.1970

422 मानव का कर्त्तव्य

हमारे जीवन का जो एकोकीभूत गुण है, वह प्रभु की प्रतिभा को जानना है। परमाणुवाद जितना भी यह वायुमण्डल में अग्नि की प्रतिभा अक्षत होकर के जो गति कर रहा है। और वह नृत्य कर रहा है, उस नृत्यमय संसार को जानना, यह मानव का कर्त्तव्य कहलाया जाता है। यह मानव की मानवता कहलाई जाती है। 18.04.1979

423 नाना मण्डलों में गति करना एक नैतिक गुण

मार्कण्डेय ऋषि महाराज से उनका कुछ विचार-विनिमय हुआ। उन्होंने कहा तुम क्या अनुसन्धान कर रहे हो? महर्षि मार्कण्डेय ऋषि महाराज ने कहा कि हम यह जानना चाहते हैं कि यह जो दोनों की आकर्षण-शक्ति है इससे ऊर्ध्वागति को जाना चाहते हैं। उन्होंने कहा कि हमने इस यान को, चन्द्रमा की परिक्रमा करने के लिए एक यान, एक यन्त्र को नियुक्त किया है, वह अन्तरिक्ष में गति कर रहा है। वह गति करता हुआ कुछ एक क्षणों में समीप आता और कुछ एक क्षणों में चन्द्रमा की परिक्रमा करता था। इस यन्त्र आवान्तर के द्वारा ही सुन्दर-सुन्दर इसकी भी परिक्रमा करता रहा और करता रहता था। उन्होंने कहा कि प्रभु! हम यहाँ अपना एक आसन का निर्माण कर रहे हैं। और यहाँ से लोक-लोकान्तरों की यात्रा करने की हमारी प्रबल इच्छा बनी हुई है। वह पंचमहाभूतों को जानता हुआ ऋषि नाना मण्डलों में गति करना उनका एक नैतिक गुण बन गया था। 18.04.1979

424 अंतरिक्ष में शब्द ब्रह्माण्ड

वह अन्तरिक्ष में पुनः से यान से विद्यमान हो करके वह अन्तरिक्ष में गति कर रहा है। जब वे ऋषिवर याग करते थे, यागों के द्वारा नाना प्रकार के साकल्य अग्नि के मुख में प्रदान करने के पश्चात और फिर से लोक ध्वनि से जिस शब्द को विचार पूर्वक याग करता है। यह याज्ञिक स्वरूपवही शब्दों की रचना अन्तरिक्ष में गति करने लगी। वह जो अन्तरिक्ष में गति हो रही है, वह शब्दों के साथ में हो रही है। शब्दों के साथ में चित्रों की हो रही है। चित्र वहीं से परमाणुओं को एकत्रित करने वाला याज्ञिक अपनी यज्ञशाला में सीमित नहीं रहता हैवह विज्ञानशाला का निर्माण करता है। यज्ञशाला का निर्माण किया और यज्ञशाला का निर्माण करके उन परमाणुओं को एकत्रित करता, उन परमाणुओं से कुछ यंत्रों का निर्माण करता रहा है। जब वह यन्त्रों का निर्माण करता रहा तो ऋषियों ने यह विचारा कि जैसे यन्त्र में हमारी यज्ञशाला में आहुति देना, याग करना, ब्रह्मयाग है, वाजपेय याग करना। क्योंकि जब शब्दों के साथ में चित्र आते रहते हैं, तो इन चित्रों को हम दृष्टिपात करना चाहते हैं। उन्होंने सर्वप्रथम अपने चित्रों को दृष्टिपात किया। अपने चित्रों को दृष्टिपात करके उन्होंने विचारा

कि यह जो अन्तरिक्ष है, यह तो शब्दों का भण्डार है। इनमें से चित्रों को जो हमारे यहाँ विद्यमान हैं इनको भी हम यन्त्रों के द्वारा लाना चाहते हैं। 18.04.1979

425 चित्रों में महापिता

मुझे स्मरण है, जब यह तन्द्रूत के पुत्र ऋषि महाराज विभाण्डक ने जा करके यह कहा कि महाराज! यह क्या कर रहे हो? तब उन्हें बेटा! उन यन्त्रों में, यज्ञशाला के अप्रेत चित्रों में महापिता के दर्शन होने लगे तो अब अनुसन्धान किया गया तो पूर्व से उद्दालक गोत्र में से ऋषि जितने भी हुए हैं वे आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता, भौतिक विज्ञानवेत्ता दोनों प्रकार की गतियों में वे पारायण रहे हैं। उन्हें सौवें महापिता के दर्शन होने लगे थे।

तो ये जो शब्द ध्वनि हो रही है। इसीलिए हमारे ऋषि-मुनियों ने कहा कि मानव, सत्य उच्चारण करने वाला बने। क्योंकि जितना भी सत्यवादी पुरुष होता है वह वाणी के ऊपर संयमी होता है। गृह, आसन और अन्तरिक्ष पवित्र होते रहते हैं। इसीलिए संसार में प्रत्येक मानव यह चाहता है कि मेरे में पवित्रता आनी चाहिए। और पवित्रता कैसे आएगी? वाणी को, जो शब्दों की रचना कर रही है, वह शब्दों की रचना तन्त्र के द्वारा हो रही है। वह प्राण के आश्रित पर नाना अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वह अन्तरिक्ष में गति कर जाते हैं। उनके चित्र बन जाते हैं, कुछ आभा में समापन हो जाते हैं। तोउद्दालक गोत्र के ऋषियों में यह परंपरा रही है। कि वे आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान द्वारा शब्दों को ग्रहण करते रहे हैं। 18.04.1979

426 भौतिक विज्ञान

भौतिक विज्ञान क्या है? भौतिक विज्ञानएक परमाणु, द्वयणक, तिस्रेणु, चतुस्रेणुपंचस्रेणु, इनको जानते रहना और आगे को हमारी गति रहना। वह गति होते होते हम यन्त्रों में उनको एकत्रित करके, उनके यन्त्रों को, हम उनसे यन्त्रों का निर्माण करते हुए और इन यन्त्रों हम राष्ट्र को अर्पित कर देते हैं, राष्ट्र को अर्पित न करो तो अपने द्वारा एकत्रित करते रहो, उनसे नाना प्रकार के चित्र क्रियात्मकजो ब्रह्माण्ड में गति हो रही है उसको जानना। यह सर्वत्र भौतिकवाद कहलाता है। यह सब भौतिक-वाद है। एक दूसरे के लिए या यंन्त्रों का निर्माण करना और मृत्यु के लिए, समाप्ति के लिए।

वही जो उसका यन्त्र है वह उसको अपने में समावेश कर लेता है। वह जो आग्नेयास्त्र बना है वरुणास्त्र ऐसा निर्मित किया है वैज्ञानिकों ने कि वह अग्नि, अग्नि वाला यन्त्र, वह वरुणास्त्र में समाहित हो जाता है। तो जहाँ केवल मृत्यु ही मृत्यु थी वहाँ द्वितीय आभा में जीवन भी आ गया, इस प्रकार विज्ञान को जाननाइस प्रकार आभा में परिणत होने का नाम भौतिकवाद कहलाता है। 22.04.1979

427 लोकों की माला की ओत प्रोतता

ये जो नाना प्रकार के चन्द्रमा हैं ये नाना जो तारामण्डल हैं इनकी एक माला बनी हुई है। यह माला ही आभा में रमण करने वाली है। उन्होंने वर्णन करते हुए कहा, क्या ये तारा-मण्डल एक नहीं एक-से-एक विशाल कहलाते हैं। हे राजन्! तुम्हें यह प्रतीत है कि नाना पृथ्वियां सूर्य-मण्डल में समाहित हो जाती हैं।और यह जो सूर्य है, आरुणि-मण्डल में ऐसे सहस्रों सूर्य समाहित हो जाते हैं। सहस्रों आरुणि इस ध्रुव में समाहित हो जाते हैं हे राजन्!जैसा यह ध्रुव है ऐसे-ऐसे एक सहस्र ध्रुव जेठाय नक्षत्र में समाहित हो जाते हैं, जैसा जेठाय-नक्षत्र है ऐसे-ऐसे एक सहस्र जेठाय-नक्षत्रअरुन्धति मण्डल है, ऐसे-ऐसे एक सहस्र जेठाय-नक्षत्र अरुन्धति मण्डल में ओत-प्रोत हो जाते हैं।जैसा यह अरुधन्ति मण्डल है, ऐसे एक सहस्र अरुधन्ति पुष्य-नक्षत्र में ओत-प्रोत हो जाते हैं।जैसा पुष्य-नक्षत्र है ऐसे ऐसे एक सहस्र पुण्य-नक्षत्र-स्वाति-नक्षत्र में ओत-प्रोत हो जाते हैं।जैसा यह स्वाति-नक्षत्र है ऐसे ऐसे एक सहस्र स्वाति अचंग लोकों में ओत-प्रोत हो जाते हैं। जैसा यह अचंग है। वे ब्रह्मी लोकों में ओत-प्रोत हो जाते हैं। यह प्रभु का विज्ञान इतना अनन्त है, इतना महान् है कि उसको कोई सीमा में वर्णन भी नहीं कर पाता। ये नाना प्रकार के तारा मण्डलों का प्रकाश इस पृथ्वी-मण्डल पर आता रहता है। इसी के आभा में प्रकाशमान हो जाता है। उन्हीं का प्रकाश मानव के नेत्रां का देवता यही तारा मण्डल बन जाता है। नाना सौरमण्डल कहलाते हैं। एक आकाश-गंगा में नाना सौर मण्डलों की गणना की गई तो वैज्ञानिक जन एक आकाश-गंगा के चन्द्रमा और सूर्यों की गणना भी पूर्ण रूप में नहीं कर पाए अब तक। 15.07.1979

428 अग्नि का प्रकाश

राजा जनक नतमस्तक हो करके बोले, प्रभु! जब यह सौर-मण्डल अथवा ये तारा-मण्डल नहीं होते तब हमारे नेत्र किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। उन्होंने कहा, हे राजन्! जब ये तारा-मण्डल नहीं होते तो हम अग्नि के प्रकाश से ही प्रकाशमान हो जाते हैं। यह अग्नि हमारे नेत्रों का देवता है। यह अग्नि एक ही प्रकार की नहीं है। कहीं अग्नि वैश्वानर अग्नि बन करके प्रकाश दे रही है। कहीं अदिति बन करके प्रकाश दे रही है। कहीं द्यौ सूर्य बन करके प्रकाश दे रही है। कहीं दाक्षिण्य अग्नि कहलाती है। कहीं गृह पथ्य नाम की अग्नि कहलाती है। कहीं गार्हपथ्य कहलाती है। ये नाना प्रकार की अग्नियां प्रकाश दे रही हैं। और प्रकाश दे करके वेद के ऋषियों ने, अश्वनीकुमार जैसे

आयुर्वेदाचार्यों ने ८५ प्रकार की अग्नि मानी है। परन्तु जब विज्ञान के युग में प्रवेश करते हैं। विज्ञान में से एक-एक अग्नि में से जो तरंगें उत्पन्न होती हैं वे सहस्रों, अरबों-खरबों तरंगें हैं। जो गणना में नहीं आतीं। अरबों-खरबों तरंगों वाली यह अग्नि है, जो मेरी प्यारी माता, अन्धकार छाया हुआ है। गृह को प्रकाशित करती है, वह गृह में इसी अग्नि से प्रकाश को प्राप्त कर अपना व्यापार प्रारम्भ कर लेती है। वह नेत्रों की अग्नि बन करके वे चक्षु-मित्र अग्नि कहलाती है। वह अग्नि ही मानव जीवन का क्या वह अग्नि ही इस संसार में लौकिक अग्नि बन करके प्रकाश देती है और वही अग्नि, द्यौ सूर्य बन करके सूक्ष्म बन जाती है। वही अग्नि वाणी बन करके मानव को अग्रणीय बना देती हैं तो अग्नि के भिन्न-भिन्न प्रकार के रूप माने गए हैं। 15.07.1979

429 ब्रह्माण्ड के भी पंच स्तम्भ

यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक यज्ञशाला के एक रूप में दृष्टिपात आता है। जैसे मानव के जीवन के पांच स्तम्भ माने गए हैं। इसी प्रकार ब्रह्माण्ड के भी पांच स्तम्भ माने गएं हैं। तो ये पांचों खम्भों वाला जगत है पंच महाभूत हैं। पंच खंभों वाला यह मानव शरीर जो पंच ज्ञानेन्द्रियां कहलाती हैं। ये पंच महाखंभ हैं जिनके ऊपर यह ज्ञान, विज्ञान और ब्रह्माण्ड स्थिर हो रहा है। तो इसके ऊपर हमें कितना अनुसन्धान करना है पुत्रो। 08.08.1979

430 याग का भौतिक प्रभाव

महर्षि याज्ञवलक्य मुनि के आश्रम में पहुंचे, तो उस ब्रह्मचारी सुकेता ने कहा कि महाराज! यह क्या कर रहे हो? याज्ञवलक्य मुनि महाराज कहते हैं कि मैं याग कर रहा हूँ। उन्होंने कहा तुम याग क्यों कर रहे हो? मैं एक पौधे को सींचने जा रहा हूँ। मैं एक पौधे को सींचना चाहता हूँ और उस पौधें को पृथ्वी में, द्यु लोकों में ओर लोक लोकान्तरों में उनकी तरंगें पहुंचाना चाहता हूँ। तो ऋषि ने कितने व्यापक शब्दों में इस वाक्य को कहा परन्तु ऋषि नारद जी कहते हैं कि महाराज! यह याग वृक्ष कैसे है? इसको आप कैसे पहुंचाओगे। क्योंकि महर्षि भारद्वाज ब्रह्मवेत्ता थे। इतने में वे महर्षि भारद्वाज भी आ पहुंचे, उसी आश्रम में। याज्ञवल्कय मुनि महाराज और ऋषि भारद्वाज ब्रह्मचारीसुकेता, देवर्षि नारद। जब इन ऋषियों का विचार विनिमय होने लगा, तो महर्षि याज्ञवलक्य कहते हैं कि मैं अपने याग रूपी वृक्ष को अपने में सींचना चाहता हूँ। तो यह वाक्य तो बहुत प्रिय था और व्यापक था। परन्तु नारद जी ने पुनः प्रश्न किया कि हमें व्यापक रूप से इसका सर्व रूप प्रगट कीजिए। याज्ञवलक्य मुनि बोले कि व्यापक इसका जो स्वरूप है वह यह है कि यज्ञशाला में हम याग करते हैं। अग्नि और साकल्य की आहुति देते हैं। नाना प्रकार की वनस्पतियों को एकत्रित करके वह अग्न्याधान करते हैं। क्योंकि अग्नि देवताओं का दूत है, जितने देवता हैं वे सब प्रसन्न होते हैं, जब वे प्रसन्न होते हैं तो उनका पंचीकरण हो जाता है। पंचीकरण में जितने भी वे प्रसन्न होंगे, जितनी उनमें शुद्धता होगी, पवित्रता होगी, उतना उनको जानना हमारे लिए सहज होगा। हम उनको अच्छी प्रकार जान सकते हैं। याग एक बिन्दु है। उस बिन्दु में से एक मार्ग तो आध्यात्मिक मार्ग को चला जाता है और एक मार्ग भौतिक विज्ञान को चला जाता है। या यूं उच्चारण कर लीजिए कि दोनों मार्ग एक ही केन्द्र से होकर जाते हैं। भौतिकवाद के मार्ग से होते हुए जहाँ भौतिकवाद समाप्त हो जाता है वहाँ आध्यात्मिकवाद शुरू हो जाता है। 04.09.1979

431 आकाश गंगा

ऋषि अपने यन्त्रों के द्वारा एक समय आकाश गंगा का दिग्दर्शन करने लगा। तो उनकी विज्ञानशाला में, भारद्वाज की विज्ञानशाला में छह सौ बहत्तर आकाश गंगाएं दृष्टिपात आती थीं और एक आकाश गंगा का जब वर्णन करने लगा ऋषि तो वर्णन करता हुआ कहता है कि एक समय में सूर्यों की गणना करने लगे एक आकाश गंगा में पांच खरब, पचानवे अरब उन्नतीस करोड़, उन्नंचस हजार, पांच सौ बावन मैंने एक आकाश गंगा में सूर्यों की गणना की। परन्तु जब मैं उन सूर्यों की गणना करता रहा तो अन्त में मैं मौन हो गया। मुझे जब एक आकाश में इतने मण्डल हैं और यह सूर्य मण्डल कितना विशाल है जिस सूर्य में जैसा हमारा यह पृथ्वी मण्डल है ऐसी-ऐसी तीस लाख पृथ्वियाँ एक सूर्य में समाहित हो जाती हैं। तो यह प्रभु को कैसा अनन्तमयी जगत है? वह प्रभु कितना वैज्ञानिक है? वह कितना विज्ञान में गति करने वाला है। 10.11.1979

उन्होंने पुरातन काल में एक ऐसे यन्त्र का भी निर्माण किया था, जिस यन्त्र में यह विशेषता थी, जब एक समय शनि मण्डल के और सूर्य के मध्य में अरुन्धति मण्डल आ गया था और अरुन्धति मण्डल के आ जाने से सूर्य की सर्वत्र जो किरणें थीं, वे सब अरुन्धतिमण्डल में अपने में आच्छादित कर गई थीं। और आच्छादित करने से उस शनिमण्डल के पांचवें भाग पर अन्धकार छा गया था, अन्धकार के छाने पर वहाँ यम का प्रभाव समाप्त हुआ, तो दूषितपना भी तो आ जाता है। 18.02.1980

परन्तु प्रायः ऐसा नहीं होता कि सर्वत्र प्राणी बाह्य आ जाएं, क्योंकि उसमें कोई ऐसी विशेषता आवृत नहीं मानी जाती। परन्तु एक ऐसा मण्डल, जिस समय सूर्य के और पृथ्वी के मध्य में जिस काल में कहीं बुध मण्डल आ जाए इनके मध्य में, तो हो सकता है कि बहुत-सा

पृथ्वियों का भाग खण्डित हो जाता हैं, पृथ्वी के एक दूसरे भाग को नष्ट भी कर सकते हैं। 18.02.1980

महाभारत का युद्ध समाप्त हो गया था। उस काल में एक ऐसा काल आया था, जबकि यह बुधमण्डल सूर्य और पृथ्वी के मध्य में आ गया, तो एक पृथ्वी जो गति करती है उस पृथ्वी के एक सौंवा भाग खण्डित हो करके वहाँ का प्राणी नष्ट हो गया था। 18.02.1980

ऐसा ही द्वापर के काल में दृष्टिपात आया। ऐसा पुनः उसके पश्चात अभी नहीं हुआ। हो सकता है एक सौ एक वर्ष पश्चात ऐसा कोई काल आ जाए। यह मैं उच्चारण नहीं कर सकता। उसको प्रभु ही जानता है। 18.02.1980

432 अश्वपति के काल

अश्वपति के काल में मुझे भी कुछ विज्ञान के अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा और वर्षों तक अनुसन्धान करने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ है। 18.02.1980

433 कृतिकास्तान नाभि एक कृतिका

वेदमन्त्र की आख्यायिकाएं जब शिव के द्वारा स्मरण होने लगीं तो महाराजा शिव ने इसके ऊपर चिन्तन किया। एक वर्ष तक चिन्तन मनन करने के पश्चात उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया और यन्त्र का निर्माण करके, उससे सूर्य की किरणों को लेने लगे। जब सूर्य की किरणों को लेने लगे तो सूर्य की वे किरण एकत्रित हो गई। जो मानव को जीवन शक्ति देती थीं। और मानव को जीवन-शक्ति क्या? एक राशि होती है मानव की। जैसे नामाहन होता है और नामाहन के साथ एक राशि होती है। परन्तु उस राशि के आधार पर उस मानव की नाभि से तरंगें चलती हैं और नाभि में सूर्य की क्रांति आती है। उसी के आधार पर उन किरणों को जो वैज्ञानिक राशि के आधार पर, उन किरणों को जानने लगता है, उन परमाणुओं को एकत्रित करके उसमें जब पृथ्वी के कुछ परमाणुओं की पुट लगा करके, मिलान करके कुछ वायु के परमाणुओं का उसमें पुट लगा करके कृतिकास्तान नाभि एक कृतिका यन्त्र का निर्माण हो जाता है। तो वह यन्त्र कहीं भी है, और मानव कहीं भी शत्रु से संग्राम कर रहा है वह मानव, वह वैज्ञानिक किसी भी शत्रु से वह जो संग्राम कर रहा है परन्तु उसकी मृत्यु नहीं आ सकती, उसको शत्रु विजयी नहीं कर सकता है, क्योंकि वह यन्त्र उसकी नाभि के द्वारा सूर्य की किरण उसे शक्ति प्रदान करता रहता है।

राजा रावण को महाराजा शिव ने वह यन्त्र प्रदान किया था। इससे उसकी नाभि में अमृत की कुण्डली परिणत की जाती थी।

यन्त्र को समुद्रों परिणत किया जाता है और तब उसकी मृत्यु हो सकती है। ऐसी भी मृत्यु विजय इस प्रकार भी यन्त्रों के द्वारा भी किया जाता है किन्तु वे संग्राम के लिए होता है, यह नाभि का स्थान कहलाया जाता है। 18.02.1980

434 मानव का कर्त्तव्य

चिन्तन और मनन करना भी यह मानव का कर्त्तव्य कहलाया जाता है। क्योंकि प्रत्येक मानव मनन और चिन्तन के लिए आया है। प्रत्येक वस्तु का मनन और चिन्तन प्रायः मानव को करना ही चाहिए। हमारे जीवन का सम्बन्ध विज्ञान से माना जाता है। जितना भी विज्ञान है, वह चाहे प्रत्यक्ष रूप में हो, चाहे परोक्ष में हो। परन्तु ज्ञान और विज्ञान से हमारे जीवन का प्रायः समन्वय रहता है। 21.02.1980

435 ज्ञान और विज्ञान

सर्वत्र जो ब्रह्माण्ड में दृष्टिपात आ रहा है वे परमपिता परमात्मा की एक विज्ञानशाला के रूप में है। यहाँ प्रत्येक मानव वैज्ञानिक बनने के लिए आया है। अतः विज्ञान को जानना चाहिए। क्योंकि ज्ञान और विज्ञान के जाने बिना मानव अपंग रहता है। मानव के जीवन में सुन्दरता नहीं आती। तो जिस वस्तु को तुम दृष्टिपात करो, उस वस्तु में ज्ञान और विज्ञान होना चाहिए। ज्ञान और विज्ञानमयी धारा होनी चाहिए। मानव की ऊँची उड़ान होनी चाहिए। 21.02.1980

436 ब्रह्मचारी

प्रत्येक मानव यह कहता है, परम्परा से ब्रह्मचारी बनने की कल्पना करता रहता है। प्रत्येक मेरी पुत्री वीरांगना बनने के लिए तत्पर रहती है। परन्तु जब यह विचारा जाता है कि यह ब्रह्मचारी और वीरांगना कैसे बनते हैं? इसके सम्बन्ध में आज हमारा वेदमन्त्र कुछ कह रहा है। वह वेदमन्त्र यह कह रहा था।

ब्रह्मचारी बनने के लिए चरि को जानना होगा। चरि में रमण करना होगा। चरि नाम, यह जो बिखरा हुआ परमाणुवाद है, इसको हमारे यहाँ चरि कहते हैं। जो चरी जाती है। जैसे पशु नाना प्रकार की वनस्पतियों को चर लेता है। इसी प्रकार हे ब्रह्मचारी! तू ब्रह्म को प्राप्त होना चाहता है, तो ब्रह्म का बनाया हुआ यह विज्ञानमय जो ब्रह्माण्ड है, इसे जानना तुम्हारे लिए बहुत अनिवार्य है। इसको बिना जाने संसार में मानव ऊर्ध्व को प्राप्त नहीं होता। 21.02.1980

437 विज्ञान

विज्ञान मानव का मौलिक गुण है। विज्ञान के बिना आध्यात्मिकवाद में मानव प्रवेश नहीं कर सकता। क्योंकि प्रथम वह विज्ञान को जानने

वाला बने। 21.02.1980

438 रसना

तो इस रसना को हमें जानना चाहिए। यह रसना बाह्य जगत के आनन्द को अपने में गृहण करती रहती है और रसों का समन्वय किन-किन पदार्थों से है? इनका अणुओं से भी समन्वय है। यह सोम आदि बनकर के अग्नि के प्रतिनिधित्व को प्राप्त होने लगते हैं। तो यह परमाणु जो चन्द्रमा में आभायित कर रहे हैं। उस को सोम बना रहे हैं। उसको हमें पान करना और उसे धारण करना बहुत अनिवार्य है।

हम चन्द्रमा को अपना देवतव स्वीकार करते हैं। चन्द्रमा के द्वारा सन्तानों का जन्म होता है। यही रस बन करके वीर्यत्व के रूप में रजस्व के रूप में बालक का निर्माण करता है, कलाओं के सहित निर्माण होता है। नौ-माह में निर्माण होता है माता के गर्भ स्थल में निर्माण होता है। इसी जगत को तुम नेत्रों के समान रसना स्वादन से तुम बाह्य जगत में नाना प्रकार के रसों का स्वादन कर रहे हो।

यही रस योगेश्वर अपनी आन्तरिकता में धारण कर लेता है और अन्तर्हृदय में इसका जब अनुभव करता है। तो ब्रह्मरन्ध्र से ले करके यह मूलाधार से ले करके ब्रह्मरन्ध्र तक चला जाता है। इन स्वादों का स्वादन करता हुआ ब्रह्मरन्ध्र में वह अमृत को अपने में धारण करता है। इस अमृत को योगीजन अन्तर्हृदय में, अन्तर्मुखी हो करके देवता इसको पान करते हैं। इसको पान करना, बाह्य जगत में रसों का स्वादन प्राणी कर रहा है। हे मानव! तू आन्तरिक हृदय में इसके पात को, इसके रस को अमृत को तू आन्तरिक जगत में ग्रहण कर लेगा, तो तेरी महत्ता और पवित्रता बनी रहेगी। वह योगेश्वर बनने में, योगी बनने में सहायक बन जाता है अथवा योगेश्वर ही बन जाता है।

प्रत्येक मानव विज्ञान में प्रवेश होना चाहता है। प्रत्येक मानव आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करना चाहता। 21.02.1980

439 स्पर्श

मानव को स्पर्श होता है, उस स्पर्श क्रिया को जान लेना यह वायु का गुण माना गया है। जब स्पर्श करता है तो वह भिन्न-भिन्न प्रकार का स्पर्श होता है। क्रोध का भी स्पर्श होता है, ममता का भी होता है और ममता में भी नाना प्रकार के ओर भेदन हैं। तो इस त्वचा का सम्बन्ध वायु से रहता है और वायु का समन्वय प्राण से रहता है। और वही वायु रमण कर रहा है। वेद में गति कर रहा है। अपने में स्पर्श कर रहा है। स्पर्श करता हुआ आभा में परिणत कर रहा है। विचारना क्या? वह उसी त्वचा के स्वरूप को जान करके वायु जो वेग में, आन्तरिक जगत में क्रीडा कर रही है। उस क्रीड़ा को जानना बहुत अनिवार्य है।

तो उसका स्थूल बनाना, स्पर्श करते ही मानव को अनुभव हो जाए, क्रियात्मक वाक्यों में नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया और नाना यन्त्रों का निर्माण करते हुए उन्होंने कहा वह यन्त्र कैसे निर्मित करता है? स्पर्श वाले चित्रों को। क्योंकि वायु की आभा में प्राण गति करता है, प्राणों पर शब्द विद्यमान हो करके इस संसार को आभायित कर रहा है। तो वह स्पर्शवाची जो वैज्ञानिक होते हैं वह इसके ऊपर अनुसंन्धान करके परमाणुओं का निर्माण करते रहते हैं। नाना प्रकार के निर्माणवेत्ताओं जब निर्माण करने लगते हैं तो यत्रों का निर्माण होने लगता है। प्रकृति के वाड्मय स्वरूप को जानने वाले वैज्ञानिक द्वारा वायु के वेग में रमण करके नाना प्रकार के यत्रोंका निर्माण किया जाता है।

उद्दालक गोत्र वाले ऋषि के द्वार पर ले जाना चाहता हूँ। उद्दालक गोत्र में ऋषि हुए हैं महाराजा विश्वेकृतिभानु ऋषि। मानो कृतिभानु भारद्वाज ऋषि मेरे प्यारे! विज्ञान में सदैव रमण करते रहते थे। एक समय वह भयंकर वन में विद्यमान हो करके यन्त्रों का निर्माण करने लगे। और विचारने लगे। मानो देखो, विज्ञान में रमण करने वाला ऋषि यह विचार रहा है। आभा में रमण कर रहा है। सम्भूति में मानो गति करता हुआ वह कह रहा है कि मैं वायु स्पर्श वाले यन्त्रों का निर्माण करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! उन्होंने कुछ यन्त्रों का निर्माण किया और उन यन्त्रों में इस परिक्रमा में, वायु के वेग में रमण करने वाला जो शब्द है, बेटा! उसको उन्होंने जाना। जान करके मेरे प्यारे! वह स्पर्श हो रहा था। इस स्पर्श में वह चित्रावलियों में दृष्टिपात आने लगा। मेरे प्यारे! यह जो स्पर्श भावना होती है उनके साथ-साथ उसको मनोनीतता विद्यमान होती है। तो मुनिवरों! वह जो विज्ञानमय स्वरूप है, वह महान् कहलाया जाता है।

आज हमें विज्ञान के क्षेत्र में जाना है। यदि हम आन्तरिक जगत में प्रवेश करते हैं, तो बेटा! प्राणों का आदान-प्रदान हो रहा है। परमराणुओं का आदान-प्रदान हो रहा है और परमाणुओं का आदान-प्रदान होकर विज्ञान के स्वरूप में हम रमण करते हैं। मैंने बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए तुम्हें कहा था कि यदि क्रोध के यन्त्रों का निर्माण किया जाए। एक मानव क्रोधित हो रहा है, रजोगुण छा रहा है रजोगुण के छाने पर वायु-मण्डल में वे तरंगें विद्यमान होती हैं। वैज्ञानिक जन उन क्रोधमयी तरंगों को एकत्रित करते हैं, तो मुनिवरों! देखो, उससे अणुवाद की उत्पत्ति होती है। अणु शक्ति की उत्पत्ति हो जाती है और मुनिवरों! देखो, उन परमाणुओं के। अणुओं को एकत्रित करके एक दूसरे से मिलान करते हैं। एक दूसरे का समन्वय करते हैं और एक दूसरे का समन्वय करने के पश्चात मेरे प्यारे! उसमें एक महान् धारा उत्पन्न होनी प्रारम्भ हो जाती है।

उसमें भयंकर अग्नि के परमाणु होते हैं और अग्नि भी भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में कहा था बेटा! मुझे एक समय स्मरण आता रहता है। कुछ ऋषि-गण विद्यमान थे, उन ऋषियों के मध्य में देखो, विज्ञानवेत्ता भी विद्यमान थे, उन ऋषियों के मध्य में देखो, विज्ञानवेत्ता भी विद्यमान थे। वहाँ विज्ञानवेत्ताओं में, दार्शनिकों में विचार-विनिमय हो रहा था। रात्रि का काल था। मुनिवरों! देखो, आन्तरिक जगत से बेटा! यह जो जगत है इस जगत में से एक पूंछ वाला जो एक तारा-मण्डल की आभा में पुच्छाकृति कहलाता है। वह एक तेजोमयी स्वरूप उन्हें दृष्टिपात आने लगा तो मुनिवरों! देखो, ऋषियां ने वैज्ञानिकां ने यह कहा कि महाराज! यह क्या है? तो उन्होंने यन्त्रों में उसकी छाया ली और यह कहा कि यह जो शनि-मण्डल है, और शनि-मण्डल में जो सूर्य शनि को प्रकाशित कर रहे हैं, उस सूर्य और शनि के मध्य में बृहस्पति आ गया है। और बृहस्पति के अभ्रूदय होने से अग्नि की, सूर्य की जो तेजोमयी किरण थी त्रुटकेतु जो किरण कहलाती हैं वह उसके भाग से जब मिलान किया उन्होंने, तो मानो उस भाग से वह छिन्न होकर के वह बृहस्पति की आभा में कुछ विभाग में छिन्न होकर के वह हमें दृष्टिपात हो रही है। तो मेरे प्यारे! कहीं-कहीं ऐसा होता है जैसा सूर्य और पृथ्वी के मध्य में चन्द्रमा आ जाता है वह छाया ग्रस्त हो जाता है। इसी प्रकार यह प्रायः संसार में होता रहता है। और संसार की धाराओं में इसी प्रकार का एक दूसरे से एक दूसरा वृत होता है। 21.02.1980

440 यज्ञ से पवित्रता

प्रत्येक मानव यज्ञशाला में विद्यमान होता है। यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में याग कर रहा है। और अपनी आभा में अपनी पत्नी से कहता है कि हमें याग करना चाहिए तो वह याग कर रहा है। सुगन्धि कर रहा है। परन्तु उस सुगन्धि का समन्वय हमारे मानवीय जीवन से रहता है। और मानव का जीवन क्या है, वह एक प्रकार की यज्ञशाला है। यज्ञशाला में वेद के ऋषियों ने कुछ ऐसा कहा, याज्ञिक पुरुषों ने कहा है-हे होताओ! तुम यज्ञमान की वाणी को पवित्र बना दो। वेद के कुछ मन्त्र ऐसा कहते हैं कि हे होताओ! यज्ञमान की वाणी को पवित्र बना दो। ऋषि विचारते हैं कि मन्त्र ऐसा कहता है तो विचारने से प्रतीत हुआ और अनुसन्धान करने से प्रतीत होता है। कि यज्ञमान की वाणी जितनी पवित्र होगी उतनी कल्याणकारी होगी।

यज्ञमान के नाना स्वरूप माने गए हैं। एक यज्ञमान वह है जो याग कर रहा है, एक यज्ञमान वह है, जो संसार रूपी यज्ञशाला है, इस यज्ञशाला का जो यज्ञमान है, वह आत्मा है। और यह जो पंच महाभूत हैं ये यज्ञशाला के होता कहलाते हैं। यह जो पंचमहाभूत हैं, जल, अग्नि, तेज, वायु औरअन्तरिक्ष। इनके द्वारा ही यह मानव की वाणी पवित्र होती है और आत्मा की वाणी क्या है? आत्मा की वाणी ज्ञान है, आत्मा की वाणी क्या है?आत्मा की वाणी विवेक है। आत्मा की वाणी है? आत्मा की वाणी, तीन आचन हैं। यह एक विशेष विशाल स्रोत हमारे समीप आता है कि यज्ञमान की वाणी क्या है? ज्ञान, यह वाणी ज्ञान से सजातीय होना चाहिए। आत्मिकता का ज्ञान क्या है?विवेक है। विवेक होगा तो यह जो संसार रूपी समुद्र है यह मानव को मान और अपमान में ले जाता है। जिससे यह मानव अप्रात हो जाता है। मानव के तीन आचमन क्या हैं! ज्ञान, कर्म और, उपासना के द्वारा, वह इस संसार में रमण कर सकता हैं।

हे मानव! तेरी वाणी कौन पवित्र बनाता है? होता बनाता है। होता कौन है? जो आहुति दे रहा है। होता कौन है? जो याग कर रहा है, इसलिए हे होताओ! तुम यज्ञमान की वाणी को पवित्र बना दो। वाणी क्या है? जो शब्दों से उच्चारण कर रहा है। यह भी वाणी कहलाती है, और मानव की जो प्रवृत्तियां हैं वे भी वाणी कहलाती हैं। यज्ञमान के अन्तर्रूपी हृदय में जो गुफा विद्यमान है, उसमें जो ज्ञान और विज्ञान का भण्डार है, वह भी एक वाणी के रूप में प्रकट हो जाती है। परिणाम क्या? हे यज्ञमान! तेरी वाणी क्या है? हे उद्गाताओ! आओ तुम यज्ञमान को वाणी को पवित्र बनाओ। उद्गान गाने वाला गा रहा है, यज्ञमान उसे श्रवण कर रहा है। उसकी वाणी पवित्र हो रही है। उसकी वाणी में तेज आ रहा है। वह स्वाहा उच्चारण कर रहा है। स्वाहा कह करके साकल्य दे रहा है। सूर्य के सदृश वह तेजोमय बनता है। परिणाम क्या? वह याग है। याज्ञिक बन करके आगे चल करके वह पितर के दर्शन करता है। वही याज्ञिक पुरुष है जो मेरे पितर के दर्शन करता है। एक समय मुझे स्मरण है उद्दालक के गोत्र के एक ऋषि थे जिनका नाम सुकेता था। वह ब्रह्मचारी सुकेता प्रातःकालीन याग कर रहा था तो उसमें, एक वेदमन्त्र प्रातःकालीन याग कर रहा था तो बेटा! उसमें एक वेदमन्त्र आया पितरश्चम् पित्रो देवस्यताम् देवः पितरो अन्तरिक्षम् लोक, कि पितर लोकों का मुझे दर्शन करना है। मैं कैसे करूं? मेरे प्यारे! पितर के दर्शन करने के लिए वह ब्रह्मचारी अध्ययन करने लगा। अध्ययन करते-करते विज्ञान में प्रवेश हो गया। याग करने लगा। यज्ञशाला का निर्माण किया, विज्ञानशाला का निर्माण किया। विज्ञानशाला और यागों का दोनों का समन्वय करने लगा। समन्वय करता हुआ परमाणुवाद को एकत्रित करने लगा। तो अन्तरिक्ष में जो उनके पिता, महापिता रमण कर रहे थे, उनके चित्र उनके यन्त्रों में दृष्टिपात आने लगे। जब उनके चित्र आने लगे तो वह दृष्टिपात करने लगा। तो पितर में एक पितर के दर्शन हुए तो वे याग कर रहे थे। और याग में कैसे आहुति दे रहे थे? वैसा ही चित्र ऋषि के उद्दालक गोत्र के सोलहवें वंश के ऋषि कहलाते थे। और सोलहवें प्रपौत्र अपने महापिता के दर्शन कर रहा है वह आहुति दे रहा है। वाणी पवित्र बन करके द्युलोक को

जा रही है। 21.02.1980

441 विज्ञान का ज्ञाता कौन

तो वह जो विज्ञान है, इसे कौन जानता है? यह विज्ञान मानव के समीप रहता है। यह मानव के यन्त्रों में जाना चाहिए। इन यन्त्रों का निर्माण करना चाहिए और यन्त्रों का निर्माण करते हुए उसको यन्त्रों में नियन्त्रण करके साक्षात्कार कराने वाला बनाए। 21.02.1980

442 अग्नि के प्रकार

तो हमें अपने जीवन को महान् और पवित्र बनाना है। हम विज्ञान में प्रवेश करना चाहते हैं। मानव के जीवन से कितना समन्वय है इस विज्ञान का? एक मानव उड़ान उड़ रहा है। यन्त्रों में विद्यमान हो करके। वह यन्त्र चल रहा है। गति कर रहा है और यज्ञमान का रथ भी गति कर रहा है, यज्ञमान का रथ जा रहा है, परन्तु वैज्ञानिक जब चित्रों का चित्रण कर लेता है, आध्यात्मिकवादी द्यु-लोक में प्रवेश करके प्रभु के दिग्दर्शन करता है। २१-2-१९८०

443 विज्ञान

इस संसार में मानव के जीवन का जो समन्वय है, वह विज्ञान में माना गया है। और विज्ञान का आध्यात्मिकवाद से समन्वय है। क्योंकि जितना भी इन इन्द्रियों को जानना है, इन्द्रियों के विषय को जानना है, पंच महाभूतों का जानना है, तो विज्ञान यन्त्रों के सहित जाना है। परन्तु जब जानता रहता है जानकर के उसको समेट लेता है और समेट करके आन्तरिक जगत में उन्हें प्रवेश कराता है। यहाँ मृत्यु को विजय करके प्रत्येक इन्द्रियों के विषय को जान लेना ही विज्ञान है और उसको आन्तरिक जगत में जान करके प्रवेश कराना ही आध्यात्मिकवाद में प्रवेश कराना है। यहाँ से आध्यात्मिकवाद का प्रारम्भ हुआ। तो हमें अपने जीवन को महान् बनाने के लिए, उज्ज्वल बनाने के लिए यह चिन्तन और मनन करना है। 21.02.1980

444 तीन प्रकार की अग्नि

अपने यान में विद्यमान हो करके उन्होंने सूर्य की किरण को जाना। सूर्य की किरण का नाम था, सोमभानि किरण। उस किरण के ऊपर उन्होंने अनुसन्धान किया। उस किरण को लेकर के उसका विभाजन किया और विभाजन करके उसमें तीन प्रकार की अग्नि उत्पन्न हुई।एक इन्द्र नाम की अग्नि, एक स्वेत्ता स्वेतन नाम की अग्नि, एक बड़बानल नाम की अग्नि।

तीन प्रकार की अग्नियों का प्रादुर्भाव हुआ। अब ऋषि ने विचारा कि यह जो बडवानल नाम की अग्नि है यह तो समुद्र में प्रवेश रहती है। यह जो इन्द्र नाम की अग्नि है यह वायु में रहती है। और यह जो स्वेत्ता नामक अग्नि है, यह पृथ्वी के गर्भ में रहती है। तो एक अग्नि तो खनिजों को तपा रही है और वही अग्नि विभाजन करने से प्रतीत हुआ यह जो स्वेत्ता नाम की अग्नि है, वह यन्त्रों का निर्माण करके उस अग्नि को समुद्रों में दृष्टिपात करने लगे।तृतीय अग्नि जो पृथ्वी में खनिजों को तपा रही थी, वही अग्नि जो वायुमण्डल में नाना प्रकार की आभा में रमण करने वाली अग्नि वायु मण्डल में प्रवेश करके वह लोकों को चक्रों में गति करा रही है। तो एक अग्नि के विभाजन करने से वैज्ञानिकों ने भिन्न-भिन्न प्रकार की अग्नियों को जाना है।

यह जो बड़वानल नाम की अग्नि कहलाती है, वह समुद्रों में रहती है। समुद्रों का निर्माण करती रहती है। और वह अग्नि आभा में रहती है। इस अग्नि के गर्भ में जाने वाला वैज्ञानिक समुद्र तत्त्व वाले जो लोक-लोकान्तर हैं उनमें गति कर जाता है। जल तत्त्व वाले मण्डल भी कहलाते हैं। जैसी सृष्टि पृथ्वी पर रहती है, इसी प्रकार सृष्टि समुद्रों में रहती है इसी प्रकार की सृष्टि पृथ्वी के गर्भ में रहती है।

इसी प्रकार की सृष्टि वायुमण्डल में रहती है। तो नाना प्रकार के प्राणी गति करते रहते हैं। परमाणु गति करते रहते हैं। उनकी गतियों में एक समान आभा विराजमान रहती है। जब हम उसका अनुभव करने लगते हैं, तो विचार आता है वैज्ञानिको के तथ्य में रमण करने के लिए प्रवेश करते हैं।

वही अग्नि जो समुद्रों में रमण करती है, वही अग्नि माता के गर्भस्थल में प्रवेश कर जाती है और माता के गर्भ में यही बड़वानल नाम की अग्नि एक-एक परमाणु को छिन्न-भिन्न करके उनका नाम पादामृति अग्नि, होता है उसका मिलान होते ही परमाणुओं का मिलान हो जाता है। परमारणुओं का मिलान हुआ बालक का निर्माण हो गया। वही अग्नि माता के गर्भस्थल में जब पंच माह का गर्भाशय होता है, उस काल में वही अग्नि बालक के शरीर में प्रवेश कर जाती है और अग्नि प्रवेश करके जैसे पृथ्वी के गर्भ में धातुओं का निर्माण होता है। ऐसे ही धातुओं का खनिज के द्वारा इस बालक के शरीर में निर्माण होता है।

जैसे इन्द्र नाम की अग्नि वायु में रहती है। वह वायु परम ऐश्वर्यवान बन करके माता के गर्भस्थल में बालक के शरीर में प्रवेश करती है और प्रवेश करके जितनी भी अग्नि वायु में विद्यमान रहती है। चन्द्रमा में अग्नि तत्त्व में विद्यमान रहती है। वह सर्वत्र उसमें प्रवेश करती है इसीलिए तो बाह्य जगत में आ करके वही प्राणी अनुसन्धान करने लगता है, विज्ञानवेत्ता बनता है। बाह्य जगत में आ करके कहीं चन्द्रमा

की यात्रा कर रहा है, कहीं मंगल की यात्रा कर रहा है। कहीं पृथ्वी के गर्भ को जान रहा है। कहीं वायु के तत्त्वों को जान रहा है। यह कैसे जानता है? मानव के सूक्ष्म शरीर में, पिण्ड में, सर्वत्र ब्रह्माण्ड विद्यमान है। परन्तु उस ब्रह्माण्ड को जानने की, तप करने की आवश्यकता है। जब मानव तप करता है। तप करने से वह जो अंकुर हैं वह स्वाभाविक रूप से जागरूक हो करके वैज्ञानिक बनते हैं।

यह जो मन और प्राण है, एक सूत्र में आ करके वहीइन्द्रियों के द्वारा विभक्त हो करके इसीलिए उसे योग की इच्छा होती है क्योंकि योग के तत्त्व भी इसमें विद्यमान रहते हैं। तो परिणाम क्या? वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय क्या है? हमें इस मानवीय दर्पण को विचारना चाहिए। मानव दर्पण को, मानव विज्ञान को और बाह्य जगत वाले विज्ञान को समन्वय करना नहीं जानता। वह योगेश्वर नहीं बन सकता। 21.02.1980

445 त्रेता का काल

त्रेता के काल में महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी रोहिणी-केतु और कवन्धि थे। अपने पूज्य गुरु की विज्ञानशाला में विद्यमान थे। राजा रावण का जितना वंश था, वह कुम्भकरण हो, रावण हो, मेघनाथ इत्यादि थे, सभी महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में विज्ञान की शिक्षा का अध्ययन करते रहे। परन्तु जब भी इस प्रकार का कोई अवसर आता, तो विज्ञानशाला में वैज्ञानिकों की सभाएं होतीं और सभाएं होकर के यह निर्णय किया जाता कि ग्रहण क्यों होता है?इस ग्रहण का मूल क्या है?जो इस प्रकार समाज इतना भयभीत, और त्रस्त हो जाता है। परन्तु किसी भी काल में ऐसा वैज्ञानिक नहीं हुआ जो इस प्रकार विडम्बनामयी मृत्यु से भयभीत हो गया हो। क्योंकि परम्परा में वैज्ञानिकों का यह लक्षण रहा है कि परमात्मा ने सृष्टि का निर्माण किया और जितना भी ज्ञान और विज्ञान अथवा परमाणुवाद है उस परमाणुवाद को हम यन्त्रों के रूप में दृष्टिपात करना चाहते हैं। उन्होंने अग्नि के ऊपर, पृथ्वी के ऊपर तथा जल इन तीनों के परमाणुओं के ऊपर विश्लेषण करना प्रारम्भ किया।

अग्नि की एक धारा का वैज्ञानिक विभाजन कर रहा है और वही धारा समुद्र में अग्निकांड बन जाते हैं और वही अग्नि द्वितीय परमाणु बन कर के माता के गर्भ स्थल में बालक का निर्माण कर रहा है। वही अग्नि विज्ञानयुक्त आभा में रमण करने वाली है। 22.02.1980

446 त्रेता के काल ग्रहण

एक समय त्रेता के काल में पृथ्वी और सूर्य दोनों के मध्य में चन्द्रमा आ गया और चन्द्रमा आ कर के दिवस की रात्रि बन गई। रात्रि बन गई, तो वैज्ञानिकों ने यह विचारा यह रात्रि क्यों बन गई है? जिस जिस भाग की चन्द्रमा ने सूर्य की किरणों को अपने में धारण कर लिया था, वही रात्रि बन गई। इसी प्रकार आज भी वैज्ञानिकों का यही मन्तव्य था। वैज्ञानिकों को यह त्रास्तता कहाँ से प्राप्त हो गई है? क्योंकि पूर्व के वैज्ञानिक संसार को त्रास नहीं देते थे। मुझे स्मरण है, जब वह समय आया तो राजा महाराज उनके समीप पहुंचे, महाराजा कौशल्य ऋषियों के द्वार पर पहुंचे और कहा कि महाराज! जो छाया आ रही है, राहु, केतु दोनों मण्डलों की धारा से आ रही है इसका राष्ट्र पर क्या परिणाम होगा? ऋषि कहता है हे पुत्र राजन्! किसी भी भय और त्रास की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वह वैज्ञानिक आभा में रमण करने वाले थे। वह वैज्ञानिक वायु को आहार करने वाले थे वह वैज्ञानिक अहिंसा परमोधर्मः के ऊपर चिन्तन करने वाले थे। 22.02.1980

447 वैज्ञानिकों द्वारा त्रास का कारण आहार का दोष

आधुनिक काल का जो वैज्ञानिक है, उस में इतनी त्रासता कहाँ से आ गई? आधुनिक वैज्ञानिक कहता है कि हो सकता है यह समाज नेत्रों से हीन हो जाएगा, यह समाज मृत्यु को प्राप्त हो जाए। ऐसा हमारा अनुमान है, ऐसा हमारा विज्ञान कहता है। यह विश्वास नहीं प्रकट कर रहे हैं। इन वाक्यों को यन्त्रों में क्या, दिग्दर्शनों में क्या, सर्वत्र समाज को ऐसा निष्क्रिय बना दिया, क्या वह अपने कार्यों में असफल होने लगे? आधुनिक काल के वैज्ञानिकों की मैं चर्चा कर रहा हूँ। यह विज्ञानमयी निराशा कहाँ से उत्पन्न हुई है? विज्ञानमयी इतनी विडम्बना कहाँ से उत्पन्न हुई है? वैज्ञानिकों के मस्तिष्कों में प्राकृतिक समूह से इतनी त्रासता क्योंकि उत्पन्न हुई है? इसके मूल को स्वीकार कर लो। आज का वैज्ञानिक, आज का चिकित्सक जो मानव की चिकित्सा कर रहा है, आज का समाज जो परमाणुवाद को, वैज्ञानिकों के द्वारा जो अपनी अनुसन्धानशाला में अनुसन्धान करने जा रहा है, इनमें मूल कारण क्या है? यह मृत्यु से इतनी दूर क्यों जाते हैं? क्योंकि इन में आहार का दोष आ गया है और दूसरे प्राणियों का भक्षण करने के लिए यह अपने को यह जानता है कि मैं वास्तव में अपने शरीर को पौष्टिक बना रहा हूँ।

परन्तु मैं यह कहा करता हूँ पूज्यपाद गुरुदेव ने और मुझे बहुत समय दृष्टिपात हुआ ऐसा जो समाज है, ऐसा जो चिकित्सक है, ऐसा जो वैज्ञानिक है जो दूसरे प्राणियों के रक्त को पान करने वाला, दूसरे के रक्त को अपना भोजन बना रहा है, ऐसा जो प्राणी है, ऐसा जो विज्ञान है, उसकी मृत्यु तो आई रहती है। वह मृत्यु से भयभीत होना ही नहीं मृत्यु तो उनकी जभी आ जाती है क्योंकि मृत्यु के आँगन में आने वाला प्राणी श्वास की वार्त्ता प्रकट नहीं कर सकता। क्योंकि आज का जो समाज है, उसमें नास्तिकवाद का एक मूल कारण यह भी है कि

यहाँ जो चिकित्सक हैं, उन्होंने इस समाज को आहार और व्यवहार में इतना निष्क्रिय बना दिया है, ब्रह्मचर्य हीनता के दोषों से मानव भ्रष्ट हो रहा है। विद्यालयों में जब ब्रह्मचारियों के छात्रों के द्वार पर जाते हैं तो दूसरों के रक्त पान करने का उनका मौलिक स्वाभाविक गुण बनता चला जा रहा है। उसका परिणाम, उसका दोषी कौन है? उसके दोषी समाज के चिकित्सक और वैज्ञानिक माने जाते हैं। परन्तु राष्ट्र भी इतना दूषित नहीं है। आधुनिक काल का वैज्ञानिक किस प्रकार समाज को त्रास देता रहता है और वह जो त्रासता है, वही समाज को निष्क्रिय बनाती जा रही है। आज जब मानव से यह कहा जाता है, हे मानव! तू अपने मानवीय दर्शन को जानने का प्रयास कर। मानव दर्शन को नहीं जानता, अग्नि की तरंगों को जानता है। अग्नि की तरंगों का अपने जीवन से जो समन्वय होता है, उसको नहीं जानता। जब अग्नि की तरंगों का अपने मानवीय जीवन से समन्वय होता है, उससे आधुनिक काल का वैज्ञानिक दूर जा रहा है।
आधुनिक काल के वैज्ञानिक का मंगल में यान जा रहा है। मंगल में यन्त्र जा रहा है, चन्द्रमा में जा रहा है। आज यन्त्रों पर यन्त्र जा रहे हैं। जब राष्ट्र के और समाज के गर्भ में प्रवेश करते हैं और समाज के उनसे यह कहा जाता है कि तुम्हारा जीवन कितना पवित्र है। तुम्हारा जीवन कितना सुरक्षित है। मानव, मानव से त्रासता को प्राप्त हो रहा है। मानव, मानव से मिलान करने के लिए तत्पर नहीं है। जहाँ मानव, मानव से मिलान करने में प्रसन्नता होती थी, उल्लास होता है, वहाँ मानव, मानव से भयभीत होता हुआ, अपने जीवन को मानवता में प्रकट नहीं कर रहा है। 22.02.1980

448 तरंग निर्माण

ऋषिजन कहते हैं जब सात्विक प्रवृत्ति रहती है जो तीन हजार सात प्रकार की धाराओं का जन्म होता है। परन्तु जब रजोगुणी होती है तो छह हजार पांच सौ बावन प्रकार की तरंगों का जन्म होता है। और जब तमोगुण होता है। उस समय मुनिवरों! मानव का सुकृत हनन होने लगता है। तमोगुणी प्रवृत्ति में तमोगुणी जो नेत्रों की ज्योति है उसमें लगभग नौ हजार तरंगों का जन्म होता है और उससे मानव का सुकृत हनन हो जाता है। परिणाम क्या? कि इस विषय को विचारना है। नेत्र जब सात्विक प्रवृत्ति में होते हैं, नेत्रों की ज्योति को विचारता है। वह नेत्रों की ज्योति अग्नि की धाराएं हैं। उन अग्नि की धाराओं को हमें आन्तरिक जगत में समेट लेना है। 78.92.153

449 परमाणुवाद का ज्ञाता

वैज्ञानिक कैसे होते हैं? वैज्ञानिक उन्होंने कहा जाता है जो आत्मीयता और परमाणुवाद को जानने वाले होते हैं। परमाणुवाद को कौन जानता है? वैज्ञानिक जानता है। परमाणुवाद को कौन जानता है? आध्यात्मिकवेत्ता जानता है। परमाणुवाद को कौन जानता है? वह जानता है, जो मानवीय दर्शन को जानता।
जब मैं विद्यालयों में प्रवेश करता हूँ, विद्यालयों में यह कहा करता हूँ, तुम्हारे शरीर में कितनी इन्द्रियां हैं? इन्द्रियों का भी वर्णन नहीं कर सकते। जब मैं यह कहा करता हूँ तुम्हारे शरीर में कितने प्राण हैं? प्राणों का वर्णन भी नहीं कर सकते। जब मैं यह कहा करता हूँ कि बुद्धि का माध्यम कहाँ है? तो बुद्धि के और मनस्तत्व के माध्यम का निर्णय नहीं कर पाते। क्या मैं इनको विद्यार्थी कहूँ? क्या उच्चारण कर सकता हूँ? वह आचार्यों के समीप पहुंचते हैं, आचार्य भी इसको नहीं जानते। यह दोषारोपण किसका है? आचार्यों का है या यह दोषारोपण ब्रह्मचारियों का है? विद्यार्थियों का है? छात्रों का है? यह दोषा रोपण सब वैज्ञानिकों के द्वार से आ रहा है।
क्योंकि वैज्ञानिक जन मूल को नहीं जानते। मूल को न जानकर के केवल वृक्ष की शाखा को जानता है आज का वैज्ञानिक पत्तों को जानता है। आज का वैज्ञानिक यह नहीं जानता कि मानव का मूल क्या है? समाज का मूल क्या है? समाज के मूल को नहीं जानोगे। राष्ट्र के मूल को नहीं जाना जाएगा, तो यह समाज कुछ काल में अग्नि का काण्ड बनकर के रह जाएगा। 22.02.1980

450 स्वाहा का प्रभाव

हम जो स्वाहा उच्चारण करते हैं। उनका सम्बन्ध बृहस्पति लोको तक हमारी तरंगें जाती है। उससे हमें लाभ क्या है शरीर में? कि हमारा जो पिण्ड है मानो उसमें बुद्धि का क्षेत्र है। जो मन का क्षेत्र, बुद्धि का क्षेत्र है उसमें मुनिवरों! देखो, लोक लोकान्तरों का विधान आता है। लोक लोकान्तरों से जो तरंगें आती है। उन तरंगों का हम जब यौगिक क्षेत्रों में, विज्ञान के क्षेत्रों में प्रवेश होकर के मिलान मिलाते हैं तो मुनिवरों! देखों, उनका समन्वय बृहस्पति लोकों से हो जाता है दिनांक-१६-१२-८१
मानव का एक वशिष्ठ स्वर है और एक विश्वामित्र है। एक को सूर्य स्वर कहा जाता है और एक को चन्द्र स्वर कहा जाता है। ये जो दोनों स्वर हैं ये सूर्य की गति के आधार पर चला करते हैं, कुछ चन्द्रमा के आधार पर चलते हैं। ये जो दोनों गतियां हैं चन्द्रमा में प्रकृति में दो प्रकार की गति है। इसमें एक उष्ण कण हैं और एक शीतल हैं। तो दोनों प्रकार की गतियों को जानने वाला है, स्वरों को प्राणों को जानने

वाला होता है वह देखो, समय को जान जाता है कि कितना समय हुआ है, कितने समय में इनको कहाँ गमन करता है, कितने समय में कौन-सा स्वर चल रहा है, कितने समय में इसका परिवर्तन होना है। इन स्वरों में भी नाना प्रकार के भेद हैं। जैसे एक चन्द्रमा का स्वर है। एक स्वर तो ऐसा होता है जब इस स्वर की गति परिक्षिप्त हो जाती है। मानो देखो, जैसे चन्द्रमा के साथ में पुष्प नक्षत्र हैं और जेठाय नक्षत्र का मिलान मानो उसकी सीधी किरण उसमें आ रही है तो उस समय वह जो चन्द्र स्वर है। उसका ढाई घड़ी समय रहेगा। यदि चन्द्र स्वर के साथ में शनि का प्रकोप है और सूर्य की छाया आ रही है और पृथ्वी की गति मन्द होती है उस समय इस स्वर की जो गति है लगभग १३ और ८ घड़ी के मध्य में रहती है। इसी प्रकार बेटा! तुम्हें मैं ऐसे गम्भीर क्षेत्र में लिए जा रहा हूँ जो बहुत ही अनुभव के क्षेत्र हैं। जब चन्द्र स्वर का समय आता है मानो चन्द्र स्वर के आधार पर सूर्य स्वर के गर्भ में यदि पुष्प नक्षत्र है, स्वाति की छाया है, पृथ्वी की गति तीव्र होती है। उस समय जब पृथ्वी की गति तीव्र होती है तो उस समय जो सूर्य का स्वर है ढाई घड़ी तक उसकी गति रहती है। यदि सूर्य की किरणों के गर्भ में शनि की छाया है और पुष्प नक्षत्र उसके गर्भ में विराजमान है और चन्द्रमा की गति मन्द है और इस पृथ्वी की जो गति है वह उस काल भी रहती है। उस समय मेरे प्यारे! उस चन्द्र स्वर की जो गति है वह देखो, १३-१३ घड़ी तक चली जाती है। १४ घड़ी तक भी चली जाती है। वह सूर्य स्वर की जो गति है। मेरे प्यारे! देखो, उस मानव का सौभाग्य होता है जिस मानव की सूर्य की गति तीव्र होती है। क्योंकि वह मानव मुनिवरों! देखो, विशेष स्थल रहता है। इसलिए प्रत्येक योगी हमारे यहाँ साधना करने वाले योगियों का जो नियम है वह सूर्य स्वर को विशेष गति पर लाते हैं, सूर्य स्वर को लाने वाला मानव स्वस्थ रहता है। चन्द्र स्वर गति वाला जो होता है उसके स्वास्थ्य में गति कुछ मन्द होती है, प्राण की गति मन्द होती है।

मेरे प्यारे! वह जो स्वरों का मेल है, स्वरों का जो मिलान है यह नाभि केन्द्र से लिया जाता है और नाभि केन्द्र से ले करके ब्रह्मरन्ध्र तक चलता है। इस ब्रह्मरन्ध्र में लगभग दो सौ छत्तीस प्रकार की पंखड़ियां होती हैं और उन पंखड़ियों में जब प्राण की अधिक विशेषकर उसमें गति होती है तो वे पंखड़ियां गति करती हैं तो प्राण की जो गति है वह सूर्य स्वर में विशेषकर होती हैं। क्योंकि प्राण की गति विशेष उस पंखड़ी की गति चक्र से टकराती रहती है। यदि मन्द हो जाती हैं तो सूर्य में अवरेहत हो जाती हैं, तमोगुणी प्रवृत्ति बलवती हो जाती है। तो हमारे ऋषि मुनियों ने स्वर विज्ञान को जाना इस स्वर विज्ञान को जानने के पश्चात इस पृथ्वी की गति को जाना। पृथ्वी की गति को जान करके चन्द्रमा से मिलान किया और चन्द्रमा से मिलान करके सूर्य और पुष्प नक्षत्र मानो इन सर्व नक्षत्रों की गति को जान करके इस संसार को नापने का प्रयास किया और प्रयास करके वे महान् वैज्ञानिक बने और योगी बने। योग और विज्ञान दोनों परस्पर एक ही सूत्र के मनके हैं। क्योंकि इसको हम भौतिकवाद में ले जा ककरके आध्यात्मिक क्षेत्र में परिणत कर देते हैं।

विचार विनिमय यह कि योगी यह कहते हैं, हमारे आदि आचार्य यह कहते हैं कि जो मानव सूर्य स्वर को जानने वाला होता है, सूर्य स्वर से प्राणायाम करता है उसके शरीर में किसी भी प्रकार का रोग नहीं होता। योगियों के शरीर इसीलिए बलिष्ठ होते हैं। क्योंकि वे प्राणायाम करते हैं। प्राण की गति को जानते हैं। स्वर विज्ञान को जानते हैं। स्वर विज्ञान ऐसा विज्ञान है कि जो मानव उनके समीप आता है वह उसके भविष्य की चर्चा भी जानता है। उसके भविष्य को भी जानते हैं साथ में उसके वर्तमान की भी जानते हैं। उसकी मनोनीति जो भावना है स्वरों को देखकर उसकी गति का निर्णय दे देते हैं कि यह प्राणी इस अमुक कार्य के लिए मेरे द्वार पर आया है। वह ब्रह्मवेत्ता बनने के लिए आया है।

451 अज्ञानता में रुढि

एक वैज्ञानिक यह जानता है कि मैं चन्द्रमा में पहुंच गया हूँ। परन्तु कुछ रूढ़ियां ऐसी हैं वे यह कहती हैं कि चन्द्रमा में जा ही नहीं सकते। क्यों नहीं जा सकते चन्द्रमा में? चन्द्रमा में जाना ऐसा कौन-सा आश्चर्य है? क्यों इस प्रकार की वार्त्ता राष्ट्र में प्रकट की जाती है! ये रूढ़ियां हैं और ये राष्ट्र तथा समाज को विनाश करने वाली है। 22.02.1980

452 वैज्ञानिकों में दोष

वैज्ञानिकों में दोष है। वैज्ञानिकों में दोषारोपण हो गया है? और वह दोषारोपण क्यों है? यह अन्न का दोष है। आहार-व्यवहार दोनों दूषित हो गए हैं। यह अन्न का दोष है। आहार-व्यवहार दोनों दूषित हो गए हैं। इसलिए वैज्ञानिक यथार्थ उच्चारण करता हुआ त्रास स्वीकार करता है और इसी प्रकार राष्ट्र में नाना रूढ़ियां उच्चारण कर रहे हैं। नाना धर्म उच्चारण कर रहे हैं। क्योंकि वह पद से विच्छेद न हो जाएं। पदों की लोलुपता से धर्म का, मानवता का, यथार्थता का, सत्यता का ह्रास किया जाता है। ऐसा कोई राष्ट्र नहीं होता और ऐसा कोई समाज नहीं होता। 22.02.1980

453 गुरुदेव का वृत्त

एक समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव और महर्षि समीर मुनि महाराज महाराजा अश्वपति के यहाँ पहुंचे, तो उनके राष्ट्र कोष में जो द्रव्य आता

था, वह कुछ तमोगुणी अन्न आ गया। जब तमोगुणी अन्न आ गया तो उसे भोजनालय में तपाया गया। तपाए जाने के पश्चात उस समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव उस स्थली पर पहुंचे। राजा ने नमस्कार करके कहा कि भगवन्! आप भोजन कीजिए, आप कुछ पान कीजिए आप अतिथि हैं। उन्होंने तथा समीर इत्यादि ऋषियों ने कहा हे राजन! हम तुम्हारा अन्न ग्रहण नहीं करेंगे। राजा ने कहा कि महाराज! ऐसा क्यों? तो उन्होंने कहा कि तुम्हारा जो अन्न है, वह राष्ट्रकोष का है, और वह तमोगुणी अन्न होता है, और अन्न का दोष जो होता है, राजा के राष्ट्र में वह सर्वत्र बुद्धि को विनाशता की तरफ ले जाता है। वही अन्न वैज्ञानिकों को दिया जा रहा था। वैज्ञानिक भी उस अन्न को पा करके यथार्थता को उच्चारण न करके मौन रहते थे। उस समय पूज्यपाद गुरुदेव की वार्त्ता राजा ने अनसुनी प्रकट की। उन्होंने कहा, हे राजन! हम तुम्हारा अन्न ग्रहण नहीं करेंगे। राजा ने नतमस्तक होकर के कहा महाराज! मेरा जो अन्न है, वह वास्तव में तमोगुणी अन्न है, दूषित है। हो सकता है वह तुम्हारी प्रवृत्तियों को दूषित न कर दे। मैं अभागा बन जाऊँ, उस अन्न को उन्होंने पान नहीं किया। राजा अपने गृह में ले गए। अपनी पत्नी से बोले, हे देवी! तुम ऋषि को भोजन कराओ। जो कृषि का अन्न होता था, वह पान कराया और पान कराने का परिणाम यह हुआ कि बुद्धि स्वच्छ रही। तो इसी प्रकार पुरातन का जो महापुरुष होता है ऐसा वैज्ञानिक और ब्रह्मवेत्ता बनता है। आधुनिक काल का वैज्ञानिक आधुनिक काल का जो साधु है, महात्मा है, वह ऋषि बन रहा है और यदि उसे राष्ट्र का अन्न प्राप्त हो जाए, तो गौरव स्वीकार करता है। आधुनिक काल ऐसा बन गया है, वह राष्ट्र के गौरव को स्वीकार कर रहा है। वह यथार्थता में अपनी तपस्या को नष्ट कर रहा है। परन्तु अब यह समाज नष्ट होने जा रहा है। किसी भी क्षेत्र में जब मैं प्रवेश करता हूँ, उसी क्षेत्र में मुझे अग्नि प्रदीप्त होती दृष्टिपात आ रही है। हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! इस समाज की आभा मुझे स्मरण नहीं आ रही है। यह समाज कहाँ जाएगा? आधुनिक काल में इतना त्रास वैज्ञानिकों ने प्रकट किया कि तुम गृह में प्रवेश हो जाओ, अगर तुम दृष्टिपात करोगे, तो नेत्रों से हीन हो जाओगे, हीन बन जाओगे तुम्हारी मृत्यु आ जाएगी। यह मृत्यु का प्रश्न क्यों आ गया है वैज्ञानिकों को? अरे, वैज्ञानिक, तो मृत्यु से पार होने की चर्चा कर रहा है। वह परमाणुवाद को इसलिए जान रहा है कि मेरी मृत्यु न हो और तुझे ज्ञान हो जाए, कि यह शरीर क्या है। परमाणुवाद क्या है? कौन से परमाणु कौन से तत्त्व को ले करके किस इन्द्रिय का निर्माण होता है? यह तो मुझे प्रतीति होनी चाहिए। तुम्हें यह प्रतीति हो गई है कि तुम गृह से अगृहि बन जाओगे, तुम्हारी मृत्यु आ जाएगी। अरे, तुम्हें कहाँ से इतनी निष्क्रियता आ गई है? तुम्हारा मनोबल इतना निकृष्ट हो गया है। अरे, जहाँ वैज्ञानिकों में मनोबल होना चाहिए, राष्ट्र को भी कहते हैं राष्ट्र ऊँचा बनाना चाहिए लोकों की यात्रा कर रहा है, वहाँ वैज्ञानिक मृत्यु का भय देता है समाज को, यह कैसा आश्चर्य है? यह कैसा दुर्भाग्य है? अरे, वैज्ञानिकों को विज्ञान की चर्चा से मृत्यु को विजय करना है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कई समय से उच्चारण कर रहे हैं कि विज्ञान से मृत्यु को पार होना है। विज्ञान का सम्बन्ध आध्यात्मिकवाद में कैसे प्रवेश करता है, विज्ञान को जान करके मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कई समय से उच्चारण कर रहे हैं। वहीं से मैंने प्रेरणा ले करके इन वाक्यों को प्रकट कराया। आज भी मैं अपने विचारों को इसलिए प्रकट कर रहा हूँ। परमाणुवाद को अग्नि की धाराओं को जानने वाला वैज्ञानिक, नाना लोकों में रमण करने वाला वैज्ञानिक आज मृत्यु से मानव समाज को त्रास दे रहा है। यह कैसा दुर्भाग्य है इस समाज का? यह अन्न का दोष है उनका कोई दोष नहीं है। 22.02.1980

454 मानव का जीव भक्षण से, मानव भक्षण

मैंने बहुत पुरातन में अपने वैज्ञानिक को जो इस पथ पर जाने वाले हैं कहा कि हम जिसकी चिकित्सा करते हैं, वही बलवती होती जा रही है। जिस रोगी को चिकित्सा करते हैं वही रोगी ओझल होता जा रहा है। हम प्राणों की रक्षा प्राणियों से करते हैं, वही प्राणी बलवती होते जा रहे हैं। जैसे पुरातन काल में त्रिकाठ जो प्राणी है, आधुनिक काल में उसे मच्छर कहते हैं। परन्तु पुरातनकाल में जिसको मुक्ताऋणी कहते थे, आधुनिक काल में उसे महामारी के नाम से परिणत किया जाता है। ये क्यों बलवान होते जा रहे हैं? इसलिए कि इनके जो पुरातन जन्म में प्राणी ने प्राणी को भक्षण कर लिया था, वही इन्हें त्रास दे कर अग्निकाण्ड की आभा में प्रकट करा रहा है, वही प्राणी द्वितीय रूपों में आ करके। क्योंकि आधुनिक काल के वैज्ञानिक इस तथ्य पर जाने वाले हैं। प्राणियों का आदान-प्रदान हो रहा है। जो प्राणी को आहार कर रहा है, वही प्राणी उसका दुःखद बन रहा है। वही दूसरे रूप में उसके दुःख का कारण बन रहा है। उसे रोगी बना रहा है। जो प्राणी रुग्ण हो रहा है और रुग्ण होता हुआ प्राणी का भक्षण करता है वह और अधिक रुग्ण हो रहा है, वह विनाशत को प्राप्त हो रहा है। परिणाम क्या? एक प्राणी को त्रास देने में नष्ट करने में लगा हुआ है। उसका कारण है कि मानव का आहार दूषित हो गया है। मानव का व्यवहार दूषित हो गया है। 22.02.1980

455 धर्म में रुढियां

आज सन्तानों में जाओ। माता-पिता यह चाहते हैं कि सन्तान पवित्र बनें परन्तु पवित्र बन नहीं पा रही हैं क्योंकि व्यवहार पवित्र नहीं है। माता, माता नहीं रही, पिता, पिता नहीं रहा है। क्यों नहीं रहा है? इसलिए कि उनका आहार और व्यवहार दोनों दूषित हो चुके हैं और

वैज्ञानिकों का व्यवहार भी दूषित हो गया है। प्रत्येक मानव धर्म के मर्म को जान रहा है। प्रत्येक मानव धर्म में जा रहा है। कोई मानवमोहम्मद के मानने वाला, कोई ईसा को मानने वाला, कोई बुध को मानने वाला और नाना प्रकार की रूढ़ियां बनी हुई हैं। परन्तु जो नाना प्रकार की रूढ़ियां हैं, उनमें धर्म ही धर्म प्रतीत होता है। परन्तु जब उनके गर्भ में पहुचोगे तो कण्ठ तक उच्चारण करने मात्र रह गया है। कण्ठ तक उच्चारण कर रहा है। हृदय से उसको स्वीकार नहीं कर रहा है। हृदय से राष्ट्र के द्रव्य को स्वीकार कर रहा है। मोहम्मद के जानने वाला कहता है, हमें राष्ट्र पर छा जाना चाहिए और ईसा वाले चाहते हैं हम राष्ट्र पर छा जाएं और भी नाना रूढ़ियां कहती हैं, हम राष्ट्र पर छा जाएं। यह पद की लोलुपता है। अरे, धर्म कहाँ रहा? धर्म केवल कण्ठ तक रह गया, केवल पदों तक रहा गया है। यह मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को प्रकट कराने के लिए आया हूँ। क्या यह धर्म है? चाहे इन्हें नाना धर्म उच्चारण कहना पड़े। यह नहीं जानते कि वेद कहता है कि धर्म केवल एक है और धर्म के मर्म को जानना मानव का कर्त्तव्य है।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने बहुत पुरातन काल में यह कहा था कि धीमी-धीमी अग्नि प्रदीप्त होने जा रही है। आज वह धीमी-धीमी अग्नि प्रदीप्त होने जा रही है। कुछ काल में यह अग्नि प्रदीप्त हो जाएगी, जो धीमी-धीमी अग्नि प्रवाह से गति कर रही थी, वह कुछ काल में प्रदीप्त होने वाली है। वह ऐसी प्रदीप्त होगी कि मानव-मानव का पिपासु नहीं, मानव-मानव को यह जानेगा कि तेरा और मानव द्वितीय कहाँ से आएगा, ऐसी अग्नि प्रदीप्त हो जाएगी। परिणाम क्या? कण्ठ तक धर्म रह गया और हृदय में जो हृदय रूपी गुफा हैं वह शान्त हो गईं, और वह दूषित हो गई है दोषो में। इसलिए मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से क्षमा चाहूँगा, जो मैंने कटु वाक्य उच्चारण किए हैं। वह क्षमा कर ही देंगे। तो मैं यह वाक्य प्रकट कर रहा था कि जिस भी क्षेत्र में तुम जाओगे वही क्षेत्र में अग्निमय दृष्टिपात आ रहा है। इसलिए मैं यह कहता रहता हूँ कि अग्नि ही अग्नि दृष्टिपात है। द्रव्य राष्ट्र की लोलुपता में आ गया है। धर्म इस समाज में केवल कण्ठ तक रह गया है। 22.02.1980

456 मानव की उत्पत्ति

विज्ञानशाला में ऋषि विद्यमान है वह उड़ान उड़ रहा है कि यह परमाणुवाद की उत्पत्ति कैसे हुई! वह उच्चारण कर रहा है वेद मन्त्रों के द्वारा कि संकल्प में मानव की उत्पत्ति कैसे हुई? जब संसार का जन्म हुआ, मानव जाति उत्पन्न हुई। इस मानव का निर्माण और मानव की उत्पत्ति कैसे हुई? वह जो संकल्पमय शक्ति है यह क्या है? जो आत्माएं सृष्टि के सृजन होने पर मोक्ष के निकट होती हैं वह ज्ञान और विज्ञान से कटिबद्ध होती हैं और ज्ञान और विज्ञान से जो कटिबद्ध आत्माएं होती हैं। वे संकल्प करती हैं और संकल्प करके जो स्वाभाविक परमाणु जागरूक होते हैं, जैसे परमाणुओं का जन्म होता है एक महत्तत्व है और जब उसका विभाजन हुआ और विभाजन होने से उसकी प्रतिभा में गति आने लगी, गति के आने के पश्चात जब यह पंचभौतिक परमाणु अपने-अपने स्वाभाव में गति करने लगे, इसी प्रकार वह जो संकल्पमय शक्ति थी, जिन आत्माओं की यह इच्छा थी, कि मैं मोक्ष को जाना चाहता हूँ मानव के शरीर में प्रवेश करके उन्हीं आत्माओं ने संकल्प किया। संकल्प मात्र से, पूर्व संकल्प के आधार पर बिना माता-पिता के संकल्प से वह परमाणु अपनी-अपनी आभा में परणित हो गए और मानव का प्रादुर्भाव हो गया, मानव समाज उत्पन्न हो गया।

457 ऋषि-मुनियों की संकल्प शक्ति

ऋषि-मुनियों की संकल्प शक्ति, जो मोक्ष के निकट आत्मा होती हैं, मोक्ष उनका होता नहीं, कुछ मोक्ष के और निकट होती हैं परन्तु कुछ और त्रि-प्रकार के होते हैं वह पूर्व संकल्प के आधार पर परमाणुओं को अपने में धारण कर लेती हैं और वह कैसे धारण करती हैं? यह बड़ा विचित्र वाक्य है। यह कैसे हो सकता है? जैसे जीवन मुक्ति आत्माएं होती हैं, मोक्ष नहीं, जीवन मुक्त आत्माएं ऐसी होती हैं कि यहाँ दृष्टिपात हो रहा था। और वहाँ से ओझल हो गया। मैंने भी सर्वत्रता को प्राप्त किया कि अभी अभी दृष्टिपात हो रहा है। अभी-अभी नहीं हो रहा। संकल्प से दृष्टिपात और संकल्प से ओझल हो जाता है, इस प्रकार वह कर्म बन गया। कर्म बनकर के यह संसार की उत्पत्ति हो करके, संसार अपनी गलियों में आने लगा, सृष्टियां उत्पन्न होने लगीं। 23.02.1980

458 सृष्टि का सृजन और यज्ञ

सृष्टि के प्रारम्भ में, जब सृष्टि का सृजन हुआ और इस संसाररूपी यजशाला का निर्माण हुआ तो पंच होता बने और पंच होता बन करके ब्रह्मा उद्गान गाने लगा, उद्गीत गाने लगा। जब ब्रह्मा बनकर परमात्मा उद्गीत गाने लगा और आत्मा उसमें यज्ञमान बन गया। यज्ञमान बन करके याग कर रहा है। कैसा प्रिय याग हो रहा है? इस मानव ब्रह्माण्ड में आत्म-चेतना विद्यमान है। इसी मानव ब्रह्माण्ड का सूक्ष्म स्वरूप इस चेतना का निर्माण किया, इसमें जो दस-प्राण बाह्य जगत में कार्य कर रहे हैं, जो पांच ज्ञान इन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां बाह्य जगत में कार्य हो रहा है, वह आन्तरिक जगत में भी हैं, और जो मन की धाराएं हैं, मन बुद्धि, चित्त, अहंकार यह अपने सामान्य रूपों से रमण कर रही हैं। तो यह एक सूक्ष्म से ब्रह्माण्ड का निर्माण है। क्योंकि सृष्टि के सृजनकर्त्ता ने, जब संसार का निर्माण हो गया, अंडज, स्वतेज, स्थावर, जरायुज सर्वत्र योनियों का निर्माण हो गया, तो मानव रह गया। जब मानव रह गया तो मानव शरीररूपी यज्ञशाला का निर्माण किया। और

यज्ञशाला का जब निर्माण किया तब यह यज्ञशाला बनी। इसमें पंच होता अपना कार्य कर रहे हैं। पांचों इन्द्रियां अपना उद्गीत गा रही हैं। परिणाम क्या? कि परमपिता परमात्मा चेतनत्व में रमन कर रहा है। 23.02.1980

459 परमाणुवाद की उत्पत्ति-संकल्प से सृष्टि

विज्ञानशाला में ऋषि विद्यमान है वह उड़ान उड़ रहा है कि यह परमाणुवाद की उत्पत्ति कैसे हुई! वह उच्चारण कर रहा है वेद मन्त्रों के द्वारा कि संकल्प में मानव की उत्पत्ति कैसे हुई? जब संसार का जन्म हुआ, मानव जाति उत्पन्न हुई। इस मानव का निर्माण और मानव की उत्पत्ति कैसे हुई? वह जो संकल्पमय शक्ति है यह क्या है? जो आत्माएं सृष्टि के सृजन होने पर मोक्ष के निकट होती हैं वह ज्ञान और विज्ञान से कटिबद्ध होती हैं और ज्ञान और विज्ञान से जो कटिबद्ध आत्माएं होती हैं। वे संकल्प करती हैं और संकल्प करके जो स्वाभाविक परमाणु जागरूक होते हैं, जैसे परमाणुओं का जन्म होता है एक महत्तत्व है और जब उसका विभाजन हुआ और विभाजन होने से उसकी प्रतिभा में गति आने लगी, गति के आने के पश्चात जब यह पंचभौतिक परमाणु अपने-अपने स्वाभाव में गति करने लगे, इसी प्रकार वह जो संकल्पमय शक्ति थी, जिन आत्माओं की यह इच्छा थी, कि मैं मोक्ष को जाना चाहता हूँ मानव के शरीर में प्रवेश करके उन्हीं आत्माओं ने संकल्प किया। संकल्प मात्र से, पूर्व संकल्प के आधार पर बिना माता-पिता के संकल्प से वह परमाणु अपनी-अपनी आभा में परणित हो गए और मानव का प्रादुर्भाव हो गया, मानव समाज उत्पन्न हो गया। 23.02.1980

460 ऋषि-मुनियों की संकल्प शक्ति

ऋषि-मुनियों की संकल्प शक्ति, जो मोक्ष के निकट आत्मा होती हैं, मोक्ष उनका होता नहीं, कुछ मोक्ष के और निकट होती हैं परन्तु कुछ और त्रि-प्रकार के होते हैं वह पूर्व संकल्प के आधार पर परमाणुओं को अपने में धारण कर लेती हैं और वह कैसे धारण करती हैं? यह बड़ा विचित्र वाक्य है। यह कैसे हो सकता है? जैसे जीवन मुक्ति आत्माएं होती हैं, मोक्ष नहीं, जीवन मुक्त आत्माएं ऐसी होती हैं कि यहाँ दृष्टिपात हो रहा था। और वहाँ से ओझल हो गया। मैंने भी सर्वत्रता को प्राप्त किया कि अभी अभी दृष्टिपात हो रहा है। अभी-अभी नहीं हो रहा। संकल्प से दृष्टिपात और संकल्प से ओझल हो जाता है, इस प्रकार वह कर्म बन गया। कर्म बनकर के यह संसार की उत्पत्ति हो करके, संसार अपनी गलियों में आने लगा, सृष्टियां उत्पन्न होने लगीं। 23.02.1980

461 आहार और व्यवहार की पवित्र

आधुनिक काल का विज्ञान। पुरातन काल का विज्ञान यह कहता है कि वैज्ञानिकों का आहार और व्यवहार दोनों पवित्र होने चाहिए। परन्तु आधुनिक काल का विज्ञान यह कहता है वह किसी भी प्रकार की सर्जरी करने वाला हैं वह किसी भी प्रकार के रूपों में अनुसन्धान करने वाला है। आहार और व्यवहार दोनों को विचार में नहीं ला रहा है इसीलिए अज्ञान और त्रासता मुझे दृष्टिपात होती है।

मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को पूर्व काल में अपने वाक्यों को प्रकट कराते हुए कहा था, निर्णय देते हुए कहा था कि संकल्प में जगत विद्यमान है और यह विज्ञानशाला में विज्ञान का निर्माण कर रहा है। आधुनिक काल का निर्माण कुछ ही समय हुआ, परन्तु एक यन्त्र कहते हैं आधुनिक काल के वैज्ञानिक चन्द्रमा और पृथ्वी के मध्य में एक यन्त्रशाला का निर्माण करने के लिए तत्पर हैं। उसका निर्माण भी हो गया। परन्तु उस में वैज्ञानिक विद्यमान हो करके अपनी विज्ञानशालाएं इसके नीचे अनुसन्धान हो रहा है। यह वाक्य यथार्थ है। ऐसी विज्ञानशालाओं का निर्माण होना चाहिए। परन्तु यह अपवाद में आ जाती है। वह यन्त्र चन्द्रमा और पृथ्वी के मध्य में स्थिर हो जाए और स्थिर होकर के वह यन्त्र वहाँ से गति कर जाए यह असम्भव वाक्य है। यह असम्भव है। यह भी असम्भव है कि वह पृथ्वी पर आकर प्राणियों को नष्ट कर दे। परन्तु वैज्ञानिक अपनी बहुत सी वार्त्ता मिथ्या उच्चारण कर रहे हैं और वह मिथ्या क्या है कि वहाँ से वह यन्त्र पृथ्वी के आँगन को चल दिया है। 23.02.1980

462 भारद्वाज की विज्ञानशाला

राजा रावण के विधाता कुम्भकरण ने और ब्रह्मचारी सुकेता ने ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु और कवन्धि तीन ब्रह्मचारी थे, जिन्होंने भारद्वाज की निर्मानशाला में यन्त्र का निर्माण किया था और वह यन्त्र भारद्वाज की निर्माणशाला से उन्होंने पृथ्वी चन्द्रमा के मध्य में स्थिर किया और अपने यन्त्र से उड़ान उड़ करके अनुसन्धानशाला में जाते और दोनों मण्डलों का परीक्षण करते रहे हैं। परन्तु वह जो परीक्षण हो रहा था, नीचे उनकी तरंगें आ रही थीं उनको दृष्टिपात किया जा रहा था। यह भारद्वाज की विज्ञानशाला की वार्त्ताएं हैं। परन्तु राजा रावण के यहाँ बहुत-सी विज्ञानशालाएं इस प्रकार की थीं। आज भी हो सकती हैं। जो पुरातनकाल में थीं, वह वर्तमान में भी हो सकती हैं। परन्तु आधुनिक काल में वह कर्म नहीं किया। संसार में अन्न का दोष होने से, आहार और व्यवहार पवित्र न होने से वैज्ञानिकों के मस्तिष्कों में दूरिता और निराशा के अंकुर उत्पन्न हो करके प्रजा को त्रास देना शुरू कर दिया। इनको यह त्रास क्यों देते हैं कि हमने यह जाना है। अरे, तुमने यह जाना है, ऐसा कोई वाक्य नहीं है।

यह नवीन वाक्य नहीं है परन्तु इसके जानने के साथ तुम्हारी मानवता भी पवित्र होनी चाहिए। तुम्हारी मानवता महान होनी चाहिए। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी प्रकट कर रहे थे। रहा यह वाक्य, भारद्वाज की विज्ञानशाला के वैज्ञानिक यहाँ से उड़ान उड़ाते हैं, लोक-लोकान्तरों की यात्रा कर रहे हैं। एक लोक में नहीं, ७२-७२ लोकों का भ्रमण करके इस पृथ्वी पर अपना यातायात बना रहे हैं। 23.02.1980

463 सतोयुग में विज्ञान कार्य

सतोयुग के काल में महर्षि मार्कण्डेय ऋषि महाराज, महर्षि क्रतिका, नेत्रकेतु ये तीनों वैज्ञानिक अपने यन्त्र में विद्यमान हो करके और यह पृथ्वी और चन्द्रमा के मध्य में जब स्थिर हो गएं। स्थिर होने से वह यन्त्र उन्हें दृष्टिपात आ रहा था। 23.02.1980

464 माता पार्वती और शिव

माता पार्वती और शिव दोनों की दिव्य दृष्टि थी और वह दिव्य दृष्टि से जब वह यन्त्र को दृष्टिपात कर रहे थे। हिमालय की कन्दराओं में विद्यमान हो करके पान कर रहे थे। माता पार्वती ने अपने पति से कहा भगवन! यह क्या है? तो जब वह अपने यान में विद्यमान हो करके अन्तरिक्ष में पहुंचे, दृष्टिपात किया। वह तो महर्षि मार्कण्डेय मुनि महाराज का यन्त्र था।

परिणाम मेरे इन वाक्यों को उच्चारण करने का यह है, मैं यह कहा करता हूँ, हे भोले प्राणियो, जो आज है वह कल नहीं था यह कैसे हो सकता है? 23.02.1980

465 राजा रावण का काल

राजा रावण के यहाँ इस प्रकार के यन्त्र विद्यमान थे जिन यन्त्रों सेसेना संग्राम कर रही हैं और कौन इन्द्रजीत, रावण का पुत्र मेघनाद वह यन्त्र प्रहार कर रहा है। नीचे जल ही जल हो गया और ऊर्ध्वा में अग्नि की वृष्टि हो रही है, सेना अग्नि में भस्म होने लगी। भगवान राम को भारद्वाज मुनि ने एक वरुणास्त्र अस्त्र दिया था। माता अन्नाणि (अनुसूया) ने भी एक यन्त्र माता सीता को प्रदान किया था। उस यन्त्र का जब उन्होंने प्रहार किया, तो अग्नि समाप्त हो गई।

आज का विज्ञान अग्नि प्रदीप्त कर सकता है, परन्तु उसको शान्त नहीं कर सकता। आज के विज्ञान ने इतना जाना है। 23.02.1980

466 महाभारत का संग्राम

जब महाभारत का संग्राम हुआ, उसमें भगवान कृष्ण ने एक सोमकृति नामक रेखा को स्थिर किया। उन्होंने जितने क्षेत्र में संग्राम होने वाला था, अणु शक्ति का, परमाणु शक्ति का संग्राम होने वाला था, परन्तु जब संग्राम हुआ, परमाणु जो शक्ति थी, उस रेखा से बाह्य जगत में नहीं जाती थी। परन्तु आधनिक काल ऐसा है, द्वितीय राष्ट्र अपनी विज्ञानशाला में विद्यमान है और वह यन्त्रों का प्रहार कर रहा है तो राष्ट्र भस्म हो सकता है परन्तु उसको शान्त नहीं कर सकता।

आज इस प्रकार का जो विज्ञान है यह विज्ञान निर्माणित हो गया हैं और इस विज्ञान में कुछ काल में अग्नि प्रदीप्त होने वाली है। ऐसा नहीं कि अग्निकांड नहीं होंगे। जब निर्माण हुआ है तो इनका प्रहार भी होना अनिवार्य है।

ऐसा विज्ञान होना चाहिए? विज्ञान के हम विरोधी नहीं हैं। परन्तु विज्ञान के साथ में चरित्र होना चाहिए।

जिस समय राजा रावण के राष्ट्र में अग्नि यन्त्रों का निर्माण हो गया, जलास्त्रों का निर्माण हो गया, चन्द्रमा में यातायात बन गया, मंगल में यातायात बन गया, सर्वत्रता में यातायात बन गया तो कुकुट मुनि ने यह कहा था रावण! तुम्हारा राष्ट्र कोई प्रिय नहीं लग रहा है। यहाँ यन्त्रों का निर्माण है परन्तु चरित्र का निर्माण नहीं। जब तक चरित्र, मानवता नहीं आ पाती, वह विज्ञान तुम्हारा नाशक बना रहेगा, यह विज्ञान मानव को नष्ट करता रहेगा।

परन्तु पुरातन के काल में भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में जहाँ परमाणु शक्ति का अनुसन्धान किया जाता था, वहाँ उसी यज्ञशाला में, उसी विज्ञानशाला में आध्यात्मिकवाद के परमाणुओं को भी जाना जाता था। आध्यात्मिकवादी अहिंसा परमोधर्म कैसे बनता है? छात्र कैसे ऊँचा बनता है? आज छात्रों के क्षेत्र में जब मैं प्रवेश करता हूँ तो मानवता की आभा समाप्त होती जा रही है। तो यह सर्वत्र दोषी कौन है? इसका दोष विज्ञान के ऊपर है क्योंकि विज्ञान में आहार और व्यवहार की प्रवृत्ति रही है। विज्ञान यह निर्णय नहीं दे सकता, कि अमुक पदार्थ के पान करने से शरीर में क्या-क्या वस्तु उत्पन्न होती है। अमुक अन्न के उत्पन्न करने से क्या-क्या वस्तु उत्पन्न होती है। अमुक अन्य के उत्पन्न करने से क्या-क्या प्राप्त की जा सकती है? परन्तु उस समय वैज्ञानिका का विचार अपंग बना रहता है।

यह विज्ञान अपंग है। जब तक विद्यालयों में आहार और व्यवहार की शिक्षा नहीं होगी, तब तक यह विद्यालय कदापि भी ऊँचे नहीं बन सकते, यह शिक्षा प्रणाली कभी ऊँची नहीं बन सकती। तो कैसे ऊँचा हो सकता है? जब तक स्वतन्त्र रूप से विज्ञान अपना निर्णय नहीं देता, विज्ञान आरोपों महारोपों से ऊँचा नहीं होता, इन्द्रियों के ऊपर अनुशासन नहीं होता, धर्म को नहीं विचारा जाएगा तब तक यह समाज ऊँचा नहीं बनेगा।

जहाँ मेरी माता वीरांगना बन करके विदुषी बन करके राष्ट्र को यह कहा करती थी कि हे राजन! तुझे ऊँचा बनना ही होगा। विदुषी कहती थी आज वह मेरी पुत्रियां माता कौशल्या नहीं रहीं। राम को जन्म देने वाली माता कौशल्या बन जाएं, तो राम का जन्म हो सकता है, माता देवकी कारागार में ऐसे महान पुत्र को जन्म दे सकती है। 23.02.1980

467 माता देवकी के गर्भ में पुनीत आत्मा का प्रवेश

जब माता देवकी के गर्भ में पुनीत आत्मा का प्रवेश हो गया, जब पंच माह हुआ तो नेत्रों में एक लालिमा आ गई। नेत्रों में जब लालिमा आई, तो पति देव से कहती हैं-प्रभु! यह लालिमा क्यों बन गई है? उन्होंने कहा कि ऐसी सन्तान का जन्म होना है जो हमें कारागार से मुक्त करा सकेगा। यह कौन कह रहा है? यह वासुदेव कह रहा है क्योंकि वह वैज्ञानिक हैं। वह अन्तरात्मा से वार्त्ता प्रकट करते थे। परन्तु राष्ट्र की लोलुपता ने उन्हें कारागार में स्थिर कर दिया था, क्योंकि लोलुपता कंस को नहीं होती तो कारागार में नहीं जा सकते थे। जब लालिमा बनी, छठा माह उत्पन्न हुआ, वह देवकी अपने ही मस्तिष्क से ज्ञान की वार्त्ता प्रकट करने लगी। उन्होंने कहा प्रभु! यह मुझे क्या हो गया है? आज मैं मन्त्रों को उच्चारण कर रही हूँ और मेरा ज्ञान उपजने लगा है। उन्होंने कहा-देवी! वह जो पुण्य आत्मा है, जो अन्तरिक्ष से आई है, जो गर्भ में प्रवेश हो गई है उसकी जो तरंगें हैं, उसकी जो ज्ञान है, उसका तुम्हारे मस्तिष्क से समन्वय होने जा रहा है।

अब यह महान विज्ञान कहाँ आ गया है, विज्ञान कौन जानता है? विज्ञान को इन वाक्यों को विचारना चाहिए शब्द जब महा लग्नाकृत्य हो गया, उस समय वह लालिमा समाप्त हो गई और ऊर्ध्व में ब्रह्मरन्ध्र से ले करके और त्रिवेणी के स्थान तक नारी की आभा में रसों का स्वादन होने लगा। उन्होंने कहा प्रभु! यह क्या हुआ? वासुदेव कहते हैं, हे देवी! तेरे गर्भस्थल से योगी का जन्म होगा।यह आभा बना रहे हैं, माता-पिता तो वही कहलाते हैं। उनकी सन्तानें संसार में सूर्य और पृथ्वी की तुलना कर सकती हैं। 23.02.1980

468 वैज्ञानिकों का कर्त्तव्य

आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह प्रकट कर रहा था कि संसार को ऊँचा बनाना है तो वैज्ञानिकों का कर्त्तव्य है कि रूढ़ियों से पृथक हो जाएं। राष्ट्रवादियों का कर्त्तव्य है। कि रूढ़ियों से पृथक हो जाएं। अरे, यह दूसरों के मांस के आहार करने से तुम्हारी उदर की पूर्ति नहीं होगी। इससे तुम्हारे जीवन में रुग्ण उत्पन्न हो जाएंगे और तुम्हारे यहाँ समाज की आह बलवती होती चली जाएगी। परन्तु यदि तुम्हारा आहार-व्यवहार पवित्र बनेगा, ज्ञान की उत्पत्ति होगी तो ज्ञान के द्वारा तुम सन्तान को सुयोग्य बना सकते हो। आज सन्तानें सुयोग्य नहीं रही हैं। उसके मूल में क्या है? आहार और व्यवहार दोनों का दूषितपन है। आहार और व्यवहार दोनों दूषित हो गए। माता कहती है पुत्र मेरी आज्ञा का पालन नहीं कर रहा है। हे माता! तू कैसे आज्ञा का पालन कराना चाहती है? जब मेरे गर्भ स्थल में शिशु था तो उसे दूषित नहीं करना था। जब वह तेरे गर्भस्थल में दूषित हो गया, आज तू कहती है वह तेरी आज्ञा का पालन नहीं कर रहा है। आज्ञा का पालन वह पुत्र करता है जब माता अपनी अन्तरात्मा की आज्ञा का पालन करती है। तो इसलिए वह आहारों से दूषित हो गया। माता तूने अपने आहारों से उस बालक का निर्माण किया था। इसमें किसी का दोषारोपण नहीं। इसी प्रकार वैज्ञानिकों का यह दोषारोपण है, यह त्रासता जो प्रजा को दी जाती है, यह अन्न का सदैव दोष है। परन्तु प्रकृति कुछ कह रही है। और वैज्ञानिक कुछ कह रहे हैं।

आधुनिक काल के वैज्ञानिकों का एक यन्त्र चलता है और वह उच्चारण, घोषणा करता है कि अमुक स्थान में विज्ञान का यन्त्र का प्रहार होगा और वहाँ के प्राणी नष्ट हो जाएंगे। अरे, जिन वैज्ञानिकों को यह प्रतीति नहीं है कि वह कितनी गति से गति कर रहा हैंऔर वह कौन से दिवस को कहाँ जाएगा, कौन-सी स्थली को पहुंचेगा? अरे, यह क्या विज्ञान है इस संसार का? यह कोई विज्ञान नहीं कहा जाता मेरी दृष्टि में।

वह जो यन्त्र है वह यन्त्र नहीं, वह तो सागर की तरंगों में परिणत हो जाएगा।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने प्रकट कराया जब मैंने प्रश्न किया। परन्तु आज मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ मेरा दृष्टिकोण यह कि वह कोई यन्त्र ही नहीं था और इन वैज्ञानिकों ने संसार को दृष्टि में लाने के लिए यन्त्र एक अपवाद में बन गया। मैं इसलिए यह उच्चारण कर रहा हूँ मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने भी प्रकट कराया मेरा भी यह विचार है

विज्ञान होना चाहिए, वैज्ञानिक की अपनी यन्त्रशाला में विज्ञानशाला में यन्त्रों का निर्माण होना चाहिए। मैं इसका विरोधी नहीं राजा यन्त्रों में विद्यमान होकर के पृथ्वी लोक का ही नहीं, मंगल लोकों की यात्रा करने वाला हो और बुद्धि की यात्रा करने वाला हो। चन्द्र लोकों की यात्रा करने वाला हो। यहाँ ऐसे विष्णु राजा हुए हैं जो अपने एक अपने गरुढ रूपी यन्त्र पर विद्यमान हो करके वह यहाँ से उड़ान उड़ते हैं, मंगल और चन्द्रमा की उड़ान उड़कर पृथ्वी पर आ जाते थे। इस प्रकार के राजा हुए हैं। यान होने चाहिए, विज्ञान होना चाहिए। परन्तु विज्ञान एक महान बन कर रहना चाहिए और इस विज्ञान के साथ मैं आध्यात्मिकवाद समन्वय होना चाहिए।

यह रूढ़ि ही संसार को ऊँचा नहीं बनने देती क्योंकि धर्म की जो रूढ़ि होती है, यह धर्म का विनाश कर देती है और यह विज्ञान को अपंग

बना देती हैं। इसलिए यह धारा होनी चाहिए।
मानवता और विज्ञान का दोनों का समन्वय हो और यदि मानवता और विज्ञान का समन्वय नहीं है
राष्ट्र का जो निर्माण होता है वह समाज को ऊँचा बनाने के लिए होता है, समाज को कर्त्तव्यवाद में लाने के लिए होता है और जो राजा समाज को महान और कर्त्तव्यवादी नहीं बना सकता, वह कोई राष्ट्र नहीं होता, न कोई निर्वाचन होता है। 23.02.1980

469 ब्रह्माण्ड की एक सूत्रता

जितना भी यह ब्रह्माण्ड है, अन्तरिक्ष में नाना लोक-लोकान्तर गति कर रहे हैं, यह नाना आकाशगंगाएं तुम्हें दृष्टिपात आ रही हैं, यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड उस माता, चैतन्य देव के गर्भस्थल में विद्यमान रहता है। वह चैतन्य देव जो इस आभा में रमण करने वाला है।
एक आकाश-गंगा में नाना सूर्य हैं, नाना शनि हैं, नाना मंगल कहलाए जाते हैं। नाना सौर-मण्डलों की चर्चाएं होती रहती हैं। तो नाना पृथ्वियाँ सूर्य की परिक्रमा करती रहती हैं।
वह माता वसुन्धरा बन करके सर्वत्र ब्रह्माण्ड को अपने में धारण कर रही है, जैसे जननी माता के गर्भस्थल में अंग-प्रत्यंगों का निर्माण होता रहता है, इसी प्रकार नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों की जो माला है, जो इसको धारण कर लेता है वह प्रभु की आभा में रमण करता रहता है। 28.04.1980

470 आकाश गंगाएं

यह नाना प्रकार की जो आकाश गंगाएं हैं, एक आकाश-गंगा नहीं, नाना आकाश गंगाएं हैं और नाना निहारिकाएं हैं जिन निहारिकाओं में प्रकाश होता रहता है, आदान-प्रदान होता रहता है।
ब्रह्मचारी कवन्धि और महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने आश्रम में विद्यमान हो करके आकाश-गंगा पर विचार विनिमय करने लगे। एक आकाश-गंगा शनि मण्डलों की परिक्रमा करने लगे। तो शनि-मण्डल की आभा उनमें प्रवेश हो गई और प्रवेश हो करके एक आकाश-गंगा में एक अरब के लगभग एक शनि-मण्डलों की गणना की। जिस शनि-मण्डल को पाँच सूर्य प्रकाशित करते हैं, पाँच ऐसे-ऐसे जो हमें प्रकाश देते हैं, ऐसे-ऐसे नाना सूर्य शनि-मण्डल को प्रकाशित करते हैं। कैसा प्रभु का यह अमूल्य जगत है। एक मण्डल दूसरे मण्डल को प्रकाशित करते हैं। एक मण्डल दूसरे मण्डल को सहकारिता में परिणत कर रहा है। इसीलिए हमारे यहाँ सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक सूत्र में पिरोया हुआ है।
आज जब हम इस सूत्र की विवेचना करने लगते हैं, जब हम यह विचारने लगते हैं एक सूत्र में नाना प्रकार के लोक-लोकान्तर पिरोए हुए हैं। एक मण्डल दूसरे मण्डल का सहायक बना हुआ है, जैसे एक प्राणी दूसरे प्राणी का सहायक बना हुआ है। इसी प्रकार सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक सूत्र में पिरोया हुआ है। वाह रे देव! तू कितना वैज्ञानिक है? तू कितना महान् है, तेरी महत्ता का जब मैं वर्णन करने लगता हूँ तो वाणी मौन हो जाती है, नेत्रों की दृष्टि विघटित हो जाती है। श्रोत्रों में श्रवण करने की शक्ति नहीं रहती। वह मेरा देव कितना वैज्ञानिक है, कितना महान् है, कितना विचित्र है कि एक सूत्र में सर्वत्र ब्रह्मण्ड पिरोया हुआ है। 28.04.1980

471 ब्रह्माण्ड की विशालता

ब्रह्मचारी कवन्धि और महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज का विचार-विनिमय हो रहा हैं दोनों विचार-विनिमय कर रहे हैं। उन्होंने कहा, हे ब्रह्मचारी कवन्धि! यह आकाश-गंगा हैं। एक आकाश-गंगा में अरबों-खरबों शनि मण्डल कहलाते हैं। तो इसमें कितने सूर्य मण्डल होंगे, कितने सूर्य होंगे? सौर मण्डलों में रमण करने वाले। एक सौर-मण्डल का अधिपति सूर्य कहलाता है, द्वितीय सौर-मण्डल का अधिपति ध्रुव कहलाता है, तृतीय सौर-मण्डल का अधिपति सोमेश्वर कहलाया गया हैं यहाँ नाना प्रकार के सौर-मण्डल कहलाते हैं। नाना सौर-मण्डलों का समन्वय हो करके एक आकाश-गंगा का निर्माण होता है और नाना आकाश-गंगाओं का मिलान हो करके एक अवन्तिका बनती है और एक सहस्र अवन्तिकाओं का समन्वय हो करके एक कृतिभा बनती है।
परिणाम क्या? एक-दूसरे की आभा में रमण करने वाला यह जगत है। नाना आकाश-गंगाओं में रमण करने वाले याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने ब्रह्मचारी कवन्धि से कहा-हे ब्रह्मचारी कवन्धि! मेरी जो यह विज्ञानशाला है, इस विज्ञानशाला में आकाश-गंगा नहीं, नाना आकाश-गंगाएं दृष्टिपात आती हैं। तुम्हें प्रतीत है कि ऐसी-ऐसी एक आकाश-गंगा में निहारिकाएं हैं, जिन निहारिकाओं का प्रकाश अरबों वर्षों में पृथ्वी मण्डल तक पहुंचता है। बहुत-सी निहारिकाएं इस प्रकार की हैं, जिनके प्रकाश में सृष्टि का कल्प ही समाप्त हो जाता है। उसके पश्चात भी इस पृथ्वी मण्डल पर नहीं पहुंचता। 28.04.1980

472 मेधावी पुरुष

यह कैसा मेरे प्यारे प्रभु का विज्ञानमय जगत है? जिसके ऊपर प्रत्येक मानव को विचार-विनिमय करना है। प्रत्येक मानव चिन्तन और मनन

करने के लिए संसार में आया है। यह मेधावी जो पुरुष होते हैं वह इसके ऊपर सदैव मनन करते रहते हैं।
संसार में तीन प्रकार की आभाएं हमारे यहाँ, परम्परागतों से मानी जाती हैं। सबसे प्रथम वसुन्धरा का तीन स्वरूपों में वर्णन किया गया। वसुन्धरा नाम माता का है। जननी माता के गर्भस्थल में हमारा निर्माण होता है। द्वितीय वसुन्धरा पृथ्वी को कहा जाता है। इसी प्रकार तृतीय में वह चैतन्य देव है, जिसके गर्भस्थल में सर्वज्ञ ब्रह्माण्ड है और उसी से आच्छादित हो रहा है। उसी के गर्भ में यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड ओत-प्रोत रहता है। 28.04.1980

473 वेद मन्त्रों की आभा

प्रत्येक वेदमन्त्र में तीन प्रकार की आभाओं का वर्णन होता है। प्रत्येक वेदमन्त्र हमें तीन प्रकार की उड़ान उड़ा रहा है। सबसे प्रथम व्यवहार है। व्यवहार से मानव के जीवन में किस प्रकार सात्विकता आती है? व्यवहार कैसा हो? माता के प्रति। वसुन्धरा एक व्यवहार का रूप कहलाया जाता है। व्यवहार और उसके पश्चात विज्ञान कहलाया गया है। प्रत्येक मानव को वैज्ञानिक बनना चाहिए, विज्ञान में रमण करना चाहिए। नाना प्रकार की आभाओं में रमण करने वाला मानव वैज्ञानिक कहलाता है। नाना प्रकार के अंग, महाअंग, प्रत्यंगों को जान करके वह यन्त्रादियों का निर्माण करता है। नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करता हुआ, अपने जीवन को वह आध्यात्मिकवाद में प्रवेश कराता है। तृतीय आध्यात्मिक विज्ञान है। आध्यात्मिक विज्ञान क्या है? आध्यात्मिक विज्ञान वह कहलाता है जहाँ मानव मृत्यु से पार हो जाता है। प्रत्येक मानव मृत्यु को नहीं चाहता। मृत्यु से पार होने वाला कौन प्राणी है? वह जो आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता है, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता मृत्यु से पार हो जाता है, मृत्यु को लांघ जाता है। जिस मानव ने संसार में आ करके मृत्यु से पार हो जाने का प्रयास नहीं किया है, वह मानव, मानव नही कहलाता। 28.04.1980

474 भौतिकवाद से आध्यात्मिकवाद

इसीलिए मृत्यु से पार होना है तो आध्यात्मिक विज्ञान में तुम्हें प्रवेश करना होगा। आध्यात्मिक विज्ञान क्या है? व्यवहार में कुशलता हो और भौतिक विज्ञान में उसकी गति हो और भौतिक विज्ञान समेट करके अपने अन्तर्हृदय में प्रवेश करता हुआ, आध्यात्मवाद में प्रवेश कर जाता है क्योंकि बिना भौतिक विज्ञान के आध्यात्मिक विज्ञान में कोई भी मानव प्रवेश नहीं कर पाता।
वेद के मन्त्र आते रहते हैं कि मानव! मृत्यु को आध्यात्मिक विज्ञान व भौतिक विज्ञान से पार हो करके आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करता रहता है। 28.04.1980

475 ब्रह्माण्ड का सूत्र

हमारे यहाँ माता वसुन्धरा के नाना प्रकार के स्वरूप माने गएं हैं सबसे प्रथम वसुन्धरा का अभिप्राय यह है कि हम जिसके गर्भ में वशीभूत रहते हैं, उस माता का नाम वसुन्धरा कहलाता है। वह वसुन्धरा है क्योंकि उसी में रमण करते रहते हैं। चैतन्य देव जो संसार के कण-कण में व्याप्त है, जिसकी आभा में यह संसार आभायित हो रहा है। जिसकी चेतना से यह संसार चेतनित हो रहा है। उसी की चेतना में जितना भी यह जड़ जगत है उसमें ही दृष्टिपात आ रहा है, उसी के सूत्र में यह ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ है। चाहे वह चैतन्यवत के समान दृष्टिपात आने वाला हो, चाहे सर्वत्र रूपों में दृष्टिपात आने वाला हो, किसी भी रूप में रमण करने वाला यह ब्रह्माण्ड इसी एक सूत्र में पिरोया हुआ है।
उस सूत्र को जानना हमारे लिए बहुत अनिवार्य है। वह सूत्र क्या है जो लोक-लोकान्तरों में रमण कर रहा है। वह एक माला बन रही है। वैज्ञानिक उस माला को अपने में धारण कर लेता है। वह जो माला है उसी माला को धारण करने के पश्चात देखो, सूत्रामाणम् की कल्पना करता है। क्या एक ही सूत्र में कल्पना करता रहता है? संलग्न होता रहता है? नाना लोक-लोकान्तर उस एक सूत्र में ऐसे पिरोएं हुए हैं, एक-एक परमाणु पिरोया हुआ है। अग्नि की नाना तरंगें उसी में पिरोई हुई हैं जैसे अग्नि का निर्माण होता है, जैसे द्यौ-लोक में, आभा में रमण करने वाला अभ्यस्त होता रहता है उसी प्रकार एक सूत्र की कल्पना की जाती है। 28.04.1980
जीवन का सूत्र
हमारे जीवन का जो सूत्र है उस सूत्र को हमें जानना चाहिए। जिस सूत्र से नाना प्रकार के परमाणु एक सूत्र में पिरोए हुए हैं और वह मानव के रूप में परिणत हो रहे हैं उसी से मानव कहलाता है, दार्शनिक कहलाता है, वह वृहद् रूप कहलाता है। तो हमें उस सूत्र को जानना है। भौतिकवाद से आध्यात्मिकवाद में कैसे प्रवेश करना है। एक योगेश्वर अपनी समाधि में प्रवेश करता है वह कैसे समाधिस्थ होता है? वह किन-किन आभाओं को ले करके, समाधिस्थ हो करके संसार को भौतिकवाद से आध्यात्मिकवाद में परिवर्तित कर देता है।
माता वसुन्धरा जो हमारा कल्याण करने वाली है, जो हमारे जीवन में सदैव महत्ता प्रदान करने वाली है उसके ही सूत्र में सर्वत्र प्राणी-मात्र पिरोया हुआ है, यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड उसी में पिरोया हुआ है। हे मां! तेरे ही गर्भस्थल में हम अपने जीवन को पनपाते रहते हैं और तेरे को ही प्राप्त होना चाहते हैं। तू अपनी लोरियों को हमें पान करा, जिससे हे माता! हम संसार-सांगर से पार हो जाएं। इस संसार में मान और अपमान

रूपी नाना प्रकार की तरंगे हमें प्रभावित करती रहती हैं, हमें मृत्यु से त्रास देती रहती हैं। हे मातेश्वरी! हम तेरे द्वार पर इसलिए आए हैं कि तू हमें मृत्यु के त्रास से पार कर सकती हैं। हम मृत्यु नहीं चाहते, वैज्ञानिक बनना चाहते हैं, हम मृत्यु से पार होना चाहते हैं। नाना प्रकार के त्रासों को नहीं चाहते।

वेद का मन्त्र कहता है, हे माता! तू हमें अपने में धारण कर, धारण करने का अभिप्राय, अपने में धारण करती हुई, तू इस संसार सागर से हमें पार ले चल, हमारे जीवन का जो एक मौलिक उद्देश्य है वह केवल यही है कि हम अपने जीवन को इस संसार से पार ले जाना चाहते हैं। हे माता! तेरे ही गर्भस्थल में यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड, नाना प्रकार की आभाएं सब तेरे ही गर्भस्थल में ओत-प्रोत हैं। हम उन्हें जानना चाहते हैं और तेरे समीप आना चाहते हैं। तू अपने में हमें धारण कर। तू वरणीय है। हम तुझे अपना वरण बनाना चाहते हैं। जैसे यज्ञशाला में यज्ञमान वरण को चुनता है, वरण बनाता है इसी प्रकार जैसे प्रातःकाल में सूर्य की नाना प्रकार की किरणें आ करके इस दिवस को अपना वरण बना लेती है और वरण बना करके अन्धकार को अपने में धारण कर लेती हैं, इसी प्रकार हम अन्धकार से पार होना चाहते हैं। हे माता! तू हमें अपने में धारण कर।

हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, नाना रूपों में उस प्रभु को अपने में दृष्टिपात करते हुए इस संसार सागर से पार होना चाहते हैं।

माता वसुन्धरा की याचना करते हुए, नाना प्रकार के विज्ञान को जानते हुए, आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करना चाहते हैं और प्रवेश करके मृत्यु से पार होना चाहते हैं। 28.04.1980

ब्रह्मचारी सुकेता की अन्तरिक्ष यात्रा

मुझे वह काल स्मरण है जब ब्रह्मचारी सुकेता अपने यान में विद्यमान हो करके अन्तरिक्ष यात्रा करने चले। यहाँ से जब उन्होंने उड़ान उड़ी तो वह सबसे प्रथम चन्द्रमा में पहुंचे। चन्द्रमा से उड़ान उड़ करके बृहस्पति में पहुंचे। जब बृहस्पति से अपनी उड़ान उड़ी तो बुध में जा पहुंचे। बुध से उड़ान उड़ी तो वह मंगल में जा पहुंचे, मंगल से उड़ान उड़ी तो शुक्र में जा पहुंचे। शुक्र से उड़ान उड़ी तो वह श्वेतकेतु मण्डल में जा पहुंचे। परन्तु इन लोकों की उड़ान उड़ने के पश्चात वह बहत्तर मण्डलों का भ्रमण करके अपने यान के सहित महर्षि भारद्वाज के द्वार पर जा पहुंचे।

तब भारद्वाज मुनि ने कहा कहो ब्रह्मचारी सुकेता गार्गे! तुमने क्या दृष्टिपात किया। तो ब्रह्मचारी सुकेता ने यह कहा कि महाराज! मैं जिस भी मण्डल में पहुंचा हूँ उसी मण्डल में विज्ञान एक व्यापकवाद में रमण कर रहा है। वह किसी की सम्पदा नहीं रहती, क्योंकि ज्ञान ईश्वरीय है उसका अन्तरात्मा से समन्वय रहता है। चेतना और जड़ जगत दोनों की विवेचना कर रहा है परन्तु किसी भी काल में उसका ह्रास नहीं होता। 01.05.1980

अहिल्या कृतिभा यन्त्र

तो मानव को प्राणायाम करना चाहिए, यह प्राण की गति इतनी विशाल है, इतनी महान् है कि घ्राण इन्द्रिय के द्वारा अभ्यस्त होने वाले ऐस-ऐसे महापुरुष हैं, तुम्हें स्मरण होगा त्रेता के काल का वाक्य, भगवान राम जब भयंकर वनों में रमण करते रहते थे, तो वह पृथ्वी के कणों की सुगन्धि के द्वारा ही यह जानते थे कि कितना खनिज कितनी दूरी पर इस पृथ्वी के गर्भ में विद्यमान है।

तो वैज्ञानिक कैसे बनता है इस प्राण के द्वार प्राणायाम करने से। जिस समय भगवान राम महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज के द्वार पहुंचे। तो उन्होंने घ्राण इन्द्रिय के ऊपर अनुसन्धान किया और उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था। जिस यन्त्रका निर्माण अहिल्या कृतिभा यन्त्र कहलाता था। उस अहिल्या कृतिभा यन्त्रमें यह विशेषता थी कि इस पृथ्वी के गर्भ में कितनी दूरी पर कौन-सा खनिज विद्यमान है वह उस यन्त्रमें दृष्टिपात आता रहता था।

घ्राण के द्वारा, घ्राण की दुर्गन्ध के द्वारा यन्त्रों की भी आवश्यकता नहीं रही। केवल पृथ्वी के कणों को लिया और वह प्राण की अनुपम क्रिया पृथ्वी के खनिज को निर्णय करा देती थी, कि कौन-सा खनिज कितनी दूरी पर है, कितनी दूरी पर स्वर्ण है और कितनी दूरी पर नाना खनिज हैं यह उन्हें दृष्टिपात होने लगी। तो यह सब घ्राण और प्राणायाम की प्रतिभा होती है। मानव घ्राण के द्वारा परमाणुओं के आदान-प्रदान की जानकारी कर लेता है कि इस प्रकार का परमाणु गति कर रहा है और कहाँ गति कर रहा है, जान लेता है। 02.05.1980

476 प्रकृति की पाँच गतियाँ

प्रकृति की पाँच प्रकार की गति कहलाती है। प्रसारण, गति, ऊर्ध्वा, ध्रुवा और, आकुंचन। तो ऋषियों ने इन्द्रियों के विषयों का आकुंचन किया।योगी ने संकल्प प्राणायाम किया, संकल्प में यह जगत कटिबद्ध हो गया। वह वृक्ष संकल्प में कटिबद्ध हो गया और संकल्प के द्वारा जब अग्नि प्रदीप्त प्राणायाम किया, भिन्न-भिन्न प्राणायाम करने से उन्होंने अन्तिम प्राणायाम केवल संकल्प प्राणायाम किया और संकल्प

को भी त्याग दिया। जब साकल्य बना करके इस हृदयरूपी गुफा में जहाँ चेतनरूपी आत्मा विद्यमान है जिसके मूल में मन और प्राण देखो, ज्ञान और प्रयन्त दो भाग हो गये। 03.05.1980

477 भगवान कृष्ण और अर्जुन वैज्ञानिक विमर्श

एक समय भगवान कृष्ण और अर्जुन दोनों समुद्र के तट पर विद्यमान थे। दोनों का वैज्ञानिक तथ्यों के ऊपर विचार-विनिमय हो रहा था। भगवान कृष्ण नाना प्रकार के वैज्ञानिक यन्त्रों में प्रवेश कर रहे थे। उन्होंने एक ऐसे यन्त्र का निरीक्षण किया था। वायु में रमण करने मात्र से सूर्य की किरणों को वह यन्त्र निगल जाता था। सूर्य की किरणों को निगल करके द्यौ अथवा विद्युत इस सूर्य में विद्यमान हैं, जिस विद्या से, जिस प्रकाश से वह इस रात्रि को अपने में धारण कर लेता है अथवा चन्द्रमा के प्रकाश को अपने में धारण कर लेता है। वही सूर्य का प्रकाश भगवान कृष्ण का यन्त्र उस प्रकाश को निगल रहा था और क्योंकि वह द्यौ का जो प्रतिनिधि माना गया है। हमारे यहाँ सृष्टि के प्रारम्भ में अथवा सृष्टि के गर्भ में कुछ ऐसा माना जाता है कि सूर्य द्यौ का एक प्रतिनिधि है। क्योंकि द्यौ से यह प्रकाश लेता है और उसी प्रकाश को ले करके यह रात्रि को अपने में धारण कर लेता है। चन्द्रमा के प्रकाश को कान्तिमयी बना करके प्रकाश में ले जाता है। परन्तु वही प्रकाश, जो चन्द्रमा को अपने में धारण करने वाला हो, रात्रि को अपने गर्भ में प्रवेश कराने वाला हो। वही भगवान कृष्ण का यन्त्र था जो सूर्य व्राणकेतु यन्त्र कहलाता था। वह यन्त्र सूर्य की किरणों को निगल रहा था। और निगल करकेवह रात्रि में उस यन्त्र से प्रकाश लिया जाता था। वही प्रकाश भगवान कृष्ण ने यन्त्रों में स्थिर कर दिया। उसी यन्त्र से और नाना प्रकार के यन्त्रों का विकास किया जा रहा था। वह यन्त्र वायु मण्डल में त्याग दिया जाए तो वायु को दूषित भी कर रहा था। उस समय भगवान कृष्ण ने कहा, हे अर्जुन! मैंने इस प्रकार का यन्त्र एक स्थिर किया है जो सूर्य की किरणों को धारण करने वाला अथवा निगलने वाला यन्त्र है जो पच्चीस राष्ट्रों के प्राणियों को वायुमण्डल में त्यागते, उनके प्राणों का हनन कर सकता है।

जब भगवान कृष्ण ने ऐसा कहा तो अर्जुन ने कहा कि प्रभु! जब यह वायुमण्डल इतना दूषित हो जाएगा, वायुमण्डल में इतना दूषितपन आ जाएगा तो प्रभु! उसको शोधन करने का भी आपके द्वारा उत्तकृति भी होनी चाहिए। शोधन करने की क्षमता भी होनी चाहिए। तो उस समय भगवान कृष्ण ने कहा, हे अर्जुन! इस प्रकार वायु मण्डल दूषित हो जाता है, पृथ्वी के गर्भ से खनिज को वैज्ञानिक अपने में धारण कर लेते हैं अथवा राष्ट्र की सम्पदा बना करके उसे वायु में त्याग करके वायु मण्डल दूषित हो जाता है। प्राण-घातक बन जाता है। उस समय हम क्या करते हैं? उसका शोधन करने के लिए हम याग करते हैं, अग्नि में घृत को प्रवेश करते हुए अग्नि में सूक्ष्म रूप बना करके वायुमण्डल में प्रवेश करा देते हैं और वह वायुमण्डल में जितने भी दूषित परमाणु हैं उनको वह परमाणु निगलते रहते हैं और शुद्ध वायुमण्डल बनाते रहते है अथवा निर्माण करते रहते हैं। 28.09.1981

478 महाराजा हनुमान और गणेश जी का भ्रमण

एक समय महाराजा हनुमान और गणेश जी भ्रमण करते हुए स्वेनात ऋषि के द्वार पर पहुंचे। महाराजा स्वेनात ऋषि अपनी स्थली पर विद्यमान थे। वे सूर्य के ऊपर अनुसन्धान कर रहे थे। वे सूर्य का प्रकाश आत्मा के प्रकाश से समन्वय कर रहे थे। और यह निर्णित किया ऋषि ने, कि सूर्य का प्रकाश उस द्यौ के प्रकाश से भी ऊर्ध्वागति वाला प्रकाश है, इसको जान करके मानव अनुपमता को प्राप्त हो जाता है। जब मानव अपने प्रकाश में, इस आत्मा के प्रकाश में, भौतिक प्रकाश को अपने में समन्वय करता है तो मानव जीवन में एक अनुपम प्रकाश आ जाता है। वही प्रकाश माता बाल्यकाल में अपने पुत्र को परिणत कर देती है। 29.09.1981

479 महर्षि भारद्वाज मुनि कि रावण वंश को शिक्षा

महर्षि भारद्वाज मुनि ने यह कहा कि रावण का जितना भी वंश है मैं प्रायः उनको शिक्षा देता रहा हूँ, क्योंकि उनके विधाता जो कुम्भकरण हैं वह मेरे यहाँ बारह-बारह वर्षों तक विज्ञान की शिक्षा ले करके गए हैं। उनका विज्ञान इतना विशाल है, वह इतने अनुसन्धानवेत्ता हैं कि वह छह मास तक हिमालय में अनुसन्धान करते रहते हैं और छह मास तक लंका में, विद्यालयों में वैज्ञानिकों को शिक्षा देते रहते हैं। कुम्भकरण का इतना विज्ञान नितान्त था।

एक समय भारद्वाज मुनि महाराज के यहाँ ब्रह्मचारी सुकेता और महर्षि पनपेतु मुनि महाराज की कन्या शबरी इन तीनों ने एक यन्त्र का निर्माण किया था। वह यन्त्र इस प्रकार का था कि महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज के आश्रम में उसका निर्माण हुआ। उस यन्त्र में विद्यमान हो करके महाराजा कुम्भकरण बहत्तर लोकों का भ्रमण किया करते थे। वह जब पृथ्वी से उड़ान उड़ते तो चन्द्रमा में जाते, चन्द्रमा से उड़ान उड़ी तो मंगल में चले गए, मंगल से उड़ान उड़ी तो बुध में चले गए, बुध से उड़ान उड़ी तो शुक्र में चले गए। एक ही यन्त्र में विद्यमान हो करके बहत्तर लोकों का भ्रमण किया करते थे। कितना विज्ञान महाराजा रावण के यहाँ विशालता में परिणत होता रहा है। 09.10.1981

480 स्वर्ण में सुगन्धि का प्रयास

एक समय हिमालय कन्दराओं में अनुसन्धान करते हुए यह विचारा क्योंकि वह नित्यप्रति याग भी करते थे। वह याग से यह विचारते रहते थे कि यह स्वर्ण की जो धातु है यह विशेष है। परन्तु मैं यह चाहता हूँ कि स्वर्ण में सुगन्धि उत्पन्न हो जाए। वह सुगन्धि कैसे ला सकते थे? वह इसके ऊपर विचार-विनिमय करते, परन्तु उसमें सुगन्धि नहीं ला सके। विचारते रहे क्योंकि अनुसन्धान उनका एक कर्त्तव्य बन गया था।

वह छह मास तक हिमालय कन्दराओं में अज्ञातवास में रहते थे और छह मास विश्वविद्यालयों में वह विज्ञान की शिक्षा प्रदान करते रहते थे। 09.10.1981

481 श्वेतकेतु मुनि मंगल मण्डल में

एक समय श्वेतकेतु मुनि मंगल मण्डल से आए और कई माह तक उन्होंने उस लोक में ग्रहण किया और वह इस पृथ्वी मण्डल पर आए तो वह गाडीवान रेवक के समीप जा पंहुचें, गाडीवान रेवक मुनि गुरु थे, उन्होंने कहा-कहो ऋषिवर! आप मंगल से आएं हो वहां के वायुमण्डल की आभा प्रगट करो। तो ऋषि कहता है, कि मंगल मण्डल में वहां याग होता है, अहिंसा में रमण करने वाला प्राणी, उसकी की आभा मानवीय क्षेत्र में रमण करती रही है, एक मण्डल नहीं, नाना प्रकार के मण्डलों की विवेचना आती रहती है। तो जहां लोक लोकान्तरों में, कर्मकाण्ड का प्रसंग आता रहता है, वहां इस पृथ्वी मण्डल पर भी है। मानव समाज का सर्वांग कहलाता है। जैसे नाना प्राणी और भी वसन करते रहते हैं तो मानव योनि एक ऐसी योनि है जो सर्वांग हैं। जैसे दसों इन्द्रियों का वर्णन वैदिक साहित्य में प्राप्त होता रहता है, और वह वैदिक साहित्य हमें मानव जीवन में दसों इन्द्रियों का वर्णन वर्णित होता रहा है, ये जो सर्वांग प्राणी है

ये नाना प्रकार की उडान उडता रहता है, चाहे पृथ्वी मण्डल पर रहो, चाहे वह मंगल में रहता हो चाहे, वह बुध में रहता हो, किसी भी लोक का प्राणी क्यों न हो, परन्तु क्योंकि ये सर्वांग है। इसीलिए ये अहिंसा परमोधर्म को जानता है। ये इसके गर्भ में ओत प्रोत होता रहा है, तो जब रेवक मुनि ने उनसे ये कहा, हे पुत्र! तुम मंगल में पंहुचें, तो उनसे कुछ वार्ता हुई?

तो वेद का ऋषि कहता है, कि वहां के प्राणी हमारे पृथ्वी मण्डल जैसे ही गमन करते हैं, वहां यागशालाए भी हैं, पूजाएं भी होती रहती हैं, विज्ञान यहां से सहस्त्रों वर्ष अग्रणीय माना गया है।

महाराजा अर्जुन ने भी ये वाक् प्रगट किए हैं कि मैं लोक लोकान्तरों में चला गया हूं

वेद का मन्त्र क्या कहता है? सर्वाणि ब्रह्मणा मंगल व्रते देवाः असतमम् वृतास्ते रुद्राणिः रुद्राः वेद का ऋषि कहता है, कि हे प्राणी! तू मंगल में ही नही जा सकता, तू नाना लोकों में सूर्य मण्डल और शनि में भी गति कर सकता है।

परन्तु एक एक शनि ऐसा है, जिस एक शनि को लगभग बहत्तर सूर्य, एक शनि मण्डल को प्रकाश देते हैं। तो इतना विशाल विज्ञान, प्रभु के राष्ट्र में और यह प्रभु में ही जगत माना गया है। 21.11.1981

482 महात्मा दधीचि

महात्मा दधीचि ने एक यन्त्र का निर्माण किया था। जो यन्त्र मेरे प्यारे! देखो, राजा मानधाता को प्रदान किया, मानकेतु को प्रदान किया, वह यन्त्र था क्या उस यन्त्र में विद्यमान हो करके और वह पृथ्वी से उडान उडता हुआ मेरे प्यारे वह गमन कर रहा है, और गमन करता हुआ वह शनि की परिक्रमा कर रहा है, बेटा कैसा शनि है वो वह शनि मण्डल कितना विशाल है मेरे प्यारे! देखो, बहत्तर सूर्य, जो ये सूर्य प्रकाश दे रहा है, ऐसे ऐसे बहत्तर सूर्य एक शनि को प्रकाश देते थे। बेटा! इतना विशाल शनि मण्डल जिसकी परिक्रमा करने वाला महात्मा दधीचि का यान उसकी परिक्रमा कर रहा है, बेटा! कितना विज्ञान मानव के मस्तिष्कों में नृत्त करता रहा है। मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी ने वर्णन कराया, कि आधुनिक काल का वैज्ञानिक मंगल और चन्द्रमा तक पंहुचा हैं। परन्तु देखो, मंगल और चन्द्रमा की परिक्रमा कर रहा है। मेरे प्यारे! पूर्व का मुझे स्मरण आता है दधीचि के लिए और अश्विनी कुमार जैसे वैज्ञानिक और वैद्यराज भी थे वह वाहनो में विद्यमान हो करके बेटा! शनि की परिक्रमा कर रहा है। कितना विशाल विज्ञान, इस मानव के मस्तिष्को में नृत करता रहा है। 21.11.1981

483 कुक्कुट मुनि महारजा और कुम्भकरण सम्वाद

कुक्कुट मुनि महाराज जहाँ ब्रह्म की चर्चाएं करते थे, जहाँ ध्यानावस्थित होते थे, जहाँ वह आत्मा-परमात्मा का मिलान करते थे वहाँ वह विज्ञान की चर्चा भी करते रहते थे।

जब रावण चर्चा कर रहे थे तो उनके सुधन्वा नामक वैद्यराज आ गए और राजा रावण के विधाता कुम्भकरण भी उनके समीप आ पहुंचे, चरणों को स्पर्श करके वह आसन पर विद्यमान हो गए। उन्होंने कहा, भगवन्! लंका में आपका पदार्पण किस समय हुआ? उन्होंने कहा, मुझे कई दिवस हो गएं हैं, भयंकर वनों में से इस लंका में प्रवेश किया है, मैं यह दृष्टिपात कर रहा हूँ तुम्हारा यह लंका का जो चलन है, लंका के वायुमण्डल की जो धाराएं हैं वह मेरे अन्तःकरण को छूती रहती हैं और उन्हें स्पर्श करता हुआ यह विचार-विनिमय करता रहता

हूँ कि वायुमण्डल अशुद्ध हो गया है।
राजा रावण के विधाता कुम्भकरण विद्यालयों में ब्रह्मचारियों को, शिक्षार्थियों को, छात्रवत को विज्ञान की शिक्षा देते थे। विज्ञान की उनकी चर्चाएं चलती रहीं। कुम्भकरण जी बोले, प्रभु! मैं हिमालय में सदैव अनुसंन्धान करता रहता हूँ। मैं कुछ समय पूर्व हिमालय कन्दराओं में विद्यमान था। वहाँ मैंने कुछ वैज्ञानिक तत्त्वों से ऐसा दृष्टिपात किया है कि सूर्य से कुछ किरण आती हैं वह धातु पिपाद बनाती है और रसों का पिपाद बनाती रहती हैं। मेर मन की इच्छा यह है कि यह जो स्वर्ण है यह धातुओं में सर्वश्रेष्ठ मानी गई है। मैं इसमें सुगन्धि लाना चाहता हूँ। प्रभु! आपका विचार जानना चाहता हूँ कि इसमें सुगन्ध आ सकती है अथवा नहीं? जब यह वाक्य महर्षि कुक्कुट मुनि ने श्रवण किया तो वह बोले-हे वैज्ञानिक कुम्भकरण! तुम इसमें सुगन्ध लाना चाहते हो।
सुगन्ध का अभिप्राय जानते हो किसे कहते हैं? हमारी दृष्टि में सुगन्ध कहते है सौन्दर्यत्त्व को। सौन्दर्य उसे कहते हैं जिसके जीवन में एक रसता रहे, एक रस रहे उस धातु के जीवन में एक सुगन्धि सदैव उत्पन्न होती रहती है। रहा यह कि मैं उस सुगन्ध से किसी धातु को जानना चाहूँ, वह उस धातु में से सुगन्ध का जन्म होता है, सो कोई संसार को धातु ऐसी नहीं है जिसमें सुगन्धि का प्रादुर्भाव होता हो। एक विशेष्ज्ञ प्रकार की गन्ध आती रहती है, विशेष प्रकार की एक कृतिभा आती है, जिसका उनके जीवन से समन्वय रहता है। इसी प्रकार आज तुम स्वर्ण में सुगन्धि लाने के लिए इच्छा न प्रकट करो। क्योंकि स्पर्ण में सुगन्धि तो स्वतः ही होती है। उसका जैसा प्राकृतिक स्वभाव होता है, वह उसी में रत्त रह करके, उसी में उसी प्रकार की सुगन्धि आती रहती है। उसमें सुगन्धि तुम ला नहीं सकोगे। कोई भी वैज्ञानिक सृष्टि के आदि से अब तक नहीं हुआ है जो इसमें सुगन्धि को ला सके। तुम्हारा एक विचार बना हैं परन्तु यदि तुम प्राण स्वरूप को ऊर्ध्वा से जानो तो स्वर्ण में विशेष प्रकार की सुगन्ध स्वतः होती हैं परन्तु उसमें घ्राण की शक्ति होनी चाहिए।
योगियो ने, ऋषि-मुनियों ने, ब्रह्मवेत्ताओं ने नाना प्रकार की धातुओं को योग के द्वारा जाना।
एक समय सोमकेतु महाराज, कुक्कुट मुनि कहते हैं कि हमारे जो सत्रहवें महापिता थे, सोमकेतु महाराज एक समय सब धातुओं को अपने समीप ला करके उसमें प्राण की आभा को परिणत करा रहे थे तो उसमें एक विशेष प्रकार की सुगन्ध दृष्टिपात की, क्योंकि इस मानव के घ्राण के द्वारा प्राण गति करता है और प्राण में नाना प्रकार की धातुएं गति करती रहती हैं। नाना प्रकार के परमाणु होते हैं, जो पृथ्वी की आभा में रमण कर रहे हैं और उसका समन्वय प्राण से होता है क्योंकि प्राण ही संसार में सबको रसस्वादन प्राप्त कराता रहता है। वह विभक्त हो करके सबको रस देता रहता है।
जब ऋषि ने यह वाक्य उच्चारण किया तो कुम्भकरण ने उनके चरणों को स्पर्श किया और उन्होंने कहा, धन्य है प्रभु! मैं अन्धकार में था। इसलिए मुझे योगी बनना चाहिए, क्योंकि योग से यह वाक्य सिद्ध होगा। मैं विज्ञान से इन वस्तुओं को नहीं जान पाऊंगा।
तो जहाँ हमारे ऋषि-मुनि विज्ञानवेत्ता थे वहाँ वह योगाभ्यास करते थे। प्राण की महान् क्रिया को जानते रहते थे। वह प्राण, अपान, उदान की आभा में रमण करते रहते हैं।
कुम्भकरण ने कहा, प्रभु! मैं आपके द्वारा यह ओर जानना चाहता हूँ कि हम यदि इस प्राण की साधना करना चाहते हैं तो प्राण की साधना कैसे करें? महर्षि कुक्कुट मुनि ने कहा, यदि तुम प्राण की साधना करना चाहते हो तो महर्षि भारद्वाज के द्वारा चले जाओ। वह तुम्हें इसका निर्णय दे सकेंगे। मेरा तो निर्णय केवल यही है कि संसार में दो वस्तुओं का विभाजन होता है। दो वस्तु संसार में दृष्टिपात आ रही हैं। एक विभक्त क्रिया, जो विभाजन कर रही है और एक जो विभाजन हो रही हैं। दोनों वस्तुओं का जिस भी काल में समन्वय हो जाता है, उसी काल में योग की आभा उत्पन्न हो जाती है और योगेश्वर बनने के लिए तत्पर हो जाता है। क्योंकि यह जो सर्वत्र ब्रह्माण्ड है, चाहे वह मंगल मण्डल हो, चाहे सूर्य हो, नाना प्रकार की किरणें क्यों न हो, परन्तु उनमें जो धातु पिपाद आ रहा है, पृथ्वी पर आ रहा है, मण्डल में जा रहा है, सूर्य की किरणों में गति कर रहा है वह सब मनस्तव, प्राणस्तव ही गति कर रहा है, जो इन दोनों का समन्वय कर लेता है वही विज्ञान में पारायण हो जाता है। वही महान् बन जाता है। वह मृत्यु को विजय कर लेता है। संसार में प्रत्येक मानव मृत्यु से विजय होना चाहता है। तुम्हें यह प्रतीत होगा कुम्भकरण! मानव जितना भी प्रयास करता है राजा के राष्ट्र में विज्ञान की उड़ान उड़ी जाती है, परन्तु जहाँ ऋषि-मुनि होते हैं वह योग की उड़ान उड़ते रहते हैं। मृत्यु से बचने का प्रयास करते रहते हैं। विचारते रहते हैं कि मेरी मृत्यु नहीं होनी चाहिए। ऐसा कौन-सा सोमरस है जिसको पान करने से मानव मृत्यु से उपराम हो जाता है? मेरी प्यारी माता मृत्यु से उपराम हो जाती है। वह कौन-सा सोमरस है, जो ज्ञान के क्षेत्र में जाता है? ज्ञान से यही विचारता है कि परमाणुओं का मिलान हुआ है, इनका विच्छेद होना है। जो इस प्रकार की प्रतिक्रियाओं को अपने में विचारता है, चिन्तन करता है, वह मृत्यु के मूल को जान जाता है। मृत्यु क्या है? मृत्यु से पार होने के लिए मानव को संकीर्णता को त्यागना होगा, मृत्यु क्या है? संकीर्णता है, संकीर्णता में जितना भी मानव रमण करता रहेगा और व्यापकावाद उसके द्वारा नहीं होगा वह मृत्यु के गृह में, आँगन में रमण करता रहेगा। मृत्यु उसको निगलती रहेगी परन्तु जिस समय वह ज्ञान और विज्ञान

की आभा को ले करके रमण करता है, व्यापकवाद को ले करके गति करता है,
व्यपकवाद किसे कहते हैं? जो भी वस्तु मेरे द्वारा है वह सर्वत्र प्रभु की आभा है, उसकी महानता है। जो इस प्रकार का अध्ययन करता है वह इस अज्ञान रूपी अन्धकार को समाप्त कर देता है।
महर्षि कुक्कुट मुनि महाराज ने यही कहा, हे कुम्भकरण! यदि आज तुम महान् बनना चाहते हो, तो दो वस्तुओं के समन्वय का नाम प्रकाश है और दोनों का विभाजन हो जाना ही अन्धकार का क्षेत्र कहलाता है। इसको तुम जानने का प्रयास करो। 21.11.1981
संसार की रचना में तीन गुण
इस संसार की रचना करने वाले प्रभु ने तीन गुणों का सृजन किया। जिनमें रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण आते हैं। इसमें एक ऐसा विचित्र नृत्य हो रहा है, जिस नृत्य के ऊपर बहुत गंभीर चिन्तन करने वाले ऋषि मुनि और विज्ञानवेत्ता इस संसार में त्रिगुणात्मक स्वीकार करते हैं, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड को। जिस समय अग्नि का अग्न्याधान होता है। तो अग्नि भी त्रिकोण कहलाती है और अग्नि भी त्रिकोण बनकर के क्योंकि परमाणु भी तीन ही कहलाते हैं। यह जो परमाणुवाद है ये भी तीन ही होते हैं। परन्तु वायु गमन हैं और अंतरिक्ष में वह गति करती है। परमाणुओं को लेने वाली वायु है और वह गति कराती हैं और यह जो अवकाश है उसमें परमाणु गति करते हैं। 16.12.1981

484 त्रिवर्धा में संसार

तो प्रभु की रचना त्रिवर्धा कहलाती है। इसी प्रकार तीनों में त्रि में रमण करने वाला त्रिमात्राएँ। जितनी भी संसार की लेखनियाँ हैं। चाहे वे किसी भी देवभाषा में हों। चाहे जन जीवन की भाषा में हो। चाहे वे सूर्य मण्डल के प्राणियों की भाषा हो, चाहे वे किसी भी लोक लोकान्तरों में रहने वाला प्राणी हो परन्तु सर्वत्र भाषाओं में त्रि-मात्रा कहलाती है और त्रि-मात्रा वाला शब्दः एक ओ३म् बन करके रहता है और तीन ही संसार में व्याहृति मानी जाती है। परन्तु व्याहृति में तीन है, जैसे भूः, भुवः स्वः। ये तीन व्याहृति मानी जाती है। तो यह त्रिवर्धा संसार कहलाता है। परन्तु प्रत्यक्ष में भी तीन ही दृष्टिपात आते हैं। रचना, रचयिता और भोग, ये तीन कहलाते हैं। 16.12.1981

485 तरंगों के तीन प्रकार

इसी प्रकार तीन प्रकार के परमाणु हैं जो वैज्ञानिकों के मध्य में आया है। संसार का जितना भी विज्ञानवाद अब तक हुआ है। चाहे वह राम के काल से ले करके वर्तमान काल तक ले लिया जाए। चाहे वे विष्णु राष्ट्र, सतोयुग के काल से लेकर के, त्रेता के काल तक ले लिया जाए, परन्तु ये संसार में जितना भी विज्ञानवाद हुआ है। उसमें तीनों परमाणुओं की प्रतिभा की जाती है। तीन प्रकार के परमाणुओं का आभास किया है। तीन प्रकार के परमाणुओं में सर्वत्र तरंगे ओत-प्रोत हैं। तरंगे भी तीन प्रकार की हैं। ऊर्ध्वा, अन्वेषणाः, कृतिका, ये तीन प्रकार की तरंगे होती हैं। जिनसे ये ब्रह्माण्ड तरंगित हो रहा है। और मानव समाज भी इसी में तरंगित हो रहा है।ये संसार केवल त्रिवर्धा में दृष्टिपात आ रहा है। 16.12.1981

486 त्रिकोण यज्ञशाला

पूज्य महानन्द जीः भगवन्! एक समय आपने हमें ये वर्णन कराया था कि त्रिकोण यज्ञशाला होती है और चतुष्कोण भी होती है और पञ्चम कोण का भी आपने वर्णन किया। परन्तु आपने चौबीस कोणों से ले करके और भिन्न-भिन्न प्रकार के कोणों की विवेचना आपने की, परन्तु उन विवेचनाओं में, मैं आज त्रिकोण के सम्बन्ध में ही आपसे प्रश्न करने वाला हूँ और वह यह कि बहुत पुरातन काल हुआ, जब एक समय हम सब विद्यमान थे तो उस समय एक त्रिकोण याग की रचना की गई। बहुत पुरातनकाल काल हुआ परन्तु त्रिकोण का अभिप्राय क्या है, और इन नाना कोणों की चर्चाएं तो मैं पुनः ही करूंगा। क्योंकि हमारे यहाँ सबसे प्रथम चारों कोणों का सर्विदम् अब्रहात कहा जाता है और उसके पश्चात ईशान और उत्तरायण और पश्चिमान्त और दक्षिणान्त मानो देखो, इनके कोणों को ले करके छह और आठ कृतिका बनती हैं जैसा आपने पुरातन काल में वर्णन किया हुआ आठ कोणों वाला याग बन जाता है। परन्तु इसमें जैसे भगवान ने, परमपिता परमात्मा ने यह जगत रचा है। तो इस ब्रह्माण्ड की रचना मेंनौ विरान कहे जाते हैं और नौ विरान मानव के इस शरीर में भी आपने किसी काल में वर्णन किया। उन कोणों में, उन आभाओं में सबमें बहुत पूर्व में विज्ञान की तरंगे हमें दृष्टिपात आयी थीं।
तो अब हम आपसे यह जानना चाहते हैं। कि त्रिकोण का अभिप्राय क्या है?
पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! यह तो बहुत पुरातन काल में ये वाक् सब निर्णय हो चुके हैं। ये बहुत समय व्यतीत हुआ था जब एक समय राजा रावण के यहाँ भी एक सभा हुई थी और राजा राम के यहाँ भी एक सभा हुई तो उसमें जितने भी वैद्यराज थे, राजा रावण के यहाँ सुधन्वा नामक जो वैद्यराज थे उनको प्रायः दृष्टिपात नहीं किया गया। महात्मा भुन्जु के दोनों पुत्र अश्विनी कुमार थे। अश्विनी कुमारों के गुरु थे त्रेतकेतु ऋषि। वे आयुर्वेद के मर्म को जानते थे। परन्तु वे भी उस सभा में विद्यमान थे और महाराजा कुंभकर्ण और मेघनाद अहिरावण को भी आयुर्वेद में पूर्ण विज्ञान इनके समीप रहता था तो वे भी उस सभा में आए।

तो मानव के जो शब्द है, यज्ञशाला में विद्यमान हो करके यज्ञमान के शब्द अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वे कुछ लोकों में रमण करते हैं। जिन लोकों से मानव के जीवन का प्रायः सम्बन्ध होता है। 16.12.1981

487 माता अरूण्धती और वशिष्ठ मुनि की वैज्ञानिक उडान

पुरातन काल में माता अरूण्धती और वशिष्ठ मुनि महाराज जब दोनों याग करते थे, तो वे वैज्ञानिक तन्तुओं को लेकर के याग करते थे। तो उनके विचारों की तरंगे अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, वे बृहस्पति लोकों तक उड़ान उड़ते थे। दोनों उन तरंगों के ऊपर चिन्तन भी करते थे। बृहस्पति में, अरूण्धती मण्डल में, और वशिष्ठ मण्डल में इन तीनों लोकों में उनकी उड़ान विशेष कर रही थी। 16.12.1981

488 विभिन्न लोको से जीवन का सम्बन्ध

तो हमारे जीवन का जो सम्बन्ध है वह लोक लोकान्तरों से विशेषकर माना गया है। क्योंकि परमपिता परमात्मा ने यज्ञ सृष्टि का सृजन किया था। तो पिण्ड और ब्रह्माण्ड की एक ही कल्पना की है। पिण्ड और ब्रह्माण्ड की एक कल्पना होने से उन यागों का, लोकों का, इस शरीर रूपी याग से विशेषकर समन्वय हुआ।

परन्तु रहा यह कि ये पूर्ण, किन प्राणियों को, विशेषकर इनकी जानकारी होती है। 16.12.1981

489 त्रिकोण याग

एक समय राजा राम के यहाँ वह जो सभा हुई वैद्यराजों की, तो वैद्यराज सब एकत्रित हो करके यज्ञशाला में विद्यमान हो करके जब याग करने लगे और जब याग की प्रतिभा आने लगी, तो उन्होंने त्रिकोण याग का निर्माण किया और उन्होंने वेद के मन्त्रों को लेकर के और त्रिवर्धा को लेकर के एक याग का आयोजन किया। और इस याग को लेकर के, इसी याग की प्रतिभा को लेकर के महाराजा कुम्भकरण ने त्रिकोण याग हिमालय की कन्दराओं में एक विज्ञानशाला की आभा में एक याग करते थे। और उसके पश्चात वैद्यराज जो औषधियों की तरंगों को जानना चाहते हैं। औषधि विज्ञान को जानना चाहते हैं। औषधि विज्ञान में रुग्णों को जानना चाहते हैं तो वे भी त्रिकोण याग प्रायः होता रहा है। राजाओं के यहाँ भी इस प्रकार का विधान माना गया है।

क्योंकि मुझे बहुत पुरातन काल में यागों के सम्बन्ध में, बहुत अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। 16.12.1981

490 कुम्भकरण

राजा रावण ने के विधाता कुम्भकरण जी की पत्नी थी जिसका नाम शुभभोमकेतु कहलाता है। शुभभोमकेतु, हिमालय के पालक एक राजा थे, जिनका नाम श्वेतकेतु कहलाता था, वह उनकी कन्या थी। वह वेद की विदुषी होने से क्योंकि वह महर्षि श्वांककेतुक ऋषि के द्वारा अध्ययन करती थी। उनके अध्ययन करने का विषय, वेद का बड़ा विचित्र रहा और, राजा के मन में यह संकल्प जागा था, किसी काल में कि मेरी कन्या का संस्कार ऐसे राजकुमार से होना चाहिए, ऐसे वैज्ञानिक से होना चाहिए जो दोनों का जीवन सम में व्याप्त होना चाहिए, परन्तु उनका संस्कार राजा ने लंकेश्वर महाराजा पुलत्स्य मुनि के पौत्र कुम्भकरण के यहाँ उनका संस्कार हुआ। क्योंकि कुम्भकरण त्रि, ओ३म् में प्रातःकाल नित्यप्रति याग करते थे। और कन्या भी उनकी पत्नी जिससे उनका संस्कार हुआ वह भी इसी प्रकार का याग करती थी। परन्तु दोनों के याग का परिणाम, उनके याग का परिणाम ये कि उनकी विचारधारा, लोक लोकान्तरों में भ्रमण करती थी और उसके पश्चात त्रिकोण याग की दशा में महाराजा कुम्भकरण की परिवर्तित हो गई। जब परिवर्तित हुई तो उन्होंने त्रिकोण यज्ञशाला के आकार का उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया। त्रिकोण यन्त्र का निर्माण किया, जिस यन्त्र में मानव के चित्र आने लगे। जैसे वे याग करते थे त्रिकोण में तो जिस भी लोक में वह शब्द गति करता था चित्र के सहित उन्होंने जिस यन्त्र का निर्माण किया था, उसमें उसकी छाया आती रहती थी। 18.01.1982

491 त्रिकोण याग

तो राजा रावण के यहाँ एक त्रिकोण यज्ञशाला का निर्माण हुआ। जिसमें अश्विनी कुमार, महाराजा सुधन्वा और याग में यज्ञमान का जो निर्वाचन हुआ तो वह महाराजा कुम्भकरण का हुआ और महाराजा कुम्भकरण और उनकी पत्नी जब दोनो विद्यमान हो गए जब दोनों याग का प्रारम्भ करने लगे तो उस याग के जो ब्रह्मा बने थे, वे गोलंगगेत केतु ऋषि महाराज थे। गोलंगगेतकेतु ऋषि महाराज अंगीरस गोत्रीय कहलाते थे। 18.01.1982

492 कलश

जब याग प्रारम्भ हुआ, मन्त्रों का उच्चारण हुआ तो उच्चारण करते-करते उसमें से भिन्न-भिन्न प्रकार की तरंगों का जन्म होने लगा। उस यज्ञशाला में से रूग्णों का विनाश होने वाली तरंगों का जन्म होने लगा। आयुर्वेदाचार्यों ने नाना प्रकार के यंत्रों का उस याग में परिणत

कराया। कलश विद्यमान है उन्होंने स्वर्ण के कलश और स्वर्ण के कलशों में धातु पिपाद जैसे ताम्रपत्र है, चान्द्रकेतु पात्र है और भी कुछ धातु इस प्रकार की उन्होंने कलशों का निर्माण किया। वह जल उस त्रिकोण यज्ञशाला में जब उसका विधान हुआ उसको प्रतिपादित किया गया, तो उस जल में, केशरां श्वांजान धीत, कंसवांचनी इन चार औषधियों का जल में मिश्रण किया गया। तो उस जल को जब अग्नि की तरंगें उन कलशों को छूती थी, तो उस जल के पात्रों में अग्नि की ऊष्ण तरंगें प्रवेश कर जाती थी। उन औषधियों की तरंगें उस जल में मिश्रित होती, जिससे याग के साकल्य का निर्माण किया गया।

उससे आयुर्वेद की बहुत-सी औषधियों का वे निर्माण करते रहते थे। कुछ ऐसे रूग्णवाले, साधकों को उस साधना में परिणत कराते थे याग के द्वारा उससे भी उनका मानो देखो, रूग्णशान्त होता था। इसी प्रकार मन की, हृदय की शांति दोनों की एकता में ये याग सहायक होता है।

राजा रावण के यहाँ जब याग हुआ तो महाराजा सुधन्वा ने एक वाक् कहा था। महाराजा सुधन्वा और अश्विनी कुमार ये बारी बारी अपना विचार देने लगे। महाराजा सुधन्वा ने यह कहा कि जब मैं भयंकर वनों में यह अनुसंधान कर रहा था, कि भिन्न-भिन्न प्रकार की औषधियों में, उसमें नृत्य करने वाला बनूँ। तो मैंने भयंकर वनों में जा-जा कर त्रिकोणवादी औषधियों को एकत्रित किया क्योंकि संसार में जब भी प्रभु ने, परमपिता परमात्मा ने इस मानव के शरीर का निर्माण किया तो ये भी त्रिकोणी यज्ञशाला ही कहलाती है। त्रिकोणवादी यज्ञशाला में जैसे त्रि-विद्या है। वेद में तीन प्रकार की विद्या कहलाती है। और उस विद्या का, दोनों का अविवांग कांचनं गृतिः, वह उन त्रि-विद्या को लेकर के, याग जैसे कर्मों का कर्मकाण्ड में त्रि-पाद का वर्णन प्रायः आता है। 18.01.1982

493 त्रि दोष

महाराजा सुधन्वा ने ये कहा-कि मैं अग्नि में औषधियों को तपाता रहता हूँ तो मानो देखो, तीन से इसका बड़ा सम्बन्ध रहता है। तीन से इसका सम्बन्ध इसलिए रहता है क्योंकि अग्नि में जब हम किसी औषधि को तपायमान करते हैं। तो तीन से उसकी पुट देते हैं। तीन पुट किसी और औषधियों में देते हैं। इसी प्रकार तीन ही प्रकार पुट की होती हैं। ये तीन प्रकार की पुट होने से इसका एक नृत्योत्कृति और श्वांग, औषध पुष्टिकारक बन जाता है। इसी प्रकार मानव को त्रिकोण यज्ञशाला में याग करने से मानव के द्वारा जो तीन प्रकार के दोष है जैसे मानव के शरीर में तीन दोष कहलाते हैं। तीन दोषारोपण होते रहते हैं। जैसे वाक् है अग्निप्रधान में इसको पिताधृष्ट कहते हैं। परन्तुइसको वायु सम्भात कहते हैं। ये जो त्रिदोष है ये त्रिदोष भी इस त्रिकोण याग के करने से, अपने-अपने रूप में, यथार्थ रूप में गति करते रहते हैं। यदि हम उसके आधार पर अपने आहार को उसी प्रकार बनाए। आहार और व्यवहार भी हमारा त्रिकोण होना चाहिए। आहार और व्यवहार त्रिकोण कैसा हो? 18.01.1982

494 त्रि कोण आहार, व्यवहार

आहार में तीन प्रकार का रस होना चाहिए। उसमें पुष्टिकारक हो, रसदायक औरऋतु के अनुकूल हो। इस प्रकार का भोजन भी मानव के लिए बहुत अनिवार्य त्रिकोण कहलाता है। ये त्रिकोण अन्न कहलाता है। त्रिकोण व्यवहार कहलाता है। त्रिकोण व्यवहार कैसा? बाह्य व्यवहार, हृदय में उसी प्रकार की प्रतिभा और उसमें यौगिकवाद भी होना चाहिए। तीन प्रकार के हमारे व्यवहार होने चाहिए। वेद का भाष्य करने वाला, वेद के अर्थों को जानने वाला तीन प्रकार की प्रतिभा वाला होना चाहिए। उसका व्यवहार स्वतंत्र रूप से विचित्र होना चाहिए, वाणी में, बाह्य जगत में पवित्रता हो। उसका आहार और व्यवहार दोनों पवित्र हो, तो व्यवहार स्वतः ऊँचा बन जाता है। 18.01.1982

495 विज्ञान

विज्ञान का होना बहुत अनिवार्य है। विज्ञान किसे कहते हैं? इन्दियों की प्रतिभा को जानना, इन्द्रियों के व्यापार को जानना, इन्द्रियों के परोक्ष रूप को जानना, उसको बाह्य जगत से उसका समन्वय करना ये विज्ञान कहलाता है।

उन कृतिकाओं के साथ में उसका एक यौगिकवाद समुद्र में चला जाता है। समुद्र में से नाना प्रकार के रत्नों को लाता है। हृदय रूपी ये समुद्र है और समुद्र में से नाना प्रकार के रत्नों को लाता है, उसे यौगिकवाद पिपात बनाता है। पिपात बना करके वह जो आत्म चेतना है। उसका अघात जो समुद्र है उस समुद्र में प्रवेश करने से अघात आभा में रत्नों की धाराओं को जन्म देता है और वह योगेश्वर बनकरके वेद के तीन ही प्रकार के विषय कहलाते हैं। यहाँ तीन प्रकार की धाराएँ हैं। व्यवहारिक, वैज्ञानिक और यौगिक कहलाएँ जिसको आध्यात्मिकवेत्ता कहते हैं। 18.01.1982

496 त्रि विद्या

इसी प्रकार वेद में तीन प्रकार की विद्या होती है। तीन प्रकार की विद्या कासबसे प्रथम ज्ञान, उसके पश्चात कर्म और उसके पश्चात उपासना। ज्ञान उसे कहते हैं। किसी वस्तु का हमने उच्चारण किया है। उस उच्चारण शब्द में क्या ज्ञान है? उस ज्ञान को बाह्य जगत में लाना उसके

पश्चात उसके अनुसार हमें क्रियात्मक कर्म करना और कर्म करने के पश्चात उन धाराओं का, उस कर्म में से जो भी तरंगें उत्पन्न होती है। यथायोग्य उसको हमें क्रिया में लाना, उसको अपने में धारण करना उसको उपासना कहते है।
तो सदुपयोग का नाम उपासना हो गया और जानना, ज्ञान हो गया और जानकर उसी प्रकार व्यवहार का नाम कर्मकाण्ड हो गया। 18.01.1982

497 राजा राम

तो राजा राम के यहाँ त्रिकोण याग होता रहता है और त्रिकोण का अभिप्राय यह कि हमें रूग्णों से शान्त होना है। हमें अपने राष्ट्र के प्रति, अपने समाज के प्रति, यह भावना लानी है। कि हमारे यहाँ किसी प्रकार का अरुग्ण न होना चाहिए। हम उस विज्ञान को जाने, जो विज्ञान तरंगों में ओत-प्रोत रहता है। उन तरंगों में तरंगित रहता है। उस विज्ञान को जानने से हमारे जीवन में एक महानता की प्राप्ति होती है। 18.01.1982

498 महाराजा कुंभकरण

महाराजा कुंभकरण हिमालय की कन्द्राओं में रहते और लंका में भी रहते। वे जब याग कर्म करते थे तो याग कर्म करते-करते त्रिकोण में, वह अपने में रत्त रहते थे। उसके पश्चात औषधियों का जहाँ समन्वय होता है। वहाँ विज्ञान की धारा भी उसी से उत्पन्न हुआ करती हैं।
एक समय जब यागों का हम किसी काल में जब अनुसंधान कर रहे थे तो उस समय महाराजा कुम्भकरण एक समय उस यज्ञशाला में पधारे थे, हम उस समय में सप्तकोण की यज्ञशाला का निर्माण करते रहते थे, उनमें याग करते रहते थे। कुछ समय के पश्चात उन्होंने याग के कर्मकाण्डों को जानने का प्रयास किया था। उस समय हमने उनके आहार और व्यवहार को प्रायः श्रवण किया था। उनका आहार और व्यवहार बड़ा पवित्र था। उनकी पत्नी, एक समय यज्ञशाला में पधारी औरजिस भी काल में यज्ञशाला के उत्सव या नृत्य होते रहते थे तो उस काल में वे यज्ञ में विराजमान हो करके प्रभु की स्तुति, नमस्कार अपनी आभा में सदैव रमण करती रहती थी। 18.01.1982

499 कुम्भकरण का पूर्वनाम मृचिकेतु

उनका कुम्भकरण का नामोकरण इसीलिए उच्चारण किया जाता था क्योंकि कुम्भाकार जैसे उनके विचार थे। ऐसे वे नृत्त कराते रहते थे। ऐसी उनकी रचना रहती थी जैसे कुम्भ अपने में जैसे घटा होता है उसमें जल होता है। स्वाति होते हैं। परन्तु इसी प्रकार वह लाभप्रद होता है ऐसे उनका मस्तिष्क कुम्भाकार वाला होने से उसमें ज्ञान और विज्ञान की उपज उत्पन्न होती रहती थी। तो उनको ऋषि मुनि कुम्भाकार वाले कुम्भकरण कहते थे। कुम्भाकार वाले इसीलिए कहते थे उनका नाम तो बाल्यकाल में मृचिकेतु नाम था। मृचिकेतु जो नाम है वह बाल काल में, क्रोध विशेष करते थे। तो आचार्य उन्हें मृचिकेतु कहते थे। वे कहते थे कि जैसे मृचि होता है। मृचि नाम का एक नक्षत्र होता है। मृचि नक्षत्र में सदैव अग्नि की धाराएं जन्म लेती रहती है। अग्नि की तरंगें उत्पन्न होती रहती है। इसी प्रकार उनको मृचिकेतु कहते हैं।
तो राजा रावण के यहाँ त्रिकोण याग हुआ वो याग औषध विज्ञान के लिए विशेषकर त्रिदोषों को अपनी आभा में लाने के लिए त्रिकोण याग परम्परागतों से हमारे यहाँ वैदिक साहित्य प्रायः नृत्त करता रहा। 16.12.1981

500 ब्रह्माण्ड का एक सूत्र

महर्षि वशिष्ठ ने कहा इस ब्रह्माण्ड, के बाह्य और आन्तरिक जगत का सूत्र क्या है? इस सम्बन्ध में बहुत-सी विवेचनाएं नाना ऋषियों ने दी हैं और मैं भी कुछ देता चला जाऊं, परिचय के रूप में जैसा अंगीरस ऋषि ने बहुत परम्परागतों में इसके ऊपर अनुसन्धान किया और अपना वाक्य निर्णित किया। निर्णय देते हुए कहा, इस सर्वत्र बाह्य और आन्तरिक जगत का जा चित्त-मण्डल कहलाता है वह सूत्र है। चित्रों में जो तरंगें रमण कर रही हैं, नाना चित्रों के रूप में उनका जो सूत्र है, वेद का ऋषि कहता है इन सब तरंगों के मूल में, आभा में रमण करने वाला जो प्राण सूत्र है वह सब तरंगों को अपने से पिरो करके गति कर रहा है। जैसे मानव का शब्द है, वह प्राण के ऊपर गति कर रहा है। जैसे यज्ञमान यज्ञशाला में विद्यमान हो करके जितने होताजन होते हैं वह यज्ञमान की वाणी को महान् बनाना चाहते हैं। उद्गान गाता हुआ वह उद्गाता के रूप में पवित्रता चाहता है। होताजन आहुति दे करके जैसे हृदय में सदा आहुतियाँ दी जाती हैं, ऐसे यज्ञशाला में साकल्य की आहुति दे करके बाह्य रूप से यज्ञमान को यह कहा जाता है, हे यज्ञमान! मेरी वाणी को, तेरे हृदय को हम पवित्र बनाना चाहते हैं। तो मुनिवरों! यज्ञोमयी यज्ञ ही हृदय है। संसार का हृदय क्या है? वेद का ऋषि कहता है, अर्थात यज्ञ ही इस संसार में हृदय माना गया है। संसार का हृदय है, इस ब्रह्माण्ड की नाभि याग कहलाता है। 18.01.1982

501 प्राण ब्रह्माण्ड का सूत्र

तो इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड का एक सूत्र है, जो प्राणोमयी सूत्र कहलाता है। प्राण-सूत्र में यह सब तरंगें ओत-प्रोत रहती हैं। इसी प्रकार प्राण भी दो प्रकार के रूपों में गति करता है। वास्तव में तो नाना रूप हैं परन्तु एक विशेष होता है, एक सामान्य होता है। सामान्य प्राण मानव के

शरीर में गति करता रहता है और जो विशेष प्राण गतिशील बना रहा है, ऊर्ध्वा में ध्रुवा में, प्रसारण में, आकुंचन में जो आभा में प्रकट करा रहा है वही क्रिया इस ब्रह्माण्ड की गतियों में गतिशील हो रही है। तो प्रत्येक मानव प्रत्येक देव-कन्या इस संसार में अपने को ऊंचा बनाना चाहते हैं तो बाह्य जगत और और आन्तरिक जगत दोनों का समन्वय होता हुआ, दोनों का मिलान होता हुआ दोनों को एक-दूसरे का पूरक स्वीकार करना चाहिए, उसको जानना चाहिए। मानव बिना जाने इस संसार में मानवता और महत्ता को नहीं प्राप्त हो सकता। 18.01.1982

502 भारद्वाज और वशिष्ठ मुनि महाराज दोनों की विवेचना यन्त्र निर्माण

भारद्वाज और वशिष्ठ मुनि महाराज दोनों की विवेचना हो रही थी। ऋषि ने कहा, हे ऋषिवर! इस बाह्य जगत में जो विज्ञानमयी धारा गति कर रही है उसको तुम कैसे जानते हो? ऋषि कहता है जो गतियाँ करने वाला सूक्ष्मवाद है उस सूक्ष्मवाद को हम यन्त्रों में प्रवेश कर देते हैं। यन्त्रों में कैसे प्रवेश करते हैं? एक ऐसी आकर्षण शक्ति वाली कृतियों को हम बनाते हैं, धातु के द्वारा आकर्षण शक्ति से, जैसे विद्युत को हम मन्थन करने के पश्चात यन्त्रो में मन्थन करते हैं, वह जो द्यौ में रमण करने वाली अग्नि है जैसे सूर्य को प्रकाशित करने वाला द्यौ है। सूर्य को प्रकाशित कर रहा है द्यौ से ही वह शक्ति ले रहा है। वहीं द्यौ सूर्य को प्रकाशित कर रहा है द्यौ से ही वह शक्ति ले रहा है। वही द्यौ सूर्य में और वहीं द्यौ जब पृथ्वी के गर्भ में, सूर्य के प्रकाश के रूप में रमण करती है, तो नाना प्रकार का धातु, नाना प्रकार का साकल्य उनके द्वार से उत्पन्न होता रहता है। इसी प्रकार वहीं द्यौ, वहीं सूर्य जब किरणें बन करके मानव के शरीर में प्रवेश करती हैं तो नाना प्रकार की धातुओं की तरंगे मानव शरीर से बाह्य जगत में आभायित होती-सी दृष्टिपात होने लगती हैं। तो सूर्य की किरणों को जब हम यन्त्रों में लाते हैं, उनमें जो शक्ति है, शक्ति रूप में, यन्त्रों में जब प्रवेश करते हैं तो एक-एक यन्त्र ऐसा हमने निर्माणित किया है, जिस यन्त्र में सूर्य की जो शक्ति है, किरण में जो द्यौ भरा हुआ, उस द्यौ को हम इसमें ला करके, ओत-प्रोत करा करके एक-एक यन्त्र ऐसा है, जिससे लाखों वर्षो की आयु का यन्त्र लोकों की परिक्रमा करता रहता है। 18.01.1982

503 सूर्य मन्थन

भारद्वाज ने कहा था, हे ऋषिवर! जब मैं विद्यालय में शिक्षा अध्ययन करता था तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तत्व मुनि महाराज आसन पर विद्यमान थे, कुछ ब्रह्मचारी और भी थे। उन ब्रह्मचारियों में श्रेष्ठ जो ब्रह्मचारी थे, सोमभानु थे, जो अंगिरस गोत्रीय कहलाते थे। एक सोमकेतु ऋषि महाराज थे, जो शांडिल्य गोत्रीय कहलाते थे, एक समय हम उनके आश्रम में विद्यमान थे, शिक्षा अध्ययन कर रहे थे। तो एक विज्ञानशाला थी, उनके विद्यालय में, जिसमें उन्होंने हमसे एक यन्त्र का निर्माण कराया और एक वेदमन्त्र को उन्होंने उच्चारण किया था, सूर्यश्चमाम् ब्रह्मम् सूर्याणि गच्छताम् प्रवेः वृताम् बृहस्पति देवः उन्होंने कहा कि तुम सूर्य के तथ्य का मन्थन करो। तो उस समय जब मन्थन करने लगे दर्शनों से और उस वेदमन्त्र की उड़ान उड़ने लगे, तो उड़ान उड़ते हुए उन्होंने तथ्यों के ऊपर जब कहा, विचार आया कि सूर्य की जो किरण है, सूर्य की जो नाना प्रकार की कान्ति आती है, जो रात्रि को भी अपने गर्भ में धारण कर लेती है अन्धकार को भी अपने मेंप्रकाश में रमण करा देती है और नाना मण्डलों को उसकी किरणें अपने में आच्छादित कर लेती हैं, उसकी आभा में हमें जाना है। कुछ किरणों को हमने एकत्रित किया। एकत्रित करने के लिए उन्होंने हमें कुछ धातु और पिपाद दिया, उसमें विद्यमान हो करके सूर्य की की किरण को हम आकर्षित करने लगे। जब सूर्य की किरण हमने यन्त्रों में भरण कर ली, भरण करने के पश्चात उससे हमने कृटीक नामक एक यन्त्र का निर्माण किया था। उसको जब वायु मण्डल में हमने किरणों के साथ में गति देना आरम्भ किया, यन्त्र जब बृहस्पति की परिक्रमा करने लगा, तो किरणों की कुछ तरंगें ऐसी थीं जो हमारी विज्ञानशाला में किरणों के साथ में आती रहती थीं। वह चित्र-वाहिनी किरण थी जिसमें चित्र आते रहते थे। जैसे पृथ्वी पर हम विद्यमान रहते हैं, हमारी नाना प्रकार की धाराओं को सूर्य की किरण अन्तरिक्ष में ले जाती है, ले जा करके उसके चित्र भी साथ में चले जाते हैं, वह चित्र यन्त्र से इस पृथ्वी-मण्डल पर आते हैं।तो उस समय पूज्यपाद गुरुदेव तत्व मुनि ने कहा था, हे ब्रह्मचारियों! तुम कुशल हो? इस कार्य में तुम कुशलता को प्राप्त करोगे।

तो हे ऋषिवर! उसी आभा को ले करके हमने अपनी विज्ञानशालाओं में अनुसंधान किया। हमने मानवीय दर्शन बाह्य और आन्तरिक जगत दोनों के ऊपर अनुसंधान किया है। मानव तभी सफलता को प्राप्त होता है जब बाह्य जगत को हम जानते हैं, आन्तरिक जगत को जान करके बाह्य जगत में प्रवेश करते हैं और प्रवेशिका को हम आन्तरिक जगत में पुनः पिरो देते हैं, तो उससे हमारे में नास्तिकता नहीं आती। आध्यात्मिकवाद और भौतिकवाद दोनों का हम परम्परागतों से समन्वय करते रहे हैं। तो दोनों प्रकार के विज्ञान का समन्वय करना, उस आभा में रमण करना यह मानव का कर्त्तव्य कहलाता है। आभामयी जीवन कहलाता है जिससे हम मानवीयता से आभा में रमण करते रहते हैं।

आज हम वशिष्ठ मुनि और भारद्वाज मुनि महाराज की चर्चायें कर रहे थे। दोनों का विचार एक-दूसरे में समन्वय रहता था। क्योंकि वह

ब्रह्मवेत्ता थे और वह विज्ञानवेत्ता, ब्रह्मवेत्ता दोनों में गति करने वाले थे। जो ब्रह्मवेत्ता होता है वह विज्ञानवेत्ता होता है और यदि यह दोनों आभायें वैज्ञानिकों के मस्तिष्क में नहीं होती तो वैज्ञानिक नास्तिकता को प्राप्त हो जाता है। 18.01.1982

504 वैज्ञानिक सम्पाति और गरूड़ जी

राजा रावण के यहाँ एकपातालपुरी से दूरी पर एक राष्ट्र था, जिसका राजा शेषनाग था। शेष कहते थे वो नागवृत्ति गोत्र कहलाता था। तो शेष के यहाँ उनकी कन्या से संस्कार हुआ इसी प्रकार सातों राजकुमारों के संस्कार भी हुए। परन्तु यह राष्ट्र इस प्रकार उद्बुद्ध होता रहा। क्योंकि सम्पाति भी समुद्र के तट पर एक राजा थे। सम्पाति के विधाता का नाम गरूड़ था, तो गरूड़ और सम्पाति दो विधाता थे। ये दो भई थे, जो स्वादित नामक एक राजा थे, उसके पुत्र कहलाते थे। सम्पाति को राष्ट्र दे करके वे राजा तो समाप्त हो गए, परन्तु सम्पाति और गरूड़ जी दोनों विज्ञान में रत्त रहते थे। क्योंकि सम्पाति भी वैज्ञानिक था और महाराजा जो गरूड़ जी थे वो भी वैज्ञानिक थे।

एक समय वे सूर्यलोक की उड़ान उड़ने लगे। जब सूर्यमण्डल की उड़ान उड़ने लगे, यानों में विद्यमान होकर के, तो वह उस ताप को, अपने में शक्ति नहीं रखते थे, शक्ति के कारण वे पृथ्वी पर आ गए, वे पृथ्वी पर ही ओत प्रोत रहे, परन्तु सम्पाति उनका सर्वत्र कार्य करता रहा। तो महाराजा सम्पाति का भी समुद्र के तट पर सूक्ष्म सा एक राष्ट्र था, वे उसके राजा थे। क्योंकि हनुमान जी जब सीता के लिए गए, तो सम्पाति के उन्हें दर्शन हुए। 18.02.1982

महर्षि भारद्वाज, महाराजा कुम्भकरण, मेघनाद और नारान्तक की वैज्ञानिक चर्चा

महाराजा कुम्भकरण और राजा रावण के पुत्र मेघनाद और नारान्तक ये तीनों अपने राष्ट्र से गमन करते हैं और भ्रमण करके हुए हिमालय की कन्दराओं में आकार के अनुसंधान करने लगे। महर्षि भारद्वाज मुनि भी उसी आसन पर आ गए और विचार-विनिमय में होने लगा। तीनों वैज्ञानिक और भारद्वाज सहित चारोंइस कल्पना में लग गए, कि सूर्य की जो किरणें आती है, जो किरणें अंधकार को समाप्त कर देती हैं, रात्रि को अपने गर्भ में धारण कर लेती है, हमें उन किरणों को जानना हैं। तोकिरणों के ऊपर उन्होंने एक विज्ञानशाला उनके समीप थी उस विज्ञानशाला में अनुसंधान करने लगे। अनुसंधान करते हुए उन्होंने सूर्य की नाना प्रकार की किरणों को, उसके प्रकाश को, उसमें जो शक्ति, विद्युत भण्डार है उसको उन्होंने यंत्रों में भरण कर लिया और यंत्रो में भरण करने के पश्चात वैज्ञानिक उससे उड़ान उड़ते हैं।

तो भारद्वाज मुनि उन्हें शिक्षा देते रहे। उनके चरणों में वे शिक्षा पाते रहे। तो उस समय महाराजा मेघनाद, कुम्भकरण इत्यादियों ने एक यन्त्र का निर्माण भी किया, उस काल में और वो यन्त्र ऐसा था जो सूर्य की किरणों का शक्ति भण्डार था, उसमें ओत-प्रोत होकर के यान अंतरिक्ष में गति करने लगे। तो उन्होंने सूर्य से खनिज प्राप्त किया। पृथ्वी के खनिज से ऊर्ध्वा में जो खनिज रमण करने वाला, सूर्य के द्वार पर है। जिससे वो पृथ्वी के खनिज को, पृथ्वी के परमाणु को खनिजों में परिणित कर देता है, उसका पिपाद बनाता है। इसी प्रकार उस सूर्य की किरणों को ही क्यों नहीं, अपने में आधारित किया जाए। 03.02.1982

505 सूर्य खनिज से चालित पुष्पक विमान

तो एक समय महाराजा गणेश, उनके समीप आए और महाराजा गणेश की सहायता से उन्होनें पुष्प विमान का निर्माण किया। वह पुष्प विमान अन्तरिक्ष में गति करता था और सूर्य की किरणों से उनमें शक्ति का भण्डार है उससे वो यान गति करता था।, पृथ्वी के खनिज को उन्होंने नहीं लिया, सूर्य से जो खनिज उन्हें प्राप्त हुआ, जिस किरणों से वह पृथ्वी के गर्भ में धातु पिपाद का निर्माण कर रहा था, उसी निर्माण को उन्हीं किरणों को उन्होंने अपने में आकाशित किया और उससे वाहनों का निर्माण किया। 03.02.1982

506 वैज्ञानिक कुम्भकरण

राजा रावण के यहाँ हिमालय में नाना प्रकार की अनुसंधान शालाएँ रहीं। ये सब जितना भी श्रेय रहा है वे कुम्भकरण जी को रहा है। क्योंकि कुम्भकरण जी निन्द्रा पर विजय प्राप्त करने वाले थे। वे छह छः माह तक निन्द्रा नहीं लेते थे। छह छह माह तक वो विचारते ही रहते, अनुसंधान करते रहते। हिमालय में, यन्त्र शालाओं में विद्यमान हो करके, वे अनुसंधानित रहे। वो जब विश्वविद्यालयों में, लंका में प्रवेश किया करते थे। तो वो वैज्ञानिकों, ब्रह्मचरियों को शिक्षा देते रहते थे। परन्तु राजा रावण के यहाँ उनके विधाता जो विभीषण थे, वो कर्मकाण्ड में बड़े पारायण थे, उनके द्वारा पाण्डित्व था। वो कर्मकाण्ड में रत्त रहते थे। प्रभु का चिन्तन करते रहते, वो राष्ट्र के ऊपर ऊँची-ऊँची उड़ाने उड़ते रहते थे। वैज्ञानिक के समीप जाते, वे सुधन्वा वैध के वैधराज के यहाँ नाना प्रकार की औषधियों के ऊपर वो प्रायः विचार-विनिमय करते रहे।

तीनों विधाताओं का कर्म और क्रियाकलाप एक महानता में परिणित होता रहा। वे महानता में परिणित होते रहे। 03.02.1982

तोसूर्य की किरणों के द्वारा, उन सूर्य किरणों को एकत्रित करना, उनके यंत्रों का निर्माण करना यन्त्र अंतरिक्ष में गति कर रहे हैं और शक्ति कहाँ से? सूर्य की किरणों से प्राप्त होती है खनिज विद्या भी पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की विद्या भी ऊर्ध्वा में रही हैं उन्होंने ऐसी, ऐसी

औषधि भी है जिनकों एकत्रित करने से वाहन गति करते हैं। पृथ्वी में ऊर्ध्वा में गति करने वाली है। अन्तरिक्ष में गति करने वाली हैं। ये विधाएँ, ये विज्ञान परम्परागतों से हीजहाँ ये राष्ट्रीयता में भ्रमण करता रहा है और राष्ट्र उससे पनपता रहा है। 03.02.1982

मेघनाद

जिस समय मेघनाद जी ने इन्द्र को विजय किया और इन्द्र की त्रिपुरी में अपना शासन किया। त्रिपुरी में उस समय शासन प्रणाली, सेवक प्रणाली थी। सेवा करना ही समाज का कर्तव्य था। क्योंकि समाज को सुखद बनाना, समाज में जहाँ अकर्तव्यवाद आ जाना उसे कर्तव्य में लाना क्योंकि यही राष्ट्र का कर्तव्य होता है। राष्ट्र का जो निर्माण हुआ है वो धर्म की रक्षा करने के लिए हुआ है। 03.02.1982

507 त्रिपुरी में इंद्र

तो राजा रावण के यहाँ प्रायः ऐसा होता रहा। महाराजा इन्द्रजीत ने इन्द्र को विजय करने, त्रिपुरी में अपनी नियमावली को स्थापित किया। उद्धृत किया और उद्धृत करने के पश्चात त्रिपुरी हमारे यहाँ उस काल में भगवान मनु के काल से ले करके एक परम्परा, एक राष्ट्रीय व्यवस्था बनी हुई होती है। राष्ट्रीय व्यवस्था ये है कि सर्वत्र राजाओं का एक राजा होता है जिसे इन्द्र कहते हैं। वे सर्वत्र पृथ्वी के जितने राजा होते हैं उन राजाओं के ऊर्ध्वा में उनकी नैतिकता इन राजाओं से महान होती है। वास्तव में जितने भी राष्ट्र होते है, उनका सर्वत्र, उनकी नैतिकता एक ही धारा में गति करती रहती है। एक ही आभा में रमण करती रहती है परन्तु उनके ऊर्ध्वा में एक इन्द्र होता है। हमारे यहाँ जैसे इन्द्र है, ये इन्द्र क्योंकि लोकों में भी, जो इन्द्र लोकों का मण्डल है वो सर्वश्रेष्ठ माना गया है। परन्तु यहाँ प्रकरण यह कहता है कि वह इन्द्र को विजय करने वाला मेघनाद, वो इन्द्रजीत कहलाता है। 03.02.1982

508 शिव एक उपाधि

हमारे यहाँ, जैसे कैलाश पर्वत बहुत ऊर्ध्वा में रहता है, एक शिव कैलाशपति राजा भी होता था। उसका नाम शिव कहलाया जाता था। उसको सब राजा, महाराजा उसको चुनौति प्रदान करते थे। वे शिव एक परम्परागतों से एक उपाधि मानी गई है। जो शासन करने में और सात्त्विकता को लाने में जो कुशल होता है। विज्ञान की धाराओं को जानता है, वो शिव कहलाता है। शिव उसे भी कहते हैं जो संकल्पवादी होता है। संकल्पवादी कौन होता है? शिव। शिव उसे कहते हैं जो संसार के ऊपर, सदैव निहारता रहता है। और प्रजा को सद्गति देता रहता है, ऐसे राजा का नाम शिव कहलाता है। वो रजोगुण में, रमण करने वाला है। तो इसी प्रकार, उस काल की ये परम्पराएँ मानी गई हैं। हमारे यहाँ विज्ञान, एक मानवीय खिलवाड़ों में रमण करता रहा है। त्रेता के काल में, नाना वैज्ञानिक थे। परन्तु मेरी प्यारी माताएँ भी विज्ञान में गति करती रहीं। 03.02.1982

509 महाराजा इन्द्रजीत मेघनाद की मंगल यात्रा

एक समय महाराजा इन्द्रजीत मेघनाद ने अपनी पत्नी सुलोचना को ले करके मंगल की यात्रा करते रहते थे। क्योंकि यान से, यातायात के साधन है तो साधन मानव के समीप रहने चाहिए। तो इस प्रकार का विज्ञान और क्रियाकलाप त्रेता के काल में होता रहा है। महाराजा कुलीश गोत्र के ये राजा थे।

राजा रावण अपनी सर्वत्र संसार में उनका साम्राज्य छा गया। छाने के पश्चात वहाँ अपनी आभा को प्रकट कराते रहे और जो राष्ट्र का क्रियाकर्म है, जो भी क्रियाकलाप होता रहा है, उस क्रियाकलाप को ले करके प्रत्येक राष्ट्रों में अपना उपदेश देते थे। प्रजा का जो उस समय धर्म और कर्म था वो किस नैतिक आभा पर था इसको श्रवण करो।

उस काल में प्रत्येक गृह में याग होते थे। प्रत्येक गृह में सुगन्धि होती थी और सुगन्धि होने के पश्चात वेदों की ध्वनियाँ होती थी। ब्राह्मणत्व, पाण्डित्व की दृष्टि से संसार की दृष्टिपात करता रहा। तो राजा के राष्ट्र में राजकोश में इस प्रकार का एक विभाग था जो केवल इसी के लिए, कि वेद का पठन हो। वेद की परम्पराएँ हो, उनकी रक्षा के लिए कोश में से भाग होता है। जिससे राजा के राष्ट्र में विवेक पुरुष हों, बुद्धिमान हों। जिन बुद्धिमानों से राष्ट्र और समाज पवित्र बनते हैं। तो ये राजा के कोश में ऐसी एक नियमावली बनी हुई। और वह भी वह कोश होता था, जो सात्विक कोश, कृषक का जो कोश रहता था, क्योंकि ऋषि-मुनि विवेकी बनते, आहार और व्यवहार से। तो इस प्रकार का राष्ट्र का कर्म विधान युक्त चलता रहा। समय व्यतीत होता रहा, एक समय महाराजा खरदुषण रावण के समीप आए और उन्होंने-कहा-प्रभु! राष्ट्र की परम्परा बड़ी महानता में गति कर रही है परन्तु कहीं-कहीं अकर्तव्यवाद हो जाता है। उसके लिए शासक की आवश्यकता है। तो उनका नृत्त होता रहा, विचार-विनिमय होता रहा, तो वे जाकर के बुद्धियुक्त अपने वाक्यों को प्रकट करके और उनको महान बनाते थे। 03.02.1982

510 साधक राजा रावण

मुझे स्मरण है राजा रावण के राष्ट्र को इसी प्रकार २४२ वर्षों तक राज चलता रहा। २४२ वर्षों तक रावण का राष्ट्र रहा। राजा रावण की

भी आयु दीर्घ थी। वो आयु के ऊपर साधना करते रहते थे। राजा का ये कर्तव्य था, कि प्रातःकाल अपने आसन को त्याग देना और अपनी क्रियाओं से निवृत्त होना, उसमें याग करना, ब्रह्मयाग करना देव पूजा करने के पश्चात वह अपने ध्यान से अवृण हो करके और वे राष्ट्र के कार्यों में रत्त रहते थे। महारानी मंदोदरी सदैव प्रभु का, राष्ट्र का, क्योंकि हमारे यहाँ एक नियमावली बनी हुई है परम्परागतों से। कि राजा जैसे न्यायालयों मेंविद्यमान होता है ऐसे ही राजलक्ष्मियाँ भी न्यायालय में न्याय करती रहती। न्याय करती रही है, क्योंकि हमारे यहाँ, देवियों का न्याय देवियाँ करती थी और राजपुरुष, पुरुषों का न्याय राष्ट्र के द्वारा होता।

तो इससे समाज में कुरीति नहीं आती, इससे समाज में हिंसा नहीं आती, क्योंकि देवियों की सुरक्षा करने के लिए, राजलक्ष्मियाँ है और पुरुषों की रक्षा करने के लिए, राजा है। जो न्यायालय में न्याय कर रहें हैं। इसी प्रकार देवियाँ, उनके प्रिय क्रियाकलाप, उनकी जितनी भी कठिनाईयाँ है उनमें जितना भी दोषारोपण है वो न्यायालय में, देवियाँ, पुत्रियाँ अपना न्याय करती रहीं है। तो ये काल राजा रावण के यहाँ भी होता रहा है। महारानी मंदोदरी अपने आसन पर न्याय करती थी। सुलोचना अपने आसन पर न्याय करती रही क्योंकि त्रिपुरी में जब महाराजा मेघनाद का साम्राज्य हो गया, तो उस समय मेघनाद जैसे प्रातः कालीन न्यायालय में रहते थे, उसी प्रकार उनकी पत्नी सुलोचना भी रहती थी, वे न्याय करती रही हैं।

महारानी सुलोचना के पुत्र हुआ था, जिस पुत्र का नाम शुकेनकेतु कहते हैं, शुकेनाकृति इन भागों में रमण करता रहा। उसको शिक्षा देना, आचार और विचारों को महान बनाना, ये राजा के राष्ट्र में एक नियमावली बन गई। राजा के राष्ट्र में एक नियमावली बनी हुई थी, उस काल में एक नियमावली यह बनी हुई थी कि यहाँ वेद का अध्ययन करना, आयुर्वेद का अध्ययन करना, मेरी कन्याओं को बहुत अनिवार्य था। बहुत अनिवार्य, क्योंकि आयुर्वेद की विद्या जो माता अध्ययन करती है, वह अपनी सन्तानों को उत्तम जन्म दे सकती है क्योंकि आयुर्वेद के जानने वाला, विद्यालयों में आचार्य होता है, जो नस नाड़ियों के विज्ञान को जान करके मानव की जानकारी करा देता है।

राजा रावण के यहाँ, महाराजा कुम्भकरण और मेघनाद जी ने दोनों ने मिलान होकर के कहीं वेद में यह श्रवण कर लिए कि दीपावली राग भी होता है, एक मेघावली राग होता है। एक मोहनी राग होता है। तो वह, उस गान में लगे हुए थे। एक समय उस गान की कृतिभा जब उनसे समाप्त हो गई, तो एक समय वे भ्रमण करते हुए, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज उस समय गान विद्या में बड़े महान थे। वे रेवक मुनि के द्वार पर पहुँचे, महाराजा मेघनाद ने कहा-प्रभु! हमने वेद मन्त्रों में श्रवण किया कि एक मेघराग होता है, एक दीपावली राग होता है और एक मोहिनी राग होता है ये क्या है?

तो उस समय महाराजा गाड़ीवान रेवक की आयु उस समय ४८१ वर्ष की थीं वे ४८१ वर्ष के ब्रह्मचारी वो सब रागों को जानते थे। सौ-सौ वर्षों तक उन्होंने एक-एक विषय पर अनुसन्धान किया। वे प्राण और अपान का मिलान करके, स्वरों की ध्वनि को जानता है उसकी ध्वनि में अग्नि प्रदीप्त हो करके दीपावली राग बन जाता है। जो जल, जो उदान को और समान को प्राण में दोनों में उनको पिरो देता है, तीनों प्राणों का समावेश होकर के जब वो गान गाता है तो उससे मेघरागों का, मेघ उत्पन्न हो जाता है। तो ये विधाएँ हमारे यहाँ, परम्परागतों से रही हैं। इन विद्याओं के ऊपर बहुत अनुसंधान किया। परन्तुगान गा रहा है, गृह के दीपक प्रकाशित हो रहे है। गान गा रहा है, मेघ उमड़ रहें है तो वृष्टि हो रही है। इस प्रकार की विद्याएँ इस विद्या को त्रेता के काल में, रावण के काल में यंत्रो में इस परमाणु विद्या को उन्होंने यंत्रों में भरण करने का प्रयास किया। प्रयास करके यंत्रो को वायु में त्यागा तो वृष्टि हो गई। इसी प्रकार मानव अपने क्रिया कलापों में इस विद्या को प्रत्यक्ष करता रहा है। जैसे मल्हार राग गाती है माता, मल्हार राग गा करके वृष्टि होने लगती है, जैसे दीपावली राग गाता है, गान गाता है तो दीपक प्रकाशित हो जाते है। इस प्रकार की विद्याएँ जैसे परमाणु को विभाजन करने से अनन्त अग्नि का भण्डार उत्पन्न हो जाता है। इसी प्रकार मानव कीवाणी में, मानव के प्राणों के निदान करने में वो शक्ति प्राप्त होती है।

तो, राजा रावण के यहाँ इस प्रकार की विधाएँ उनके विद्यालयों में नृत्त करती रही। मुझे स्मरण है कि मेघों का राग, गाने वाला मेघनाद था। सुलोचना जब गान गाती थी तो पुत्र महान बन जाते थे।

मेरी पुत्रियों के शरीरों में मानव के शरीरों में, मस्तिष्कों में, ये विद्याएँ सब नृत्त करती रहीं है। और ये विद्याएँ कहाँ से प्राप्त होती हैं? कुछ विद्याएँ आयुर्वेद से प्राप्त होती है। कुछ विद्याएँ उपासना काण्ड से प्राप्त होती है। ये विद्याएँ अनुसंधान करने का एक विषय है। 03.02.1982

511 अहिरावण

तो यह ज्ञान, यह विज्ञान परम्परागतों से मानवीयता में रमण करता रहा है। तो परमपिता परमात्मा की महिमा और उसका जो ज्ञान, विज्ञान जिन महापुरुषों ने जाना है राजा रावण के जेठे पुत्र अहिरावण वे तपस्या करते रहे, वे राष्ट्र ही नहीं करते थे, राष्ट्र का पालन तो प्रियता में था, परन्तु वो प्रातः कालीन याग करते और याग से पूर्व वो बह्मयाग करते थे। ब्रह्मयाग कहते हैं ब्रह्म के चिन्तन को, देवयाग कहते हैं अग्निहोत्र को, जहाँ देवता प्रसन्न होते हैं। तो जब वे अग्नि के ऊपर वेद मन्त्रों का अध्ययन करने लगे, तो वे तप करने लगे, तप करते-करते

उनके द्वारा एक मोहनी विद्या थी और वो मोहनी विद्या कैसी थी? वाणी को उन्होंने शक्तिशाली बनाया, उन्होंने कई यंत्रों को भी जाना, इससे यन्त्र त्यागा और मानव मूर्छित हो गया और इसको मोहनी विद्या कहते थे। उसको कहीं भी ले जा सकते थे। तुम्हें प्रतीत होगा अहिरावण को यह विद्या सिद्ध हो रही थी, वे उस विद्या में पारायण थे। अध्ययन करते रहते थे ये विद्या, उन्होंने महर्षि दधीचि जी के आश्रम में ग्रहण की थी। महात्मा दधीचि इस विद्या को जानते थे। ऋषि मुनि तो कोई ऐसा था ही नहीं जो कोई-सी विद्या को न जानता हो। वो सर्वत्र विद्या में पारायण रहते थे। वे उनके द्वारा ऐसी विद्या जैसे अन्तरिक्ष में कोई शब्द गति कर रहा है और शब्द के साथ में चित्र, तो वह अपने यहाँ यंत्रों में उन चित्रों का दर्शन करते थे। ये अहिरावण भी इस विद्या को जानते थे, इस विज्ञान को जानते थे। राजा अहिरावण पातालपुरी के राजा थे। पातालपुरी में उनके यहाँ विज्ञान भी, ज्ञान भी और दुग्ध देने वाला जो पशु है, ये बहुत आज्ञा में रहता है था, वहाँ उनकी पूजा होती रहती थी, तो राष्ट्र का जो निर्माण, राष्ट्र की जो प्रतिभा है वह राजाओं के ऊपर होती थी, राजा जिस प्रकार का आहार और व्यवहार, उनका जो क्रियाकलाप होता है उसी के आधार पर समाज का निर्माण होता है। 03.02.1982

512 राजा रावण का राष्ट्र

राजा रावण के यहाँ महानता में, एक से एक महान उनका पुत्र, एक से एक महान राजा, उनकाक्रियाकलाप विचित्रता में चलता रहता। उनके राष्ट्र में प्रातः कालीन याग होना। प्रत्येक राष्ट्र का जो ऊँचा कर्मचारी था, उसकी राष्ट्रीयता में नियमावली बनी हुई थी, कि राजा के राष्ट्र में, उनके यहाँ याग होना चाहिए। जैसे न्यायाकृतधीश होते हैं उनको याग करना है, जिससे समाज उनसे शिक्षा लेते रहे और उनमें कर्तव्यवादी कर्म बनें रहे। और वह अपने कर्तव्य का पालन करते रहे। जो मानव याज्ञिक होता है। जो प्रभु भक्त होता है वह इस समाज के वैभव को अपने में संग्रहित नहीं करता, उसके हृदय में एक नैतिकता बनी रहती है। उसके हृदय में नैतिकता बन करके, वो न्याय देता समाजों में है। न्याय किसे कहते हैं? न्याय ही चरित्र है, और चरित्र ही न्याय है। इन दोनों को देता रहता है, तो इसी प्रकार राजा के राष्ट्र में इस प्रकार के क्रिया-कलाप होते रहें है। 03.02.1982

513 कर्तव्यवाद

महारानी मंदोदरी राष्ट्र में महानता की उड़ान उड़ती रहती थी। वह अपने न्यायालयों में कर्तव्य करती थी। और गृह के सात्विक वातावरण को देती है। वह विद्यालयों में जाती और न्याय की चर्चाएँ विश्वविद्यालयों में, शिक्षा देने का भी उनका नियम बना हुआ था। एक समय निर्धारित किया हुआ था। जिससे पुत्र पुत्रियाँ उनके अमृत वचनों को पान करके, महानता को प्राप्त होते रहे। तो इस प्रकार का नृत्त इस प्रकार का विचार राजाओं के राष्ट्र में होता रहा।

हम प्रभु की याचना कर रहे थे प्रत्येक मानव आनन्दयुक्त होना चाहता है। राजा अपनी प्रजा को आनन्द देना चाहता है। प्रजा भी राष्ट्र को महान दृष्टिपात करना चाहती है। तो प्रत्येक मानव उसमें रमण करता, उसके आनन्द में आनन्दित रहता है।

हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, ज्ञान और विज्ञान की उड़ान उड़ते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएँ। 03.02.1982

514 महाराज हिरण्याकुश

जैसा आज का राष्ट्र चल रहा है ऐसा राष्ट्र महाराज हिरण्याकुश के समय में, चला था किसी समय में महाराज हिरण्याकुश प्रजा के शृंगार को अपने में संग्रह कर रहा था। और वह संग्रह करता हुआ, वह अपने में अभिमानी बन गया, और उसने यह कहा कि भगवान हूँ। भगवान कोईओर वस्तु नही हैं। मैं ही प्रभु हूँ। मैं ही ओ३म् हूँ। परन्तु यदि बुद्धि होती तो यह वास्तव में ऐसा न होता। उस समय एक समाज बना था, उस समाज का नाम सुरीत था। सुरीत एक समाज बना जो क्रान्तिकारी था।उसके बल से, उसकी आभा में महाराजा हिरण्याकुश राज करता था। जब वह राज करता था, तो पुनः एक क्रान्तिकारी समाज का जन्म हुआ, जिस समाज को हमारे यहां अद्वान कहते थे, अद्वान एक धर्म बना जैसे आधुनिक काल में मोहम्मद के मानने वाले हैं, ईसा के मानने वाले हैं और भी नाना प्रकार के धर्म कहलाते हैं। परन्तु वह धर्म नही, वह रूढ़ि कहलाती हैं। ये नाना रूढ़ियाँ हैं, क्योंकि धर्म तो नेत्रों से प्रगट होता है, धर्म वाणी से प्रगट होता है, धर्म श्रोत्रों से प्रगट होता है, यह परमात्मा का दिया हुआ धर्म है, यह मानवता की रचना नही हैं। परन्तु ऐसा ही समाज बना।

परन्तु एक समाज हिरण्याकुश के पुत्र हुआ, जिसका नाम प्रहलाद था। और प्रहलाद आस्तिक था, प्रभु भक्त था, प्रभु का जिज्ञासु था, तो एक नरसिंह समाज की उत्पति हुई, जिसमें क्रान्ति का अग्रणीय कौन बना, महाराजा प्रहलाद। पिता के नाते नाना प्रकार की यातनाएं दी गई, समाज को पनपने नही दिया परन्तुनाना रूढ़िवादियों ने और भी नही पनपने दिया।

परन्तु महाराजा प्रहलाद, इतना शक्ति शाली, नम्रता में बना, प्रभु ने उसकी सहायता दी, हिरण्याकुश को, उस समाज ने, नरसिंह समाज ने मुनिउसको समाप्त कर दिया, और महाराज प्रहलाद उसके पश्चात राजा बना और राष्ट्र में सुचरित्रता से, राष्ट्र का पुनः निर्माण किया। निर्माण होने से नाना रूढ़ियों में, महाराजा प्रहलाद ने जो नाना धर्म के ऊपर जो रूढ़ियाँ बनी हुई थी, उन रूढ़िवादियों में जितने विशेषज्ञ बुद्धिमान

थे सबको एकत्रित किया, और उन्होंने अपने दर्शनों में प्रवेश किया।महाराजा प्रहलाद गम्भीरता से यह सोचा, विचारा, चिन्तन किया और वह क्या चिन्तन किया, कि यह समाज कैसे ऊँचा बन सकता है। प्रहलाद के गुरु थे उस गुरु का नाम था सुनेतकेतु ऋषि थे। जो तपस्या करते थे। वे उनके समीप वनों में आए और महाराज प्रहलाद को शिक्षा देते रहते, वेद के पाण्डितव थे वेद के मर्म को जानते थे। परन्तु वेद के मर्म को जानने के पश्चात वह प्रजा में, जितने आचार्य थे, नाना रूढ़िवादियों को एकत्रित किया। उनका शास्त्रार्थ हुआ, विचार-विनिमय हुआ और वह विचार करते-करते अन्तिम छोर पर पंहुच गएं, जो विजय हो गया, उस, धर्म को उन्होंने स्थिर किया। और धर्म को स्थिर करके समाज को उपदेश दिया। समाज में सबसे प्रथम याग है। सबसे महान कर्म संसार में याग। महाराज प्रहलाद ने वह क्यों माना? क्योंकि यह सुगन्धित है, यह चरित्र देता है, यह मानव को ब्रह्मचर्य की शुद्धता देता है, और मानव के विचारों को महान बनता है, और सृष्टि की रचना के आधार पर उसकी रचना होती है। इसीलिए इसको, बुद्धिमानों ने और महाराज प्रहलाद ने अपने राष्ट्र में भ्रमण करते हुए, भ्रमण करते थे, और भ्रमण करके उस राजा ने अपनी प्रजा को सत उपदेश देते थे। सत उपदेश दे करके और प्रजा उसके अनुसार बरतने लगी। जब प्रजा उसके अनुसार बरतने लगी, तो राष्ट्र महान बन गया, हिरण्याकुश का ह्रास हो गया। 05.02.1982

515 पाप का मूलक

इस प्रकार का राजा जब समाज में होता है, तो उस राजा के राष्ट्र में क्रान्ति नही होती। अशुद्ध क्रान्तियां, रक्त भरी क्रान्ति, उस काल में होती है, जिस काल में राष्ट्र नायक बुद्धिमान नही होते, और धर्म के मर्म को नही जानते। जो धर्म के मर्म को जानता है, वह धर्म को ले करके चलता है, वह राष्ट्र, कर्तव्यवादी बन जाता है।

महाराजा प्रहलाद कर्तव्यवादी बनें, और अपने कर्तव्य को ले करकेनरसिंह अवतार, एक समाज का बना और उस समाज में उस नास्तिक और रूढ़िवादी पिता का हनन कर गएं। परन्तु हनन क्यों हुआ? क्योंकि नाना रूढ़ियों से समाज, में क्रान्तियां होती हैं। क्योंकि रूढ़ि बनती है, अज्ञानता से रूढ़ि बनती हैं, और रूढ़ियों से आंकुचनता में प्रवेश करता है। वह आंकुचन ही समाज की मृत्यु है आंकुचन ही अधर्म है, आंकुचन ही पाप का मूलक बन करके रहता है।

आज वैज्ञानिक पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश कर रहे हैं, अन्तरिक्ष में यन्त्र गति कर रहे हैं, चन्द्रमा की यात्रा में लगे हुए हैं, मंगल की यात्रा कर रहे हैं जब मैं यह विचार करता रहता हूँ परन्तु यह भी विचारता हूँ कि धर्म और आत्मा का कितना दर्शन है उसमें वह शून्य हो जाते हैं, जहाँ जब मैं यह उच्चारण करता हूँ कि सूर्य की किरण जहाँ नाना प्रकार का परमाणुवाद देती है जहाँ वहाँ वह वाहनों में गति देती हैं वहाँ सूर्य की किरणें मानव के चरित्र को ले करके प्रातःकाल में आती हैं, उस चरित्र का कितना निर्माण किया है कितना संकल्प किया हैं। 05.02.1982

516 महर्षि भारद्वाज और कुम्भकरण की तीन गुणों पर चर्चाएँ

ये तीन गुण कहलाते हैं, जिनको रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण कहा जाता है। इसी प्रकार प्रभु के भी तीनों नामोकरण कहलाए जाते हैं। विष्णु परमात्मा को कहते हैं, वह पालन कर रहा है संसार का। रजोगुण शिव को कहते हैं, क्योंकि परमात्मा का नाम भी शिव है। वह शासन में, इस संसार को कड़ी में कटिबद्ध करने वाला है। शासन कर रहा है और तमोगुण में इस संसार की उत्पत्ति कर रहा है। तो इसी प्रकार इन तीनों गुणों का गुण-वादन हो रहा है। जब वैज्ञानिकों ने पृथ्वी के गर्भ में वास किया और उसके गर्भ में आभा को प्रगट करने लगे, तो उसमें गति दृष्टिपात आने लगी और वह जो गतियाँ हो रही थीं, उन गतियों को अपने में धारण करने वाला एक महान् ओजस्व कहलाता है।

इसी विचार को, वेदमन्त्र को ले करके त्रेता के काल में महर्षि भारद्वाज और सुमेतकेतु परस्पर विचार-विनिमय करते रहते थे। जब वह कुम्भकरण और भारद्वाज की चर्चा होने लगी तो वह परस्पर विचार देते रहते थे। जब वेदमन्त्र में तीनों गुणों का वर्णन आया, परमात्मा के वाची शब्दों की विवेचना आने लगी तो ऋषि ने कहा, हे वैज्ञानिक तथ्यों के जानने वालो! यह वेद का मन्त्र यह कहता है कि यह जो संसार है यह तीन गुणों में व्याप रहा है। तो महाराजा कुम्भकरण ने कहा, महाराज! यह तो मैंने जान लिया की तीन गुण हैं। परन्तु इन तीनों गुणों का विज्ञान से क्या सम्बन्ध रहता है? महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा, हे पुलस्त्य गोत्रों में जन्म लेने वालो! यह तो स्पष्ट हो रहा है कि तीनों गुणों में ही सर्वत्र विज्ञान गति करता रहता है। जहाँ पाँच इस प्रकृति की गति मानी जाती हैं, वहाँ तीन गुण भी उसमें विद्यमान रहते हैं, तीनों ही गुणों में वह व्यक्त रहने वाला विज्ञानमयी धाराओं का रमण करता रहता है।

महाराजा कुम्भकरण ने कहा, मैं यह जानना चाहता हूँ कि सतोगुण क्या है? उन्होंने कहा, सतोगुण पालन है, जैसे परमपिता परमात्मा सतो में रमण करता हुआ, इस संसार का पालन कर रहा है। चाहे वह प्राणी पृथ्वी-मण्डल का हो, चाहे वह मंगल में गति करने वाला हो, चाहे वह बुध में रहने वाला हो, परन्तु सूर्य मण्डल के प्राणियों का किसी भी आभा में, चाहे वह परमाणुवाद शब्दों के रूप में परमाणु गति करने वाला हो, परन्तु वह परमाणुओं का सर्वत्र का एक पालन स्वरूप बना हुआ है। वह ब्रह्म का आयतन है।आयतन कहते हैं, कि ब्रह्म का वह

गृह है, और ब्रह्म के गृह में वह वास कर रहा है। वह विष्णु बनकर के वास कर रहा है। इसी प्रकार जितना भी लालन पालन है, वह माता के हृदय में रहता है। मानव के हृदयों में गति करने वाला है, तो उसे वेद कहता है विष्णु।

इसी प्रकार जितना भी संसार का शासनवाद है, हे कुम्भकरण! जितना भी शासन हम तुम कर रहे हैं, एक आचार्य हैं, विद्यालय में शिक्षा दे रहा है, परन्तु उसके हृदय से उद्गार उत्पन्न हो रहे हैं। निगली हुई विद्या का वह ब्रह्मचारियों के समीप वमन कर रहा है और ब्रह्मचारी उसको ग्रहण कर रहा है। परन्तु वह शिक्षा दे रहा है, वह उसका सतोगुण है। सत्य के ऊपर उसका विशुद्ध उच्चारण नहीं होता, तो उसको दण्डित करता है, उसको अनुशासन में लाने के लिए, वह उसका रजोगुण कहलाता है। वह सत्य को धारण कराने के लिए ही, सत्य का पालन कराने के लिए ही, सत्य के सूत्र में रजोगुण विद्यमान रहता है। वह उसमें सतोगुण के ही सूत्र में रहता है। इसी प्रकार माता-पिता अपने में यह चाहते हैं, माता कहती हैं। कि मैं पुत्र-याग करना चाहती हूँ, पिता कहता है मैं पुत्र-याग करना चाहता हूँ। तो वह उस तमोगुण के गर्भ में, उत्पति की आभा विद्यमान रहती है। वह संकल्प है और वह संकल्प सतो में नहीं, रजो में रहता है। रजो में नहीं, वह तमो में भी रहता है।

तो वह जो रजोगुण, तमोगुण की आभा रमण कर रही है वह भी सत्य के गर्भ में विद्यमान है, वह भी सत्य के गर्भ में है, क्योंकि माता का हृदय, माता का पुत्र है, पिता का हृदय पिता की पुत्री है। वह सब सतो से सुगठित रहते हैं इस प्रभु ने इस संसार को कैसे सूत्र में पिरोया है? कैसा सूत्र जिसमें रजोगुण, तमोगुण समाहित रहतें है।

महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ रावण का जितना भी वंशलज था, वह विज्ञान में रत्त रहता था और विज्ञानवेत्ता महाराजा कुम्भकरण और ब्रह्मचारी सुकेता इन्हीं उपदेशों को ले करके वह पृथ्वी के गर्भ में पहुँच गए, वह पृथ्वी के गर्भ में जहाँ खनिजों का निर्माण हो रहा था। और वह निर्माण कौन कर रहा था, सत्य में जो ज्योति आ रही थी, उस ज्योति के सन्निधान मात्र से ही उसके भिन्न-भिन्न प्रकार के स्वरूप बन गए। वहाँ स्वर्ण का निर्माण भी हो रहा है, वहाँरत्नों का निर्माण भी हो रहा है। उसी पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की धातुओं का चयन हो रहा है। जल को शोधित किया जा रहा है। वह जल को शक्तिशाली बना करके वाहन उस जल से गति करते हैं तो परिणाम क्या? पृथ्वी के गर्भस्थल में सूर्य द्यौ से प्रकाश लेता है और वह प्रकाश नाना रूपों को ले करके पृथ्वी से उसका सन्निधान होता है। उसके सन्निधान मात्र से ही उन नाना किरणों के रजोगुणी, तमोगुणी और सतोगुणी रूप बन करके इस पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की धातुओं के पिपाद बन रहे हैं। निर्माण हो रहा है और वह निर्माण हो करके, वह विज्ञान का और राष्ट्र की मौलिक सम्पत्ति को उत्पन्न किया जाता है। तो एक-एक किरणों के भिन्न-भिन्न प्रकार के स्वरूप माने गए हैं। तो नाना प्रकार की किरणों के स्वरूपो में एक महान् विज्ञान निहित रहता है।

तो महाराजा कुम्भकरण ने कहा कि प्रभु! उन किरणों को हम यन्त्रों में कैसे ला सकते हैं। तो महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ इतनी इस प्रकार की विज्ञानशालाएँ थीं, जिन विज्ञानशालाओं में उन किरणों का निरोध किया जाता था। वह किरणें जल को पृथ्वी के गर्भ में शक्तिशाली बना करके उसके रूप का परिवर्तन कर रही थी और राष्ट्र के वैज्ञानिक जन पृथ्वी के गर्भ से इस जल को ले करके उसका शोधन करके वाहनो को कार्य रूप देते थे। परन्तु भारद्वाज के यहाँ एक ऐसी विज्ञानशाला थी, जहाँ सूर्य की किरणों को यन्त्रों में लिया जा रहा था और उन सूर्य की किरणों से, वाहन गति करते थे। गति करते रहें हैं।

तो राजा रावण के यहाँ इस प्रकार के वाहन गति करते थे जो सूर्य की किरणों से, कहीं कोई यन्त्र सूर्य की परिक्रमा कर रहा है। कोई मंगल की परिक्रमा कर रहा है, कोई चन्द्रमा की परिक्रमा कर रहा है, कोई शनि की परिक्रमा कर रहा है। उन्हे सूर्य से प्रकाश किरणों से यन्त्रों में गति रहती है।

तो भारद्वाज मुनि महाराज ने महाराजा कुम्भकरण इत्यादियों को नाना प्रकार की आभाएँ वर्णित कराईं वह विज्ञान उस काल में महानत्ता में गति करता रहा है। आज मैं तुम्हें त्रेता के काल में तुम्हें उस विज्ञान की चर्चा कर रहा हूँ जिन विज्ञानवेत्ताओं ने मेरे प्यारे! देखो, विज्ञान में जाने के पश्चात मानवीयतव अपनी आभा में गति करता रहा है। तो मुनिवरों! विचार क्या? राजा रावण और मुनिवरों! देखो, भारद्वाज मुनि की चर्चाएँ भी होती रही हैं। एक समय भारद्वाज मुनि महाराज से यह कहा कि यह विज्ञान इस प्रकार का विज्ञान जब वैदिक साहित्य में विद्यमान है, तो हमारे राष्ट्र में इस वैदिकता का अध्ययन होना चाहिए। मेरे प्यारे! भारद्वाज ने कहा, तुम्हारे यहाँ होता रहता है, विद्यालयों में होता रहता है, विश्वविद्यालयों में होता रहता है। तुम्हारे यहाँ नित्य प्रति याग का चयन होता रहता है, याग होता रहता है। मानो देखो, वह याग कहलाया जाता है जिस याग में सुगन्धि से तुम वायुमण्डल को पवित्र बनाते हो यह जो वायुमण्डल है, इस वायुमण्डल में परमाणु गति कर रहा है, शब्दों के साथ गति कर रहा है। आभा में रहने वाला यह विज्ञान है। परन्तु देखो, इस विज्ञान, इस परमाणुवाद को और साकल्य अग्नि की धाराओं पर विद्यमान करके वह अन्तरिक्ष में गति कर रहा है। तो मेरे पुत्रों! जब उन्होंने ऐसा वर्णन कराया तो राजा रावण मौन हो गएं परन्तु प्रातःकालीन उनके यहाँ याग होता रहता था। महारानी मन्दोदरी नाना प्रकार के प्रश्न करती रहती थी। वैद्यराज के

सम्बन्ध में क्योंकि भिन्न-भिन्न प्रकार की दिशाएँ होती हैं विज्ञान की। राष्ट्र में भिन्न-भिन्न प्रकार के वैज्ञानिक होने चाहिए जैसे आयुर्वेद को जानने वाले आयु को ऊँचा बनाने वाले हों।

मेरे पुत्रो! ऐसी औषध हो हमारे यहाँ राजा रावण के काल में जहाँ मुनिवरों! देखो, वनस्पति विज्ञान ऊँचे शिखर पर रहा है वहाँ मुनिवरों! देखो, प्राण चिकित्सा भी रही है। हमारे यहाँ जो प्राण चिकित्सा है वह सबसे ऊर्ध्वा में रही है। महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ एक सुकामकेतु ऋषि महाराज रहते थे सुकामकेतु ऋषि महाराज वह प्राण चिकित्सा जानते थे। वह प्राण के विज्ञान को भी जानते थे। किस प्राण से कैसे रुग्णों को समाप्त किया जा सकता है। तो मुनिवरों! तो मुनिवरों! देखो, प्राण के ऊपर वह निरोध, नाना प्रकार की धाराएँ, मुनिवरों! देखो, इस प्राण में से उत्पन्न होती रहती हैं जिसके ऊपर मानव जैसे शीतली प्राणायाम होता है, जैसे उद्गीताम् प्राण होता है। वह प्राणायाम किया जाता है। मुनिवरों! देखो, मानव के शरीर में अग्नि प्रदीप्त हो गई है। अग्नि को शान्त करने के लिए शीतल पाण चिकित्सा होती है। शीतलता आ गई है तो सूर्य प्राणायाम से मानो देखो, उसमें अग्नि प्रदीप्त की जाती है। मेरे पुत्रों! यदि अग्नि और शीतलता का दोनों का समन्वय हो गया है तो उस काल में देखो, चन्द्र-प्राणायाम किया जाता है, उससे मानो देखो, रुग्णों को शान्त किया जाता है।

मैं इस सम्बन्ध में चर्चा देने नहीं आया हूँ। यह तो धाराएँ हैं। परन्तु विचार-विनिमय क्या है? क्या मुनिवरों! देखो, विज्ञान के प्राण के रूपों से नाना प्रकार के भेदन माने गए हैं। तो विचार यह देना है, भारद्वाज मुनि ने यह कहा था कि संसार में जितना भी सतोगुण है। वह सतोगुण के सूत्र में कटिबद्ध होने वाला यह त्रि संसार कहलाता है। तीन स्तम्भ इस ब्रह्माण्ड के, इस मानवीय जगत के माने गए हैं। इन तीनों प्रकार की आभाओं को लेकर के मानव अपने को विचित्र बनाता है और विज्ञान वैज्ञानिक बनाता है, महान् बना देता है। तो हम वैज्ञानिक बनें। हम अपने में महानत्ता को प्राप्त होते रहें।

तो सतोगुण में विष्णु है, रजोगुण में शिव है और तमोगुण में ब्रह्म माना गया है। यह वाची शब्द कहलाते हैं।इन तीनों प्रकार के कर्मों में मानवीय दर्शन गुथा हुआ है। जो सत्य से भी ऊर्ध्वा में गति होता है जो सत्योमयी जो महासत्य है एक रजोगुण में भी धारा है, जो महा रजोगुणी है। एक तमोगुण में धारा है। जो महा तमोगुणी कहलाती है। जैसे परमात्मा की रचना है वह महाधारा है। जैसे परमात्मा का शासन है। वह महाधारा है। जैसे सतोगुण मेंविष्णु रूप है, वह प्रभु का पालन एक महाधारा कहलाता है तो यहाँ नाना प्रकार की धाराओं में यह मानव इस संसार केएक मौलिक कहलाता है। इसमें भी भिन्न-भिन्न प्रकार की धाराएँ हैं। एक आन्तरिक पालन है, एक बाह्य जगत का पालन है। एक आन्तरिक तमोगुण है। एक बाह्य तमोगुण है। एक आन्तरिक रजोगुण है। एक बाह्य रजोगुण कहलाता है। आन्तरिक तमोगुण किसे कहते हैं? मानव के शरीर में यह दसों इन्द्रियाँ कहलाती हैं। इनके ऊपर शासन करने का नाम महारजोगुण कहलाता है और इस संसार में जो नाना प्रकार की उपलब्धियाँ हैं और वह उपलब्धियाँ क्या हैं? संसार के आकार को बनाना यह परमाणुवाद है, इससे गुथा हुआ जो यह मानवीय तत्त्व कहलाता है। इस मानवीय तत्त्व को जानना और उसमें से जो उपलब्धियाँ होती हैं। उन्हे पुनः से साकार रूप देना, वह एक तमोगुण वह सात्विक से बँधा हुआ तमोगुण, महा तमोगुण कहलाता है।

जैसे एक वैज्ञानिक है, एक आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता है। या आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता को लिया जाए अथवा भौतिक विज्ञानवेत्ता को लें। परन्तु भौतिक विज्ञानवेत्ता ने यह दृष्टिपात किया कि माता के गर्भ से बालक की उत्पत्ति कैसे होती है? पालन कैसे होता है तो वह इन आभाओं को वायुमण्डल में से लेना प्रारम्भ करता है और उन धातु पिपाद को ले करके वह यन्त्रों का निर्माण करता है।यन्त्रों का जब उसने निर्माण किया तो उसमें माता के गर्भ में वह जो उसे रस प्रदान किया जा रहा है, स्वतः हो रहा है माता को ज्ञान नहीं है, परन्तु वह स्वतः ही हो रहा है। तो ऐसे ही वैज्ञानिकजन उन धातुओं को जान करके और यन्त्र का निर्माण करके उसमें जो रस माता के गर्भ में विद्यमान होता है उस रस को ले करके वह यन्त्रों में स्थित करते हैं और उससे जैसे जो-जो क्रियाकलाप, जो माता के गर्भ में होता है वह क्रिया दे करके वह वैज्ञानिक महातमोगुण को ले करके उस बालक की रचना कर देता है।

तो इसी प्रकार शासन है, ऐसे सतोगुण है। महा सतोगुण उसे कहते हैं जो प्रभु पालन कर रहा है। माता अपने बालक का पालन कर सकती है, क्योंकि वह माता का हृदय माना गया है। उसमें माता की तीनों प्रवृत्तियाँ कटिबद्ध रहती हैं, उसमें समाहित रहती हैं। तो उसमें वह अव्यत गति से गति करती रहती हैं, वह दूसरे बालक का पालन नहीं कर सकती। क्योंकि उसमें बालक का तमोगुणी प्रवृत्ति से अप्रात नहीं होता। परन्तुरजोगुण भी नहीं है। तो सतोगुण में वह पालन तो कर रही है। वह एक बाह्य पालन कहलाता है और जो प्रभु, ब्रह्मा बन करके इस संसार का पालन करता है वह उत्पति भी उसमें है, शासन भी उसमें है, सतोगुण भी है, विष्णु कहलाता है। अपनी आभा में वह आन्तरिक और मौलिकता में गति करता है। वह साम्य प्रवृत्ति में लाता है।

तो यहाँ पालन भी दो प्रकार के माने गए हैं एक प्रभु है जो पालन कर रहा है लोंको में अपनी द्यौ शक्ति से अपने तेज से तेजोमयी इस संसार को बना रहा है, वह पालन कर रहा है। जैसे माता संकीर्णता से अपना पालन करती है वह सतोगुण है। परन्तु वह एक आभा में है, एक

सीमा में है। तो प्रभु की कोई पालन करने की सीमा नहीं है और मानव की पालन करने की एक सीमा रहती है। तो इन वाक्यों को ले करके मानव को बहुत अनुसन्धान करना है। वैज्ञानिक तथ्यों को ले करके वैज्ञानिकजनों ने इसके ऊपर बहुत अनुसन्धान किया और अनुसन्धान वेत्ताओं ने इसके ऊपर विश्लेषण करते हुए, मानवीय आभा को जानते हुए अपनी क्रियाओं में अपने जीवन को ले गए। 02.03.1982

517 भारद्वाज मुनि महाराज

तो महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज जहाँ विज्ञानवेत्ता थे, वहाँ वह आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी रहे। आध्यात्मिक विज्ञान उनका बहुत ऊर्ध्वा में रहा है। क्योंकि वह ध्यानावस्थित हो करके अपनी आत्मा से इस संसार को दिव्य दृष्टि से दृष्टिपात करते रहे हैं, और विज्ञान के यन्त्रों को जान करके वह, इस विज्ञान को आभा में लाते रहे हैं।प्रभु का विज्ञान इतना नितान्त है, इतना महान है जैसे मानव नाना प्रकार के परमाणुओं, अणुओं को जान करके और वह नाना यन्त्रों का निर्माण करता है। परन्तु वह निर्माण करे या न करे, परन्तु प्रभु! का निर्माण अभ्याँ गति रहता है। उसमें वो आभा में रहने वाला एक अभ्यत गति वाला है। जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से अनुसन्धान करता रहा है और उस आभा में गति करता रहा है जिस आभा में गति करने वाला मानव अपने को धन्य स्वीकार करता है।

तो वैज्ञानिक जन इस पृथ्वी के गर्भ में जो तमोगुण से रचना हो रही है, जो प्रभु की दी हुई रचना हो रही है, वह प्रभुतमोगुण में रहने वाला है, जो शासन हो रहा है, वह शासन कर रहा है, वह अपनी सीमा में गति हो रही है। स्वतः हो रही है, तो वह रजोगुणी सिद्ध भी कहलाता है और उनका पालन हो रहा है। उन्हें कोई नष्ट-भ्रष्ट नहीं कर सकता, उसका पालन भी हो रहा है। तो यह तीनों गुण प्रभु के तेज से उत्पन्न हुए हैं जो प्रत्येक प्राणी के हृदय में विद्यमान रहते हैं।

जो अपनी प्रवृत्तियों को सतोमयी बना लेता है उसके लिए यह समाज सत्य हो जाता है। जब मानव अपनी प्रवृत्तियों को रजोगुणी बना लेता है। उसके लिए यह समाज रजोगुणी बन जाता है। जो अपने को तमोगुणी बना लेता है उसके लिए यह संसार तमोगुणी बना लेता है तो उसके लिए संसार तमोगुणी बन जाता है।

जैसे सतोगुणी है, एक मानव सत्य का उच्चारण कर रहा है उस मानव के लिए सत्यमयी कल्पना आ जाती है, उसके समीप वह मानव सत्य की कल्पना क्या कर रहा है? 02.03.1982

518 महर्षि पापड़ी मुनि

इन तीनों गुणों के ऊपर अध्ययन करने वाले बहुत से ऋषि हुए हैं जैसे महर्षि पापड़ी मुनि महाराज एक समय भयंकर वन में जा करके अपने जीवन को सत्यमय बनाने लगे तो इतना सत्य में ले गए अपने को इतना सत्यमय में ले गया कि प्रत्येक हृदयों में सत्य ही सत्य दृष्टिपात आने लगा। इतना गम्भीर उसने अध्ययन अपना किया और अपने को सत्य में पिरो दिया। पिरोने का परिणाम यह हुआ क्या हिंसक प्राणी आता वह भी ऋषि के चरणों को स्पर्श करता। तमोगुणी आता वह भी स्पर्श करने लगा। उसकी सतोमयी धारा विचित्र बन गयी। 02.03.1982

महात्मा दिग्ध

एक समय महर्षि पापड़ी मुनि महाराज जब यह सतमयी बना रहे थे, तो उनके आश्रम के निकट एक महात्मा दिग्ध रहते थे। महात्मा दिग्ध ने अपना यह संकल्प किया कि यह जो महर्षि पापड़ी मुनि हैं यह अपने को क्या जानते हैं? उन्हे एक अभिमान क्योंकि दिग्ध उसे कहते हैं जो अभिमानी होता है। वह दिग्ध अभिमानी थे। तो महर्षि दिग्ध ने अपने शिष्यगणों को एकत्रित करके और ऋषि पर आक्रमण के लिए गमन किया। परन्तु वे सत्य का पालन कर रहे थे, अहिंसा परमोधर्मः का पालन कर रहे थे तो शिष्य दिग्ध को त्याग करके वह पापड़ी के चरणों में ओत-प्रोत हो गए।

महात्मा दिग्ध ने कहा, यह तुमने क्या किया? उन्होंने कहा कि महाराज! इनका जो चिन्तन है, जो तप है, इसकी जो निष्ठा है, हमारे हृदय को उनकी निष्ठा ने विदीर्ण कर दिया है। और विदीर्ण करके हम इनके चरणों में ओत-प्रोत हो गए। महात्मा दिग्ध मौन हो गए और महात्मा दिग्ध ने जब ऋषि के नेत्रों की ज्योति को दृष्टिपात किया, तो वह भी मौन हो गए। तो उन्होंने दिग्धपना त्याग दिया। तो यह संसार सतोमयी कहलाता है। जो सत्य का पालन करता है, सात्विक प्राणी उसके समीप आने प्रारम्भ हो जाते हैं, सतोमयी आने प्रारम्भ हो जाते है। वह सत्यमयी पालन करते हुए आभा में रमण करते रहते हैं। 02.03.1982

प्रकृति का प्रकोप

प्रत्येक मानव अपनी सत्यमयी धारा को बना लेता है। एक मानव दर्शनों का अध्ययन करता है। सत्य को उच्चारण करता है। सत्योमयी होता है तो दार्शनिक जब आने प्रारम्भ हो जाते हैं क्योंकि प्रभु का यह जो जगत है वह एक प्रकार का कल्पवृक्ष कहलाता है। यहाँ मानव को अपनी कल्पना ऊँची बनानी चाहिए। ऊँची कल्पना वाला प्राणी महान और विचित्र बन जाता है, दार्शनिक बन जाता है। दर्शनों की

आभा में रमण करने लगता है। मृत्यु का भय नहीं रहता, क्योंकि मृत्यु अन्धकार में रहती है। तो हमें ज्ञान का प्रकाश होना चाहिए। ज्ञान के प्रकाश में रमण करने वाला विज्ञानवेत्ता बन जाता है। यहाँ वैज्ञानिक बनने के लिए रजोगुणी, तमोगुणी दोनों विचारों की आवश्यकता रहती है। वह रचना कर रहा है। तरंगों को जान रहा है। तरंगों को अपने में लाना चाहता है। निर्माण कर रहा है। प्रभु के राष्ट्र में वैज्ञानिक हो, न हो।परन्तु इस प्रकृति का विधान है इस प्रकृति का नियम है कि जैसे विस्फोट जैसे विश्वानस्पत होता रहता है। परमाणुओं का आपस में दोषारोपण हो करके विजातीय और जातीय दोनों का मिलान हो करके अन्तरिक्ष में उनका आक्रमण भी होता रहता है वह जो आक्रमण है, वह प्रकृति का प्रकोप कहा जाता है। वह साधारण रूप से उसे प्रकृति का मानो दोषारोपण भी प्रकृति अपनी आभा में गति कर रही है। यह प्रकृति की आस्वात गति कहलाती है।

प्रकृति के दोष, यहाँ तीन प्रकार के दैविक प्रकोप से कटिबद्ध रहते हैं, जो दैविक प्रकोपों में मानव समाज नष्ट होता रहता है। यह जातीय और विजातीय पदार्थों का जब दोनों पदार्थों का मिलान होता है तो समुद्रों में अग्नि प्रदीप्त हो जाती है और समुद्रों का जल चन्द्रमा की कान्ति के साथ गति करता है और वही जल अतिवृष्टि में, अनावृष्टि में, परिणत हो करके इस समाज को नष्ट कर देता है। 02.03.1982

519 जल प्लावन

एक समय बड़वानल नाम की अग्नि प्रदीप्त हो गई है और वह बड़वानल नाम की अग्नि जल को उछालती हुई, समाज को नष्ट कर रही है। राष्ट्र के राष्ट्र नष्ट हो जाते हैं। 02.03.1982

520 दैविक प्रकोप

त्रेता के काल में एक समय जल प्लावन आया और वह जल प्लावन ऐसा आया, कि समुद्र के तट पर जितने प्राणी थे, एक-एक योजन की दूरी तक सर्वत्र जल का उत्थान आया, उत्थान होते हुए उन सबको समुद्र ने अपने में अर्पित कर लिया, क्योंकि समुद्र में अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। अग्नि जैसे काष्ठ में अग्नि विद्यमान हो करके वन को समाप्त कर देती है, इसी प्रकार बड़वानल नाम की अग्नि जब जल में प्रदीप्त हो जाती है, तो यह जो जल है, यही समाज को अपने में निगल जाता है। तो यह अग्नि ही निगल जाती है। तो परिणाम क्या? इसको हम दैविक प्रकोप कहते हैं। दैविक आभा कहते हैं यह विजातीय-जातीय पदार्थों का जहाँ समन्वय हुआ और अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। जैसे मानव के मस्तिष्क में मोह और घृणा दोनों का समन्वय हो करके मानव का मस्तिष्क नष्ट हो जाता है, इसी प्रकार यह महानत्ता में गति करने वाला जगत है आभा में रमण कर रहा है। 02.03.1982

521 महाराजा मेघनाद की विज्ञान दृष्टि

त्रेता के काल में रावण का राष्ट्र्र बड़ा विशाल माना गया है उनका जितना भी वंश था, वो भारद्वाज मुनि के चरणों में ओत-प्रोत हो करके ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहा।

महाराजा मेघनाद, जो पातालपुरी के कुछ विभाग पर और त्रिपुरी पर राज्य किया करते थे। परन्तु उनका ज्ञान और विज्ञान विशाल था। उनकी पत्नी सुलोचना महाराजा शेष जो एक राजा थे, वे उनकी कन्या थी। और वो भी उतनी ही वैज्ञानिक थी जितने उसके पतिदेव थे, उन्होंने नाना प्रकार के अस्त्रों का प्रायः निर्माण किया और उन निर्माणवेत्ताओं में और भी नाना ऋषियों के द्वारा शिक्षा अध्ययन की। परन्तु अणु, महाअणु और तिस्रेणु के ऊपर वह अनुसंधान करते थे।

एक बार उन्होंने महाराजा इन्द्र से प्रार्थना की कि आप हमें कुछ शिक्षा दीजिए। महाराजा इन्द्र ने उन्हें एक आग्नेय अस्त्र प्रदान किया। जिस अग्नि-अस्त्र में ये विशेषता थी, कि उसका प्रहार करने के पश्चात नीचे जल हो जाता और ऊर्ध्वा में अग्नि की प्रबलता प्रारम्भ हो जाती, तो सेना नष्ट हो जाती। ऐसा यन्त्र उन्हें महाराजा इन्द्र से प्राप्त हुआ। 03.03.1982

522 महाराजा रावण, औरमहाराजा कार्तिकेय का अनुसन्धान

महाराजा रावण, महाराजा शिव के द्वारा वो नाना प्रकार का अध्ययन करते थे। महाराजा शिव को उन्होंने अपना पूज्यपाद महापिता के तुल्य स्वीकार किया। महाराजा कार्तिकेय और महाराजा रावण दोनों एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करते थे। उन्होंने एक मन्त्र को ले करके एक यन्त्र का निर्माण किया, जैसे एक मानव एक स्थली पर विद्यमान है और वह ये कह रहा है मेरे प्राणों की रक्षा करो, तो दूसरा मानव कह रहा है कि मैं आ रहा हूँ तुम्हारे प्राणों की रक्षा हो जाएगी, साहस के द्वारा वह मानव, अपनी आभा में नियुक्त हो जाता है, महाराजा रावण और कार्तिकेय ने इसी प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया। जिससे हमें संसार में कोई विजय न कर सके। क्योंकि विजेता का जब घोष होने लगता है, तो मानव में अभिमान की मात्रा बलवती हो जाती है।

उन्होंने नाना यन्त्रों का निर्माण किया, जिसमें एक यन्त्र ऐसा था कि एक मानव संग्राम कर रहा है और उस यन्त्र में उसकी आभा आ रही है उसकी आभा से वह विजयी नहीं हो रहा है। इस प्रकार का यत्र उन्होंने निर्माण किया। इस प्रकार का विज्ञान मानवीय मस्तिष्कों में नृत्य

करता रहा है।
तो राजा रावण और कार्तिकेय दोनों कैलाश पर्वत पर अपनी विज्ञानशाला में अनुसंधान करते थे। महाराजा शिव भी उनके पास आते रहते थे और वह उन्हें युक्तियां प्रकट करते रहते थे। कौन-कौन-सी धातुओं और तरंगों को एकत्रित करने से यन्त्रों का निर्माण हो जाता है। तो उनका वह मिलान करते रहते थे और मिलान करते हुए उसमें वे अनुसन्धानित रहते थे। यह यन्त्र उन्होंने जाना, यह यन्त्र कैलाश पर्वत पर महाराजा शिव की विज्ञानशाला में निर्माणित हो गया, क्योंकि कार्तिकेय महान वैज्ञानिक थे! महाराजा गणेश भी महान वैज्ञानिक थे। 03.03.1982

523 सूर्य विद्या के ज्ञाता महाराजा गणेश

गणेश जी महाराज सूर्य की समस्त विद्या को जानते थे। सूर्य की विद्या क्या थी? उसकी नाना किरणें आती रहती थी, किरणें पिपाद बनाती रहती हैं। उन पिपादों को जानना और उनमें रत्त रहना और सूर्य की किरण कितनी दूरी पर, वहाँ से पृथ्वी पर, यहाँ पर उसका प्रभाव होता, माता के गर्भ स्थल में, शिशु निर्माण कर रहा है, निर्माण हो रहा है। परन्तु जब वह निर्माणित हो रहा है, तो जब वह अपनी आभा में गति करने वाला, माता के गर्भ में जब वे किरण प्रवेश करती है, तो माता का उनसे समन्वय हो जाता है। माता अपने को सौभाग्यशाली और अपने में महान स्वीकार करने लगती है। 03.03.1982

524 सुदर्शन चक्र

तो ये सूर्य की किरणों वाला जो विज्ञान है, यही वह विज्ञान है, जो सुदर्शन चक्र का निर्माण करता है। यह सुदर्शन चक्र महाराजा शिव के पास था, जो उन्होंने महाराजा इन्द्र को प्रदान कर दिया था। यही सुदर्शन चक्र मेघनाद को प्राप्त हो गया। जो सुलोचना के भण्डार में विद्यमान रहता था।उस सुदर्शन चक्र में ये विशेषता थी कि संकल्प से जिस शत्रु को समाप्त करना हो, वे संकल्प मात्र से गति करता हुआ उसके कण्ठ के भाग को दूरी कर देता था। जैसे एक मानव दूरी पर विद्यमान है परन्तु वह कह रहा हैं मैं तेरी मृत्यु कर दूंगा, तेरी मृत्यु का कारण मैं ही बनूँगा, परन्तु वही शब्द है, वही परमाणु है, उन परमाणुओं को वायुमण्डल से लेकर वैज्ञानिक यन्त्र निर्माणित करता रहता है। उनको ग्रहण करता हुआ, उससे यन्त्रों का निर्माण करता रहता है। 03.03.1982

525 विज्ञान की उपलब्धि

हमारे यहाँ विज्ञान कितना ऊर्ध्वा में रहा है, विज्ञान कितनी पराकाष्ठा पर रहा है। माता प्रीति कर रही है बालक रूदन कर रहा है, माता उसे स्नेह दे रही है। परन्तु स्नेह वाले यन्त्र भी वैज्ञानिकों ने जान लिए। विज्ञान की उपलब्धि कहाँ से होती है? ये तो तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, कि विज्ञान की उपलब्धि होती है, परमाणुवाद से। विज्ञान की उपलब्धि होती है मानव के शब्दों से। विज्ञान की उपलब्धि होती है, जब मानव के आन्तरिक विचार अन्तरिक्ष में गति करते है। उनके प्रति भी राग न होकर उपेक्षा होनी चाहिए। अन्तरिक्ष वाले जो परमाणु है, उनसे ही विज्ञान की उपलब्धि हुआ करती है और उसी से मानव अपने को धन्य स्वीकार करता है। 03.03.1982

526 महाराजा रावण और कार्तिकेय

तो महाराजा रावण और कार्तिकेय दोनों ने इस प्रकार के यन्त्र को निर्माणित किया था। यन्त्र दूरी है, उसकी तरंगे शरीर पर आ रही है जब तक शरीर पर वे तरंगे आ रही है, तब तक उस मानव को कोई भी विजय नहीं कर सकता, संग्राम में उसे विजय नहीं किया जा सकता। 03.03.1982

527 मृत्यु का अभिप्राय

तो विज्ञान मानवीय धाराओं में राजा, महाराजाओं के यहाँ, ऋषि-मुनियों के मस्तिष्कों में नृत्य करता रहता है। इन वैज्ञानिक यन्त्रों का निर्माण करने वाले, कौन? महाराजा रावण, जो अपनी मृत्यु को नहीं चाहते थे। परन्तु यह कोई नहीं जानता कि यह मृत्यु है क्या? जिसके ऊपर मानव इतना आग्रही, निर्माणित करता रहता है। परन्तु मृत्यु शरीर को त्यागना नहीं कहते। मैंनें तुम्हे पुरातन काल में कहा था विज्ञान में अज्ञानता का आ जाना ही मृत्यु है। जब विज्ञान हुआ और उसमें जब अज्ञान आ जाएगा, तो मृत्यु हो जाएगी। शरीर के त्यागने का नाम ही मृत्यु नहीं कहते।
महाराजा रावण हिमालय में तपस्या करते थे और तपस्या के द्वारा नाना प्रकार की विज्ञानशालाएं, उनके द्वारा थी। उस विज्ञान में वे रत्त रहते थे।
मानव को अपना विकास करना चाहिए वैज्ञानिक बनो और वैज्ञानिक बनना ही मुनिवरों! देखो, मानव का मानवीयतव कहलाता है? 03.03.1982

528 माता सुलोचना

महाराजा मेघनाथ और महारानी सुलोचना के एक पुत्र का जन्म हुआ। वह जो पुत्र था, माता सुलोचना के तपों का परिणाम था। माता तप कर रही है, उसका संस्कार हो रहा है और संस्कार के पश्चात वह ब्रह्मचर्य से अपने गर्भ को तपा रही है, माता तपा रही है। वह माता गायत्री छन्दों में और वेद मन्त्रों के विज्ञान में रमण करती रहती थी। उनके यहाँ एक पुत्र का जन्म हुआ। उस सन्तान का नामोकरण करने के लिए महर्षि भारद्वाज मुनि आएं। महर्षि भारद्वाज ने सुंजुकेतु उसका नामोकरण किया। वह सुंजुकेतु भारद्वाज की विज्ञानशाला में सूर्य की उड़ान उड़ने वाला वैज्ञानिक बना।

मैं जब इतिहास के पृष्ठों को लेता हूँ तो प्रायः इतिहास एक ऐसा बन जाता है कि इतिहास की आभा में कोई वैज्ञानिक गति कर रहा है। विज्ञान मानव का मौलिक गुण कहलाता है और ममतव को धारण करने वाला अपने को ही प्राप्त होता रहता है। 03.03.1982

529 महाराजा कुम्भकरण के पुत्र श्वेत्ताश्वेतर ऋषि

तो भारद्वाज मुनि के यहाँ नाना प्रकार की विज्ञानशालाओं में, नाना शिक्षालयों में अनुसंधान होता रहा है क्योंकि राजा रावण विज्ञान के लिए हिमालयों में जो शिव के यहाँ विश्वविद्यालय था, वे उनके यहाँ वैज्ञानिक बनने पहुँचे। परन्तु महाराजा कुम्भकरण भी उनके द्वारा जा पहुँचे। महाराजा कुम्भकरण के पुत्र का नाम श्वेत्ताश्वेतर था। महाराजा श्वेत्ताश्वेतर नाम के ऋषि भी हुए है। परन्तु ये श्वेत्ताश्वेतर महाराजा कुम्भकरण की संतान थी। महाराजा कुम्भकरण के पदचिन्हों पर अपने जीवन को व्यतीत करके वे ऋषि बन गए। उनका नाम श्वेत्ताश्वेतर ऋषि कहलाए। वे हिमालयों की कन्दराओं में जाकर के महर्षि प्रह्वाण महर्षि शिलक और महर्षि दालभ्य इन तीनों ऋषियों के साथ चतुर्थ ऋषि बने। तो यह संसार परम्परागतों से ही, वैज्ञानिक तथ्यों पर रहा है? और जितना भी ज्ञान है, और विज्ञान है उस ज्ञान और विज्ञान में मानवता की आभा निहित रहती है जिसके ऊपर अनुसंधान करने पर ये प्रायः प्रतीत होता है कि मानव को इस संसार में मृत्युञ्जय बनना चाहिए। 03.03.1982

530 निर्माता माता

इस संसार को बनाने के लिए महान पुरुष हुए है, वे सब माताओं के द्वारा उत्पन्न हुए। माता अपनी लोरिया देती रहती थी। विज्ञान की वार्ताएं। प्रकट करती रहती थी। ज्ञान की आभा में प्रायः रमण कराती रहती थी। तो विचार-विनिमय क्या, जहाँ इस संसार का निर्माण करने में माताएंगे अग्रसर रही हैं, तपस्विनी बन करके और तप करने की आभा में वह रमण करती रहती है। बारह-बारह वर्षों तक तप करने के पश्चात सन्तान की उपलब्धि की इच्छा प्रकट हुई। ऐसी मेरी प्यारी माताएं हुई।

बारह वर्ष महारानी सुलोचना ने तप किया, एक सन्तान को जन्म दिया। बाईस वर्षों तक तप करने के पश्चात कुम्भकरण की देवी सोमकेतु ने एक श्वेत्ताश्वेतर को जन्म दिया जो महा गुरु हुए, वैज्ञानिक भी थे।

इसी प्रकार माताए अपने जीवन में महानता को प्राप्त होती रही है। प्रत्येक मानव को अनुसंधान करना चाहिए, अनुंसधान उनका कर्तव्य होना चाहिए। 03.03.1982

पातालपुरी में रावण के पुत्र अहिरावण राज्य

राजा रावण के साम्राज्य में कोई सूक्ष्मता नहीं थी, कोई घृष्ट्रता नहीं थी। एक समय महाराजा रावण और महाराजा शिव पातालपुरी पहुँचे और पातालपुरी में रावण के पुत्र अहिरावण राज्य कहते थे, प्रजा आनन्द से रहती थी। राजा रावण का भव्य स्वागत हुआ, भव्य पूजन हुआ। उस पूजन में अपनी संस्कृति के अवशेष उन्हें प्रकट कराएं और ये कहा कि महाराज! हमारे यहाँ इस प्रकार के अवशेष हमें प्राप्त होते हैं। पातालपुरी में राजा रावण का पुत्र अहिरावण राज्य करता था। महाराजा शिव उनके पूज्यपिता के तुल्य रहते थे। वे भी प्रजा के विचारों को श्रवण करके आनन्दित होते रहते थे। राजा वह होता है जिसमें प्रजा मग्न रहने वाली हो, हर्ष ध्वनि करती रहती हो और मुनिवरों! देखो, जहाँ प्रजा में हर्ष नहीं होता राजा के प्रति जहाँ स्नेह नहीं होता राजा के प्रति प्रजा निन्दा करने लगती है उस राजा का कोई तप नहीं होता, वह तपों से विहीन हो जाता है। क्योंकि जिस राजा के राष्ट्र में मेरी पुत्रियांअपने शृंगार को नष्ट करके उदर की पूर्ति करती हो, तो वह कोई राष्ट्र नहीं होता, वह कोई समाज नहीं होता।

तो वहाँ पातालपुरी में प्रजा ने एक यज्ञ किया और महाराजा शिव का वहाँ उपदेश हुआ। वहाँ एक विश्वविद्यालय था और उस विश्वविद्यालय में जब याग हुआ, वेदों की ध्वनि हुई तो महाराजा शिव ने उस ध्वनि को लेकर के अपना उपदेश प्रारम्भ किया। उन्होंने कहा हे राजन! आज मेरा बड़ा सौभाग्य है जब मैं तुम्हारी नगरी में आया हूँ। तुम्हारे राष्ट्र में आ पहुँचा हूँ। तुम्हारा राष्ट्र मुझे एक दूसरे में पिरोया हुआ-सा दृष्ट्रिपात आता है। विज्ञान तुम्हारे यहाँ नृत्य कर रहा है और उस वैज्ञानिक आभा में रमण करता हुआ राजा अपने को धन्य स्वीकार करता है। क्योंकि विज्ञान राष्ट्र की सम्पदा है और चरित्र राष्ट्र का प्राण कहलाता है, विज्ञान राजा की सम्पदा है और चरित्र राष्ट्र का प्राण कहलाता है। तो जहाँ प्राण सूत्र में पिरोया हुआ यह जगत रहता है और राजा और प्रजा रहती है, वह राष्ट्र कितना सौभाग्यशाली

होता है, उस राष्ट्र में पुष्पांजलियां होती है। जहाँ पुत्रियां निर्भय हो करके राष्ट्र का भ्रमण करने वाली हो और उनको कोई भी कु-दृष्टि पान करने वाला न हो। ऐसा राष्ट्र, ऐसा समाज स्वर्गमयी कहलाता है। मेरे पुत्रों! देखो, वह कोई राष्ट्र नहीं, वह कोई समाज नहीं, जहाँ मेरी पुत्रिया। एक छोर से दूसरे छोर तक जाने में उसको कु-दृष्ट्रि पान करने वाला समाज हो। वह राजा नहीं, वह समाज नहीं, वह कोई विज्ञान नहीं है, क्योंकि विज्ञान का सदुपयोग होना ही राष्ट्र की सम्पदा कहलाती है और उसके अनुसार बरतने वाला समाज राष्ट्र का प्राण कहलाता है, जिससे यह संसार एक महान बनता है। 03.03.1982

531 महाराजा अहिरावण की दिनचर्या

महाराजा शिव ने अहिरावण को यही कहा तुम्हारा जो सांस्कृतिक विचार है अपने चरित्र को लेकर के, तुम अपने यहाँ चरित्र की आभा में संस्कृति के विचारों को देते हो, यह तुम्हारे मस्तिष्क की उपज बहुत ही प्रिय है। जहाँ मानवता की आभा में मानव रमण करता रहता है। महाराजा शिव ने यही कहा-हे प्रजापालक! हे राजा! मेरा अन्तर्हृदय बहुत प्रसन्न है। यह प्रसन्नता ले करके वह अहिरावण की जो विज्ञानशाला थी जहाँ अहिरावण का भव्य राजभवन था, राज्य स्थली थी, वहाँ अहिरावण की पादुका रहती थी और अहिरावण प्रातः कालीन याग करते और उनकी पत्नी श्वान्धिनि जिसको तरसनावृणित कहते थे। राजा सुबाहु जो समुद्र के तट पर रहते थे, यह उनकी कन्या थी। दोनों पति-पत्नी यज्ञशाला में विचार करते रहते। वैज्ञानिक आते, चर्चाएं होती रहती, यज्ञ होते रहते, सुगन्धि होती रहती। तो राजा की प्रजा उस काल में पवित्र बनती है जब राजा उस क्षेत्र से बन्धा हुआ नहीं होता जहाँ राज्य स्थली होती है। ऐसे राजा हुए है किपादुका, राज्य कर रही है और प्रजा अपने नियम का पालन कर रही है। राजा विज्ञान में लगा हुआ और त्याग कर रहा है तो उसके चरित्र की, उसके क्रिया-कलाप की जो सुगन्धि है वह सर्वत्र राष्ट्र में भ्रमण करती है और प्रजा उसके अनुसार अपने को बरतने लगती है। 03.03.1982

532 महाराजा रावण और महाराजा शिव त्रिपुरी

तो महाराज शिव ने जब ये क्रिया-कलाप पातालपुरी के राजा के यहाँ दृष्ट्रिपात किया तो आनन्दित हो गये। सु-धाराओं में रमण करके वहाँ से उन्होंने गमन किया। गमन करते वे अपने वाहन में विद्यमान हो करके महाराजा रावण और महाराजा शिव त्रिपुरी में पहुँचे, जहाँ महाराज मेघनाद राज्य करते थे। महाराजा मेघनाद सुचरित्र थे, उनकी देवी सुलोचना भी तपस्विनी थी। वे कैसा तप करती थी-प्रातः कालीन मेरे प्रभु के राज्य में, हमारे राष्ट्र में कोई भी देवी कलंघनी नहीं होनी चाहिए।, सुलोचना अपने राष्ट्र में भ्रमण किया करती थी और न्यायालय में स्वयं न्याय करती थी। महाराज मेघनाद भी अपनी आभा में न्याय करता और न्याय करता हुआ, मग्न रहता था। उचित न्याय देकर के प्रसन्नचित हो जाता। प्रजा भी प्रसन्न होती। वास्तव में वहाँ न्यायालय था ही नहीं। परन्तु जो न्याय होता था, वह वार्ताओं में होता था। क्योंकि जब कोई दुष्कर्म करने वाला नहीं, तो कर्तव्यवादी के लिए राष्ट्र का कोई न्याय नहीं होता। वो तो स्वतः ही कर्तव्यवादी है, अपना कार्य कर रहा है क्योंकि राज्य व्यवस्था उनके लिए होती है जो भ्रष्ट होते है, जो पामर होते हैं और उन पामरों के लिए राष्ट्रीय व्यवस्था रहती है। तो राष्ट्रीय व्यवस्था को दृष्ट्रिपात करके महाराजा शिव बहुत ही प्रसन्न हुए।

सुलोचना से वार्त्ता प्रकट हुई। सुलोचना यह कहा करती थी कि महाराज! मेरी मृत्यु भी मेरे स्वामी के साथ ही होनी चाहिए। इस शरीर को त्यागना, मेरे स्वामी के साथ हो। क्योंकि हम दोनों एक सूत्र में पिरोएं हुए है। उनका तप कितना नितान्त रहता था। महाराजा शिव ने कहा-हे मेरी पुत्री! तू वास्तव में अपने नेत्रों की ज्योति और अपनी प्रतिक्रिया को महान् बना, जिससे तेरा जीवन इस राष्ट्र और समाज के लिए महान बन करके महानता को प्राप्त होगा।

महाराजा शिव और महाराजा रावण का भव्य स्वागत हुआ और स्वागत हो करके वहाँ से उन्होंने गमन किया। महाराजा मेघनाद की विज्ञानशाला में ऐसे-ऐसे यन्त्र थे, जो वायु में त्यागने मात्र से ही संसार की मृत्यु हो जाती। संकल्पमयी यन्त्र थे, जो संकल्पशक्ति से ही, मानव अपने में उसकी आभा में रमण करता रहता। जहाँ विज्ञान होता है वहाँ तप होता है और जहाँ तप और विज्ञान होता है वहीं राष्ट्र की व्यवस्था ऊँची रहती है। मानव समाज अपने कार्यो में रत्त रहता है। 03.03.1982

533 महाराजा कुम्भकरण

तो महाराजा रावण और महाराजा शिव लंका में महाराजा कुम्भकरण के द्वार पर पहुँचे। महाराजा कुम्भकरण विद्यालय में शिक्षा दे रहे थे, तेजस्वी बनें हुए थे।! उनका आहार इतना ऊँचा था कि उसकी कोई सीमा नहीं थी। एक समय वे अपनी पत्नी से बोले हे देवी! मैं पीपल के, जाल के, दुग्धकेतु के विभिन्न वृक्षों को पान कर रहा हूँ। क्योंकि इनके पान से मेरी बुद्धि शुद्ध होगी, तो मैं शुद्ध परमाणुओं को एकत्रित करके यन्त्रों का निर्माण कर सकूंगा। ऐसा उन्होंने बारह वर्षो तक किया। इतनी महानता यहाँ राजाओं में रही है। आहार और व्यवहार ही मानव को ऊँचा बनाता है, राष्ट्र को महान बनाता है।

महाराजा शिव अपने कैलाश पर चले गएं, महाराजा रावण अपने राज्य में चले गये, वे बड़े न्यायविद थे। ये चरित्र रहा है इस संसार का।

03.03.1982

534 परमाणुवाद

वह जो मेरा देव है वह सर्वत्र ब्रह्माण्ड में ओत-प्रोत है, वह विज्ञान में रमण करने वाला है, संसार का प्रत्येक वैज्ञानिक उसके विज्ञान को प्राप्त करता रहता है और यह विचारता रहता है कि विज्ञान कहाँ से प्राप्त होता है? तो जो मेरे देव ने रचा है, वह जो रहस्यमय रचना है उस रचना के ऊपर मानव चिन्तन करता रहता है चाहे वह विज्ञानवेत्ता हो, चाहे वह आध्यात्मिकवेत्ता हो। परन्तु दोनों प्रकार के विज्ञान एक मानवीयता में निहित रहते हैं। क्योंकि संसार में जितना भी परमाणुवाद है, उस परमाणुवाद के ऊपर परम्परागतों में ही उड़ान होती रही है और मानव सृष्टि के प्रारम्भ से उड़ान उड़ रहा है। परन्तु वह उड़ान उड़ता हुआ प्रभु को विज्ञानमयी स्वीकार करता हुआ अपने को अपनत्व में सीमित हो जाता है। परन्तु वह वैज्ञानिक ऐसा है जो विज्ञान की तरंगों को जानता हुआ अनुभव कर रहा है, कि मैंने ही सर्वत्र विज्ञान की तरंगों को जाना है। वह अभिमान में परिणत हो जाता है परन्तु दिया हुआ जो प्रभु का ज्ञान है, प्रभु ने जो रचना रची है, उस रचना का उसे प्रतीत नहीं है। यह वैज्ञानिक अभिमानित क्यों हो रहा है? अभिमान तो उसे उस वस्तु में करना है जो उसका स्वतः निर्माण किया हुआ है, क्योंकि जितनी वस्तु हैं इस संसार की, वह पञ्चीकरण में ओत-प्रोत रहती हैं। मेरे प्यारे महानन्द जी ने इससे पूर्व शब्दों में वर्णन कराया कि आधुनिक काल में कर्त्तव्य का पालन नहीं हो रहा है। परन्तु उसके मूल में उन्होंने विज्ञान के दुरूपयोग की चर्चाएं की हैं। जो विज्ञान प्रभु ने रचा है उस रचे हुए विज्ञान को इसे स्थूल रूम में लाने वाला विज्ञान का दुरूपयोग करता रहा है, इसलिए अज्ञानता आती रहती है। अज्ञानता का संसार में यदि कोई मूल है तो वह अपने में और प्रभु के विज्ञान में जो संकीर्णता है उसको व्यापक और स्थूल बनाना, उसका दुरूपयोग करना ही अज्ञान कहलाता है और वही मानव को कर्त्तव्य से दूर ले जाता है, मानव, मानव नहीं रहता।

आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा है। हे मानव! तू आध्यात्मिकवेत्ता या विज्ञानवेत्ता बन, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता या जिससे अपने को जानने वाला प्राणी प्रभु के द्वार पर चला जाता है और अपने की वही प्राणी जानता है जितना भी यह भौतिकवाद हमें दृष्टिपात आ रहा है, इस भौतिकवाद के आंगन में प्रत्येक मानव विज्ञान में गति कर रहा है। परन्तु यह जो विज्ञान है यह प्रत्येक मानव के मस्तिष्क में विद्यमान है। परन्तु प्रत्येक मानव यदि साधनों से उपार्जित हो जाए तो वह सूर्य की यात्रा भी करने लगता है, चन्द्रमा का यात्री भी बन जाता है, मंगल और बुध में रमण करता है और भी नाना प्रकार के लोकों में गति करने लगता है परन्तु यह कैसे? यह आध्यात्मिक मार्ग वाला जितना व्यक्ति है वह इस मार्ग से हो करके ही गति कर रहा है, यदि भौतिकवाद को जानता हुआ मानव पारायणता को प्राप्त नहीं होता तो वह आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता नहीं बन सकता, क्योंकि आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता उसी काल में बनता है जब, वह इस संसार से उपराम हो जाता है और उपराम जब होता है, जबकि इसको जान लेता है। यदि हम मानव शरीर को नहीं जानते, इस मानवीय ब्रह्माण्ड को नहीं जानते तो हम बाह्य-जगत को भी नहीं जान सकते। परन्तु बाह्य-जगत में जितना भी क्रिया-कलाप हो रहा है वह मानव के आन्तरिक जगत में भी हो रहा है। जैसे माता के गर्भस्थल में शिशु का निर्माण होता है, नौ माह तक माता के गर्भ में रहता है, वह नौ माह तक क्यों रहता? क्योंकि संसार की जितनी गणना है वह नौ तक कहलाती है। जितना भी यह संसार है इसमें जितनी भी गणना करने लगो, परन्तु गणना केवल नौ तक कहलाती है तो इसीलिए नौ माह के शरीर का निर्माण होता है और नौ माह की आभा को लेते हुए इसमें जो भी वायुमण्डल का क्रिया-कलाप है वह माता के गर्भ में हो रहा है। समुद्र में जब प्लावन आता है, तो माता के गर्भ में भी जल प्लावन की प्रतिक्रिया हो जाती है, यदि संसार में बड़वानल नाम की अग्नि में प्रवेश करता है जल, तो माता के गर्भस्थल में जो जल: है, समुद्र का भाग है उसमें भी वही अग्नि का प्रभाव हो रहा है। तो यही मानव के जीवन की गतियाँ हैं जो समुद्र में गति हो रही है। 04.03.1982

535 पञ्चमहाभूतों में सर्वत्र ब्रह्माण्ड का कोष

संसार में जितनी गतियाँ हैं वह गति केवल विचाराधीन कहलाती हैं। मानव के जीवन में जब वह बाह्य जगत को आन्तरिक जगत में दृष्टिपात करता है तो वह भौतिकवाद के मार्ग में ऊपर से जाता है। अब यह भौतिकवाद क्या है, आध्यात्मिकवाद क्या है? भौतिकवाद उसे कहते हैं, जितना भी यह संसार का व्यापार है, व्यापार क्या है? एक मानव प्रातःकाल अपने स्थल से पृथक होता है, जब वह पृथक होता है तो अपने कार्यो में रत्त हो जाता है। जो वैज्ञानिक है वह विज्ञान को विचारता है, जो मानव धर्म के मर्म को जानता है, याज्ञिक पुरुष यज्ञ करने में लग जाता है, जो साधकजन होते हैं वह साधना में रत्त हो जाते हैं, प्रभु का चिन्तन करते हैं, जो भी जिसका व्यापार है वह सत्यता में रमण करते हैं। परन्तु वह होता किस प्रतिक्रिया से है, इस मानव के द्वारा। यह मानव शरीर पञ्चीकरण कहलाता है। इस पञ्चीकरण में पञ्चमहाभूत कहलाते हैं, पञ्च-इन्द्रियाँ कहलाती हैं, उन इन्द्रियों से जो भी व्यापार हो रहा है, उस व्यापार का नाम भौतिकवाद कहलाता है। इन इन्द्रियों को समेट करके, जब मानव एकत्रित हो करके और भी गम्भीर क्षेत्र में रमण करते हैं, परन्तु सूक्ष्मता से इन्द्रियों का, बुद्धि और मन का जब समन्वय होता है, दोनों का जब समन्वय होता है, बुद्धि, मेघा के द्वारा प्रवेश करती रहती है। तो यह जो तरंगवाद रमण

कर रहा है, तरगों में यह ओत-प्रोत है, उन तरंगों में जो भी वस्तु गति कर रही है, उन गतियों को जानने लगता है, उन गतियों में रत्त हो जाता है, आगे चल रहा है परन्तु वह मार्गवेत्ता है, वह मार्गों में रमण करना चाहता है। नाना सूर्यो की किरण आ रही हैं, चन्द्रमा की कान्ति आ रही है, वायु गति में गतिशील हो करके प्राण दे रही है। अग्नि अपने तेज में संसार को तेजस्वी बना रही है। अन्तरिक्ष परमाणुवाद का कोष माना गया है। तो इसमें अपने इन्द्रियों के सूक्ष्म विषयों को ले जाता है। क्योंकि वह अंकुरित शरीर में विद्यमान है।

इस ब्रह्माण्ड में जो भी लोक-लोकान्तर निहारिका है, उसकी छाया इस मानव शरीर में होती है और उसके ऊपर वह कल्पना करता रहता है। कल्पना तभी आती है, जब उसका कोई न कोई अंश उसके साथ होता है, यदि अंकुर नहीं होगा, तो कल्पना भी नहीं होगी, यदि अंकुर नहीं होगा, तो वह उस विषय के लिए अनुसंधान भी नहीं कर रहा होगा। परन्तु वह जो पञ्चमहाभूत हैं उन पञ्चमहाभूतों में सर्वत्र ब्रह्माण्ड का कोष कहलाता है, उसमें सर्वत्र विज्ञान और ज्ञान विद्यमान रहता है। चाहे वह सूर्य की उड़ान करने वाला मानव हो, चाहे वह चन्द्रमा की उड़ान करने वाला हो, चाहे वह निहारिकाओं में गति करने वाला हो, चाहे वह सूर्य किरणों के साथ अन्तरिक्ष में गति करने वाला हो। परन्तु यह सर्वत्र पञ्चमहाभूतों में माना गया है, जिन महाभूतों में यह द्यौ में जो ओत-प्रोत हो जाते हैं, द्यौ से प्रकाश आता है। वह प्रकाश सूर्य में पहुंचता है, सूर्य जब प्रकाशित हो करके प्रकाश देता है, उन किरणों को वैज्ञानिक अपने में धारण करता है। 04.03.1982

536 बालकृति ऋषि का सूर्य अनुसन्धान

उद्दालक गोत्र में एक ऋषि हुए हैं, उन ऋषि का नाम बालकृति था। वह एक समय सूर्य की किरणों का अनुसन्धान कर रहे थे। अनुसन्धान करते हुए वह रसना के अग्रभाग में सूर्य की किरणों को लेते थे। अग्रभाग में जब सूर्य की किरणों को लेते थे, उनमें पञ्चमहाभौतिक जो स्वादन हो रहा है, वह किरणों में विद्यमान था, जिह्वा तपायमान होने लगी। इस विद्या में शक्ति प्रदान हो जाती है और वाणी में वह जो अग्रणों में छिद्र कहलाते हैं, उन छिद्रों में एक आभा, एक कृति, तेज आ जाता है। सूर्य की किरणें प्रवेश कर जाती हैं और जब सूर्य की किरण छिद्रों में प्रवेश करती हैं तो वहीं वैज्ञानिक पृथ्वी स्थल पर एक यन्त्र का निर्माण करता है। उन धातु-पिपादों को जानता है और यह यन्त्रों का निर्माण करता हुए, उन किरणों को अपने में ग्रहण करता हुआ तेजस्वी बनता है और उन किरणों में एक श्रवण वाहिनी किरण है, एक दाहन वाहिणी किरण है, नाना प्रकार की किरणों को जानने वाला महान् वैज्ञानिक बन जाता है। 04.03.1982

537 महाराजा हनुमान

महाराजा हनुमान अपनी विज्ञानशाला में विद्यमान है। एक समय महाराजा कुम्भकरण उनके समीप आए और महाराजा कुम्भकरण ने और अग्रणी महाराजा हनुमान से यह कहा कि मुझे विद्या का भान कराओ। महाराजा हनुमान ने कहा कि तुम तो भारद्वाज मुनि के यहाँ रहते हो, वह वैज्ञानिक हैं, वह महान् हैं, उनके द्वारा तुम इस विद्या का अध्ययन करो। तो उन्होंने कहा कि मैंने अध्ययन तो किया है परन्तु यह विद्या इतनी नितान्त है कि वह विद्या जहाँ से कितनी प्राप्त हो जाएं, वहाँसे ग्रहण कर लेना चाहिए। महाराजा हनुमान ने एक यन्त्र का निर्माण किया था। उस यन्त्र पर जब वह विद्यमान हो करके गति करते थे, तो वायु में गति करते रहते। महाराजा हनुमान ने उस विद्या को जाना। जिस सूर्य की किरणों को, किरणों के साथ एक यान सूर्य की आकर्षण शक्ति के द्वारा वह सूर्य मण्डल भी आभा को गति करने लगा। इस विज्ञान को महाराजा कुम्भकरण ने भी जाना। समीपकेतु ने भी उस विज्ञान को जाना।

तो वह विज्ञान है, विज्ञान को जानने वाला, वहीं मानव आध्यात्मिकवेत्ता बनता है जब तक इस ब्रह्माण्ड को नहीं जाना जाएगा या जितना भी वह मानव शरीर है इस मानव शरीर में जो क्रिया-कलाप हो रहे हैं, चाहे वह नेत्रों के द्वारा हो रहे हों, चाहे वह घ्राण के द्वारा हो रहे हैं, चाहे वह श्रोत्र के द्वारा हो रहे हैं, चाहे त्वचा के द्वारा, चाहे रसना के द्वारा परन्तु यह जो क्रिया-क्लाप है, जब तक इसको सुदृष्टि नहीं बनाया जाएगा, तब तक हम भौतिकवाद में सफलता को प्राप्त नहीं हो सकते। यह वैज्ञानिकजनों का क्या? आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता का कथन है। हम वैज्ञानिक भी है और विज्ञान, यदि उस विज्ञान से युवक समाज या राष्ट्र का समाज दूषित होता है तो वह विज्ञान विज्ञान नहीं कहलाता है। 04.03.1982

538 अंगीरस ऋषि का ब्रह्माण्ड दर्शन

सतोयुग के काल में एक अंगीरस नामक ऋषि हुए, जो ब्रह्मा जी के चरणों में अध्ययन करते थे, वह अंगीरस ऋषि महाराज इस ब्रह्माण्ड को जानने लगे, इस मानव शरीर को जानने लगे। मानव शरीर में जो क्रिया-कलाप आता रहा, वासना आई, उसको भी शान्त कर दिया। क्रोध आया, उसे भी शांत कर दिया। अग्नि के गुण आएं, उन्हें भी शांत कर दिया। जलों में जो परमाणु गति कर रहा था, उनमें सान्त्वना, उसमें विद्युत को भी जाना, उसमें भी वह सफलता को प्राप्त हुए। अग्नि जो गति कर रही है, अग्नि के परमाणु जो गतियाँ कर रहे हैं, अरबों-खरबों जिनकी गणना नहीं की जा सकती, उसे भी गणना करते-करते मौन हो गएं, मौन हो जाने के पश्चात सर्वत्र इन्द्रियों के विषयों को कैसे जाना? नेत्रों को जाना, केवल रूप तक नेत्रों का समन्वय रहता है और नेत्रों को जान करके जानते-जानते नेत्रों को रूप में व्यापक कर दिया।

रूप कहाँ तक जाता है? हम एक माता को दृष्टिपात कर रहे हैं। माता को निहारते रहते हैं। निहारते-निहारते उसके सूक्ष्म रूप में प्रवेश करते हैं। यह माता का रूप है यह माता का आकार है। माता का शरीरांग इस प्रकार है परन्तु शरीरांग के ऊपर वह और उसके गर्भ में जाता है, गर्भ में कैसे जाता है? जैसे नेत्र हैं माता के वह नेत्रों का स्रोत कहाँ है?वह हृदय में है। माता का जितना अंग है, उसका सम्बन्ध हृदय से होता है और वह जो हृदय है, उस हृदय का सम्बन्ध कहाँ रहता है? यह जो जितना जगत है, यह जो गतियाँ हैं, यह परमात्मा का हृदय कहलाता है। इस हृदय का समन्वय परमात्मा के हृदय में रहता है। 04.03.1982

539 परमात्मा का हृदय

अब और गम्भीरता में आता हूँ, ऋषि गम्भीरता में गति करता है। क्या परमात्मा का हृदय है? यह परमात्मा क्या वस्तु है? तो विचारता है कि वह गति है। गति के गर्भ में हृदय है और वह गति ही कहलाता है। तो इस गति में जाने के पश्चात वह गति में गति करने लगता है। गति में जब गति होने लगती है तो इस मन की आभा को त्याग देता है। क्योंकि मन के गर्भ में माता था, मन के गर्भ में उसका रूप था, मन के गर्भ में उसका हृदय था। मन के गर्भ को त्याग करके चेतना पर आ गया, प्रकृति का व्यापार समाप्त हो गया। जब ऋषि का प्रकृति का व्यापार समाप्त हो गया, तो वह कहाँ चला गया? वह जो आत्मा हृदय में गति कर रहा था, वह जो आत्मा था, वह हृदय को हृदय बना रही थी, जो अन्तरिक्ष को अन्तरिक्ष बना रही थी, जो परमात्मा के हृदय प्रकृति का सूक्ष्म रूप बन रहा था। वह सर्वत्र अपने में जान करके केवल उस समय आत्मा जब रह जाती है, तो प्रभु! के राष्ट्र में वह व्यापार करने लगते हैं और जब उसका व्यापार होने लगता है तो उसको हमारे यहाँ ऋषिजन मुक्ति का मार्ग कहते हैं।

जितना भी विज्ञान है, इस व्यापार को, इस सर्वत्र विज्ञान को जानता है योगीजन, विज्ञान को बिना जाने आध्यात्मिकवेत्ता नहीं बन सकता। इस भौतिकवाद को त्यागा भी नहीं जाता, क्योंकि भौतिकवाद त्यागने की वस्तु नहीं है, वह भौतिकवाद तो जानने की वस्तु है। उसकी तब तक जानकारी नहीं हो सकती, जब तक गुरु-शिष्य की परम्परा नहीं बनती। क्योंकि गुरु के चरणों में शिष्य पहुंचता है और शिष्य कहता है कि प्रभु! मैं मोक्ष चाहता हूँ, मैं आनन्द चाहता हूँ, मैं सूर्य जैसा प्रकाश चाहता हूँ।

तो गुरु उत्तर देता रहता है, हे पुत्र! संसार में जब तक शरीर के स्तम्भों को स्थूल रूप में, सूक्ष्म रूप में, पञ्चीकरण में नहीं पहुंचोगे और पञ्चीकरण को जड़वस्तु त्याग करके, जड़वस्तु बना करके त्यागना और त्यागने के पश्चात उस पञ्चमहाभूतों का जो गृह है, जिस गृह में आत्मा वास करता है, उस गृहों को त्यागना है और त्यागने से केवल आत्मा के स्वरूप में पहुंचना है, जब तक आत्मा के स्वरूप को तुम नहीं जानागे, आत्मा के स्वरूप को जब तक नहीं जाना जाएगा, तब तक इस भौतिकवाद को नहीं जानोगे, क्योंकि जहाँ हृदय का निर्माण है, दूसरी वस्तु को जाने बिना, इस स्थूल और व्यापकता को नहीं जानोगे।

जैसे एक मानव हृदय में काम-वासना का जन्म होता है, तो काम-वासना के जन्म को जानना होगा। काम-वासना के जन्म को कैसे जानोगे? नेत्रों ने रूप को दृष्टिपात किया, नेत्रों के स्वरूप को दृष्टिपात नहीं किया। इससे और ऊंचे ऊर्ध्वा में जाओ। जैसे अन्न का दूषित होना है। हमने अन्न कोपान किया और अन्न को पान करके उसमें कुछ तरंगें आ गई अन्न में, दैत्य और देवताओं दोनों की प्रवृत्तियाँ रहती हैं, यदि अन्न में, विचार भव्य है, महान् है, माता का विचार पवित्र है, अन्न को देने वाला, अन्न को पवित्र बनाने वाला कौन? माता है। जो उस अन्न को दे रही है, उस अन्न से मानव का, ब्रह्मचारी का, मन का निर्माण हो रहा है और मन का जब निर्माण हो रहा है, मन का व्यापार भी बन रहा है। जब मन का व्यापार बन रहा है, तो मन जैसा गुण अन्न में होगा, उसी प्रकार के मन का निर्माण हो जाएगा। जब मन का, इस प्रकार निर्माण होता है, निर्माण होने के पश्चात मन विशुद्ध बन जाता है, उस समय यदि वासना का जन्म होता है, वासना का जन्म अन्न के दूषित होने से होता है परन्तु उस अन्न को जानना है। हमें उस अन्न को ग्रहण करना है जिससे मन दूषित न हो जाए। परन्तु मन को जानना है, यह जो मन है, यह प्रकृति का सूक्ष्मतम तन्तु माना गया है। इस प्रकृति के आंगन में इस आंगन को त्याग दो, इसे त्यागने के पश्चात वासना त्यागी जाएगी, वासना को जब तक हम जानेंगे नहीं, इन्द्रिय जो दैत्य-देवताओं की जो स्वार्थवादी प्रवृत्ति है और निःस्वार्थ प्रवृत्ति है, जब तक स्वार्थ को निःस्वार्थ में परिवर्तित नहीं करोगे, तब तक इन्द्रियों का शोधन नहीं होता, तब तक यह मन पवित्र नहीं होता और जब तक मन पवित्र नहीं है, तो मेघा में नहीं जा सकता और यदि मेघा को भी पवित्र नहीं बनाया, मेघा ऊंची नहीं होगी तो ऋतम्भरा में नहीं जा सकते और ऋतम्भरा भी जब तक पवित्र नहीं होगी तो हम प्रज्ञावी में जा करके प्रभु से मिलन नहीं कर सकते हैं। 04.03.1982

540 आत्मा का लोक

गुरुदेव के चरणों में कौन शिष्य विद्यमान है? अरे भोले शिष्य! भोले गुरु! जब तक तू इस संसार की प्रतिक्रिया को नहीं जानता, तब तक तू महानता की गति में रमण नहीं करेगा, तू शिष्य को कैसे ऊँचा बना सकता है। परन्तु शिष्य को जब तक जिस गृह में वह रहता है, उसे

आत्मा का, शरीर का ज्ञान नहीं होता, तो वह प्रभु के क्षेत्र में कैसे पहुंचेगा? 04.03.1982

541 पञ्चीकरण वाला जगत

सबसे प्रथम यह अंगीरस ऋषि महाराज ने सतोयुग के काल में बहुत अनुसन्धान किया। एक समय ब्रह्माजी के चरणों में विद्यमान हो करके बोले कि हे पूज्यपाद! तुम और हम, दोनों प्रभु की गोद में विद्यमान हैं। परन्तु इस पञ्चीकरण वाले जगत को हमें जानना चाहिए। जब तक पञ्चीकरण वाले इस आत्मा का जो लोक है, आत्मा का लोक क्या है? पञ्चमहाभूत। यह पञ्चमहाभूतों में यह जड़ प्रकृति व्याप रही है। इन्हीं पञ्चमहाभूतों को प्रकृति कहते हैं और जब चेतना का सन्निधान होता है। तो प्रकृति के पाँच स्वरूप स्वाभाविक जागरूक हो जाते हैं और उस सन्निधानमात्र से ही गतियाँ करने लगते हैं और वह आत्मा का गृह बन जाता है, उस आत्मा के गृह को जानना है।

मृत्यु से प्रत्येक मानव मृत्युञ्जय बनना चाहता है और यह उसकी इच्छा होती रहती है कि मैं मृत्युञ्जय बनूं। परन्तु मृत्युञ्जय कैसे बनोगे? मृत्यंजय उसी काल में बनोगे जबकि तुम्हें मृत्यु का भय नहीं रहेगा और मृत्य क्या? अज्ञान का नाम मृत्यु है और ज्ञान नाम जीवन कहलाया जाता है। ज्ञान ही जीवन है और अज्ञान ही मृत्यु है। 04.03.1982

542 ब्रह्माण्ड की अनन्तता

इस मानव शरीर का, हम भौतिक जगत से इसका समन्वय करते हुए और उसका त्याग करके हम प्रकाश में प्रभु के राष्ट्र में प्रवेश करते हैं कि इस संसार में सबसे प्रथम तो यह निश्चय होना चाहिए कि प्रभु है या नहीं। प्रभु है तो क्या है? उस स्वरूप में वह गति करता रहता है, तो जब वह रमण करता रहता है तो मानवीय अपनी आभा में गति करता रहता है। हे मानव! यदि तू आध्यात्मिकवाद में जाना चाहता है तो भौतिकवाद के मार्ग से होकर के तुझे जाना होगा, और भौतिकवाद क्या है?

पञ्चमहाभूतों में यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड गति कर रहा है। यह नाना निहारिका उस पञ्चमहाभूतों में गति कर रही हैं। एक लोक नहीं, एक आकाश-गंगा नहीं, दो नहीं, ऋषि कहता है, वह असंख्य कहलाती हैं, उन असंख्यता में जाना नहीं है। ऋषिजन ही अनुभव करते-करते मौन हो गए।

एक समय ब्रह्मा के चरणों में गुरु-शिष्य दोनों निहारिका के ऊपर चिन्तन लगे। चिन्तन करते रहे। सूक्ष्म जगत में चले गए। इस सूक्ष्म प्रकृति में जब चले गएं, तो एक निहारिका जानी, दूसरी निहारिका जानी, तीसरी जानी, पचास निहारिका के लोकों की गणना करने लगे।एक निहारिका में लगभग तीन अरब मण्डलों की गणना ऋषि ने कर ली, तो ऋषि अन्त में मौन हो गए। एक निहारिका में एक सौर मण्डल, और एक सौर मण्डल में ऋषियों ने जो निर्णय किया, कि उस एक सौर मण्डल में लगभग तीन खरब, पिचासी अरब नौ सौ बावन सूर्य होते हैं। यहाँ साथ ही एक खरब के लगभग ध्रुव होते हैं और दो खरबों के लगभग बृहस्पति होते हैं तो इसमें निहारिकाओं के बावन मण्डलों का एक सौरमण्डल कहलाता है।

एक सूर्य में, एक सूर्य के अन्तर्गत लगभग तीस लाख पृथ्वियाँ गति करती हैं और एक सहस्र सूर्य हैं जो आरूणि मण्डल की परिक्रमा करते हैं। एक सहस्र आरुणि बृहस्पति की परिक्रमा कर रहे हैं परन्तु वह जो बुहस्पति है वह एक सहस्र बन करके वह ध्रुव की परिक्रमा कर रहे हैं और वह जो ध्रुव मण्डल है, वह ध्रुव स्वाति नक्षत्रों की परिक्रमा कर रहा है। तो बावन लोकों के साथ में एक-एक सहस्र मण्डलों की गणना बन करके एक सौर-मण्डल बनता है। और ऋषि कहता है कि अंगीरस ऋषि ब्रह्माजी के चरणों में विद्यमान हो करके कहता है कि एक आकाश गंगा के, सूर्यो की गणना करने लगे तो ब्रह्मा और अंगीरस ऋषि कहते हैं कि लगभग एक अरब सौर मण्डल की इस प्रकार से हमने गणना की है। अन्त में ऋषि मौन हो गए। क्योंकि यह अनन्त ब्रह्माण्ड है और अनन्त यह सन्निधानमात्र से प्रकृति का मण्डल बन गया है तो अन्त में कहते हैं इसको त्याग देने से, व्यापक हृदय बनाने से, अपने हृदय को परमात्मा के हृदय से समन्वय करते रहो, जब तक हम जान करके और इसको हम अपने हृदय में समेट नहीं लेते और इस हृदय का मिलान हम प्रभु की चेतना से नहीं कर देते, तब तक मानव को मुक्ति प्राप्त नहीं होती। 04.03.1982

543 विज्ञान

तो अनन्त ब्रह्माण्ड हैं: अनन्त मण्डलवाद हैं। तो इसको विज्ञान कहते हैं, इन लोकों को जानना, इन लोकों में जो क्रिया-कलाप हो रहा है उसको दिव्यदृष्टि से, सूक्ष्म दृष्टि से उसको जान करके अपने में समेट लेना है और इस भौतिक विज्ञान को समेट करके, जब यह सिमटा जाता है, यह प्रभु के गर्भ में प्रवेश कर जाता है और अन्तरात्मा भी उसमें आनन्दित हो जाती है।

तो आज मैं अंगीरस ऋषि के आश्रम में चला गया और वह आश्रम कैसा? जहाँ ऊंची-ऊंची ऊर्ध्वा में गति होती रहती है। तो विचारना यह है कि हम अपने जीवन को इतना महान् बनाएं जिससे मानवीयतव हमारे हृदयों में प्रवेश होता हुआ आध्यात्मिकता में रहता है। आज हम इस संसार के ऊपर नाना कल्पना करते रहते हैं नाना कल्पना नहीं करनी चाहिए। परन्तु इस संसार का स्वभाव है, निर्माण होना और

विच्छेद होना। मानव शरीर का निर्माण हुआ है तो विच्छेद अवश्य होना है, उसे मृत्यु नहीं कहते। मृत्यु कहते हैं अज्ञान को, जब हम जानते नहीं है तो नाना प्रकार के विषय-वासनाओं में संलग्न रहते हैं। जिस कार्य के करने के पश्चात मानव को निराशा का क्षेत्र आ जाता है, उसका नाम अज्ञान कहलाता है। यह तुमने जान लिया होगा कि हमें वह कर्म करना है, उस ज्ञान को जानना है, उस विज्ञान को जानना है, जिसे करने के पश्चात हमें अज्ञानता व्याप न जाए। तो हमें बहुत कुछ करना है, बहुत कुछ जानना है और इस मानव शरीर को लेकर के प्रभु से हमें मिलन करना है। 04.03.1982

544 प्रकृतिवाद का क्षेत्र

मानव को इस शरीर को, ब्रह्माण्ड से इसकी कल्पना करो और जानते हुए प्रकृतिवाद को त्यागते चले जाओ और जान करके त्यागों, यह बिना जाने त्यागी नहीं जाती। जान करके त्यागों और त्यागने से अग्रणीय बनते रहो। जैसे अग्नि मार्ग का प्रदर्शक कहलाती है, अग्नि प्रकाश का दूत कहलाता है। वह अग्नि गऊ से आती है और वह भी प्रभु का तेज कहलाता है, प्रभु के तेज से ही अग्नि की आभा उत्पन्न हुई। क्योंकि वह परमाणुओं को ले करके वायु को देती है और वायु उन परमाणुओं को अन्तरिक्ष में ले जाती है। अन्तरिक्ष में उन परमाणुओं की गति हो रही है। यह प्रकृतिवाद का क्षेत्र कहलाता है। परन्तु उन परमाणुओं से लोक-लोकान्तरों का निर्माण होता है, लोकों की आभा में गति होती रहती है। जैसे मानव के एक श्वास से एक रिमणी नाम का एक परमाणु होता है उस रिमणी नाम के परमाणु के साथ एक साथ अरब परमाणु गति करते हैं परन्तु उसके वह जो अरबों वाला परमाणु है उसके साथ में दस खरब परमाणु गति करते हैं तो जैसे यह मानव का पिण्ड है, ऐसे एक शब्द में जो परमाणुओं की गति होती रहती है और वह उस आकार में होती है, जितना उस मानव का शरीर होता है और वह चित्र बन करके अन्तरिक्ष में गति करता है। 04.03.1982

545 आस्तिक महाराजा प्रहलाद

हिरणाकुश के एक पुत्र था जिसका नाम प्रहलाद था और प्रहलाद आस्तिक था, प्रभु भक्त था, प्रभु का जिज्ञासु था। एक नरसिंह समाज की उत्पत्ति हुई।उसमें क्रान्ति हुई, उस क्रान्ति का अग्रणी कौन बना? प्रहलाद के पिता के द्वारा नाना प्रकार की यातनाए दी गई, समाज को पनपने नहीं दिया। नाना रूढ़िवादियों ने और भी नहीं पनपने दिया। परन्तु महाराज प्रहलाद इतना शक्तिशाली, नम्रता से बना। प्रभु ने उसकी सहायता की, उस समाज में, मृत्यु समाज में उसको समाप्त कर दिया और महाराजा प्रहलाद उसके पश्चात राजा बना और राष्ट्र में सुचरित्रता से राष्ट्र का पुनः निर्माण किया। निर्माण होने से वे नाना रूढ़ियों में जो धर्म के नाम पर बनी हुई थी, उन रूढ़िवादियों के जितने भी विशेषज्ञ बुद्धिमान थे सबको महाराजा प्रहलाद ने एकत्रिता किया, उन्होंने अपने ज्ञान में, दर्शनों में प्रवेश किया, वेद की आख्यायिका होने लगी। महाराजा प्रहलाद ने गम्भीरता से ये सोचा, विचारा, चिन्तन किया कि ये समाज कैसे ऊँचा बन सकता है?

महाराजा प्रहलाद के एक गुरु थे उनका नाम था महर्षि श्वेतकेतु। महर्षि श्वेतकेत तपस्या करते थे। वे वनों से राजा के समीप आते और महाराजा प्रहलाद को शिक्षा देते। वेद के पंडित थे, वेद के मर्म को जानते थे। वेद के मर्म को जानने के पश्चात उन्होंने प्रजा में जितने आचार्य नाना रूढ़िवादियों को एकत्रित किया। उनका शास्त्रार्थ हुआ और विचार-विनिमय हुआ और विचार करते-करते अन्तिम छोर पर पहुँच गएं। जो विजय हो गया, उस धर्म को उन्होंने स्थिर किया और धर्म को स्थिर करके समाज को उपदेश दिया गया।

समाज में सबसे प्रथम कर्म याग है।! सबसे महान कर्म संसार में याग, महाराजा प्रहलाद ने, ऋषियों ने माना है। किसलिए माना क्योंकि ये सुगन्धित है, ये चरित्र देता है। ये मानव को ब्रह्मचर्य की शुद्वता देता है। ये मानव के विचारों को महान बनाता है और सष्टि की रचना के आधार पर उसकी रचना हुई है इसलिए बुद्धिमान और महाराजा प्रहलाद अपने राष्ट्र में भ्रमण करते हुए अपनी प्रजा को सदुपदेश देते थे। सदुपदेश से प्रजा उनके अनुसार बरतने लगी जब प्रजा इनके अनुसार बरतने लगी तो राष्ट्र महान बन गया। राष्ट्र महान बन गया। 04.03.1982

546 अज्ञानता से रूढ़ियाँ

इस प्रकार का राजा जब समाज में होता है तो उस राजा के राष्ट्र में क्रान्ति नहीं होती।अशुद्ध क्रान्तियां, रक्तभरी क्रान्तियां। उस काल में होती है, जिस काल में राष्ट्र नायक बुद्धिमान नहीं होते और धर्म के मर्म को नहीं जानते। जो धर्म के मर्म को जानता है। जो धर्म को लेकर चलता है वो राष्ट्रकर्तव्यवादी बन जाता है महाराजा प्रहलाद कर्तव्यवादी बने और अपने कर्तव्य को करते और नरसिंह अवतार समाज बना और उस समाज ने एक नास्तिक और रूढ़िवादी पिता का हनन कराया। परन्तु हनन क्यों हुआ? क्योंकि नाना रूढ़ियों के समाज और राष्ट्र में क्रान्ति होती है। क्योंकि रूढ़ि बनती है, अज्ञानता के कारण अज्ञानता से रूढ़ि बनती है। इन रूढ़ियों से आकुंचनता में प्रवेश करता है ये आकुंचनता ही समाज की मृत्यु है। गृह में आकुंचन ही अधर्म है। आकुंचन ही पाप का मूलक बन के रहता है। 04.03.1982

547 अभिमान में मृत्यु

वैज्ञानिक पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश कर रहे है, अन्तरिक्ष में यन्त्र गति कर रहे है, चन्द्रमा की यात्रा में लगे हुए है मंगल की यात्रा कर रहे है। जब मैं ये विचारता हूँ कि ये धर्म और आत्मा का कितना दर्शन करते है। उसमें, वो शून्य हो जाते है। 04.03.1982

548 सूर्य की किरण

सूर्य की किरण जहाँ नाना प्रकार का परमाणुवाद देते है। जहाँ ये वाहनों में गति देते है। वही सूर्य की किरणें मानव के चरित्र को ले करके प्रातः काल में आती है, उस चरित्र का कितना निर्माण किया है कितना संकल्प किया है। आधुनिक काल का वैज्ञानिक मानव, मानव को नष्ट करने के यन्त्रों में लगा हुआ है, समाज को नष्ट करने में लगा हुआ है। राजा, राजा को विजय करने की कोशिश करता है। ये जो विजय करने की भावना है ये सबसे महान कारण है, रक्तभरी क्रान्ति आने का। रक्तभरी क्रान्ति उस काल में आती है। जब अभिमान होता है, उसमें मृत्यु हैं। उसमें जीवन नहीं है। 04.03.1982

एक मण्डल पर दूसरे मण्डल का प्रभाव, छाया जो एक ही सूत्र पर, एक ही राशि पर आ रहे हैं? उसमें मंगल है, बुध है, शनि है, श्रोति है, तृती है, जमदकेतु है यह नाना प्रकार के मण्डल जो एक पृथ्वी कहलाती है, एक राशि पर, एक ही रेखा पर आ रहे हैं। तो एक रेखा पर तो यह आते ही रहते हैं। कोई आश्चर्य का वाक्य नहीं है। वह रेखा पर जब आते हैं तो आते रहते हैं, परन्तु उससे समाज का भाग नष्ट नहीं होता उनका प्रभाव इस समय बुध पर जा रहा है। बुध मण्डल में नाना प्रकार के आक्रमण हो सकते हैं। परन्तु यह भी अनिवार्य नहीं है। क्योंकि यह जो मानव की आभा है पृथ्वी-मण्डल की छाया बुध पर जा रही है, बुध की छाया मंगल पर जा रही है, मंगल की छाया शनि पर जा रही हैं, शनि की छाया त्रेतकेतु पर जा रही है, त्रेतकेतु की छाया चन्द्र पर जा रही है, चन्द्र की छाया पुष्प पर जा रही है।पुष्प नक्षत्र की छाया ध्रुव पर जा रही है, ध्रुव की छाया रोहिणी केतु नक्षत्र पर जा रही है। रोहिणीकेतु नक्षत्र स्वाति नक्षत्र को प्रभावित कर रहा है। यह चक्र तो प्रभु का एक ब्रह्माण्ड कहलाता है। इस ब्रह्माण्ड में एक दूसरा मण्डल, एक-दूसरे मण्डल को प्रभावित करता रहता है, दैवी प्रकोप भी होते रहते हैं, अनावृष्टि अतिवृष्टि में यह समाज परिवर्तित होता रहता है।

परन्तु आधुनिक काल का वैज्ञानिक अभी इतना नहीं जानता कि बृहस्पति के अन्तर्गत कितने सूर्य गति कर रहे हैं उनकी भी गणना तुम नहीं कर सकते। पृथ्वी जितनी सूर्य की परिक्रमाएं कर रही है उनमें भी तुम्हारा अधूरापन है, तो एक राशि वाले धाराओं को जानने वाले, प्राण के गति करने वाले वैज्ञानिक कहलाते हैं। 07.03.1982

549 भारद्वाज मुनि महाराज

भारद्वाज मुनि महाराज उस काल में महान वैज्ञानिक थे, वे अपने वाहन में विद्यमान हो करके, वे कजली वनों में पहुंचे और भारद्वाज मुनि के आश्रम से नाना प्रकार की चित्रावलियों को लाया गया, भगवान राम ने उन चित्रावलियों को, अयोध्या में उस यज्ञशाला में स्थित कर दिया, जिसमें शब्दों के साथ में, चित्र भी गति करते थे और उसमें शब्द के साथ में जो चित्र जाते थे, वे उस चित्रावली में दृष्टिपात आते थे। 23.03.1982

550 राम याग के चित्र द्यौ लिक में गमन

तो भारद्वाज मुनि महाराज ने जब नाना चित्रावलियों को स्थित कर दिया, तो राम से कहा राम! तुम याग का प्रारम्भ करो। बेटा! जैसे याग का प्रारम्भ हुआ और यज्ञमान, होता गण जैसे स्वाहा कहते है तो उनके चित्र और उनका रथ बन करके, जितने में वह यज्ञशाला थी, उसका रथ बन करके शब्दों के साथ में वह रथ द्यौ लोक को जाता हुआ दृष्टिपात आने लगा। नाना प्रकार की चित्रावलियां, नाना प्रकार के यन्त्र लगे हुए थे, उन यन्त्रों में शब्द के साथ में आकार जा रहा है, सूक्ष्म बन करके द्यौ लोक में रमण कर रहा है। भारद्वाज मुनि ने कहा-राम! यहतुम्हारें शब्द और तुम्हारी यज्ञशाला का रथ बन करके द्यौ लोक को जा रहा है।

राम का याग चल रहा है, राम अपनी यज्ञशाला में याग कर रहे है और चित्रों का दर्शन कर रहे है, चित्रावलियों में दर्शन हो रहा है, दिग्दर्शन हो रहा है, महानता को मानव प्राप्त हो रहा है। यज्ञमान का रथ बन करके, द्यौ लोक में गति कर रहा है और द्यौ लोकों को एक-एक स्वाहा जो शब्द है, वह मेरे प्यारे अशुद्ध परमाणुओं को निगलता चला जाता है और द्यौ लोकों को प्राप्त होता।

राम बड़े प्रसन्न हुए और वैशम्पायन ऋषि महाराज, महान प्रसन्न हो रहे थे। क्योंकि उनका वेद का मन्त्र सिद्ध हो रहा था। वेद का मन्त्र जो कहता है, वह यथार्थ कहता है। मैं वेदज्ञ ध्वनि को अपने में श्रवण कर रहा हूँ। भारद्वाज मुनि ने कहा-हे राम! यह तो शब्दों का ही चित्र है, परन्तु मेरी यज्ञशाला में, मेरी विज्ञानशाला में ऐसे-ऐसे यन्त्र है कि एक मानव के रक्त के बिन्दु से जिस मानव का रक्त का बिन्दु हो, उस मानव का एक ही रक्त के बिन्दु से उस मानव का साक्षात्कार, उसका चित्र आ जाता है। चाहे वह प्राणी संसार में है या नहीं है। 23.03.1982

551 रक्त बिन्दु से यन्त्र में पूर्वजों के चित्र

भारद्वाज मुनि ने कहा-हे राम! एक समय शाण्डिल्य गोत्रीय ऋषि सोमकेतु मेरे द्वार पर आएं, तो सोमकेतु ऋषि ने कहा कि मेरे जो छठे

महापिता थे, मैं उनके दर्शन करना चाहता हूँ वैज्ञानिक यन्त्रों के द्वारा, उनकी स्थली पर, उनका एक वस्त्र प्राप्त हो गया, उस एक वस्त्र पर, एक रक्त का बिन्दु लगा हुआ था। जिस महापिता को समाप्त हुए दो सौ वर्ष हो गएं थे। उन्होंने भारद्वाज मुनि से कहा तो वह जो वस्त्र पर एक रक्त का बिन्दु लगा हुआ था, उस एक रक्त के बिन्दु से जो चौथे महापिता थे, उनका साक्षात्कार उन चित्रावलियों में दर्शन होने लगा। 23.03.1982

552 मानव के मस्तिष्क

तो विज्ञान मानव के मस्तिष्क में, विज्ञान ऋषि-मुनियों के मस्तिष्क में, परम्परागतों से नृत्त करता रहा है। एक-एक रक्त के बिन्दु से, मानव का चित्र आ जाता है, इससे यह सिद्ध होता है कि माता के गर्भस्थल में एक बिन्दु से ही मानव के शरीर का निर्माण हो जाता है। वहीं बिन्दु है जो शून्यता में रह करके निर्माण हो करके, व्यापक बन जाता है। वहीं आभा में रमण करने लगता है। 23.03.1982

553 यंत्रों में आकाश गंगा का दर्शन

एक समय भारद्वाज मुनि महाराज, रोहिणीकेतु, ब्रह्मचारिणी शबरी, ब्रह्मचारी कवन्धी, ब्रह्मचारी गौरपुत्र केतु महाराज सर्व विद्यमान हो करके, एक समय यन्त्रों में, यन्त्रों की उड़ान उड़ने लगे, कि प्रभु के राष्ट्र में कितने, एक गन्धर्व, कितने मण्डलों का बनता है। तो भारद्वाज ने अपने यन्त्रों में एक आकाशगंगा का गणित किया, उस आकाश गंगा के सौर मण्डलों को गणित किया और सौर मण्डलों को बावन सौर मण्डलों का एक गन्धर्व मण्डल कहलाता है। एक सौर मण्डल क्या है, एक सौर मण्डल में तीन अरब तो सूर्य होते हैं और एक सौर मण्डल में लगभग बावन अरब बृहस्पति होते है और बावन करोड़ के लगभग ध्रुव होते है और चालीस अरब के लगभग कृणि असुतां देवत लोक कहलाते है। ऐसे-ऐसे बावन सौर मण्डलों का एक वह गन्धर्व मण्डल बना करता है। 24.03.1982

नारान्तक

राजा रावण के पुत्र, नारान्तक थे, वे उनके द्वार पर पहुंचे, उन्होंने कहा प्रभु! यह मेरे राष्ट्र में, यह चन्द्र-अनुसन्धानशाला है यहाँ चन्द्रमा में जो यातायात बना हुआ है, उसके ऊपर नारान्तक अनुसन्धान करते है नाना वैज्ञानिक, उनकी विज्ञानशाला में थे। राजा रावण जब यह दृष्टिपात कराने लगे, तो ऋषि ने नारात्तक से कहा-हे नारान्तक। तुम्हारी चन्द्रमा में जाने की कितनी गति है? उन्होंने कहा हे प्रभु! मैं अपने यन्त्र में जब विद्यमान होता हूँ तो जब मैं यहाँ से उड़ान उड़ता हूँ पृथ्वी से, तो मुझे एक रात्रि और एक दिवस पर्याप्त होते है और मैं चन्द्रमा में चला जाता हूँ। उन्होंने-कहा धन्य है। राजा रावण के यहाँ एक वाहन था, जिस वाहन का नाम ऋणी लोकान्त्री यन्त्र कहते थे, उस यन्त्र में विद्यमान हो करके नारान्तक इस पृथ्वी से उड़ान उड़ करके वह चन्द्रमा में, चन्द्रमा से उड़ान उड़ते मंगल में, मंगल से उड़ान उड़ते, वह शुक्र में, शुक्र से उड़ान उड़ते वह बुध में, और बुध से उड़ान उड़ते वह रेंगनी कृति लोकों में रेंगनीकृति लोकों से उड़ान उड़ते स्वाति लोकों में, स्वाति लोकों से उड़ान उड़ते वह शनि मण्डल में, शनि मण्डल से उड़ान उड़ते तो कृति लोकों में, वह मूल मंगल वह यन्त्र बहत्तर लोकों का भ्रमण करके पुनः इस पृथ्वी मण्डल पर आ जाता था। इस प्रकार का विज्ञान राजा के राष्ट्र में निहित था, जिस विज्ञान की तुलना नहीं की जा सकती। 11.04.1982

554 लालिमा का प्रभाव

यह जो लालिमा आ रही है यहाँ कोई संग्राम होने वाला है। विज्ञान की कुछ तरंगें समाप्त होने वाली है। एक वाक् ओर यदि यह नहीं होगा तो कुछ नक्षत्रों की धाराएँ एक सूत्र में आ जाती है। जैसे पृथ्वी के अन्तर्गत एक सूर्य की आभा में, क्योंकि पृथ्वियाँ गति करती रहती हैं। कुछ यह शनि मण्डल भी और सूर्य और बृहस्पति एक धारा में जब आ जाते हैं तो यह जो अंतरिक्ष है जहाँ से सूर्य तपती लता है, उस द्यौ मण्डल में परमाणुओं का संघर्ष हो जाता है और उसमें अग्नि प्रचण्ड हो जाती है। उस अग्नि का परिणाम यह होता है कि या तो राष्ट्रीय संग्राम होते हैं और या अकाल की प्रवृत्तियाँ बन जाती है। कुछ पृथ्वियाँ इस प्रकार की होती है जिसमें वायु अपने वेग में, अग्नि के परमाणु लेकर के गति करती है और अनावृष्टि होकर के खाद्य पदार्थो को विनाशता के मार्ग पर ले जाती है। 11.06.1982

555 काके ऋषि

तो यह काके ऋषि ने सोमकेतु को वर्णन किया। परन्तु जब उन्होंने तुरूण से कहा हे बालक! हे ब्रह्मचारीसोमकेतु आएँ हैं इनको कुछ पान कराओ तुरूण ब्रह्मचारी के हृदय में अग्नि प्रदीप्त हो रही थी। सोमकेतु विवेकी थे उन्हें कोई स्मरण नहीं रहा। परन्तु उन्होंने जल और तुष्टाम् में उन्हें एक विषधर का पान कराया। उन्हें जब विष का पान करा दिया तो वहाँ से सोमकेतु ने जैसे ही गमन किया, तो वह अपने आश्रम में पहुँचे, परन्तु आश्रम में जाते ही, उनकी त्वचा विकृत हो गई। अस्थियों में विकृत्तियाँ आ गई, प्राण-सखा जाने के लिए तत्पर हो गया। सोमकेतु उस समय आयुर्वेद का, आयु का अध्ययन करने लगे। जहाँ वे लोकों का अध्ययन करते थे वहाँ वे आयुर्वर्धक याग का अध्ययन करने लगे। 11.06.1982

एक समय चंग्रेत नाम के राजा थे, चंग्रेत नाम के राजा थे वह जब एक समय चंग्रेत नाम के राजा थे, हरिश्चन्द के पिता जी, चंग्रेत नाम के राजा का पुत्र था हरिश्चन्द, चंग्रेत नाम के राजा का एक समय विभाण्डक मुनि के द्वार पर आए तो महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज से कहा कि महाराज! मैं ऊर्ध्वा में जाना चाहता हूँ, और मैं अग्निष्टोम मैं वाजपेयी करना चाहता हूँ वाचन्ने में शुन्धामि, श्रोत्रं मे शुन्धामि, और घ्राण ब्रहे घ्राणम्मे शुन्धामि, मैं सबको अपने में शुन्धामि करना चाहता हूँ। परन्तु महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज आश्रम में थे, हमारे समीप आ पंहुचे, परन्तु जब ऋषि-मुनि उपस्थित हो गएं तो उस समय राजा से कहा कि महाराज! आप जो इस याग को करना चाहते हो, क्यों करना चाहते हो? राजा ने कहा कि मेरी इच्छा यह है क्या मैं इन्द्र की उपाधि को प्राप्त करना चाहता हूँ, हमारे यहाँ इन्द्र वह मानव बनता था, जो वृष्टियाग, पुत्रेष्टियाग, और जो वाजपेयी याग, अग्निष्टोम याग का जिसे अधिकार प्राप्त हो जाएं, और वह याग करने लगे, और याग करके वह इन्द्र की उपाधि को प्राप्त होता है, वह अनुष्ठान कहलाता हैं, वह अनुष्ठान में विद्यमान होता हैं, जो अपने को समाप्त कर देता हैं। इसी प्रकार जब उन्होंने यह कहा, तो राजा शान्त हो गया, और राजा ने यह कहा कि महाराज! मैं तो इस याग को करने ही वाला था। उन्होंने कहा-नही, जब तक तुम्हें अधिकार प्राप्त नही होगा, जब तक तुम्हारा जीवन ऊर्ध्वा के मार्ग को नही जा सकता। ऊर्ध्वा में रमण करना हैं ऊर्ध्वा वाला ही इसका अधिकारी होता है। 09.07.1982

556 गुरुदेव वृत्त

मुझे स्मरण हैं जब मैं किसी काल में अपने पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा पंहुचा तो गुरुओं ने मुझे वर्णन कराया तुम अग्नि, तुम वाजपेयी याग करो तो उस समय मैंने वाजपेयी याग किया और वाजपेयी याग करके इन्द्रियों पर सयंम करके और नाना साकल्य एकत्रित करके कामधेनु गऊं प्राप्त हुई और कामधेनु गऊं के दुग्ध के द्वारा हम पय याग करते थे, उसको पय याग भी कहते हैं उसको हम वाजपेयी याग भी कहते हैं, उस याग के कर्म करने से तो हमारे मस्तिष्कों की क्योंकि उसमें सूक्ष्म आहार अपनाकर मौन रहना और शान्ति पूर्वक प्रभु की महिमा का चिन्तन करना, जब वह याग करते थे तो मस्तिष्क की ग्रन्थियाँ स्पष्टीकरण को प्राप्त हो गई। क्योंकि ग्रन्थियों का स्पष्टीकरण होना, स्पष्टीकरण का आ जाना ही मूर्ध्वा मुख होना है, तो इसे मूर्ध्वा कहते हैं, मूर्ध्वा का अर्थ है क्या?ग्रन्थियों का मुख स्पष्टीकरणता को प्राप्त हो, करके और ब्रह्माण्ड से, उसका समन्वय हो जा जाता है। और आकुञ्चन प्रवृत्तियां समाप्त हो जाती हैं, यह जो जितने भी प्रकार के अनुष्ठान हैं, अथवा कर्म है, इनसे होता क्या है? एक मानव का हृदय प्रसन्न होता है और मानव का जितना हृदय प्रसन्न होता हैं आकुञ्चन शक्ति समाप्त हो जाती हैं संकुचित विचारधारा नही रहती तो जब संकुचित धारा नही रहती और संकीर्णता नही रहती, ब्रह्म और चरी के रूप को हम मूर्ध्वा बना लेते हैं, तो उस समय शरीर में कोई रूग्ण भी नही रहता। उस समय सर्वत्र आयुर्वेद भी सिमट करकेउस मूर्ध्वा मुख के द्वार पर आ जाता है। 09.07.1982

557 भारद्वाज मुनि

भारद्वाज मुनि ने उनका स्वागत किया नाना प्रकार के पदार्थो का पान कराया और उनको आसन् दे करके नतमस्तक हो करके कहा, कहो, भगवन्! आज आपने मेरे आसन को कैसे पवित्र किया? मैं यह जानना चाहता हूँ कि तुमने मेरे आश्रम के लिए, मुझे आपने दर्शन दिए हैं। मैं बड़ा सौभाग्यशाली हूँ परन्तु मैं जानना चाहता हूँ। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज को ऋषि-मुनियो ने कहा-रेवक मुनि, प्रवाहण और शिलक और दालभ्य ने एक स्वर में कहा कि-हे ऋषिवर! हम यह जानना चाहते हैं कि हम कुछ वेद-मन्त्रों का अध्ययन करेंगे और उसके सम्बन्ध में कुछ जानना चाहेंगे। भारद्वाज मुनि ने कहा-प्रभु! आप उच्चारण करो और मेरी शक्ति होगी तो मैं उसमें दिग्दर्शन कराऊंगा। उन्होंने कहा-

सम्भव प्रमाणं सुते विजनं धनन्जय स्तुता विश्वम्ब्रह्मे कृतो देवः अस्माकं ब्रह्मे वर्चः दिव्यं गत प्रव्हेवस्तु सम्भवनितः अग्नं ब्रह्मणा चित्रं रथ प्रह्वा वस्तु धनं ब्रीहि कृत लोकाः।

ऋषि ने जब यह वर्णन कराया, वेद-मन्त्रों को ध्वनि से उच्चारण किया तो भारद्वाज मुनि ने कहा कि महाराज! मैं अवश्य इसका आपको कुछ परिचय दूँगा। उन्होंने कहा-तो परिचय दो। वेदमन्त्र यहकहते थे, हमने वेदों में अध्ययन किया है कि एक बिन्दु से मानव का निर्माण होता है, एक वाक्य यह कि एक आश्रम में एक मानव रहता है उस मानव के चित्र वायुमण्डल में गति करते रहते हैं। चित्र गति करते रहते हैं वायुमण्डल में। तो जब उन्होंने यह वर्णन कराया तो ऋषियों ने कहा-महाराज! बहुत धन्य! तो, तुम हमें अपनी विज्ञानशाला का दृष्टिपात कराईए। तो महर्षि भारद्वाज मुनि उस समय, इस विज्ञान में परमाणु शक्ति में, अणुशक्ति में उनका बहुत मानो अधिपथ्य था। 19.07.1982

558 भारद्वाज के चित्रावली यन्त्रों में विज्ञान-दर्शन

उन्होंने ऋषि-मुनियो को ले करके गमन किया और अपनी विज्ञानशाला में सबसे प्रथम उन यन्त्रों में ले गएं, जिन यन्त्रों का ऋषि ने निर्माण किया था और यह कहा भारद्वाज ने कि-महाराज! इस यन्त्र में यह विशेषता है, कि एक मानव एक स्थली पर विद्यमान है? और उस मानव

के गमन करने के पश्चात मेरा यह यन्त्र उस मानव का चित्र ले लेता है। उन्होंने कहा-धन्य है। ऋषिवर! एक वेदमन्त्र का, एक वेदमन्त्र की आख्यिका का समाधान हुआ। और उन्होंने यह कहा-यही मन्त्र कहता है, उसके चित्र गति करते रहते हैं, तो यह चित्रावलियों में तुमने दृष्टिपात कराया। ऋषियों ने एक स्वर में हर्ष-ध्वनि की कि-धन्य है, ऋषिवर। 19.07.1982

559 रक्त बिन्दु में मानव चित्रों का दर्शन

द्वितीय विज्ञानशाला में ले गएं। उन वैज्ञानिक यन्त्रों में यह विशेषता थी कि वह जो परमात्मा विश्वकर्मा है वह एक बिन्दु से ही मानव के शरीर का निर्माण करता है। तो उसमें कैसे करता है? भारद्वाज मुनि ने कहा आओ, महाराज! ये मेरे यन्त्र विद्यमान हैं, इन यन्त्रों में यह विशेषता है कि एक मानव का रक्त का बिन्दु हैं, और रक्त के बिन्दु को इस यन्त्र में जब प्रवेश किया जाता है तो उसक रक्त के बिन्दु से यह जो मेरी चित्रावली है, यन्त्रशाला है, जिस मानव का वह रक्त का बिन्दु है, उस मानव का साक्षात्कार चित्र मेरे यन्त्र में आ जाता है। एक बिन्दु से ही, मानव का चित्र यन्त्रों में आना, यह महर्षि भारद्वाज मुनि ने वर्णन कराया और भारद्वाज मुनि ने कहा कि-महाराज! तुमने यह दृष्टिपात किया होगा, जो मैं दृष्टिपात करा रहा हूँ।

एक समय दद्दड़ गोत्रीय सोमकेतु ऋषि महाराज के हृदय में यह आकांक्षा उत्पन्न हुई कि मैं अपने चौथे महापिता का दर्शन करना चाहता हूँ तो एक समय वह अपने चौथे महापिता उससे भी पूर्व हुए उनके वस्त्रो को अपनी एक शाला में दृष्टिपात कर रहे थे। तो कहीं उनके चौथे महापिता थे, उनका कहीं एक वस्त्र उन्हें प्राप्त हो गया और उस वस्त्र पर एक रक्त का बिन्दु लगा हुआ था, उस रक्त के बिन्दु वाले उस वस्त्र को ले करके, सोमकेतु ऋषि महाराज एक समय मेरे आश्रम में आ पहुँचे। भारद्वाज ने कहा कि-महाराज! जब ये आश्रम में आ गएं, तो जब यन्त्रों में मैंने दृष्टिपात कराया इसी यन्त्र से उस रक्त के बिन्दु से उसके चौथे महापिता, मृतक हुए भी लगभग अस्सी वर्ष हो गए थे, उस मानव का, उस वस्त्र पर रक्त का बिन्दु औरसोमकेतु ऋषि महाराज अपने चौथे महापिता के यन्त्र में दिग्दर्शन कर रहे थे। एक रक्त के बिन्दु मैं इतने परमाणु होते है, इतने अणु होते है जिससे माता के गर्भस्थल में मानव का निर्माण होता है।

मेरा देव कितना विचित्र है, कितना वैज्ञानिक है, जिसने सृष्टि के प्रारम्भ में इस परमाणु विद्या को निहित कर दिया, जिससे निर्माण होता है। माता के शरीर में जब रक्त का बिन्दु जाता है, तो बहत्तर करोड़, बहत्तर लाख, दस हजार दौ सौ दौ नाड़ियों का निर्माण होता हो जाता है। तो यह कौन कर रहा है? यह माता नहीं कर रही है, पितर नहीं कर रहा है, वह जो मेरा प्यारा विश्वकर्मा है, जो निर्माण करने वाला है जो इस संसार का निर्माणवेत्ता है, वह निर्माण कर रहा है। 19.07.1982

560 चित्रावली विभ्राननी यन्त्र

भारद्वाज मुनि ने कहा कि-महाराज! यह मेरे यहाँ यन्त्रशाला है, इसको चित्रावली विभ्राननी यन्त्र कहते हैं। मानव का रक्त के बिन्दु से चित्र आता है, इसमें नाना चित्रावलियाँ आती रहती हैं। उन्होंने और भी नाना चित्रावलियों का दिग्दर्शन कराया। जो शब्द के साथ में चित्र अन्तरिक्ष में जाता है, उसका चित्र अन्तरिक्ष में आ रहा था। जहाँ लय हो रहा था, द्यौ-लोक में, अन्तरिक्ष और द्यौ-लोक में, उनका चित्र उसी प्रकार दृष्टिपात आ रहा था। 19.07.1982

वरुणास्त्र-विज्ञान

ऋषि ने भ्रमण कराया औरवह वरुण-अस्त्रों में ले गएं, जहाँ वरुणास्त्रों का निर्माण, ब्रह्मचारिणी शबरी और राजा रावण के विधाता कुम्भकरण भी उसी विज्ञानशाला में अपना कार्य करते रहते थे। तो उस विज्ञानशाला में जहाँ ब्रह्मचारी सुकेता भी अध्ययन करते रहते थे, उन्होंने वहा, उस यन्त्रशाला में ले गएं। उन्होंने कहा-महाराज! एक यन्त्र, मैंने निर्माणित किया हैं, यन्त्र में मैंने, एक में दोनों शक्ति का प्रतिपादन कर दिया है। यदि किसी भी काल में इसको वायुमण्डल में त्याग दिया जाएगा, तो पच्चीस राष्ट्रों का यह एक यन्त्र विनाश कर देगा।

भारद्वाज मुनि ने अणुशक्ति का उन्हें दिग्दर्शन कराया। उन्होंने कहा कि-महाराज! यह वरुणास्त्र है, इस वरुणास्त्र में यह है कि माना हैं यदि इसको वायुमण्डल में त्याग दिया जाएं और राष्ट्रों में अग्नि प्रदीप्त हो गई है यन्त्रों से, तो यह वरुणास्त्र उस अग्नि को शान्त कर सकता है। यह शान्त करने वाला है। जैसा मैंने यन्त्र को वायुमण्डल में त्याग दिया और पच्चीसराष्ट्रों का विनाश होने जा रहा है, परन्तु उसके साथ ही यदि मैं वरुणास्त्र को त्यागूंगा तो यह उस अग्नि को अपने में धारण कर लेगा और धारण करके उस अग्नि को नहीं लगने देगा। वह उनकी रक्षा कर सकता है। 19.07.1982

561 भारद्वाज के यन्त्र विभिन्न लोकों में

उन्होंने आगे दिग्दर्शन कराया कि-महाराज! मेरे यहाँ यह यन्त्रशाला है। इन यन्त्रों में यह है कि एक-एक यन्त्र वायुमण्डल में गति कर रहा है, उनकी छाया मेरे यन्त्रों में आ रही है। एक यन्त्र है मेरा, जो सूर्य की परिक्रमा कर रहा है, एक यन्त्र है जो बृहस्पति की परिक्रमा कर रहा है, एक यन्त्र है जो मंगल की परिक्रमा करके बुधमण्डल में उसकी स्थिति हो जाती है। मानो देखो, वह यन्त्र और उनकी छाया मेरी इस

विज्ञानशाला में आ रही है। यन्त्र आ रहे हैं, उनके क्रियाकलाप आ रहे हैं। किस प्रकार का प्राणी कहाँ-कहाँ वास करता है, कौन-कौन से लोक में किस प्रकार का क्रियाकलाप है, उसके चित्र, मेरे यहाँ आते रहते हैं।

भारद्वाज मुनि महाराज ने जब यह दिग्दर्शन कराया तो, सब ऋषि आश्चर्य चकित हो गएं और यह कहा-हे भारद्वाज! तुम्हारा बड़ा सौभग्य, हम आज बड़े प्रसन्न हैं, क्योंकि तुमने हमें वह दिग्दर्शन कराया, जिसको हम वेदों में, दर्शनों में अध्ययन करते रहते हैं और विचारते रहते थे उन्होंने ओर भी उन्हें दिग्दर्शन कराया, जिसको हम वेदों मे, दर्शनों मे अध्ययन करते रहते हैं और विचारते रहत थे।

तो नाना प्रकार के यन्त्रों को दृष्टिपात कराने लगे। नाना यन्त्रों को दृष्टिपात कराते हुए उन्होंने कहा-मेरे यहाँ एक यान ऐसा है, जिस यान मे मानव विराजमान हो करके पृथ्वी मण्डल से उड़ान उड़ता है, पृथ्वी से उड़ता है वह चन्द्रमा में चला जाता है, चन्द्रमा से उड़ान उड़ी मंगल मे चला गया, मंगल से उड़ान उड़ी बृहस्पति में चला गया, बृहस्पति से उड़ान उड़ी, महेशकेतिमण्डलों मे चला गया। वहाँ से स्वाति-मण्डल में पहुंच गया, स्वाति-मण्डल से उड़ान उड़ी तो रोहिणीमण्डलों में चला गया, रोहिणीमण्डलों से उड़ान उड़ी शनि की परिक्रमा करके बहत्तर लोको का भ्रमण करके, वह यान पुनः पृथ्वी मण्डल पर आ गया।

तो ऋषि-मुनियो के मस्तिष्कों में परम्परागतों से, विज्ञान नृत्य करता रहा है, आभा में परिणित होता रहा है। 19.07.1982

562 भारद्वाज वैज्ञानिक कैसे बने

जब ऋषि-मुनियो ने बेटा! उस विज्ञानशाला को दृष्टिपात किया और वह दृष्टिपात करके, मौन हो गएं। अणु परमाणु, महापरमाणु तिस्रेणु इत्यादियों का उन्होंने सर्वत्र दिग्दर्शन किया। दर्शन करने के पश्चात, वह शान्त हो गएं। तो महर्षि प्रवाहण और महर्षि शिलक दोनों सभा में उपस्थित हुए और दोनों ने एक स्वर में आ करके भारद्वाज मुनि से एक प्रश्न किया और भारद्वाज से कहा कि-प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं, हमारी एक प्रबल इच्छा रही है, हम यह जानना चाहते हैं कि यह जो तुम्हारा वंशलज है, यह भारद्वाज कहलाता है और भारद्वाज गोत्रों का जो निकास है वह दद्ड़ीय गोत्रो का, हरिद्रत गोत्रों से हुआ है, उन्होंने कहा गोत्रों का निकास अंगिरस गोत्रों सेहुआ है, अंगिरस गोत्रों का निकास ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से हुआ है। हम यह जानना चाहते है कि तुम्हारे इस वशंलज में कोई भी ऐसा पुरूष नहीं हुआ, जो वैज्ञानिक हुआ हो, जो परमाणु विद्या को जानने वाला हो, परन्तु यह तुम्हारे हृदय में जो प्रेरणा जागरूक हुई है, विज्ञान की, यह कहाँ से जागरूक हुई है? यह कहाँ से हुई?-प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं कि इसका कुछ अनुमोदनकीजिए, भारद्वाज मुनि महाराज क्योंकि उनका नामोकरण श्वेत्ताश्वेतर भारद्वाज था, श्वेत्ताश्वेतर भारद्वाज ने कहा-कि तुम्हारा प्रश्न बड़ा विचित्र और कि-यह प्रेरणा जो मुझे प्राप्त हुई है, यह मेरी माता और पिता से यह प्रेरणा मुझे प्राप्त हुई। मेरी माता से मुझे यह भान हुआ है। माता ने और पिता ने मुझे यह वर्णन कराया है। वेद के आचार्य ने कहा, भारद्वाज मुनि ने कहा-महाराज! यह प्रेरणा मुझे मेरे माता-पिता से प्राप्त हुई। उन्होंने कहा-महाराज! यह कैसे हुई? तो भारद्वाज मुनि महाराज ने अपना साहित्य प्रकट करना प्रारम्भ किया। 19.07.1982

563 पितर-याग दृष्टान्त

उन्होंने कहा-कि-एक समय मेरे पिता जिनका नाम रेंगणी भारद्वाज था। महर्षि रेंगणी भारद्वाज, मेरे पिता और मेरी माता स्वेलता, दोनों एक समय एक स्थान पर विद्यमान थे। माता से पितर ने कहा कि देवी! हमारी इच्छा ऐसी हैकि हम पितरयाग करना चाहते हैं। हमारे पितर याग की हमारे हृदय में प्रेरणा जागरूक हुई है और हमारी इच्छा यह है कि हम पितरयाग करना चाहते हैं। उस समय मेरी अवस्था केवल तीन वर्ष और चार दिवस की आयु थी। जिस समय उन्हें पितरयाग करना था, प्रातःकालीन मेरे उदर की पूर्ति करते हुए माता ने, मैं आंगन में क्रीड़ा करने लगा और माता-पिता ने देवयाग किया और पितरयाग के लिए नाना पितर, उनके पिता, महापिता, प्रपिता जो संसार में थे, परन्तु उनको निमन्त्रण दे करके उनका स्वागत किया और स्वागत करने के पश्चात अपना उन्होंने प्रस्थान किया।

मैं उस समय पिता के आंगन में क्रीड़ा कर रहा था। पिता ने कहा-हे श्वेत्ताश्वेतर तुमने अन्न इत्यादि का पान किया अथवा नहीं? उस समय मैंने एक वाक्य मिथ्या उच्चारण किया, कि मैंने अन्न को पान नहीं किया। उस समय पिता ने कहा-हे देवी! तुमने बालक को अन्न पान नहीं कराया। माता ने कहा कि-मैंने इसके उदर की पूर्ति की है, मैंने अन्न को पान कराया है। तो उस समय माता ने यह कहा-यह मिथ्या उच्चारण कर रहा है? परन्तु मेरे पिता ने उस समय यह कहा-हे बालक! तू दूर्भागी है, हमारे वशंलज में कोई भी मानव मिथ्यावादी नहीं हुआ, तू मिथ्या उच्चारण कर रहा है। यह हमारे गृह का बड़ा दुर्भाग्य है। क्योंकि जिस गृह में मिथ्यावादी पुत्रों का जन्म होता है वह गृह अपवित्र हो जाता है। समाज असामाजिक हो जाता है। समय माता ने कहा-हे बालक! यह माता के गर्भ का दुर्भाग्य है, जिस माता के गर्भ से मिथ्यावादी पुत्रों का जन्म होता है, वह माता बड़ी दुर्भाग्यशालिनी हैं। उससे दुर्भागी कौन हो सकता है? उस माता का गर्भाशय अपवित्र हो जाता है। हे बालक! तू मिथ्या उच्चारण कर रहा है।

तो भारद्वाज मुनि कहते हैं कि हे ऋषियों! उसी समय से मेरे माता-पिता की वह प्रेरणा, वह शब्द मेरे अन्तःकरण में अंकित हो गये। अंकित हो जाने के पश्चात कुछ समय के पश्चात मेरे पितर ने, रेंगणी भारद्वाज ने मेरा प्रवेश महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के आश्रम में कराया और महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के यहाँ जब मैं अध्ययन करने लगा, तो मेरे अध्ययन करने की जो प्रणाली वही रही। परमाणु विद्या के ऊपर मेरा अधिपथ्य होने लगा। जब परीक्षा होती तो कुछ ब्रह्मचारियों से मैं प्रथम आता रहा, कुछ में द्वितीय आता रहा तो जब परीक्षा फल प्राप्त होता, मैं प्रथम होता। परन्तु समय व्यतीत होता रहा। 19.07.1982

564 भारद्वाज की दीक्षान्त-उपदेश

समय आया, जब मैंने सर्वत्र विद्या को अध्ययन कर लिया, परमाणु विद्या के ऊपर मेरा अधिपथ्य रहा। मैं परमाणु विद्या में पारायण होने लगा। तो उस समयजब मैं विद्यालय को त्यागने लगा पूर्णता को प्राप्त करके, तो उस समय आचार्य ने दीक्षांत उपदेश दिया, महर्षि महर्षि तत्त्व मुनि महाराज, दौ सौ चौरासी वर्ष के अखण्ड ब्रह्मचारी थे, उस समय महर्षि तत्त्व मुनि महाराज ने मुझे दीक्षांत उपदेश दिया और दीक्षांत में यह कहा-हे ब्रह्मचारी! आज तुम इस विद्यालय को त्याग रहे हो, तुम्हें कुछ अपना मैं उपदेश देता हूँ। जो मैंने निगली हुई विद्या है उसे मैं वमन करके तुम्हें श्रवण करा रहा हूँ। हे बालक! हे ब्रह्मचारी!!अब तुम इस विद्यालय को त्याग रहे हो, यह विद्यालय तुम्हें स्मरण रहे। मस्तिष्क में, तुम्हारे हृदय में इसका स्थान रहे कि मैंने उस विद्यालय में अध्ययन किया है, मुझे उसको विचारना है उसकी उन्नत होने की प्रवृत्ति मेर हृदय में होनी चाहिए। हे ब्रह्मचारी! सबसे प्रथम, उस भूमि पर जिस भूमि पर तुमने विद्या अध्ययन की है उसका तुम्हारे हृदय में स्थान होना चाहिए और द्वितीय यह कि तुम ब्रह्मचारी रहो। 19.07.1982

565 ब्रह्मचारी और ब्रह्मचरिष्यामि

ब्रह्मचारी कौन होता है? वेद का आचार्य कहता है, मन्त्र कहता है, ब्रह्मचारी कौन है? जो ब्रह्मवर्चोसि बनता है। ब्रह्मवर्चोसि कौन है? जो प्रकृति के तथ्यों को जान करके और ब्रह्म की आभा को जानता है। ब्रह्मचर्य के दो ही शब्द है ब्रह्म और चरि। ब्रह्म कहते हैं, परमात्मा को और चरि कहते हैं, प्रकृति को। वह, जो मानव इनको अंगों और उपंगों से जानता है, वह ब्रह्मचारी कहलाता है।

प्रत्येक इन्द्रिय ब्रह्म में पिरोई हुई जब मानव की होती है, तो ब्रह्मवर्चोसि बनता है। वह ब्रह्मचारी बन करके अपने मानवीय जीवन को महान् बनाता है। आचार्य कहता है-हे ब्रह्मचारी! तुम ब्रह्मचर्य से रहो। परन्तु गृह में, तुम पुत्र कामना भी उत्पन्न हो तो उस समय तुम्हारा ब्रह्मचर्य केवल उद्देश्य के लिए होना चाहिए। हे ब्रह्मचारी! तुमने परमाणु-विद्या का अध्ययन किया है, तुम्हें अणुशक्ति के ऊपर अनुसन्धान करना है, तुम्हें अपने जीवन को महान् बनाते हुए तपस्वी बनाते हुए तुम्हें अणु-परमाणु और यन्त्रशालाओं में पहुँचना है और उनमें प्रवेश करके तुम्हें अन्तरिक्ष की यात्रा करनी है। वेद के मन्त्रों का उपदेश इतना ही है-हे ब्रह्मचारी! तुम विद्या का अध्ययन करते हुए अपने में दुरूपयोग नहीं होना चाहिए, विज्ञान का दुरूपयोग नहीं होना चाहिए, महर्षि तत्त्व मुनि महाराज ने यह दीक्षांत उन्हें उपदेश दिया और दीक्षांत उपदेश दे करके ऋषि मौन हो गएं। भारद्वाज कहते है-मैंने वहाँ से प्रस्थान किया, मैं सोमकृति भानु राजा के समीप जा पहुंचा। सोमकृति भानु वह अपनी स्थलियों पर विद्यमान थे। जब मैं राष्ट्र में पहुँचा तो सोमकेतु जी ने आसन को त्याग करके कहा-आओ, ब्रह्मचारी! आओ, ब्रह्मचारी! पधारो! क्योंकि मेरी ख्याति हो गई थी, तो मैंने उनसे कहा कि-मैं उस परमाणु-शक्ति की और यज्ञशाला का निर्माण करना चाहता हूँ यज्ञशाला के पश्चात विज्ञानशाला का निर्माण करना चाहता हूँ, मुझे सहायता दें। तो राजा ने मुझे सहायता दी और सहायता का परिणाम यह हुआ कि मैं जिस धातु-पिपाद को जानता हूँ, उसी के ऊपर अनुसन्धान हो जाता है। मैंने इस विद्या को ऋषियों से जाना है। ऋषि ने कहा कि-महाराज! यह तो प्रेरणा है, यह मुझे मेरे माता-पिता से प्राप्त हुई। माता-पिता, यदि माता यह चाहती है कि मेरा पुत्र महान बन जाएं, तो माता अपने गर्भाशय में शिक्षा देना प्रारम्भ कर देती है। लोरियों का पान कराती रहती है और कहती है शुद्धोऽसि, बुद्धोऽसि, निरंजनोऽसि। वह कहती है, आत्मा तू शुद्ध है, निरंजन है, अखण्ड रहने वाली है, तुम इस शरीर में वास कर रही हो, अज्ञान नहीं भासता उसके द्वारा। तो यह संस्कार कौन, माता देती ही रहती है। माता अपने बाल्य को महान बना देती है। तो विचार वेद का, वेद मामन्त्र क्या कहता है? वेद का आचार्य कहता है, वह मेरी प्यारी माँ वसुन्धरा कहलाती है जो माता वसुन्धरा अपने को स्वीकार करती है। अपने मानवी तथ्यों को जानने लगती है। 19.07.1982

566 ब्रह्माण्ड रूपी यज्ञ शाला

यह संसार, एक प्रकार की यज्ञशाला है, जिस काल में ऋषि मुनि एक स्थली पर विद्यमान हो करके याग के ऊपर चिन्तन करते रहे है और याग के ऊपर विचारने लगे कियह जो ब्रह्माण्ड है यह कैसे एक प्रकार की यज्ञशाला है? इसमें ब्रह्मा, जो परमपिता परमात्मा है वह उसका नियमन कर रहा है वह ब्रह्मा बन रहा है, आत्मा यज्ञमान है पंच महाभौतिक, पंच महाभूत इस यज्ञशाला के होता बने हुए है, वे होता आहुति दे रहे हैं। पृथ्वी गुरूतव की आहुति दे रही है, और जल आपोमयी ज्योति वह तरल पदार्थों का तरलतव में आहुति प्रदान हो रही

है। अग्नि तेजोमयी बन रही है वह तेज की उष्णता बना रही है, तेज प्रदान कर रही है। इसी प्रकार वायु प्राण दे रहा है प्राणतव दे करके अन्तरिक्ष में वह समाहित हो जाते है। वाह रे, मेरे प्रभु कैसा शून्य बिन्दु है और कैसे शून्य बिन्दु में सब समाहित हो रहे है। 28.07.1982

567 यज्ञशाला रूपी ब्रह्माण्ड

परमपिता परमात्मा का जो यह ब्रह्माण्ड है, यह एक प्रकार की यज्ञशाला है, इसी यज्ञशाला के रूप में परमपिता परमात्मा ने इस शरीर रूपी यज्ञशाला का निर्माण किया है। एक दूसरा प्राणी, एक दूसरे प्राणी में समाहित हो रहा है। एक दूसरा प्राणी, एक दूसरे प्राणी के कार्यों में रत्त हो रहा है। एक-एक परमाणु, एक-एक परमाणु में सुगठित हो करके इस ब्रह्माण्ड की रचना हो रही है। यह कैसा अभ्योदय हो रहा है, जिसके ऊपर हमने यह अपना विचार प्रगट किया, विचार आता रहता है। जब दार्शनिक ने यह कहा कि यह संसार एक प्रकार की यज्ञशाला है।

तो नाना ऋषिवर, नाना आचार्यजन याग में परिणत रहते थे, कहीं विचारों का याग हो रहा है, कहीं कार्यरत्त होने का याग हो रहा है, कहीं देवपूजा हो रही है, कही ब्रह्मयाग हो रहा है, कहीं अतिथि याग हो रहा है, कहीं बलिवैश्व याग हो रहा है यहाँ नाना प्रकार के यागों में मानव परिणत हो रहा है। 28.07.1982

568 कुम्भकरण

ब्रह्मचारी यज्ञदत्त ने महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि से कहा-प्रभु! आपके आश्रम में, अभी कुछ समय हुए, आपके पश्चात राजा रावण के विधाता कुम्भकरण का आगमन हुआ था। और कुम्भकरण कुछ वैज्ञानिक तथ्यों को ले करके आप से कुछ वार्त्ता करना चाहते थे। तो उन्होंने, हमसे कुछ वार्त्ता प्रगट की है। हमने उनसे प्रश्न किया कि तुम हमारे पूज्यपाद से क्या प्रश्न करना चाहते हो? उन्होंने कहा-मेरा प्रश्न उन्हीं से होगा। हमने कहा-प्रभु! हमें उच्चारण कीजिए। उन्होंने कहा है कि मैं यह जानना चाहता हूँ, कियह जो संसार है, वेद की भाषा में या वेद के मन्त्रों में परमाणुवाद का अपना, क्या क्या महत्त्व माना गया है? एक तो उन्होंने यह प्रश्न किया। और द्वितीय प्रश्न उन्होंने यह किया है कि मैं चन्द्रमा की यात्रा करना चाहता हूँ और चन्द्रमा की यात्रा से उससे ऊर्ध्वा से बुध मण्डल कहलाता है। तो बुध मण्डल में, कैसा वातावरण है और वहाँ कैसे प्राणी रहते है। एक तृतीय प्रश्न उन्होंने ओर किया, कि यह मंगल मण्डल है, मंगल मण्डल से ऊर्ध्वा में, वशिष्ठ और अरुण्धती मण्डल दोनों कहलाते है। अरुण्धती मण्डल में कौन-सा प्राणी रहता है और कौन-सा तत्त्व प्रधान है?

तो ये तीन प्रश्न महाराजा कुम्भकरण हमसे उच्चारण कर गएं है, उनका नामोकरण तो बाल्यकाल में उन्हें व्रणेतकेतु कहते है।

उन्होंने कहा-महर्षि भारद्वाज के आश्रम में क्यों नहीं, गएंआपने संकेत किया, ?महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से कहा-प्रभु! उनके तो वह शिष्य कहलाते है, महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ तो उनका सर्वत्र, रावण का जितना वंशलज है वह सब विज्ञान की शिक्षा वहीं से प्राप्त हुई है। उनको हम वहाँ संकेत क्यों कर देते? 28.07.1982

569 यज्ञ से परमाणु शुद्धि, परमाणु शुद्धि से वायुमण्डल शुद्धि

प्रत्येक मानव को याज्ञिक बनना चाहिए, और बिना याग किए, बिना इस वायुमण्डल को कोई भी मानव शोधन नही कर सकता राष्ट्रवेत्ताओं को यह चाहिए, कि राजा के प्रत्येक गृह में, याग होना चाहिए। जिससे यह वायुमण्डल सुगन्धित हो जाएं, परमाणुवाद ही इस वायुमण्डल को पवित्र बना सकता है। 05.08.1982

570 अन्तरिक्ष

यह जो अन्तरिक्ष है यह अवकाश कहलाता है, अन्तरिक्ष में वह विद्यमान है माता के गर्भस्थल में अन्तरिक्ष है उसमें वह विद्यमान है और उसका ओढ़न और बिछौना वह प्राण सहित, जल सहित वह अन्तरिक्ष में वह ओत-प्रोत है। अन्तरिक्ष उसका ओढ़न है वही उसका आसन बना हुआ है। वही अपनी गतियों में गतिशील बना रहा है। अन्तरिक्ष में गति कोई नहीं होती, परन्तु वह अवकाश है। वह गतियों में गति परमाणु गति कर रहा है यदि अवकाश नहीं होगा, तो जीवन भी नहीं होगा। प्राण शक्ति नहीं होगी, तो गति भी नहीं होगी। अग्नि नहीं होगी, तो तेज भी नहीं होगा। जल नहीं होगा तो अमृत भी नहीं होगा। पय भी नहीं होगा और पृथ्वी नहीं होगी अन्नाद भी नहीं होगा। विचार यह सब एक-दूसरे का पूरक है। एक-दूसरे की आभा में आभायित होता हुआ यह जगत मुझे दृष्टिपात आ रहा है पुत्रों!। 18.10.1982

571 महाराजा हनुमान

महाराजा हनुमान का एक ही विषय था कि सूर्य की किरण आ रही है, इन किरणों से हम विद्युत का कैसे प्राप्त कर सकते हैं? क्योंकि बाल्यकाल में जब वह माता के आँगन में जब क्रीड़ा करते रहते थे। उपनयन संस्कार से पूर्व, उस समय भी यह सूर्य की किरणों को निहारते रहते थे और सूर्य की किरणों को अपने में और माता से प्रश्न किया करते थे कि हे माता! यह सूर्य क्या है? तो माता यह उत्तर देती पुत्र! सूर्य लोक है यह द्यौ लोक से सहायता लेता है, यह हमारा देवता है। सूर्य देवता है चन्द्रमा देवता है। वातो देवता है यह हमें देते हैं प्रकाश देते हैं इसीलिए यह हमारे देवता हैं। नाना प्रकार की किरणें आती हैं, यह हमें तपाती रहती हैं। हम उससे तपायमान रहते हैं। माता से बालक मौन

हो जाता है और यह उच्चारण करता है कि हे माता! यह देवता कैसे हैं? एक समय माता के आँगन में क्रीड़ा कर रहा था। माता से कहा, हे मातेश्वरी! यह सूर्य देवता कैसे है? उन्होंने कहा, हे पुत्र! यह जो सूर्य है, यह देवता इसीलिए है, यह नाना प्रकार की हमें किरणें देता है। यह तेज देता है, हमें तेजोमयी बनाता है। यह तेज देता हुआ, हमें तेजस्वी बनाता है इसीलिए यह देवता है। यह देता ही रहता है।

उस समय माता से कहा, हे माता! यह देता क्यों है? उन्होंने कहा कि पुत्र! यह इसीलिए देता है क्योंकि यह अपने कर्तव्य का पालन कर रहा है, यह प्रभु की व्यवस्था में कटिबद्ध है और यह प्रकाश ही प्रकाश देता है। नाना तेजोमयी बनाता है। वनस्पतियों को प्राणी मात्र को, और यह पृथ्वियों को तपाने से भी यह पृथ्वियों का पिता है। माता ने यह उपदेश देती है अपने बालक को तो बालक मौन हो गया।

परन्तु विद्यालय में उस ब्रह्मचारी का यही विषय रहा और विषय की आभा एक विचित्र बनी रही। बटुक मुनि महाराज भी उनसे आश्चर्य चकित हो जाते थे, कि हे ब्रह्मचारी! तुम यह अध्ययन क्यों कर रहे हो? मैं इसकी प्रतिक्रिया को नहीं जान पा रहा हूँ क्या तुम्हारा यह अध्ययन का विषय क्यों बना है? तुम आध्यात्मिकवाद को नहीं ले रहे हो। तुम, सूर्य विज्ञान को लेना चाहते हो। चन्द्र विज्ञान को ले रहे हो। पृथ्वी विज्ञान को ले रहे हो। मैं नहीं जान पाता, तुम्हारा यह विषय क्यों बना। उस बाल ब्रह्मचारी ने कहा, हे ऋषिवर! हे पूज्यपाद! हे ऋषिवर! मैं इसीलिए इस विषय में चला गया क्योंकि माता मुझे यह बाल्यकाल में शिक्षा देती रही है। सूर्य के प्रकाश की आभा मुझे प्रगट करती रही है। मेरा जो हृदय है वह इसमें प्रकाशित हो गया है हृदय से यह प्रेरणा उत्पन्न हो रही है क्योंकि संसार में जितने भी आविष्कार होते हैं, जितने चमत्कार होते हैं, जितने योगेश्वर बनते हैं, यह मानव के हृदय से प्रेरणा प्राप्त होती रहती है, हृदय इसका केन्द्र माना गया है। एक मानव विज्ञान में जाना चाहता है, तो उसके हृदय से विज्ञान की तरगों का जन्म हो जाएगा। एक मानव सूर्य में जाना चाहता है तो सूर्य उसका हृदय केन्द्र बनता है और उसके आधार पर वह यन्त्रों का निर्माण करने लगता है। इसी प्रकार मैंने भी अपने इस विषय को बनाया है, मैं आचार्य के चरणों में भगवन! इसीलिए आया हूँ, मेरा हृदय इससे प्रकाशित हो जाएगा।

बटुक मुनि महाराज आश्चर्य चकित हो गएं, उसकी कुशल बुद्धि को दृष्टिपात करके उन्होंने कहा, धन्य है ब्रह्मचारी! वह उनके समीप रहने वाले स्वाति ब्रह्मचारी उनके द्वारा थे स्वाति ब्रह्मचारी और हनुमान देनों का परस्पर विचार-विनिमय होता रहा। वह सूर्य सिद्धन्त के ऊपर, सूर्य की किरणों के साथ अपनी गति को बनाना चाहते थे। ऐसे भी वैज्ञानिक हुए हैं क्या जो सूर्य की किरणों के साथ अपने शरीर को ऊर्ध्वा में बनाने का प्रयास करते हैं। सूर्य की किरणों से परमाणु ले करके यन्त्रों का निर्माण किया। और जो यन्त्र सूर्य की किरणों से, उसी के प्रकाश से वह अन्तरिक्ष में गति करता रहा है।

सम्पाति, जिन्होंने हनुमान जी लंका में, माता सीता के लिए पहुचें तो सम्पाति उन्हें समुद्र के तट पर प्राप्त हुआ था और सम्पाति ने कहा कि हनुमान! क्या तुम उस विद्या को अपने से ओझल कर गएं हो? जब सम्पाति ने उन्हें शिक्षा अभ्यस्त तो वह ऊर्ध्वा सूर्य की किरणों के आश्रित हो करके, विज्ञान की तरंगों के कटिबद्ध होकरके समुद्र को लांघ दिया था। वह यन्त्रों की कुञ्जयों को जानते थे।

सूर्य विज्ञान हमारे यहाँ ऐसा विज्ञान है, सूर्य की किरणों से विद्युत को जानने वाले वैज्ञानिक अपने को सूर्य मण्डल तक ले जाते थे। महाराजा हनुमान और सम्पाति दोनों वैज्ञानिक यन्त्रों में वैज्ञानिक सूर्य किरणों से वे विज्ञान का गठन करते रहते थे। विद्युत को एकत्रित करते रहते थे महाराजा बटुक मुनि यह कहा करते थे कि हे ब्रह्मचारियों! तुम, किसी भी काल में, मैं तुम्हें निद्रा में दृष्टिपात नहीं कर रहा हूँ यह क्या अश्व है, उन्होने कहा कि महाराज! यह विज्ञान इतना विशाल है, किविचार-विनिमय करने वाली, जो प्रतिभाएँ हैं, वह इतनी विचित्र हैं, कि उनको जानते-जानते हम प्रभु के राष्ट्र में चले जाते हैं। यह अग्नि भौतिक अग्नि है। इस अग्नि के वैज्ञानिकजन अपने यन्त्रों की तरंगों में रमण करते रहे हैं। उसी में रत्त रहे हैं। एक ब्रह्माग्नि होती है। वह ब्रह्माग्नि कौन-सी होती है? ब्रह्माग्नि वाला, यह विचारता है कि यह जो अग्नि है, यह तो ब्रह्म है, जो ज्ञान है, विज्ञान है जो मृत्यु को विजय करने वाली सामग्री है, वह ब्रह्माग्नि के द्वार पर है। इसीलिए ब्रह्माग्नि को जानना चाहिए।

ब्रह्माग्नि क्या है? इसको भौतिकवाद, भौतिक विज्ञानवेत्ता, जिस विज्ञान को लेकर के उड़ान उड़ता है गति बनाता है परन्तु वह जहाँ शान्त हो जाती है, वह गति वहाँ से ब्रह्माग्नि का प्रारम्भ होता है। उसका अध्यात्मिकवाद कहते हैं। जो प्रकाश में जाने वाला परम साधक है, जो वह साधना करता है, वह प्रकृति के जड़वत को और चैतन्य ब्रह्माग्नि को इन दोनों का जब समन्वय करता है, तो समन्वय करते ही इस संसार से, इस अन्धकार से उस मानव का उत्थान हो करके एक साधना के क्षेत्र में जा करके प्रकाश में चला जाता है। जहाँ आलस्य नहीं होता, प्रमाद नहीं होता, जहाँ रात्रि नहीं होती, उस ब्रह्माग्नि के प्रकाश में वह रमण करने लगता है। वह प्रकाशमयी में ही आनन्द को प्राप्त करता है।

हमारे यहाँ सूर्य की किरणों से, प्रतिभाओं से अपनी आभा में मानव रमण करता रहा है। उस समय मुझे बटुक मुनि महाराज का वह काल, वह विद्यालय स्मरण आते रहते हैं जहाँ बटुक मुनि महाराज जो भौतिक अग्नि में, वैश्वानर नाम की अग्नि में, मानव को परिणत करा रहा

है, वही ऋषि आध्यात्मिक विज्ञान में मानव को ले जा रहा है। अध्यात्मिकवादी बनाने के लिए ब्रह्माग्नि का चयन कर रहा है। वह दोनों प्रकार के चयन कराने की प्रतिक्रिया, हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों के द्वार पर प्रायः होती थी। बटुक मुनि महाराज के यहाँ, नित्यप्रति ऋषि-मुनि याग करते थे और यागों के ऊपर अनुसन्धान करते थे। उस अनुसन्धान में वह रत्त रह करके अपने को महान बनाने का प्रयास करते रहे हैं। 18.10.1982

572 गरूड़, सम्पाति

सम्पाति अपने माता की दो सन्तानें थीं, दो पुत्र थे। एक का नाम गरूड़ था और एक का नाम सम्पाति था, गरुड़ इतना वैज्ञानिक था कि वह सूर्य की किरणों के साथ, सूर्य मण्डल कई समय सूर्य की परिक्रमा कर आया।पुनः वह पृथ्वी मण्डल पर आ गया। इसी प्रकार सम्पाति समुद्र के तट पर उनका एक सूक्ष्म सा एक राष्ट्र था, उस राष्ट्र में रहते थे, सम्पाति के पिता का नाम, क्रूरली राजा था क्रूरली राजा उसे कहते हैं जो कुरीतियों को शान्त कर गया हो। राष्ट्र से वह क्रूड़ली नाम का राजा था, बाल्यकाल में जो उसका नाम था वह मंगलेश्वर केतु कहलाता था। मंगलेश्वर केतुकी पत्नी का नाम समश्रुति था श्रुति के गर्भ से दो सन्तानों का जन्म हुआ था। दोनों सन्तानें बटुक मुनि के यहाँ अध्ययन करती रहीं, उनके अध्ययन की जो प्रतिक्रिया थी, वह बड़ी विचित्र और विज्ञान और ज्ञान और यौगिक बनने की उनके हृदय में, सदैव भावना उत्पन्न होती रहती थी। 18.10.1982

573 बटुक मुनि महाराज

बटुक मुनि महाराज के यहाँ ये नाना शिष्य अध्ययन करते थे। जहाँ हनुमान था, वहीं सम्पाति और गरुड़ था। जहाँ गरुड़ था वहीं श्वेतकेतु था। और जहाँ श्वेतकेतु अध्ययन करता था। वहीं ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु था, और जहाँ रोहिणीकेतु अध्ययन करता था, वहाँ रावण के अमृत वंशलज में उनके विधाता कुम्भकरण ने भी कुछ समय बटुक ऋषि के यहाँ, विज्ञान का, उन्होंने अध्ययन किया बहुत से तत्त्वों को अध्ययन किया। जहाँ वह भारद्वाज मुनि के यहाँ अध्ययन करते थे। वहाँ कुछ समय तक बटुक मुनि महाराज के यहाँ भी, उन्होंने अध्ययन किया है। तो वह नाना यन्त्रों का निर्माण करते रहते थे, विज्ञान में रत्त रहते थे अपने को प्रकाश में लाने का प्रयास करते रहते थे। 18.10.1982

574 अग्नि वरूण

तो एक समय महर्षि बटुक मुनि महाराज और शिष्यगण सब उनके चरणों में ओत-प्रोत हो करके शिक्षा अध्ययन कर रहे थे, तो एक वेद आख्यायिका उन के समीप आयी। वेद की, आख्यायिका यह कह रही थी, बटुक मुनि महाराज से ब्रह्मचारियों ने कहा कि महाराज! वेद का मन्त्र कहता है, कि अग्नि वरुण है। यह अग्नि वरुण कैसे बन सकती है? उन्होंने कहा, कि वरुण के नाना पर्यायवाची शब्द माने गएं हैं। क्योंकि वरुण नाम जल को कहते हैं, वरुण नाम परमात्मा को कहते हैं। वरुण नाम अग्नि को कहते हैं। जो उसे वर लेता है, वह वरुण कहलाता है, यदि हम जल को वर लेतें है, जल के विज्ञान को जान लेते हैं तो जल हमारे लिए वरुण बन जाता है, यदि हम अग्नि को जान लेते हैं, अग्नि के प्रकाश को जान लेते हैं, तो अग्नि हमारे लिए वरुण बन जाता है। परमात्मा को हम जब अपना वरणीय बना लेते हैं, तोयह बाह्य अग्नि, ब्रह्माग्नि में प्रवेश कर जाता है। परमात्मा को अपना वरुण बनाकर उसको वर लेते हैं, वहाँ मानव उसी को प्राप्त हो जाता है। तो परमपिता परमात्मा का नाम भी वरुण है।

महात्मा बटुक ने कहा है, मैं बहुत प्रकार से इसका चयन करता रहा हूँ, बहुत अध्ययन करता रहा हूँ। परन्तु उनके यहाँ एक वाक्य और स्मरण आया, एक वेद की जब उन्होंने आख्यायिका का निर्णय करा दिया, तो द्वितीय एक वेद का मन्त्र स्मरण आया, ब्रह्मा, विष्णु रेवक प्रवाः राष्ट्रम् रुद्रो भाग अस्ते उन्होंने कहा कि महाराज! यह वेद की आख्यायिका यह कहती है, कि हम एक विष्णु नाम का राजा होता है, और विष्णु नाम का राजा होता है, वह अपनी प्रजा को सुखद पहुँचाता है।

महात्मा बटुक ने कहा कि विष्णु नाम, पालन करने वाले को कहते हैं। सतोगुण को विष्णु कहते हैं। जिस मानव के द्वारा सतोगुण आ जाता है, सतोगुण की प्रतिभा आ जाती है, सत में ही रमण करने लगता है, वह मानवविष्णु के रूप में परिणत हो जाता है। वह विष्णु कहलाता है और वह जो विष्णु है वह हमारा कल्याणकारी है। सतोगुण में रमण करता हुआ पालन करता है जैसे माता अपने में जब पुत्रवती हो जाती है, नम्र बन जाती है, उसका हृदय उद्गान में परिणत हो जाता है, उसमें पालन करने की शक्ति की प्रबलता आ जाती है तो, उसका पालन सतोगुण में करती है। इसी प्रकार परमपिता परमात्मा को भी विष्णु कहते हैं। वह संसार का पालन करता है। इस संसार का जहाँ रचनाकार है, वहाँ इसका पालन कर रहा है। परन्तु उसके पश्चात ऋषि कहता, वही विष्णु बन करके हमारा कल्याण करने वाला है। वह स्वस्ति कहलाता है। वह आभा में रमण करने वाला है, वह विष्णु ब्रह्मा है।विष्णु राजा है राजा कौन-सा विष्णु है? जो राजा अपने में इन्द्रिय विजयी होता है, अपने को विजय करने वाला, समाज को सात्विकता देने वाले राजा को हमारे यहाँ विष्णु कहते हैं। इस प्रकार आभामयी प्रगट करते हुए ब्रह्मचारी आँगन में परिणत हो गएं। उन्होंने कहा यही विष्णु है जो लोक-लोकान्तरों की आभा में मानव को परिणत करा

रहा है आभा में गति दे रहा है। वही अपनी-अपनी क्रियाओं में रमण करता हुआ अपने में सुसज्जित बना रहा है।
उन्होंने जहाँ यह वाक्य प्रगट किया तो ऋषि मौन हो गया ऋषि के मौन हो जाने परब्रह्मचारी भी मौन हो गएं। ब्रह्मचारीयों भी मौन हो गएं। ब्रह्मचारियों ने एक प्रश्न ओर किया। उन्होंने कहा कि महाराज! हमने कुछ ऐसा श्रवण किया, यह जो विष्णु है, यह रुद्रभागा कहलाता है। वह अग्रतां कहलाता है, कि भगवन! यह वाक् यथार्थ है? उन्होंने कहा यह वाक् यथार्थता में रहता है क्योंकि वह सतोमयी रहता है। सत में रमण करने वाले को हमारे यहाँ ब्रह्म भागा कहते हैं। 18.10.1982

ब्रह्माग्नि

ऐसा उच्चारण करके ऋषि मौन हो गएं। परन्तु ब्रह्मचारियों ने, एक स्वर में हो करके कहा कि महाराज! हम यह जानना चाहते हैं, कि इस भौतिक अग्नि का, और ब्रह्माग्नि दोनों का समन्वय आपस में कैसे होता है? ऋषि बटुक मुनि महाराज बोले कि बाह्य जगत को जानते हुए, बाह्य जगत के विज्ञान को जानते हुए अन्तिम स्वर यह होता है, कि जब वह मृत्यु को विजय करता है, तो बाह्य जगत वाली जो अग्नि है, यह सिमट करके ब्रह्माग्नि में प्रवेश हो जाती है। यह ब्रह्माग्नि में प्रवेश हो करके, अपने में ओझल, अपने में प्रकाशमयी पहुँचा करके एक-एक कण गतिशील होने लगता है, उस कण-कण में जब जिज्ञासु, ब्रह्माग्नि को स्वीकार करता है। वह तेजोमयी, गतिमयी, आभामयी, रुद्रोमयी जब स्वीकार करता है तो वह ब्रह्माग्नि कहलाती है। वह ब्रह्माग्नि में प्रवेश कर गया है।
तो हम परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाते हुए, उसकी ब्रह्माग्नि को जानते हुए हम इस संसार सागर से पार होना चाहते हैं। जो यह संसार जो हमें दृष्टिपात आ रहा है, यह संसार एक आभामयी हमें दृष्टिपात आ रहा है। जिसके ऊपर मानव परम्परागातों से, एक अनुसन्धान करता रहा है। अनुसन्धानवेत्ताओं ने इस संसार की नाना प्रकार की आभाओं में परिणत किया है। परन्तु हम परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाते हुए और महापुरुषों का जो विज्ञान है, उस विज्ञान के ऊपर हम अनुसन्धानित रहें। उसको हम सदैव जानते रहें। 18.10.1982

575 लोकों की परिक्रमा

यह हमारा पृथ्वी मण्डल है, ऐसी ऐसी तीस लाख पृथ्वियाँ है जो सूर्य की परिक्रमा कर रही है सूर्य से प्रकाश आ रहा है। याज्ञवल्क्य कहते है-हे राजन! जैसा हमारा यह सूर्य मण्डल है, ऐसे-ऐसे एक सहस्र सूर्य है, जो बृहस्पति की परिक्रमा कर रहे है। जैसा यह बृहस्पति है ऐसे एक सहस्र बृहस्पति है जो आरुणि मण्डल की परिक्रमा कर रहे है। एक सहस्र आरुणि है जो ध्रुव मण्डल की परिक्रमा कर रहे है, एक सहस्र ध्रुव जो पुष्य नक्षत्रों की परिक्रमा कर रहे है एक सहस्र पुष्य नक्षत्र है जो मूल नक्षत्रों की परिक्रमा कर रहे है। एक सहस्र मूल नक्षत्र है, जो अचंग मण्डलों की परिक्रमा कर रहे हैं। एक सहस्र अचंग मण्डल है जो रोहिणीकेतु मण्डलों की परिक्रमा कर रहे है। यह विशाल प्रभु का ब्रह्माण्ड है इसमें नाना निहारिका, लोक लोकान्तर है, जो एक दूसरे में पिरोएं हुए है, एक दूसरे की माला बनी हुई है, यह कितनी विचित्र रचना है प्रभु की। 18.10.1982

महाराजा गणेश

महाराजा हनुमान सूर्य विद्या को अच्छी प्रकार जानते थे, एक हनुमान ही नही थे, महाराजा गणेश जी भी इस सूर्य विद्या को पान करने वाले थे, यह सूर्य विद्या को गणेश जी ही नही, शिव भी इसको पान करते थे। महाराज शिव अपने आसन पर हिमालय पर रहते थे, परन्तु वह सूर्य की किरणों के साथ, वह किसी-किसी काल में, वह सूर्य की किरण के साथ ऊर्ध्वा में गति भी करते थे, इतना उनका विज्ञान, उनका आध्यात्मिकवाद इतना विचित्र कहलाया गया।
परन्तु महाराज गणेश जी को जब वह सूर्य आभा में विज्ञान की परिक्रमा करते थे, विज्ञान की जब परिक्रमा करते तो सूर्य से नाना प्रकार की वह विद्युत को ले करके मानो देखो, एक समय मुझे स्मरण है क्या, उनका एक चुहेतक नामक एक यन्त्र था, उस यन्त्र में विराजमान हो करके, महाराज गणेश जी उस यन्त्र में विद्यमान हो करके एक समयवह सूर्य की परिक्रमा करने लगे। 20.10.1982

576 नारान्तक

तो नारान्तक ने बहुत-सी औषधियों को एकत्रित किया, क्योंकि नारान्तक चन्द्र विज्ञान के विशेषज्ञ थे और चन्द्रमा की कान्ति से ही औषधियों में रस आता है, औषधियों में तेज आता है। उन औषधियों को एकत्रित किया जो चन्द्रमा की कान्ति से वह रसोमयी कहलाते थे। परन्तु वह सूर्य विज्ञान के विशेषज्ञों को, सूर्य की किरण, कौन-कौन-से माह तक, कौन-कौन-सी औषधियों के ऊपर, कौन-कौन-सा प्रभाव और उसका फल बनाने के पश्चात अग्नि में तपा करके उनकी क्या-क्या प्रतिभा और कैसी तरंगों का प्रादुर्भाव होता है, ऐसी औषधियों को उन्होंने एकत्रित किया और औषधियों को एकत्रित करने के पश्चात, उसमें नाना प्रकार की विचारधाराओं की, पवित्रता की, योगियों की मानों उसमें विचारधारा परिणत हुई। 01.01.1983

577 महर्षि भारद्वाज मुनि

जब माता वसुंधरा के गर्भ के ऊपर, महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने किसी काल में चिन्तन और मनन किया। जब उनकी विज्ञानशाला में नाना प्रकार के वैज्ञानिक जन विद्यमान हुए तो, पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करने लगे, जब पृथ्वी के गर्भ में उन्होंने प्रवेश किया तो इस माता वसुंधरा के गर्भ में कही उन्हें नाना प्रकार के खनिज प्राप्त होने लगे। नाना धातु उन्हें प्राप्त होने लगी, उसी को ले करके उन्होंने अपनी विज्ञानशाला का निर्माण किया। उस विज्ञानशाला में विद्यमान हो करके अहिल्या कृतिभा यंत्रों का निर्माण करने वाले उन्होंने नाना प्रकार के यंत्रों का निर्माण किया, जिससे वह नाना प्रकार के खनिजों को वह दृष्टिपात कर सके। 03.01.1983

578 वसुंधरा

तो जहां जननी माता को वसुंधरा कहते है, वहां वसुंधरा नाम उस पृथ्वी को भी कहा जाता है। हमारे वैदिक साहित्य में पृथ्वी को केवल वसुंधरा ही नहीं कहते है और भी नाना प्रकार के पर्यायवाची शब्द है जिसको कामधेनु भी कहते है, इसको धेनु भी कहा जाता है। परन्तु इसी का नाम हमारे यहां पृथा है, इसी का नाम कहीं अजा के रूप में दृष्टिपात आने लगती है। परन्तु यही पृथ्वी है जो वैज्ञानिकों के मध्य में जा करके, वैज्ञानिक इसके ऊपर अनुसंधान जब करते है तो ऐसा विशाल भण्डार इसके गर्भ में मानव को प्राप्त होने लगता है कि मानव अपने में यह स्वीकार करता है कि यह भण्डार कहां से आ गया, कौन दे रहा है, कौन निर्माण कर रहा है, इसी पृथ्वी का सम्बन्ध आदित्य से रहता है। आदित्य का सम्बन्ध द्यौ से रहता है, द्यौ का सम्बन्ध वहां प्रतिभा अश्वेत्ता से रहता है। जिससे मानव अपने में यह विचारने लगता है कि यह तो प्रायः अण्डमयी एक ब्रह्माण्ड मानव के समीप आने के लिए तत्पर हो जाता है। 03.01.1983

579 सूर्य वैज्ञानिक महाराजा हनुमान जी

सूर्य विज्ञान को जानने के लिए महाराजा हनुमान जी ने स्वाति ऋषि महाराज ने, इन दोनों ने बहुत अनुसन्धान किया था। सूर्य की सर्वत्र विद्या को जानने वाले सूर्य से सहायता ले करके, महर्षि नारद मुनि महाराज भी सूर्य विद्या के मर्म को जानते थे। जब सूर्य की नाना किरणों के साथ में योगी अन्तरिक्ष की उड़ान उड़ता था, अन्तरिक्ष की उड़ान उड़ने वाला, किरणों के साथ नाना प्रकार की किरणें एक कराली नाम की किरण है जिसको देवर्षि नारद मुनि जानते थे। जिस किरण के आश्रय हो करके वह लोक लोकातंरों की यात्रा भी करते थे। परन्तु एक माला बनी हुई है आज जब उनके ऊपर विचार होने लगता है कि यह तो सूर्य है, यह कैसी विचित्र एक माला को अपने में धारण कर रहा है। इसके ऊपर आचार्यों ने बहुत अनुसंधान किया है यह जो सूर्य है यह नाना पृथ्वियों की एक माला बनाए हुए है, नाना प्रकार के मनके है उन मनको का सूत्र यह सूर्य दृष्टिपात आ रहा है। नाना चन्द्रमा है परन्तु उनका भी सूत्र यह सूर्य ही दृष्टिपात आ रहा। 03.01.1983

580 ब्रह्माण्ड की विशालता

तीस लाख पृथ्वियाँ है जो सूर्य अपने कण्ठ में धारण कर रहा है। इसी प्रकार लगभग तीस लाख चन्द्रमा मण्डलों की माला बना करके सूर्य अपने में गति कर रहा है गतिशील हो रहा है। वाह रे मेरे देव, तू कैसा विचित्र है, तू कैसी मेरी प्यारी मां वसुंधरा है, तू इस संसार को अपने गर्भस्थल में धारण कर रही है। हे मां! तुझे वेद वसुंधरा कहता है, तेरे में ही बस रहा है यह ब्रह्माण्ड, सर्वत्र जगत तेरे में क्रीड़ा कर रहा है। तू उस ब्रह्माण्ड को गति दे रही है। इसके ऊपर वैज्ञानिक ऋषि-मुनियों ने बहुत अनुसंधान किया।

वेद का ऋषि कहता है नाना चन्द्रमा उनकी परिक्रमा कर रहे है, नाना पृथ्वियाँ परिक्रमा कर रही है, एक माला के सदृश्य बना हुआ है, सूर्य माला, पृथ्वी का वैज्ञानिक सूर्य की किरणों के साथ में उड़ान उड़ रहे है।चन्द्रमा को जान रहा है चन्द्रमा को सोम कहते है, समुद्रों से उसका जलाशयों से समन्वय रहता है। उसका समन्वय केवल चन्द्रमा को आपो भी कहते है, आपो ज्योति भी कहते है।

जो सूर्य आदित्य बन करके प्रातः काल ऊषा काल को ले करके उदय होता है, कान्ति बन करके आता है, उषा बन करके आता है, उस कान्ति को वह सदैव चन्द्रमा को प्रदान कर देता है, और पृथ्वी को अपने में धारण करता हुआ, यह नाना प्रकार की आभाओं को, मालाओं में धारण करने वाला एक आदित्य कहलाता है। यह अपने में जलों को ले करके पृथ्वी की आभा में गति प्रदान कर देता है।

तो यह माता वसुंधरा बन करके इस सूर्य को अपने को धारण कर रही है, अपने में ही यह आदित्य के साथ द्यौ से सहायता ले करके यह माता वसुंधरा द्यौ को भी धारण कर रही है, धारण करती हुई द्यौ से सहायता लेता है, यह सूर्य, चन्द्रमा पृथ्वियों को अपने में धारण करता हुआ, द्यौ से सहायता लेता हुआ यह संसार को प्रकाशमान करता रहता है, इसकी भव्य ज्योति को अपने में धारण करता हुआ माता वसुंधरा के गर्भ में यह विद्यमान है। 03.01.1983

581 मार्कण्डेय शाखा

हमारे ऋषि-मुनियों ने, वेद के, एक-एक, वेद की धारा को ले करके, कुछ सूक्तों को ले करके, उन्होंने उसी के ऊपर, एक शाखा रूप में, एक पोथी का निर्माण किया, उस पोथी में, आज हम, बहुत काल के पश्चात एक पोथी का आज मानो वह पोथी सम्पन्न हुई है। उस पोथी

का नाम मार्कण्डेय शाखा कहलाती है आज उसका समापन हुआ। उसमें बहुत से शब्द इस प्रकार के है समापन के समय में, जो मार्कण्डेय ऋषि महाराज ने तपस्याओं के द्वारा, एक-एक वेदमन्त्र का निरूपण किया है और एक-एक वेदमन्त्र के ऊपर बहुत चिन्तन किया। क्योंकि मार्कण्डेय ऋषि महाराज, अपने काल में बहुत ऊर्ध्वा में और आध्यात्मिक विज्ञान में रत्त रहते थे। महर्षि मार्कण्डेय मुनि महाराज की माता का नामोकरण हमारे यहाँ साहित्य में आता है। माता का नाम शकुन्तला था और पिता का नाम जेठकेतु ऋषि था। परन्तु दोनों के हृदय में जब यह कामना उत्पन्न हुई कि हमारे गृह को सुशोभित करने के लिए, क्योंकि माता के हृदय में भिन्न-भिन्न प्रकार की कामनाओं की उदबुद्धता होती रहती है। 04.01.1983

582 महर्षि मार्कण्डेय का जीवन

तो मार्कण्डेय ऋषि महाराज की माता शकुन्तला से उनका जन्म हुआ। परन्तु मार्कण्डेय ऋषि महाराज का, जो आधुनिक काल था, मार्कण्डेय ऋषि महाराज का काल विचित्र रहा है। उस विचित्र काल में वह समुद्र के तट पर रहते थे और समुद्र को निहारते रहते थे और जैसे-जैसे तरंगे आती रहती थी समुद्रों की, उसी प्रकार वह ज्ञान और विज्ञान की धाराओं में रत्त हो जाते थे, तो ऐसा कहीं, उनके जीवन में मुझे प्राप्त हुआ है कि सबसे प्रथम उनसे पूर्व भी वैज्ञानिक हुए उस काल में, मार्कण्डेय ऋषि महाराज ने एक आसन, वैज्ञानिक तथ्यों से, जो चन्द्रमा और पृथ्वी के कक्ष वाला एक यन्त्र, एक स्थान पर निर्माण किया और अपने यंत्रों को वह जहां अनुसंधान, एक शाला के रूप में अनुसंधान करते रहे। आज वह शाखा जिन्होंने एक वैज्ञानिक और बह्मसूक्त को ले करके उन्होंने अपनी एक पोथी की रचना की, तो उस पोथी का आज समापन हुआ।

उस पोथी में जहां, ज्ञान और विज्ञान की वार्त्ताएं लोकों की गणणाएं, यागों का बड़ा चयन और वर्णन रहा है। उन्होंने अश्वमेध याग के ऊपर उस पोथी में बहुत कुछ वर्णन किया है। जो मैंने राजा रावण के यहां, जो महर्षि लोमश मुनि ने अश्वमेध याग, कागभुषुण्ड इत्यादियों ने किया वह, उसी पोथी की एक पवित्र देन थी। परन्तु उसका कर्म काण्ड और वेदमन्त्र क्योंकि वे इसमें निहित है। तो इस प्रकार कर्मकाण्ड में भी महर्षि मार्कण्डेय मुनि महाराज अपने में एकोकी थे। उस काल में अपने में पूर्णत्तव की आभा में रमण करते रहते, परन्तु आज उस पोथी का समापन हुआ है। उस समापन के समय में मेरे प्यारे महानन्द जी मुझे कई काल से प्रेरणा देते चले जाते है। नाना प्रकार की प्रेरणा प्राप्त होती रहती थी। मैं यह कहा करता हूँ कि जिस साहित्य की प्रतिभा राष्ट्र और प्रजा समाज से ओझल हो जाती है, उस साहित्य का उद्बुद्ध होना, मानव को सार्थिकता में नहीं रहता। क्योंकि मैंने बहुत पुरातन काल में, अपने पुत्र से यह वर्णन किया। परन्तु उनकी प्रेरणा बारम्बार गतियाँ करती रहती है। अंग-संग हृदय में प्रवेश करती रहती है। क्योंकि संसार में यह जो हृदय है यह ब्रह्माण्ड का द्यौतक कहलाया गया है। हृदय ही संसार की प्रतिभा कहलाती है। हृदय में ही सर्वत्र परमाणु आते है, और आ करके उस स्थली पर विद्यमान होते है। वही परमाणु शिशु के रूप में, वही पुत्र के रूप में परिणत हो जाते है, वही परमाणु है जो विज्ञान के रूप में, यंत्रों के रूप में, परिणत हो जाते है। वही परमाणु अन्तरिक्ष में स्थिर रहते है, वायु उन परमाणुओं को प्रायः गति देती रहती है। 04.01.1983

583 लोकों की परिक्रमा

हे प्रभु! मैं जानना चाहता हूँ जब यह सूर्य नहीं होता और चन्द्रमा भी नहीं होता तो हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते है? उन्होंने कहा-हे राजन! जब यह सूर्य, चन्द्रमा नहीं होते, तो हम तारामण्डलों के प्रकाश से प्रकाशित होते है। इन तारामण्डलों का धीमा धीमा प्रकाश आ रहा है मानव अन्धकार में जा रहा है अपनी पगडण्डी को ग्रहण कर लेता है। वह धीमा-धीमा प्रकाश हमारे पगडण्डियों का पथप्रदर्शक कहलाता है। वह तारामण्डल एक ऐसा मण्डल क्या, तुम्हें प्रतीत होगा विज्ञान के युग में, जब दार्शनिकता में प्रवेश करते है, मेरी विज्ञानशाला में, विद्यालय में भी प्रायः इस प्रकार का अनुसंधान होता रहता है। याज्ञवल्क्य मुनि ने कहा-हे राजन! यह तारा मण्डल, कितना विशाल मण्डल है यह कितनी विचित्रता में रमण करने वाला है, जैसा हमारा यह पृथ्वी मण्डल है, जिस पृथ्वी पर हम वास करते है जैसा अभी हमारा यह पृथ्वी मण्डल है ऐसे ऐसे तीस लाख पृथ्वियाँ ही सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती है और जैसा यह सूर्य मण्डल है जिसमें तीस लाख पृथ्वियाँ इसकी परिक्रमा कर रही है ऐसे-ऐसे एक सहस्र सूर्य है जो बृहस्पति की परिक्रमा कर रहे है, एक सहस्र बृहस्पति है जो आरूणि मण्डल की परिक्रमा कर रहे है, एक सहस्र आरूणि मण्डल है जो ध्रुव मण्डल की परिक्रमा कर रहे है, एक सहस्र ध्रुव मण्डल है, जो एक सहस्र ध्रुव मण्डल स्वाति नक्षत्रों की परिक्रमा कर रहे है। एक सहस्र स्वाति नक्षत्र है, जो मूल नक्षत्र की परिक्रमा कर रहे है। एक सहस्र मूल नक्षत्र है, जो सोमकेतु मण्डल की परिक्रमा कर रहे है। एक सहस्र सोमकेतु मण्डल है जो अचंग मण्डलों की परिक्रमा कर रहे है। एक सहस्र अचंग मण्डल है, जो अचंग कृतियों की परिक्रमा कर रहे है, यह प्रभु का कितना विशाल मण्डल है। कितनी विशालता है इसमें, इतना अनन्तमयी ब्रह्माण्ड माना गया है। याज्ञवल्क्य मुनि कहते है हे राजन! यह प्रभु का विज्ञान इतना विशाल है, कि मानव उड़ान उड़ता रहता है, अन्त में वह मौन हो जाता है।इस ब्रह्माण्ड का कोई सूत्र है, लोक-लोकान्तर इसी सूत्र में पिरोएं हुए है, वह सूत्र विचित्र दृष्टिपात

आ रहा है। ऋषि कहता है कि नाना प्रकार के लोक-लोकान्तर आभा में गति, वह तारामण्डल बन करके मानव के नेत्रों का प्रकाश, मानव के नेत्रों का नेतृतव कर रहे हैं। 05.01.1983

584 अग्नि का प्रकाश

ऋषि कहता है हे राजन! यह नाना तारा मण्डल हमारे नेत्रों को प्रकाश देते है, धीमा-धीमा प्रकाश आ रहा है, पगडण्डी को ग्रहण कर रहे है। परन्तु, अपने पथ को प्राप्त कर रहा है प्राणी, वह तारामण्डलों का प्रकाश इस वाक् को पान करने वाले राजा, उनकी पत्नी रम्भा ने कहा हे प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ कि जब यह तारा मण्डल भी नहीं होते तो हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते है। उन्होंने कहा हे राजन! जब यह तारामण्डल नहीं होते उस समय, हम अग्नि के प्रकाश से प्रकाशमान होते है। अन्धकार छाया हुआ है मेरी प्यारी माता अपने गृह में प्रकाश कर लेती है, अग्नि के प्रकाश से गृह को प्रकाशित कर लेती है। यह अग्नि एक विचित्र आभा मानी गई है। इसी अग्नि में प्रत्येक मानव, अग्नि के प्रकाश से आभायित हो रहा है यही अग्नि जब यज्ञमान के समीप पहुंची तो यह देवताओं का मुख बन गया, यज्ञशाला में अग्नि प्रदीप्त की जा रही है, यज्ञमान आहुति दे रहा है, अग्नि का मुख बना करके वह देवताओं को हवि प्रदान कर रहे है। वही अग्नि जब यज्ञमान के द्वार से होती हुई, जब आयुर्वेदाचार्यो के समीप पहुंची तो पिच्चासी प्रकार की अग्नि का चयन आयुर्वेदाचार्यो ने किया। परन्तु जब यही अग्नि वैज्ञानिकों के मध्य में पहुंची तो उन्होंने पिच्चासी प्रकार की धारा, जो अग्नि की थी परन्तु जब उसका विभाजन किया वैज्ञानिकों ने जब विभाजन किया तो उसमें से अरबो, खरबों तरंगों का जन्म हो गया, अरबवीं खरबवी तरंग का जब विभाजन किया, तो उसमें से अरबों खरबों तरंगों का ओर निकास हुआ। हर तरंग के परमाणु वायुमण्डल में धाराओं के रूप में गति कर रहे है अन्तरिक्ष में ये परमाणु रहते हैं, वायु उनको गति देने वाला है।वह धारा अमृत हो रही है।

वेद का ऋषि कहता है हे राजन्! उस अग्नि का चयन करना है, जो अग्निगृह को प्रकाशित करती है जो अग्नि मानव के शरीर को प्रकाशित कर रही है, जो नेत्रों की द्यौतक बन करके प्रकाशमान, यह लोक लोकान्तर क्या, यह संसार उसी में तप रहा है, कुछ अग्नि काष्ठों में रहती है परन्तुयह अग्नि नाना रूपों में रमण करती, वैज्ञानिकों के रूपों में, वैज्ञानिकों के मस्तिष्कों में, वैज्ञानिक धाराओं में अणु और परमाणु के रूप में रहती है। 05.01.1983

585 राजा रावण के पुत्र मेघनाद

राजा रावण के पुत्र मेघनाद ने एक यन्त्र का निर्माण किया था त्रिपुरी के मध्य में, उनके यहां कुछ वैज्ञानिक सहयोगी थे, जिसमें तुरूस्वामकेतु एक वैज्ञानिक थे जिन्होंने अग्नि के परमाणु, जल के परमाणुओं का समन्वय किया और अग्नि की उसमें पुट लगाई। जब अग्नि और वायु की अस्वात आभा को ले करके अग्नि की पुट लगाई गई, तो वह यन्त्र ऐसा था, उस यन्त्र का यदि प्रवाह अन्तरिक्ष में या संग्राम या सेना में कर दिया है तो, नीचे जलाशय बन जाता है और ऊर्ध्वा में, नीचे जल और ऊर्ध्वा से अग्नि की वृष्टि प्रारम्भ हो जाती थी, सेना में रहने वाले युवक और क्षत्रिय मृत्यु के मुखारबिन्दु में परिणत हो जाते थे। 06.01.1983

586 व्रणीकाम स्वातकेतु यन्त्र

मेघनाद के यहां ऐसा यान, ऐसा यन्त्र था, यान भी था अैर यन्त्र भी था। चन्द्रमा इत्यादि लोकों की यात्रा करना उनके लिए बहुत स्वाभाविक था। परन्तु राजा रावण एक समय भ्रमण करते हुए वह कैलाशपति महाराजा शिव के द्वार पर पहुंचे। महाराज शिव और उनके समीप विद्यमान हो रहे थे, महाराज गणेश।, जब उनके समीप पहुंचे तो बहुत समय तक राजा रावण शिव के यहां बहुत-सी विद्याओं का अध्ययन करते रहे। उन्होंने यह वाक्, मैंने तुम्हें पुरातन काल में प्रगट किया। उनके यहां एक ऐसा यन्त्र था, राजा रावण, महाराजा गणेश और शिव इनकी सहायता के द्वारा एक यन्त्र का निर्माण हुआ था। जिस यन्त्र को महाराजा शिव ने उसकी, हृदय ग्राहिका का जन्म दिया और कहते है कि एक मानव आक्रमण कर रहा है, जब मानव पर मानव आक्रमण कर रहा था, वह कहता है अपनी पुकार से, मेरी कोई रक्षा करने वाला है, तो एक मानव कह रहा कि आ, जाओ, आ रहा हूँ। मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा। उसी का बल उसके हृदय में ग्रहित बन गया और वह बलिष्ठ हो करके उसमें बल आ गया, उसी आभा को ले करके, वह मानव कैसे सहायक बनता है, इसी आभा को ले करके महाराजा शिव और रावण ने, उस यन्त्र का निर्माण किया, जिस यन्त्र में यह विशेषता थी किसंग्राम हो रहा है, यहां संग्राम में शत्रु से विजय नहीं हो रहा है। क्योंकि वह यन्त्र उसे सहायता दे रहा है। उस यन्त्र को महाराजा शिव ने रावण को प्रदान किया। कि हे रावण! तुम इस यन्त्र को ले जाओ। 06.01.1983

587 शिव द्वारा रावण को विजयी यन्त्र

वृणीकाम स्वातकेतु यन्त्र को ले करके वहाँ से रावण अपने गृह में प्रवेश किया, भ्रमण करते, जब गृह में आए तो महारानी मन्दोदरी को समीप ले करके कहा कि देवी! हमें यह यन्त्र प्राप्त हुआ है। देवी ने कहा-बहुत प्रिय। तो वह जो उनका गृह था, जिस आसन पर वह आश्रित

रहते थे परन्तु, मध्य का जो उनका खम्ब था, उसमें यन्त्र को वर्तित किया गया। उसमें वह यन्त्र स्थिर कर दिया गया और उस यन्त्र में यह विशेषता थी कि रावण जब भी संग्राम में जाते, किसी थी जगह, स्थलियों पर, परन्तु उस यन्त्र का तारतम्य लगा और वह यन्त्र उसे सहायता देना प्रारम्भ कर देता था। यन्त्र के आने पर, राजा रावण के हृदय में ओर भी काल तक को विजय करने की भावना उसके हृदय में आ पहुंची। कि मैं काल को भी विजय कर सकता हूँ। मेरा काल भी नहीं है। इसी विवेचना को ले करके, वह अस्वातम बन गये, अभिमान की कोई मात्रा होती है, उस मात्रा से भी विशेष उसमें अभिमान आ गया क्योंकि संसार में अभिमान ही मानव मृत्यु में ले जाता है, मानव को मृत्यु के गृह में प्रवेश कर देता है क्योंकि परमपिता परमात्मा निर्राभमानी है। परमात्मा अभिमान में नहीं है। इसलिए जो मानव संसार में अभिमान करता है, वह अभिमान में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। 06.01.1983

588 राजा रावण राज्य में शोध

राजा रावण के यहां वैज्ञानिक आभाओं में सूर्य यान, सूर्य की किरणों के साथ यान गति करने वाला था। पूर्व काल में भी था, राजा रावण के काल में एक विशेष था। आयुर्वेद विज्ञान चन्द्र विज्ञान, सूर्य विज्ञान, उसके ऊपर उनका बड़ा अधिपथ्य रहता था। अणु शक्ति के ऊपर राजा रावण के यहां अनुसंधान होता रहता था, ब्रह्मास्त्र इस प्रकार के थे जिन ब्रह्मास्त्रों से वह राष्ट्र में, द्वितीय राष्ट्रों में अग्नि प्रदीप्त किया करते थे। 06.01.1983

589 राजा रावण को अभिमान

राजा रावण के यहाँ ऐसा शोध होता रहता था। पातालपुरी में राजा रावण के पुत्र अहिरावण राज करते थे। जब राज करते थे तो वह प्रजा में उन्हें सहर्ष अपना धिराज बनाया। परन्तु वह अधिराज ऊर्ध्वा में कर्म करते थे, क्रियाकलाप विचित्र होता रहता, उनके राष्ट्र में शान्ति की आभा में रमण करने वाला महाराजा! सुग्रीव के यहां एक शान्ता नामक एक कन्या थी। शान्ता नामक कन्या का संस्कार, महाराजा हनुमान से हुआ था। उनके यहां एक पुत्र का जन्म हुआ, पुत्र प्रबल होते ही, विद्यार्थी पने में ही, वह पातालपुरी में चला गया था पातालपुरी में वह शिक्षा अध्ययन करता रहा, जब वह शिक्षा अध्ययन करता रहा, तो वह कर्मठ थे, बलिष्ठ थे, ब्रह्मवर्चोसि का वह पुत्र था, सूर्य विज्ञान पर, उनका बहुत अधिपथ्य था। उनका पुत्र, अहिरावण का महामन्त्री के रूप में भी वह रहा।

अहिरावण के पिता के हृदय में अभिमान छा गया है, उन्होंने सम्पाति राष्ट्र को अपना लिया है और सम्पाति और गरूड़ वे विधाता थे जिनका पश्चात में जटायु नाम से उनका नामोच्चारण भी होता रहा। उनके राष्ट्र को, मेरे पिता ने अब अपना लिया है। ऐसी प्रवृत्ति जब उन्होंने स्वीकार की तो अहिरावण को महाकष्ट हुआ और उन्होंने एक पत्रिका अपने पिता को लेखनीबद्ध करके अपने पिता को प्रदान की और रावण ने जब इस पत्रिका के अपने नेत्रों से निहारा तो उन्हें यह प्रतीत हुआ कि अहिरावण धर्मात्मा बनना चाहता है। राष्ट्र में धर्मात्मा बन गया। परन्तु मैंने जो किया है वह अपने स्वाभिमान से किया है।उन्होंने अपने पिता को पत्र का अस्वत किया परन्तु पिता ने उनके वाक् को उस रूप में स्वीकार नहीं किया। जिस रूप से पुत्र ने लेखनीबद्ध की थी। तो अहिरावण को यह प्रतीत हुआ कि तुम्हारा जो पितर है, वह मद में है।वह राष्ट्र के अन्धकार में अन्धकारित हो गया है। अहिरावण ने यह वाक् स्वीकार किया, परन्तु वह मौन हो गएं। 06.01.1983

590 वैज्ञानिक अहिरावण

विज्ञान वहां भी पराकाष्ठा पर था, अहिरावण के यहां पर भी ऐसी एक शक्ति थी कि मानव के स्वरों के साथ में उस शक्ति को लाना, तो वह मूर्छित हो जाती थी। समाज का समाज मूर्छित हो जाता था।ऐसे यान उनके यहां थे, कि वह चन्द्रमा की यात्रा में मंगल और बुध की यात्रा करते रहते थे।

महाराजा खरदूषण उनके सेनापति थे। सुरसामहाराजा सम्पाति से जो सुन्ध नामक राष्ट्र उन्होंने अपनाया था वह उसको अध्यक्षता के रूप में, उस राष्ट्र की अध्यक्षता करती रही। सुरसा श्वाम भानु उनके यहां एक वैज्ञानिक, विज्ञान में रहते थे जिन्होंने सूर्य की किरण के साथयन्त्र गति करता था, वह श्वानू नामक जो वैज्ञानिक थे, यह सुरसा उनकी पुत्री थी। उनकी कन्या थी, यह बड़ी कुशल, अपने में कुशलता को प्राप्त होती रहती थी। 06.01.1983

591 महाराजा कुम्भकरण

तो इसी प्रकार इनके राष्ट्र का क्रियाकलाप लंकेश बन करके वह अश्वत बनाया। जिसकोमहाराजा कुम्भकरण कहते है, उनका जीवन इतना पवित्र रहा, वह हिंसा में विश्वास नहीं करते थे, उनका अंहिसा में अटूट विश्वास था। आहार करते थे वैज्ञानिकों को भी यही शिक्षा देते थे। परन्तु जब यह दृष्टिपात किया कि हमारा तो राष्ट्र अभ्रशं हो गया है। मेरा पिता, पिता के तुल्यविधाता जैसे पुत्र पिता से दुखित हो गए है। उसी आभा में वह भी उसी की गति में गति करने लगे। एक समय उनकी पत्नी रम्भातकेतु ने कहा-हे प्रभु! आप के जीवन की जो दशा है, वह भिन्न बन गई है। उन्होंने कहा कि हां देवी! भिन्न बन गई है, मैं जान रहा हूँ। परन्तु वायुमण्डल, राष्ट्र का दूषित हो गया है। क्योंकि जेठे

विधाता के दूषित होने पर। परन्तु देवी ने कहा-प्रभु! आप इस प्रकार दूषित क्यों हो रहे हैं?आप दूषित न हुईए। 06.01.1983

592 तप की मीमांसा

देवी ने कहा-प्रभु! मैं जब विद्यालय में अध्ययन करती थी तो मेरे आचार्य यह कहा करते थे कि जब मानव की प्रकृति के गर्भ में जाने के पश्चात उसकी दशा द्रव्य की लोलुपता में भरण हो जाए, और नास्तिक हो जाए, नेत्रों में हीनता आ जाए, तो उस समय उस मानव को तपस्या करनी चाहिए।तप करना चाहिए। वे बोले की देवी! तुम्हारे गुरु ने तप की मीमांसा क्या की है? उन्होंने कहा-प्रभु! तप की जो उन्होंने मीमांसा की है, वह यह की है कि इन इन्द्रियाँ का जो सारथी मन है, उस मन को पवित्र बनाने के लिए अपने विचार अश्वानो को, उनको मौन हो करके, इन्द्रियों के विषयों को हृदय में परिणत करके और मौन हो करके चिन्तन करना चाहिए। इसलिए मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने तप की मीमांसा की है और भी उन्होंने कहा है कि हमजनता में, जनार्दन में कोई चेतना को दृष्टिपात करने लगे या जिस विज्ञान को आप ने जाना है, जिस विज्ञान की प्रतिभा को जाना है जिस गति को जाना है पंच रूपों में जो गतियाँ हो रही है उसमें जो एक विशेष गति है उसका नाम ब्रह्म उच्चारण कर देना चाहिए। तो उससे भी हमारा कार्य, हम उसमें शुद्ध रूप में विशुद्धता को प्राप्त कर सकते है।

महाराजा कुम्भकरण ने कहा-देवी!-वाक् तो तुम्हारा प्रिय है, तुम्हारे गुरू ने व्याख्या तो की है परन्तु मेरी व्याख्या यह है इस सम्बन्ध में, क्या प्रकृतिवाद में रत्त रहने से, जो परमाणुवाद में उड़ान उड़ने लगता है उसे ओर कोई दृष्टिपात नहीं आता।वह गति को भी परमाणुवाद में ही रत्त रहने लगता है। तो इस प्रकार उन्होंने अपनी पत्नी के वाक्यों को उस रूप में नहीं स्वीकार किया, जिस रूप में उसे स्वीकार करना था। परन्तु उसे उनका जीवन, वह पत्नी भी मौन हो गई, वह अपने प्रभु से यह कहती रहती हे प्रभु! यह कैसा नृत्त हो रहा है। मेरे नेत्रों के समीप यह कैसा नृत्त हो रहा है, मैं इसको स्वीकार नहीं कर पा रही हूँ। क्योंकि संसार में, सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके कोई भी काल हो, कोई मेरी पुत्री यह नहीं चाहती क, मेरे पति में किसी प्रकार की दूषितता हो, वह सदैव यह चाहती है कि मेरे पति का आहार व्यवहार ब्रह्मवर्चोसि बुद्धिमता, ब्रह्मवेत्ता सर्वत्र गुणों को वह दृष्टिपात करना चाहती है, यौगिकवाद में भी देवी अपने पति की सहायक बन जाती है, सहायक बन करके योग में परिणत करा देती है। परन्तु कोई मेरी पुत्री ऐसी नहीं हुई अब तक, जो किसी प्रकार की दूषितता को वह दृष्टिपात करने वाली हो। वह सदैव प्रभु से यह आन्तरिक प्रार्थना करती रहती है कि मेरा गृह, मेरा जीवन उस काल में स्वर्ग बनेगा जबकि मेरे जो पति देव है उनके हृदय में एक ज्ञान का, विज्ञान का, यौगिकवाद का और प्रभु के मनन और चिन्तन करने का प्रवाह गति करता रहेगा।

तो इस प्रकार वह सदैव उपासना में रत्त रहती है, परन्तु, महाराजा कुम्भकरण अपने में आलस्य और प्रमाद में परिणत हो गये, आलस्य, प्रमाद में हो गये, उनका अन्नाद दूषित हो गया, उनके आहार भी दूषित हो गया, दूषित होने पर हिमालय में रहते, कही विद्यालयों में रहते, कही आलस्य में, कही सुस्त रहते। तो इस प्रकार उनकी विचारधारा बनने लगी। बनने कामूल कारण उनके विधाता थे। उनका मूल कारणजन समूह का जो प्रवाह था, उसमें जो जन समूह में जो प्रतिष्ठा हो रही थी, उस प्रतिष्ठा को वह अपने में सहन नहीं कर सके। 06.01.1983

593 महाराजा विभीषण

तृतीय विधाता विभीषण, प्रभु के चिन्तन में रहते थे, वह यह विचारते थे कि इस प्रकार इनका नृत्त हो रहा है, तो इस नृत्त के प्रवाह में अपने जीवन को समाप्त न करूँ। वह सदैव अपने में मंगल में रहते थे, महाराजा विभीषण जी की पत्नी का नाम रीचकेतु था रीचकेतु उनकी पत्नी जो मान्धाता के पौत्राणि गच्छतं रेवकेतु मुनि महाराज की कन्या थी, वेदोनों प्रभु का चिन्तन करते आहार और व्यवहारों में दोनों में, एक पवित्रता की धारा प्रवाह से गति करती थी। तो वह सदैव अपने राष्ट्र के लिए कामना करते रहते, प्रभु का चिन्तन, याग नित्यप्रति किया करते थे, क्योंकि देवपूजा करना, ब्रह्मयाग करना यह मानव का क्रियाकलाप परम्परागतों से ही, मानवीय क्षेत्र में चला आ रह है। 06.01.1983

594 रावण द्वारा ऋषियों पर कर

तोयह विचार इसलिए दे रहे है कि तुम्हारे हृदय की जो प्रेरणा हमें बाध्य करती रहती है। इस प्रकार उनके जीवन का क्रियाकलाप, राष्ट्र का जीवन चलता रहा। परन्तु राष्ट्र में एक दूसरे की आभा में दूषितपना आने लगा। जब दूषितपना आने लगा, तो एक समय राजा रावण ने ऋषि-मुनियों की एक सभा की और ऋषि-मुनियों को जो महान तपस्वी थे उन पर कर की विवेचना की। राजा रावण ने कहा कि जो भी मेरे राष्ट्र में रहता है, उसे राष्ट्रीय कर देना चाहिए। उसे राष्ट्रीय ऋण देना चाहिए। क्योंकि उसके ऊपर राष्ट्र का ऋण है, वह जो भी आहार कर रहा है, वह राष्ट्र का कर रहा है। जो भी पृथ्वी के गर्भ से जन्म होता है, चाहे वह खाद्य हो, चाहे वह खनिज हो, परन्तु जो उसको पान करने वाला है, उसे राष्ट्र का ऋण देना चाहिए। राष्ट्रीय ऋणों में परिणत हो गये। एक समय ऋषि-मुनियों पर राष्ट्रीय ऋण कहा था यहां तक

विवेचना, इतनी कायरता राजा रावण के जीवन में आई, कि ऋषि-मुनियों के माष को अंगों में से प्रदान करके ऋण में, अपने में स्वीकार करने लगा। 06.01.1983

595 व्यवसायी राजा रावण

तो इस प्रकार की हीनता के आने के कारण लंका का राष्ट्र दूषित हो गया। दूषित होने पर अब राजा रावण ने एक समय अपने राष्ट्र में एक सभा की और उस सभा में जितने भी कलाकार जितने भी तन्तु विचारधारा के प्राणी थे, जो अपना व्यवसाय करने वाले थे, उन्हें एकत्रित किया। राजा का राष्ट्र व्यवसायी बन गया और व्यवसायी कैसा बन गया, कि द्रव्य हीनं ब्रह्मा द्रव्यपति होते हुए, उनके हृदयों में चिन्ता स्थापित हो गई। क्योंकि राष्ट्र जब व्यवसायी बन जाता है तो, जो उद्योग का स्वामी बन जाता है, उद्योगपति बन जाता है उस समय जानो कि राष्ट्र में, प्रजा के वैभव को संग्रह करने वाला राष्ट्र बन जाता है और जब संग्रह करने लगता है तो प्रजा में अशान्ति आ जाती है। उस अशान्ति के मूल में, उसके पिछले विभाग में रक्त भरी क्रान्ति बहती रहती है। तो, इस प्रकार राजा रावण का राष्ट्र व्यवसायी बन गया। यन्त्रों को लाना जाना, यातायात अस्वाक करनायन्त्रों को द्वितीय राष्ट्र में प्रदान करना, वहां से यन्त्रों को लाना, जितना भी उद्योग उनका था वह सब, राजा रावण के राष्ट्र और भुजों में आ गया। जितना विज्ञान जो स्वतंत्रता से विज्ञान के ऊपर मानव अपनी टिप्पणियाँ कर रहा था। राजा रावण के राष्ट्र में क्रियाकलाप कर रहा था, वह भी उनको दण्डित किया जाने लगा। औरउसका स्वामीतव राष्ट्र बन गया। इस प्रकार का नियम बन गया तो एक समय विभीषण और उनको पत्नी राजा रावण के कक्ष में जा पहुंचे। राजा रावण ने कहा-आओ, वह विराजमान हो गएं। दोनों ने नतमस्तिष्क हो करके कहा हे प्रभु! आप हमारे जेठे पिता है, जेठे विधाता है। विधाता है, तो पिता है। परन्तु आप राष्ट्र के भी पिता है। हम राष्ट्र की प्रजा के समतुल्य है। परन्तुराष्ट्र में जो क्रियाकलाप हो रहा है वह हमें प्रिय नहीं लग रहा है। रावण ने कहा-तुम्हें प्रिय क्यों नहीं लग रहा है? उन्होंने कहा-प्रभु! जो आपको जीवन सात्विक और महानता में है, उसी जीवन को लाने से राष्ट्र का कल्याण हो सकता है और तुम्हारा भी, और हमारा भी कल्याण उसी में होगा। हमारे जो महापिता पुलस्त्य ऋषि महाराजा थे, वह पाण्डितव की दृष्टि से महान और पवित्र कहलाए जाते थे। उनका ऋषि मुनियों में बड़ा नामोकरण था, ऋषि मुनियों की कोई सभा होती तो नामो का उद्घोष किया जाता था। परन्तु आज हमारे ही, हम जब उनके पडपौत्र है, पौत्र है, परन्तु हम जब ऋषि-मुनियों के मांषो तक का ऋण ले लेते है, राष्ट्रों को नामो घोषित करके, तो हम जैसा दूषित कौन होगा। 06.01.1983

596 महर्षि भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला

बिन्दु, ब्रह्माण्ड के रूप में परिणत होता है, वहीं बिन्दु है जो मानव का शरीर एक सूक्ष्म ब्रह्माण्ड के रूप में हैं, सूर्य को वह जानता है, चन्द्रमा को जानता है, नक्षत्रों को जानता है, लोक-लोकान्तरों को जानता है कैसे जानता है? महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ कागभुषुण्ड जी जब ब्रह्मचारिणी शबरी और ब्रह्मचारी सुकेता से जब इनका मिलान हुआ, तो ब्रह्मचारिणी शबरी और ब्रह्मचारी सुकेता दोनो अन्तरिक्ष में तारा मण्डलों की गणाना कर रहे थे, वह, भारद्वाज की विज्ञानशाला में, वह तारामण्डलों की गणना कर रहे थे, तो जब कागभुषुण्ड जी पंहुचे, तो कागभुषण्ड जी ने भी लोक-लोकान्तरों की गणना करने लगे, जब गणना करने लगे, गणना में लग गएं, तो एक आकाश गंगा कहलाती है, जिसको हमारे आचार्यों ने निहारिका के रूप में परिणत किया है जब उसकी गणना करने लगे, एक नहीं नाना लोक-लोकान्तरों की गणना करने लगे, तो ऐसा वेद का आचार्य वेद के मन्त्र को ले करके कह रहा थाउस देवता के, जो ब्रह्माण्ड में स्थिर रहने वाला वह ब्रह्म हैं। लोकों की जब गणना करने लगे, तो उन्होंने बहत्तर लाख सूर्य गणना में लाए तो बहत्तर लाख शनि गणना में लाने लगे, जब बहत्तर-बहत्तर लाखों की गणना करने लगे, तो जब वह ध्रुव के सम्मुख पंहुचे, तो वह भी निहारिका में, बहत्तर लाख ही प्रतीत होने लगे तो जब वह बहत्तर लाख प्रतीत हुए तो सूर्य अरबों खरबों दृष्टिपात होने लगे परन्तु जब सूर्य अरबों खरबों दृष्टिपात हुए तो शनि शनि भी ऐसे ही दृष्टिपात होने लगे, तो, जब वह गणना करते रहे, तो अन्त में वह मौन हो करके जब असंख्य गणना के रूप ही समाप्त हो गएं। तो वहाँ उस बिन्दु पर जा करके वह ऋषि एकत्रित हो गया और जब वह अपने में सहन करने लगे, और यह कहा कि आगे तो गणना ही समाप्त है तो प्रभु का ब्रह्माण्ड, यह कितना महान है, परन्तु इससे हमें यह सिद्ध हुआ है, कि मानव के शरीर में, इन प्रत्येक लोक-लोकान्तरों की प्रतिभा विद्यमान हैं, उनका परमाणु रूप में, उनका अणु रूप में, माता के गर्भस्थल में, जब निर्माण होता है, तो जहाँ मौन होने की अवस्थिति आ जाती है, नेति नेति कह करके मानव मौन हो जाता है तो वह अवस्थिति भीउसके गर्भ में उसकी रचना होती है।

तो कैसे ब्रह्माण्ड की रचना, माता के गर्भस्थल में निर्माणित होती है, जिसके ऊपर अनुसन्धान करने वाले, अनुसन्धान में मौन हो जाते हैं। गणना करते-करते गणना का बिन्दु ही समाप्त हो जाता है।

तो महर्षि कागभुषुण्ड जी ने, भारद्वाज के यहाँ, इतने विशाल यन्त्रों का दृष्टिपात किया, तो आश्चर्य चकित भी हो गएं तो हम अपने में यह स्वीकार करें, कि यह जो प्रभु का ब्रह्माण्ड है, अथवा विज्ञानमयी जगत है, यह बड़ा विशाल है, बड़ी विशालता को लेता हुआ, मानव

पिण्ड की रचना होती है, उस रचना को, माता के गर्भस्थल में जिसको वह वसुन्धरा कहता है, परन्तु वही माता के गर्भ में परमाणुओं से उनका पिण्ड बन करके नाना लोक-लोकान्तरों की तरंगो का पिण्ड बनकर के बाह्य जगत में, इस माता पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश कर जाता है। माता पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करके, अनुसन्धानशाला का निर्माण करता है, कही विज्ञानशाला का निर्माण करता है, कहीं याग कर्म करने लगता है। 16.01.1983

597 महर्षिकाग भुषुण्ड

कागभुषुण्ड जी ने एक पोथी का निर्माण किया था, बहुत पुरातन काल में, त्रेता के काल में और लाखों वर्षों पूर्व निर्माण किया था। कागभुषुण्ड जी ने, जिस पोथी का नाम था चन्द्रायणनकृत पोथी। चन्द्रमा के ऊपर वह अनुसन्धान करते थे और कहते थे कि सूर्य की किरणों से चन्द्रमा प्रकाश लेता है। चन्द्रमा का अपना कोई प्रकाश नहीं है। सूर्य द्यौ से प्रकाश लेता है और वहीं प्रकाश चन्द्रमा को कृत करता है। चन्द्रमा अपनी कलाओं से, द्वितीय कला, तृतीय कला, पूर्णिमा के दिवस वह पूर्ण हो जाता है। वह लोकों की छाया में रहता है उतनी ही किरण जाती रहती है, उतना वह बलवती होता रहता है। तो उन्होंने सार्वभौम सिद्धांत की चर्चाएं कीं। उन्होंने एक वाक्य यह कहा कि वह जो चन्द्रमा है वह सूर्य से सहायता लेता है और उन्होंने कहा था कि शनि-मण्डल है उस शनि मण्डल को लगभग पिचासी चन्द्रमा हैं जो उसे चन्द्रित करते रहे हैं। एक रोहिणीकेतु मण्डल की उन्होंने चर्चा की, उसको लगभग बहत्तर सूर्य एक ही मण्डल को प्रकाशित करते हैं। इस प्रकार का विज्ञान महर्षि कागभुषुण्ड जी ने वर्णन किया। कागभुषुण्ड जी रेणकेतु प्रवाहण ऋषि के पुत्र थे। रेणकेतु प्रवाहण ऋषि अंगिरस गोत्र में हुए। एक प्रवाहण ऋषि माता मल्दालसा के पुत्र थे। यह प्रवाहण अंगिरस गोत्रीय, प्रवाहण ऋषि के पुत्र कहलाते थे। जब बाल्यकाल में माता की लोरियों में वह पनपता रहा तो माता उसे शिक्षा देती रहती थी और यह कहती रहती, हे बालक! जैसे यह काग कितना महान् अपने में विश्वसनीय कहलाता है इसी प्रकार तुझे भी अपने को ऊंचा बनाना है और इतनाही विश्वसनीय बनना है। क्योंकि काग जो पक्षी है जैसे वह अपने में उड़ान उड़ता रहता है इसी उड़ान के ऊपर काग भुजण्ड जी ने एक यन्त्र का निर्माण किया था, कागाम् चथवेतु यन्त्र यह यन्त्र उन्होंने जब काग पक्षी गति कर रहा था वायु के साथ, वायु वेद में गति कर रही है और वह वायु के समक्ष उड़ान उड़ रहा है उसी उड़ान के साथ एक यन्त्र का उन्होंने निर्माण किया। पक्षी की प्रेरणा, हृदय की प्रेरणा, दोनों का मिलान हुआ और मिलान होने से उन्होंने यन्त्र का निर्माण किया, वह उड़ान उड़ करके वायुमण्डल में गति करते रहते थे। तो ऐसे कागभुषुण्ड जी थे जिनका यह जो वर्तमान का काल चल रहा है इसमें उन्हें पक्षी की संज्ञा प्रदान की जाती है। हमारे यहाँ लोमश इत्यादि ऋषिवर और कागभुषुण्ड जी के जीवन में ओर भी नाना वाक्य आते रहते हैं।

यहाँ रावण के साहित्य, उस काल के साहित्य से दृष्टिपात होता रहता है। सम्पत्ति को हमारे यहाँ आकृतियों की संज्ञा प्रदान की जाती है, गरुड़ जिन्होंने रावण इत्यादि से संग्राम किया उन्हें भी पक्षी की संज्ञा प्रदान की जाती हैं यह क्यों की जाती है? क्योंकि वह पक्षी की भांति अपने यन्त्रों में विद्यमान हो करके अन्तरिक्ष में गति करते रहते थे, वह वैज्ञानिक थे। सम्पाति तो समुद्र के किनारे संयत रहता था और सुरसा नामक, जब सम्पाति को राजा रावण ने विजय कर लिया था, तो सुरसा उनके राष्ट्र जो समुद्र के तट पर था, उस राष्ट्र की वह धिराज बन करके रही। 02.03.1983

598 सुषुप्ति काल

ब्रह्माण्ड में कैसे गतियाँ हो रही हैं, लोक कैसे अपने एक दूसरे लोक और मण्डलों को सहायता दे रहा है? सहायक बना हुआ है?, ब्रह्माण्ड का अध्ययन करने के पश्चात मानव को स्वतः अपना अध्ययन करना चाहिए, मानव जब अध्ययनशाला में प्रवेश करता है, एक अध्ययन करने की भी एक शाला होती है और वह शाला क्या है? वह निद्रा की गोद में जाता है। मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार अपनी साम्यवस्था में परिणत हो जाता है, उसी को सुषुप्ति काल कहते हैं। परन्तु जब हम सुषुप्ति काल को विचारने लगते हैं। यह क्या है, जिसमें अपने में सुखद अनुभव कर रहा है, आनन्द अनुभव कर रह है, ऐसा क्या अभृत कहलाया जाता है? 13.03.1983

599 चित्त मण्डल में ब्रह्माण्ड

हमारे यहाँ अंगिरा गोत्र में, नाना ऋषि हुए हैं, अंगिरस गोत्र में एक श्वेत नामक ऋषि हुए हैं। वे श्वेत नामक ऋषि के हृदय में यहअध्ययन करने की प्रवृत्ति जागरूक हो गई। एक समय अपने आसन पर विद्यमान थे, एक वेदमन्त्र उन्हें स्मरण आया, चित्रं रथं प्रमाणः गतौ दिव्यं ब्रह्मा सम्भो देवाः वेद की आख्यायिका एक स्मरण आई कि हम इस वेदमन्त्र के ऊपर अध्ययन करें। तो वेदमन्त्र यह कह रहा था कि हे मानव! तू अपने चित्तमण्डल को जानने का प्रयास कर। यह जो चित्त-मण्डल है, इसमें ब्रह्माण्ड का चित्रण चित्रित होता रहता हैं यह जो संसार का जितना भी दृष्टि देवतव है, लोक-लोकान्तर की जो छाया है वह सर्वत्र चित्त में विद्यमान रहती है, क्योंकि मानव का जो चित्त है, चित्त नाम पृथ्वी को माना गया है। इस पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार का चित्त-मण्डल विराजमान है। नाना प्रकार के अंकुर विद्यमान होते

हैं। वह अंकुर अपने समय-समय पर जागरूक होते रहते हैं। इसी प्रकार मानव के शरीर में भी जो चित्त नाम का स्थान है, उसमें संस्कार रूपी अंकुर विराजमान हैं जो समय-समय पर उपजते रहते हैं और मानव अपने में क्रिया-कलाप करता रहता है। 13.03.1983

600 चित्त स्थली पृथ्वी

वेद के ऋषियों ने और आगे चिन्तन करने वालों ने कहा है, चित्त को जानना चाहिए, इस पृथ्वी मण्डल को जान लेने में हमारा, बाह्य अध्ययन होता है।

जब बाह्य अध्ययन करना प्रारम्भ करता है तो ऋषि ने श्वेत ने एक समय अध्ययन करने के लिए तत्पर हो गए, अध्ययन करने लगे कि बाह्य जगत में ये जो पृथ्वी है यह चित्तस्थली बनी हुई है। नाना प्रकार के बीजों का रूपांतर होता रहता है, अंकुर रूपों से इसकी जीवन शक्ति में वह विद्यमान है। वह जो जीवन-शक्ति में विद्यमान है वह अग्रह कहलाता है। स्वर्ण है, स्वर्ण के आभूषण बन जाते हैं परन्तु वही आभूषण बन करके, कर्णों में विद्यमान होते हैं। जब वह कर्णों में विद्यमान हो जाते हैं, तो वह उसी आभा में परिणत हो जाते हैं। उसी किरणों में वह समर्पित हो जाते हैं। जो पृथ्वी के आँगन में प्रवेश हो करके, किरणों के द्वारा एक रूपांतर होता रहता है। इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु का रूपांतर हो जाता है। परन्तु निर्माण हुआ है, उसका उपयोग हो गया है, उपयोग के पश्चात उसका सूक्ष्म रूप निर्माणित हो गया है, सूक्ष्म रूप बन करके उसी स्थली में प्रवेश कर गया है। जहाँ से वह परमाणुवाद आया था, वहीं उसका रूपांतर हो करके अपने स्वरूप में प्रवेश करता रहता हैं। 13.03.1983

601 चित्त का मूल

अंगिरस गोत्र के ऋषि चिन्तन कर रहे थे, और चिन्तन करते हुए अपनी आभा में वह परिणत हो रहे थे। उनका अध्ययन करने का जो माध्यम बना वह पृथ्वी बन गया। किपृथ्वी के गर्भ में क्या है? तो वह अपनी शान्त मुद्रा में विद्यमान हो करके, वह शान्त मुद्रा में आभा में रमण करने लगे और अपने चित्त-मण्डल को प्राण से समन्वय करना चाहते थे। जब वह प्राणों में समन्वय करना चाहते थे, तो एक समय वह भ्रमण करते हुए महर्षि सुधनकेतु ऋषि के द्वार पर पहुंचे। सुधनकेतु ऋषि महाराज ने कहा, आइए ऋषिवर! पधारिए। ऋषि विद्यमान हो गए। ऋषि ने कहा, कहो ऋषिवर! आज कैसे आगमन हुआ? उन्होंने कहा, प्रभु! यह वेदमन्त्र है और वेदमन्त्र यह कहा रहा है कि चित्तं ब्रह्मः प्राणं ब्रहे सम्भवः चित्रोरथाः आज मैं उस चित्त के रथ को जानना चाहता हूँ जिस चित्त के रथ पर शब्द या संस्कार विद्यमान हो करके, अंकुर बन जाता है। अंकुर बन करके वह पौधे के रूप में परिणत हो जाता है। वही विशाल बन जाता है। हे प्रभु! मैं यह जानना चाहता हूँ कि मैं चित्त के मण्डल को चित्त के मूल को जानना चाहता हूँ? परन्तु सुधनकेतु ऋषि ने कहा कि हे अंगिरस गोत्र में जन्म लेने वाले ऋषिवर! क्या यह वाक् कैसे निर्णय हो? उन्होंने कहा, प्रभु! मुझे किसी प्रकार इसका समाधान कीजिए। 13.03.1983

602 पंचीकरण

परमपिता परमात्मा नेमाता के गर्भस्थल में, जब मानव का निर्माण किया, तो उस मानव का भी पंचीकरण किया गया और वह पंचीकरण होता हुआ, पंचीकरणों में उसकी आभा विद्यमान हो गई। वह पंचीकरण क्या है?पंचीकरण, पंचमहाभूतों का रहता है, इसी प्रकार मानव के शरीर में भी जब रचनाकार ने रचना की, तो वह पंचीकरण के आधार पर हुई। क्योंकि पंच कोणो वाला पंचमहाभूतों वाला, यह जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है, यह इसमें पंचमहाभूत हैं। 13.03.1983

603 मुद्रा से स्वयं का बोध

तो, ऋषि विचारने लगे, ऋषियों ने अध्ययन किया कि साधना के क्षेत्र में चले जाओ। तो अंगिरस गोत्र में रहने वाले ब्रह्मचारी शान्त मुद्रा में मुद्रित हो गएं और नेत्रों को मुद्रित किया, घ्राण को मुद्रित किया, घ्राण और, तो जबघ्राण को मुद्रित करने लगे, रसना को मुद्रित किया और त्वचा को मुद्रित करते हुएइसके ऊपर वह गम्भीर अध्ययन करने लगे। वह गम्भीर मुद्रा में प्रवेश कर गए। तो उन्होंने अपनी इन्द्रियों को जानने का प्रयास किया। अपने उस पंचीकरण को जानने का प्रयास किया कि पंचीकरण क्या है? जिसके ऊपर मुझे प्रायः अध्ययन करना है। तो वह मुद्रित हो करके ऋषि ने यह कहा, कि भगवन! मुद्रित होना, यह आपका बहुत प्रियतम है। यह अपना स्वतः अध्ययन है, चित्त के मण्डल को जानने के लिए, मन की प्रतिभा को जानने के लिए, परमात्मा के भव्य जगत को जानने के लिए, मानव को मुद्रित हो जाना चाहिए।

मुद्रित का अभिप्रायः क्या है? इस हमारे मानव शरीर में, यह जो पंचीकरण हो रहा है, एक-दूसरे से मिलान करना है, एक दूसरे से मिलान करने सेचित्त की प्रवृत्ति बनती है। मन और प्राण की प्रवृत्ति बन जाती है। जब मन और प्राण की एक सूत्र में प्रवृत्ति बनती है, तो उसके बनने के पश्चात वह मुद्रित होता है। बाह्य जगत से वह नाना प्रकार के बंधनों से अवक्रण हो करके, सूक्ष्म मूलक बन करके सूक्ष्म क्षेत्र में प्रवेश करता है, जहाँ प्रवेश करने के पश्चात, वह मुद्रित हो करके और वह अपनी आभा में अपनी महानता में सफलता को प्रायः प्राप्त हो

जाता है। 13.03.1983

604 पार्थिव तत्व में चित्त

तो अंगीरस गोत्र में होने वाले, ब्रह्मचारी ने वहाँ से गमन करते हुए मुद्रित हो गए, शान्त मुद्रा में विद्यमान हो करके और अपनी पांचों इन्द्रियों को पंचीकरण करते हुए, इसके ऊपर प्रायः अनुसन्धान किया और विचारा यह गया कि पार्थिव तत्त्व में ही चित्त विद्यमान रहता है। जहाँ मानव के शरीर में पार्थिव तत्त्व हैं, वहीं चित्त का मण्डल बना हुआ है, उसी को चित्त कहते हैं परन्तु उस चित्त में जो गति आती है वह प्राण की है और वह जो शब्दावली आती है, ध्वनि आ रही है, वह हमारे यहाँ श्रोत्रों की है और जो अप्रतम् शब्दों की ध्वनियाँ हैं, समूह रूद्र कहलाया जाता है शब्द, उस प्राण से उत्पन्न हो करके वह रसना से मिलान करते हुए, आभा में रमण करते हुए मानव के हृदय में वह मुद्रित हो जाती है।

हृदय ही इस संसार का इस ब्रह्माण्ड की कुंजी कहलाती है, जिस कुंजी को जानने के लिए मानव परम्परागतों से ही, प्रायः अनुसन्धान करता रहा है और विचारता रहा है कि मुझे मुद्रित हो करके अपनेपन में ही नहीं सीमित रहना है, मुझे ऊर्ध्वा में, परमात्मा के राष्ट्र में गमन करना है। 13.03.1983

605 चित्त में संस्कार

अंगिरस गोत्र के ऋषिवर भयंकर वन में चले गए, चिन्तन करते हुए, मुद्रित होते हुए, वेद के ऊपर अध्ययन करते हुए, एक-एक वेदमन्त्र के ऊपर उनका बड़ा अनुसन्धान और उनकी विचारधारा गम्भीर हृदय में प्रवेश होना ही उनकी आभावत कहलायी जाती है। तो मानव को अपने चित्तमण्डल को जानना चाहिए। जिस चित्त मण्डल में नाना संस्कार विद्यमान रहते हैं। हृदय में नाना प्रकार की स्मरण शक्ति के रूप में विद्यमान होने वाला एक अभ्याहत कहलाने वाला गतिशील होता रहता है।

तो ऋषि-मुनियों ने इस चित्त के क्षेत्र को जानने के लिए, बहुत प्रयास किया। अध्ययन करना प्रारम्भ किया, और वह अध्ययन, प्रतिक्रियाएं, अध्ययन में अश्व अप्रात होते हुए पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश कर गएं। पृथ्वी के गर्भस्थल में, अग्नि प्रचण्ड हो करके तपा रही है। इसी प्रकार जब वह अपनी हृदयस्थली में, जब पार्थिव तत्त्वों में पहुंचे तो कहीं प्राण लिए हुए हैं, कहीं घ्राण, शब्द लिए हुए है, कहीं प्रीति ले रही है। एक दूसरे परमाणु का मिलान होता हुआ वह चित्त मण्डल बन करके वह स्मरण शक्ति का एक केन्द्र बन जाता है और उसका समन्वय हृदय से रहता है। हृदय का सम्बन्ध, वह उस परमपिता परमात्मा के भव्य हृदय से रहता है जिस परमपिता परमात्मा ने इस संसार रूपी जगत का निर्माण किया।

वह जो भव्यता, चित्त के मण्डल को जानना चाहते हो, जिसमें संसार विद्यमान रहता है, जिसमें यह ब्रह्माण्ड विद्यमान रहता है जिसमें चैतन्य और जड़ जगत दोनों विद्यमान रह करके, विज्ञान के क्षेत्र में चला जाता है। आध्यात्मिक विज्ञान में रमण करता हुआ, वह भौतिक विज्ञान से दूरी होता हुआ, वह अपने में अपनेपन को प्राप्त करता रहता है। 13.03.1983

606 आहार से मन

तो वह जो चित्त का मण्डल है, वह जो चित्त की प्रतिभा है, चित्त का जो मण्डल है, उसको जानने के लिए मानव परम्परा से अनुसन्धान करता रहा है। वह चित्त क्या है? जिसमें संसार विद्यमान रहता है। एक मानव अपनी स्थली पर विद्यमान हो करके वह चक्षु की प्रतिभा को, इस मस्तिष्क की आभा को, जान करके, वह परमात्मा के भव्य जगत को जब दृष्टिपात करने लगता है तो यह संसार उसके लिए एक खिलवाड़ बन जाता है। विज्ञान के क्षेत्र में जाता है तो विज्ञान एक खिलवाड़ दृष्टिपात होने लगता है। परन्तु वह अपने क्षेत्र में इतनी सफलता को प्राप्त हो गया है, अपने में वह महान् बनता चला जाता है। अंगिरस गोत्र के ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहे हैं। अपना स्वतः अध्ययन करना बहुत अनिवार्य है। जब स्वतः अपना अध्ययन करने लगे। चित्त के मण्डल को जानने लगे, तो उन्होंने मन का शोधन किया। क्योंकि मन का जो निर्माण होता है, मन की जो उत्पत्ति होती है, वह आहार से होती है। आहार मानव का ऐसा पवित्र होना चाहिए। परन्तु आहार से व्यवहार बनता है और जब आहार और व्यवहार दोनों पवित्र होते हैं तो मानव का जीवन पवित्र बनता चला जाता है। जब मानव में पवित्रता आती है तोवह सत्य ही उच्चारण करता है और जब वह सत्य ही उच्चारण कर रहा है तो सत्य के गर्भ में वह मानो सर्वत्र ब्रह्माण्ड विद्यमान है। सत्य ही ब्रह्म है। सत्य ही चेतना है। मानो देखो, उसी के आधार पर यह संसार पंचीकरण सा दृष्टिपात आता है। 13.03.1983

607 विज्ञान

तो सत्य ब्रह्म को जानना, ये मानव का एक बहुत अनिवार्य, एक कर्त्तव्य कहलाया जाता है। उसकी आभा को जानने के लिए हमें वैज्ञानिक बनना है। विज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश करना है और विज्ञान क्या है? जो चित्त के मण्डल को जान लेता है, चित्त के ऊपर अध्ययन करने लगता है। मानव स्वप्न को प्राप्त हो रहा है, स्वप्न दृष्टिपात कर रहा है। स्वप्न में वह ऋषि एक भयंकर वन में चला जाता है। भयंकर वन में जा कर

औषधि विज्ञान के ऊपर अनुसन्धान कर रहा है। औषधि विज्ञान को जान करके, अग्नि में उसको तपा करके, उसके परमाणुओं के ऊपर अनुसन्धान कर रहा है।
तोजब अपने चित्त के मण्डल को जानने के लिए तत्पर होने लगे, तो इन्द्रियों में प्रवेश कर गए। इन्द्रियों का प्रत्येक रूप को जानने के लिए, चित्त के मण्डल को जानने लगा। स्वप्नवत स्वप्न को प्राप्त हो रहा है। स्वप्न में दृष्टिपात कर रहा है, याग कर रहा है। औषधि विज्ञान को जान रहा है। वह चित्त का मण्डल बना हुआ है। चित्त में वह विद्यमान हैं परन्तु उन अंकुरों के सूक्ष्म रूप को स्थूल बना करके वह स्वप्न को प्राप्त हो रहा है। स्वप्न में स्थूल बना करके, उसे पान कर रहा है ये सब कुछ क्या है, ये चित्त का मण्डल है चित्त के मण्डल में संस्कार विद्यमान हैं। जन्म-जन्मांतरों के संस्कार विद्यमान होते हैं। इन संस्कारों के आधार पर, संस्कारों की प्रतिभा को ले करके हीउस आभा में गति करता रहता है। 13.03.1983

608 पार्थिव तत्त्वों में चित्त

मानव के शरीर में पार्थिव तत्त्वों में, चित्त विद्यमान रहता है उस चित्त मण्डल को जल प्राण-शक्ति दे रहा है, त्वचा उसको प्रीति दे रही है और वह चित्र कौन दे रहा है? वह नेत्र हैं, श्रोत्र हैं और रसना, शब्दों का उद्गान गा रही है। उद्गीत गाती ही रहती है। जब वाणी उद्गीत गाती ही रहती है तो उद्गान चलता रहता है। इसको जानना हमारा बहुत कर्त्तव्य है, अनिवार्यता है, जिसको जान करके अमृतमयी बन जाता है। अमरापुरी को प्राप्त हो जाता है। 13.03.1983

609 एक दूसरे में सहायक परमाणु

तोपार्थिव तत्त्वों को जानने वाला, पार्थिव परमाणुओं को जानने वाला मानव विशेष वैज्ञानिक बन जाता है। क्योंकि इसके परमाणुओं में ही, ये सब सहायक बने हुए है। तो वेद का मन्त्र कहता है, चाहे तुम सूक्ष्म जगत में चले जाओ, चाहे स्थूल जगत में चले जाओ, परन्तु दोनों ही जगत में एक प्राणी, प्राणी का सहायक बना हुआ है, परमाणु, परमाणु का सहायक बना हुआ है। लोक, लोक का सहायक बना हुआ है। एक प्राणी एक लोक दूसरे लोक में गति कर रहा है। एक लोक दूसरे लोक में गति कर रहा है तो विज्ञान का परमाणु, विज्ञान ने यह सिद्ध किया है, कि यह जो परमाणु गति कर रहा है, एक दूसरे में पिराया हुआ है, माला बनी हुई है। जैसे यह ब्रह्माण्ड में नाना लोक-लोकान्तरों की एक माला बनी हुई है और इस माला को जो धारण करता है वह वैज्ञानिक बन जाता हैं, जो उस माला को अपने में धारण कर लेता है परमाणु एक दूसरे में गतिशील हो रहा है। लोक भी इसी प्रकार गतिशील हो रहे हैं। शब्द भी इसी प्रकार चित्र ले करके एक दूसरे में कटिबद्ध हो रहे हैं, एक दूसरे के सहायक बन करके इसी प्रकार परमपिता परमात्मा ने ये भव्य जगत बनाया। इस भव्य जगत में एक प्राणी, प्राणी का सहायक बना हुआ है। एक प्राणी है प्राणी में पिरोया हुआ है। वहीं पंचीकरण आ जाता है। उसी पंचीकरण में सर्वत्र ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ रहता है। वही चित्त का मण्डल है।
चित्त क्या है? यह पार्थिव तत्त्व है। प्राण क्या है? यह जल तत्त्व है।, जीवन शक्ति क्या है? वह सोम शक्ति है। जिसे हम सोम शक्ति कहते हैं, सौम्यता कहाँ से? अग्नि की आभा से प्राप्त होती है। अग्नि की आभा कहाँ से प्राप्त होती है? वह वायु से प्राप्त होती है और वायु अवकाश में परमाणुओं को लेकर के गति करती है। तो यह पंचीकरण कहलाता है। इस पंचीकरण की आभा में साकल्य पिरोया हुआ है। यज्ञमान यज्ञशाला में साकल्य प्रदान कर रहा हैं, परन्तु जब वह प्रदान करता है तो उसके गुणों का अवधान करने वाला पांडित्व होता है। उद्गाता होता है, अर्ध्वुय होता है। उसकी आभा को जानते रहते हैं। उस परमाणुवाद को भी वैज्ञानिक तत्त्वों को जाना जाता है। परन्तु वही वायुमण्डल में जा करके, अन्तरिक्ष में जा करके परमाणुओं के मिलन में अशुद्ध परमाणुओं को निगलना, शुद्ध परमाणुओं को देना यह आहुति का कर्त्तव्य बन जाता है। तो परमपिता परमात्मा ने ये जगत रचा है, अनुपम है, जितना जड़जगत और चैतन्य जगत है, यह एक-दूसरे में पिरोया हुआ सा दृष्टिपात आता है। एक माला बनी हुई है। उस माला को जो मानव जान लेता है वह उस माला के सूत्र को भी जानता है और जो माला के सूत्र को जानता है वह अपना स्वतः अध्ययन भी करना जानता है और जो अपना स्वतः अध्ययन करना जानता है इस जगत को जानता है और जो जगत को जानता है वह भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान को जानता है। और जो भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान में पारायण होता है, वह प्रभु के गर्भ में प्रवेश करता रहता है।
तो परमात्मा का यह जो जितना जगत है, यह सब उसका गर्भाशय कहलाता है। प्रत्येक मानव, मानव में पिरोया हुआ, प्राणी मात्र है। माता पुत्र में पिरोई हुई है, और पुत्र माता में पिरोया हुआ है पत्नी, पति में पिरोई हुई है पति पत्नी के आंगन में पिरोया हुआ हैं। एक माला बनी हुई है लोक-लोक में पिरोया हुआ है। ये पृथ्वी है यह सूर्य में, सूर्य बृहस्पति में पिरोया हुआ है।और बृहस्पति आरूणि मण्डल में पिरोया हुआ और आरूणि ध्रुव में पिरोया हुआ है और ध्रुवस्वाति नक्षत्रों में पिरोया हुआ है। स्वाति मूल में पिरोया हुआ है और मूल नाना गन्धर्व लोकों में पिरोया हुआ सा जगत दृष्टिपात आता हैं।

तो यह संसार एक दूसरे में पिरोया हुआ है, माता अपने पुत्र से स्नेह कर रही है, वह माता में पुत्र पिरोया हुआ है माता पुत्र में पिराई है। तो पिरोया हुआ यह जगत, एक माला बनी हुई है और जो पिरोने वाली शक्ति है उसका नाम एक चेतना है, और उस चेतना को जानना ही हमारा कर्त्तव्य कहलाता है। जो चेतना के आँगन में प्रवेश करता है, वही परमात्मा की प्रतिभा को जानता है। 13.03.1983

610 हस्त मुद्रा

मुझे उनका जीवन स्मरण आता रहता है जब वह तपस्या में सदैव प्रवेश करते थे, तो अपने जीवन को पंचीकरण बना लेते थे। पंचीकरण का अभिप्रायः यह है कि हमारे मानव के शरीर में हस्तों में, पंचीकरण, हमें एक ही आभा कृत होती रहती थी। उसी का निर्णय करते रहते हैं। पृथ्वी, अग्नि, आकाश, जल और वायु, यह अपने में गति करते रहते हैं। एक ही धुन में तीनों ही रमण करते रहते हैं। अग्नि को और पृथ्वी तत्त्व दोनों का मिलान करना हो तो अंगुष्ठान और अंगुलस्त अग्नि तत्त्व को मिलान करने से मानव के शरीर में जो पार्थिव तत्त्व हैं, जिसे हम चित्त का मण्डल भी कहते हैं, जो अग्नि उसको तेजोमयी बनाती रहती है। उन दोनों के मिलान करने से मानव के शरीर में अग्नि और पार्थिव तत्त्वों का जब समन्वय होता है, तोमन की स्थिति स्थिर होने लगती है, जब वह स्थिर होने लगती है तो इस सम्बन्ध में उन्होंने एक समय जब यह भयंकर वन में समुद्र के तट पर वह तपस्या करने चले गए, तो अपने में पंचीकरण को लाने का प्रयास किया, जिसे हमारे यहाँ एक मुद्रिका कहते हैं। इस मुद्रिका का सिद्धान्त परम्परागतों से हमारे ऋषि-मुनियों के सिद्धान्त में भी आता रहा है और विद्यालय में भी इस सिद्धान्त को प्रायः अध्ययन कराते रहते थे।

जब महाराजा अश्वपति के यहाँ अध्यापन का कार्य कलाप होता रहा, तो ब्रह्मचारियों को अध्ययन में मुद्रिका का वर्णन कराते। हमारे यहाँ विद्यालयों में जब तक मुद्रिका वाला आचार्य नहीं होता, तो ब्रह्मचारियों को हम ब्रह्मवर्चोसि नहीं बना सकते। क्योंकि मुद्रिका का अभिप्रायः यह है। कि हमारा मन सूर्य विज्ञान के ऊपर अध्ययन करना चाहता है। जब सूर्य विज्ञान के ऊपर अध्ययन करना चाहता है तो उस अग्नि को वायु को, दोनों को मिलान करते हुए, यह अंगलुष्ठ लेते हुए वह अंगुष्ठान से उनका मिलान करते हुए गोलाकार बनाते हुए अपने मन को वहाँ स्थिर कर लेता है। जब वह स्थिर करता हुआ सूर्य विज्ञान, सूर्य में जो प्रतिभा है उसका समन्वय हमारे अन्तरात्मा, हमारे हृदय से होता है, तो वह जो हृदय है हृदय में सूर्य की किरणों से जो-जो द्यौ मण्डल में तत्त्व विद्यमान होते हैं उनका साक्षात होना स्वाभाविक बन जाता है। 13.03.1983

मानव का जो लघु मस्तिष्क है, इस लघु मस्तिष्क में इस प्रकृति का सर्वत्र कुञ्जी सर्वत्र ब्रह्माण्ड इसमें ओत-प्रोत हो रहा है जैसे परमात्मा का जगत, यह ब्रह्माण्ड के रूप में है नाना प्रकार की आभाओं के रूप में गतियाँ कर रहा है, इस ब्रह्माण्ड में पांच प्रकार की प्रतिक्रियाएं सबसे प्रथम प्रसारण है उसके पश्चात इसी में गति है गति के पश्चात इसी में ध्रुवा है, ध्रुवा के पश्चात इसी में ऊर्ध्वा है और इसी में आकुञ्चन शक्ति विद्यमान रहती है। जितना संसार का, सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल का जितना भी विज्ञान है वह सर्वत्र विज्ञान इन पांचों प्रकृति की गतियों से दृष्टिपात हो रहा है। जितना भी विज्ञान आज हमें दृष्टिपात आ रहा है, जितना भी भौतिक विज्ञान है यह प्रसारण में हैं, वही ध्रुवा में है, यही गति में है, और यही ऊर्ध्वा में होता हुआ, आकुञ्चन में सिमट जाता है। इस प्रकार का ये विज्ञान काण्ड है विज्ञान की जो प्रतिभा है वह पांचों प्रकार की आभाओं में गति कर रहा है।

भगवान कृष्ण के हृदय में एक संकल्प जागा कि प्रभु! मैं यह जानना चाहता हूँ कि इन पांचों गतियों का इस अन्तरात्मा से क्या समन्वय होता रहता है और इस ब्रह्माण्ड का तो मैंने जान लिया है कि इस ब्रह्माण्ड से कृत्तियाँ है परन्तु आत्मा से क्या सम्बन्ध है इसका? 15.03.1983

611 प्रकृति की पंच गतियाँ

तो महात्मा संदीपन ऋषि ने कहा-हे कृष्ण! प्रकृति से जब चेतना का मिलान होता है तो ये पंच महा गतियाँ इसमें से सदैव उत्पन्न हो जाती हैं। और यदि चेतना का इसमें स्रोत नहीं होगा, तो परमाणु में गति का संचार नहीं होगा। इसीलिए वह जो गति है, परमाणुवाद में जो गति आकुञ्चन में है, जो गति प्रसारण में है, जो गति गतियों में है, जो गति ध्रुवा और ऊर्ध्वा में है, इस गति को देने वाला बाह्य जगत में वह चैतन्य देव है और आन्तरिक मानव के शरीर में यह गति देने वाली यह आत्मा है। तो आत्मा से इसका विशेष सम्बन्ध रहता है। इसीलिए वेद के ऋषियों ने कहा है कि यह आत्मा को जानने वाला ही इस ब्रह्माण्ड की प्रतिक्रिया को जान जाता हैं आत्मा को जानने वाला वैज्ञानिक बन जाता है। आत्मा को जानना हमारे लिए बहुत अनिवार्य है, आत्मा को कैसे जाना जाएगा? ये प्रतिक्रियाएं मैंने तुम्हें भिन्न-भिन्न रूपों में परिणत की हैं। 15.03.1983

612 पंच गतियाँ

प्रकृति के पांच गुण हैं परन्तुउसमें तीन प्रकार के परमाणु हैं। सबसे प्रथम पार्थिव परमाणु, जल परमाणु, अग्नि परमाणु इन्हीं परमाणुओं से,

अन्तरिक्ष और वायु इन परमाणुओं को गति देती है, अन्तरिक्ष में परमाणु वास करते रहते हैं। तो, ये आभामयी जगत कहलाता है। 16.03.1983

महर्षि कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश मुनि महाराज, अपने विचारों का आदान प्रदान करते रहते थे। क्योंकि कागभुषुण्ड जी जहाँ ब्रह्मवेत्ता थे, वहाँ वह विज्ञान मेंभी बड़े पारायण थे। महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ वे वह नाना प्रकार के अस्त्रों-शस्त्रों की चर्चा करते रहते थे। 17.03.1983

613 महाराजा शिव और हनुमान जी

गुरु आश्रम में, विद्या का अध्ययन करते हुए, एक यन्त्र का निर्माण, एक समय महाराजा शिव ने, और हनुमान जी ने दोनों ने एक स्थली पर विद्यमान हो करके हिमालय की कन्दराओं में, एक यन्त्र का अध्ययन किया था और वह यन्त्र इस प्रकार का था, सूर्य जैसे उदय हो रहा है, उस यन्त्र के प्रभाव से वह सूर्य को अपने में ढांप लेता था और रात्री बन जाती थी। सूर्य की कृतिका का समावेश हो जाता थी। 17.03.1983

614 भगवान कृष्ण की अनुसन्धानवेत्ता बनने की इच्छा

एक समय भगवान कृष्ण और सुदामा जी इस वाक् का अध्ययन कर रहे थे। उनके आभाओं का विज्ञानमयी जो तत्त्वमयी रहस्य था। उसके ऊपर अध्ययन हो रहा था। जब अध्ययन हो रहा था, तो उन्होंने भगवान कृष्ण ने महात्मा संदीपन ऋषि से यह कहा कि हे पूज्यपाद! आप तो वेद के मर्म को जानने वाले हैं, धर्म के मर्म को जानने वाले हैं परन्तु हम यह जानना और चाहते हैं कि इस यन्त्र का निर्माण कैसे होता है? इस यन्त्र के निर्माण की, हम प्रतिक्रियाओं को जानना चाहते हैं। उन्होंने कहा, हे कृष्ण! तुम भौतिक विज्ञान में जाना चाहते हो या आध्यात्मिक विज्ञान में प्रवेश करना चाहते हो? उन्होंने कहा, महाराज! मैं उस विज्ञान को जानना चाहता हूँ, जो विज्ञान वेद की प्रतिभा के गर्भ में विद्यमान रहता है। क्योंकि वेद नाम प्रकाश का है और मानव की प्रवृत्ति इस प्रकाश को जानना है, प्रत्येक मानव की, प्रत्येक विद्यार्थी की, आचार्य के चरणों में ये उत्सुकता बनती है कि मैं प्रत्येक वस्तु का विशेषज्ञ बन जाँऊ। मानव उस धारा को जानना चाहता है, उसका विशेषज्ञ बनना चाहता है। भगवन! तुम्हारे चरणों में वैदिकता के मन्त्रों का बहुत-सा अध्ययन किया है परन्तु उनमें जो उद्गम है, उनमें जो रहस्य है, उन रहस्यों के लिए मैं आपके चरणों में विद्यमान रहता हूँ क्योंकि मेरा यह कर्त्तव्य है कि मैं अनुसन्धानवेत्ता बनूं। हमारे यहाँ विद्यालयों में यज्ञशाला होती है, उन्हीं विद्यालयों में एक सूक्ष्म सी क्या विशाल विज्ञानशाला भी होती है। जहाँ ज्ञानशाला है वहाँ विज्ञानशाला, जहाँ यन्त्रों का निर्माण, यन्त्रों का धातुपिपाद को निर्माण करने की विधिवत क्रिया और यन्त्र उसमें विद्यमान रहते हैं। 17.03.1983

615 भगवान कृष्ण द्वारा निर्मित अंधरेखा यन्त्र

भगवान कृष्ण नेयन्त्रों को जानने का प्रयास किया। वहाँ एक वेद में एक वाक् आया। सम्भवते असुताम देवं प्रमाणं ब्रीहि व्रतो देवा अग्नि के धुन्ध में यह विशेषता होती है कि वह कुछ कालिमा को ला करके, वह सूर्य की कृतियों को अपने में धारण कर लेता है। परन्तु वेद में जहाँ ये शब्द आया, वहाँ वेद के मन्त्रों में ये भी शब्द प्रतिपादित होने लगा, कि यह रात्रि क्यों होती है? उन कणों को जानना चाहिए। कहीं उन्होंने यह अध्ययन किया, यह पृथ्वी जैसे गतिशील रहती है, सूर्य का जैसे-जैसे आँगन में गति करती सूर्य के सन्मुख आ जाती हैं। वहीं प्रकाश होता रहता है, परन्तु ये भी यथार्थ है परन्तु रात्रि मानव के दिवस में भी रात्रि आ जाती हैं वहाँ उन्होंने इन्हीं धातु-पिपादों पर अनुसन्धान करना प्रारम्भ किया और वह इन वाक्यों पर अनुसन्धान करने लगे, कि मानव के आँगन में, जब मानव के मस्तिष्क में, सुसज्जिता आ जाती है। कृका अन्तति आ जाती है तो उस समय मानव के नेत्रों के समीप अन्धकार आ जाता है, इस अन्धकार की कालिमा को ले करके उन्होंने कहीं वेदों में ऐसा अध्ययन किया, कि मुझे तो उस वस्तु को जानना है। तो उन्होंने भयंकर वनों में संदीपन ऋषि के यहाँ, अनुसन्धान करने लगे और उन्होंने यन्त्रों का निर्माण करना प्रारम्भ किया।

उस विद्यालयों में अनुसन्धानशाला है, विज्ञानशाला है, उन वैज्ञानिक यन्त्रों में नाना धातु-पिपाद को लेकर के जल के परमाणुओं को, पृथ्वी के परमाणुओं से, समन्वय करते, अग्नि के परमाणुओं से, जब समन्वय किया गया, अग्नि के उन परमाणुओं में जिनमें धुम्र विशेष होता है, उन परमाणुओं को ले करके, उन्होंने उस परमाणुवाद को अन्तरिक्ष में से लेना प्रारम्भ किया, कुछ धातुओं से लेना प्रारम्भ किया तो एक अंधरेखा नाम के यन्त्र का निर्माण किया था, जिस अंधरेखा नामक यन्त्र को महाभारत के काल में, जब जयद्रथ को नष्ट करने की प्रवृत्ति के लिए आएं, तो उन्होंने महारानी रुक्मिणी से इस यन्त्र का प्रहार कराया था तो वह सूर्य को ढांपने वाला यन्त्र था।

उस यन्त्र का भगवान कृष्ण ने निर्माण किया था। इसी यन्त्र को महाराजा शिव ने और महाराजा हनुमान ने इसी यन्त्र का दोनों की सम्मति से, त्रेता के काल में निर्माण हुआ था, और वह निर्माण होते हुए, जिस समय राम, रावण का, संग्राम हो रहा था, एक यान, उन्होंने ऐसे यन्त्र

का, वायुमण्डल में प्रसारण कर दिया, कि अन्धकार छा गया। वह रावण भी एक विशेष वैज्ञानिक था। उन्होंने ऐसे यन्त्र का निर्माण किया जिससे वृष्टि हुई, अग्नि की वृष्टि होने लगी, सेना में त्राहि-त्राहि हो गई।

तो भगवान कृष्ण, संदीपन ऋषि के यहाँ अड़तालीस वर्षों तक अध्ययन का कार्य किया। अध्ययन उनका चलता रहा अड़तालीस वर्षो में वह, विज्ञान में भी पारायण होने लगे। जहाँ बुद्धिमता वहाँ विज्ञान, विशालता में रहता था, वहाँ उनका सौम्य क्रिया-क्लाप था, वह चरित्र की प्रतिभा थी, वह उस महानता में रहती। 17.03.1983

616 द्वापर में चित्रावली

चित्रावली भगवान कृष्ण के द्वारा भी थी। जिस काल में महाभारत का काल था। महाभारत में जब संग्राम प्रारम्भ होने लगा, तो भगवान कृष्ण धृतराष्ट्र के द्वारा पहुंचे। महाराजा धृतराष्ट्र नेत्रहीन थे, प्रज्ञा चक्षु थे, उनका एक मंत्री था। अपनी आभा में उनके चरणों की आस्वातम वन्दना करता रहता था। भगवान कृष्ण ने कहा कि हे भगवन! तुम्हारे इन राजकुमारों में संग्राम होने जा रहा है तुम क्या चाहते हो, तुम्हारी कोई इच्छा है? उन्होंने कहा कि संग्राम होने जा रहा है तो हे कृष्ण! मैं चाहता हूँ कि मेरे द्वारा ऐसा कोई यन्त्र होना चाहिए, जिससे यह क्रिया-कलाप जो कुरुक्षेत्र में हो, तो वह मुझे हस्तिनापुर में वर्णित होता रहे। उन्होंने कहा बहुत प्रिय, तो भगवान कृष्ण ने संदीपन ऋषि महाराज के चरणों में विद्यमान हो करके उन यन्त्रों को जाना था। यन्त्र क्रिया में लाना, लाया हुआ यन्त्र उन्होंने चित्रावली धृतराष्ट्र के यहाँ प्रदान की और वहाँ कुरुक्षेत्र में संग्राम हो रहा है और उस यन्त्र में उसका चित्र आ रहा है, वह चित्र जैसे आता उसी प्रकार संजय प्रज्ञा चक्षु को प्रदान करता रहता था विज्ञान मानव की चरम सीमा पर रहा है किसी-किसी काल में। नाना प्रकार के चित्र अन्तरिक्ष में गति करते रहते हैं। 18.03.1983

617 त्रेता में चित्रावली

यही चित्रावली यही यन्त्र लंका में जब राम और रावण का संग्राम हो रहा था, तो इसी यन्त्र के द्वारा, चित्रावली के द्वारा राम और रावण के संग्राम को भरत अपने में, अयोध्या में दृष्टिपात कर रहा था। वही यन्त्र वही संग्राम की प्रतिक्रिया, हिमालय की कन्दराओं में अपने राष्ट्र में विद्यमान हो करके, महाराजा शिव और पार्वती उनको दृष्टिपात करते रहते थे। 18.03.1983

618 महाराजा शिव

यहीं तक नहीं जब सूर्य, में किसी भी प्रकार का अग्नि के प्रचण्ड से आक्रमण हो करके और सूर्य में गढेला बन जाता है। तो ऐसे चित्र महाराजा शिव के द्वारा थे कि जैसे उनका वहाँ आक्रमण हुआ। परमाणुओं का आक्रमण हुआ, सूर्य में गढेला हुआ, उसका चित्र महाराजा शिव के यन्त्र में प्रवेश करता था। और वह उन्हें दृष्टिपात होता रहता था।

जब महाराजा मार्कण्डेय ऋषि महाराज, इस चन्द्रमा और पृथ्वी दोनों की आकर्षण शक्ति के द्वारा अपना स्थान बनाए हुए थे। अपना यन्त्र बनाए हुए थे, महाराजा शिव और पार्वती दोनों यन्त्र में लगभग छह माह तक मार्कण्डेय ऋषि महाराज का संग होता था। तो ऋषि-मुनियों का जीवन और वैज्ञानिको का जीवन, आहार और व्यवहार जब पवित्र होते हैं तो मानव के मस्तिष्क की जो ग्रंथियाँ हैं उनका स्पष्टीकरण हो जाता है। वे प्रभु की आभा में रमण करते रहते हैं। 18.03.1983

619 सूर्य सिद्धांत

हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, एक सिद्धांत चला आ रहा है। सूर्य सिद्धांत से, सूर्य की, पृथ्वी की गति बनती है, गति से दिवस और रात्रि बनती है और जब दिवस तथा रात्रि बनती है, उसी से अहोरात्र माह बनता है और माह से वर्ष बनता है और वर्षो से एक कल्प बनता है और कल्पों से ही मन्वंतर बनते हैं। मन्वंतर बन करके, इसी तरह की गणना आगे वर्णित की जा सकती है।

परन्तु जब चन्द्र सिद्धांत के ऊपर और हम विचार-विनिमय देना प्रारम्भ करते हैं लोक धटित नहीं होते। एक कला उसकी समाप्त हो जाती है परन्तुवह कला सूर्य सम्पूर्ण कलाओं से सदैव युक्त रहता है क्योंकि उसका सम्बन्ध द्यौ से है। चन्द्रमा का सम्बन्ध सूर्य से है तो वह जो द्वि कलाओं वाला है उसका सम्बन्ध द्यौ से रहता है तो द्यौ और दोनों का मिलान करके आभा में गति करते रहते हैं। 18.03.1983

620 महाराजा हनुमान जी और महाराजा गणेश द्वारा यन्त्र निर्माण

एक समयमहाराजा हनुमान ने और शिव के पुत्र गणेश जी ने दोनों ने एक स्थली पर विद्यमान हो करके, एक यन्त्र का निर्माण किया था, जिस में क्रोधाग्नि को अंकित किया गया और क्रोधाग्नि को अंकित करने से, उसको वैज्ञानिक तथ्यों से उसका रूपांतर किया गया, विभाजन किया गया परमाणुओं का, तो मानव के हृदय का जो भयंकर जो क्रोध है, वह मानव की विचित्र आभा को वह विद्वता की आभा को, यौगिक आभा को वह अन्तरिक्ष में परिणत करके एक अग्नि का स्रोत बन जाता है, जिससे मानव की प्रवृत्तियाँ मानव के हृदय में अग्नि प्रगट हो करके तुच्छ बन जाता है। इसी प्रकार यह बाह्य जगत है, आन्तरिक जगत है। बाह्य जगत में जब सूर्य के ऊपर आक्रमण

होता है, तो उसके कुछ भाग लोकों में जाते हैं, क्रोधाग्नि का जब मानव के शरीर पर प्रतिभाषित हो जाता है उसे पृथ्वी ही अपने में निगल जाती है, वायुमण्डल में परमाणु बन करके, अन्तरिक्ष को प्राप्त हो करके वही क्रोधाग्नि उस मानव को प्राप्त होती है, जिस मानव का क्रोध अन्तरिक्ष में चला गया।

मैंने पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में क्रियात्मक रूपों में इस विद्या का अध्ययन किया है। परन्तु आधुनिक काल का, जो विज्ञान है, आधुनिक काल का विज्ञान तो क्रोध का भी कोई चित्र निर्धारित नहीं कर सका है! क्या इस मानव का क्रोध है और इसमें कितनी मात्राएं हैं? उस क्रोध में कितना नृत्य हो रहा है? उसका कोई यन्त्र निर्धारित नहीं हो सका है।

आधुनिक जगत का जो विज्ञान है वह परमाणु शक्ति में विशाल है। परमाणु शक्ति को एकत्रित कर रहा है। परमाणुवाद में रमण कर रहा हैं वह समय दूरी नहीं है जब परमाणुवाद का इस संसार में आक्रमण होने वाला है। जब आक्रमण होगा तो एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को अग्नि में परिणत करना चाहता है। वर्तमान का जो काल है वह बड़ा विचित्र है। एक-दूसरे के आधात का संशयियों पर विद्यमान हैं। वह यह विचार रहा है मैं इस राष्ट्र को कैसे अपने आक्रमण से विजय कर सकता हूँ। आज विजय होने के लिए नाना प्रकार की कल्पना कर रहा है मानव, परन्तु राष्ट्र-राष्ट्र को निगलना चाहता है, राष्ट्र-राष्ट्र को अपनी आभा में रमण करना चाहता है। 19.03.1983

621 आकाश गंगाएं

परमपिता परमात्मा का जो ये अनुपम जगत है, यह महान है, विचित्र है। चिन्तन करना ही मानव का कर्तव्य है। संसार में जब मानव विद्यमान हो करके माला को गिनने लगता है, माला को हूत में लाने लगता है, तारा मण्डलों की सुन्दर माला बनी हुई है। सौर मण्डल बने हुए हैं। आकाशगंगाएँ बनी हुई हैं। ऋषि मुनियों ने यहाँ तक जाना है इस संसार को, कि एक-एक आकाशगंगा के सूर्यों की गणना की है। सूर्यों की गणना करके आगे एक आकाशगंगा नहीं दो आकाशगंगा नहीं, एक-एक आचार्य ने एक-एक ऋषि ने लगभग ३००-३०० आकाशगंगाओं को जानने का प्रयास किया है। और वे आकाशगंगाएँ केसी हैं? 05.04.1983

622 महर्षि याज्ञवल्क्य ऋषि आश्रम में यन्त्र में आकाश दर्शन

संसार में जब मानव विद्यमान हो करके माला को गिनने लगता है, माला को हूत में लाने लगता है, तारा मण्डलों की सुन्दर माला बनी हुई है। सौर मण्डल बने हुए हैं। आकाशगंगाएँ बनी हुई हैं। ऋषि मुनियों ने यहाँ तक जाना है इस संसार को, एक-एक आकाशगंगा के सूर्यों की गणना की है। सूर्यों की गणना करके आगे एक आकाशगंगा नहीं दो आकाशगंगा नहीं, एक-एक आचार्य ने एक-एक ऋषि ने लगभग ३००-३०० आकाशगंगाओं को जानने का प्रयास किया है। और वे आकाशगंगाएँ केसी हैं? याज्ञवल्क्य ऋषि की विज्ञानशाला में ब्रह्मचारी कवन्धि और श्वेत्ताम् ऋषि दोनों ब्रह्मचारी अध्ययन करने लगे, तो उस समय याज्ञवल्क्य ने अपने यज्ञदत ब्रह्मचारी से और तीनों ब्रह्मचारियों को निर्णय कराया, कियह यन्त्र है। इस यन्त्र में आकाशगंगा दृष्टिपात आ रही है। इस आकाशगंगा के सूर्यों की गणना करो। तो याज्ञवल्वय मुनि जब एक आकाशगंगा के सूर्यों की गणना करने लगे, तो गणना करते-करते ५ खरब पर पहुँच गये। तो उन्होंने ५ खरब ९५ अरब ३९ करोड़ ८९ लाख ९५ हजार ५५२ जब एक ही आकाशगंगा में सूर्यों की गणना की तो ऋषि मौन हो गये। और ऋषि ने यह कहा कि मैं परमात्मा की प्रतिभा को नेत्रों से दृष्टिपात नहीं कर सकता तो ऋषि यह कहते हैं कि आचार्य जनों ने आश्चर्य चकित होकर के यह कहा कि मैंने सूर्यों की गणना एक आकाशगंगा में की है। अन्त में गणना करता हुआ मैं मौन हो गया और ऐसी-ऐसी आकाशगंगाएँ मेरी विज्ञानशाला के यन्त्रों में ३७२ आकाशगंगाएँ दृष्टिपात आती हैं। कितना अनन्तमय ब्रह्माण्ड है, यह प्रभु का, मेरी प्यारी माता का कैसा अनुपम भाष्य है। निःसन्देह यह जगत उसी के अन्तर्गत गति कर रहा है। आभा में रमण कर रहा है। विज्ञानमयी धाराओं में रमण करने वाला वैज्ञानिक अपने में विज्ञानवेत्ता कहलाता है। 05.04.1983

623 ब्रह्माण्ड की विशालता

सौर मण्डल कितने हैं एक सूर्य में ३० लाख पृथ्वियाँ, और एक सहस्र सूर्य बृहस्पति में, एक सहस्र बृहस्पति आरुणि में, एक सहस्र आरुणि ध्रुव में, एक सहस्र ध्रुव जेठाय में, एक सहस्र जेठाय अक्षतकेतु में, एक सहस्र अक्षतकेतु वरुणकेतु में, एक सहस्र वरुणकेतु अचल मण्डल में, और एक सहस्र अचल मण्डल एक सहस्र गन्धर्व में। इतना सौर मण्डल बसता है और वे जो सौरमण्डल हैं, माता के गर्भस्थल में एक ब्रह्मकेतु नाड़ी चलती है। वह माता के नाभि स्थान से होती हुई, इड़ा पिङ्गला नाड़ियों से उनका समन्वय होकर के और माता की लोरियों से उन नाड़ियों का समन्वय होकर के, उसकी छाया आती है वह बालक उसकी प्रतिभा होती है। 06.04.1983

624 कर्म की पाँच गतियाँ

महर्षियों ने वर्णन कराया, हे ब्रह्मचारियों! यह जो दृष्टिपात आने वाला जगत है इसकी पाँच गतियाँ कहलाती हैं। सबसे प्रथम प्रसारण है, उसके पश्चात गति है, उसके पश्चात ध्रुवा, ऊर्ध्वा है, और आकुंचन, ये पाँच गतियाँ है दृष्टिपात करने वाले जगत की। पाँचों गतियों में यह

संसार का विज्ञान गति कर रहा है। उन्होंने वर्णन किया कि प्रसारण, गति, ध्रुवा, ऊर्ध्वा और आकुंचन ये गतियाँ परम्परागतों से ही, वैज्ञानिकों के मस्तिष्कों में नृत्य करती रहती हैं। ऋषि मुनियों ने वर्णन कराया है कि ये जो पाँचो प्रकार की गति है इसको जान लेना चाहिए। आन्तरिक जगत में जानोगे तो अध्यात्मवेत्ता बन जाओगे। बाह्य जगत में जानोगे तो प्रकृति के विज्ञान को जानकर के वैज्ञानिक बन जाओगे। 08.04.1983

625 सोमकृति रेखा

भगवान कृष्ण एक रेखा को जानते थे, जिसे सोमकृति रेखा कहते थे। जितने क्षेत्र में परमाणु शक्ति का संग्राम होता है, उसके मध्य में वह यन्त्र स्थिर किया गया था। उसका प्रभाव उतनीदूरी तक रहता था, जहाँ वह रेखा थी। उससे बाह्य प्राणी परमाणुवाद से नष्ट नहीं होता था। आधुनिक काल का यन्त्रवाद ऐसा है, आज प्रहार कर रहा है, राष्ट्र के राष्ट्र उससे भस्म हो जाएं। आधुनिक काल में उस रेखा का निर्माण अभी तक नहीं हुआ है। पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे बहुत से विज्ञान के सूत्र प्रकट किए हैं।

हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! संसार में याग होते रहें। यागों का क्रिया-कलाप होता रहे, जिससे परमाणुवाद शुद्ध होता रहे। पुरातन काल से ही यागों की प्रथा में परमाणुवाद का शोधन होता रहा है। वायुमण्डल को वाणी से पवित्र बनाया जाता है। आधुनिक काल में आहार नहीं रहा है। आहार में दूसरों का रक्त मानव पान करने लगा है। आहार में जब दूसरों का रक्त पान करने लगता है, तो व्यवहार में भी वही क्रिया-कलाप होता है और जब व्यवहार ऐसा होता है तो गृहों के वायुमण्डल अशुद्ध हो रहे हैं। प्रत्येक गृह में कहीं कलह हो रही है, कहीं पति-पत्नियों में एक-दूसरे के प्रति प्रीति नहीं रही हैं पिता-पुत्र में प्रेम नहीं रहा है। इसके मूल में क्या है? उसका आहार है और व्यवहार है। जब आहार और व्यवहार शुद्ध नहीं रहा है तो उसके विचारों में शुद्धिकरण कैसे आ सकता है? विचारों में शुद्धिकरण तब आता है जब आहार पवित्र होता है। आहार के पवित्र होने पर व्यवहार प्रीति का होता है, स्नेह का होता है तो गृह का वायुमण्डल पवित्र बन जाता है, गृह में कलह नहीं रहती। एक मानव अशुद्धियों से वाणी का दुरूपयोग कर रहा है, उससे गृह का वायुमण्डल अशुद्ध बन जाता है। 17.08.1983

626 भौतिक विज्ञान

एक समय भारद्वाज मुनि के इन वाक्यों ने, वैज्ञानिक तथ्यों को दृष्टिपात करते हुए, कागभुषुण्ड जी दोनों आश्चर्यचकित हो गये। कागभुषुण्ड जी ने कहा-प्रभु! हम आप से कुछ प्रश्न करना और चाहते हैं। उन्होंने कहा-भगवन! हम आध्यात्मिक विज्ञान को ओर जानना चाहते हैं। यह, तो आपका भौतिक विज्ञान है। पूर्वजों का दर्शन होना, एक परमाणु में विभाजन करने से ब्रह्माण्ड का चित्र दृष्टिपात होना और जैसे सब भौतिक विज्ञान कहलाता है। एक-एक रक्त के बिन्दु में, चित्रावलियों में, मानव का दिग्दर्शन होना, यह भी एक भौतिकतव में रत्त रहता है। 02.10.1984

पंच तत्वों का स्वरूप, महर्षि लोमश मुनि ने कहा-भारद्वाज! मुनि से महर्षि लोमश मुनि ने कहा-भारद्वाज! मुनि से, कि-प्रभु! यह जो पंचीकरण कहलाता है, क्या यह एक दूसरे को नष्ट भी कर सकता है? तो ऋषि ने कहा कि यह जैसे अग्नि है, जल है, पृथ्वी है, और वायु और अन्तरिक्ष परन्तु एक-दूसरे के पूरक बन जाते हैं, परन्तु एक-दूसरे के जो गुण हैं, उन्हें वह नष्ट नहीं कर सकते। किसी भी काल में जल जहाँ ओत-प्रोत हो गया है, जल अपनी सूक्ष्म, अदिति की धारा को धारण कर लेता है, जिस काल में भी जल ने अपने अपने रंग और रूपों को धारण कर लिया है तो वह अग्नि स्वरूप बन जाता है। परन्तु, अग्नि अपने में जल में भी अग्नि बन करके वह अग्नि स्वरूप बनी रहती है। परन्तु अस्तित्व समाप्त नहीं कर सकते, किसी का, यह जो पांचों तत्त्व हैं ये एक-दूसरे के पूरक कहलाते हैं। एक-दूसरे में भासते रहते हैं एक दूसरे से प्रतिभाषित होते रहते हैं। अपने में वह अपनेपन में निहित रहते हैं।

तो लोमश मुनि ने इन वाक्यों को स्वीकार कर लिया, परन्तु कागभुषुण्ड जी ने प्रश्न किया कि महाराज! यह आध्यात्मिकवाद क्या है? उन्होंने कहा जहाँ यह पंचीकरण रहता है, और पंचीकरण में भी आत्मा का दर्शन करने लगता है, तो वहाँ से आध्यात्मिकवाद की प्रारम्भता होती है जैसे पंच महाभूत हैं और पंच महाभूत अपने-अपने अस्तित्व को समाप्त नहीं कर सकते, अपने गुणों को गुणाधानम वह अपने गुणों को अपने में धारण करते रहते हैं परन्तुजब हम यह विचारते हैं कि आध्यात्मिवाद का इससे क्या समन्वय रहता है, तो विचार आता है, वेद के मन्त्र आते हैं, हमारा चिन्तन करने का माध्यम हमारे समीप आने लगता है, कि इनमें भी हम चेतना को भासने लगते हैं। जबइन पंचीकरण में जो चेतना, क्रियाकलाप हो रहा है हमारे मानव शरीर में, एक आत्मा पंचीकरण को धारण करके, इस शरीर का अस्तित्व बनाए रहती है, परन्तु जब चेतना का और पंचीकरण दोनों का विच्छेद हो जाता है, तो आत्मा भिन्न बन जाता है, चेतना के रूप में, और यह पंचीकरण अपने रूपों में रत्त हो करके अपने रूपों को प्राप्त होता रहता है।

तो हम विचारते हैं कि इन पंचीकरण में, इस भौतिकता में एक चेतना क्रियाकलाप कर रही है, जिस चेतना का नामीकरण हमारे ऋषि-मुनियों ने आध्यात्मिक अथवा आत्मा से संबंधित किया है। तो आध्यात्मिकवादी जो प्राणी है वह इस विज्ञान में नहीं जाना चाहते हैं, वह

इस विज्ञान से उपराम बन जाते हैं, और उपराम कैसे बनते हैं, यह बड़ा विचित्र एक गहन गम्भीर एक रहस्यतम कहलाया जाता है। जब तक हमारा जो चित्त मण्डल बना हुआ है, हमारे शरीर में, मन बुद्धि चित्त और अहंकार कहलाते हैं। चतुष का, मानव का अन्तःकरण कहलाता है। 12.10.1984

627 ध्रुव मण्डल के चित्रों का दर्शन

जब ऋषि के आश्रम में प्रवेश करने लगा तो उन्होंने कहा-ब्रह्मचारी सुकेता! यह दृष्टिपात करो। यह क्या है? वह आश्चर्ययुक्त हो गए। उन्होंने कहा-धन्य हो, प्रभु! हम इतना विज्ञान नहीं जानते। जब ये यन्त्र ऊर्ध्वा में पहुँचा तो ध्रुवमण्डल के चित्रों को लाकर के वह कण्व ऋषि के आश्रम में चित्र आने लगे। तो उन्होंने वे चित्रे अंतरिक्ष में त्याग दिए और वे तीनों अपने में विचार-विनिमय करने लगे कि यह चित्रों में जो आ रहा है, किरणों की आभा में जो रत्त हो रहा है, उसको जानने के लिए आओ, हम कुछ विचार करें।

कण्व ऋषि ने कहा कि मैंने एक यन्त्र ऐसा निर्माणित किया कि यह यन्त्र मानव के हृदय को, एक यन्त्र से स्वाति गति देना, मेरा कर्त्तव्य बन गया। एक समय मैंने अनुष्ठान में यह दृष्टिपात किया कि एक मानव, मानव की रक्षा करता है और वह मानव पुकारता है कि मेरी मृत्यु होने वाली है, द्वितीय प्राणी उसकी रक्षार्थ के लिए कहता है। आप निराश न बनें, मैं तुम्हारी सहायता के लिए आ रहा हूँ। तो उसी के शब्द से, उसी ध्वनि से वह मानव अपनी मानवीयता के रूप में, अपने को ही अनुभव करता है।

तो एक ध्वनि से ही मानव, मानव की कैसे रक्षा करता है? यह कितना अग्र शब्द है? जो शब्द का अग्र रूप निराशा के शब्द को बल दे रहा है, उसे शक्ति दे रहा है, उस शक्ति के ऊपर मैंने एक सूक्ष्म-सा यन्त्र निर्माणित किया और वह यन्त्र ऐसा निर्माणित हुआ, वह सर्प के रूप में दृष्टिपात आता रहता है। परन्तु जब मैं यन्त्र को भुजों में लेता हूँ, तो भुजों में आते ही वह यन्त्र मुझे ऐसा प्रतीत होता है जैसे मेरी रक्षा कर रहा हो। इसी प्रकार ब्रह्मचारी सुकेता जो भारद्वाज मुनि के शिष्य थे, वे उनके यहाँ एक-एक परमाणुवाद के ऊपर अन्वेषण करते रहते थे। 05.02.1985

आधुनिक काल में विज्ञान का दुरूपयोग

आधुनिक काल का जो यह विज्ञान, मुझे दृष्टिपात हो रहा है यह प्राणी को त्रास देता है, रक्षा नहीं। विज्ञान का इस समय दुरूपयोग हो रहा है।

जिस समाज में, जिस काल में ब्रह्मचर्य का ह्रास, विज्ञान के द्वारा होता है, वह समाज और वह राष्ट्र अग्नि के काण्ड बनकर के रहते हैं। मैंने पुरातनकाल में भी यह कहा था कि जहाँ विज्ञान का दुरूपयोग होता है वहाँ अग्नि के काण्ड बनकर के रहते हैं। 05.02.1985

भीम पुत्र घटोत्कच द्वारा निर्मित यन्त्र अन्तरिक्ष में विद्यमान

महाभारत में एक स्थली पर विद्यमान होकर के, गंगा के तट पर विद्यमान होकर के अपनी आभा में, भीम के पुत्र घटोत्कच्छ अपने में वैज्ञानिक थे, भीम अपने में वैज्ञानिक थे। जब भीम ने नाना प्रकार के यंत्रों को, वायु का एक-यन्त्र बना दिया। यंत्रों को अंतरिक्ष में गमन करा रहे हैं और वह अंतरिक्ष में गमन कर रहा हैं।

आधुनिक काल में उसका रूपान्तर अपभ्रंश होकर के उन शब्दों को यह कहने लगा, आधुनिक काल का समाज कि भीम ने हाथियों को लेकर के अंतरिक्ष में उन्हें परिणत कर दिया। आधुनिक काल के विज्ञान में, आधुनिक काल की विचारधारा में यह परिवर्तन आया, अज्ञानता के कारण। क्योंकि महाभारत काल के पश्चात ही तो अज्ञान आया है। 05.02.1985

628 अज्ञानता का प्रभाव

गौमेघ में गौ की आहुति देने लगे। इन्द्रियों की आहुति न दी। यह याग का कितना दुर्भाग्य हुआ? मैं इसके ऊपर जाना नहीं चाहता हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव को मैंने कई काल में यह वर्णन कराया। नरमेघ में मानव की आहुति देने लगे। अश्वमेध में अश्व नाम राजा का था, मेघ नाम प्रजा का जो अपनी प्रतिभा में निहित कहा जाता है। 05.02.1985

629 महाभारत काल के बाद विकृति

आधुनिक जगत में इस महाभारत के पश्चात अज्ञान ने मानव के मस्तिष्कों को, प्रकृति ने हनन किया, तो उस काल में वह घोड़ो की आहुति देना प्रारम्भ कर दिया। उनके अंगों की आहुति देना प्रारम्भ कर दिया। जहाँ राजा अश्वमेध याग इसलिए करता था कि राजा का राष्ट्र पवित्र बन जाएं, याग के कारण पवित्र बन जाएं, दानेषु बनकर के राष्ट्र को पवित्र बनाते हैं। जहाँ यह भावना वैदिक साहित्य में, हमें महाराजाओं के अश्वमेध, याग क्या? वाजपेयी याग क्या? भिन्न-भिन्न यागों का यहाँ चयन होता रहता था। परन्तु जब हम आधुनिक काल के, इस महाभारत काल के पश्चात अज्ञान को हमने दृष्टिपात किया तो उससे व्याकुल हो गए। 05.02.1985

630 परमाणुवाद की तीन श्रेणियाँ

इस अन्तरिक्ष में गए हुए परमाणुवाद की तीन प्रकार की श्रेणियाँ कहलाती हैं। एक श्रेणी सतोगुण है, दूसरी श्रेणी का नाम रजोगुण कहलाता है, तृतीय श्रेणी का नामोकरण तमोगुण है। तो जब महाराजा दिलीप ने कहा कि आत्मा के जैसे तीन प्रकार के परमाणु हैं भूः भुवः स्वः परमाणुओं में जो तीन प्रकार के हैं इन्हीं में कहीं-न-कहीं आभा भी वह तरंगित हो जाती है, उन तरंगों में ओत-प्रोत हो जाती है। इन तरंगों का विशेषकर मुझे अपने तक सीमित नहीं बना देना है। तो ऋषि ने कहा कि तीन प्रकार की प्रलय के काल में भी श्रेणियाँ बनी रहती हैं। अब हम उत्तम और मध्यम, पंच महाभूतों की प्रतिभा का अनुपमता में जन्म हो रहा है, उसकी धारा में अपनी धारा को ले जाने का प्रयास होता रहता है। तो महाराजा दिलीप ने जब यह प्रश्न किया, तो महर्षि श्वेत्ताश्वतर ने कहा कि जब प्रलय-काल होता है, प्रलय-काल में यह ब्रह्माण्ड जो दृष्टिपात आने वाला है, यह पृथ्वी में, पृथ्वी इस महान जल में और जल अग्नि में, जो तेजोमयी कहलाता है।और तेजोमयी बन करके, वह जो तीन प्रकार के श्रेणी हैं, वही तो मानव को उद्बुद्ध कर देती है, वहीं मानव की धाराओं में मानवीयता का एक दर्शन होना प्रारम्भ हो जाता है। ऋषि कहता है हमारा जो कथन है, वह ममतव को धारण किए हुए रहता। 26.02.1985

631 महाराजा शिव द्वारा यन्त्रों

महाराजा शिव के द्वारा हिमालय में यन्त्रों का निर्माण किया और अर्जुन, छह माह तक वह अपने यन्त्र के द्वारा मंगल मण्डल में रहकर के विज्ञान की प्रतिभा को प्राप्त कर रहा है। वहाँ, बब्रीक भी उस यन्त्र को लेकर के बब्रीक ने भी जाने का प्रयास किया। महाराजा घटोत्कच्छ चन्द्रमा की यात्रा में चन्द्रमा में गति करते थे, हर छह माह में वह बब्रीक चन्द्रमा चले जाते हैं।

त्रेता का काल, इतना विचित्र रहा है। द्वापर का काल इतना विचित्र रहा है। विज्ञान में भी अग्रणीय रहा है। इसी प्रकार पातालपुरी क्या, हिमालय की कृतिका क्या, सब राजाओं के वैज्ञानिक एकत्रित होकर के अपनी एक आचार संहिता बनाते थे, आज का विज्ञान भी ये विचार रहा है, कि हम एक आचार संहिता बनाएँ। हम एक विज्ञान की आचार संहिता बना करके और मानव आदर्शवादी विज्ञान को बनाएँ। ऐसा विचारते रहते हैं, परन्तु ये जो राष्ट्रवाद है, नाना रूढ़ियाँ, ये नहीं होने देतीं।

ये दूरी कर देती हैं। वह नाना प्रकार की रूढ़ियों से मानव को, राष्ट्र को पार होना है।

इस संसार को इस राष्ट्रवाद को वही ऋषि-मुनियों की यहाँ जैमिनी जैसे महापुरुष, जहाँ यहाँ गौतम जैसे महापुरूष अपने वेदो की लेखनियाँबद्ध कर रहे है एक-एक सूत्र पर एक-एक पोथी का निर्माण हो रहा है।

वेद का एक मन्त्र है उसी मन्त्र के ऊपर एक पोथी का निर्माण है। कहीं कणाद् लेखनीबद्ध कर रहा है, कहीं गौतम कर रहा है, कहीं जैमिनी कर रहा है, कहीं व्यास कर रहा है, कहींनाना ऋषि गौतम इत्यादि अपने में लेखनीयाँबद्ध कर रहे हैं और वैज्ञानिक अपनी लेखनियों को बद्ध करके विज्ञान के युग में प्रवेश कर रहे हैं। 27.02.1985

632 ब्रह्माण्ड तुल्य मस्तिष्क

नवीन कोई वस्तु नहीं है संसार में, परन्तु उसकी पुनरूक्तियाँ करने से, उसकी प्रतिभा स्मरण शक्ति पुनः से जागरूक हो जाती है तो संसार में कोई वस्तु नवीन नहीं है, क्योंकि वह सदैव एक रस रहने वाली है, क्योंकि प्रभु का जितना भी ज्ञान और विज्ञान है अथवा प्रभु का जितना भी अमूल्य जगत है, चाहे वह पृथ्वी मण्डल हो, चाहे मंगल हो, चाहे और भी नाना प्रकार के लोक लोकान्तर क्यों न हो, परन्तु उनमें सबमे एक रसता होती है वह कोई नवीन नहीं है। एक वैज्ञानिक कहता है कि मैंने सूर्य मण्डल की अमुख किरणों को जाना है, तो वह कोई नवीन वाक् नहीं है, किसी काल में वैज्ञानिक ने सूर्य की किरणों को जाना होगा। आज भी मानव जानता रहता है, क्योंकि मस्तिष्क तो एक ब्रह्माण्ड का, सूक्ष्म-सा एक स्वरूप माना गया है। जिसके ऊपर मानव के, इस ब्रह्मरन्ध्र में, इस मानवीय मस्तिष्क में परमाणुओं का आदान प्रदान होता रहता है और उन परमाणुओं के आदान प्रदान से ही उसके अनुपम विचार बनते रहते हैं। अनुपम धाराएँ बनती रहती हैं, उन धाराओं के अनुसार ही अपने जीवन को वह निर्धारित कर लेता है, अथवा विज्ञान में वह रत्त भी हो जाता है।

तो संसार में कोई वस्तु नई नहीं है और न उसमें वृद्धपन आता है, न कोई वस्तु वृद्धपन में है, न कोई नवीनतव में है। वह सदैव एक रस रहने वाली है। इसीलिए प्रत्येक प्राणी को, मानव को, एक रस रह करके अपने प्रभु का चिन्तन करना चाहिए। एक रस क्योंकि वह देव है वह अपने में स्वरूप है उस स्वरूप को अपने में अपनी धाराओं में रत्त कर लेना चाहिए। 30.03.1985

633 सात प्रकार की धाराएं

यह जो प्रकृति हैं, हमारा जो मानो प्रत्येक जो द्वार है, उस द्वार का समन्वय मानो प्रकृति से रहता है, और प्रकृति में ही सात प्रकार की धारा कहलाती है। वह सात प्रकार की धारा जिसमें मानो एक धारा का नाम जमदग्नि कहा गया है, द्वितीय धारा का नाम विश्वामित्र कहा गया, और तृतीय धारा का नाम वशिष्ठ कहा गया, और चतुष का नाम कश्यप् कहा गया, और पंचम धारा का नाम मानो गौतम, के रूप में परिणत हुआ, और देखो, वह जो सातवी जो धारा हैं उसका नाम अत्रि कहलाया। तो यह मानो देखो, सात प्रकार की धाराओं का जन्म

हुआ, वह सात प्रकार की धाराओं के रूप में मानो उनको सबको ऋषि कहने लगे, उन्हीं को सप्त होता कहने लगे, मेरे प्यारे! देखो, यह वेद के मन्त्रों के भी ऋषि-मुनियों ने मानो समाधिष्ट हो करके इन शब्दों की उनकी रूप रेखा बनाने के वह तत्पर हुए, क्या यही वास्तव में हमारा जीवन है, हम जब इस प्रकार की धाराओं को लाने का प्रयास करेंगें। तो हमारे मानवीय जीवन की धारा विचित्र बन जाएगी, तो मानो देखो, आगे जब उन्होंने और गम्भीरता से अध्ययन किया, अध्ययन करने के पश्चात मानो देखो, सम्ब्रह्वे वाचत्येकी की सम्भवा वेद की इस आख्यिका को ले करके बेटा! उसको अन्तर ध्वनि में ले गएं। अन्तर ध्वनि जो मानो मस्तिष्क के अग्र भाग में जिसे त्रिवेणी कहते हैं, जहाँ ईंगला और पिंगला दोनों का समन्वय होता है। तो वहाँ एक ध्वनि का जन्म हुआ, और वह जो ध्वनि है वह ध्वनित हो करके मानो देखो, वह बाह्य जगत मे ध्वनित हो करके मानव के समीप आई, तो मानव देखो, ऋषि-मुनियों ने बेटा! देखो, प्रारम्भ में ही सृष्टि के प्रारम्भ में ऋषि-मुनियों ने विद्यमान हो करके बेटा! यह विचारा कि मानव का एक क्रियाकलाप होना चाहिए। क्योंकि मानव की यह जीवन यह सुगन्धि ही चाहता है, यह मानो दुर्गन्ध नही चाहता, दुर्गन्ध चाहता है, यह ऊर्ध्वा में जाना चाहता हैं। क्योंकि ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ने वाला परमाणु हैं, वह ऊर्ध्वा में भी जाना चाहता है। वह ध्रुवा में भी गति करना चाहता हैं, मानो देखो, यह मध्य में भू में भी यह गति करन चाहता है जब इस प्रकार मेरे प्यारे! देखो, ऋषि-मुनियों ने अपना समाधिष्ट हो करके ये सब उनके समीप आ गया तो मानव उनके प्रातःकाल से ले करके सांयकाल तब के लिए बेटा! उन्होंने इसकी एक भूमिका बनाई और इसके मानो देखो, भूमिका बना करके, कहा हे मानव! तू प्रातःकाल की पवित्र बेला में, अपने आसन को त्याग, मानो देखो, प्रातःकाल की पवित्र बेला में, आसन को मानव ने त्यागा, त्यागने के पश्चात अपनी भूमिका बनाता हैं, अपनी शारीरिक क्रियाओं से निवृत्त होता है, निवृत्त हो करके मानो देखो, वैदिक आचार्यों ने, बेटा! पांच प्रकार के यागों का चयन किया। उसने यह पांच प्रकार के यागों की जो उपलब्धि है, ये सृष्टि के प्रारम्भ से हुई, ये पांच प्रकार के यागों की उपलब्धि हुई और पांचो प्रकार का याग क्या है हे मानव! तू प्रातःकालीन अपनी शारीरिक क्रियाओं से निवृत्त हो करके, और तू प्रभु के समीप जाने का प्रयास कर। मानो तू ब्रह्मयाग कर, बेटा! गृह में, गृह आश्रम में पति पत्नी हैं, तो उसमें ब्रह्मयाग में रत्त हो जाना चाहिए। प्रातःकाल में ब्रह्मचारी, आचार्य दोनों ने ब्रह्मयाग करना चाहिए, वह ब्रह्मयागी बन जाएं, देखो, जब ब्रहे मुनिवरों! देखो, कहीं भी, किसी भी स्थली पर कोई मानव विद्यमान है, वह ब्रह्मयागी बन जाएं, क्योंकि प्रातःकाल में ये जो जितना प्राणी मात्र है, मानो आत्मवत है, यह सर्वत्रता से प्रातःकालीन अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके, गान गाता है, यह ध्वनित हो रहा है, मानो देखो, प्राण, जो प्राणी हैं प्राणों से ध्वनित हो रहा हैं जो जीवात्मा प्राणों को समूह ले करके रत्त रहता है, वह गान गा रहा हैं तो प्रातःकालीन क्या जो मानो जितने भी परमात्मा के राष्ट्र में, प्रभु के राष्ट्र में, जितना भी प्राणी मात्र हैं, वह सब एक गान गा रहा है, और वह गान गाता हुआ अपने में प्रसन्न हो रहा है, इसी प्रकार प्रातःकालीन मानो देखो, तुम ब्रह्मयागी बनो और तू नाना प्रकार के अज्ञान में प्रवेश न करते हुए, जो मानो देखो, तुम्हारे मस्तिष्क में एक ध्वनि हो रही हैं और वह मानो देखो, स्वरों का ज्ञान हो रहा हैं, प्रत्येक वेदमन्त्रों में मानो देखो, ध्वनि होती हुई प्रतीत होती हैं वह ध्वनित होता हुआ दृष्टिपात आता है। 01.08.1985

634 महर्षि लोमश मुनि

महर्षि लोमश मुनि ने कहा कि मैं जब माता के आँगन में, जब क्रीड़ा करता था, तो माता मुझे ब्रह्म ज्ञान की, आभा में परिणत कराती रहती, मैंने ऐसा श्रवण किया है, कि जब माता की लोरियां तो मुझे स्मरण नही हैं, परन्तु, उसके पश्चात काल में माता अपने आँगन में प्रवेश कराती है, भोज्य कराती रहती है, तन्दुलों का भोज्य करा करके, गौ घृत के द्वारा प्रायः मुझे जब अन्नाद का प्रदान किया तो कहती थी कि यह जो प्रथम ग्रास हैं, हे बाल्य! वह तेरे ब्रह्म ज्ञान का है तू ब्रह्म ज्ञानी बनना। परन्तु द्वितीय जो ग्रास प्रदान किया वह प्राण कि लिए किया है। तू प्राण को जानने वाला बन, तृतीय जो उन्होंने ग्रास का प्रदान कराया तो यह कहा कि तेरा जो मन है वह पवित्र हो जाए तो माता तीन ग्रास दे करके यह कहती है कि बालक तू, तू ब्रह्मवेत्ता बन, प्राण की प्रतिक्रिया को जान और यह जो मन है इसकी आभा को ऊर्ध्वा में ला। तो यह विचार आया, कि माता ने बाल्य को अपने आँगन में ही, उसे क्या बनाना चाहती है, वह मेरी प्यारी मां, तो वह माता भी है, पितर भी है, पितर वह क्या चाहता है, कि मेरे द्वार से उत्पन्न होने वाला ब्रह्मचारी ब्रह्मवेत्ता बन जाएं प्राणों का निदान करने लगे, और यह जो मन प्रकृति का तन्तु हैं, जो मन इन तीनों रूपों में यह जो मन है यह अन्न के रूप में विद्यमान हैं, ऋषि-मुनियों ने ऐसा माना हैं। महर्षि लोमश मुनि का यह कथन रहा हैं, कि यह जो मन है यह अन्नाद में निहित रहता हैं, इसीलिए विचारा कि मानव समाज को ऊँचा बनाने के लिए, हमें पितर यागी बनने के लिए, हमें अन्न को पवित्र बनाना है अन्न कैसे पवित्र होगा? माता की भावना से अन्न पवित्र होगा और उस अन्न को पान किया जाता है, तो वह जब पान किया जाता है तो उससे मन में जो तरंगें उत्पन्न होती हैं, उन तरंगों का जन्म होता है, और वही क्योंकि मन तरंगें, मन से गुथी हुई होती हैं और वह मन से गुथी होने से वही तरंगों से, मानव के जीवन की धारा का प्रारम्भ होता हैं।

तो यह बाह्य जगत में, एक माता पितर कहलाती हैं, माता यह चाहती है कि मेरे गर्भ से ऊर्ध्वा में एक राजा, एक राजकुमार का जन्म हो,

जो राष्ट्र को ऊँचा बनाने वाला हो, अपने को राष्ट्रीयता में अनुशासन में लाने वाला हो, तो माता उसी प्रकार के विचारों को प्रदान कर देती है।

महर्षि लोमश मुनि के अपने जीवन की गाथाएं प्रगट करते हुए उन्होंने कहा कि माता ने मुझे ब्रह्मवेत्ता की शिक्षा दी है, और यह कहा कि ब्रह्म को जानने वाला ही एक महान बनता है। तो माता ने जब यह कहा तो मुझे व्रत बनाया तो व्रत बना करके मेरे हृदय में वह अब मैं जब आज्ञा से माता के आँगन जब मैं माता के कुल में जब प्रवेश कराया तो जो माता ने मुझे शिक्षा प्रदान कर दी थी, मैंने कोई उसी वेद के अंग को अपनाना प्रारम्भ कर दिया। जब मैं उस वेद के अंग को अपनाने लगा, कि ब्रह्म ज्ञान होना चाहिए, वेद कहता क्या है? वेदों में क्या शिक्षा है, तो महर्षि लोमश मुनि ने कहा है, इस सम्बन्ध में वेद में तीन प्रकार के विषय होते हैं सबसे प्रथम लौकिक होता है, हमारा लौकिक जीवन ऊँचा होना चाहिए, परन्तु तृतीय हमारा जो जीवन है, वह यौगिक होना चाहिए, परन्तु, वैज्ञानिक होना चाहिए, और तृतीय हमारा यौगिक होना चाहिए। तीन प्रकार की धाराएं प्रत्येक वेदमन्त्र में हमें निहित होती दृष्टिपात होती हैं। वेद की प्रतिभा को कौन जानता है? जो लौकिकवाद को जानता है, वह लौकिक ज्ञान और विज्ञान और लौकिक विज्ञान ही आभाएं उसमें ज्ञान, निहित रहता है द्वितीय उसमें विज्ञान क्या है? हम अणु और परमाणुओं को कैसे जानें? उसमें कितना विज्ञान हैं, उस विज्ञान के सम्बन्ध में क्या कहता है? विज्ञान मानव को कहाँ तक ले जाता है उड़ान उड़ता हुआ, उड़ान उड़ता हुआ वह प्राण की तरंगों में ले जाता है, प्राण मन से गुथा हुआ दृष्टिपात होता है, वह परमाणुओं में ले जाता है परमाणुओं में प्राण को दृष्टिपात करता हैं, प्राण को जब अणु को जब प्राण के रूप में दृष्टिपात करता है तो वह ऊर्ज्वा बन करके ऊर्ध्वा गति बना देता है।

इस प्रकार का जो विचार होता है, वह वैज्ञानिक होता है कि हम विज्ञान के मार्ग से हो करके हमें जाना हैं, अब वह विज्ञान को अपने अन्तर्हृदय में दृष्टिपात करता है। वह जो तरंगें धाराओं का जन्म हो रहा है, वह जो हमारा शब्द विज्ञान है, वह कहाँ जा रहा है? परन्तु शब्द विज्ञान की आभा में जाता है, और उसके पश्चात यह अग्नि के समीप विद्यमान हो करके विचारता है, कि अग्नि की धाराओं पर मेरा शब्द विद्यमान हो गया है, अब वह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वह शब्द ही द्यौ लोक का निर्माण करता है। वह द्यौ लोक उसी से निर्माणित होता है, वही शब्द जब मानव श्रोत्रीय बन गया, श्रोत्रीयता को ले करके वह इन्द्र लोक को प्राप्त हो जाता हैं। वही शब्द है, धारागत हो रहा है, वह भूः भुवः स्वः इन तीन धारा हैं जब मानव के अन्तर्हृदय से उत्पन्न होती है तो उनसे भूः भुवः स्वः का निर्माण हो जाता है। क्योंकि लोक को ऊँचा बनाने वाला भी विचार है परलोक को ऊँचा बनाने वाला भी विचार हैं, और प्रभु के समीप और प्रभु के मार्ग के उस पगडण्डी को ग्रहण करने वाला भी विचार है। ये तीन प्रकार की धाराएं हमारे समीप आनी प्रारम्भ होती है, परन्तु हम लौकिकता में ऊँचे बने, कि लोक में हम किस प्रकार हमारा व्यापार होना चाहिए, हम माता के समीप विद्यमान हो करके, वह हमारी पितर है, हमें उसकी सेवा करनी हैं, हमें पितर यागी बनना है, पिता के समीप विद्यमान है, परन्तु इसके समीप जा करके हमें पितर याग करना है। याग का अभिप्रायः है कि हम पवित्र अन्न उन्हें ग्रहण कराते रहें, और उनके सेवा में सदैव रत्त रहें, तो यह लौकिकवाद कहलाता है। यह जो हमारे लौकिक पितर कहलाते हैं। जो माता वह पितर है, और भी उनके पूर्वज हैं, जो पितर कहलाते हैं। उनके सुन्दर-सुन्दर हम सेवा उनके आशीर्वाद क्या उनके सु विचारों को जब ग्रहण करेंगें, तो उनके विचारों की शुभ विचारधारा हमारे अन्तःकरण में प्रवेश होगी हमारा अन्तःकरण प्रकाशित हो करके सु आभा में परिणत होता रहेगा।

ब्रह्मचारी आचार्य को पितर कहता है, वह पितर क्यों है? क्योंकि वह लौकिकवाद में ब्रह्मचारी को ले जाते हैं वह मानव को लौकिकवाद में ले जाते हैं लौकिकवाद में सबसे प्रथम लोकाचरण शिक्षा का जो प्रारम्भ होता हैं। वह केवल इसी माध्यम से होता है कि हमारा लौकिकवाद ऊँचा बनें, ब्रह्मचारी को आचार्य कहता है, आओ, तुम अपने पूर्वजों की चरणों की वन्दना करो, उनके आशीर्वाद की आभा में रत्त हो जाओ। आशीर्वाद क्या है? इसके ऊपर भी एक बड़ा गम्भीर विचार ऋषि-मुनि देते रहे हैं, आशीर्वाद का अभिप्रायः यह है कि हमारे हृदय में ही नम्रता आ जाएं, यह आचार्य कहता है हे ब्रह्मचारी! इसके लिए आशीर्वाद नही है, आशीर्वाद तेरे लिए हैं, और क्योंकि तेरा आशीर्वाद क्या है? क्योंकि तू नम्र बन जाएगा, जब तक तू नम्र नही बनेगा, जब तक शिक्षा में पारायणता को प्राप्त नही होगा। तो इसीलिए वह नम्र बनाने के लिए आचार्य चरणों की वन्दना को कहते हैं कि तेरा हृदय नमः होना चाहिए। क्योंकि वह जो परमपिता परमात्मा है, जिसने हमारे इस मानव शरीर की रचना की हैं, वह प्रायः, नम्र है, वह सर्वत्रता में विद्यमान है। वह सबका शोधन करने वाला हैं, वह हमारा पितर कहलाता हैं। तो इसीलिए हे ब्रह्मचारी! तू नम्र बन। माता के समीप जा, क्योंकि माता तेरी पितर है, तुझे जो प्रेरणा प्राप्त हुई है, माता से हुई है, माता उसके प्रति तू नम्र हो जा, और नम्र बन करके ही जैसे बाल्यकाल में बालक तेरे लिए माता नम्र बन गई थी। ऐसे तू भी नम्र बन करके नमः की आभा में रत्त हो जो सबसे प्रथम ब्रह्मचरिष्यामिजब हे बालक! तू पितर के द्वार पर जाएगा, जब बाल्यकाल का तेरा तो पितर भी नम्र बन करके ही शिशु की वन्दना की, तो जब वन्दना में परिणत हो गया था। तो तू उसके प्रति तू स्वतः नम्र बन करके

जा, आचार्यों के समीप तू विद्या का अध्ययन करने वाला हैं, तू विद्या का अध्ययन करके नम्र बन, क्योंकि यह जो विद्या है यह नम्रता से प्राप्त होती हैं। यह जब तक नम्रता नही आती है, इसको हम प्राप्त नही कर सकते, क्योंकि विद्या हमें देती है क्या क्या देती है? एक धारा को हमने जाना हैं, द्वितीय धारा का जन्म हो गया हैं, तृतीय धारा का जन्म हो गया है, धारा पर धारा का जन्म होता रहेगा। तेरे मस्तिष्क का विकास हो जाएगा, तेरे मस्तिष्क का जब विकास होगा, तो तेरे मस्तिष्क में उस ब्रह्माण्ड की प्रत्येक वस्तु तेरे समीप आती रहेगी। तू यह चाहता है यदि इसी वाक्यों को ले करके तू नम्रता को अपने में धारण करता हुआ विद्या विनोदनी को अपने धारण करता हुआ जब तू विज्ञान के युग में पंहुचेगा। जब विज्ञान के युग में पंहुचेगा वेद का दूसरा अंग है कि विज्ञान कहते हैं। 17.10.1985

635 प्राण सूत्र में विज्ञान

विज्ञान किसे कहते हैं? तरंगेंवाद में प्रवेश हो करके, हम एक तरंग को जान करके द्वितीय तरंग में जब प्रवेश हो जाते हैं। उस तरंग का हम निर्माण करते हैं, निर्माणवेत्ताओं ने हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों ने जब विज्ञान के ऊपर उड़ाने उड़नी प्रारम्भ की तो एक-एक ऋषि ऐसा हुआ है जिन्होंने एक-एक आकाश गंगा की पृथ्वियों को गिनने में असमर्थता प्रतीत हुई, एक आकाश गंगा में सूर्यों की गणना करने में ही मौन हो गया है, जब और ऊर्ध्वा में गति पंहुची, जब वह सौर मण्डलों में पंहुचा, सौर मण्डलों की गणना करने लगा तो उस समय सीमाबद्ध हो करके शान्त हो गया। जब आकाश गंगा के ऊपर आकाश गंगाओं में पंहुच गया तो अनन्य आकाश गंगाएं दृष्टिपात होने लगी, जब अनन्त आकाश गंगाएं दृष्टिपात होने लगी, तो वहाँ भी मौन हो गया और यह विचारने लगा कि आकाश गंगा कहाँ मौन हो जाती हैं। तो वह निहारिकाओं में पंहुच गया, अवन्तिकाओं में पंहुच गया तो विज्ञान ऐसा सार्थक है जो मानव उसमें संलग्न हो जाता हैं, तो गणना करता-करता तो थकित नही होता, वह मानव को जानता रहता है, अन्तिम परिणाम यह होता है एक तरंगें दूसरी तरंगें जब उनको जान करके परमाणुओं में रत्त हो जाता है।

तोवेद का ऋषि कहता है आचार्यों ने कहा कि अन्त में वह प्रभु के ब्रह्माण्ड को जानकारी में असमर्थ हो करके मौन हो जाता है, निर्माण भी करता है, निर्माण उतना ही कर सकता है, जितना सीमा में बद्ध हो करके अपने में रत्त हो जाता है, मौन हो जाता है, मौन हो करके वह कहता है आगे विचारता है, यह तो सब प्राणों की प्रतिभा कहलाती है। जो मेरी माता ने प्रथम मुझे एक अन्न का ग्रास मुझे प्रदान किया था और उसमें कहा था, तू प्राणों का निरोध कर। वह इस मार्ग से जब वह भौतिक विज्ञान से द्वितीय मार्ग को अपनाता हैं, और वह मार्ग कौन-सा है वह मार्ग उसका प्राणों का निरोध है, कहीं प्राण को अपान में लाता हैं, कहीं अपान को प्राण में समावेश कर देता है, कहीं व्यान को प्राण में समावेश करके व्यान और समान को उसमें प्रवेश करता हुआ, दसों प्राणों का एक समूह बना लेता है, और समूह बना करके वह अपनी प्रत्येक अभ्योदय में प्रवेश हो करके ब्रह्मरन्ध्र में उस प्राण की प्रतिक्रिया को ले जाता है, और विचारता रहता है, योगेश्वर अब वह योगी बन करके विचारता रहता है कि विवेकी बन करके अरे, मैंने अब तक इस ब्रह्माण्ड को जाना था, यह जो मैंने आकाश गंगा निहारिका अब तक जानी है, वह तो सब प्राण सूत्र में ही पिरोई हुई हैं, वह तो उनका तो सूत्र ही प्राण है। मैंने प्राण सूत्र को क्यों नही जाना।

तो वह जो प्राण सूत्र है उसमें ब्रह्माण्ड को पिरोया हुआ स्वीकार करके अन्त में मौन हो करके वह प्रभु की पगडण्डी को प्राप्त करने लगता है।

तो हमें पितर याग करना है, हमारे पितर कौन-कौन हैं? तो, माता की भावना कितनी विचित्र है, वह कैसी मेरी पितर है, जो अपने ब्रह्मचारी को चाहती है। अपने बाल्य गर्भ से उत्पन्न होने वाले पुत्र के प्रति कितनी विवेचना कितनी महानता रहती है, कि मेरा बालकइस संसार तक सीमित न रह जाएं। वह मेरे तक सीमित रहे, मेरे से आँगन से जा करके आचार्यों के गर्भ में रहे, और आचार्यों से जब उपराम हो जाएं तो प्रभु के आँगन में प्रवेश कर जाएं। वह मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कराने की सुयोग्य माता की यह पवित्र इच्छा रहती है।

तो पितर कौन है? पितर तो वह है जो देते रहते हैं। देते कौन हैं?

वेद के तीन प्रकार के अंग हैं तीन प्रकार के अंग है लौकिकवाद विज्ञान और यौगिकवाद ये तीन प्रकार के अंग प्रत्येक वेदमन्त्रों में दृष्टिपात आते हैं परन्तु जब हम अग्रणीय बनते हैं तो विचार आता है कि पितर कौन है, जो देते हैं, सूर्य भी हमारा पितर कहलाता है, वह सूर्य प्रकाश देता है, वह नेत्रों को प्रकाशित कर रहा है, वह पितर कहलाता हैं। चन्द्रमा भी हमारा पितर है जो वह अमृत को प्रदान करता रहता है। वह अमृत बहाता रहता है, उसे हम अपने में पितर स्वीकार करके, अपने में अग्रणीय बन गएं, यह पृथ्वी भी हमारी पितर है, क्योंकि गुरूतव में हमारा शरीर गुथा हुआ हैं, यह आपोमयी ज्योति है, आपो को पान करके ही हमें ज्योति से ज्योति प्राप्त होती हैं। आपो कौन है? जल है, अमृत हैं, वेद की आख्यिका कहती है, कि आपोमयी ज्योति है, इस ज्योति को धारण करो, वही ज्योति जब आपो ज्योति बन करके, जब खाद्य पदार्थों में कृषि उपज रही हैं, और यह उसमें आपो को जब प्रवेश करता है, तो वह ज्योति बना देती है। वह खनिज पदार्थों को ज्योति में प्रदान कर देती है, वह जल ही है जो पिण्ड के सूत्र मेंअन्नाद को मानव के समीप ला देता है, मेरे प्रभु का कितना विज्ञानमयी

जगत है, इसके ऊपर जब हम विचारते रहते हैं तो अन्त में मौन हो जाते हैं। विचारते हैं आपो कैसा मेरे प्रभु ने यह संगतिकरण आपोमयी बनाया है, यह आपो कैसे पितर है, वह गुरूतव पृथ्वी से आता हैं, और गुरूतव के परमाणु जब, जल में प्रवेश होते हैं, तो जल उन्हीं के परमाणुओं का पिण्ड बना देता हैं। उन्ही परमाणुओं का जब वह पिण्ड बना देता हैं, पिण्ड बना करके आपोमयी वह ज्योति कहलाती हैं, वास्तव में ज्योति हैं, अन्नाद को मानव पान करता है। तो उसे ज्योति प्राप्त हो जाती हैं, उस ज्योति का स्रोत कौन है? उस ज्योति का स्रोत यदि कोई है, तो आपोमयी अनुपम ज्योति हैं, उस ज्योति को पान करके मानव अपने क्रियाकलापों में रत्त हो जाता है। आपों मेंपिण्ड बना देती है, उसी पिण्ड को छिन्न भिन्न करने वाली अग्निमयी वही उस पिण्ड का विभाजन कर देता है। वह विभाजन कैसे हो रहा है, जब सृष्टि के पिता ने इस मानव शरीर का निर्माण किया तो गुरूतव, आपो, अग्नि उन परमाणुओं का विभाजन करती रहती हैं। मानव के शरीर में परमाणुओं का विभाजन हो रहा हैं प्रत्येक पिण्ड का विभाजन हो रहा हैं, जब हम बाह्य जगत में जाते हैं, तो वहाँ भी विभाजन हो रहा हैं, अग्नि जो भी कुछ अपने हम अर्पित कर देते हैं उसको अग्नि विभाजन कर देती हैं। विभक्त क्रिया बना देती है, वह कहाँ देती है विभाजन करके वह प्राण सूत्र को प्रदान कर देती हैं वह वायु भी हमारा पितर कहलाता हैं। क्योंकि वायु में प्रवेश हो जाता हैं, वह विभाजन जो किया है उसको गति देने वाली वायु है, वह हमारी पितर कहलाती हैं। वह अन्तरिक्ष में प्रवेश हो जाती है, वह वायु तब ही तक गति देती है, जब अन्तरिक्ष उसके द्वारा है तो अन्तरिक्ष भी हमारा पितर कहलाता है। जैसे मानव के शरीर में पंचाग्नि अपना प्रकाश कर रही है, परन्तु उनकी हृदयों में स्थिति हो जाती हैं, हृदयों में ही साकल्य बन करके रहती है। पृथ्वी आपो अग्नि सब वायु यह सब अन्तरिक्ष में पदार्थों को ले करके, अपने-अपने रूप में रत्त रहती है, तो वह आपोमयी सोम देता हुआ, अन्तरिक्ष आपो हमारा पितर है, वह अन्तरिक्ष में ही आपो निहित हो जाता हैं। शाश्वत है ये हमारे पितर कहलाते हैं।

पितर कौन हुए? पृथ्वी भी हमारी पितर है, आपो जल भी हमारा पितर है, अग्नि भी हमारा पितर है, वायु गति देता है, वह पितर है, अन्तरिक्ष में हम भ्रमण करते हैं, वह भी हमारा पितर कहलाता हैं। ये पितर कहलाते हैं, इसीलिए हमें पितर याग करना चाहिए। पितर याग का अभिप्रायः यह है किहम यथोचित इनका अपने हृदय में समाहित करके पूजन करना चाहिए। 04.08.1985

तीनों प्रकार के प्राणी प्रत्येक लोक-लोकान्तरों में प्राप्त होते हैं। प्रायः उनके उद्गीता हमें प्राप्त होती हैं। कहीं आग्नेय प्राणी रहते है। सूर्य जो मण्डल है, उसमें आग्नेय प्राणी रहते है। पृथ्वी में जहाँ पार्थिवतत्त्व है। वहाँ पार्थिव प्राणी रहते हैं, जहाँ जल है वहाँ जल प्रधान वाले प्राणी रहते हैं। तो नाना लोक-लोकान्तरों में रत्त रहने वाला प्राणीमात्र अपने धिराज को चुनौती प्रदान करता रहता है। १७-१०-१९८५

636 पृथ्वियां

जैसे माता का पुत्र, माता की माला बना हुआ है। माला का अभिप्राय यह है कि इसमें हमें अपने को लगन, संलग्न कराना है। जैसे ये माला बन जाती है। पुत्र-पुत्रियाँ माला है, उनकी माला पिता कहलाते है अथवा माता कहलाती है। आचार्य के कुल में आचार्य का शिष्य एक माला है और शिष्यों के आचार्य माला है। यह कैसी पवित्र माला एक-दूसरे में पिरोई हुई हैं। विचार यह है जिसके ऊपर हम परम्परागतों से विचारते रहते है। परन्तु जब हम ओर ऊर्ध्वा में जाते हैं, गति करने लगते हैं, तो ये जो पृथ्वी है, ये पृथ्वी आपो में पिरोई हुई है। ये पृथ्वियों की एक पृथ्वी नहीं, दो नहीं, अनन्य पृथ्वियों की एक माला बनी है। किसी काल में माला बनी थी पृथ्वियों की। 30.10.1985

637 लोकों की ओत प्रोतता

वेद के आचार्य, वैज्ञानिक तो ये कहते हैं कि तीस लाख पृथ्वियों की माला बनी। तीस लाख पृथ्वियों की माला बनकर के इन मालाओं को कौन धारण कर रहा है? सूर्य इस माला को धारण कर रहा है और एक सहस्र सूर्य, जब दृष्टिपात हुए तो उनकी एक माला बनी। उसको कौन धारण कर रहा है? बृहस्पति धारण कर रहा है। बृहस्पति उस माला को अपने में पिरो रहा है। तो एक सहस्र बृहस्पतियों की माला बनी तो उसको कौन धारण कर रहा है? उसको आरुणि मण्डल अपने में धारण कर रहा है, वह उस माला को अपने में सूत्रित कर रहा है। एक सहस्र आरुणि मण्डलों की माला बनी, तो उसको ध्रुव ने धारण कर लिया। ध्रुव इतना विशाल है, एक सहस्र ध्रुवों की माला बनी, तो मूल नक्षत्र ने उसको धारण कर लिया। एक सहस्र मूल नक्षत्रों की माला बनी तो उसको स्वाति मण्डल ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र स्वाति मण्डलों की माला बनी। तो उसको अंचगलोक ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र अंचग मण्डलों की माला बनी तो उसको रेणकेतु मण्डल ने अपने में धारण कर लिया एक सहस्र रेणकेतु मण्डलों को मृचिका मण्डलों ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र मृचिकाओं को कृतिमण्डल ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र कृतिमण्डल को गन्धर्व लोकों ने अपने में धारण कर लिया। ये प्रभु का कैसा अमूल्य जगत, माला के रूप में दृष्टिपात आ रहा है। जब इसके ऊपर अन्वेषण करते हैं, विचार करते हैं, तो ब्रह्माण्ड हमारे समीप आ जाता हैं, वेद के आचार्यों ने समाधिष्ट होकर के, साधना में परिणत हो करके मन और प्राण को एकाग्र करके आत्मा के प्रकाश में, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करने का प्रयास किया। 30.10.1985

638 समाधि में ब्रह्माण्ड की कल्पना

ऋषि कहते है, आख्यायिका कहती है कि इतने मण्डलों का एक सौर मण्डल बन जाता है। इस प्रकार के ८५ लाख सौर मण्डलो को, धारण करने वाली एक आकाशगंगा कहलाती है।, ९० करोड़ ८५ लाख ४९ हजार ९२ आकाशगंगाओं को एक अपने में पिरो रही है, अपने में धारण कर रही है। ऋषि मुनियों ने ये समाधि के द्वारा इस ब्रह्माण्ड की कल्पना की। तो एक सहस्र क्या? ९० करोड़ ५५२ अवन्तिकाओं को एक निहारिका अपने में धारण कर रही है।

तो ये कैसी माला है? ये कैसा अनुठा जगत है? जिसके ऊपर मानव चिन्तन करता-करता मौन हो जाता है और विचारता है। ऋषि मुनि यहाँ आकर के मौन हो जाते हैं, विचारते रहते हैं, माला को अपने में धारण करते रहते। तो ये कैसी विचित्र माला, निहारिका, अवन्तिका, आकाशगंगाएँ, सौरमण्डल, एक दूसरे में ये कैसे पिरोए हुए है? कैसे सूत्रित हो रहे है? एक-दूसरे में माला को धारण कर रहे है, जैसे माता अपने पुत्र को धारण कर रही है, अपनी माला बनाकर के उसका कृत्तियों में अपना रूप धारण करा देती है। तो जैसे राजा की प्रजा माला है और प्रजा की राजा माला है ये सूत्र में प्रतीत होता हुआ जगत दृष्टिपात आता है। 30.10.1985

639 तीन प्रकार के परमाणु

संसार में परमाणु तीन प्रकार के होते हैं, एक परमाणु वह होता है, जिसमें गुरूतव होता है, एक परमाणु वह होता है, जो एक दूसरे की प्रतिभा का निरोध करता है, एक अग्नि का परमाणु है, यह जल परमाणु अग्नि परमाणु और पार्थिव परमाणु कहलाते हैं। 17.11.1985

महाभारत के काल में, एक सुकेशु नाम का वैज्ञानिक चन्द्रमा से पृथ्वी मण्डल पर आया था। महाभारत के काल में उसने, उस यन्त्र की युक्तियां, इन्हें नियुक्त की थी, और घटोत्कच्छ और भगवान कृष्ण को इन्होंने सब युक्तियां दे करके उस यन्त्र का निर्माण हुआ था। 17.11.1985

640 विज्ञान का मूल

आध्यात्मिकवाद और भौतिकवाद दोनों के समन्वय कराने का नाम याग है, जो सुगन्धि देता है, वही सुगन्धि द्यौ लोक में जाती है, सूर्य की किरणों के साथ जाती है और वही किरणें द्यौ लोक में प्रवेश करके, द्यौ लोक में जा करके वहीआध्यात्मिकवाद की जो तरंगें हैं उनमें प्रवेश कर जाती है। वही विज्ञान का मूल बनती है, क्योंकि वही तरंगें, विज्ञान के वांगमय में प्रवेश हो करके महानता की ज्योति को प्रदीप्त करती रहती है। 19.04.1986

641 तीन परमाणुओं से यन्त्र निर्माण का योगी को बोध

योगी तो अन्न को त्याग देता है। जल को त्याग देता है, कौन-कौन-सी नाड़ियों में जल प्रधान है, कौन-कौन सी अग्नि प्रधान है, कौन-सी में गुरूतव प्रधान है, इन सब प्रधानता को जान करके साकल्य बनाता है। और साकल्य बना करके तीन प्रकार के परमाणु है गुरूतव, तरलतव और तेजोमयी तीन प्रकार के परमाणुओं का जब से सृष्टि का प्रारंभ हुआ है, नाना योगी इन्हीं के ऊपर अनुसन्धान करते चले आए, इन्हीं परनाना प्रकार के यंत्रों का निर्माणकहीं ब्रह्मास्त्र, कहीं वरुणास्त्र, अग्नेयास्त्रों का निर्माण होता रहा है। ऐसे-ऐसे यंत्रों का निर्माणवैज्ञानिकों ने किया है क्या, उसको वायुमण्डल में त्याग दो, तो रात्रि हो जाएगी। एक यन्त्र को त्यागों तो दिवस आ जाएगा। एक यन्त्र को त्यागों तो प्राणी मात्र नष्ट हो जाएगा, एक यन्त्र को त्यागा जाए तो उनकी तरंग भी बनी हुई है आधी पृथ्वी मण्डल के परमाणु अपने में प्राणवर्धक को सिंचन कर लेता है, प्राणी नष्ट हो जाता है। 16.11.1986

642 परमाणु में ब्रह्माण्ड दर्शन

इस प्रकार के यंत्रों को अब तक ऋषि-मुनियों ने जाना है एक परमाणु का विभाजन करता है, उस परमाणु में ब्रह्माण्ड का दर्शन होता है, एक परमाणु का दर्शन करता है, तो ब्रह्माण्ड उसमें लय होता हुआ दृष्टिपात आता है। एक परमाणु का वैज्ञानिक विभाजन करता है तो सर्वत्र जगत, जैसे जगत मृत्यु को प्राप्त होता है, प्रत्येक प्राणीमृतक आंगन में प्रवेश कर रहा है। तो मैं विज्ञानवेत्ता तो हूँ नहीं, परन्तु जो दर्शन कहता, वेद कहता है वह हम परिचय रूप में लाने का प्रयास करते हैं। परिणाम क्या वह विज्ञान अपने में कितना अनूठा बन करके योगी जब अपने लघु मस्तिष्क में, आकाश गंगा को दृष्टिपात करता है, कहीं अवन्तिका दृष्टिपान करने लगता है, कहीं, निहारिका में चला जाता है। एक-एक मण्डल में, एक-एक वह गणना भी शून्य बिन्दु पर चली जाती है, जब योगी लघु मस्तिष्क, रेणकेतु मस्तिष्कों दोनों का समावेश होता है और यह जो करोड़ों नस नाड़ियाँ हैं, इनका ब्रह्मरन्ध में समावेश और लघु मस्तिष्क और, हृदय वाचक मस्तिष्क में यह समावेश हो करके यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड का दर्शन करता है। 16.11.1986

643 परमाणुओं के तीन प्रकार

तो ऋषि भारद्वाज मुनि महाराज ने अपना वक्तव्य देते हुए कहा कि मेरे विचार में तो मृत्यु अंधकार है, यह परमाणुओं का संघात है। जगत

परमाणुओं के संघात से आत्मा उन परमाणुओं को अपने में धारयामि बनाता रहता है। वह चेतना है, चेतना जड़वत को अपने में वृत्तियों में धारण कराता रहता है उसी से यह मानव का शरीर दृष्टिपात आता है। अपने अपने परमाणु में क्योंकि तीन परमाणु हैं। एक गति कराता है, एक अवकाश जिसमें वह वास करता है तीन ही परमाणु तो संसार में हैं। उन परमाणुओं में जिसमें गुरूतव, तरलतव और तेजोमयी, ये तीन प्रकार के परमाणु कहलाते हैं। इन तीन प्रकार के परमाणुओं का समूह एकत्रित होता है, एक चेतना के माध्यम से वही चेतना जिसको आत्म तत्त्व कहते हैं। उसी से जब आत्मा निकल जाता है तो वह परमाणु अपने-अपने स्वरूप में परिणत हो जाते हैं। अपने अपने स्वरूप में रत्त हो जाते हैं।

तो अपने अपने स्वरूप का अभिप्राय वेद का मन्त्र कहता है कि संसार में किसी वस्तु की मृत्यु नहीं हुआ करती है, यह तो रूपांतर है, जगत केवल रूपांतर मात्र माना है। या कोई वस्तु अपने स्वरूप में जाने के लिए ही सदैव लालायित रहती है। तो इसलिए आत्मा को जानने के लिए, मानव परम्परागतों से प्रयास करता रहा है और यह विचारता रहा है कि मैं जो चेतना रूप हूँ, मैं क्या हूँ, किससे मेरा समन्वय है? तो यह विचारता हुआऊर्ध्व उड़ाने उड़ता रहता है, अपने में रत्त होता रहता है। तो वेद का ऋषि कहता है कि मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नहीं होती। यह तो अन्धकार है अन्धकार को त्यागना ही जीवन है, प्रकाश है। और जब मानव परमात्मा के राष्ट्र में अपने को स्वीकार कर लेता है कि मैं प्रभु के राष्ट्र में रत्त हो गया हूँ। तो उस समय प्रभु के राष्ट्र में सदैव प्रकाश रहता है, जहाँ सदैव प्रकाश रहता है वहाँ रात्रि नहीं होती, और जहाँ रात्रि नहीं होती, वहाँ आलस्य और प्रमाद नहीं होता और जहाँ आलस्य और प्रमाद नहीं होता जहाँ रात्रि भी नहीं होती वहाँ मृत्यु भी नहीं हुआ करती है। वहाँ सदैव प्रकाश रहता है। 11.07.1986

भारद्वाज मुनि

भारद्वाज मुनि से ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धि ने हा कि सूर्य का वाणी से क्या समन्वय रहता है? उस समय महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने वेदमन्त्रों को उच्चारण करते हुए कहा कि यह सूर्य नाना पृथ्वियां को अपने में धारण कर रहा है, धारयामि बना रहा है। विष्णु रूप को धारण करते हुए यह सूर्य तीस लाख पृथ्वियों का अधिपति सूर्य कहा गया है। इसी प्रकार जितना भी गुरूतव मण्डल है वह सब सूर्य से सहायता को प्राप्त करता रहता है नाना प्रकार के मण्डलों की आभा में रत्त रहने वाल यह सूर्य कितना विशाल है। वह पालना में रत्त रहता है लोक-लोकान्तरों में विष्णु एक मण्डल है, जो गन्धर्व और स्वाति के मध्य में स्थिर रहता है, अरूण्धती के अग्रणीय भाग में विद्यमान है। विष्णु मण्डल में नाना प्रकार का विज्ञान भी पनपता रहता है, विज्ञान अपनी आभाओं में रत्त रहता है। ऋषि ने जब इस प्रकार वर्णन किया तो राम और शोभनि दोनों मौन हो गएं।

644 महर्षि भारद्वाज

महर्षि विश्वामित्र पुनः दंडक वन में गए। उन्हें उसी आश्रम में ले गए, जहाँ उन्होंने अस्त्रों-शस्त्रों का अध्ययन किया था। जैसे ही उनका वहाँ गमन हुआ, तो महर्षि भारद्वाज, ब्रह्मचारी सुकेता, और कवन्धि तीनों ने महर्षि विश्वमित्र से मिलन करने को आश्रम में प्रवेश किया और वेद की आख्यिकाए प्रकट की, महर्षि भारद्वाज मुनि बोले कि हे राम! हे लक्ष्मण! तुम धनुर्वेद में इतने पारायण हो जाओ, जिससे तुम रूढ़िवाद को समाप्त करके, एकोकीवाद का प्रसार कर सको। महर्षि भारद्वाज मुनि छह माह तक वहाँ रहें। उन्होंने जल अस्त्र, वरुण अस्त्र, तथा एक ऐसे यन्त्र का निर्णय कराया, जिसमें विद्यमान हो करके, यह जाना जाता है, कि पृथ्वी के गर्भ में, कितनी दूरी पर कौन-सा परमाणु है। कौन-सा खनिज तप रहा हैं कौन-सा खनिज तप करके क्या-क्या कर रहा है, ये तो पृथ्वी के गर्भ वाले यन्त्रों को उन्होंने निर्माणित किया उन्होंने कहा कि राम! मुझे बाल्यकाल में, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव इस प्रकार का अध्ययन कराते रहे हैं। मेरा एक यन्त्र हैं जिसमें विद्यमान हो करके हम लोक-लोकान्तरों की यात्रा करते हैं। 04.08.1987

645 लोकों की माला

विज्ञान को उन्होंने इतना जाना है कि तीस लाख पृथ्वियों तक इस ब्रह्माण्ड को मापा, परन्तु ब्रह्माण्ड को यही तक नहीं मापा, उन्होंने कहा कि तीस लाख पृथ्वियों की माला बनी है, और उस माला को धारण करने वाला, यह सूर्य कहलाता है। यह सूर्य इतना विशाल मण्डल है, जैसी यह पृथ्वियां है परन्तु ऐसी-ऐसी तीस लाख पृथ्वियां सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती है। यह उनको धारण करता रहता है। परन्तु जो लघु मस्तिष्क वाले योगेश्वर होते है, जो ब्रह्मरन्ध्र से ऊर्ध्वा भाग में प्रतिभा में मस्तिष्क में चले जाते है। तो उससे यह प्रतीत होता है कि जैसा यह सूर्य मण्डल है, ऐसे-ऐसे एक सहस्र सूर्य जिनको बृहस्पति अपने में धारण करता रहता है। उनकी माला बना करके वह जो अपने में धारण कर रहा है। कैसी विचित्र माला है। मेरे प्रभु के ब्रह्माण्ड की यहीं तक ऋषि शान्त नहीं हो जाते है, वैज्ञानिकों ने योगाभ्यास के द्वारा यह निर्णय कराया कि जैसा यह बृहस्पति मण्डल है, ऐसे-ऐसे एक सहस्र बृहस्पतियों की माला बन करके उसको आरूणि मण्डल अपने में धारण कर लेता है। आरूणि मण्डल पर जा करके ऋषि मौन नहीं हो जाते है, एक सहस्र आरूणि मण्डलों की माला बनी, जिसको ध्रुव

मण्डल अपने में धारण कर रहा है। उसको धारण करता हुआ, अपने में अनुसंधान करता हुआ, आचार्य कहता है, योगेश्वर कहता है, लघु मस्तिष्क में जो उसे दृष्टिपात आ रहा है, जो उसे अनुभव में ला रहा है, वह कहता है कि एक सहस्र ध्रुव मण्डलों की माला बनी, उसे मूल नक्षत्र अपने में धारण कर रहा है। एक सहस्र मूल नक्षत्रों की माला बनी जिसको स्वाति नक्षत्र अपने में धारण कर रहा है। एक सहस्र स्वाति नक्षत्रों की माला बनी, जिसको रेणवृत्तिका धारण कर रहा है। एक सहस्र रेण कृतिकाओं की माला बनी, जिसको अचंग मण्डल अपने में धारण कर रहा है एक सहस्र अचंग मण्डलों की माला बनी, जिसको कृति काञ्चकु वाच मण्डल अपने में धारण कर रहा है, एक सहस्र काच्चकु मण्डलों की माला बनी जिसको गन्धर्व अपने में धारण कर रहा है। वेद के मन्त्रों के आधार पर, जब मानव अपनी उड़ान उड़ना प्रारम्भ करता है, तो मालाओं की गणना करने लगता है। इतने मण्डलों का एक सौर मण्डल बनता है, इतने मालाओं की एक सौर मण्डल बना।

तो ऋषियों ने गणना की तो लगभग पिचान्नवे करोड़ नवासी लाख, उन्नचस हजार, पांच सौ इक्सठ इस प्रकार के सौर मण्डलों की एक आकाशगंगा का निर्माण हो जाता है। प्रभु का कितना विशाल मण्डल है यह, इतने सौर मण्डलों की एक आकाश गंगा एक अरब पिच्चानवे करोड़ नवासी लाख उन्नचस हजार पांच सौ इक्यासी के लगभग इतनी आकाश गंगाओं की एक अवन्तिका बन जाती है। एक अवन्तिका बन गई है, यह कैसा मेरे प्यारे प्रभु का ब्रह्माण्ड है, जिसके ऊपर मानव विचार विनिमय, सृष्टि के प्रारम्भ से नाना प्रकार के विज्ञानवेत्ता इसके ऊपर विचार-विनिमय करते रहे है। लगभग एक अरब पिच्चानवे करोड़, इक्यासी लाख, उन्नचस हजार पांच सौ एक के लगभग इतनी अवन्तिकाओं की एक निहारिका बन जाती है। तो यहां आ करके ऋषि मौन हो गया है। प्रभु के ब्रह्माण्ड को विचारना ही शान्त कर दिया। जब मैंने अपने विज्ञान के माध्यम से यौगिक और भौतिकवाद को जानने का प्रयास किया है। सर्वत्र ब्रह्माण्ड का अरे, कोई न कोई सूत्र बना हुआ है, जो नाना प्रकार के मनको को धारण करने वाला, वह ब्रह्म है, उस ब्रह्म को ही एक सूत्र रूप में स्वीकार करते है। 15.08.1987

646 महर्षि भारद्वाज मुनि विज्ञान विमर्श

हमारे यहां वैदिक साहित्य में एक वृणित नाम के एक परमाणु का वर्णन होता रहता है, जिस वृणितकेतु परमाणु के ऊपर कहीं महर्षि भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में ब्रह्मचारी सुकेता और ब्रह्मचारी कवन्धि ने उस परमाणु के ऊपर अनुसन्धान किया तो जब उसको विचारने लगे, अन्वेषण करने लगे, यन्त्रों में प्रवेश कर गएं, तो उस परमाणु का ऐसा विभाजन हुआ, ऐसी विकृति आई कि उसमें से उसका विभाजन हुआ, और सर्वत्र ब्रह्माण्ड उसके गृह में दृष्टिपात आने लगा, तो हमारे यहां वैदिक साहित्य में भिन्न-भिन्न प्रकार के इस प्रकार के मन्त्रार्थ आते रहते हैं, जिन मन्त्रों के ऊपर ऋषि-मुनि एक-एक मन्त्र के ऊपर वर्षों समाप्त हो जाते हैं, और विचार करता रहता है कहीं प्राणों के ऊपर कहीं गति के ऊपर अन्वेषण करने लगता है। तो भिन्न-भिन्न प्रकार की उड़ाने उड़ता हुआ, अपने में बहुत दूरी तक अनुसन्धान करता रहा है।

जब भी मानव ने नाना प्रकार के आविष्कार किए हैं उन आविष्कारों के के मूल में जाने का प्रयास किया है तो उसके मूल में पंहुचे तो नाना प्रकार के आविष्कारों का जन्म हो जाता है। मूल है कि यह अग्नि की तरंगें हैंजैसे काष्ठ में रहने वाली अग्नि है और अग्नि का समन्वय जब परमाणुवाद से उसकी प्रतिभा और उसकी वृत्तियों को हम अपने में निर्णायक बनाना चाहते हैं, तो, वह अपने में एक महानता की आभा में रत्त हो जाती है। उसके ऊपर अनुसन्धान उसके मूल को विचारता है, और मूल को विचार करके ही उसका वृक्ष बन जाता है। जैसे मानव एक मूल में चला जाता है, तो जैसे शब्द के मूल में पंहुचा, और शब्द के मूल में जाने के पश्चात मानव ने जब उसके ऊपर चिन्तन करना प्रारम्भ किया, अन्तर्हृदय में प्रवेश कर गएं, अन्तरात्मा की वृत्तियों को विचार करके हृदय को जब व्यक्त करने लगे, तो उसका वृक्ष बनना प्रारम्भ हो जाता है। वही विशाल बन करके वही विज्ञान के रूप में परिणत हो जाता है, मानव के मस्तिष्क में नाना प्रकार की अनुपम धाराएं होती हैं, उन धाराओं को विचारता रहता है, एक धारा को विचारा, उसके मूल गहन गम्भीर सूत्रता में से वह उसको यह प्रतीत होने लगता है, कि तू कैसे सूक्ष्म जगत में चला गया है, कैसे सूक्ष्म रहस्यतम में गमन कर गया है तो मानव उसके ऊपर अन्वेषण करता हुआ, विचार करता हुआ, उस शब्द के एक मूल रूप में जा करके, उसका वृक्ष बनाना प्रारम्भ कर देता है। वही वृक्ष आगे चल करके, वैज्ञानिकता में प्रवेश कर जाता है। विज्ञान का रूप धारण करने लगता है, तो इसी प्रकार मानव का जो चिन्तन है, हमारे यहां वैदिक साहित्य वालों ने, इसके ऊपर बड़ा अनुसन्धान किया है। 01.12.1987

647 माता अरून्धती और वशिष्ठमुनि महाराज का चिंतन

माता अरून्धती और वशिष्ठमुनि महाराज के विचारों में जा रहा था। जिस काल के, रात्रि के अन्तिम और प्रारम्भ के पहर में, दोनों ने ब्रह्म-चिन्तन ज्ञान और विज्ञान की उड़ानें उड़ते रहते थे, किस नक्षत्र क, किस नक्षत्र से क्या-क्या समन्वय है? जैसे अरून्धती के निचले भाग में,

ध्रुवकेतु एक मण्डल कहलाता है। उस ध्रुवकेतु मण्डल का अरून्धती मण्डल से क्या सम्बन्ध है? अरून्धती मण्डल का, एक रोहिणीकेतु मण्डल का सम्बन्ध रहता है। उसका वशिष्ठसे क्या सम्बन्ध है? वशिष्ठमण्डल औरस्वाति और ध्रुव मण्डल का एक-दूसरे से समन्वय रहते है। एक हमारे यहाँ कृति भानुमण्डल कहलाता है, जिस मण्डल का सम्बन्धअरून्धती से और वशिष्ठसे होता हुआ और जब माता के गर्भ में आठवा माह होता है, इन नक्षत्रों का तो वह ब्रह्मरन्ध्र से समन्वय होता है और उसकी तरंगें बाल्य के ब्रह्मरन्ध से उसका समन्वय हो करके, वह बाल्य उनसे तरंगित होता है। तो कैसे प्रभु ने एक-दूसरे से यह संसार को कटिबद्ध किया है। माता अरून्धती कहती है प्रभु! यह कैसा नृत्य है मेरे देव का, इस प्रकार की विचारधारा जब होती रहती है तो राजा सायंकाल को आए थे तो रात्रि समाप्त हो गई, इन्हीं विचारों को श्रवण करते-करते, प्रातःकाल होते ही राजा ने ऋषि के चरणों में मस्तिष्क वन्दना की। उन्होंने कहा, राजन्! तुम किस काल में आए? राजा ने कहा, मैं आपके संग में सायंकाल को आ गया था, रात्रि समय आपके विचारों में मन मग्न हो गया, और मन मग्न हो करके मुझे यह प्रतीत नहीं हुआ कि रात्रि किस काल में चली गई। 22.03.1988

648 मण्डलों की माला

सूर्यों की माला बनी, बृहस्पति ने अपने में धारण कर ली। विचारवानों ने, वैज्ञानिकों ने, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं ने विद्यमान होकर के उड़ान उड़ने लगे। एक सहस्र बृहस्पतियों की माला बन करके उसे आरूणि मण्डल ने अपने में धारण कर लिया। आरूणि मण्डल इतना विशाल है कि एक सहस्र बृहस्पति समाहित हो गए। जब उनकी माला बनी, तो एक सहस्र आरूणि मण्डलों की माला बन करके उसे ध्रुव ने अपने में धारण कर लिया। ध्रुव मण्डल कितना विशाल मण्डल है कितना व्यापिक है। विचारवानों ने जब ओर अनुसंधान किया, तो एक सहस्र ध्रुव मण्डलों की माला बनी उसको स्वाति नक्षत्र ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र स्वाति नक्षत्रों की माला बनी तो उसको मूल नक्षत्रों ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र मूल नक्षत्रों की माला बनी जिसको रोहिणी मण्डल ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र रोहिणी मण्डलों की माला बनी तो उन मण्डलों को अचल मण्डल ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र अचल मण्डलों की माला बनी जो कृतिका मण्डल ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र कृतिका मण्डलों की माला बनी उसको ग्रहण केतु मण्डल ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र ग्रहणकेतु मण्डलों की माला बनी तो उन्हें गन्धर्व ने अपने में धारण कर लिया। प्रभु का राष्ट्र कितना विचित्र है।

इतनी माला बनी, इतने नक्षत्रों की माला बनी, इतने नक्षत्रों का एक सौर मण्डल बन गया सौर मण्डलों को भी कोई धारण कर रहा है। वेद का मन्त्र कहता है आख्यायिका कहती है। एक सहस्र सौर मण्डलों की एक आकाश गंगा बनी। आकाश गंगा कैसी विचित्र है। इस आकाश गंगा में एक आकाश गंगा नही, दो नहीं वेद की आख्यायिका तो यह कहती है १, ९९, ६९, ७९, ५६१ एक अरब, निन्यानवे करोड़, उनहत्तर लाख, उन्नासी हजार, पांच सौ इक्सठ के लगभग आकाश गंगाओं की एक निहारिका बनी। एक निहारिका नहीं, दो निहारिका नहीं पौने दो अरब के लगभग ऐसी निहारिकाओं की एक अवन्तिका बन जाती है।

तो प्रभु का कितना विशाल मण्डल है। ऋषियों ने अपनी समाधि के द्वारा यहाँ तक इस मण्डल को जाना। आगे वह मौन हो गया और मौन होकर के यह कहा कि यह तो अनन्तमयी जगत है। प्रभु का कितना विशाल जगत है, इसके चिन्तन में लग जाओ, तो मानव का जीवन एक नहीं, दो नहीं कई जीवन समाप्त होते चले जाएंगे, अन्त में वह प्राणी मोक्ष को प्राप्त हो जाएगा। उसकी कितनी महानता है। 06.01.1989

649 महर्षि भारद्वाज का जीवन वृत्त

महर्षि वैशम्पायन और साकल्य मुनि ने यह कहा कि प्रभु! हम ये जानना और चाहते हैं क्योंकि आपका जो गोत्र है वो भारद्वाज कहलाया गया है और भारद्वाज गोत्र में बहुत से वंशलज हुए हैं और भारद्वाज गोत्र का जो निकास हुआ है वो हरितत गोत्रों से हुआ है। हरितत गोत्रों का निकास अंगिरस से हुआ है। और अंगिरसगोत्रों का जो निकास है वह ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से हुआ है। हे प्रभु! हम ये जानना और चाहते हैं। इनमें कोई भी ऐसा विज्ञानवेत्ता नहीं हुआ जिस विज्ञान का तुमने वर्णन किया है, और हमें दृष्टिपात कराया है, सब ब्रह्मवेत्ता हुए है, ब्रह्मनिष्ठ हुए हैं, ब्रह्मवर्चोसि हुए हैं, परन्तु ये आपको प्रेरणा कहाँ से प्राप्त हुई? तो भारद्वाज मुनि ने कहा कि इसकी प्रेरणा देने वाले मेरे माता और पिता है। मेरे पिता का नाम रेंगणी भारद्वाज था और माता का नाम शकुन्तका था दोनों ने मुझे धिक्कारा, एक मिथ्या वाक् उच्चारण करने पर। उसी समय से मैंने परमाणु विद्या के ऊपर अध्ययन किया और मैंने महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के यहाँ वेदामृत का जब अध्ययन करने लगा तो परमाणु विद्या के ऊपर अध्ययन किया और परमाणु विद्या में जानते जानते यह संसार एक परमाणु विद्या से घिरा हुआ है। विचित्रता में रमण करता रहता है। एक-एक तरंग शब्दों में तरंगों के ऊपर अध्ययन करना हमारा कर्तव्य रहा है। आध्यात्मिकवाद में भी तरंगों को जानता हुआ आत्म चेतना में प्रवेश करता हुआ, आत्म तत्त्व और परमात्मा के राष्ट्र में वो भ्रमण करता रहता है। 12.02.1989

650 महाराज अर्जुन

द्वापर के काल में मंगल मण्डल में महाराज अर्जुन का वास हुआ था, तो मंगल मण्डल से, वह ब्रोहत नाम की, एक औषध को लाए और उस औषध में यह विशेषता रही है, कि उसी औषध में एक वृत्तिका एक वनस्पति होती है, उसे उन्होंने खरल किया और मृचिका ओर मौन कृतिका एक पर्वतों में औषध होती है, उसको खरल बना करके, तपा करके उसका पिपाद बना करके, शरीर पर मर्दन करने से अग्नि में वह स्वतः भ्रमण कर सकता है प्राणी, उसको अग्नि भस्म नही कर सकती है क्योंकि उसका जो नृत्त है, वह औषध है वह बड़ा विचित्र माना गया है। 02.03.1990

651 महाराजा शिव नाम

हिमालय की कन्दराओं मेंशिव नाम के राजा रहते थे। वह रावण के वंशलज में भी उनका बड़ा सौभाग्य रहा है, कि उसको ऊर्ध्वा बनाने के लिए, वह चन्द्रमा, अपने में एक मस्तिष्क परउनका ताज वृत रहता है, जो एक राष्ट्रीय ध्वजा होती है, एक राष्ट्रीय वृत्ति रहती है, तो उस राष्ट्रीय वृत्ति में उनकी चन्द्रमा का एक आकार बन जाता था, वह चन्द्रमा का आकार क्यों बना हैं? क्योंकि इसके ऊपर महाराजा शिव बड़े अनुसन्धान करते रहे और अनुसन्धान करने से उन्हें यह प्रतीत हुआ उन्हें, यह अनुभव हुआ कि यह जो चन्द्रमा है, इसके ऊपर मुझे विचार-विनिमय करना चाहिए?

652 महाराजा शिव का चन्द्रमा पर अनुसन्धान

महाराजा शिव जब वह अनुसन्धान करते रहे और महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज की उन्होंने सहायता ली, और विभाण्डक मुनि से कहा कि हे प्रभु! मैं चन्द्रमा के विज्ञान में रत्त रहना चाहता हूँ, उन्होंने कहा कि-प्रभु! आप चन्द्रमा से क्यों? इतना आपका सम्मिलन हुआ है? आपका इतना वृत्तियों में और आभा में रत्त रहने से आपकी प्रेरणा क्यों जागरूक हुई है? तो महाराज शिव ने कहा-प्रभु! न प्रतीत मेरे अन्तर्हृदय में प्रेरणा जगी है और जागरूक हो करके मैं यह अवश्य उच्चारण अपने में जानना चाहता हूँ कि इसमें क्या रहस्य है, क्या विज्ञान है और इसमें रूद्र रूपाणि कहा जाता है। उन्होंने कहा कि विभाण्डक मुनि ने कहा कि यह जो चन्द्रमा है, यह सबसे प्रथम इसका नाम सोम कहलाता है और यह सौम्यता को देने वाला है, यह जो रात्रि है, जब प्रतिपदा का दिवस आता है, तो प्रतिपदा में चन्द्रमा की एक ईकाई उत्पन्न होती है, और वह सूर्य से, बृहस्पति से औरअरूण्धती के मण्डल से होती हुई वह किरणें सूक्ष्म सी किरणें चन्द्रमा पर जाती है। तो चन्द्रमा अरूण्धती मण्डल से, उसका समन्वय हो गया है और इसीलिए चन्द्रमा की रात्रि में, हमारे ऋषि जन उस आभा को उस कान्ति को अपने में धारण करते रहे हैं। तो महाराजा शिव इसको धारण करते रहे, जब प्रतिपदा आई तो वही सूर्य से एक किरण चलती है और एक किरण चल करके वशिष्ठ मण्डल में प्रवेश होती हुई। 18.02.1991

653 महाभारत में परमाणु शक्ति संग्राम

जब महाभारत काल था और महाभारत में जब परमाणु शक्ति का संग्राम हुआ, तो एक यन्त्र था, घटोत्कच्छ के द्वारा भी जलाश्यों से बना हुआ, चन्द्रमा की सहायता से परमाणु ले करके यन्त्रों का निर्माण हुआ, वह आग्नये अस्त्र वही समाप्त हो जाते हैं, वह विज्ञान चन्द्रयाति यन्त्र कहलाया जाता है, आज का मानव, समुद्रों के तटों पर आधुनिक काल का विज्ञान विद्यमान हैं, एक समुद्र के ऊपर छाया आती है, उस छाया के नीचे जो भी यन्त्र आ जाता है, वह यन्त्र नष्ट हो जाता है, उसका एक परमाणु भी अब तक मानव को प्राप्त नही हुआ है, यह घटोत्कच्छ और भीम का उनकी विज्ञानशाला में, महाराजा घटोत्कच्छ ने जो यन्त्र अन्तरिक्ष में स्थिर कर दिया था, जिसकी, एक लाख पिचासी हजार वर्षो का आयु हैं, और वह यन्त्र जब तक रहेगा, समुद्र की उस स्थली पर, मानव जा नही सकता, यन्त्र समाप्त होते रहेगें हैं। आज का विज्ञान कहता है, आधुनिक काल का वैज्ञानिक कहता है, यह तो प्रेत आत्मा है, या मानव आत्मा है, इसके ऊपर अन्वेषण चल रहा है परन्तु इसका विचार-विनिमय अब तक नही किया गया, यह भी विज्ञान आधुनिक काल का, अधूरेपन में रमण कर रहा है।

यहाँ का वैज्ञानिक अपने में यह स्वीकार कर रहा है कि मैंने बहुत कुछ जाना है। परन्तु जो विज्ञान के यन्त्रों को जान लिया है, वह यन्त्र एक वर्ष के पश्चात उसमें निष्क्रियता आ जाती है, द्वितीय यन्त्र का निर्माण करने लगता है।

आधुनिक काल का यह जो जगत है, यह बड़ा विचारणीय है। यह बड़ा अशुद्ध कहलाता है एक मानवमानव का ह्रास कर रहा है, एक यन्त्रराजा रावण के काल मेंएक यन्त्र राम ने त्यागा था जिस यन्त्र में उसमें परमाणु शक्ति मेघनाद ने परमाणु शक्ति कोप्रहार रूप में लाए तो उन्होंने चन्द्रमा की सहायता से और महर्षि विश्वामित्र के आश्रम में जो यन्त्र का निर्माण हुआ था, वह यन्त्र चन्द्रवासकेतु यन्त्र था, जिसको त्यागने थे, मेघनाद की जितनी परमाणु शक्ति थी, वह सब दमन हो गई थी।

अब तक चन्द्रमा पर किसी का अन्वेषण नही हुआ, एकपदा द्विपदा का भी वर्णन किया है, परन्तु आधुनिक काल का विज्ञान उस चन्द्रमा के ऊपर विचार-विनिमय करने में ईकाई में रमण कर रहा है। 24.02.1991

654 सभी लोकों में दस प्राण

दस प्राणों को तुमऔर भी नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों में दृष्टिपात करोगे, चाहे वह चन्द्रमा में प्रवेश कर जाओ। वहाँ भी दस प्राणों का व्यवधान है। और भी नाना प्रकार के मण्डल मंगल में चले जाओ, तो वहाँ भी इसी प्रकार प्रतिभा का प्रायः वर्णन होता रहा है। तो विचारवेत्ता कहते हैं कि जितने भी लोक-लोकान्तर हैं। वह एक सूत्र में पिरोऐ हुए है। 05.07.1992

यह संसार आधुनिक काल का जगत क्या, पूर्व का जगत क्या, यह नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों में भ्रमण करने वाला जगत बन जाता है। संसार में नाना प्रकार का अणुवाद हो जाता है। नाना प्रकार का विज्ञान हो जाता है।

एक समय भारद्वाज आश्रम में महात्मा भारद्वाज से यह वाक् कहा था कि महाराज! आप इतने विज्ञानवेत्ता हो, नाना प्रकार के अणुओं में रमण करते रहते हो, अणु, महाणु, त्रिस्रेणु, सप्तस्रेणु, अष्टस्रेणु नवस्रेणु, दशम्स्रेणु नाना प्रकार के परमाणुओं को एकत्रित करने में संलग्न रहते हो, इन परमाणुओं में लगे रहते हो, इन परमाणुओं की श्रेणियों को जानने लगते हो, चौबीस प्रकार की परमाणुओं की श्रेणी होती है। चौबीस प्रकार की एक दूसरे में सूक्ष्म से सूक्ष्म होते रहते हैं, और चौबीसवां जो परमाणु होता है उस परमाणु में से लगभग सौ-सौ परमाणुओं का निकास होता है। इसी प्रकार एक-एक परमाणु में से सौ-सौ परमाणुओं का निकास होता है। उन परमाणुओं को आज हम यन्त्रों के द्वारा जब एकत्रित कर लेते हैं, आज हम सबसे प्रथम अपने श्वास की गति को जान लेते हैं। श्वास में कितना परमाणुवाद जाता है। हमारे आचार्यों ने कहा है कि एक श्वास जब प्राणी लेता है, उसमें अरबों-खरबों परमाणु बाहर चले जाते हैं। शरीर से और अरबों-खरबों परमाणु वायुमण्डल से हम ग्रहण करते हैं। उसमें प्रदीप्त होता रहता है। उसी में उसकी गृहणता रमण करती रहती है। 78.92.100

जब सृष्टि का प्रारम्भ होता है, इस यज्ञवेदी का जब निर्माण होता है तो उस समय यह आत्मा यज्ञ का यज्ञमान बनता है। ब्रह्मा स्वयं परपिता परमात्मा बनता है। आत्मा यज्ञमान बन करके ये जो पंच महाभौतिक हैं यह उस यज्ञशाला के होता बनते हैं और होता बन करके आत्मा के द्वारा याग हो रहा है। परमात्मा ब्रह्मयाग कर रहा है। आत्मा उस याग को करने वाला हूत कर रहा है, देवताओं के समीप पंच महाभौतिकों के द्वारा वह अपने में प्रतिभाशाली बन रहा है तो वह आत्मिक याग हो रहा है। कैसा सुन्दर यह याग है। कैसा सुन्दर यह जगत है। इस याग में से कितनी तरंगें उत्पन्न हो गई। कितने लोक उत्पन्न हो गए। कितनी आकाश गंगा उत्पन्न हो गई। आकाश गंगा का जब हम निर्णय करने लगते हैं, तो एक ही आकाश गंगा में ७२ करोड़ से अधिक तो सूर्य ही सूर्य कहलाते हैं। कितना विशाल मण्डल है उस मेरे प्यारे प्रभु का। हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने अपने योगाभ्यास में समाधि में विराजमान हो करके इस ब्रह्मरन्ध्र की आभा में लगभग करोड़ों आकाश गंगा इस प्रकार की निर्णीत की हैं। तो वह प्रभु का राष्ट्र, प्रभु का याग कितना विशाल है, कितनी तरंगें उत्पन्न हो गई? क्या आज मानव इसको नाप सकता है? भौतिक विज्ञान तो कदापि भी नहीं नाप सकता। परन्तु ऋषि मुनियों ने समाधिस्थ होकर के आत्मा के द्वारा प्रकृति के ऊपर शासन करके इससे संसार को दिगदर्शन किया। 78.92.117

यह संसार आधुनिक काल का जगत क्या, पूर्व का जगत क्या, यह नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों में भ्रमण करने वाला जगत बन जाता है। संसार में नाना प्रकार का अणुवाद हो जाता है। नाना प्रकार का विज्ञान हो जाता है।

एक समय भारद्वाज आश्रम में महात्मा भारद्वाज से यह वाक् कहा था कि महाराज! आप इतने विज्ञानवेत्ता हो, नाना प्रकार के अणुओं में रमण करते रहते हो, अणु, महाणु, त्रिस्रेणु, सप्तस्रेणु, अष्टस्रेणु नवस्रेणु, दशम्स्रेणु नाना प्रकार के परमाणुओं को एकत्रित करने में संलग्न रहते हो, इन परमाणुओं में लगे रहते हो, इन परमाणुओं की श्रेणियों को जानने लगते हो, चौबीस प्रकार की परमाणुओं की श्रेणी होती है। चौबीस प्रकार की एक दूसरे में सूक्ष्म से सूक्ष्म होते रहते हैं, और चौबीसवां जो परमाणु होता है उस परमाणु में से लगभग सौ-सौ परमाणुओं का निकास होता है। इसी प्रकार एक-एक परमाणु में से सौ-सौ परमाणुओं का निकास होता है। उन परमाणुओं को आज हम यन्त्रों के द्वारा जब एकत्रित कर लेते हैं, आज हम सबसे प्रथम अपने श्वास की गति को जान लेते हैं। श्वास में कितना परमाणुवाद जाता है। हमारे आचार्यों ने कहा है कि एक श्वास जब प्राणी लेता है, उसमें अरबों-खरबों परमाणु बाहर चले जाते हैं। शरीर से और अरबों-खरबों परमाणु वायुमण्डल से हम ग्रहण करते हैं। उसमें प्रदीप्त होता रहता है। उसी में उसकी गृहणता रमण करती रहती है। 78.92.100

जब सृष्टि का प्रारम्भ होता है, इस यज्ञवेदी का जब निर्माण होता है तो उस समय यह आत्मा यज्ञ का यज्ञमान बनता है। ब्रह्मा स्वयं परपिता परमात्मा बनता है। आत्मा यज्ञमान बन करके ये जो पंच महाभौतिक हैं यह उस यज्ञशाला के होता बनते हैं और होता बन करके आत्मा के द्वारा याग हो रहा है। परमात्मा ब्रह्मयाग कर रहा है। आत्मा उस याग को करने वाला हूत कर रहा है, देवताओं के समीप पंच महाभौतिकों के द्वारा वह अपने में प्रतिभाशाली बन रहा है तो वह आत्मिक याग हो रहा है। कैसा सुन्दर यह याग है। कैसा सुन्दर यह जगत है। इस याग में से कितनी तरंगें उत्पन्न हो गई। कितने लोक उत्पन्न हो गए। कितनी आकाश गंगा उत्पन्न हो गई। आकाश गंगा का जब हम निर्णय करने लगते हैं, तो एक ही आकाश गंगा में ७२ करोड़ से अधिक तो सूर्य ही सूर्य कहलाते हैं। कितना विशाल मण्डल है उस मेरे प्यारे प्रभु

का। हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने अपने योगाभ्यास में समाधि में विराजमान हो करके इस ब्रह्मरन्ध्र की आभा में लगभग करोड़ों आकाश गंगा इस प्रकार की निर्णीत की हैं। तो वह प्रभु का राष्ट्र, प्रभु का याग कितना विशाल है, कितनी तरंगें उत्पन्न हो गई? क्या आज मानव इसको नाप सकता है? भौतिक विज्ञान तो कदापि भी नहीं नाप सकता। परन्तु ऋषि मुनियों ने समाधिस्थ होकर के आत्मा के द्वारा प्रकृति के ऊपर शासन करके इससे संसार को दिगदर्शन किया। 78.92.117

655 भारत से पश्चिम में विज्ञान

जिस वेदी पर विज्ञान, जिसमें ओतप्रोत होता है। वैदिक साहित्य में, वेद के ही कणों में, शब्दों में, संसार का ज्ञान और विज्ञान ओतप्रोत रहता है तो यह विज्ञान दूसरे राष्ट्रों में कहाँ से गया। यह भारद्वाज वाली भूमि से हीदूसरे राष्ट्रों में यह विज्ञान चला गया। यह विज्ञान किस प्रकार गया है? यह वेद के द्वारा गया है। साहित्य के द्वारा गया है आज से लगभग आठ सौ वर्ष पूर्वएक मानव दूसरे राष्ट्रों से आए। उन्होंने यहाँ हिमालय प्रहूत केतु कन्दराओं से एक पुस्तक प्राप्त हुई थी जिसको हमारे यहाँ, मीमांसा दर्शन का कुछ आधा भाग और महाराजा घटोत्कच्छ और भीम का कुछ भाग था जो सूर्य और परमाणुवाद के ऊपर एक पोथी विराजमान थी। वह पोथी दूसरे राष्ट्रों में चली गई, उस पोथी से विकास हुआ, उसमें सबसे प्रथमपृथ्वी को यहाँ कोई किसी रुप में स्वीकार कर रहा था। कोई किसी रूपों में स्वीकार कर रहा था। उन्होंने कहा यह जो पृथ्वी है यह एक गोलाकार है इसको हमें स्वीकार कर लेना चाहिए।

आज से आठ सौ वर्ष पूर्व ही कितने वैज्ञानिक अग्नि को मुखारबिन्द में चले गए। सबसे प्रथम वैज्ञानिक को अग्नि के मुख से परिणित कर दिया और किसने किया?ईसा के मानने वालों ने उसको अग्नि के मुख में अर्पित कर दिया। इसी प्रकार विज्ञान पनपता रहा जब विज्ञान ओर पनपा तो उस समय अन्त परिणाम यह हुआ कि ईसा के मानने वालों के आगे विज्ञान इस प्रकार आ गया कि उन्हें यह स्वीकार करना ही हुआ। 16.10.1971

656 अणु में सर्वत्र विज्ञान

प्रकृति के गर्भ मेंसर्वत्रता में एक चेतना दृष्टिपात आने लगती है। और ऐसा प्रतीत होने लगता है, जैसे परमपिता परमात्मा की अनुपमता है, उसकी जो चेतनता है, वह इस प्रकृति के कणकण में ओतप्रोत है। जितना भी संसार में क्रियाएं दृष्टिपात आ रही हैं, उन सर्वत्र क्रियाओं का जो मूल है, वह एक चेतना है और उस चेतना को द्वितीय रूपों में हम परमपिता परमात्मा की आभा स्वीकार करते हैं। क्योंकि ब्रह्मवेत्ताओं ने, और भी नाना ऋषिमुनियों ने, घोषणा की है कि प्रकृति का जो एकएक कण है अथवा एकएक जो परमाणु है, वह उस परमपिता परमात्मा की आभा से पिरोया हुआ है। जिस प्रकार माला का निर्माण होता है और उस माला से पूर्व, मनके भिन्न होते, और सूत्र भिन्न होता है। परन्तु जब, सूत्र मेंमनके पिरोये जाते हैं, तोमनके और धागे अथवा सूत्र के संबंध का नाम माला कहलाती है। यदि वे दोनों सूत्र और मनके पृथक् होते तोवह माला नहीं कहलायी जा सकती। इसी प्रकार ये जो ब्रह्माण्ड है, यह माला के सदृश माना जाता है। प्रत्येक प्रकृति का जो एकएक कण है, वह उस चेतना से पिरोया हुआ है।

मानव की स्मरण शक्ति में भी एक सूत्र पिरोया हुआ है। उस सूत्र का सम्बन्ध मानव के चित्त से रहता है। नाना जन्मों की स्मरण शक्तियों का वह केन्द्र कहलाया गया है।जब मानव के समीप, नाना प्रकार के संस्कार स्पष्ट होकर के चित्त पटल पर आने लगते हैं। तोमानव को उस काल में ये भानहोता है, कि एक कणकण में विश्व का विज्ञान विद्यमान है।राष्ट्र के राष्ट्र एक एक परमाणु में निहित रहते हैं मानव की स्मरण शक्ति में रहते हैं। एक मानव गमन करने के लिए जाता है। वह ध्रुव मण्डल की यात्रा करता है, अथवा मंगल की यात्रा करता है। उसकी जो बुद्धि का केन्द्र है, अथवा चित्त का जो स्थल है, उसका सर्वत्र चित्रण हो जाता है और चित्रण होने के पश्चात जिस भी काल में मानव स्मरण शक्ति को जागरूक करता है, और एक परमाणु में जो स्मरण शक्ति के रूप में, एक परमाणु मात्र है। उसमें सर्वत्र चन्द्र मण्डल विराजमान है, ध्रुव मण्डल विराजमान है। एकएक परमाणु क्या, एक एक अणु मेंसृष्टि का सर्वत्र विज्ञान निहित रहता है। 05.11.1975

657 अनुसंधान

इसी प्रकार वायु, जो वायु उदान में रमण करने वाला है यह नाना प्रकार के परमाणुओं को ले करके वायु को तरंगों में तरंगित होते हैं। वह तरंगित हो करके वह लोकलोकान्तरों में प्रवेश करते हैं।जो भौतिक विज्ञान में प्रगति करने वाले हैं, वह वैज्ञानिक उन परमाणुओं को अपने में एकत्रित करते हैं।वे नाना प्रकार के वाहनों का निर्माण करके, कोई मंगल में जा रहा है। कोई बुध में जा रहा है। कोई यान चन्द्रमा में जा रहा है। नाना प्रकार के वाहनों का निर्माण कर लेता है।

आधुनिक काल का जो वैज्ञानिक है, वह यह अनुसन्धान कर रहा है कि अग्नि में जो वायु मिश्रित हो रही है अथवा जो अन्तरिक्षमयी वायुहै आज हम उस वायु के ऊपर गति करना चाहते हैं।उसके ऊपर अधिपत्य करना चाहते हैं। मंगल के जो वैज्ञानिक हैं, वह नाना रूपों में अनुसन्धान कर रहे हैं और वह अनुसन्धान करते हुए वायु की कुछ तरंगों को वह जान गए हैं। वायु की तरंगों में जोप्रबलता है वह अपने

में अनुभव करके यानों का, यन्त्रों का निर्माण कर रहे हैं। वह नाना लोकों के चित्रों को लेने के लिए तत्पर हो गए हैं।
मैं नाना लोकलोकान्तरों की चर्चा करने आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कितीनों जो प्राण हैं यह अपनीअपनी आभा में रमण करते हैं और रमण करके वही लोकों को यांत्रिक बना रहा है, कोई गति दे रहा है, भक्षण कर रहा है। एक माला के रूप में यह ब्रह्माण्ड वायुमण्डल में, वायु की आभाओं में यह रमण कर रहा है। 22.04.1977

658 अन्तरिक्ष

यह ब्रह्माण्ड की माला है। इस माला को जो योगीजन, ऋषिजन, प्राणों को जानने वाला, जो धारण कर लेता है वह परम योगेश्वर बन जाता है। वह परमानन्दके आँगन को प्राप्त करने वाला बन जाता है। वह जो अंतरिक्षहै जिसे हम अवकाश कहते हैं।हम उसेअवकाश इसलिए कहते हैं, यदि अवकाश नहीं होगा तो हम भ्रमण नहीं कर सकेंगे। क्योंकि उन परमाणुओं में जो गति कर रहे हैं उनमें अवकाश है।पृथ्वी में भी अवकाश रहता है। उसे अन्तरिक्ष कहते हैं। अवकाश मण्डल कहते हैं।
जैसे एक मानव एक समिधा को पृथ्वी में अवृत्त करना चाहता है। तो वह धुकधुकी लगाता है तो उतना स्थान पृथ्वी प्रदान कर देती है। इससे सिद्ध हुआ कि पृथ्वी में अन्तरिक्ष है। पृथ्वी में अवकाश है, वह गति कर रही है। अण्डाकार बन करके गति कर रही है। पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की धातुओं का निर्माण होता है। सूर्य की तेजोमयी किरणे उसमें प्रवेश करती हैं। प्रवेश तो वहीं करेंगी जहाँ अवकाश होगा। जहाँ अन्तरिक्ष होगा। तो वह अन्तरिक्ष में गति कर रही है।जो पृथ्वी के गर्भस्थल में अग्नि प्रचण्ड हो रही है। अग्नि की ज्वाला में जल का पिपाद बनाया जा रहा है। नाना परमाणुओं का पिपाद बनाया जा रहा है। तो इससे यह सिद्ध हुआ कि पृथ्वी में अवकाश है। पृथ्वी के गर्भ में अन्तरिक्ष विद्यमान है। जैसे मानव के शरीर में नाना प्रकार का पदार्थ जाता है। जब वह नसनाड़ियों के द्वारा, अन्तकृतियों के द्वारा जाता है, कृतियों में जब प्रवेश करता है तो वहाँ अवकाश दृष्टिपात होता है। नसनाड़ियों के मध्य में भी एक अवकाश है।
जब मानव की अस्थियों का निर्माण होता है तो वहाँ अस्थियों के आँगन में भिन्नभिन्न प्रकार के छिद्र होते हैं और वे जो छिद्र हैं, वे एक आकाश का प्रतीक है। उसमें अवकाश है। उसमें अंतरिक्ष विद्यमान है। यह जो वायु है अन्तरिक्ष में ही भ्रमण कर रही है। अग्नि नाना प्रकार की अपनी ज्वालाओं को लेकर के, प्रचण्डता को ले करके मानव को तेजोमयी बना करके अन्तरिक्ष में गति कर रहा है। तो सर्वत्र अन्तरिक्ष कहलाता है।
एक मानव शब्दों को उच्चारण कर रहा है। शब्दों में परमाणु हैं। शब्दों में उस मानव का चित्र है। वह जो चित्र अन्तरिक्ष में गति कर रहा है वह उसका गुण है। क्योंकि उसी में ओतप्रोत रहने वाला है।मानव के मुखारबिन्द से शब्द का निर्माण होता है तो शब्द का निर्माण रसना और तालु इन दोनों का समन्वय होता है। जब दोनों की सन्धि हो जाती है, तो उस समय शब्द उत्पन्न होता है जिसको ”अ“ कहा जाता है। बालक किसी भी काल का रहने वाला हो, किसी भी लोक का रहने वाला हो, परन्तु जब माता के गर्भ से पृथक् होता है, तो सबसे प्रथम अकहता है। तो अका जो शब्द है वह परमात्मा का वाची शब्द माना गया है। उसके कोई मात्रा नहीं होती, कोई हलन्त नहीं होता। वही शब्द ईश्वरीयकृत अविकल शब्द कहलाता है। उसकी जो ध्वनि है वह अन्तरिक्ष को जाती है। अन्तरिक्ष में, आकाश में वह प्रवेश कर जाती है। वह जो ‘अ’ शब्द के साथ में जो चित्र जाता है वह, देवताओं के लोक में प्रवेश कर जाता है। उस अन्तरिक्ष में भिन्नभिन्न प्रकार की आत्माएँ, भिन्नभिन्न प्रकार के चित्र, भिन्नभिन्न प्रकार की आभा निहित रहती है।उसी में नाना प्रकार की आभा ओतप्रोत हो जाती है और उसी में वह गतिशील रहती है। जैसे नाना प्रकार के लोकलोकान्तर वायु मण्डल वायु की आभा में गति करते हैं यदि लोंकों को अवकाश प्राप्त नहीं होगा, भ्रमण करने का स्थान नहीं होगा तो वायु क्या कर सकता है? तो इसीलिए अन्तरक्षि को अवकाश कहते हैं। और अन्तरिक्ष में यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड, आकाश में ओतप्रोत हो रहा है। 22.04.1977

659 लोक यात्रा

जब तक आत्मा विद्यमान है आत्माद्वारा गति हो रही है जब तक मानव कहता है यह जीवित है तब तक मानव, मानवको जीवित कर रहा है, वह जीवित बन रहा है, क्रियाशील बन रहा है, व्यापार कर रहा है, वायु में उड़ान कर रहा है, अन्तरिक्ष मे उड़ान उड रहा है सूर्य लोको की उड़ान उड़ रहा है मंगल की उड़ान उड़ रहा है चन्द्र लांको की उड़ान उड रहा है एक लांक नही कहीं आकाशगंगाओ मे गति कर रहा है कहीं वह बुध मे व शुक्र मे जा रहा है कहीं वह सूर्य की किरणो के साथ योगी बन करके वह सूर्य लांक की पैड़ी लगा रहा है। 08.07.1978
जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान का प्रायः वर्णन किया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा सदैव ज्ञानमयी स्वरूप माने गये हैं। और विज्ञान उसका अमूल्य आभूषण माना जाता है। जितना भी इस संसार में वाद है, राष्ट्रीयवाद से लेकर के परमाणुवाद तक, अणुवाद तक जितना भी वाद है उस सबका मूल परमपिता परमात्मा माना जाता है। क्योंकि वह उन सबका अधिपति है, निर्माणवेत्ता है।

तो विचारतेविचारते हम यज्ञशाला की पवित्र भूमि पर चले जाते है। जहाँ निरंतर याग हो रहा है। मानव अपनी आभा से याग कर रहा है। परमपिता परमात्मा की प्रतिभा, वह सर्वत्र याग में परिणत मानी है।परमपिता परमात्मा नाना वृक्षों के द्वारा, नाना वनस्पतियों के द्वारा, अपनी सुगन्ध से याग कर रहा है। पृथ्वी माता के गर्भस्थल में जितना भी खनिज पदार्थ है, उसकी सुगन्धि कणों के द्वारा आ रही है। आंतरिक गर्भ की सुगन्धि, बाह्य जगत में आती चली जा रही है। उसी को पान करता हुआ, राष्ट्र का प्राणीप्राणी मात्रउसी से सहायता को प्राप्त करता हुआ और अपने मनोनीत, उस यज्ञ में सुगन्धि को पान करता रहता है। 05.03.1979

660 आदि ऋषियों द्वारा याग अनुसंधान

आदि ऋषियों ने, अपने आसन पर विराजमान होकर के, अपनी अपनी स्थलियों पर याग अथवा अनुसंधान किया।

आदि ब्रह्मा के आश्रम में ही यह विचारा गया, जब वेद का अध्ययन प्रारम्भ हुआ। तो वेद के अध्ययन के प्रारम्भ में याग की विचित्रता आई। वेद मन्त्र जब उच्चारण करने लगे, मस्तिष्क में जब उसका भान आया, अन्तरात्मा में जब यह प्रेरणा जागरूक हुई, तो प्रेरणा के साथ ही याग को सबसे प्रथम अमूल्य माना है। ऋषि मुनियों ने कहाकि हम याग करने वाले है। याग की कल्पना कैसे मानव के हृदय में हुई?विचार यह आता है। प्रत्येक मानव के हृदय में यह विचार आता है कि याग की कल्पना कि अग्न्याधान इस प्रकार से करेंगे, समिधा इस प्रकार की होंगी, जल का सिंचन इस प्रकार होगा तो यह प्रेरणा कहाँ से प्रारम्भ में आई? 05.03.1979

661 अण्डाकार ब्रह्माण्ड

तोआदि ऋषियों ने भयंकर वनों में शांत, विराजमान होकर, इस संसार को विचारा, कि यह ब्रह्माण्ड सर्वत्र एक अण्डाकार बना हुआ है और जब यह अण्डाकार है तो यज्ञवेदी का निर्माण कैसे हो? तोजब, अण्डाकार काविभाजन हुआ, तो अण्डाकार में ही ये नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की रचना हुई। प्रत्येक लोक, अंडाकार में ही निर्मित है।ये पृथ्वी भी उसी रूपों में है। सूर्य भी उसी रूपों में, बृहस्पति भी उसी रूपों में, ध्रुव मण्डल भी उसी रूपों में है। नाना मण्डल भी उसी प्रकार के है। परन्तु ये कैसे आँगन में यज्ञवेदी का निर्माण होता है? 05.03.1979

662 लोकों के मध्य में अवकाश

कपलावत ऋषि महाराज जो ब्रह्मा के आश्रम में अध्ययन करते थे, तो कपलावत ऋषि महाराज के हृदय में जब ये प्रेरणा जागरूक हुई, कि अण्डाकार का याग, उसके क्षेत्रफल की रचना कैसे हो?एक लोक उस आंगन में है, एक लोक उस आँगन में, तो मध्य में अवकाश। जब मध्य में अवकाश प्राप्त हुआ, तो उन्होंने वेद के मन्त्र से ये विचारा कि ये अंडाकार, एकएक अंडाकार जैसे चकोण होता है। जैसे हमारे यहाँ बारह कोण, अष्ट कोण होता है। तो इसी प्रकार लोक लोकान्तर अपनीअपनी स्थली पर स्थिर है। तो स्थिर होने के नाते उसके मध्य में अवकाश माना गया है

तो उसी के आधार पर ऋषि मुनियों ने कहा कि इस प्रकार हमें यज्ञशाला का निर्माण करना चाहिए।प्रत्येक लोक के साथ मेंवरुण है, अग्नि है। अग्नि की वो सूक्ष्म धारा है जो इनको, एक दूसरे को आकर्षण शक्ति से स्थिर किए रहती है। 05.03.1979

663 एक दूसरा मण्डल, दूसरे मण्डल के लिए खनिज निर्माता

तोजब आदि ऋषियों ने इसको विचारा, तो विचारने से यह प्रतीत हुआ कि इस प्रकार से यज्ञवेदी का निर्माण होगा। और वह जो अवकाश है उसमें कोई वस्तु है, उसमें कोई हमें भरण करनी है।जैसे पृथ्वी है, पृथ्वी में अवकाश है। उसके अवकाश में कोई वस्तु भरण है। खनिज एक दूसरे आंगन से, दूसरे आंगन में गति करता रहता है। जैसे मानव के शरीर में रक्त गति करता है, जिस प्रकारइस वसुन्धरा के गर्भ में, पृथ्वी के गर्भ में, एक दूसरा खनिज, एक दूसरे खनिज से मिलान करता है, वह उसको सुगठित बनाता है ओर भी नीचले स्थल में पहुंचोगे, तो वहाँ पिपाद नामकजल गति कर रहा है। शक्तिशाली जल है। ओर भी नीचले स्थान में जाओगे, तो वहाँ पर्वतीय कणों के आँगन, धातुओं में गति कर रहे है। ओर नीचले स्थानों में जाओगे, तो सूर्यजल को शक्तिशाली बना रहा है।अब कोणों में जाओ, जिसभी कोण में जाओगे, उसी कोण में तुम्हें खनिज प्राप्त होंगे।उसके गर्भ में जाने से यह प्रतीत होता है, कि प्रभु ने जो अण्डाकार जगत बनाया है। अण्डाकार जो पृथ्वी का मण्डल बनाया है। अथवा नाना लोकों का निर्माण किया है। तो वो एक दूसरा लोकएक दूसरे लोक में खनिज की उत्पत्ति कर रहा है।

परन्तु जब एक दूसरा मण्डलजैसे पृथ्वी मण्डल हैं पृथ्वी मण्डल की जो तरंगे है, वो मंगल को अभायित कर रही हैं और मंगल शुक्र को आभायित कर रहा है, और शुक्र चन्द्रमा को आभायित कर रहा है और चन्द्रमा गन्धर्व लोकों को आभायित कर रहा है और चन्द्रमा से जो प्रकाश आता है, वो सूर्य से आता है। सूर्य उसको प्रकाशित कर रहा है। तो एक दूसरा मण्डल एक दूसरे मण्डल को प्रकाश में ले जा रहा है। एक दूसरा मण्डलएक दूसरे में खनिज की उत्पत्ति कर रहा है। एक दूसरा मण्डल एक दूसरे की आभा में युक्त हो रहा है। 05.03.1979

यह जो प्रभु का ब्रह्माण्ड है यह अनन्त विज्ञानमय माना गया है, जितना यह ब्रह्माण्ड, विज्ञान से समन्वित रहता है, मानव के जीवन का सम्बन्ध भी इसी से होता रहता है। आज मैं जब ब्रह्माण्ड की एक सूत्रताविचारने लगता हूँ जितना भी यह ब्रह्माण्ड है, अन्तरिक्ष में नाना लोकलोकान्तर गति कर रहे हैं, यह नाना आकाशगंगाएं तुम्हें दृष्टिपात आ रही हैं, यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड उस माता, चैतन्य देव के गर्भस्थल में विद्यमान रहता है। वह चैतन्य देव जो इस आभा में रमण करने वाला है।

एक आकाशगंगा में नाना सूर्य हैं, नाना शनि हैं, नाना मंगल कहलाए जाते हैं। नाना सौरमण्डलों की चर्चाएं होती रहती हैं। तो नाना पृथ्वियाँ सूर्य की परिक्रमा करती रहती हैं।

वह माता वसुन्धरा बन करके सर्वत्र ब्रह्माण्ड को अपने में धारण कर रही है, जैसे जननी माता के गर्भस्थल में अंगप्रत्यंगों का निर्माण होता रहता है, इसी प्रकार नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों की जो माला है, जो इसको धारण कर लेता है, वह प्रभु की आभा में रमण करता रहता है। नाना प्रकार की जो आकाशगंगाएं हैं, एक आकाशगंगा नहीं, नाना आकाशगंगाएं हैं और नाना निहारिकाएं हैं जिन निहारिकाओं में प्रकाश होता रहता है, आदान प्रदान होता रहता है।

664 एक मण्डल दूसरे मण्डल का प्रकाशक

ब्रह्मचारी कवन्धि और महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने आश्रम में विद्यमान हो करके आकाशगंगा पर विचार विनिमय करने लगे। एक आकाशगंगा शनि मण्डलों की परिक्रमा करने लगे। तो शनिमण्डल की आभा उनमें प्रवेश हो गयी और प्रवेश हो करके एक आकाशगंगा में एक अरब के लगभगशनिमण्डलों की गणना की। जिस शनिमण्डल को पाँच सूर्य प्रकाशित करते हैं, पाँच ऐसेऐसे जो हमें प्रकाश देते हैं, ऐसेऐसे नाना सूर्य शनिमण्डल को प्रकाशित करते हैं। कैसा प्रभु का यह अमूल्य जगत है। एक मण्डल दूसरे मण्डल को प्रकाशित करता हैं। कैसा प्रभु का यह अमूल्य जगत है। एक मण्डल दूसरे मण्डल को प्रकाशित कर रहा है। एक मण्डल दूसरे मण्डल को सहकारिता में परिणत कर रहा है। इसीलिए हमारे यहाँ सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक सूत्र में पिरोया हुआ है।

आज जब हम इस सूत्र की विवेचना करने लगते हैं, एक सूत्र में नाना प्रकार के लोकलोकान्तर पिरोए हुए हैं। एक मण्डल दूसरे मण्डल का सहायक बना हुआ है, जैसे एक प्राणी दूसरे प्राणी का सहायक बना हुआ है। इसी प्रकार सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक सूत्र में पिरोया हुआ है

665 सौर मंडलों का अधिपति

ब्रह्मचारी कवन्धि और महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज दोनों विचारविनिमय कर रहे हैं। उन्होंने कहा, हे ब्रह्मचारी कवन्धि! यह आकाशगंगा हैं। एक आकाशगंगा में अरबोंखरबों शनि मण्डल कहलाते हैं। तो इसमें कितने सूर्य होंगे? सौर मण्डलों में रमण करने वाले।

एक सौरमण्डल का अधिपति सूर्य कहलाता है, द्वितीय सौरमण्डल का अधिपति ध्रुव कहलाता है, तृतीय सौरमण्डल का अधिपति सोमेश्वर कहलाया गया हैं यहाँ नाना प्रकार के सौरमण्डल कहलाते हैं। नाना सौरमण्डलों का समन्वय हो करके एक आकाशगंगा का निर्माण होता है और नाना आकाशगंगाओं का मिलान हो करके एक अवन्तिका बनती है और एक सहस्र अवन्तिकाओं का समन्वय हो करके एक कृतिभा बनती है। तो एकदूसरे की आभा में रमण करने वाला यह जगत है।

नाना आकाशगंगाओं में रमण करने वाले याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने ब्रह्मचारी कवन्धि से कहा, हे ब्रह्मचारी कवन्धि! मेरी जो यह विज्ञानशाला है इस विज्ञानशाला में आकाशगंगा नहीं, नाना आकाशगंगाएं दृष्टिपात आती हैं। तुम्हें प्रतीत है कि ऐसीऐसी एक आकाशगंगा में निहारिकाएं हैं, जिन निहारिकाओं का प्रकाश, अरबों वर्षों में पृथ्वी मण्डल तक पहुंचता है। बहुतसी निहारिकाएं इस प्रकार की हैं, जिनके प्रकाश में सृष्टि का कल्प ही समाप्त हो जाता है, उसके पश्चात भी इस पृथ्वी मण्डल पर नहीं पहुंचता।

प्रभु का विज्ञानमय जगत है? जिसके ऊपर प्रत्येक मानव को विचारविनिमय करना है। प्रत्येक मानव चिन्तन और मनन करने के लिए संसार में आया है। यह मेधावी जो पुरुष होते हैं, वह इसके ऊपर सदैव मनन करते रहते हैं।

संसार में तीन प्रकार की आभाएं हमारे यहाँ परम्परागतों से मानी जाती हैं। सबसे प्रथम वसुन्धरा का तीन स्वरूपों में वर्णन किया गया। वसुन्धरा नाम माता का है। जननी माता के गर्भस्थल में हमारा निर्माण होता है। द्वितीय वसुन्धरा पृथ्वी को कहा जाता है। इसी प्रकार तृतीय में वह चैतन्य देव है, जिसके गर्भस्थल में सर्वज्ञ ब्रह्माण्ड है और उसी से आच्छादित हो रहा है। उसी के गर्भ में यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड ओतप्रोत रहता है। 28.04.1980

चाहे वह पृथ्वी मण्डल का प्राणी हो, चाहे वह मंगल का प्राणी क्यों न हो, किसी भी लोकलोकान्तरों में तुम प्रवेश करोगे तो वहाँ ज्ञान और विज्ञान तुम्हें दृष्टिपात आएगा।

666 चित्त

तो चन्द्रमा में जाना कोई आश्चर्य नहीं है, वायुमण्डल में वाहनों के द्वारा गति करना कोई आश्चर्य नहीं है, मंगल में जाना कोई आश्चर्य नहीं

है, गन्धर्व लोकों में जाना भी कोई आश्चर्य नहीं हैपरन्तु आत्मलोक में प्रवेश करनामृत्यु से पार होना है। यदि चन्द्रमा में चला गया है, आत्मा के लोक को नहीं जाना है, एक मानव बुध, मंगल में चला गया है, अपने हृदय रूपी आत्मा को नहीं जानता, तो उसका जाना व्यर्थ है। इससे मानव का कल्याण होता है। यह कोई आश्चर्य नहीं है, मानव चन्द्रमा में चला जाता है। यहाँ मानव विद्यमान है चन्द्रमा में चला जाता है, यन्त्र के द्वारा चला गया कोई आश्चर्य नहीं। एक मानव वायुमण्डल में, मन गति कर रहा है, उड़ान उड़ रहा है, एक स्थली पर विद्यमान है, एक मानव यान के द्वारा चला जाता है कोई आश्चर्य नहीं। 02.05.1980

एक मानव वैज्ञानिक बन करके मंगल में चला गया है कोई आश्चर्य नहीं। परन्तु वह जो हृदयरूपी गुफा, है जिसमें चेतन आत्मा विद्यमान है, उसको नहीं जाना। इस शरीर में रहने वाला प्राणी अपने को ही नहीं जानता, यह कैसा आश्चर्य है। उसको तो जानना बहुत अनिवार्य है। जिस गृह में वास कर रहे हैं, अध्ययन कर रहे हैं, प्राणायाम कर रहे हैं, साधना में परिणत हो रहे हैं, परन्तु वेद का अध्ययन चल रहा हैअरे मानव! यह भी नहीं जानता, कि वेद का अध्ययन किया हुआ है, वेद का विचार आ रहा है परन्तु कोई नसनाड़ी ऐसी तेरेद्वारा है जिसमें वेद की पोथी की पोथी विद्यमानन हो?कोई है, परन्तु कोई दृष्टिपात नहीं आती। तो इन वाक्यों में कि इस मानव के अन्तर्हृदय का जो समन्वय है, वहचित्त से रहता है। बाह्य चित्त, आन्तरिक चित्त दोनों का मिलान होते ही स्मरणशक्ति जागरुक हो जाती है! जहाँ बाह्य चित्त और आन्तरिक चित्त का मिलान हुआ करोडों जन्मों के संस्कार मानव के समीप आने प्रारम्भ हो जाते हैं। 02.05.1980

ब्रह्मचारी सुकेता गार्ग्य जब महर्षि भारद्वाज मुनि की यज्ञशाला में थे, वे अणुपरमाणु को जान करके एक यन्त्र पर विद्यमान हुए। उड़ान उड़ी, चन्द्रमा में चले गये, वहाँ से उड़ान उड़ी मंगल में चले गए, मंगल से उड़ान उड़ी शुक्र में चले गए, शुक्र से उड़ान उड़ी तो बुध में चले गये। बुध से उड़ान उड़ी तो आसुरी लोकों में चले गये। बहत्तर लोकों का भ्रमण करके पुनः यान पृथ्वी पर आता रहा है। 02.05.1980

667 अनन्त आकाश गंगाएं

विज्ञान का आश्रय, जो अणुवाद से यन्त्रों का निर्माण किया जाता है और यन्त्रों का निर्माण करके जैसे याज्ञवल्क्य मुनि महाराज की विज्ञानशाला में था। तो वहएक आकाशगंगा को दृष्टिपात करने लगे।तोउन्होंने एक आकाशगंगा मेंतीन खरब, पिचानवे अरब, नवासी करोड़, उनतीस लाख, उनचास हजार, पाँच सौ एक आकाश गंगा में सूर्य की गणना होने लगी। एक आकाश गंगा की गणना करके ऋषि मौन हो गया। 'अनन्तवत' और ऐसी ऐसी आकाश गंगाएं, जिसमें अनन्त सूर्य हों और अनन्त पृथ्वियाँ हैं।

वेद का ऋषि कहता है मेरी विज्ञानशाला में अणु यन्त्रों से छह सौ बहत्तर आकाशगंगाएं दृष्टिपात आ गई, तो यह प्रभु का विज्ञान कितना अनन्त है कि उसके ऊपर हम टिप्पणी करने में असमर्थ हो जाते हैं, वाणी वर्णन नहीं कर पाती।

एकएक अणु के विभाजन करने से जैसा यह ब्रह्माण्ड है, ऐसीऐसी, एकएक सृष्टि उसमें दृष्टिपात होती है। एकएक अणु में सृष्टि विद्यमान है। 04.05.1980

668 मानव मस्तिष्क में विज्ञान

यह जो विज्ञान है यह प्रत्येक मानव के मस्तिष्क में विद्यमान है। प्रत्येक मानव यदि साधनों से उपार्जित हो जाए, तो वह सूर्य की यात्रा भी करने लगता है, चन्द्रमा का यात्री भी बन जाता है, मंगल और बुध में रमण करता है और भी नाना प्रकार के लोकों में गति करने लगता है परन्तु यह कैसे? यह आध्यात्मिक मार्ग वाला जितना व्यक्ति है वह इस मार्ग से हो। 04.03.1982

669 वायु मण्डल का शोधन

आधुनिक काल का वैज्ञानिक उसमें लगा हुआ है। वहयह कहता है कि वायुमण्डल दूषित हो रहा है। मैं ऐसे तत्वों को, अपनी धाराओं को जन्म देना चाहता हूँ जिससे वायुमण्डल का शोधन हो जाए।हे भोले वैज्ञानिकों! आधुनिक काल के वैज्ञानिको! तुम एक पंक्ति में विद्यमान हो जाओ। अब तुम गौ घृत के द्वारा, नाना साकल्य के द्वारा, चंदन की समिधा लेकर के शमि की समिधा लेकर के, चिरीवोणकेतु वृक्ष की समिधा ले करके, औरगुलवीतिका की समिधा लेकर के तुम याग करो। जब तुम गौ घृत के द्वारा याग करोगे, जावित्री, सुनीति, सभेति वाचनकेतु, सत्यानाशी इस प्रकार की औषधियों को एकत्रित करकेयाग करोगे, तो उस याग के द्वारा इस वायुमण्डल को पवित्र बना सकोगे। महाराजा अश्वपति के यहाँ विज्ञान प्रकाष्ठा पर रहता था। विज्ञान की भिन्नभिन्न प्रकार की उड़ाने उड़ी जाती थी, परन्तु विद्यालयों में, प्रत्येक गृहों में याग होते थे। विद्यालयों में जब ब्रह्मचारी याग करते थे, आत्मीय याग, शुद्ध विचार धारा को, जब वायुमण्डल में प्रवेश कराते तो वायुमण्डल, परमाणुवाद का शोधन होता। 14.05.1984

संसार का, जितना भी क्रियाकलाप हो रहा है, चाहे वह इस पृथ्वी मण्डल पर हो रहा है, चाहे मंगल में हो रहा है, चाहे वह बुध में हो रहा है, चाहे वह स्वाति में हो रहा है, किसी भी लोकलोकान्तरों में जो भी क्रियाकलाप है वह एकयागों के रूप में दृष्टिपात आता है। इसीलिए हमारा जीवन भी एक यज्ञोमयी स्वरूप माना गया है, यदि इससे पूर्व महान् क्रियात्मक, क्रियाकलापों को करता रहता है और विचारता

रहता है। माता, पालन करना, शासन करना, उत्पन्न करना, जब तक सीमा में बद्ध रहती है, तो वह भी एक याग में ही माना गया है। 30.10.1985

670 अग्नि के प्रकार

यह जो अग्नि है, यह भिन्न-भिन्न प्रकार की हैं कहीं समुद्रों में अग्नि प्रदीप्त हो जाती है, तो जलप्लावन आ जाते हैं।यही अग्नि जब, सूर्य में प्रवेश कर जाती है, सूर्य में कहीं, कहीं जब अग्नि प्रदीप्त होती है, तबउसके विभाग बनकर के दूसरी आभा में ओतप्रोत होने लगते हैं। लोकलोकान्तरों में उसकी प्रतिभा निहित रहती है। यही अग्नि उष्ण बनाने वाली है, उष्णता देने वाली है, यही अग्नि समुद्रों के आँगन में, मध्य में जब प्रवेश कर जाती है, तो जल को तपाती रहती है ये जल अपने में अभ्युदय होता रहता है, अमृत को बिखेरता रहता है। यही अग्नि हैवो प्रकाश, और तेजोमयी बन करके मानव के हृदय में प्रवेश होती रही है। यही अग्नि वैज्ञानिकों के युग में प्रवेश हो करके, वैज्ञानिकों की विज्ञानशाला को ऊर्ध्वा में प्रवेश करा देती है।वैज्ञानिक जब अणु और परमाणु की प्रतिभा में प्रतिष्ठित हो जाते हैं तोलोकलोकान्तरों के यातायात में चले जाते हैं। 01.01.1987

671 अग्नि की प्रतिष्ठा

ऋषि ने प्रश्न किया कि महाराज! हम यह जानना चाहते हैं, किअग्नि किसमें प्रतिष्ठित रहती है? अग्नि का भी तो कोई गृहालय होगा।

तो उस समय गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहायह अग्नि ही वायु में ओतप्रोत हो जाती है, वायु में प्रतिष्ठित हो जाती है। वायु अपने में धारण करने वाली है। क्योंकि अग्नि की जो माँ है, वह, वायु कहलाती है। वायु में प्राणत्व है, गति हैIगति, इन तीन प्रकार के परमाणुओं को लेकर के गति करती रहती है। गुरुत्व, तरलत्व, और तेजोमयी परमाणुओं को लेकर के वायु ही तो गति दे रही है। 01.01.1987

672 प्रकृति और ब्रह्म की छाया

वायु गतिप्रदान कर रही है। जब वह गतिवान परमाणुओं की आभा में, अपने में धारण करने वाली है, तो वह वायुतव कहलाती है, वायु प्राणत्व है, यह प्राण की सत्ता है। यह ब्रह्म के एक रूप में, एक छाया रूप बनी रहती है, ब्रह्म की छाया है। जैसे येप्राण है तो ब्रह्म की छाया माना गया है, कहींकहीं आत्मा की छाया भी, जैसे प्रकृति की छाया ये मन है इसी प्रकार, ब्रह्म की छाया प्राण है। यह प्राण और मन दोनों का विभाजन ही तो विभक्त होना है, यही तो नाना प्रकार के रूपों में दृष्टिपात आ रहा है। 01.01.1987

673 वायु की प्रतिष्ठा

वेद के ऋषि नेकहा प्रभु! हम ये जानना चाहते हैं, कि यह जो वायु है, वायु की प्रतिष्ठाकहाँ रहती है? उन्होंने कहावायु अन्तरिक्ष में प्रतिष्ठित हो जाता है।अन्तरिक्ष में ही तो अपनी गति करता रहता है।परमाणुओं को लेकर के अन्तरिक्ष उन्हें गतियाँ देता रहता है। यह वायु ही अन्तरिक्ष में ओतप्रोत है। अन्तरिक्ष में ही प्रतिष्ठित हो जाता है। सर्वत्र जितना भी परमाणुवाद है, वह सर्वत्र अन्तरिक्ष में ओतप्रोत है। मानव के शब्द से ले करके, मानव के शरीर के भस्मासन्न होने से सब परमाणु अन्तरिक्ष में ओतप्रोत रहते हैं। मानव शव बन जाता है, शव को अग्नि में प्रवेश कर देते हैं, और अग्नि परमाणुओं को अपनेअपने स्वरूप में प्रवेश करा देती है। वह शव, गुरुत्व, तरलत्व और तेजोमयी, वायु केरूपों में सब अन्तरिक्ष में ओतप्रोत हो जाते हैं। अन्तरिक्ष परमाणुओं का समूह है शब्दों का समूह है। 01.01.1987

674 पूर्वजों के दर्शन यन्त्र से

भारद्वाज इत्यादि मुनियों के यहाँ इस प्रकार के यन्त्र निर्माणित किए गए, वैज्ञानिक क्या, यज्ञवेत्ता क्या, याज्ञिक भी अपने पूर्वजों के दर्शन करते रहे हैं, विज्ञान अपने आसन पर एक अनूठे रूप में विद्यमान रहता है। यह आध्यात्मिक विज्ञान अपने में अनूठा है।

वेद का आचार्य यह कहता है कि अन्तरिक्ष अपने में सर्वत्रता को सूक्ष्म रूप में समाहित कर लेता है। नाना ब्रह्माण्ड को अपने में समाहित कर रहा है। ऋषि प्रवाहण ने कहा कि हे प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं कि अन्तरिक्ष का भी तो कहीं न कहीं समापन होता है? उन्होंने कहायह जो अन्तरिक्ष है, यह शून्य बिन्दु में प्रवेश कर जाता हैइसे महत्तत्व कहते हैं। जिसे महत कहते हैं, उसमें ये परमाणु बिन्दु रूप बन जाते हैं। अपने ही स्वरूप में बिन्दु ओतप्रोत हो जाते हैं।

ऋषि ने कहा, यह शून्य बिन्दु ही तो विकास है और विकास ही शून्य बिन्दु है। अपने में इसी प्रकार प्राणस्तव, मनस्तव को जानकर के, मानव भी शून्य गति को प्राप्त होता रहता है। इतने मेंप्रवाहण ऋषि ने गाड़ीवान से कहाहे प्रभु! मैं यह जानना और चाहता हूँ कि शून्य बिन्दु से आगे चलकर के क्या है?

ऋषि मुनियों की विचारविनिमय करने की जो शैली रही है वह ध्रुवा से ऊर्ध्वा में और ऊर्ध्वा से ध्रुवा में रही है। तो हम भगवन!, ध्रुवा की विवेचना और चाहते हैं। आपने ध्रुवा से ऊर्ध्वा में तो हमें पहुँचा दिया, परन्तु ऊर्ध्वा से ध्रुवा में हमें और पहुँचा दीजिए। 01.01.1987

675 शून्य की प्रतिष्ठा

ऋषि बड़े मग्न हुए और गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा कि हे ऋषि मुनियो! तुम अपनी पंक्ति लगा लो। उन्होंने पंक्ति लगा ली, तो उन्होंने कहाअब मैं तुम्हारी पंक्तियों की गणना कराना चाहता हूँ। उस पर तुमविचारविनिमय करना। ऋषि कहता है कि यह शून्य बिन्दु कहाँ ओतप्रोत होता है?वेद के आचार्य ने कहा कि यह शून्य बिन्दुचन्द्रमा में ओतप्रोत रहता है। यह चन्द्रमा ही तो अमृत को देने वाला है। यह चन्द्रमा रात्रि को, अन्धकार को अपने गर्भ में धारण करने वाला है। 01.01.1987

676 चन्द्रमा की प्रतिष्ठा

जब ऋषि ने यह कहा तो ऋषि ने पुनः प्रश्न किया कि महाराज! चन्द्रमा की प्रतिष्ठा क्या है? उन्होंने कहाकि चन्द्रमा की प्रतिष्ठा यह सूर्य है। सूर्य से ही तो चन्द्रमा प्रकाश को ले करके, अमृत को बहाता है और यह सूर्य ऊर्ज्वा को देने वाला है। वह सूर्य ही तोउदेव कहलाता है, यही तो आदित्य है, यही तो भास्कर कहलाता है, यही वर्ष कहलाता है। यह ऊर्ज्वावादी है। यह द्यौ से प्रकाश लेकर के ही तो यह प्रकाश देता रहता है। इसकी जो नाना प्रकार की ऊर्ज्वा है, यह प्रकाश अनुपम ज्योर्तिमयी और सत्य अरूणिमा को प्रदान करने वाला है। अपने में प्रकाश देता हुआनाना प्रकार की वृष्टि के मूल में विद्यमान रहता है। सूर्य नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों को प्रकाश और आभा में उदय होने वाला है। 01.01.1987

677 सूर्य की प्रतिष्ठा

जब ऋषि ने वर्णन किया तो उन्होंने कहा कि हे प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं, कि यह जो सूर्य है, इसकी भी तो कोई प्रतिष्ठा है? उन्होंने कहा, सूर्यमण्डलों की जो प्रतिष्ठा है, वह गन्धर्व लोक माने गए हैं।
मैंने गन्धर्व लोकों की चर्चा, इससे पूर्वकाल में भी प्रकट की है। आज भी, वे चर्चाएँ मुझे स्मरण आ रही हैं। 01.01.1987

678 गन्धर्व लोकों की प्रतिष्ठा

जबऋषि ने गन्धर्वमण्डल की चर्चाएँ की तो, ऋषि नतमस्तक हो करके गाड़ीवान रेवक मुनि से बोलेकि महाराज! हम यह जानना ओर चाहते हैं कि यह गन्धर्व लोक किसमें प्रतिष्ठित होता है? इसकी प्रतिष्ठा क्या है? उन्होंने कहा इन्द्र लोक में, इन्द्र मण्डल में है, इन्द्र नाम विद्युत का है, इन्द्र कहते हैं जो अधिपति है, इन्द्र कहते हैं जो सौर मण्डलों के ऊपर, जैसे माला होती है और उस माला के ऊपर एक सुमेरू होता है, तो इन्द्र सुमेरू के सदृश कहलाता है। इसी प्रकार सब विद्युतों के मूल में, सब तरंगों के मूल में एक विद्युत है और विद्युतउसके ऊर्ध्वा में, उसके गर्भ में इन्द्र रहता है। 01.01.1987

679 विभिन्न मण्डलों की यात्रा यान

महर्षि तत्त्वमुनि महाराज के आश्रम में एक समय महर्षि व्रेतकेतु ऋषि के बाल्य ब्रह्मचारी श्वेताश्वेतर ने एक यान का निर्माण किया था। जिस यान मेंविद्यमान हो करके वे महर्षि तत्त्वमुनि महाराज के यहाँ से जब उड़ान उड़ने लगे, तो पृथ्वी से उड़ाने उड़ी, आश्रम से उड़ाने उड़ी तो वह चन्द्रमा में चला गया और जब चन्द्रमा से उड़ाने उड़ी तो वह बुध में प्रवेश कर गया और जब बुध् से उड़ान उड़ी तो शुक्र में प्रवेश कर गए और जब शुक्र मण्डल से उन्होंने उड़ाने उड़ी तो वह मंगल में प्रवेश कर गए और मंगल से जब उड़ान उड़ी तो वह मृचिका मण्डल में चले गए और मृचिका मण्डल से उड़ाने उड़ करके वह श्वेती मण्डल में चले गए और श्वेती मण्डल से जब उन्होंने उड़ाने उड़ी तोअरून्धती मण्डल में चले गए और अरून्धती मण्डल से जब उड़ान उड़ी तो वह वशिष्ट मण्डल में चले गए और वशिष्ट मण्डल से उड़ान उड़ी तो वह वृचिका मण्डल में प्रवेश कर गए और जब वृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी तो वे मानकेतु मण्डल में चले गए और मानकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी तो वह वाचकेतु मण्डल में चले गए और वाचकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी तो वह, माधुरी मण्डल में चले गए और माधुरी मण्डल से उड़ान उड़ी तो वह श्वेतकेतु मण्डल में उसकी परिक्रमा करने लगे, उसमें भी प्रवेश कर गए। तोमूल यह रहा कि जब वह यान ऋषि के आश्रम में आगमन करने लगा, तो उससे पूर्व वह बहत्तर लोकों का भ्रमण करता हुआ, ऋषि के आश्रम में प्रवेश कर गया। 27.01.1988
तो ये पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है, ब्रह्माण्ड को जब भी विज्ञानवेत्ता मापना प्रारम्भ करते है। चाहे वह पृथ्वी का वैज्ञानिक हो, चाहे, वह मंगल मण्डल का वैज्ञानिक हो, चाहे बुध का हो, चाहे शुक्र का प्राणी हो। कोई भी, जब भी विज्ञान मापना प्रारम्भ करता है तो गुरुत्व परमाणु से, पृथ्वी के परमाणुओं सेनिर्माण करना, जानकारी करना, उसका मिलान करना प्रारम्भ करता है। तब पृथ्वी के विज्ञान से विज्ञान का प्रारम्भ होता है तो ये पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है।

680 शब्द की ब्रह्माण्ड परिक्रमा

मानव के श्रोत्रों का समन्वय अन्तरिक्ष से रहता है, दिशाओं से रहता है।, वैज्ञानिको ने यह कहा है आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञानवेत्ताओं, जब ये शब्द हम उच्चारण करते है, जो शब्द मानवता सेदर्शनों से गुथा हुआ है, उस शब्द का जब उच्चारण करते है, तो वही शब्ददिशाओं में जाता है और दिशाओं से वह गमन करता है और गमन करके वह एक अक्षण समय में, इस पृथ्वी की परिक्रमा करता है। मंगल की

परिक्रमा कर जाता है। बुध की परिक्रमा कर जाता है। वही शब्द है जिसको हम उच्चारण कर रहे है। इसीलिए हमारे आचार्यों ने यह कहा कि हे मानव! तू उस शब्द को अपने में ऐसा उच्चारण कर क्योंकि तेरा शब्द द्यौ लोक को प्राप्त होकर के वह तुझे ही प्राप्त होना है, तुझे ही उसे प्राप्त करना है, इसीलिए तू, उस शब्द में मावनता की आभा को धारण कर। 28.03.1988

681 सूर्य अनुसन्धान शाला

यह सूर्य अनुसन्धानशाला है ये सूर्य ऊर्ज्वा के देने वाला है। ये सूर्य, प्रकाश और तेजोमयी बना हुआ हैइसके ऊपर अन्वेषण करने वाले, विज्ञानवेत्ताअनुसन्धान कर रहे हैं कि सूर्य कैसी ऊर्ज्वा, किस समय देता है? कौन से राष्ट्र पर कौन सी किरणें अपने प्रभाव से प्रभावित कर लेती हैं ओर पृथ्वी किसकिस प्रकार का खनिज, किसकिस प्रकार का खाद्य, कहाँ-कहाँ प्रदान करती है।, ये सूर्य की ऊर्ज्वा अपने क्रियाकलाप में लगी रहती है। तो राजा रावण ने कहा प्रभु! मेरे यहाँ सूर्य अनुसन्धानशाला है, सूर्य की किरणों के आश्रित कुछ यन्त्र, अन्तरिक्ष में गमन कर रहे हैं भ्रमण कर रहे हैं, कुछ यहाँ सूर्य यात्री हैं, कुछ यहाँचन्द्रयात्री हैं, कुछ शुक्र यात्री हैं। नाना प्रकार की यात्रा करने वाले, यन्त्र इसी से ऊर्ज्वा प्राप्त करते रहते हैं। रावण ने भ्रमण कराते हुए, अपने पुत्र नारान्तक के द्वारा ले गए, उन्होंने कहा प्रभु! यह मेरा पुत्र नारान्तक है। यहलोक लोकान्तरों की यात्रा करते रहते हैं। यह चन्द्र यात्रा में रत्त रहते हैं। कहीओर भी लोक लोकान्तरों की यात्रा में प्रवेश कर जाते हैं। 12.04.1988

682 वैज्ञानिक नारान्तक

नारान्तक से कुक्कुट जी ने प्रश्न किया, हे, राजकुमार! तुम्हारी विज्ञान में, कितनी गति है, चन्द्रमा में कितनी गति है? उन्होंने कहाप्रभु! एक रात्रि और एक दिवस, मेरे लिए चन्द्रमा में जाने के लिए बहुत है। हे भगवन! एक यन्त्र मेरे यहाँ ऐसा है जो मैंने महर्षि भारद्वाज मुनि से प्राप्त किया है, मैंने उन्हीं के चरणों में विद्यमान हो करके, इस विज्ञान की शिक्षा प्राप्त किया है। हे प्रभु! वह यान ऐसा है कि इस पृथ्वी मण्डल से मेरी विज्ञानशाला से वह यान उड़ान उड़ता है और उड़ान उड़ करके ही वह चन्द्रमा में जाता है, चन्द्रमा से उड़ान उड़ता है तो शुक्र में चला जाता है। शुक्र से उड़ान उड़ता है तो बुध में चला जाता है। बुध से उड़ान उड़ता है, तो वह मंगल में चला जाता है। मंगल से उड़ान उड़ता है तो यह मेरा यान मृचिका मण्डल में चला जाता है। मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो रोहिणी केतु मण्डल में चला जाता है। रोहिणी केतु मण्डल से उड़ान उड़ता है तो पुष्य नक्षत्र में चला जाता है। पुष्य नक्षत्र से उड़ान उड़ता है तो व्रातकेतु मण्डल में प्रवेश कर जाता है। व्रातकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता है तो अरूण्धती मण्डल में चला जाता है अरूण्धती मण्डल से उड़ान उड़ता है तो वशिष्ठ में चला जाता है। वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ करके यदि आगे गमन करता है तो रोहिणी कृतिका नक्षत्र मे ओतप्रोत होता है और रोहिणी नक्षत्र वहाँ से उड़ान उड़ करके तो मृचिभोमकेतु मण्डल में प्रवेश कर जाता है। तो यह बहत्तर लोकों का भ्रमण करके मेरा यान, मेरी ही विज्ञानशाला में पुनः प्रवेश कर जाता है। 12.04.1988

683 रावण काल का विज्ञान

तो राजा रावण के यहाँ ऐसे, ऐसे यंत्रों का निर्माण हो रहाथा जिन यंत्रों में विराजमान हो करके वैज्ञानिक जन सूर्य की किरणों के साथ में, सूर्य की परिक्रमा करने वाले यंत्रों का निर्माण किया जा रहा था।सूर्य की किरणों के साथ में गमन करने वाला, हमारे यहाँ आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी सूर्य की किरणों के साथ, सूर्य की यात्रा करते रहे औरमंगल की यात्रा भी करते रहे।

सूर्य अपनीकिरणों के द्वारा अमृत को ऊर्ज्वा को, बिखेर देता है। वही ऊर्ज्वा हैं, जो पृथ्वी को अपने में धारण कर रही हैं। धारयामि बना रही है।वही किरणें हैं जो तेजोमयी बनकरके प्रकाश में रत्त कराते हैं वही तो प्रकाश है। उसी ऊर्ज्वा को जानकर के विज्ञानवेत्तासूर्य की परिक्रमा करता रहता है। 01.10.1988

684 एक दिवस, एक रात्रि में चन्द्रमा पर

राजा रावण के यहाँ विज्ञानशाला में इस प्रकार क क्रियाकलाप होता रहता है। विज्ञान के यंत्रों का, अग्नि यंत्रों का, ओर भी नाना प्रकार के जलास्त्रों का निर्माण होता रहा। तोराजा रावण और महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज ने आगे भ्रमण किया। वे सर्वत्र विज्ञानशाला को दृष्टिपात करके राजा रावण के पुत्र नारान्तक के द्वारा आ पहुँचे और नारान्तक से कहा कि प्रभु! आज मैं तुम्हारी विज्ञानशाला को दृष्टिपात करने आया हूँ। उन्होने कहाहेभगवन्! आइए, विराजिए। तो नारान्तक के यहाँ चन्द्रयात्री विद्यमान रहते, चन्द्रमा की यात्रा करते रहते थे। तो उन्होने कहाप्रभु! मैंने भारद्वाज मुनि से इन यन्त्रों को प्राप्त किया है। मैं इन यन्त्रों में विराजमान होता हूँ इनमें विद्यमान होता हूँ, तो प्रभु! मैं एक रात्रि और एक दिवस में, चन्द्रमा में चला जाता हूँ। एक दिवस और एक रात्रि इतना मुझे आने के लिए पर्याप्त है। 01.10.1988

685 यान से बहत्तर लोकों में भ्रमण

यह जो यन्त्र आप दृष्टिपात कर रहे है, यह यन्त्र ऐसा है इसमें विद्यमान हो करके, जब मेरे आश्रम से, विज्ञानशाला से, यन्त्र उड़ान उड़ता है

तो सबसे प्रथम ये चन्द्रमा में जाता है, चन्द्रमा से उड़ान उड़ता है तो बुध में चला जाता है, बुध से यह उड़ान उड़ता है तो ये शुक्र में चला जाता है, शुक्र से उड़ान उड़ता है तो मंगल में चला जाता है, मंगल से उड़ान उड़ता है तो मृचिका मण्डल में चला जाता है, मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ता है तो म्रेतकेतु मण्डल में गमन कर जाता है। म्रेतकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता है तो स्वाति में चला जाता है, स्वाति मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो मूलकेतु मण्डल में प्रवेश कर जाता है, मूलकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता है तो वासकेतु मण्डल में गमन करता है, वासकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो यह रोहिणीकेतु मण्डल में चला जाता है, और रोहिणी केतु मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ वशिष्ठ में गमन करता है और वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ यह अरून्धती मण्डल में चला जाता है।हे प्रभु! बहत्तर लोकों का भ्रमण करके यह यान पुनः मेरी विज्ञानशाला में गमन कर जाता है। 01.10.1988

686 अन्तरिक्ष यात्रा

तत्वमुनिमहाराजके विद्यालय में बड़ा अनूठाविज्ञान था, उन्होंने कहाजाओ, ब्रह्मचारियों! अंतरिक्ष की यात्रा करके आओ। तो, उसमें कौनकौन ब्रह्मचारी थे? श्वेतावेतर ब्रह्मचारी, रोहिणीकृतिका, म्रेचकेतु ये तीनों ब्रह्मचारी अपने यान में विद्यमान हो करके, जब उड़ान उड़ने लगे, तोपृथ्वी के आश्रम से विद्यालय से उड़ान उड़ते ही सबसे प्रथमवोचन्द्रमा में पहुँचे और चन्द्रमा से उड़ान उड़ते हुए बुध में पहुँचे और बुध से उड़ान उड़ते हुएवह शुक्र में पहुँचे और शुक्र से उड़ान उड़ी तोवह मंगल में चले गए। मंगल से उड़ान उड़ी तो स्वाति नक्षत्र में चले गए, स्वाति से उड़ान उड़ी तो मृचिका मण्डल में चले गए। मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी तो रोहिणीकेतु मण्डल में चले गए। रोहिणी केतु मण्डल से उड़ान उड़ी तो कृतिका में चले गए और कृतिका से उड़ान उड़ी तो वह अरून्धती मण्डल में चले गए, अरुन्धती मण्डल से उड़ान उड़ी तोवो वशिष्ठ मण्डल में चले गए, वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ी तो विश्वकेतु मण्डल में चले गए, विश्वकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी तो क्रोणकेतु मण्डल में चले गए, क्रोणकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी तोभ्रणी नक्षत्र में चले गए, जब भ्रणी मण्डलसेउन्होंने उड़ान उड़ी तोवह श्वानभ्रणी मण्डल में प्रवेश कर गए, तो वह बहत्तर लोकों का भ्रमण करके वह ब्रह्मचारी कुछ समय के पश्चात, महर्षि तत्त्व मुनि के आश्रम में विद्यमान हो करके लोक लोकान्तरों को निहार रहे हैं। तो विचार केवल यह कि श्वेतावेतर अध्ययन करते रहे, विज्ञान के वांगमय में प्रवेश होते रहे। 07.11.1988

687 विभिन्न लोकों में यान गमन

तोऋषि ने कहा कि उस अग्नि की हमें पूजा करनी है। यही अग्नि वैज्ञानिकों कोयंत्रो में परिणत करा देती है लोक लोकान्तरों की यात्रा करा देती है। महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ यन्त्र मेंब्रह्मचारी विद्यमान है। अपने यहाँ से, अपनी तरंगो से उड़ान उड़ते है। पृथ्वी मण्डल से उड़ान उड़ता हैं, तो सबसे प्रथम चन्द्रमा में, चन्द्रमा से बुध में, बुध से शुक्र में, और शुक्र से मंगल में और मंगल से व्रेतकेतु मण्डल में और व्रेतकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ वह स्वाति नक्षत्र में और स्वाति से व्रेणकेतु में वायु वंजनत मण्डल में अंतमें यह बहत्तर लोकों का भ्रमण करते हुए यान ऋषि के आश्रम में पुनः प्रवेश कर रहा है। तो ये विज्ञान की बड़ी विचित्र उड़ानें हैं। 19.01.1989

688 विज्ञान सफलता से राष्ट्र सफलता

तो राजा अपनी चित्रावलियों में उस काल में सफलता को प्राप्त होता है। जब अपने राष्ट्र में किसी प्रकार का दोषारोपण करने के पश्चात उन चित्रावलियों में उनका चित्र आ जाए और चित्रों से उसको दृष्टिपात करके उसको दण्डित करने वाले हो। तो ढ़ाई घड़ी के पश्चात जब उनका चित्र आ जाता है तो वो विज्ञान में, अपने में सफलता को और राष्ट्रवाद में सफलता को प्राप्त हो जाते है। तोउन्होंने नाना प्रकार के ज्ञान और विज्ञानमयी धारा वाले अपने उस विद्यालय को उन्होंने दृष्टिपात कराया। नाना प्रकार के ब्रह्मास्त्र है, वरूणास्त्र है आग्नेयास्त्र है। नाना प्रकार के अस्त्रों-शस्त्रों से मानवअपनी विज्ञानशाला को सजातीए बना रहा है। 27.01.1989

689 यन्त्र द्वारा बहत्तर लोकों का भ्रमण

भारद्वाज मुनि ने कहा जब महर्षि तत्व मुनि महाराज के द्वारा अध्ययन करता था। तो अध्ययन करते समय नाना लोक लोकान्तरों में जाने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा। तो भारद्वाज मुनि ने कहा महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के एक श्वेती नामक एक ब्रह्मचारी थे। दोनों विद्यालय से एक यन्त्र में उड़ान उड़ते जो अन्तरिक्ष यान था। उस यान में उड़ते हुए सबसे प्रथम चन्द्रमा में पहुँचे। चन्द्रमा के पश्चात बुध में, बुध के पश्चात शुक्र में, शुक्र के पश्चात मंगल में पहुँचे और मंगल से जब उड़ान उड़ी तो म्रेचकेतु मण्डल में प्रवेश किया। म्रेचकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी तो पुष्य नक्षत्र में प्रवेश किया और वहाँ से उड़ान उड़कर केव्रेण और अस्वाति मण्डलों में प्रवेश किया। एक मौन वृत्तिका एक मण्डल था उसमें प्रवेश कियास्वाति अमृताम् में प्रवेश करके अरुन्धती और वशिष्ठ मण्डल में जब पहुँचे तो वहाँ हमने सर्वाकृति दृष्टिपात की।

तो ये ऋषि कहता है, कि हमने 72 लोकों का भ्रमण करके और वो यान, गुरु आश्रम में आ गया, आचार्य के आश्रम में प्रवेश हो गया। ऋषि कहते हैं कि विज्ञान का दुरुपयोग होना ही अकर्तव्यवाद बन जाता है। और विज्ञान का सदुपयोग होते ही कर्तव्यवाद आ जाता है।

12.02.1989

690 यन्त्र से लोकों की उड़ान

वह सबसे प्रथम चन्द्रमा में जाता है, चन्द्रमा से उड़ान उड़ता हुआ बुध में जाता है, और बुध से उड़ान उड़ता हुआ वह शुक्र में जाता है, और शुक्र से उड़ान उड़ करके, वह मंगल में प्रवेश करता है, और मंगल में प्रवेश करता हुआ वह वृत्तिका मण्डल में प्रवेश कर जाता है वृत्तिका मण्डल से उड़ान उड़ता है तो मृचिका मण्डल में प्रवेश हो जाता है, मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो अरुन्धती मण्डल में चला गया, अरुन्धती मण्डल से उड़ान उड़ी तो वह वशिष्ठ में प्रवेश हो गया और वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ी तो व्रेतकेतु मण्डल में प्रवेश कर गया, व्रेतकेतु मण्डल में से उड़ान उड़ी तो स्वाति नक्षत्र में चला गया और स्वाति नक्षत्र से उड़ान उड़ी तो रेणकेतु मण्डल में प्रवेश कर गया, रेणकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी तो वह प्रतिपदा मण्डल में प्रवेश हो गया और प्रतिपदा मण्डल से उड़ान उड़ करके वह रोहिणी केतु मण्डल में चला गया है। 26.06.1992

691 योग सिद्ध आत्मा

साधक अपने में साधना करना चाहता है और यह साधना क्या है? जिससे मानव का जीवन सुखद और आनन्द को प्राप्त हो जाता है? चित्त के मण्डल में से जब यह बाह्य जगत में चला जाता, तो लोक लोकान्तरों की माला बनाता है, नाना पृथ्वियों की माला बनाता है, नाना मंगल मण्डलों की माला बनाता है, बृहस्पति मण्डलों की माला बन जाती है। इसी माला के स्वरूप मेंउनमें नाना लोक लोकान्तर अपनी आभा में रत्त होते रहते हैं। तो यह जो बाह्य चित्त का मण्डल है मानव के समीप उस चित्त का और मानव चित्त मण्डलों का, दोनों का समावेश हो जाता है। जब दोनों का समावेश हो जाता है तोलोक लोकान्तरों की माला अपने में दृष्टिपात आने लगती है। उन मालाओं को दृष्टिपात करता है और वह मालाएक दूसरे में पिरोई हुई होती है। जैसे भिन्न भिन्न प्रकार के मनकों को पिरोया जाता है और पिरोने से वह माला बन जाती है। इसी प्रकार नाना मालाओं को किसी सूत्र में पिरोया जाता है तो वह महामाला दृष्टिपात आती है।

तो वह जो साधक है, जो परमात्मा की साधना में लगा हुआ है उसके समीप नाना प्रकार की धाराओं का जन्म होता है और जबवह उन धाराओं को जान लेता है तोवह योग सिद्ध आत्मा हो जाती है।

तो लोक लोकान्तरों को दृष्टिपात करने वाला एक योगी है और साधक जब लोक लोकान्तरों को अपने में अन्तःकरणीय एक विषय बना लेता है जो सहज ही उसे प्राप्त हो जाता है। कैसा अनूठा यह जगत है?परमपिता परमत्मा ने जब मानव शरीर का सृजन किया अथवा रचना की तो उसमें आन्तरिक जगत का उन्होंने निर्माण किया और उसमें मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार येउसके कारण से यह बन पाता है। इसी के साथ इसकी धाराएँ हमारे समीप आनी शुरु हो जाती हैं। तोचित्त मण्डल में जितना यह ब्रह्माण्ड है जो लोक लोकान्तरों वाला हमें दृष्टिपात आता है यह दृष्टिपात आने लगता है।

महर्षि शिकामकेतु उद्दालक एक समय लोक लोकान्तरों की माला बना रहे थे।वह उसे किसी सूत्र में पिरोना चाहते थे। वे बड़े अनुशासनीय थे। वे सौ वर्षा तक अनुशासन में रहे। 16.05.1991

692 प्रभु का जगत

एक समय महाराजा कुम्भकरण, महाराजा हनुमान के समीप आए और महाराजा कुम्भकरण ने, महाराजा हनुमान सेकहा कि मुझे सूर्य विद्या का भान कराओ। महाराजा हनुमान ने कहा कि तुम तो भारद्वाज मुनि के यहाँ रहते हो, वे वैज्ञानिक है, वे महान है, उनके द्वारा, तुम इस विद्या का अध्ययन करो। तो उन्होंने कहा, कि मैंने अध्ययन तो किया है, परन्तु यह विद्या इतनी नितान्त है। 05.03. 1982

यह जो संसार, आज हमें दृष्टिपात आ रहा है, चाहे वह इस पृथ्वी मण्डल वाला जगत हो, चाहे वह मंगल मण्डल वाला जगत हो, परन्तु किसी भी लोक-लोकान्तरों वाला जगत क्यों न हो, यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड, उस मनोहर देव की महिमा में गति कर रहा है। 23.03.1982

यह जगत, यह ब्रह्माण्ड उसी के गर्भ में विद्यमान है। उसी के आंचल में है, उसी में यह बस रहा है, उसी में गति कर रहा है। पृथ्वी अपनी आभा में गति कर रही है, सूर्य अपनी आभा में गति कर रहा है, मंगल अपनी आभा में गति कर रहा है, चन्द्रमा अपनी आभा में गति कर रहा है। ये गतियां, एक नहीं, नाना प्रकार की गतियाँ हो रही है।, नाना निहारिका गति कर रही है, एक निहारिका नहीं, नाना निहारिका इसमें गति कर रही है। यह वस रही है, अपनी आभा में आभायित हो रही है, तोयह प्रभु का गर्भाशय कहलाता है। यह प्रभु का जगत कहलाता है। इस प्रभु के गर्भ में, इस माता वसुन्धरा के आंचल मेंकैसेकैसे मण्डल अपनी गतियाँ कर रहे है।कहीं ध्रुव गति कर रहा है, कहीं वशिष्ठ मण्डल गति कर रहा है, कहीं अरुण्धती मण्डल अपनी आभा में गति कर रहा है।

693 नाना मण्डल

तोयह एक सूत्र कहलाता है, दोनों यन्त्रों को दृष्टिपात कर रहे थे, वे अपनी विज्ञानशाला में यन्त्रों से, कुछ लोकों की गणना कर रहे थे। वे

जब गणना करने लगे, यन्त्रों में चित्र आने लगे, तो एक अरुण्धती मण्डल है एक वशिष्ठ मण्डल कहलाता है। दोनों मण्डलों के अन्तर्गत, जब उनके यन्त्र की छाया पहुँची, तो एक ही मण्डल के आंगन में, नाना मण्डल गति कर रहे थे। 24.03.1982
उसमें, एक वशिष्ठ है और इतना विशाल वशिष्ठ मण्डल कहलाता है, जिसमें बावन लाखमंगल उसके अन्तर्गत गति करते रहते है। जब उन्होंने वशिष्ठ मण्डल के आंगन में यह दृष्टिपात किया तो ऋषि आश्चर्य चकित हो गया औरउन्होंने अपने यन्त्रों में, इस ब्रह्माण्ड के दर्शन करने लगे। तो वे जो गतियाँ कर रहे थे, उनका सूत्र क्या है? तोवेद का ऋषि कहता है वह जो प्राण है सर्वत्र लोकलोकान्तरों का सूत्र बना है। अपनेअपने आंगन में, गतियाँ हो रही है। 24.03.1982
लंका में विज्ञानशाला
राजा रावण के राष्ट्र में, नाना प्रकार की विज्ञानशालाएं थी, उन विज्ञानशाला में ले गएउन्होंने कहा प्रभु! मेरे राष्ट्र में, यह पृथ्वीअनुसन्धानशाला है। यहाँ पृथ्वी के ऊपर अनुसन्धान हो रहा है, इस पृथ्वी के गर्भ में कितनी दूरी पर कौनसा खनिज विद्यमान है, यहाँ रत्नों के ऊपर, जितना खनिज उत्पन्न होता है उसके ऊपर प्रायः अनुसन्धान होता रहता है। ये नाना वैज्ञानिक है जो अनुसन्धान करते रहते है। वेभ्रमण कराते हुए, जलअनुसन्धानशाला में ले गए, उन्होंने कहा कि महाराज! यह जलअनुसन्धानशाला है, इसमें विज्ञान की नाना प्रकार की आभाओं का दिग्दर्शन किया जाता है। जल में कितना प्राणत्व, नाना प्रकार का जो खनिज, आपो में विद्यमान रहता है, उसके ऊपर प्रायः अनुसन्धान करने वाले नाना वैज्ञानिक हुए, भ्रमण करते हुए, वे अग्नि अनुसन्धान शाला में पहुंचे। उन्होंने कहा हे प्रभु! मेरे राष्ट्र में यह अग्नि अनुसन्धान शाला है, यहाँ अग्नि के ऊपर नाना प्रकार के आभाओं में रमण करने वाले वैज्ञानिक है। 11.04.1982

694 अग्नि अनुसन्धान शाला

कितने प्रकार की अग्नि है? यह अग्नि क्याक्या कर सकती है?इस अग्नि के ऊपर नाना प्रकार के परमाणु, अणु त्रिसरेणु चतुषरेणु नाना प्रकार के परमाणुओं को जाना जाता है। अग्नि में कितनी धाराएं है, उन धाराओं को जानने के लिए, वैज्ञानिक तत्पर है। वह जब अग्निअनुसन्धानशाला में ले गये तो उसके पश्चात, वह सूर्यअनुसन्धानशाला, यहाँ वैज्ञानिक सूर्य की किरणों को अपने में आकर्षित करते रहते है, इन किरणों को ले करके और वह सूर्य की किरण से जो शक्ति लेते है उससेवाहन गति करते रहते है। 11.04.1982

695 विभिन्न लोकों में अग्नि

इस भौतिक विज्ञान को, आन्तरिक जगत से दृष्टिपातकरने लगते है तो उसमें सार्थकता होती है और जब वैज्ञानिकअग्नि को, बाह्य जगत में दृष्टिपात करता है, कहीं काष्ठों में जा रहा है, कहीं समुद्रों में प्रवेश कर रहा है इसमें कैसे अग्नि लग गई हैकहीं अन्तरिक्ष में, यह कैसे परमाणु एकदूसरे केअमृत होते हुए, यह अग्नि प्रदीप्त हो गई है। कई समय सूर्य में अग्नि का प्रहार हो जाता है। चन्द्रमा में भी कई काल में अग्नि प्रदीप्त हो जाती है, परन्तु मंगल में भी कई काल में अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। पृथ्वी में भी अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। 13.10.1984

696 विज्ञान का अन्तिम परिणाम

महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा कि इस विज्ञान के अन्तिम दो ही चरण हुआ करते हैं, अन्तिम दो ही परिणाम होते हैं। एक मानव का प्रकाश है, तो दूसरा अन्धकार है। उसमें नाना प्रकार की विज्ञानता दृष्टिपात आती है। ऋषि कहता है कि नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों में, गति करने वाला यन्त्र, परिक्रमा करने वाला, जो सूर्य की परिक्रमा करता है, ध्रुव की परिक्रमा करता है। चन्द्रमा में यात्री जा रहा है, गमन कर रहा है, मंगल में जा रहा है, बुध में प्रवेश कर रहा है इस प्रकार का विज्ञान जो हमने आप से दृष्टिपात किया है। प्रभु! इस विज्ञान का अन्तिम परिणाम क्या है? तो ऋषि ने पुनः यह उत्तर दिया कि एक उत्तर उन्होंने पूर्व दिया, पुनः उच्चारण करने लगे कि इसके दो ही परिणाम हैं एक राष्ट्र का, समाज का उत्थान होना है और एक से राष्ट्र का पतन होना है।अन्धकार में चला जाना है। 05.04.1988

697 विज्ञान से राष्ट्रीयता का हनन

तो हमने कहा प्रभु! यह कैसे? महर्षि भारद्वाज मुनि बोले कि जिस भी काल में विज्ञान का दुरुपयोग होता है, उस काल में, यहीं विज्ञान राष्ट्रीयता को अपने में निगल जाता है, अन्धकार में चला जाता है। और यदिइस विज्ञान का सदुपयोग होता है, इस विज्ञान से ऋषिमुनियों के चरित्र, ऋषिमुनियों की प्रतिभा, माताओं का दिग्दर्शन जब दृष्टिपात आता है, तो यही विज्ञान सार्थक बनकर समाज को, मानवीयता में प्रवेश कराकर उसे ऊंचा बना देता है। राष्ट्र की राष्ट्रीयता को ऊंचा बना देता है। 05.04.1988

698 लोकों में क्रियाकलाप

जैसे पृथ्वी मण्डल पर क्रियाकलाप है ऐसे ही चन्द्रमा में भी क्रियाकलाप है, ऐसा ही मंगल में क्रियाकलाप माना गया है। 13.04.1988

699 विज्ञान का अन्तिम परिणाम

महर्षि प्रवाहण ने आचार्य से प्रश्न कियामहाराज! आपका विज्ञान तो बड़ा अद्वितीय है, तुम्हारे राष्ट्र में तो ऐसेऐसे यन्त्र विद्यमान है जो

चन्द्रयात्री है, और मंगलयात्री है, और शुक्रयात्री है नाना प्रकार की विज्ञानशालाएँ बन करके नृत्त कर रही है। उन्होंने यह कहा कि तुम जानना क्या चाहते हो? ऋषि ने कहा, प्रभु! हम यह प्रश्न करना चाहते है कि यह जो विज्ञान है इसका अन्तिम परिणाम क्या होता है? जहाँ नाना प्रकार की चित्रावलियां है, नाना प्रकार का विज्ञान है, इसके अन्तिम परिणाम को जानना चाहते हैं। तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा कि मेरे विचार में तो बड़ी ऊँची, एक उड़ान हमारे मस्तिष्क को स्पर्श करती जा रही है। कि इस विज्ञान के दो ही परिणाम होते है, एक विज्ञान मृत्यु बन करके रहता है और एक विज्ञान जीवन बन करके रहता है। 08.05.1988

700 कण कण में ब्रह्म

एकएक कणकण में, चाहे वह इस मण्डल में हो, चाहे वह चन्द्रमण्डल में हो, चाहे वह मंगल में हो, किसी भी लोकलोकान्तरों में गमन करने वाला हो, वह ब्रह्म के स्वरूप को, साक्षात्कार रूप में दृष्टिपात करने वाला है।वही तो ब्राह्मण कहलाता है। 08.08.1988

701 वसुन्धरा

ऋषि ने कहा जैसे एक वाहन का निर्माण हुआ है और वह निर्माण महर्षि तत्त्व मुनि महाराज के विद्यालय में हुआ और उस वाहन पर ही मानव विद्यमान हो करके, गमन कर रहा है और गमन करता हुआ, वह चन्द्रमा में चला गया है, वही वाहन जब चन्द्रमा से उड़ान उड़ता है तो बुध में चला गया है बुध से उड़ान उड़ी है तो वह शुक्र में गमन कर गया हैं शुक्र से उड़ान उड़ी है तो मंगल में चला गया है और मंगल से उड़ान उड़ी है तो वह मृचिका मण्डल में चला गया, तो वह जिस परिधि में गमन करता हुआ, लोकों में वृत्त हो रहा है, एक में उड़ान उड़ता है, एक को जान रहा है, उस परिधि का नाम वसुन्धरा कहा जाता है।

द्यौ हे ब्रह्मचारी! तुम जान गए हो, वसुन्धरा किसे कहते है? जिस परिधि में वह यान गमन कर रहा है, जिस परिधि में गमन करता हुआ वह लोक लोकान्तरों में गमन करता हुआ, बहत्तर लोकों का भ्रमण करता हुआ, वह वाहन पुनः पृथ्वी पर आ जाता है, तो वह वसुन्धरा ही ऊर्ध्वा में गमन कराती है और वसुन्धरा ही उसे ध्रुवा में गमन करा देती है।

जब ऋषि ने इस प्रकार क्रियात्मक विज्ञान की धाराओं से वर्णन कराया, तो महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराजमौन हो गए और दर्शन भी उनके समीप आ गया, पुनः जब यह प्रश्न किया कि महाराज यह वसुन्धरा किसे कहते है? तोमहर्षि शिकामकेतु उद्दालक बोले यह तो विज्ञान की वार्ता रही, हम वसुन्धरा उसे कहते है जब यज्ञमान यज्ञशाला मेंशुद्ध हृदय से आत्म मग्न हो करके, याग करता है तो अग्नि की जो वह तरंगे है, वह उस पर वाहनित हो जाती है अग्नि वाहन बन करके, अग्नि अपने में धारण करती हुई, द्यौ में प्रवेश करा देती है। और वह जो द्यौ और पृथ्वी के मध्य का जो भाग है उसे वसुन्धरा कहते है। 30.03.1989

702 द्यौ में शुद्ध पवित्र शब्द

ऋषि अपने में चकित हो गए, उन्होंने कहाउसी का नाम वसुन्धरा है जिसमें वह गमन कर रहा है। वेद का आचार्य कहता है कि वह जो द्यौ है, जिसमें शुद्ध पवित्र शब्द निहित हो जाते है, उसी को वसुन्धरा कहते है। उससे ऊर्ध्वा में एक मृत्तिका स्थान कहलाता है। द्यौ के मध्य में होता है परन्तुउसमें शब्द निहित हो जाते है। जहाँ चित्र भी है, शब्द भी है और जहाँ उनका क्रियाकलाप भी है, वह सर्वत्र अग्नि की धारा पर विद्यमान हो करके, वह द्यौ में, मृत्तिका मण्डल मेंवे ओतप्रोत होते है। तुम अपने पूर्वजों का, दर्शनों का, विज्ञान के द्वारा, तुम अपने वैज्ञानिक यन्त्रों के द्वारा, अग्नि की तरंगों को जान करके, तुम उनको उसी काल में दृष्टिपात कर सकते हो। 30.03.1989

703 मंडलों की माला

भारद्वाज मुनि एक वेद मन्त्र का उदगीत गा रहे थे और वेद मन्त्र में चित्र की महिमा आ रही थी, परन्तुमेधावी की इसमें पुट लगानी थी। जब मेधावी की इसमें पुट लगी, तो ऋषि इसमें उड़ाने उड़ने लगा, उड़ान उड़ता हुआ ऋतम्भरा के क्षेत्र में प्रवेश हो गया। यन्त्रों के निर्माण करने वालों ने, एकशब्द से उन्होंने अपने में अनुसन्धान किया, और अनुसन्धान करते करते, ऐसी उड़ानें उड़ी किवह यहाँ से भारद्वाज मुनि के आश्रम से उड़ान उड़ता है यन्त्रवेत्ता मेधावी उड़ाने उड़ता है और वह यन्त्रों का निर्माण तो मेधावी केद्वारानृत्त किया।

जब उसमें उड़ान उड़ने लगा तो वह पृथ्वी से उड़ान उड़ करके मंगल में चला गया, और मंगल से उड़ान उड़ी तोवह बुध में चला गया, बुध मण्डल से उड़ान उड़ी तो वह शुक्र में चला गया और शुक्र से उडान उड़ी तो वह मंगल में चला गया और मंगल से उड़ान उड़ी तो मृचिका मण्डल में चला गया, मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी तो अरून्धती मण्डल में चला गया। अरून्धती मण्डल से उड़ान उड़ी तोवह वशिष्ठ मण्डल में प्रवेश हो गया और वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ी, तो मृचिका मण्डल में प्रवेश कर गया, मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो रेणकेतु मण्डल में चला गया, रेणकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो व्रेशी सम मण्डल में चला गया, व्रेशी सम मण्डल से उड़ान उड़ी तो क्रोतकातु मण्डल में प्रवेश हो गया, वह मुझे क्या, मेधावी का इतना चमत्कार, वह वैज्ञानिक अपने मेंबहत्तर लोकों का भ्रमण किया और बहत्तर लोकों का भ्रमण करके वह पुनः अपने गृह में प्रवेश हो गए। 13.04.1989

704 रक्त बिंदु में चित्र दर्शन

जब ऋषियों ने यह प्रश्न किया तो महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि बोलेहे प्रभु! यह मेरी देवी, जो पत्नी है इसने मुझे प्रेरणा दी, और मैं इसी की प्रेरणा के आधार पर विज्ञान में रत्त हो गया, एक सौ पांच वर्ष हो गए विज्ञान का अध्ययन करते-करते, अपने पितरों का अध्ययन कर रहा हूँ, ऐसे ऐसे यन्त्र है, जो एकएक रक्त के बिन्दु से चित्र दृष्टिपात आते है, ऐसे ऐसे यन्त्रों का निर्माण किया है भगवन! हम दोनों ने विद्यमान हो करके, यन्त्रों में कहीं चन्द्रमा की परिक्रमा कर लेते है, कही बुध की परिक्रमा कर लेते है, कहीं हम मंगल की परिक्रमा भी करते रहते है। कहीं हम सूर्य की ऊर्ज्वा के साथ में सूर्य की परिक्रमा करने लगते है। ऋषि ने कहा भगवन! एक यन्त्र मैंने, याग के माध्यम से ऐसा निर्मित किया है, जिसमें विद्यमान हो करकेहम गमन करते है, ब्रह्मचारी भी उसमें विद्यमान हो जाते है यह यन्त्र भारद्वाज की विज्ञानशाला में भी निर्माणित हुआ, इस यन्त्र को सबसे प्रथम हमने जाना, परन्तु यन्त्र में यह विशेषता रही हैकि उसमें विद्यमान हो करके, यहाँ से उड़ान उड़ते है, तो मंगल में चले जाते है यहाँ से उड़ान उड़ी तो चन्द्रमा में, चन्द्रमा से उड़ान उड़ी तोबुध में, बुध से उड़ान उड़ी तो शुक्र में और शुक्र से उड़ान उड़ी तो मंगल में चले गए और मंगल से उड़ान उड़ी तो रोहिणी कृतिका में और रोहिणी कृतिका से उड़ान उड़ी तो मृचि मण्डल में और मृचि मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वायित मण्डल में प्रवेश हो गए और वायित मण्डल से उड़ान उड़ी तो अरुन्धती मण्डल में, अरुन्धती मण्डल से उड़ान उड़ी तो, वशिष्ठ मण्डल में चले गए, वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ी, तो व्रेतकेतु मण्डल में, वाचि में प्रवेश कर गए और वाचि मण्डल से उड़ान उड़ी तो स्वाति में प्रवेश हो गए, स्वाति मण्डल से उड़ान उड़ी तो रोहिणी, वायु सम्भवी लोक में प्रवेश कर गए सम्भवी लोक से उड़ान उड़ी तो क्रेतुकेतु मण्डल में चले गए और क्रेतकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी तो हम मण्धूति मण्डल में चले गए और मण्धूति मण्डल से उड़ान उड़ी तो काञ्चवृत्ति मण्डल में चले गए और काञ्चवृत्ति मण्डल से उड़ान उड़ी तो वृत्ति मण्डल में प्रवेश कर गए, तो ऋषि शिकामकेतु उद्दालक मुनि कहते है प्रभु! इन नाना प्रकार के लोकों में क्या, हम बहत्तर लोकों का भ्रमण करके यान, हमारी यज्ञशाला में पुनः पधार जाता है, विज्ञानशाला में आ जाता है। 05.08.1989

705 योग सिद्ध आत्मा

चित्त के मण्डल में से जब यह बाह्य जगत में चला जाता है तो लोक लोकान्तरों की माला बनाता है, नाना पृथ्वियों की माला बनाता है, नाना मंगल मण्डलों की माला बनाता है, बृहस्पति मण्डलों की माला बन जाती है। इसी माला के स्वरूप में उनमें नाना लोक लोकान्तर अपनी आभा में रत्त होते रहते हैं। तो यह जो बाह्य चित्त का मण्डल है, मानव के समीप उस चित्त का और मानव चित्त, दोनों मण्डलों का समावेश हो जाता है। जब दोनों का समावेश हो जाता है, तोलोक लोकान्तरों की माला अपने में दृष्टिपात आने लगती है। उन मालाओं को दृष्टिपात करता है और वह मालाएक दूसरे में पिरोई हुई होती है। जैसे भिन्न भिन्न प्रकार के मनकों को पिरोया जाता है और पिरोने से वह माला बन जाती है। इसी प्रकार नाना मालाओं को किसी सूत्र में पिरोया जाता है तोवह महामाला दृष्टिपात आती है। तो वह जो साधक है, जो परमात्मा की साधना में लगा हुआ है उसके समीप नाना प्रकार की धाराओं का जन्म होता है और उन धाराओं में जबउनको वह जान लेता है तोवह योग सिद्ध आत्मा हो जाती है।

परन्तु लोक लोकान्तरों को दृष्टिपात करने वाला एक योगी है और साधक जब लोक लोकान्तरों को अपने में अन्तःकरणीय एक विषय बना लेता है जो सहज ही उसे प्राप्त हो जाता है। कैसा अनूठा यह जगत है?परमपिता परमात्मा ने जब मानव शरीर का सृजन किया अथवा रचना की, तो उसमें आन्तरिक जगत का उन्होंने निर्माण किया और उसमें मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार ये उसके कारण सेबन पाते है। इसी के साथ इनकी धाराएँ हमारे समीप आनी शुरु हो जाती हैं। तोचित्त मण्डल में जितना यह ब्रह्माण्ड है जो लोक लोकान्तरों वाला वह एक समय हमें दृष्टिपात आने लगता है। 30.10.1965

706 ऋषि अनुशासन

एक समय महर्षि शिकामकेतु उद्यालक लोक लोकान्तरों की माला बना रहे थे।वह उसे किसी सूत्र में पिरोना चाहते थे। वे बड़े अनुशासनीय थे। वे सौ वर्षों तक अनुशासन में रहे। अनुशासन उसे कहते हैं जहाँ प्रत्येक इन्द्रियों का जो विषय है उस विषय से इन्द्रियां बाह्य जगत में न जा पाएं, वह अनुशासन है। जैसे मानव के जो नेत्र हैं वह जब व्यापकता से दृष्टिपात करते हैं।धर्म के ऊपर जब यह अपने नेत्रों को ले जाते हैं। तो यह धर्म क्या है? इसके ऊपर ऋषि अपनी टिप्पणियां करता है और जब धर्म को विचारता है कि वह धर्म कहते हैं सुदृष्टिपात को तो नेत्र जब माता को माता की दृष्टि से पान करेगा उसमेंवही मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार को दृष्टिपात करेगा औरउसे अपने सूत्र में पिरोना प्रारम्भ करता है तो यह उसके चित्त की प्रवृत्तियों का एक अनुशासन बनता है औरअनुवृत्तियों में रत होकर के उनमें रत हो जाता है।

शिकामकेतु उद्यालक अन्तःस्थली में विद्यमान है और वे अपने चित्त मण्डल को जानना चाहते हैं और अपने अन्तःकरण में जन्म जन्मान्तरों के जो संस्कार हैं उन्हें उद्बुद्ध करना चाहते हैं।वे संस्कार उद्बुद्ध होने लगते हैं जबकि प्रत्येक इन्द्रियां अनुशासित हो जाती हैं और वे अपनी

चित्त वृत्तियों का अपने में निरोध करने लगता है।

अनुशासन किसे कहते हैं? नेत्रों का अनुशासन यह कि सुदृष्टिपात करें और यदि कोई देवी का दर्शन हो रहा है तो उसमें मातृत्व रहना चाहिए। जब मातृत्व रहता है और आगे जाता है तो वह मातृभाव भी समाप्त हो जाता है और वह परमात्मा की रचना को दृष्टिपात करता है। जब परमात्मा की रचना आ जाती है तो उसके नेत्र, मन और बुद्धि अनुशासित हो जाते हैं। और जब अनुशासित हो जाते हैं तो चित्त की प्रवृत्तियों का जब वह निरोध करना प्रारम्भ करता है। तो जो भी तरंगे उत्पन्न होती हैं वे तरंगे भी ज्ञान के वांगमय में होकर के अध्यात्मवाद में प्रवेश कर जाती हैं और जब तरंगे आध्यात्मिकवाद में प्रवेश कर जाती हैं तो अध्यात्मवादी परमात्मा के राज्य में अपने को स्वीकार करता है। 30.10.1965

707 लोक लोकान्तरों की माला

प्रत्येक इन्द्रियों का जो अनुशासन हैउनके साथ में मन, कर्म, विचार लगा रहना चाहते हैं और वह एक सूत्र बन जाता है और उस सूत्र को लेकर के वह गमन करता रहता है परन्तु जब वह तरंगों को दृष्टिपात करता है तो उसमें ब्रह्माण्ड है, उसमें नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की माला है।

शिकामकेतु उद्यालक ने एक समय महर्षि भृंगी से यह कहा था कि मैं अब तक एक सौ मालाओं में पहुँच गया हूँउन्हें जान गया हूँ।मालाएं किसे कहते हैं? मालाएँ कहते हैं एक समूह को, समूह का नाम माला है। जैसे एक सूत्र का मनका है। मनका जब एक सूत्र में पिरोया जाता है तो वह माला बन जाती है और वह माला मनकों का समूह कहलाती है। इसी प्रकार वह जो एक माला है लोक लोकान्तरों का एक प्राण रूपी सूत्र में पिरोई दृष्टिपात आती है। तो माला में एक सूत्र है वह उसे जान लेता है और सूत्र को अपने में अनुभव करता है। तो उस ब्रह्मसूत्र में जो मालाओं का जो अवधान हो रहा है उसे वह अपने में धारण कर रहा है। ' तो चित्त के मण्डल को विचारने से यह प्रतीत होता है कि यह जो बाह्य चित्तमण्डल है जिसमें लोक लोकान्तरों की मालाएं बनी हुई हैं इन मालाओं को धारण करने वाला शिकामकेतु उद्यालक कहता है कि मालाओं को मैंने कुछ जाना है। वह कितनी मालाएं जानते थे, इसमें बड़ी विवेचना आती रहती है। तो उन्होंने यह कहा कि मैं उन मालाओं को जानता हूँ जिनका मैंने अनुसंधान किया है। चित्त के मण्डल की जो एक एक धारा है उसमें से नाना मालाएं बनी हुई हैं। जैसे बाह्य जगत में यह जो पृथ्वी है ये माला बनकर के रहती है। 30.10.1965

एक लोक की दूसरे लोक से अधीनता

वह भी एक दूसरे के सहायक हैं एक दूसरे के आधीन बने हुए हैं चन्द्र मण्डल है चन्द्र मण्डल में सूर्य का प्रतिबिम्ब आता है चन्द्रमा प्रकाशमान हो जाता है मंगल में सूर्य का प्रतिबिम्ब आता है मंगल प्रकाशमान हो जाता है हमार यह पृथ्वी भी प्रकाशमान सूर्य के अधीन बन करके रहती हैएकदूसरे के अधीन बनें इसी प्रकार सूर्य का भी कोई स्वामी हैवह बृहस्पति है बृहस्पति सूर्य को अपने अधीन बना देता है तो जो सूर्य में प्रकाश आता है सूर्य मण्डल को प्रकाशित करता है वह बृहस्पति है और बृहस्पति एक सूर्य को प्रकाशित नही करता औरजो जिसका प्रकाशक होता है उसी को सूर्य कहा जाता है, हमारा प्रकाशक कौन है? तो हमारा प्रकाशक वह सूर्य है, हमारे शरीर का प्रकाशक यह सूर्य है, सूर्य का भी कोई प्रकाशक होता है, वह सूर्य के लिए सूर्य है वह उसका प्रकाशक है इसी प्रकार अब बृहस्पति के अधीन, नाना प्रकार के मण्डल हैं, आरुणि हैं, त्रिकाण है, और सप्त ऋषि हैं, जैसे सूर्य का प्रकाशक बृहस्पति है, इन लोकों का अधिपति बृहस्पति माना जाता है, वह उसका प्रकाशक है एक दूसरे के अधीन बने हुए हैं और बृहस्पति का भी कोई प्रकाशक है उसे हम ध्रुव कहते हैं, क्योंकि वह बृहस्पति का प्रकाशक है और बृहस्पति का प्रकाशक होने के नाते, हमारे यहाँ उसे सर्वत्र प्रकाशक कहा है अब एक दूसरा लोक एक दूसरे के अधीन बने हुए हैं, सूर्य मण्डल के अधीन लगभग सहस्रों नही लाखों मण्डल इस सूर्य के अधीन हैं और यहाँ कोई मण्डल बृहस्पति के अधीन है यहाँ कोई मण्डल ध्रुव के अधीन है परन्तु एक दूसरे की आर्कषण शक्ति से संसार स्थिर हो रहा है कितने लोक हैं प्रभु की सृष्टि में, कितने मण्डल हैं और कितनें आरुणि इत्यादि लोक कहे जाते हैं एकदूसरे से मिलान नही होता, इन मण्डलों की छाया पृथ्वी पर आ रही है, यह कैसी अनुपमता है, प्रभु की रचना की, सूर्य प्रातःकाल में उदय होता है, चन्द्रमा अपने प्रकाश को लिए हुए होता है, परन्तु चन्द्रमा सूर्य की किरणों का मिलान होता है, पूर्णिमा के दिवस, परन्तु यह इतने ऊँचे-ऊँचे लोक, एक दूसरे से मिलान यदि कर जाए, तो इनका संघर्ष हो जाएगा। 30.10.1965

708 परमपिता परमात्मा

यह कितनी सुन्दर उस प्रभु की रचना, एकदूसरे के अधीन लोकलोकान्तर क्रियाशील हो रहे हैं, प्रगतिशील हैं, परन्तु इन सबका अधिपति कौन है? कौन इनको नियन्त्रण में चला रहा है? वह कोई सत्ता है, जिसको हम परमपिता परमात्मा कहते हैं, वह मेरा प्रभु कितना अनुपम है, जो इसके ब्रह्माण्ड का स्वामी है परन्तु जब मानव एकदूसरे के अधीन है फिरभी एकदूसरे का शरीर कितना भिन्न है प्रभु की रचना में।

30.10.1965

709 व्यान प्राण

आज एक मानव वैज्ञानिक क्षेत्र में चला जाता है। परन्तु विज्ञान में जब जाता है तब वह यह विचारता है, कि सूर्य की तरंगों में, कितनी तरंगे होती हैं। यह भी विचारता है कि चन्द्रमा की कान्ति में कितनी तरंगगें होती हैं, उन तरंगों का अनुभव करता है। परन्तु वह कहां से अनुभव करता है, परन्तु विचार आता है कि हमारे कंठ में बैठा हुआ, जिसको व्यान प्राण कहते है। व्यान प्राण में यह शक्ति होती है कि हमारे मस्तिष्क में जो नाना प्रकार के यन्त्र है। जिसको स्वाधिष्ट नाम से, जिसको हमारे यहाँ नाना प्रकार के मस्तिष्कोंसे भी सम्बोधित किया गया है। 11.04.1969

710 मस्तिष्क के प्रकार

कपिल जी ने कहा है कि मनाव के शरीर में एक मस्तिष्क होता है, द्वितीय लघु मस्तिष्क होता है, लघु मस्तिष्क के पिछले विभाग में सामुग्री नाम का मस्तिष्क होता है जिसको हमारे यहाँ ब्रह्मरन्ध्र भी कहा जाता है, परन्तु उसमें नाना प्रकार की जो नस नाड़ियाँ हैं। उन नस नाड़ियों में वह तरंगें ब्रह्मरन्ध्र में एक यन्त्र होता है जिसको हमारे यहाँ स्वाधिष्ठान नाम का यन्त्र कहा जाता है, परन्तु उस यन्त्र में यह विशेषता होती है, परन्तु वायुमण्डल में चन्द्रमा की कान्ति रमण कर रही है और यहाँ और भी नाना शब्द रमण कर रहे है उस शब्द को ग्रहण करने की शक्ति होती है उस यन्त्र मेवायुमण्डल में नाना प्रकार की जो वाणी भ्रमण करती रहती है, उस वाणी को यन्त्र स्वतः ही ग्रहण करता रहता है परन्तुवाणी के द्वारा उसका प्रसारण भी हो जाता है, परन्तुयह कार्य व्यान प्राण का है व्यान हमारे यहाँ जो सूचना केन्द्र है जो सूचना आती है अथवा चन्द्रमा से आओ, सूर्य से आओ, उसका ज्ञान हो जाओ परन्तु बृहस्पति से आओ, परन्तु आरुणि मण्डल से आओ, बृहस्पति और जेठाय नक्षत्र से आओ, परन्तु वह जो तरंगें है अथवा बुध से भी आए अथवा मंगल से भी आ सकती है, परन्तु उनको जो सम्बोधित करने वाला है उनका कितना ज्ञान है, तो वह व्यान प्राण में ज्ञान होता है। व्यान प्राण ज्ञान का सूचक नही होता, क्योंकिव्यान प्राण की जो गति होती है, उसके पिछरले विभाग में जो मनीराम विराजमान है वह मन से उसका ज्ञान होता है। और आज्ञा देने वाला, निर्णय देने वाला, प्रसारण शक्ति के द्वारा वह जो व्यान प्राण है, वह प्रसारण करने वाला है।तो हमारे इस मानव शरीर मेंयह जो व्यान प्राण है, यह इतना शक्तिशाली है इसके ऊपर मानव बहुत कुछ विचार विनिमय कर सकता है, परन्तु जितना भी विज्ञानवाद हैजैसे बुद्धि, मेधा, मेधावी का केन्द्र इस व्यान प्राण के साथ में हो जाता।आजइस मस्तिष्क को, लघु मस्तिष्क को, ब्रह्मरन्ध्र को, ब्रह्मरन्ध्र में आगे चल करके जो यन्त्र हैं। उन यन्त्रों को जानना यह महान वैज्ञानिको का प्रायः महान कर्तव्य होता है। यह उनके जान लेने के पश्चात वायुमण्डल में जो तरंगें रमण करती रहती है उन तरंगों में जो शब्द रमण करते रहते है। उन तरंगों में जिस प्रकार के परमाणु होते है, उन परमाणुओ को एकत्रित करने की उनमेंक्षमता हो जाती है। 11.04.1969

711 उदान प्राण

तो यह जो मानव शरीर है यह प्रभु ने ऐसा यन्त्रालय बनाया है। कि इसमें नाना प्रकार के यन्त्र है, उसके निचले विभाग में उदान प्राण रहता है, यह जो उदान प्राण है यह उदान क्या कार्य करता है? एकत्रित कर लेता है जितना द्रव्य आता है, उस सब को एकत्रित करता है। और एकत्रित करकेउसको अग्नि के साथ सम्मलित होता हुआ, उदानजो भी हम कुछ अन्न इत्यादि पान करते है, व्यान से लेते है, उस सबका रस बना देता है, रस बना करके उस रस को एकत्रित कर देता है, उस सबमें, दूसरामानव के शरीर में जो विराजमान है, जिसे हमारे यहाँ सामान्य प्राण कहा जाता है, वह सामान्य प्राण को अर्पित कर दिया जाता है, वह सामान्य उसे अर्पित कर देता है, तोमानव के शरीर में बहतर करोड़, बहत्तर लाख, दस हजार, दौ सौ नाड़ी कहलाती हैउन सब नाड़ियों में वह सब रस ओतप्रोत होता चला जाता है अपनेद्वारा उसे संग्रह करने की प्रवृति नही होती।

महर्षि कपिल जी ने कहा है कि जब मानव के शरीर में कोई भी प्राण यदि उसे एकत्रित करने की प्रवृति होती चली जाएगी, तो शरीर में रूग्ण होता चला जाएगा। शरीर में नाना प्रकार के दोषारोपण होंगे। 11.04.1969

712 चित्त के संस्कार

एक मानव है परन्तु उसके सूक्ष्म से चित्त में, एक मानव सर्वत्र राष्ट्र में भ्रमण कर लेता है। परन्तु राष्ट्र का भ्रमण करता हुआ, वह द्वितीय राष्ट्रों में जाता है, भूमण्डल का भ्रमण कर लेता है, चन्द्रमा की यात्रा कर लेता है, मंगल की यात्रा कर लेता है, शुक्र इत्यादि बुध की यात्रा में परिणत हो जाता है वहाँ के प्राणी मात्र को दृष्टिपात कर लेता है अब चित्त में वह संस्कारविराजमान हो जाते हैं, अब हम विचारते हैं कि कि हमारे राष्ट्र का कितना क्षेत्रफल है, तो वही चित में वही तरंगे उत्पन्न होती हैं। 20.08.1969

713 अनन्तता में प्रभु

लोकलोकान्तरों का वर्णन आ रहा था परन्तु कही बृहस्पति का वर्णन था तो कही जेठाय नक्षत्र का वर्णन थाजैसा प्रभु ने कर्म पृथ्वी मण्डल में रचा उसी प्रकार का कर्म सूर्य मण्डल में हैं उसी प्रकार का कर्म चन्द्र मण्डल में हैं उसी प्रकार का मंगल मण्डल में है। उसी प्रकार बृहस्पति और आरुणि जेठाय आदि मण्डलों में स्वीकार किया जाता है।परन्तु उसका संकल्प कितना महान है, कितना अलौकिक है, कितनी विचित्रता उसमें रहती है, अंत में मानव नेतिनेति शब्द को उच्चारण करने लगता है।

क्यों करने लगता है? क्योंकि मानव का जीवन अल्पज्ञ होने के कारण, उसमें अल्पज्ञता आने के कारण, वह नेति नेति शब्द का प्रतिपादन करता है, क्योंकि अनन्तता में तो प्रभु ही विराजता है, और जब यह अनन्तता केद्वार पर चला जाता है, तो यह नेति नेति उच्चारण कर देता है, क्योंकि प्रकृति का जो क्षेत्र था, वह समाप्त हो गया।

714 सौर मंडलों के अधिपति

वह तारा मण्डल, नाना प्रकार के तारामण्डल कहलाए गए है, हमारे यहाँ आचार्यो ने कहा हैहमारी इस सर्वत्र सृष्टि मेंतीन प्रकार के सौर मण्डल का अधिपति सूर्य कहलाया गया है। द्वितीय सौर मण्डल का अधिपति ध्रुव कहलाया गया है और तृतीय सौर मण्डल का अधिपति जेठाय नक्षत्र कहलाया गया है परन्तु एकएक सौर मण्डल के अन्तर्गत नाना मण्डल रहते है, नाना लोक लोकान्तर रहते है हमारे ऋषिमुनियों नेसृष्टि मेंअसंख्य सूर्य कहलाए गए है, असंख्य, जेठाय नक्षत्र है और असंख्यध्रुव मण्डल कहलाए गए है।

याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहाहे राजन! यह जो पृथ्वीमण्डल है ऐसे ऐसे तीस लाख पृथ्वियां सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती है और जैसा यह सूर्य मण्डल है ऐसे ऐसे एक सहस्र मण्डल, वृहस्पति मण्डल में समाहित हो जाते है और जैसा यह वृहस्पति आरुणि मण्डल में समाहित हो जाते है और जैसा यह आरुणि मण्डल है, ऐसे ऐसे महान मण्डल ध्रुव मण्डल में समाहित हो जाते है और जैसा यह ध्रुव मण्डल है, ऐसेऐसे एक सहस्त्र जेठाय नक्षत्र में समाहित हो जाते है, तो परमात्मा की सृष्टि में असंख्यचन्द्रमा कहलाए गए है असंख्य मण्डल कहलाए गए है नाना सूर्यबृहस्पति इत्यादि माने गए है, तो सूर्य मण्डल हमारे यहाँएक अग्ने लोक कहलाया गया है।आज का संसार तो चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है। 31.08.1969

715 विभिन्न लोकों के प्राणियों की आकृति

आजजब हम सूर्य मण्डल की यात्रा करते हैं, चन्द्रमा की यात्रा करते हैं, मंगल में जाते है, शुक्र में जाते हैं और शनि में जाते हैं, बुध में जाते हैं और भी नाना प्रकार की लोकों की यात्रा करने के लिए मानव तत्पर होता है वहाँ के प्राणियों को भी दृष्टिपात करता है कहींकहीं पर ऐसा प्राणी रहता है, कही पृथ्वी मण्डल के प्राणियों से, उनकी आकृति भिन्न होती है उनका सूक्ष्मवाद भी भिन्न होता है वहाँ का जैसा वातावरण होता है उसी तरह उनका व्यवहार होता है उनकी राष्ट्रीयता होती है, उनका व्यापार चलता रहता है। 05.03.1973

716 द्वापर कालीन यान अब भी अंतरिक्ष में

द्वापर के काल में किस प्रकार का विज्ञान था, घटोत्कच्छ और भीम के यान, अन्तरिक्ष में, आज भी चन्द्रमा के कक्ष के ऊपर ले भाग में भ्रमण कर रहे हैं, जब वैज्ञानिक चन्द्रमा में जाएगा, तो उन्हें वह यान आगे चल करके प्राप्त हो सकते हैंअभिप्रायः यह, करोड़ों वर्ष की आयु के यानहमारे यहाँ आदि ऋषियों ने निर्माण किए और उन्हें वायु मण्डल में बना करके त्याग दिया, बहुत से यान तो उन वैज्ञानिकों के होते हैं, जो किसी की ध्रुव की परिक्रमा कर रहे हैं, कोई जेठाय नक्षत्र की परिक्रमा कर रहे हैं। 05.03.1973

717 वेद ज्ञान

वेद में ज्ञान है, बिन्दु से ले करके एकएक, कणकण का ज्ञान है एकएक यन्त्रों का ज्ञान है, वह पृथ्वी की उड़ान, चाहे बृहस्पति में उडों, चाहे मंगल में उड़ने वाला क्यो न हो, चाहे वहबृहस्पति लोकों में जाने वाला हो, चाहे सूर्य मण्डलों में जाने वाला हो, नाना निहारिकाओं में जाने वाला क्या न हो, परन्तु वह जो जाना है, आना है, वही सब वेद का ज्ञान है, वेद का विज्ञान है, ऋतम्भरा और प्रज्ञा का ज्ञान है, परन्तु जब उससे भी ऊँची ऊँची गति में जाते हैं, जितना भी यागेश्वर है, योगेश्वर है नाना योगियों की उसे सहायता उसे प्राप्त होती है। 06.03.1976

718 लोक के तुल्य वायुमण्डल, आहार

जब हम मंगल मण्डल की कल्पना करने लगते हैं तो वहाँ खाद्य और खनिजों को जानते हैं और भी नाना जैसे जेठाय नक्षत्र की कल्पना करने लगते हैं वहाँ भीहम खनिज को जानते हैं, तो आश्चर्य आने लगता है वह मेरा प्यारा प्रभु कितना विज्ञानमयी हैं, कितना स्रोत्रमयी है, जिस प्रकार का लोकलोकान्तर हैं उसी प्रकार का वायुमण्डल हैं वहाँ उसी प्रकार काखाद्य और खनिज माना गया हैं। 69.77.005

719 मंडलों की माला

उन्होंने कहा यह जो सूर्य मण्डल है, एक सहस्त्र अभ्योदय कहते हैं।एक सहस्त्र सूर्य मण्डलों की माला बनती है, और उस माला को बृहस्पति अपने में धारण कर रहा है, बृहस्पति कितना विशाल मण्डल है, कितनी विशालता को अपने में लिए हुए है, एक सहस्त्र मण्डलों की माला

बनी, उस माला को कौन? बृहस्पति अपने में धारण कर रहा है, अपने में पिरों रहा है, उन्हेंविचित्र बना करके, माला की प्रतिभा बना करके अपने में ओतप्रोत हो जाती है।
जब हम अपने में यह विचारते हैं, किइतने सौर मण्डलों की माला, बनाकर उन, सौर मण्डलों को कौन धारण कर रहा है, उन सौर मण्डलों की, लगभग लाखों मण्डलों कीएक आकाशगंगा कहलाती है, औरसहस्त्रों आकाशगंगाए, एकअवन्तिका में प्रवेश कर जाती है, और सहस्त्रों अवन्तिकाओं कीएक निहारिका बन जाती है।
तोप्रभु का अनन्तमयी ब्रह्माण्ड है, यह जो पृथ्वी है यह ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। ब्रह्माण्ड का वर्णन कर रही है। जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से विचारता रहा है, अनुसन्धान करता रहा है, अन्वेषण करता रहा है। तो हम विज्ञान के वांगमय में जब प्रवेश करते हैं, तो लघु मस्तिष्क में जा करकेयोगीजन इसका निर्णय करते रहते हैं और वही बाह्य जगत में विज्ञान की भौतिकवाद की एक तरंगें बन करके, मानव इसेअपने में पिरोने वाला बन जाता है।
वेदमन्त्रपरमात्मा की गाथा गाता रहता है। जिस प्रकार यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है, यह ब्रह्माण्ड एक अनन्तमयी माना गया है, जिसके ऊपरप्रत्येक मानव मानवीय अपने में रत होता रहा है, प्रत्येक वेदमन्त्रयह उच्चारण कर रहा है, कि जितना यह ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आ रहा है, चाहे वह वनस्पति के रुप में हैं, चाहे वहकिसी भी रुप में विद्यमान है, उस सर्वत्र के गर्भ में वह परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आता है। वह सर्वत्रता में निहित रहने वाला है एक चेतना है। जो क्रियाकलाप कर रही है वह चेतना अपने में चेतनित रहती है, उस चेतना के ऊपर हम सदैव अपनी चेतना में चेतना का भान करते रहें। जिससे मानव में विवेकी की उपलब्धि हो करके और वह ब्रह्मवर्चोसि बन करके, परमपिता परमात्मा की अनुपम सृष्टि को जानने वाला बन जाए, यह सृष्टि का कितना विचित्र, एक अनुपम एक धारामयी मानवृति कहलाता है, जिसके ऊपरमानव परम्परागतों से हीभारद्वाज मुनि के यहां इस प्रकार का अन्वेषण होता रहा है अथवा वह अन्वेषण एक महानता की ज्योति में रहा है।
तो महर्षि भारद्वाज मुनि जैसों के यहां नाना ऋषिमुनियों की भिन्नभिन्न प्रकार की गोष्ठियां होती रही हैं और उन्होंने नाना प्रकार के यागों का चयन किया है। उन्होंने कहीं ब्रह्मयाग में अपने को ले गए हैं और कहीं वहदेवयाग में ले गए हैं, यागों में परिणत कराना, वही यागों का चयन सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके, वर्तमान के काल तक, उसी प्रकार अपने में मानव रत्त रहा है, उसकी आभा, एकनित रही है, तो प्रत्येक मानव को मानवीय क्षेत्र में ले जाने वाला, यह समूह विज्ञान कहलाता है, विज्ञान में रत्त रह करके अपनी विवेक की उपलब्धियां करता हुआ, और वह महान बन जाता है, पवित्र बन करके, प्रभु की महिमा और प्रभु के गान में वह महान बनता रहता है।
तो इस माला को हमें अपने में धारण करना चाहिए। प्रत्येक प्राणी जब इस माला को अपने में धारण करने लगता है, तो वह माला में ही रत हो करके प्रभु की सृष्टि को निहारने लगता है। प्रभु की सृष्टि को, महानता में दृष्टिपात करता हुआ सागर से पार हो जाता है। तो जैसे माता का पुत्र, माता की गाथा गा रहा है, माता के गर्भस्थल में शिशु का प्रवेश है, एक बिन्दु हैं, बिन्दु में शिशु है, औरशिशु के प्रवेश होते हीसर्वत्र देवता रक्षा करने के लिए तत्पर हो जाते हैं, रक्षा करने के लिए कौन आते हैं?अपने गुणों को ले करके उस शिशु के, योनि में प्रवेश हो जाते हैं।
वह चन्द्रमा अमृत बन करके प्रवेश हो गया है, और सूर्य प्रकाश बन करके ओतप्रोत हो गया है, औरआपोबन करके, आपो उसका आसन बन करके प्रवेश हो गया है, ओढ़न बन करके प्रवेश हो गया है, अग्नि उष्ण बनाने के लिए तत्पर हो गयी है, और वायु प्राण देने के लिए तत्पर हो गई है, अन्तरिक्ष अवकाश देता है, उसमें वह परमाणु बन करके, वहां स्थूल बन करके उसमें वह अवकाश में भ्रमण करते हैं।
78.92.028

720 द्यौ, परमात्मा का हृदय

वह जो द्यौ है जो परमात्मा का हृदय माना गया है।जैसे मानव का हृदय है, इसमें मन की तरंगे ओतप्रोत होती रहती हैं, प्राण की तरंगे ओतप्रोत होती है, जिससे मानव यौगिकवाद में चला जाता है।अपने चित्त में जो रमण करने वाला जगत है, उसको जानने लगता है, कि अहंकार में कितनी मात्र है, मन में कितनी मात्र है, इसी प्रकार इस आँगन में परिणित होता रहता है, इन्हीं का अनुसन्धान करता रहता है, इन्हीं में वह संलग्न रहता है।
वह जो मानव के हृदय में पिपासा उत्पन्न होती है, उसका मूल कारण है, कि हमारा जो लघु मस्तिष्क है जिसे ऊपरी भाग में ब्रह्मरन्ध्र भी कहा जाता है, उसमें एक चक्र होता है, उमसें नाना प्रकार की वाहक नाड़ियां होती हैं, जिनका सम्बन्ध मन से होता है। उस मन की नाना तरंगों का सम्बन्ध, नाना प्रकार की नाड़ियों से होता है। किसी का सम्बन्ध ध्रुव मण्डल से होता है, किसी नाड़ी का सम्बन्ध जेठाय नक्षत्र से होता है, किसी का मंगल से होता है, किसी का चन्द्र मण्डल से होता है, किसी का सूर्य मण्डल से होता है, किसी का आरुणि मण्डल

से होता है, किसी का अरुंधति मण्डल से होता है, किसी का रोहिणी नक्षत्र से होता है, किसी का मानकेतु नक्षत्र से होता है, किसी का वशिष्ठ मण्डल से होता है। नाना प्रकार के मण्डलों से उन नाड़ियों का सम्बन्ध होता है।

वह जो तरंगे होती हैं, वह जो अंकुर हैं, वह केवल मन की एक पिपासा होती है, क्योंकि मन केद्वार से ही उन नाड़ियों में तरंगे होती हैं। मन का जो सम्बन्ध है वह प्रकृति से है। प्रकृति का जो सूक्ष्मतम स्वरूप है, वह प्रकृति का एक मन रूप माना गया है, इसीलिए प्रकृति का जितना यह ब्रह्माण्ड है, जितना यह चक्र है, इसमें जितने भी लोकलोकान्तर है, जहाँ भी प्रकृति का सम्बन्ध, वहीं मन की नाड़ियों के द्वारा होती हुई और नाड़ियों में चेतना देती हुई, इसका प्रायः सम्बन्ध हुआ करता है। 12.04.1971

721 मन की चौरासी प्रकार धाराएं

महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा हमारे यहाँ जिस प्रकार मन की चौरासी प्रकार की धारा स्वीकार की हैं, इसी प्रकार चौरासी प्रकार की मन की धारा ब्रह्मरन्ध्र में होती हैं, और ब्रह्मरन्ध्र में से वे जो नाना प्रकार की कृति है, उनमें भीएकएक नाड़ी में से, लगभग बहत्तरबहत्तर इस प्रकार की धारा होती है, जिनका सम्बन्ध नाना प्रकार के मण्डलों से होता है, नाना सौर मण्डलों से होता है।जब यह मन की धारा तंरगित होती हुई सूक्ष्म, शरीर में रमण करने लगती है, उस समय, उस मानव को, योगी को, सूक्ष्म शरीर वाले महापुरूष को, यह भान होने लगता है कि वास्तव में यह जो जगत है यह कितना विशाल है, इसमें कितनी विशालता है, लोकलोकान्तरों में मेरा आवागमन हो गया है, आज वास्तव में विष्णु लोक में विचरण करने वाला बन गया हूं, और भी नाना प्रकार के मण्डलों में उसकी गति होने लगती है। 12.04.1971

722 बुद्धि में इक्कीस प्रकार की तन्मात्राएँ

इसी प्रकार इस मन का जो जो आभास है, प्रायः उत्पन्न होने लगता है।वह प्रायः बुद्धि से उत्पन्न होने लगता है, और बुद्धि में भी इसी प्रकार इक्कीस प्रकार की, तन्मात्राओं का जन्म होने लगता है, जिनका सम्बन्ध इस महान प्रकृति के मण्डलों से, द्यौ लोक से होने लगता है। जिस प्रकार अग्नि में घृत्त की आहुति देने से अग्नि प्रदीप्त हो जाती है, इसी प्रकार यह जो मन, बुद्धि, चित की प्रवृतियां हैं, इसी प्रकार यह जो महान कृति बुद्धियां हैं, श्वेतकेतु ऋणीका, नाना प्रकार की यह जो बुद्धि की श्रेणियां होती हैं, इनका सम्बन्ध जब द्यौ लोक से होता है, तो जिस प्रकार यज्ञशाला में यज्ञमान जब आहुति देता है और अग्नि प्रदीप्त हो जाती है, इसी प्रकार जब इस बुद्धि की नाना प्रकार की तरंगें, नाना प्रकार की चेतनाएं, जब द्यौ लोक में चली जाती हैं, तो द्यौ लोक प्रकार के सुन्दर अणु हैं, जिनका सम्बन्ध घृत्त से विशेष माना गया है। जैसे नाना प्रकार की औषधियों का, पशु के शरीर में जाकर के, मन्थन होने के पश्चात, वह घृत्त उत्पन्न हो जाता है, इसी प्रकार यह जो नाना प्रकार की बुद्धियों की तरंगें होती हैं, सामभूति होती है, मानकेतु होती हैं। वह जो नाना प्रकार की, जो बुद्धियां की तरंगें होने लगती है, ये जबद्यौ लोक में रमण करने लगती हैं, तो ऐसी सुन्दर महान तरंगों का जन्म हो जाता है। 12.04.1971

723 द्यौ लोक का घृत

जैसे घृत है, तो द्यौ लोक का घृत क्या है? हमारे यहाँ यह जो प्राण हैं, इसी को द्यौ लोक का घृत माना गया है, वह जो द्यौ लोक का घृत है, वही बुद्धि को नाना प्रकार के रूपों में रमण करने वाला है, क्योंकि जब प्राण और मन दोनों का द्यौ लोक में समन्वय हो जाता है, उस समय योगी की साम्यावस्था हो जाती है। उस समय वह योगी, एक महान धारा को प्राप्त करने लगता है। वह इन्द्रियों में जो ज्ञानेन्द्रिय की चेतना है, कमेन्द्रियों की चेतना है, वह चेतना भी अन्तःकरण में, जिसे हमारे यहाँ चित्त भी कहा जाता है। परन्तु उनका उस चित्त मेंस्वभाव बना रहता है। जब योगी द्यौ लोक के घृत को जान लेता है, और अपने ब्रह्मरन्ध्र के घृत को जान लेता है, और दोनों का समन्वय कर लेता है, तो उस समय चित्त में जो इन्द्रियों की चेतना है, जो एकएक करके, बाहरबाहर प्रकार चेतनाओं का जन्म होता है। उन चेतनाओं का समवन्य इस महान द्यौ लोक वाले जगत से कर लिया जाता है। तो उस समय योगी एक महान सूक्ष्म शरीर, कारण शरीर और स्थूल शरीर तीनों की गतियों को अच्छी प्रकार से जानने लगता है। 12.04.1971

724 वाणी का महत्व

महर्षि भारद्वाज ने अनुसन्धान करते हुए कहा है, कि यह जो मानव के द्वारा वाणी है, जब हम इसे व्यष्टि में ले जाते हैं, तो साधारण कहलाती है। परन्तु जब समष्टि रूप धारण करा देते हैं, तो इसमें से तीन प्रकार की अग्नियों का अग्नयाधान होने लगता है। वह जो अग्नयाधान है, ऋषि भारद्वाज ने कहाहे मानव! इसलिए तुझे वाणी पर संयम करना है, क्योंकि यह वाणी सबसे प्रथम योग का एक विशेष अंग कहलाया गया है। 12.04.1971

725 स्थूल जगत

स्थूल जगत क्या है? यह जो हमारा हृदय है और हृदय का और मस्तिष्क दोनों को, हमारे यहाँ मस्तिष्क माना गया है। महर्षि सोमकेतु वास्तव में हृदय तो एक ही होता है, परन्तु दो प्रकार का इसलिए स्वीकार कर लेते हैं, क्योंकि इसमें कुछ अन्तर्द्वन्द्व आ जाता है, दोनों की

कुछ दूरी हो जाती है, कुछ प्रकृति के, कुछ रजोगुण, तमोगुण के आवरण आने के कारण, क्योंकि मन जो होता है, त्रिगुणात्मक माना गया है। इसलिए इसमें कुछ अंतर्द्वंद्व आ जाता है। इन दोनों की चेतना को हमें जानना है। इन्द्रियों से जो चेतना जागरूक होती है, जैसे हमारी स्पर्श इन्द्रियां हैं, श्रोत हैं, नेत्र हैं, इसी प्रकार घ्राण इन्द्रियां हैं। ऋषि भारद्वाज ने कहा है किहे मानव! यह जो श्वास है, इसका नाभि केन्द्र से जन्म होता है। नाभि केन्द्र से जब यह प्राण चलता है, घ्राण के द्वार पर आ जाता है, तो इसमें से अरबों खरबों परमाणु चले जाते हैं। भारद्वाज ने तो ऐसा कहा है कि एक भौतिक विज्ञानवेत्ता एक यन्त्र बनाता है, परन्तु उस यन्त्र में चित्रावली आ जाती है, तो वह केवल घ्राण के द्वारा, जो श्वास की गति होती है, उन्हीं परमाणुओं को एकत्रित करने का प्रयास किया जाता है। वह नाना प्रकार के यन्त्रों के द्वाराउन्हीं परमाणुओं को एकत्रित करने से चित्रावली वाला यन्त्र का निर्माण हो जाता है। 12.04.1971

तो इसलिए ऋषिजन कहते हैं उन परमाणुओं को जानने के पश्चात वह एकएक परमाणु को जान लेते हैं कि घ्राण के द्वारा कितना परमाणु वायु का आया गया है, कितना आपो का गया है, कितना पृथ्वी का गया है, कितना अन्तरिक्ष का गया है। इसी प्रकार प्रत्येक परमाणु पर जब संयम हो जाता है, तो योगी में वह गति हो जाती है कि नाभि केन्द्र से उत्पन्न होता हुआ, प्राण उन परमाणुओं की गणना योगी ही कर सकता है। महर्षि भारद्वाज ने कहा है कि वह जो परमाणु होते हैं, उनमें अरबों परमाणु वायु के होते है, इतने परमाणु अग्नि के होते है, इतने ही परमाणु जल के होते हैं, पार्थिव में इतने ही होते हैं, अन्तरिक्ष के भी इतने ही होते हैं। इन परमाणुओं पर जो योगी संयम करने वाला होता है उस योगी में वह गति उत्पन्न हो जाती है कि जिस प्रकार वह परमाणु गए हैं, उन परमाणुओं का मिलान करके वह अपने सूक्ष्म शरीर को प्राप्त हो करके स्थूल शरीर को भी धारण कर सकता है। 12.04.1971

726 नेत्रों में चौबीस प्रकार की तरंगों का प्रादुर्भाव

इसी प्रकार मानव के जो चक्षु होतेहैं, इनमें से नाना प्रकार की तरंगे उत्पन्न होती रहती हैं। वह जो तरंगे होती हैं, वह एक महान स्वभाविक चेतना होती है, जो चेतना मानव के महान चित्त में विराजमान होती है। चित्त से ही उस महान आत्मा का विशेष सम्बन्ध होता है। उससे ही ये तरंगे उत्पन्न हो करके, इन्हीं तरंगों से संसार का परिचय किया जाता है, इन्हीं तरंगों से कुदृष्टिपात किया जाता है इन्हीं तरंगों से यौगिक परम्पराओं को जाना जाता है। इसी प्रकार इन्हीं तरंगों से मानव वायुमण्डल में भ्रमण करने वाली गति को प्राप्त हो सकता है।

आज जब हम यह जानने लगते हैं, कि जो मानव के नेत्रों से नाना प्रकार की ज्योति उत्पन्न होती है, इन्हीं ज्योतियों से माता का दिग्दर्शन किया जाता है, उन्हीं आचार्यों का दिग्दर्शन किया जाता है, इन्हीं ज्योतियों के, अन्तर ध्यान हो करके सूर्य इत्यादि चन्द्र लोकों का दिग्दर्शन कर लेते हैं।यदि उन तरंगों को योगी अपने मस्तिष्क में ही, अपने हृदय में ही, ज्यों का त्यों स्थित कर देता है और उनमें शनैः शनैःअभ्यासी बन करके, उन तरंगों को जान सकता है, तो उस महापुरूष को नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों के जानने में विशेष गति उत्पन्न हो जाती है।

इसी प्रकार मानव के नेत्र, मैं तो यह कहा करता हूं, कि प्रत्येक इन्द्रिय की एक ही चेतना नहीं, नाना प्रकार की चेतना उत्पन्न होती हैं। हमारे यहाँ प्रायःनेत्रों में चौबीस प्रकार की तरंगों का प्रार्दुभाव हो जाता है। आज यह नहीं, कि जितना मैं जानता हूं, उतना ही जगत है। जगत बहुत विशाल है, क्योंकि यह महान परमात्मा का जगत है। यह ऐसा विशाल है, कि इसमें मानव को प्रत्येक तरंगों पर अनुसन्धान करने की आवश्यकता है। 12.04.1971

727 विचार की गति

एक समय महर्षि भारद्वाज से महर्षि सोमकेतु ऋषि महाराज ने कहा कि प्रभु! आपने जितनी हमें गणना कराई है, वाणी की परिक्रमा की क्या इतना ही यह जगत है? उन्होंने कहा कि यह मेरा ही कोई निर्णय नहीं है आगे महापुरूष आएगे, मुझसे आगे और भी निर्णय कर सकते हैं, मैं जितना जानता हूं, उतना मैं निर्णय दे सकता हूं। ऋषियों का हृदय विशाल होता है, निरभिमान होता है। उनके हृदय में महानता होती है, क्योंकि वह अपने को, प्रभु को समर्पित कर देते हैं। प्रभु को समर्पित कौन करता है? जो प्रभु के मण्डल को जानने के लिए जिज्ञासु बना रहता है। वह जिज्ञासु बना रहता है, जब वह जिज्ञासा मुक्त हो जाता है, तो परमात्मा निकट रहते हैं। माता उसी काल में प्रिय पुत्र को दुग्ध पान कराती है, जब तक बालक को उसकी पिपासा होती है, क्षुधा समाप्त हो जाती है। तो माता उस प्यारे बालक को अपने हृदय से दूर कर देती है। इसी प्रकार मानव को जितनी पिपासा होती है, तो यह प्रकृति और चेतना उतना ही चेतनित करती रहती है, यह तो द्यौ लोक का घृत माना गया है। कि उसमें विचारों की आहुति देते रहो। विचारों का जितना जगत बना लोगे, उतनी तुम्हें जानकारी होती रहेगी, अन्त में वह विचार कहाँ तक जा सकता है, इसको कोई माप नहीं सकता। 12.04.1971

728 श्रोत्र का सामर्थ्य

महर्षि भारद्वाज ने कहा है कि इसी प्रकार मानव की स्पर्श इन्द्रियां हैं इसी प्रकार मानव के श्रोत हैं, नाना प्रकार की तरंगों का जन्म होता

रहता है। तरंगे उत्पन्न होती रहती हैं। ऋषि मुनियों ने कहा है कि हमारी जो यह श्रोत्र इन्द्रियां हैं, इनमें जो यन्त्र बना हुआ है, जिसको सूर्यनित नाम का यन्त्र कहा जाता है, शब्दावली यन्त्र भी उसे कहा जाता है, सोधनी यन्त्र भी कहते हैं, रेणकेतु यन्त्र भी कहा जाता है, मानकेतु यन्त्र भी कहते हैं, सुभागनी यन्त्र भी कहा जाता है, अन्तांगनी यन्त्र भी उसको कहा जाता है। लगभग एक क्षण समय में, लगभग साठ अरब तरंगों को सहन कर सकता है। जब यदि साठ से इक्कसठ तरगों का जन्म होने लगता है, तो उस समय मानव कहता है, मैं अब तुम्हारे शब्दों को ग्रहण नहीं कर सकता, क्योंकि मेरे श्रोत्र इन्द्रियों में इतनी शक्ति नहीं रही। इससे हमें सिद्ध होता है, कि हमारा प्रभु का बनाया हुआ, जो यह प्राकृतिक यन्त्र है, इसकी भी सीमा होती है परन्तु जब शब्दों पर विचार विनिमय किया जाता है। 12.04.1971

729 द्यौ लोक

सात्विक शब्दों के ऊपर अनुसन्धान होता है। तो एक एक शब्द में से कई कई शब्दों का निकास होने लगता है। क्योंकि हमारे यहाँ चित्त में से जो चेतना स्वाभाविक है, जिसका सम्बन्ध मानव के ब्रह्मरन्ध्र से होता हुआ, हृदय से होता हुआ मानव की श्रोत्र इन्द्रियों से विशेष सम्बन्ध रहता है, उन्हीं तरंगों का सम्बन्ध अन्तरिक्ष से रहता है, जिसे हम द्यौ लोक भी कहा करते हैं। अन्तरिक्ष से ऊपरला जो मण्डल है, वह द्यौ मण्डल कहलाया गया है। उससे विशेषकर सम्बन्ध रहता है। सम्बन्ध होने के नात, उनमें जो नाना प्रकार की चेतनाओं का जन्म होता रहता है, जिसे बैखरी कहते हैं, सयांगनी कहते हैं, श्रृंगनी कहते हैंरोमणी कहते हैं और भी नाना प्रकार की वेदों की शब्दावली मुझे स्मरण आती रहती है, परन्तु उन तरंगों का जब जन्म होता रहता है, वह स्वाभाविक चेतना के साथ में, उनका सम्बन्ध ब्रह्मरन्ध्र से होता हुआ, नाना ये जो दिशाए हैं, इन दिशाओं से सम्बन्ध होता हुआ, भारद्वाज जी कहते हैं कि उन्हीं का सम्बन्ध द्यौ लोक से माना गया है। 12.04.1971

730 आत्म दर्शन

हमें प्रत्येक इन्द्रियों के जो विषय हैंयह जो स्वभाविक चेतनाओं का जन्म होता है, नाना प्रकार की चेतनाओं को यह मन, जो महान सूक्ष्मतम है, और प्राण इसके समीप रहने वाला है, मन जो प्राण के अधीन रहने वाला है, जब इनसे इनको कटिबद्ध कर दिया जाता है, इन सबकी सामग्री बन जाती है तो मानव हृदय और मस्तिष्क दोनों का समन्वय हो जाता है। दोनों का जल समन्वय हो जाता है, तोयोगी को स्थूल जगत और सूक्ष्म जगत दोनों का ज्ञान हो जाता है। दोनों का वह अनुभव करने लगता है क्योंकि आत्मा तो इनसे सन्निधान मात्र से ही अपना कार्य कर रही है। यह सब प्रकृति की रचना है, यह मन की रचना है, प्राण की रचना है, इस रचना के आश्रित ही सर्वस्व जगत अपना कार्य कर रहा है।

हमारे यहाँ योगियों ने इसी को घृत माना है। हमारे यहाँ जो भौतिक यज्ञ होता है, उस यज्ञ में यज्ञमान घृत आहुति देता है, गौ घृत की इसी प्रकार 'गौ' नाम इन्द्रियों का है और इन्द्रियों के जो विषय हैंइनकी जो चेतना है, इन चेतनाओं को जब कटिबद्ध करके मानव मन रूपी कृत में रमण कर दिया जाता है, इनको तन्मय कर दिया जाता है, हृदय रूपी जो यज्ञशाला है, जिसको द्यौ लोक माना है, इसमें आहुति दी जाती है, तो उसी को हमारे यहाँ दर्शन कहा गया है। यही तो मन दर्शन है। इसी को हमारे आचार्यों ने किसी ने आत्म दर्शन माना है, किसी ने ब्रह्म दर्शन माना है, किसी ने यौगिक दर्शन माना है, किसी नेद्यौ दर्शन माना है।

जिस प्रकार हमारे हृदय, मस्तिष्क दोनों का समन्वय करने वाला जो घृत है, वह जो अग्नि प्रदीप्त होती है, यह जो चेतनाओं में और भी जागरूकता होने लगती है, जिससे हम सूक्ष्म जगत में चले जाते हैं। स्थूल से सूक्ष्म जगत में, जो एक महान याग हो रहा है, कैसा सुन्दर यज्ञ हो रहा है, उसमें केवल आत्म स्वरूप मानव बन जाता है। उसमें आत्मा केवल सन्निधान मात्र ही दृष्टिपात आता है, उस समय योगी अपने में ही मग्न रहता है, बाह्य जगत में उसकी प्रवृत्ति उत्पन्न ही नहीं होती। प्रवृत्ति तो रहती है परन्तु उस प्रवृत्ति का विकास नहीं होता, वह इतनी बन जाती है, उस बलवती महान सुगन्धि में, उन सूक्ष्म चेतनाओं में, इतनी चेतनित हो जाती है, कि वे जो तरंगे हैं, जो जगत में आने वाली तरंगों का प्रादुर्भाव होना, बहुत सूक्ष्म सा, न होने के तुल्य बन जाता है।

हमारे यहाँ महर्षि भारद्वाज का साहित्य प्रायः स्मरण आता रहता है। महर्षि भारद्वाज जहाँ भौतिक विज्ञान में इतने प्रकाण्ड थे, इतने महान थे, कि नाना लोक लोकान्तरों में, भौतिक परमाणुओं से जाने जाते थे, वहाँ वह आत्मा की विवेचना भी, आत्मा का दर्शन भी उनके यहाँ एक विशालता को प्राप्त होता रहता था। 12.04.1971

731 तरंगों का जन्म

आज हम उस द्यौ लोक वाली महान अग्नि को जानना चाहिए। उस चेतना को जानना चाहिए, जिस चेतना को जानने के पश्चात हम स्वयं चेतनित हो जाते हैं, और हमारे जीवन में अन्धकार का जन्म नहीं होता, सदैव प्रकाश ही प्रकाश रहता है। इसी को वेद का विचार कहते हैं, इसी को हमारे यहाँ दर्शनों का विचार कहा जाता है। आज इन वाक्यों को उच्चारण करने का अभिप्राय कि आज हृदय और मस्तिष्क

दोनों का मिलान करना हमारा कर्त्तव्य कहलाया गया है। मन और प्राण दोनों का जब मिलान कर दिया जाता है, दोनों का समन्वय कर लिया जाता है, तो हृदय और मस्तिष्क दोनों का मिलान हो जाता है, और इनमें सहस्त्रोंसहस्त्रों प्रकार की तरंगों का जन्म हो जाता है। 12.04.1971

732 तीनों शरीरों की रश्मियाँ

जन्म जन्मान्तरों के योगियों के अभ्यास के कारण ही, मानव दिव्य आत्माओं से अपना समन्वय कर लेता है, और उसके विचार, उसकी महान धारा, उसके मन की धारा, वाणी की धारा, और बुद्धि की धारा और अन्तःकरण की धारा इतनी पवित्र हो जाती है। इन्हीं धराओं में तीनों शरीर रमण करने वाले होते हैं। तीनों शरीरों की रश्मियां होती हैं, ऐसा हमारे यहाँ माना गया है। मन की ही लगभग एक सौ छत्तीस प्रकार की धाराएं मन की होती है। यदि हम एक धारा को जानते हैं तो दूसरी धारा उपलब्ध हो जाती है और दूसरी धारा को जानते हैं तो तीसरी धाराएं उपलब्ध हो जाती है।छत्तीस प्रकार की धाराएं तो स्थूल की मानी गयी है, और लगभग बहत्तर धाराएं सूक्ष्म शरीर की मानी गई है। इसी प्रकार धाराएं तो बहुत कुछ है। इसी प्रकार बुद्धि की, एक सौ चौरासी प्रकार की धाराएं होती हैं। चौरासी धाराएं स्थूल शरीर से, स्वच्छ अन्तःकरण से सम्बन्धित होती है, और निन्यानवें धाराएं इस प्रकार की होती हैं, जिसका सम्बन्ध सूक्ष्म शरीर से होता है और कुछ धाराएं लिंग शरीर की मानी गई है, परन्तु इसी प्रकार नेत्रों की जो दिव्य ज्योति है, उसकी तीन सौ बहतर प्रकार की धाराएं मानी गई हैं। कुछ धाराएं ऐसी हैं, जो स्थूल शरीर से सम्बन्धित हैं, ऋषिमुनियों ने कुछ धाराएं इस प्रकार की मानी हैं जो सूक्ष्म शरीर वाली हैं, शेष धाराएं लिंग शरीर की मानी गई है। इसी प्रकार श्रोत्रों की जो धाराएं है, वह लगभग छः सौ चौरासी प्रकार की मानी गई हैं। यह सब धाराएं मन और प्राण दोनों से सम्बन्धित रहने वाली हैं क्योंकि मन और प्राण दोनों का जब सम्बन्ध हो जाता है, जब इन धाराओं का मन और प्राण का जब मिलान हो जाता है, तो एक लिंगमयी ज्योति बनकर के परमात्मा के पद को प्राप्त हो जाती है। उसेमोक्ष कहा करते हैं। जब तक मन और प्राण दोनों का समन्वय नहीं होता। इन धाराओं को जागरूक कौन से घृत से करोगे? 13.04.1971

733 प्राणों का सोम रस

जैसे यज्ञशाला में गौ घृत, जो वनस्पति का पान करने वाली, जो गौ के दुग्ध से बनता है, वह घृत अग्नि को प्रदीप्त करता है, वह ऐसी उज्ज्वल बन जाती है, कि सहस्त्रों प्रकार की अग्नि की धाराओं का जन्म हो जाता है। इसी प्रकार हमारी इन्द्रियों का जो विषय, इन्द्रियों की जो रश्मियां हैं। जिसे हम चित्त कहा करते हैं, चित्त में जो स्वाभाविक रश्मियां मानी गई हैं, उन रश्मियों को कौन से घृत से प्रदीप्त करना है? वह घृत कौन सा है? वह कौन सी आहुति है?

इसमें भृंगी ऋषि और भी नाना ऋषियों की टिप्पणियां चला करती हैं। ऐसा हमारे यहाँ माना है, कि इसमें कुछ विचार का घृत होता है, कुछ नांमाकुरों का घृत होता है, कुछ का पात बनाया जाता है। जैसे नाना प्रकार की औषधियों को एकत्रित करके सोम रस बनाता है, इसी प्रकार जो सोम रस बनाने वाला योगी होता है, वह सोम रस किसका बनाता है?वह दस प्राणों का सोम रस बना करके, मन की धारा हैं, उन सबको जब प्राण में मिश्रित कर देता है तो वह ऐसा सुन्दर घृत बन जाता है, कि इन्द्रियों का जो सामग्री विषय, उसको दीप्तमान बना करके, वह महापुरूष दिव्य लोकों में रमण करता हुआ, परमात्मा के महान पद को प्राप्त हो जाता है। 13.04.1971

734 सभी लोकों में योगी का आवागमन

आज हम परमपिता परमात्मा की छत्र छाया में रहने वाले बनें, और उस घृत को जानने वाले बनें, जो घृत महान परमात्मा के सन्निधान मात्र से उत्पन्न होता है। वह जो घृत है, वह प्रकृति को भी दीप्तमान करता है। प्रकृति की जो स्वाभाविक गुण होता है, प्रकृति की जो चेतना होती है, उस चेतना को भी चेतनित करने वाला जो घृत होता है वही मानव के जीवन को प्रकाशवान बनाता है, वही मानव को दीप्तमान करता है, वही दिव्य लोकों में रमण करने वाला महापुरूष कहलाता है।इसी प्रकार इन धाराओं को जानने वाला जो महापुरूष होता है, वह सूक्ष्म शरीर, कारण शरीर और जिसे हमारे यहाँ स्थूल शरीर भी कहा जाता है, इन तीनों शरीरों में, जो नृत्य हो रहा है, वह जो नृत्य हुआप्रकाश है, जिसके कारण में नृत्य करता है, वह दिव्य लोकों में क्या जितने नाना सूर्य प्रभु के मण्डल में हैं, नाना आरुणि हैं, नाना बृहस्पति हैं, उन सब में योगी का आवागमन हो जाता है, यातायात बन जाता है। जिस प्रकार भौतिक वैज्ञानिक परमाणुओं को यन्त्र को जानता हुआ, नाना लोकों में यात्रा करने वाला बन जाता है, इसी प्रकार योगी का दिव्य शरीर होता है, उसमें सर्वस्व भूमण्डल के नाना लोक लोकान्तर ऐसे प्रतीत होने लगते हैं जैसे आज तू अमुक में विराजमान हो। 13.04.1971

735 प्रत्येक लोक में आवागमन

आज हम लोक लोकान्तरों की विवेचना करने जा रहे हैं। मैं लोक लोकान्तरों की चर्चा करने जा रहा था, कि सूर्य मण्डल में कैसा योग है, मंगल में किस प्रकार का है, ध्रुव में किस प्रकार का है और जेठाय नक्षत्र में किस प्रकार का है। अचंग और मचंग लोकों में किस प्रकार है

आसस्वती लोकों में किस प्रकार का है, वशिष्ठ, अरुंधति, सप्तऋषि मण्डल, मानकेतु मण्डल, ध्रुव मण्डल नाना प्रकार के मण्डलों में किस प्रकार के योग की परम्परा मानी जाती है यह एक हमारा विषय है। 13.04.1971

736 विभिन्न लोकों का घृत

सौममिती नाम का एक वैज्ञानिक इस पृथ्वी मण्डल पर कितने समय परिक्रमा कर गया है। एक रिधीकेतु नाम का आध्यात्मिक वेता जिसकी आध्यात्मिक विज्ञान में बहुत ही प्रगति मानी गई है ऐसा मुझे भान आ रहा है, वायु मण्डल का परमाणु मुझे बाध्य कर रहा है इन वाक्यों को उच्चारण करने के लिए कि उस आध्यात्मिकवेत्ता की आत्मा की गति विशाल है, उसकी आत्मा इस पृथ्वी मण्डल से भ्रमण करके अपने आसन को परिणित हो जाती है। इसी प्रकार सूर्य मण्डल में विचार विनिमय होता रहता है, जैसे दिव्य ज्योतियों का विचार और दिव्य ज्योतियों का दिग्दर्शन, इस पृथ्वी मण्डल पर होता रहता है। इसी प्रकार नाना प्रकार के मण्डलों में होता रहता है, जहाँ अग्नि तत्व प्रधान होते हैं, जल तत्व प्रधान होते हैं जैसे इस पृथ्वी मण्डल पर पार्थिव तत्व प्रधान माना गया है, वहाँ गौ घृत भी इसी प्रकार का होता है। जहाँ अग्नि लोक हैं।उनमें तो विचारों से यज्ञ होता है, वहाँ विचारों को ही घृत माना गया है। और जिसमें पार्थिव तत्व प्रधान हो, वहाँ पशु इत्यादि का, उसी प्रकार का घृत माना गया है, किउनमें किसी में गौ घृत से यज्ञ होता है, किसी में विचारों का यज्ञ होता है, किसी में प्राग जलों से यज्ञ होता है, इसी प्रकार एक दूसरे लोक से भी मानव का सम्बन्ध रहता है। 13.04.1971

737 प्रवचनों में गुरुदेव

यह हमारा लाखों वर्षो का अनुभव रहा है। लाखों वर्षों से इस पर बड़ा अनुसंधान करते रहे हैं। आज तो अपने आपत्तिकाल के कारण कुछ नहीं कहा जाता है, न इस की परिस्थिति को जान पाते हैं, परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरूदेव यह कहा करते थे, कि न उच्चारण करने से कुछ करना बहुत ही सुन्दर है। वह समय कितना भव्य और महान था, जिस समय में मध्य रात्रि होती, उस समय अपने अन्तःकरण के प्रकाश से साधारणा अक्षरों का बोधिक किया जाता था। 13.04.1971

738 योगी के दिव्य चक्षु

जिस योगी के दिव्य चक्षु हो जाते हैं, उनके लिए अक्षर रात्रि में भी निकट आ जाते हैं, उनको इस प्रकार का आभास होता है।तो मानव का जो अन्तःकरण होता है, उसी से सन्निधान मात्र से आत्मा के तीन प्रकार के स्वरूप माने गए हैं। यह मन की एक पवित्र धारा के ही, तीन प्रकार के स्वरूप माने गए हैं।

जब मन और प्राण दोनों का समन्वय हो जाता है, उस समय मन और प्राण दोनों को पृथकपृथक उच्चारण किया जाता है। गुण से गुणी कदापि भी पृथक नहीं होता है, सन्निधान मात्र से ही मन को चेतनित किया जाता है, प्राणों को विभाजित किया जाता है, सन्निधान मात्र से ही यह प्रकृति का एक महान चक्र चल रहा है। वह जो सन्निधान है, जिसे हम आत्मा कहते हैं, जिसको अणु भी माना है, किसी ने उसको कृत्त अभ्रष्ट माना है।

वायु मुनि महाराज से यह प्रश्न किया गया, कि महाराज! आत्मा को अणु माना गया है या विभु माना है? यह जो आत्मा है यह अणु के स्वरूप में माना जा सकता है, इसका प्रकृति से सन्निधान होने के नाते ही, तीनों प्रकार के शरीरों की जो दिव्य ज्योति है, उसमें एक जागरूकता हो जाती है, उनका प्रादुर्भाव इस हृदय से ही माना है और हृदय में ही उस आत्मा का सन्निधान होता रहता है। सन्निधान मात्र से ही, हृदय का चक्र चला करता है। 13.04.1971

739 दिव्य हृदय

जो मानव यह जान लेता है कि यह जो हृदय है? इसकी जो गति है वह अन्तरिक्ष में भी जा सकती है। ऐसा भी माना है कि जिस हृदय से, दिव्य आत्मा आपस में अपना समन्वय करती हैं, आपस में उनका सत्संग होता है। उसको दिव्य हृदय कहा जाता है। परन्तु है वह भी मन और प्राण का मण्डल, सूक्ष्म जो इन्द्रियों की स्वाभविक चेतना है, उस चेतना का सम्बन्ध, दिव्य चेतना से होता हुआ, उन धाराओं में, दिव्य आत्मा कटिबद्ध हो करके, वही एक आसन स्थित करके, अपना सत्संग, अपना ब्रह्म विचार, आत्मविचार, सर्वज्ञ किया करते हैं। 13.04.1971

740 हृदय की गतियाँ

आज के समाज में इस प्रकार की गति होती रहती है, नृत्य होता रहता है। मैं अपने प्यारे ऋषि से कहा करता हूं कि संसार में जब हृदय की गतियों को नहीं जानते, हृदय में एक हजार पांच सौ बावन तरंगों का जन्म होता है। वह जो हृदय में जन्म होता है, उसमें लगभग 84 प्रकार की योग तरंगों का जन्म होता है, जिससे साधक योग की प्रणालियों में जा करके, उन हृदय की 1, 552 तरंगों को जानने वाला बनता है। वे जो तरंगें हैं, उनमें से एकएक तरंग में से 7272 धाराओं का जन्म होता है, उन धाराओं का सम्बन्ध दिव्य शरीरों से होता है, उन्हीं धाराओं

के समूह का नाम दिव्य शरीर माना गया है। यह जो योग का विषय है, यह एक भयंकर वन है। उन धाराओं में सतोगुणी धाराएंलोक लोकान्तरों कीधाराएं, विमुख धाराएं, कितनी ही प्रकार की धाराएं होती हैं। उनकी कितनी मन की धाराएं हैं कितनी प्राण की धाराएं हैं। अग्नि में भी लगभग 1, 552 तरंगों का जन्म होता है, इसी प्रकार इतनी तरंगें वाणी में होती हैं, और एकएक तरंग में से 7272 तरंगों का जन्म होता है, वह जो वाणी की 72वीं तरंग होती है, वह वाणी का एक वैश्य रूप होता है, जहाँ उस वाणी से दिव्य आत्मा मिलान करती है। 13.04.1971

741 प्रवचनों में गुरुदेव

वाणी उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय यह है, कि आज हम इस योगी की प्रक्रिया को अच्छी प्रकार जानने वाले बनें, क्योंकि परमपिता परमात्मा का जो विज्ञान है, वह कितना महान है। सन्निधान मात्र से ही इस प्रकार का विज्ञान है, कि मानव उसमें चकित रहता है। जब धाराओं को वर्णन करने लगते हैं, तो साधारण प्राणी उनको पाखण्ड ही कह देते हैं, क्योंकि उनका मस्तिष्क वहाँ तक पहुंच नहीं पाता। अपने हृदय स्थल की, मस्तिष्क की, मन की रश्मियों को, जब तक नहीं जाना, तो वह कैसे उच्चारण कर दे कि वास्तव में यह यथार्थ है। क्योंकि अपनी कुछ वार्ताओं को प्रकट करने वाले प्राणी, इस प्रकार की वार्ताओं को एकत्रित कर लेते हैं, जिससे साधारण समाज मेंउसका नृत्य होता रहता है। जब उज्ज्वल पुरूषों में जाते हैं, महान पुरूषों में जाते हैं, दिव्य आत्माओं में जाते हैं, तो वहाँ यह प्रतीत होता है कि वेद क्या है, समाज क्या है, दिव्य जगत क्या है, और मोक्ष किसे कहा जाता है। मोक्ष को वही प्राणी पहुंच सकता है, जो नाना प्रकार के पंच महाभूत, पंचतत्व, जो होते हैं, इनमें जो तरंगों का जन्म होता है, उन तरंगों को अच्छी प्रकार जान लेता है, कि इतनी तरंगे अपने में अपृत्य अग्नि में होती है, इतनी वायु में होती हैं, इसी प्रकार कृतों सन्निधान होने लगता, उनका जो दिव्य स्वरूप है, वह दिव्य आत्मा अच्छी प्रकार जान लेते हैं। इस सम्बन्ध में नाना प्रकार के प्रश्न उपलब्ध होने लगते हैं। तो आज हम अपनी इस महान पवित्र धारा को जानने वाले बनें, जहाँ मानव दिव्य आत्माओं के सत्संग करता है, दिव्य आत्माओं से अपनी शंकाओं का निवारण करने लगता है, वहाँ वाणी का एक सूक्ष्म नृत्य होता है, उसको दिव्य वाणी कहते हैं। उसी दिव्य वाणी का सम्बन्ध सूक्ष्म शरीर से होता है, लिंग शरीर से होता है, और जहाँ इन सब तत्वों की तरंगे होती हैं, जिस मानव कादिव्य आत्माओं से भी सम्बन्ध होता है, उनका जब निग्रह हो करके, मन और प्राण दोनों की एकाग्रता हो जाती है।अणु की दो धाराओं का जब मिलान हो जाता है, उस समय यह अणु जिसे आत्मा कहते हैं, यह परमपिता परमात्मा के आनन्द में आनन्दित हो जाती है, जिसे मोक्ष कहा जाता है। हम परमपिता परमात्मा की पवित्र धारा को जानने का प्रयास करते रहें। इन्द्रियों का जो विषय होता है, इसको जब हृदय में एकत्रित किया जाता है और उसमें ब्रह्मरन्ध्र का चक्र चलता है, जिसको अनहद कहते हैं, उस अनहद की जो ध्वनियां होती हैं, उन ध्वनियों को जानने वाला जो पुरूष होता है, वह व्याकरण की उत्पत्ति को जान लेता है। शब्दों की जो धाराएं होती हैं, वह भी मानव की रश्मियों से होती हैं। 13.04.1971

742 विभिन्न लोकों की यात्रा

कोई वैज्ञानिक चन्द्रमा पर शयन करने जा रहा है। कोई करने के लिए तत्पर हो रहा है, कोई मंगल की यात्रा करने के लिए तत्पर हो रहा है, शुक्र की कल्पना कर रहा है। कोई पृथ्वी और चन्द्रमा के बीच में स्थान बनाने की विचार कर रहा है। ऐसे विचार वैज्ञानिकों के मस्तिष्कों में नवीन नहीं हैं। क्योंकि यह परम्परा से मानव के मस्तिष्कों में, महापुरुषों के मस्तिष्कों में, ये विचार आते रहे है आधुनिक वैज्ञानिक ईश्वर एवं धर्म का खंडन नहीं करता। आधुनिक वैज्ञानिक तो प्रकृति के गर्भ से, सब कुछ प्राप्त करना चाहता है।

धर्म किसे कहते हैं। आज कोई वैज्ञानिक यह नहीं कर रहा है कि मानव को चरित्र हीन हो जाना चाहिए। कोई वैज्ञानिक यह नहीं कह रहा है कि कर्म नहीं करना चाहिए। कोई वैज्ञानिक यह नहीं कह रहा कि आज तुम प्रभु को स्वीकार न करो। परन्तु आज का वैज्ञानिक इन वाक्यों को उच्चारण कर रहा है कि आज हम इस प्रकृति के गर्भ से, हम संसार में सब कुछ प्राप्त कर सकते हैं। हम जो विचार दे रहे हैं, वैज्ञानिक विचार है। यही सर्वोपरि विचार है, आधुनिक विज्ञान एवं परमाणुवाद जहाँ समाप्त हो जाता है, वहाँ से भारतीय, प्राचीन अध्यात्मवाद का आरम्भ होता है। 16.10.1971

743 गौ घृत से वायुमण्डल शुद्धि

इस सूक्ष्म शरीर के द्वारा, हम इस राष्ट्र भूमि के, द्वितीय राष्ट्रों का भ्रमण करतें हैं, तो हमें ऐसा प्रतीत होता है।कि जो परमाणुवाद आज हमने निश्चय किया है, आज एकत्रित किया है, इसका अन्तिम परिणाम क्या होगा? तो उस समय यह विचारतें हैं, कि इसका अन्तिम परिणाम, केवल अग्नि ही होगी, और क्या बनेगा केवल अग्नि के सिवाय। तब वह कहते हैं कि हमें क्या करना चाहिए, इस अग्नि को शान्त करने के लिए, इस अग्नि को निगलने के लिए कौन सा यत्न करना चाहिए? जिससे हम स्वयं अपने जीवन की सुरक्षा कर सके। आधुनिक वैज्ञानिक परमाणुवाद के प्रयोगोंद्वारा विषैले वायुमण्डल का संशोधन, तो केवल गौ धृतद्वारा किए गए यज्ञ से ही सम्भव है। 13.10.1971

744 ज्ञान भूमि भारत

संसार के सारे ज्ञान एवं विज्ञान का मूल स्रोत वेद है। महर्षि भाद्वाज की भारत भूमि से ही, संसार के सारे देशों में विज्ञान का प्रसार हुआ है। इसीलिए आज हमें उस वेदी पर जाना है, जिस वेदी पर विज्ञानओतप्रोत होता है। वैदिक साहित्य में, वेद के ही कणों में, शब्दों में, संसार का ज्ञान और विज्ञान ओतप्रोत रहता है। आज जब मैं यह विचारता हूँ, यह विज्ञान कहाँ से आ गया है? दूसरे राष्टों मेंकहाँ से गया?यह भारद्वाज वाली भूमि से ही यह विज्ञान दूसरे राष्ट्रों में चला गया। यह विज्ञान किस प्रकार गया है? यह वेद के द्वारा गया है, साहित्य के द्वारा गया है। आज से लगभग 800 वर्ष पूर्व एक मानव दूसरे राष्ट्र से आया। उसको यहाँ हिमालय प्रहुतकेतु कन्दराओं से एक पुस्तक प्राप्त हुई थी, जिसको हमारे यहाँमीमांसा दर्शन का कुछ आधा भाग और महाराजा घटोतकच्छ और भीम का कुछ भाग था, जो सूर्य और परमाणुवाद के ऊपर एक पोथी विराजमान थी। वह पोथी दूसरे राष्ट्रों में चली गई, उस पोथी से विकास हुआ, उसमें सबसे प्रथमपृथ्वी को, यहाँ कोई किसी रूप में स्वीकार कर रहा था, कोई किसी रूपों में स्वीकार कर रहा था। उन्होंने कहायह जो पृथ्वी है, यहएक गोलाकार है, इसको हमें स्वीकार कर लेना चाहिए। ईसाई मत के अनुयायियों ने कितने ही वैज्ञानिकों को अग्नि में भस्म कर दिया था।आज सेआठ सौ वर्ष पूर्व ही, कितने वैज्ञानिक अग्नि को मुखारविन्द में चले गए।

सबसे प्रथम वैज्ञानिक को अग्नि के मुख से परिणत कर दिया और किसने किया?ईसा के मानने वालों ने उसको अग्नि के मुख में अर्पित कर दिया।इसी प्रकार विज्ञान पनपता रहा, जब विज्ञान और भी पनपा तो उस समय अन्त परिणाम यह हुआ, कि ईसा के मानने वालों के आगे विज्ञान इस प्रकार आ गया कि उन्हें यह स्वीकार करना ही पड़ा। महाभारत काल के पश्चात उस महावीर को मानने वालो पर आश्चर्य आता है जिन्होंने साहित्य अग्नि के मुखारविन्द में अर्पित दिया। 16.10.1971

745 महत्तत्व का प्रभाव

मैं जब चन्द्रमां के सम्बन्ध में अपनी कल्पना करने लगता हूँ। मंगल मण्डल के सम्बन्ध में अपनी कल्पना करने लगता हूँ, पंच महाभूतों के सम्बन्ध में भी अपनी कल्पना की जाती है, तोएक आश्चर्यमय ही जगत दृष्टिपात आने लगता है, क्योंकि यह एक दूसरे के कितने सहायक हैं। जब हम विचार करते हैं, कि अन्तरिक्ष है। उस अन्तरिक्ष में कितने प्रकार का परमाणु जागरूक रहते है। जिसमें जब महत्तत्व का सन्निधान निकटता स्थापन होता है, सन्निधान मात्र से ही, केवल समीपता से ही, अन्तरिक्ष में जो परमाणु है, वे नृत्यु करने लगते है। उसी नृत्य के आधार पर एक दूसरा सहायक बन जाता है। प्रकृति का जो स्वभाव है, जैसे अग्नि परमाणु हैं, जल परमाणु हैं, और पार्थिव परमाणु हैं और वायु परमाणु हैं, अन्तरिक्ष परमाणु हैं, महत्तत्व के सन्निधन मात्र से हीउनका स्वभाव जागरूक हो जाता है। जिस प्रकार यज्ञशला में अग्नि मन्द हो रही है, परन्तु उस गौ घृत की आहुति देने मात्र से ही, अग्नि के परमाणुओं में इस प्रकार की विशाल गति ओतप्रोत हो जाती है, इससे सिद्ध होता है कि उसमें अग्नि के परमाणु अधिक होने के नाते, उसमें वायु की अधिक महत्ता होने के नाते अग्नि पूर्व से जागरूक हो जाती है। 17.10.1971

746 मन की प्राण से एकाग्रता

मन को यदि एकाग्र करना है तो प्राण में इसका समावेश कर दो। बिना प्राण के समावेश के इसकी गति कदापि भी धीमी नहीं होती। जब इसकी गति एकाग्र हो जाती है, तो मन और प्राण सर्वत्र ब्रह्माण्ड में अपना कर्त्तव्य कर रहा है।सूर्य मण्डल में क्या, चन्द्र मण्डल में क्या, आरुणि में क्या, वशिष्ट में क्या, अरुंधति मेंक्या, रोहिणी में क्या, जेठाय में क्या, शनि में क्या, सोमकेतु में क्या, अचंग में क्या, ध्रुव में क्या, सर्वत्र लोकलोकान्तरों में एक मन और प्राण ही सुचारु रूप से काम करता है। इसीलिए मन और प्राण दोनों की गति को, जो एकाग्र कर लेता है और जिस समय इसके ऊपर सवार हो जाता है। यह योगी सर्वत्र ब्रह्माण्ड की गति को अपने में समाहित कर लेते हैं क्योंकि मन और प्राण हीसर्वत्र ब्रह्माण्ड में कार्य कर रहे हैं। जीवात्मा मन और प्राण पर आरूढ़ होकर परमात्मा से मिल सकता है एवं योग के द्वारा लोक लोकान्तर का भ्रमण कर सकता है।

जहाँ विभाजन होता हो, विभाजन करने वाला संसार में मन है। और जिसका विभाजन किया जाया है, वह प्राण कहलाता है। इसीलिएजितना भी विभाजन है पृथ्वी में ले लो, सूर्य मण्डल में लिया जाए, चन्द्र मण्डल में, चन्द्रमा की नाना किरणें हैं, वह नाना कार्यकिया करती हैं, परन्तु उनका विभाजन केवल प्राण के द्वारा, प्राण तो विभाजित होता है और मन उसका विभाजन करता है। क्योंकि मन ज्ञान का प्रतिनिधि होने के नाते ऐसा करता है।

इसी प्रकार जैसे मानव का एक परिवार है। इस परिवार में पुत्री है, पत्नी है, महा माता है, पिता है, गुरुजन हैं, इत्यादि सर्वत्र एक पंक्ति में विराजमान हैं। अब मानव अपने परिवार का, कुटुम्ब का परिचय देता है, यह मेरी माता है, यह मेरी पत्नी है, यह महामाता है। यह गुरुजन है। जो इस प्रकार का परिचय देता है, तो मनकी गति भी परिचय के साथसाथ जैसे चित्र पर पटल होते हैं और वह संसार का चित्रण करते

रहते हैं इसी प्रकार अपनी प्रवृत्तियों में वह प्रवृत्ति उसी प्रकार अपनी गति करती रहती है। विभाजन होता रहता है। जब पत्नी आती है तो प्रवृत्तियों का विभाजन हो गया। माता आई तो तब विभाजन हो गया, इसी प्रकार प्रत्येक प्राणी के कुटुम्ब के परिचय में ही कितना विभाजनवाद होता है। इसी प्रकार नाना प्रकार की किरणों में क्या, चन्द्रमा में क्या, जितने भी लोकलोकान्तर हैं, इनमें मन और प्राण ही कार्य कर रहा है, इसीलिएमन प्राण के साथ में ब्रह्माण्ड में परमात्मा कार्य कर रहा है और इस मानव के शरीर में एक आत्मा कार्य करता है, जिसके आधार पर यह संसार नृत्य करता रहता है। क्योंकि आत्मा जब मन और प्राण के ऊपर सवार हो जाता है, उस समय यह आत्मा अपने प्रभु से मिलान के लिए चल देता है, प्रभु से मिलान करता है।बिना मन और प्राण को एकाग्र किए हुए, आत्मा इन पर सवार हुए बिना, किसी प्राणी का प्रभु से मिलन नहीं होता।अब जो मानव संसार में प्रभु से मिलान करता है तो क्या वह प्रभु के विज्ञान को नहीं जानता होगा ? क्या चन्द्रमा में नहीं जा सकता, क्या वह मंगल में नहीं जा सकता, क्या वह सूर्य मण्डल में, सूर्य की किरणों के साथ रमण नहीं कर सकता? यह योग के आधार पर, हमें यौगिक शक्तियों में विचारना चाहिए।

वेद ज्ञान की सहायता से संसार के आवेशों से रक्षा करके, जीवात्मा प्रभु को प्राप्त करे, कितना गम्भीर है वेदों का ज्ञान। आज हमें इस महान ज्ञान के ऊपर गौरव होना चाहिए, क्योंकि प्रभु ने जो हमें दिया है और इसीलिए दिया है, क्योंकि ये जीव प्रभु के प्रिय पुत्र हैं। इस मार्ग से इस प्रकृति के आवेशों को त्याग करके, अपनी मानवता को जानते रहें ऐसा उन्होंने संकेत दिया हैं, प्रभु ने तोआज हमें अपने प्रभु को तो जाना ही चाहिए। हमें योग की प्रतिक्रियाओं में जाना ही चाहिए। योगाभ्यासी योगी को सर्व विषयों का ज्ञान होना चाहिए। 17.10.1971

747 संसार के स्तम्भ

इस संसार में कितने स्तम्भ हैं। यह जो जगत दृष्टिपात आ रहा है, इसमें नाना स्तम्भ माने हैं इसमें एक स्तम्भ का नाम चन्द्रमा भी है, यहाँ मंगल इत्यादियों का प्रायः वर्णन आता रहता है। मैंने बहुत पूर्व काल में गृहों की विवेचना करते हुए कहा, आदि ऋषियों ने कहा है, क्या आज जब हम मंगल की यात्रा करते हैं, अथवा मंगल में जाने का प्रयास करते हैं, तो वास्तव में मंगल की यात्रा करने लगते हैं, हमारे यहाँ विज्ञान मानव का स्वाभाविक गुण बनता है। क्योंकि विज्ञान में तो मानव को जाना ही है, चन्द्र के यात्री बनो, मंगल के यात्री बनो, शुक्र के यात्री बनो, ध्रुव के यात्री बनो, चाहे सूर्य के यात्री बनो। किसी भी प्रकार का यात्री बनना चाहता है वह विज्ञान के गर्भ में माता वसुन्धरा के गर्भ में जाने के पश्चात वह संसार का विज्ञानवेत्ता और वैज्ञानिक बन जाता है।

वह कौन सी माता है? जिसको वसुन्धरा कहते हैं, जिसको हमारे यहाँ गौ कहा गया है, जिसको हमारे यहाँ प्रकृति कहा गया है जिसके अणु, महाअणु त्रिस्रेणुओं को जानने के पश्चात व्यापक मस्तिष्क बन करके और विज्ञान में जाना, जिसके लिए स्वभाविक हो जाता है। विज्ञान में जाना कोई अपराध नहीं। परन्तु विज्ञान में मानवता को नष्ट कर देना, यह अपराध है।मानवता को वास्तव में जानना चाहिए। परन्तु अपनी मानवीयता को नष्ट नहीं करना चाहिए। आज जो अपनी मानवीयता को नष्ट कर देता है वह संसार में क्या बनता है? 03.03.1976

748 परमाणुओं की सूक्ष्मता से दीर्घायुष्य यन्त्र

एक समय ऋषि मुनियों का समाज एकत्रित था। उसमें देवर्षि नारद इत्यादि मुनिवर विराजमान थे। तो उसमें उपग्रहों की विवेचना प्रारम्भ हो गई। ऐसा कहा जाता है कि महात्मा ध्रुव ने, एक ध्रुववकृतकेतुयन्त्र, का निर्माण किया था। जिस यन्त्र की अवस्था करोड़ो वर्षो तक, वह यन्त्र अन्तरिक्ष मेंध्रुव मण्डल के आँगन में करोड़ वर्ष के लगभग भ्रमण, आयु वाले यन्त्रों का निर्माण किया। क्योंकि जितनी सूक्ष्म धातु होती है, उतनी ही उसकी ऊर्ध्वा आयु होती है। 03.03.1976

749 सप्तजिह्वा अग्नि से धातु निर्माण

आयु का अभिप्रायः यह कि जितने भी सूक्ष्म परमाणुओं से यन्त्र का निर्माण किया जाता है, वह यन्त्र उतना ही आयु में दीर्घ होता है। क्योंकियन्त्र को समाप्त करने वाली, वह धातु होती है, जो उससे प्रहीत करती है।जैसे पृथ्वी है, वह यन्त्र का विनाश करती है क्योंकि पार्थिव तत्व में, पार्थिवता में उसका निर्माण होता है। इसी प्रकार अग्नि तत्व में जिसका निर्माण होगा। अग्नि उस यन्त्र का विनाश करेगी। परन्तु जहाँ अग्नि से उसकी ऊर्ध्वगति हो जाती है, जहाँ जिस लोक में निर्माण होता है, वहाँ उस लोक से उसका सम्बन्ध नहीं रहता। तो उस यन्त्र की करोड़ों वर्षों की अवस्था होती है। यह उस काल में होता है, जब हमारे यहाँ नाना प्रकार की विवेचना, नाना प्रकार के यज्ञों को रचाया। वह अग्नि सप्त जिह्वा वाली है। उस में देवीयज्ञ में से, ऐसी धातुओं का जन्म होता था।

अग्नि में जब स्वाहा देते है, स्वाहा के साथ में जब परमाणु उत्पन्न होते, तो उन परमाणुओं को यन्त्रोंद्वारा एकत्रित किया जाता। एकत्रित करने के पश्चात उन परमाणुओं का आपस में मिलान करके, उनसे यन्त्रों का निर्माण होता था। उन यन्त्रों का निर्माण केवल उस की प्राप्ति यज्ञशाला के द्वारा ही होती है। हमारे यहं ऋषि मुनियों ने भिन्नभिन्न प्रकार की विवेचनाएँ प्रारम्भ की। भिन्नभिन्न प्रकार का जीवन मानव के लिए संचार किया। राष्ट्र के लिए और विज्ञानवेत्ताओं के अपने यहाँ, सुन्दरसुन्दर विज्ञानशालाएं, यज्ञशालाएं उनमें भिन्नभिन्न प्रकार के

याग होते थे।
चन्द्र मण्डल में एक रहेकृति नाम का एक स्वास्तिक है, स्वास्तिक माता के गर्भ से उस आत्मा का वास, क्योंकि यह भीउनकी एक कल्पना जागरूक होती है। क्योंकि सूक्ष्म शरीर वाली आत्मा, जिसमें अग्नि तत्व की प्रधानता हो, तो पार्थिव तत्व जैसा मंगल मण्डल में उनका आत्मा वास करने वाला हो। अब हम इस वाक्य को कैसे उच्चारण कर सकते हैं? हम कैसे यह उच्चारण कर रहे हैं? यह प्रश्न मेरे भी मस्तिष्क में आ रहा है। परन्तु यह विचारब्रह्मचारी सुकेता, महर्षि भारद्वाज आश्रम में और भगवान राम के समीप, अहिल्या के गर्भ में प्रवेश करने लगे, तो अहिल्या के गर्भ में नाना प्रकार के खाद्य और खनिज दृष्टिपात करने लगे, उसमें निचले स्थलों की कौन सी भूमि के ऊपर, कौन सा खनिज विराजमान है, कौन सा खाद्य विराजमान है, वह वैज्ञानिक बनता हुआ, आन्तरिक और बाह्य जगत दोनों को जानता हुआ, वह उस विद्या को पान करता है। यह अग्नि ही तो है, जो पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की वनस्पतियों को तपा रही है। नाना खनिजों को तपा रही है। 03.03.1976

750 समाधी में आकाश गंगाओं का बोध

जल के परमाणुओं को ले करके जब ब्रह्मचारी अनुसन्धान करता हुआ, उड़ान उड़ता है कि पृथ्वी के गर्भ में क्या है? किस प्रकार के प्राणी रहते हैं? चन्द्र लोक में क्या है? मंगल लोक में क्या है? सर्वत्र जगत में प्राणों की गति क्या है? जब आकाशगंगा में जाता है तो आकाश गंगा के सूर्यों की गणना करता है। वह समाधि के द्वारा, समाधिस्थ हो करके अपने मन और प्राण की तरंगों को अन्तरिक्ष में त्याग देता है। अन्तरिक्ष में से वह उड़ान उड़ रहा है। एक आकाश गंगा में कितने लोक हैं? एक आकाश गंगा में कितने सूर्य हैं? एक आकाश गंगा में कितने बृहस्पति हैं? जब एक आकाश गंगा को जानता है तो द्वितीय आ जाती है। ब्रह्मचारी सुकेता जैसा ब्रह्मचारी एक मानव समाधिस्थ होता हुआ एकएक आकाश गंगा और सूर्यों की गणना करता है। तो कहता है कि मैं इनकी गणना नहीं कर सकता। एक आकाश गंगा में जब अरबों खरबों सूर्यों की गणना करने लगता है। द्वितीय उसी प्रकार की गणना करने लगता है, नाना व्यापि नक्षत्रों को दृष्टिपात करने लगता है। वह अपने में ही इस संसार को व्यापकता में ले जाता है। इसको आंकुचन करता हुआ, अपने में समेटता हुआअपने आन्तरिक जगत में दृष्टिपात कर लेता है। जब आन्तरिक जगत में दृष्टिपात करता है तो आन्तरिक जगत का जो परमाणुवाद है यह जो निर्माण है, एकएक कण में उसे दृष्टिपात आने लगता है। 03.03.1976

751 शब्द का वहाँ अग्नि

वेद का ऋषि तो कहता है कि एकएक शब्द में, एकएक श्वास में, एकएक मानव की प्राण की गति में, मानव के चित्र के चित्र अन्तरिक्ष में विराजमान हो सकते हैं। उनका जो वाहन है वह अग्नि है। एक अग्नि तो यह है जो साकारवत में है। एक अग्नि वह है जिसके ऊपर यह शब्द विराजमान हो करके, आहवनीय नाम की अग्नि कहलाती है। दक्षिणाय अग्नि कहलाती है। ऋषिकेश नाम की अग्नि कहलाती है, इन्द्र नाम की अग्नि कहलाती है, प्रतिभा नामक अग्नि कहलाती है, चाक्राणी अग्नि कहलाती है, बुद्धि नाम की अग्नि कहलाती है, नाना प्रकार की अग्नि हैं जो अपने चित्र में दृष्टिपात करने लगता है। भौतिक विज्ञान उसके समीप भी नहीं जाता। भौतिक वैज्ञानिक उन अग्नियों को नहीं जान सकता। एक इन अग्नियों की पूजा करने वाला प्राणी है। वेद का ऋषि यह कहता है कि संसार में सहस्रों प्रकार की अग्नि हैं। 03.03.1976

752 अग्नि के प्रकार

वेद के ऋषि से जब यह प्रश्न किया गया कि अग्नि कितने प्रकार की होती हैं? तो ऋषि कहता है कि एक अग्नि तो वह है जो मानव के चित्रों को ले जाती है, एक अग्नि वह है जो मानव के चित्रों को भरण कर लेती है। एक अग्नि वह कहलाती है जो आकाश से यहाँ तक आने के लिए आती है। एक अग्नि वह होती है जिसे वैज्ञानिक अथवा योगी अपने में अनुभव करता है। एक अग्नि वह होती है जिसे मानव खींचने लगता है, इनके कणों को ले करके प्राण के द्वारा ऊर्ध्वा गति को रमण करता है। 03.03.1976

753 श्वास में मानव आकार

वेद का ऋषि कहता है कि यह जो प्राण है, अन्तिम तो प्रकाश का दूत है, वह प्राण माना गया है। उसके ऊपर मानव के शब्द और चित्रावली एकएक कण में गति कर रहा है, मानव जब श्वास लेता है, तो श्वास के साथ में उस मानव का आकार गति बन जाता है। इसमें लगभग दो खरब परमाणु होते हैं, और उनमें एकएक परमाणु के साथसाथ में करोड़ोंकरोड़ों परमाणु होते हैं। कैसा विचित्र परमात्मा का निर्माण है। जब एकएक बिन्दु मानव का जाता है, तो जैसा आकार है उसी क्षेत्र में वह परमाणु रहते हैं। उतने ही आकार का चित्र ले करके अन्तरिक्ष में गति करते हैं। 03.03.1976

754 प्रभु रचना में तीन तेज

उन्होंने कहा हे ऋषि मुनियों! तुम्हें यह प्रतीत है कि हमारे यहाँ सृष्टि के प्रारम्भ के पश्चात ऋषिमुनियों ने एक विधान बनाया अथवा एक आभा में परिणत हुए, प्रभु ने इस संसार को रचा, संसार को रचते समय स्वयं प्रभु तपा है और तपने के पश्चात तीन तेज इस संसार में, इस भूमण्डल में, इस ब्रह्माण्ड में, इस प्रभु की रचना में, तीन प्रकार के तेज कहलाते हैं। एक तेज द्यौ बन जाता है। एक तेजवायु बन जाता है, तीसरा तेज अग्नि बन जाता है जो लौकिक अग्नि कहलाती है। यह अग्नि लौकिक है, वायु परमाणुओं को ले करके गति करता है। और द्यौ मण्डल में, उन परमाणुओं की स्थिरता हो जाती है।वह प्रभु का तेज है, उस प्रभु के तेज के आधार पर मानव का भी अपने तेज को तेजस्वी बनाना चाहिए। हे मातेश्वरी! तू सौभाग्यशाली है, जब तू अपने बालक को प्राण के द्वारा, उसके केशों में अपने श्वास की तरंगें फैला देती है, परिणत कर देती है।

माता पार्वती ने ब्रह्मचारी कवन्धी और रेवक मुनि से यह वार्ता प्रगट करायी। उन्होंने कहा कि यह आभा परम्परागतों से मानवीय जीवन की आभा कहलाती है। इसको जानने के पश्चात मानव आभा में रमण करता है। विज्ञान में जाने का प्रयास करता है।

महर्षि रेवक मुनि और कवन्धी दोनों गणेश जी को ले करके एक समय मुझे वर्णन कराया, कि महाराजा गणेश कायह जो वाहन है यह वाहन लोकों में जाने का है परन्तु आधुनिक काल में, इस आधुनिक जगत में यह कहते हैं कि एक मानव, एक पृथ्वी पर रेंगने वाला प्राणी है जिसको हम चुहेतकेतु कहते हैं यह उस पर सवार हो करके परिक्रमा करता है मातापिता की परन्तु ऐसा नहीं चुहेतकेतु नाम का एक यन्त्र था, जिस पर विद्यमान हो करके, वह मातापिता की ही परिक्रमा नहीं, इस पृथ्वी की परिक्रमा करता और वह मंगल की परिक्रमा करता उसी यन्त्र से। एक सौ बहत्तर लोकों के रमण करने वाला वाहन था। जो महाराजा गणेश जी ने अपनी भुजों से अनुसन्धान करके, माता पार्वती और शिव कीसहायता ले करके और एक चुहेतकेतु नाम के ऋषि थे, उनसे सहायता पा करके इन यन्त्रों का निर्माण किया था और यन्त्रों पर विद्यमान हो करके वह गति करते रहते थे।

प्रत्येक प्राणीमात्र और लोकलोकान्तरों में निहित है। क्योंकि जितने भी प्राणी इस संसार में वास कर रहे हैं चाहे वह पृथ्वी मण्डल में हो, चाहे मंगल में हों, किसी भी मण्डल में जो भी प्राणी रहता है, ये सब उस परमपिता परमात्मा की व्यवस्था है, और उसी का नियन्त्रण है और उसी के गर्भ में यह संसार क्रीड़ा कर रहा है। उसी में रत है, जिस प्रकार माता के गर्भस्थल में हम जैसे शिशु उस परमात्मा की आभा को ले करके क्रीड़ाशील रहते हैं। इसी प्रकार यह जो ब्रह्माण्ड है यह उस परमपिता परमात्मा का गर्भाशय माना गया है। उसी के गर्भस्थल में यह सर्वत्र संसार, प्राणीमात्रउसमें क्रीड़ा कर रहा है और इस संसार में जो इस गर्भस्थल में जैसे विचारने लगता है, वही बन जाता है। यह त्यागमयी बनना चाहते हो, तो त्याग और तपस्या में तुम परिणत हो जाओ। यहाँ दार्शनिक बनना चाहते हो तो दर्शनों की आभा में रमण करने लगो। यह एक ऐसा भव्य गर्भाशय है, जिसके ऊपर चिन्तन करने से ऐसा प्रतीत होता है कि यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड उसमें आभायित होता हुआ, दृष्टिपात होता रहता है।परन्तु और भी गम्भीर चिन्तन करने से ऐसा प्रतीत होता है, कि इस अन्तरिक्ष मेंपरमाणुवाद भरण हो रहा है। और प्रत्येक प्राणी श्वास के द्वारा इन परमाणुओं का आवागमन हो रहा है। आवागमन कर रहे हैं, परमाणु आवागमन में ही गति कर रहा है। ब्रह्माण्ड में, आभा में गति करने वाला जगत है।

755 अन्तःकरण चतुष्टय

एक समय महर्षि सोमकेतु महाराज अपने आसन पर विद्यमान हो करके अपने अन्तःकरण में जो चतुष्पाद वाला है, अन्तःकरण में जो भी आभा गति कर रही थी उस आभा को वह दृष्टिपात कर रहे थे, योग के द्वारा। आत्मा में लीन हो करके और वह जो चतुष् वस्तुओं का अन्तःकरण है, जिसे हम मन और बुद्धि कहते हैं, चित्त और अहंकार है, जो इस चतुष आभा के गर्भ में परमाणु गति कर रहा है, यह एक अन्तःकरणीय कहलाता है और वह अन्तःकरणीय जो परमाणु है, इसका समन्वय, इस बाह्य जगत से हो रहा है, बाह्य जगत और आन्तरिक जगत दोनों का समन्वय करता हुआ, वह गान गा रहा है।और वह उद्गान गा रहा है, कैसा गान गा रहा है?वह उर्ध्वा को गति कर रहा है, उर्ध्वा में रमण कर रहा है तोयज्ञशाला में यज्ञमान विद्यमान हो करके यज्ञन कर रहा है, और यज्ञन करके अपने शब्दों कोवह स्वाहा कह करके, अन्तरिक्ष में उसका समन्वय कर रहा है, उन तरंगों को, अन्तरिक्ष में ओतप्रोत करा रहा है। उस साकल्य के सहित उसकी आभा अन्तरिक्ष में रमण कर रही है।

756 तीन गुण, तीन नाम

यह तीन गुण कहलाते हैं जिनको रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण कहा जाता है। यह उनके नामोकरण में रहते हैं। परन्तु इसी प्रकार प्रभु के भी तीनों नामोकरण कहलाए जाते हैं। विष्णु परमात्मा को कहते हैं, वह पालन कर रहा है संसार का। रजोगुण शिव को कहते हैं। क्योंकि परमात्मा का नाम भी शिव है। वह शासन में इस संसार को कड़ी में कटिबद्ध करने वाला है। शासन कर रहा है और तमोगुण में इस संसार की उत्पत्ति कर रहा है। तो इसी प्रकार इन तीनों गुणों का गुणवादन हो रहा है। जब वैज्ञानिकों ने पृथ्वी के गर्भ में वास किया और उसके

गर्भ में आभा को प्रगट करने लगे, तो उसमें गति दृष्टिपात आने लगी, और वह जो गतियाँ हो रही थी, उन गतियों को अपने में धारण करने वाला, एक महान् ओजस्व कहलाता है। 02.03.1982

757 लोकों की ध्वनि बोध यन्त्र

ब्रह्मा के जेठे पुत्र अथर्वा ने एक यन्त्र का निर्माण किया था जो ध्वनि जैसे लोकों से आती थी लोकों से आने वाली ध्वनि का पृथ्वी से उसका मिलान होता रहता था और मिलान हो करके उस ध्वनि को मैं श्रवण कर रहा था। उस ध्वनि को यन्त्रों में लाने का प्रयास किया। उसी समय त्रीटकेतु नामक ऋषि केद्वार पर पहुंचा। त्रीटकेतु ऋषि महाराज इसके ऊपर पूर्व योगाभ्यास करके अनुसन्धान कर चुके थे। मैंने उनसे प्रश्न किया प्रभु! आपने यह सब कैसे जाना? तो उन्होंने कहा कि हमारी जो अनुष्ठान मुद्राएं हैं, जिस मुद्रा को योगीजन करते हैं, वह मुद्रा है, इस मंगल में पार्थिव तत्त्व प्रधान है।पृथ्वी को तुम, वायु गति से दोनों का मिलान कर लो, और मिलान करके उसको यन्त्रों में, अपने अनुभव में लाओ, अनुभव की वार्ता को यंत्रित करो। और यंत्रित करकेयह जो मानव का हृदय है, इस हृदय का समन्वय क्योंकि परमात्मा के हृदय होता हैं, यह जो जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है, यह परमात्मा का हृदय है। मानव का हृदय है, दोनों का जब समन्वय होता है, तोइस हृदय में संसार की भाषाएं विद्यमान हैं। संसार की वार्ताएं विद्यमान हैं। पंचीकरण वाला, पंचम इसमें विद्यमान रहता है। जिस तत्त्व के लोक के प्राणियों की तुम वार्ता प्रगट करना चाहते हो ध्यानावस्थित हो करके उसी लोक से तुम्हारा तारतम्य हो जाएगा। यह वाक् ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने सतोयुग के काल में प्रगट किया। 17.03.1983

758 चित्रावली में लंका युद्ध

यही चित्रावली, यही यन्त्र लंका में जब राम और रावण का संग्राम हो रहा था तो इसी यन्त्र के द्वारा चित्रावली के द्वारा राम और रावण के संग्राम को भरत अपने में अयोध्या में दृष्टिपात कर रहा था। 17.03.1983

759 यंत्रों में चित्र

आधुनिक काल के समाज नेचित्रावलियों को जाना है। वायु में चित्र गति कर रहा है, यन्त्रों के द्वारा, उन चित्रों को यन्त्र ले रहा है।
मानव एकान्त स्थली पर विद्यमान है, अन्धकार छाया हुआ है एक मानव का प्रकाश आ रहा है या कोई माता अपने पुत्र के वियोग में, पत्नी अपने पति के वियोग में जब आर्तभाव में अपने पतिदेव को, वाणी से पुकारती है, और कहती है, कि हे देव! कहाँ हो? परन्तुउस देव के द्वारा उस पत्नी का चित्र भी विद्यमान है, परन्तु उसके शब्द के साथ में चित्र गति कर रहा है। यह प्रभु का विज्ञान कितना है महान्? जब मैं अपने पूज्यपाद से यह कहता हूँ, हे पूज्यपाद! आधुनिक काल का वैज्ञानिक यह निर्णय नहीं कर सका है अब तक कि यह शब्द पिता के लिए है या पुत्र के लिए है, वह शब्द अन्तरिक्ष में गति कर रहा है! उन शब्दों को जानने के लिए, उन शब्दों को यन्त्रों में लाने के लिए मानव का चित्र नहीं आ रहा है परन्तुहाँ यन्त्रों के द्वारा अवश्य आ जाएगा, यन्त्रों का एक केन्द्र बना हुआ है 19 03 1983
आधुनिक काल का विज्ञान अभी इकाई में भ्रमण कर रहा है। इसमें ऐसेऐसे यन्त्रों का आधुनिक काल में निर्माण हो रहा है, जिन यन्त्रों के द्वारा एकएक राष्ट्र का प्राणी नष्ट हो सकता है।वायुमण्डल में यन्त्रों की प्रतिभा को प्रसारित करने से ही मानव समाज समाप्त हो सकता है। परन्तु यह विज्ञान उसके पश्चात भी विज्ञान में, इकाई में भ्रमण करा रहा हूँ। क्यों करा रहा हूँ? जब मैं उस काल को दृष्टिपात करता हूँ महर्षि भारद्वाज मुनि के विज्ञान में पहुंचता हूँ, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विज्ञान में प्रवेश करता हूँ, तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह विज्ञान की इकाई में है। मैं जब राजा रावण के राष्ट्र को दृष्टिपात करता हूँ, राजा रावण अपनी लंका में नाना वैज्ञानिकों के यहाँ अनुसन्धान करते रहते थे। अनुसन्धान करना आश्चर्य नहीं है। यह परम्परागतों से आयुर्वेद भी विचित्रता में गति करता रहा है। 13.11.1983

760 रक्त बिंदु से चित्र

आधुनिक काल के विज्ञान में, यन्त्रों में चित्र आ रहे हैं, परन्तु पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश कर गए हैं, और सूर्य की ऊर्ज्वा में लगा हुआ है।आज के वैज्ञानिक को सूर्य की ऊर्ज्वा को लेना चाहिए। परन्तु पुरातन का विज्ञान, आधुनिक काल के विज्ञान ने भी, एक यन्त्र में पुत्र की, पुत्री की उत्पत्ति भी की है, परन्तु वह जीवन नहीं दे सकें है। परन्तु पुरातन का विज्ञान कितना महान और पवित्र रहा है?
भारद्वाज की विज्ञानशाला में एक अणु को ले करके जब यन्त्र में उस अणु को प्रवेश कर दिया। प्रवेश करके उसमेंयन्त्रावलियों से सब कुछ देने लगे, तो ऐसा मैंने दृष्टिपात किया है, पूज्यपाद गुरुदेव भी वहाँ जातेआते, यातायात बना रहता था। कि उनके यहाँ रक्त के एकएक बिन्दु से मानव का चित्र आना, एकएक तरंगों से मानव का चित्र, यन्त्रों मेंआना, यह सब भारद्वाज के यहाँ रहता था। परन्तु ऐसेऐसे यन्त्र जिनमें विद्यमान हो करके, महर्षि भारद्वाजवैज्ञानिक यन्त्र में विद्यमान हो करके, बहत्तर लोकों का भ्रमण करके एक ही यान से पृथ्वी मण्डल पर आ जाते थे।
तो इसीलिए आज का वैज्ञानिक लोकों में जा रहा है। आधुनिक काल का विज्ञान एक चन्द्रमा में पहुंचा है।एक मंगल की यात्रा में अभी

तक सफलता को प्राप्त नहीं हो सका है। पुरातन काल का विज्ञान महर्षि भारद्वाज का विज्ञान, रोहिणी वृत्ति का विज्ञान, यह पृथ्वी से उड़ान उड़ता हुआ, शुक्र और मंगल की यात्रा करता हुआ, वह बुध और रोहिणी के मण्डलों में गति करता हुआ, पुष्प नक्षत्रों में प्रवेश करता रहा है, बहत्तर लोकों का भ्रमण करता हुआ, एक ही यान, राजा रावण के काल में भी वह यान विद्यमान था।

आज आधुनिक काल का जो विज्ञान है, वह अपने में एक इकाई में रमण कर रहा है। जब मैं यह विचारता हूँ एक मानव अग्नि प्रदीप्त कर सकता है उसको शान्त नहीं कर सकता। तो विज्ञान इकाई में रह गया है। परन्तु विज्ञान वह हाता है, एक ने अग्नि प्रवेश कर दी, तो एक ने वृष्टि करके उसको शान्त कर दिया। एकदूसरा परमाणु जब निगलने वाला होता है, उस काल में, वैज्ञानिक आधुनिक काल में, यदि परमाणु शस्त्रों का संग्राम होना प्रारम्भ हो जाएगा, तो समाज नष्ट हो जाएगा।

परन्तु महाभारत के काल में एक रेखा को ऐसा जान लिया था, जितने क्षेत्र में परमाणु संग्राम हो रहा है, उसका परमाणुवाद बाह्य नहीं जा रहा है। आधुनिक काल में वह यन्त्र नहीं आया है। 13.11.1983

761 सोमवृतिका रेखा

राजा रावण के काल में भी इस प्रकार का विज्ञान रहा है, जो लक्ष्मण उस रेखा को जानते थे। जो रेखापंचवटी पर, जब माता सीता कोराजा रावण ले गया था, वह पंचवटी के निकट एक रेखा को कटिबद्ध कर दिया था, वह सोमवृतिका रेखा थी। उसके आन्तरिक भाग में आने के पश्चात मानव भस्म हो जाता था और रहने वाला नहीं होता था। यह कैसा आश्चर्य का विज्ञान था। आधुनिक काल का विज्ञान उस रेखा को नहीं जान पाया है। 13.11.1983

762 गौ घृत से वायुमण्डल शोधन

आधुनिक काल का विज्ञान यह लगा हुआ है कि हम इस दोषारोपण को कैसे शान्त करें?अभी कुछ ही समय हुआ वैज्ञानिकों को एक समूह विद्यमान हुआ, उन वैज्ञानिकों ने यह कहा है कि गौघृत में एक विशेषता ऐसी है कि उसको अग्नि में अर्पित करके दूषित वायुमण्डल को शान्त कर सकते हैं। मैं यह कहता हूँहे वैज्ञानिको! तुम आओ, हमारे समीप आओ और आ करके इस विद्या को तुम ग्रहण कर लो। पूज्यपाद गुरुदेव बहत्तर यागों के कर्मकाण्ड जानते रहते थे। मैं भी जानता रहता हूँ। विचार क्या हैउस विज्ञान में गौ घृत में याग करना यज्ञमान की पत्नी सहित जब याग हो रहा है उस याग से वायुमण्डल पवित्र हो रहा है। आधुनिक काल का जो मूर्ख प्राणी है, जो यह नहीं जानता, अपंग होता हुआ, वह ऐसेऐसे कर्मों को पाखण्ड कहता है। पाखण्ड क्यों कहता है? क्योंकि वह याग के विज्ञान को नहीं जानता। 13.11.1983

763 मानव शारीर में त्रिदोष

मानव के शरीर में तीन प्रकार के दोष कहलाते हैं, तीन प्रकार के गुण कहलाते हैं।, इसको रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण कहते हैं।, जब उनके चरणों की वन्दना की, तो उन्होंनेनेत्रों की कृतिका, प्रतिभाषित की और उन्होंने कहाहे हनुमान! तुम कैसे विद्यमान हो? उन्होंने कहा, प्रभु! आपको प्रतीत है मेरी माता अंजना ने आपकी तपस्या की थी। जबमैं माता के गर्भस्थल में था, तो इतना तो मैं जानता नहीं, मुझे स्मरण नहीं है, मेरी माता ने मुझे यह वर्णन कराया है, कि मैंने महाराजा शिव की तपस्या की है। मैं शिव की तपस्या करतेकरते, शिव उसे कहते हैं तीनों गुणों से जिसका उपराम होने वाला हो। तीनों गुणों से जो उपराम हो गया हो, त्रिदोषों को अपने में, एक सूत्र में लाने वाला उसका नाम शिव कहलाता है। क्योंकि न तो उसे संसार के मानअपमान, सर्पराज, सिंहराज, हिंसक प्राणी भी, उसकी वन्दना करने लगते हैं। ऐसा मेरी माता कहा करती थीं, क्योंकि मैं उस तपस्या का फल हूँ। मैं माता का फल हूँ, क्योंकि माता मुझे इस प्रकार की शिक्षा देती रहती थीं। 05.03.1984

764 बहत्तर अरब शनि मण्डल

तो इसीलिए हे प्रभु! मैं आपके चरणों में आ पहुंचा हूँ। भगवन! मैं एक वाक् आपसे जानने के लिए आया हूँ, महाराजा शिव ने कहा बोलो क्या चाहते हो? उन्होंने कहा प्रभु! मैं ब्रह्माग्नि को जानना चाहता हूँ, क्योंकि मैंने प्रत्येक अग्नि के ऊपर चयन किया है, हम समुद्र तट पर विद्यमान हो करके समाधिष्ट हो करके, आकाश गंगा में, नाना प्रकार के शनिमण्डलों को हमने जाना है। शोभनी ऋषि और हम समाधिष्टहो करके यन्त्रों में प्रवेश करके, हमने एक आकाशगंगा मेंलगभग बहत्तर अरब शनि मण्डलों को जाना है और उन शनि मण्डलों को जान करके उसमें एक-एक मण्डल को तपाने के लिए पांच-पांच सूर्यों को हमने दृष्टिपात किया है और एक सूर्य में तीस लाख पृथ्वियाँ भ्रमण कर रही है। 05.03.1984

765 विज्ञान दुरूपयोग से विनाश

द्वापर के काल को साढ़े पांच हजार वर्ष हो गए हैं, परन्तुयह जो यन्त्र है, उसका जो आयु है, वह एक लाख पच्चीस हजार, बानवे वर्षों का

इस यन्त्र का आयु निर्धारित कर दिया हैं। आधुनिक काल के विज्ञान में, केवल आग्नेय अस्त्रों का निर्माण हो रहा है। कुछ समय रह रहा है अग्नि के काण्डों में, क्योंकि अग्नि के काण्ड होते रहते हैं। यह राष्ट्रवादआधुनिक काल का जितना भी राष्ट्रवाद है, उसमेंविज्ञान का दुरुपयोग हो रहा है। जितना भी दुरुपयोग होगा, उतना ही संसार का विनाश होने जा रहा। उतना ही मानव अपने कर्त्तव्य से विहीन होता जा रहा है। 09.03.1982

766 आधुनिक विज्ञान से आलस्य और प्रमाद

आधुनिक काल के राजाओं को विचारना चाहिए कि वैज्ञानिक होने चाहिए, विज्ञान का युग आना चाहिए, परन्तु यह जो नाना प्रकार के वैज्ञानिक यन्त्रों का निर्माण हो रहा है, इन यन्त्रों का दुरुपयोग नहीं होना चाहिए। इसमें आलस्य और प्रमाद नहीं होना चाहिए।

आधुनिक काल के विज्ञान सेआलस्य और प्रमाद आ गया है। आधुनिक काल के विज्ञान से स्वार्थवाद आ गया है। आधुनिक काल के विज्ञान से मानव निर्बुद्धि बनता जा रहा है। क्यों बनता जा रहा है? क्योंकि विलासी होता जा रहा है। यह जो विलासिता है, ये मानव को ही निगल जाएगी। इसमें विलासिता का कोई दोषारोपण नहीं होगा। एक समय वह आएगा, जब विलासी प्राणी को ये विलास ही निगल जाएगा। परन्तुइसके ऊपर चिन्तन और मनन करना चाहिए। राजाओं को इतना स्वार्थवाद में नहीं रहना चाहिए, क्योंकि राजा वह होता है, जो प्रजा के अनुकूलगति करता है। जिसमें प्रजा का सुखद हो, जिसमें विज्ञान का सदुपयोग हो।ऐसे क्रियाकलाप राजा को अपनाना चाहिए। आधुनिक काल का राजा उसे अपना रहा है, जिसमें राजा का स्वार्थ सिद्ध हो जाए। प्रजा का विचार कहीं जाए, धर्म और मर्यादा कहीं चली जाए, नाना प्रकार की रूढ़ियों को पनपाने जा रहा है और ये रूढ़ियाँ ऐसी हैं, हे राजा! यदि तेरे राष्ट्र में ये रूढ़ियाँ पनपती रही, तो एक समय आएगा, कि तेरा सारा वैभव नष्ट हो जाएगा।

विज्ञान की प्रतिभा, विज्ञान के कणों को ले करके, आधुनिक काल की इन्होने एक चर्चा, एक वार्ता प्रगट की, कि समुद्र की सौ वृति में अगाध में, एक ऐसा यन्त्र मंगल और बुध की आकर्षण शक्ति के मध्य में, इन्होनें वर्णन कराया था कि उस यन्त्र का मुझे भी पूर्व कालो से, द्वापर के काल में, उस यन्त्र का निर्माण हुआ था। यन्त्र का जब निर्माण हुआ था, तो वह यन्त्र बड़ा विशेषज्ञ और वैज्ञानिकों के मध्य की प्रतिभा आती रहती है। आधुनिक काल का विज्ञान इस इकाई में रमण कर रहा है, प्रवेश कर रहा है। 09.03.1982

767 ज्योतिर्लिंग

तो समीक और व्रेतकेतु मुनि महाराज ने यह प्रश्न किया, तो उस समय तीनों वैज्ञानिक इस अनुसन्धान में लग गए। कि वेद का मन्त्र तो कहता हैकि यह ज्योतिर्लिंग कहाँ से प्राप्त होता है? नेत्र वास्तव में किसी की सहायता से प्रकाश को प्राप्त होते हैं। तो उन्होंने कहाकि कुछ काल के पश्चात हम इसका निर्णय दे सकेंगे, हम इसके ऊपर अन्वेषण करेंगे। तो बब्रीक, बभ्रुवाहन और घटोत्कच्छ तीनों वैज्ञानिक ज्योतिर्लिंग पर चिन्तन करतेकरते, जब उनके विचार में नही आया तो भ्रमण करते हुए वह भगवान कृष्ण के द्वार पर पंहुचे, भगवान कृष्ण उस समयसमुद्र के तट पर विद्यमान हो करके, एक यन्त्र का निर्माण कर रहे थे, जिससे सूर्य के ऊपर छा आ जाने से परमाणुवाद, रात्रि लिंग उत्पन्न हो जाए। रात्रि के तुल्य यह दिवस में रमण करने लगे। 09.03.1982

768 योगी को ब्रह्माण्ड दर्शन

एक समय दण्डक वन में एक ऋषि रहते थे, जिनका नाम विभाण्डक कहलाता था। महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज के एक पुत्र औरनाना ऋषिवर जिसमेंसोम और महर्षि पारेत्वर ऋषि भी उनके समीप रहते थे।

एक समय वह अपने में अन्वेषण कर रहे थे। महर्षि विभाण्डक मुनि महाराजा अपने में एकदूसरे में समावेष्ट चाहते थे। प्राण को चित्त के मण्डल में, चित्त के मण्डल को समष्टि मेंरत्त करना चाहते हैं। जहाँ व्यक्ति और समष्टि का समावेश होता है, वहीं तोयोगी को इस ब्रह्माण्ड का दिग्दर्शन होता है। तो जब ऋषिवर अपने में अन्वेषण, अनुसन्धान एकदूसरे में समावेश की चर्चाएँ होती हैं। तो प्रत्येक मानव को अपने में महान बनने की आवश्यकता है। प्रत्येक मानव को, जीवन की धारा को अपनाने की आवश्यकता है जिससे मानवीय जीवन एक पवित्रतम बनता चला जा रहा है। 01.03.1985

769 संकल्प से उर्ध्वागति

संकल्प शक्ति के द्वारा मानव ऊर्ध्वागति को प्राप्त होता है, इसीलिए मानव की संकल्प शक्ति में एक महानता रहनी चाहिए। संकल्प शक्ति से ही मानव जीवन को ऊँचा बनाता है। संकल्प शक्ति से ही अपने को जगत में समावेश कर लेता है। तो वह जो समावेशता है, विचारो की महानता है, उन विचारों में मानव को रत्त रहना चाहिए। जिससे मानव का अन्तर्हृदय वैज्ञानिकता में परिणत करता हुआ, सूर्य की किरणों में रत्त रह करके, उसमें गति करने वाला हो। 01.03.1985

770 मन

प्रभु की सृष्टि अनन्त है। हम यहाँ से उड़ान उड़े चन्द्रमा में चले जाएं, मंगल में चले जाएं, आरुणि मण्डल, सप्तऋषि मण्डल, शुक्र मण्डल, गृहत मण्डल, अश्वान मण्डल, माधुर्य मण्डल, धवेतु मण्डल, हिरण्य मण्डल और नाना मण्डलों को उड़ान उड़ सकते हैं।
हम इस भौतिकवादी परम विज्ञान को किस प्रकार जान सकेंगे। लोक लोकान्तरों का विज्ञान तो एक बड़ा गहन है।
माता गार्गी ने उस समय उत्तर दिया कि, यदि तुम इसको जानना चाहते हो, तो इन लोकों से जो ऊपरला स्थान है, वह किसका है? आज वायु वेग में जा रहा है और वायु का स्तर बहुत विलक्षण और सूक्ष्म माना जाता है परन्तु वायु से भी सूक्ष्म मानव के शरीर में प्रभु ने एक शक्ति उत्पन्न की है उसका नाम 'मन' है। इससे प्रभु के विज्ञान को शीघ्रता से प्राप्त कर सकते हैं।चलो, आज हम तुम्हें इस मानव शरीर का भ्रमण करा दें। क्या भ्रमण किया?

771 ब्रह्मरन्ध्र से ब्रह्माण्ड दर्शन

मूलाधार में, नाभिचक्र में, स्वाधीष्ट चक्र में, हृदय चक्र में, कंठ चक्र में, घ्राण चक्र मेंत्रिवाक्चक्र में, और उसके पश्चात ब्रह्मरन्ध्र में, जब यह आत्मा चला जाता है, तो हमारे यहाँ इस ब्रह्मरन्ध में, जो हमारी शिखा के निचले स्थान में, एक चक्र है उसे ब्रह्मरन्ध कहते हैं। उसमें इतनी सूक्ष्मसूक्ष्म वाहक नाड़ियाँ हैं जिनका सम्बन्ध एकएक लोक से तारतम्य हुआ करता है। सीमान्त नाम की एक वाहक नाड़ी होती है, जिसका सूर्यमण्डल से सम्बन्ध होता है। जब मन का, आत्मा का, प्राणों की शक्ति, सब ब्रह्मरन्ध में चली जाती है, तो वाहक नाड़ियों के मुख एक कमल की पंखड़ियों की तरह खुल जाते हैं। जब पखड़ियों की तरह स्पष्ट हो जाते हैं, तो उन नाड़ियों का तारतम्य लोकलोकान्तरों से होता है, मन के सहित होता है, और अन्त में हम मानव शरीर को त्याग करके, वह जो चैतन्य पिता प्रभु है, उसकी गोद में जाने से जिस प्रभु ने इस सबको रचाया है, यह आत्मा पुत्र उसकी जानकारी करने वाला बन जाता है, यह आत्मा बन जाता है, जो इस शरीर में भौतिकवाद में लगा हुआ था, लोक लोकान्तरों की गणना में था। जब अपने शरीर को जाना, मानवत्व को जाना, और प्रभु आनन्द में पहुंचे, तो यह सब जितना प्रकृति का आडम्बर है, यह जो प्रकृति का एक विशाल वन प्रतीत हो रहा था, यह वन हमारे निचले स्थल में आ जाता है और हम इससे ऊँचे चले जाते हैं।

772 ब्रह्मरन्ध्र में नाड़ियां

माता गार्गी ने अंत एक यौगिक मर्यादा वर्णन की। ब्रह्मरन्ध्र की व्याख्या करते हुए कहा कि ब्रह्मरन्ध्र में लगभग 690 करोड़ नाड़ियों की सूक्ष्म-सूक्ष्म व्याहृतियां मानी जाती हैं, वाहक नाड़ियों की सम्बन्धता मानी जाती है। जिनका सम्बन्ध एक दूसरे से तारतम्य और सूर्य की एक सहस्त्र किरणों से प्रत्येक वाहक नाड़ियों का सम्बन्ध होता है। ध्रुव मण्डल से सुरयान्त नाम की रश्मियाँ उत्पन्न होती हैं, उनकी त्रिगात नाम की जो वाहक नाड़ी होती है, उसका सम्बन्ध ध्रुव से होता है, त्रिःअंचति सुरयत नाम की जो वाहक नाड़ी होती है उसका सम्बन्ध बृहस्पति से होता है।
सर्वप्रथम स्थान आत्मिक विज्ञान और यौगिकता है। उसमें एक मान्यता वाला जीवन बना करके, उस परमपिता परमात्मा की गोद में विश्राम कर सकते हैं। भौतिकता को मैं द्वितीय स्थान मानता हूं।

773 प्रभु की सृष्टि अनन्त है।

प्रभु लोक लोकान्तरों में होगे, हम भी होंगे, प्रभु की जानकारी तो हमें भी जानकारी अवश्य होगी। यह इसलिए होगी क्योंकि हमने उसकी व्यापकता को जान लिया है। जो प्रकृति से ऊँची व्यापकता है, प्रभु की चैतन्यता है।प्रकृति में कम्पन्नता होकर के नाना लोक लोकान्तरों की रचना हो जाती है। नाना अन्तरिक्ष, आकाशगंगा आदि की रचना हो जाती है, परन्तु यह उस प्रकृति के तन्तुओं से बनती है। जल, अग्नि, वायु भी इस प्रकृति के तन्तुओं से बना करते हैं। वह ऐसा अनुपम है, जो इस प्रकृति में कम्पन्नता देता है, और इसका स्वामी है। स्वामी होने के नाते वह सार्वभौम और प्रकृति का पति माना जाता है।वह जो अनुपम देव आत्मा है, जो प्रभु के निकट जाना चाहता है, प्रकृति को त्याग करके प्रभु के निकट जाता है, और प्रभु की गोद में जाते हीएक अनुपमता प्रतीत होती है और वह अनुपमता मानव को ऊँचा बना देती है, लोक लोकान्तरों को नीचे पहुँचा देती है और हम ऊँचे चले जाते हैं।हम अपने मानवत्व को क्या, हम अपने सूक्ष्मवाहक वृत्तियों को जानने वाले बने, लोक लोकान्तरों में ले जाते चले जाएं।

774 विभाजक मन

मन प्रकृति के एक-एक कण को जानता हुआ अपनी रचना रच करके एकाग्रह होता हैं। जैसे मूलाधार चक्र है, नाभि चक्र है, हृदय चक्र है, कंठ चक्र है, ब्रह्मरन्ध्र है। इन चक्रों की प्रक्रियाओं को जानता हुआ, इसमें विभाजन करने वाला मन है। प्राणों के द्वारा, मन, क्रिया, ज्ञान और प्रयत्न दोनों एक स्थान में एकाग्र होकर ब्रह्मरन्ध्र में जाते हैं, तोसंसार का, प्रकृति का, जितना ज्ञान है, वह सब इसके समीप आ जाता है। जहाँ प्रकृति का ज्ञान और विज्ञान समीप आया, तो उसे प्रतीत होता है कि आज तू कहाँ आ गया। ब्रह्मरन्ध्र में जो सूक्ष्म-सूक्ष्म वाहक

नाड़ियां हैं, उनमें से किसी का सम्बन्ध आकाश गंगा से हैतो किसी का ध्रुवलोक से, तो किसी का सूक्ष्म शरीर वाली आत्माओं से, किसी का चन्द्र मण्डल से, तो किसी का मंगल से, तो यह जो बहत्तर करोड़ सूक्ष्म वाहक नाड़ियां होती हैं, इनमें नाना अनहद होते हैं, इनकी अव्याहृत गति होती और अव्याहृत गति होने के नाते, जब यह आत्मा ब्रह्मरन्ध्र में अव्रेत करता है, उस समय मन इसके सहित रहता है। मन और प्राणों की एक धारा होकर चलती है। जब ज्ञान और प्रयत्न की एक धारा होकर चलती है तो यह नाना लोकलोकान्तरों का ज्ञान, आत्माओं का ज्ञान, उन्हें आवाहन करना, उन्हें समीप लाना यह सब उस धारा में परिणत होता है। 29.07.1966

775 विष्णु लोक, बृहस्पति

आगे जहाँ वृहस्पति इत्यादि का वर्णन आता है वहाँ वायु प्रधान होती है, जहाँ सूर्य का वर्णन आता है, वहाँ अग्नि प्रधान होती है। जिस मण्डल में जाओगे, तो जो तत्व वहाँ प्रधान है, वहाँ वैसी ही योनियां, वैसी ही पुस्तकें और उसी प्रकार की धाराएं, तुम्हें प्राप्त होती चली जाएंगी। कहींकहीं हमारे सिद्धांतवादियों ने ऐसा माना है, कि यह आत्मा जब इस शरीर को त्यागता है, तो सतोगुण प्रधान होता है। मेधावी से ऋतम्भरा तक के जो प्राणी होते हैं, उन बुद्धियों को अनुसन्धान करने वाले, मंगल, बुध इत्यादि मण्डलों को त्यागती हुई सूर्य मण्डल में विराजमान हो जाती है।उसे हमारे यहाँ विष्णु लोक कहा करते हैं। वहाँ के राष्ट्र का जो स्वामी है, उसे विष्णु कहते हैं। जहाँ वायु तत्व प्रधान है, जल तत्व प्रधान, वहाँ भी इसी प्रकार घ्राण रूपों में माना जाता है। यहाँ बड़े जटिल प्रश्न उत्पन्न होते हैं कि जहाँ तत्व प्रधान हो, वहाँ पोथी का रूपांतर किस प्रकार होता है?यह तो वही प्रश्न है कि योनि भी कैसे प्राप्त होती है?ज्ञान कैसे होता है? यह तो प्रश्न करने योग्य ही नहीं, वहाँ उसी प्रकार का वाक्य, उसी प्रकार के पात्र बन करके, उसी प्रकार की उनकी रूप रेखा होती है।प्रत्येक लोकलोकांतरों में उसमें पार्थिवता भी होती है, अग्नि भी होती है, पंचमहाभूत भी, परन्तु किसी एक तत्व की प्रधानता होती है और उन्हीं तत्वों के कारणों से, वह उन्हीं में कटिबद्ध रहते हैं, उन्हीं की सीमा में बद्ध रहते हैं। परमात्मा का जो नियम है उस नियम के आधार से लोक लोकांतरों की प्रक्रियाएं चलती रहती हैं।

जेष्ठाय नक्षत्र में वायु प्रधान है। वह कितना प्रबल है। किस प्रकार उसकी गणना होती है तो जैसा हमारा यह पृथ्वी मण्डल माना जाता है, ऐसीऐसी तीस लाख पृथ्वी सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती हैं और जैसा यह सूर्य मण्डल है, ऐसे 72 सूर्य वृहस्पति में समाहित, आरुणि मण्डल में समाहित हो जाते है। जैसा ध्रुव मण्डल है, ऐसेऐसे एक सहस्त्र मण्डल अरुंधति मण्डल है, ऐसेऐसे सहस्त्र मण्डल जेष्ठाय नक्षत्र में समाहित हो जाते हैं। 26.07.1967

परमात्मा सबमें ओत प्रोत और सबसे पृथक

प्रभु अनन्त हैं और आत्मा भी अनन्त है परन्तु राजा अपने राष्ट्र के प्राणियों की गणना करता है, पृथ्वी मण्डल की भी गणना कर सकता है, योगी किसी लोक की भी गणना कर सकता है परन्तु यह आत्मा कितनी हैं इसकी गणना नहीं की जा सकती। इसका कारण है कि इसमें अल्पज्ञता है और परमात्मा इतना पूर्ण है कि वह इसकी गणना को जानता है, इसके गर्भ में है। जब यह आत्मा गणना को जान जाता है तो यह भी मौन हो जाता है, और परमात्मा के आनन्द में, उसके गर्भ में समाहित हो जाता है। इससे पूर्व इसे ज्ञान नहीं होता कि आत्मा कितनी जैसे प्रभु अनन्त हैं ऐसे ही उसके लोकलोकान्तर भी अनन्त हैं और उसमें रहने वाली आत्माएं भी अनन्त हैं। तो यह तीनों पदार्थ संसार में अनादि है परन्तु अनन्त हैं। इनकी सीमा मानव नहीं जान सकता। यदि वह अल्पज्ञता न होती तो यह सीमा में बद्ध नहीं हो सकता था। परमात्मा सब में रमण करता हुआ भी पृथक है। आत्मा शरीर में रहता है, उसकी रूपरेखा बाहर नहीं परन्तु जहाँ तक उसके शरीर की ज्योति है, वहीं तक है। परमात्मा इस संसार में सबमें ओतप्रोत है और सबसे पृथक भी। 26.07.1967

776 धर्म

धर्म उसे कहते हैं जो हमारे एक दूसरे के पिछले विभाग में जो कार्य कर रहा है और जो शुद्ध रूप से हो रहा है। जैसे हमारे नेत्र हैं और किसी को दृष्टिपात किया जा रहा है तो इसके पिछले विभाग में जो पीला पटल है वह भी वही कार्य कर रहा है। पीछे पटल के पिछले विभाग में तन्मात्राएं हैं वह भी यही कार्य कर रही है और उनके पिछले विभाग में जो मन का मण्डल है, वह भी कार्य कर रहा है। मन के पिछले विभाग में जो बुद्धि का मण्डल है, वह भी कार्य कर रहा है।उसके पिछले विभाग में जो चित्त का मण्डल है, वह भी यही कार्य कर रहा है। उसके पश्चात जो आत्मा है, उससे जो ज्योति आ रही है, वह भी इसी प्रकार की आ रही है। उच्चारण करने का अभिप्राय है कि उसका नाम धर्म कहलाता है। अब यह धर्म पृथ्वी मण्डल से क्या, सूर्य मण्डल से क्या, संसार में व्यापक है।

जब मानव रसना से किसी वस्तु को शुद्ध रूपों में पान करता है, तो उसका मुख भी वही कार्य कर रहा है, पांचों प्राण भी वही कार्य कर रहे हैं। यह धर्म, सब जगह है। 26.07.1967

777 परमाणुओं की ध्वनि

नाना दिशाओं से शब्द आते हैं, अग्राण आते हैं, गुनगुनता आती है, ध्वनि आती है इन सबका मन्थन करना, नाना प्रकार के परमाणु, त्रिस्रेणु, महात्रिस्रेणु इन सब परमाणुओं को एकत्रित करने वाले विज्ञानवेता ये मेधावीवादी होते हैं।जो मानव परमाणुवाद में विचरण करता है वह मेधावी बुद्धि वाला होता है। वह यह जानता है कि तेरा जो मस्तिष्क है, इसमें जो उपज होती है, वह वायु के लिए होती है, अग्नि के लिए होती है, समुद्र के लिए होती है, आदित्य के लिए होती है। नाना प्रकार के परमाणुओं को सुगठित करता रहता है। नाना प्रकार के यन्त्रों को निकलता रहता है। राजा रावण के पुत्र नारान्तक नित्य प्रति यंत्रों में विराजमान होकर चन्द्रमा की यात्रा करता था। 26.10.1967

778 मेधावीवाद का क्षेत्र

मेधावी क्षेत्र कहाँ तक है? कि चन्द्रलोक को जा सकता है, मंगल में पहुँच सकता है, बुध में जा सकता है। अपनीअपनी क्रियाओंद्वारा यन्त्रों के द्वारा, नाना धातुओं के द्वारा, यन्त्रों को स्थिर करके, वह इन लोकों में रमण कर सकता है। नाना प्रकार के विज्ञान को जानता हुआ, वह वायुयानओर भी नाना प्रकार के सूक्ष्म से सूक्ष्म यन्त्रों को निकास कर सकता है।

बुद्धि का क्षेत्र और मेधावी का क्षेत्र कहाँ तक है? मेधावी का क्षेत्र इस परमाणुवाद में रमण करता है। सूर्य में नाना प्रकार की किरण उत्पन्न होती हैं, उनमें किसकिस प्रकार के परमाणु हैं? कितनी उसमें धाराएं हैं, किस-किस प्रकार की धाराएं हैं। यह सब मेधावीवाद का क्षेत्र है।अब बुद्धि और मेधावी के पश्चात ऋतम्भरा पर आ जाओ। ऋतम्भरा वादी कौन होता है? जो ज्ञान और विज्ञान के द्वारा इन सबको जानता हुआ ऋतम्भरा के क्षेत्र में चला जाता है। 26.10.1967

779 ऋतम्भरा बुद्धि

ऋतम्भरा उसे कहते हैं जहाँ योगी प्रकृति पर अपना शासन कर लेता है। प्रकृति पर जब उस विवेकी पुरुष का शासन हो जाता है, तो यह जो परमाणुवाद है, इसकी वास्तविकता को जान लेता है। इसके पश्चात यह ऋतम्भरा के क्षेत्र में चला जाता है। ऋतम्भरा का क्षेत्र क्या है? कि इस प्रकृति के ऊपर आत्मा यह शासन करने वाला हो जाता है, क्योंकि सर्वशः जो प्रपंच है, वह मन और प्राण के ऊपर है। मन और प्राणों को एकाग्र करके यह आत्मा इनके ऊपर सवार हो जाता है। सवार होने के पश्चातइसे ऋतम्भरा बुद्धि ही कहा जाता है।

वेद का ऋषि कहता है कि उसके पश्चात मानव ऋतम्भरा में परमात्मा का कुछकुछ अनुभव करने लगता है, क्योंकि प्रकृति पर शासन हो जाता है, प्रकृति चरणों में ओतप्रोत हो जाती है, आगे वह गिरित बन जाता है। 26.10.1967

वेद का जो विकास है वह देवताओं के द्वार से है, और देवताओं का जो ज्ञान है, वह सर्वत्र ज्ञान होता है। वह किसी विशेष व्यक्ति की या समाज की सम्पदा नहीं होती, वह सर्वश: विश्व की सम्पदा होती है। वह व्यक्ति इस पृथ्वी मण्डल पर विराजमान होने वाला हो, सूर्य मण्डल में हो, चन्द्र मण्डल में हो, शुक्र में हो, मंगल में हो, परन्तु सब प्राणियों के लिए एक सा प्रकाश होता है? नास्तिक व्यक्ति यह कहता है कि मेरा हृदय पवित्र हो, मेरे हृदय से वाक् सुन्दर हो, वह ईश्वर को स्वीकार नहीं करता, परन्तु यह अवश्य उच्चारण करता है कि तेरे हृदय में, अंतरात्मा में शांति और महानता विराजमान होनी चाहिए। सभी प्राणी यही उच्चारण करते रहते हैं। कि मानव का जीवन वेद रूपी प्रकाश से सुगठित रहता है। जहाँ वेद रूपी प्रकाश नहीं होता हैं वहाँ मानवता भी नहीं होती, वहाँ मानव का जीवन भी नहीं होता। 02.08.1968

780 प्रात: कालीन उषा किरण

यह सूर्य हमारा प्रकाशक है इसलिए प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता कि हमारे यह नेत्र किसके प्रकाश से प्रकाशित होते हैं, क्योंकि सूर्य देवता है, सूर्य को प्रतिभा आती है, मानव के नेत्र प्रकाशमान हो जाते हैं। मेरी प्यारी माताएं जब प्रातःकाल होता है, उषा नाम की किरण आती है, माता अपने पुत्रों से कहा करती है कि हे पुत्रो! जागरूक हो जाओ, इस समय सूर्य का प्रकाश आ गया है। नेत्रों का प्रकाश आ गया है। तो सूक्ष्म प्यारे पुत्र भी आसन को त्याग देते हैं और सूर्य के प्रकाश में प्रकाशित हो जाते हैं क्योंकि अन्धकार में मानव शैय्या पर विश्राम करता है और जब वह प्रकाश होता है, तो उस समय उसे नवीन प्रकाश प्राप्त होता है, और वह अपनी शैय्या को त्याग देता है। तो नेत्रों का देवता सूर्य कहलाया जाता है। 08.03.1969

781 नेत्रों का देवता

राजा जनक ने ऋषि से कहा कि भगवन्! मैं यह नहीं जान पाया हूं, कि जब सूर्य नहीं होता, तो उस समय नेत्रों का कौन देवता कहलाता है? हम किसके प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। महर्षि याज्ञवल्क्य जी ने कहाहे राजन! उस समय हमारे नेत्रों का देवता चन्द्रमा होता है, चन्द्रमा प्रकाशक होता है, अपनी कांति को लेकर आता है उसी कांति में जो हम सूर्य के प्रकाश में कर्त्तव्य कर रहे थे, वही कर्त्तव्य हम चन्द्रमा की कांति में भी करने को तत्पर रहते है। चन्द्रमा की जो सुदंरसुंदर कान्तियां चलती हैं, वे मानव को अमृत प्रदान करती चली जाती हैं। जहाँ पृथ्वी में आभूषणी आभाकत्री नाम की धातु होती है वहाँ श्वेतकेतु नाम की कांति जाती है, जहाँ अमृत विशेषकर उत्पन्न होता है, वहाँ पात बनती रहती है, उसी पात से नाना प्रकार की धातुएं उत्पन्न होती रहती हैं, और हमारे नेत्रों में वह अमृत का मार्ग करती हैं, नेत्रों के

पिछले विभाग में प्रांगिक नाम की नाड़ियां होती हैं, जिनके द्वाराअमृत जाता है। वह अमृत मानव को पवित्र बनाता है, क्योंकि चन्द्रमा का सम्बन्ध जल से होने के नाते, इसको अमृतम् कहते हैं। मन का विशेष संबंध चन्द्रमा के साथ रहता है।चन्द्रमा से ही रस आता है और उस रस का संबंध मानव के मन से होता है। मन का संबंध नेत्रों से और इन्द्रियों से होता है इसीलिए हमारे नेत्रों और इन्द्रियों को देवता, जब सूर्य नहीं होता, तो यह चन्द्रमा होता है। चन्द्रमा हमें प्रकाश को अर्पित करने वाला है, पवित्रता को प्रदान करने वाला है। उसी से हम अमृत का पान किया करते हैं। 08.03.1969

782 भौतिक विज्ञान से आचार भ्रष्टता

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने एक समय मुझे आज्ञा दी, कि आप भारद्वाज आश्रम में पंहुचो, जब मैं उनके आश्रम में पंहुचा, तो उनके आश्रम में महर्षि रेवक और महर्षि पिप्पलाद दोनों ऋषि विराजमान थे। वह ब्रह्म और प्रकृति की चर्चा करने आए थे। जब दोनों यह चर्चा करने लगे, तो मैं भी वहाँ पंहुचा। वहाँ एक दूसरी धातु का मिलान हो रहा था, महर्षि भारद्वाज की विषेश विज्ञानशाला थी, वहाँ ब्रह्मचारियों की विद्या अध्ययन कराते थे, महर्षि भारद्वाज ब्रह्मचारियों से यह भी कहा करते थे, कि तुम इस विद्या को जान लो, और इसका प्रयोग भी कर लो, इसको सब कुछ करो, परन्तु इससे आचरण की भ्रष्टता हो जाती है। इसीलिए इसके ऊपर तुम अधिक न जाओ। ब्रह्म की चेतना को अधिक जानने का प्रयास करो। 23.08.1969

783 अन्तरात्मा

महर्षि भारद्वाज जी ने जब ऐसा कहा, तो मैं बड़ा व्याकुल होकर के, अपने गुरुदेव के द्वारा आया और प्रश्न किया, कि महर्षि भारद्वाज ऐसा क्यों उच्चारण कर रहे हैं? क्योंकि संसार में मानव का विकास विज्ञान से होता है, जितना विज्ञान होता है, उतनी ही सुविधाए होती है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि नही, पुत्र। ऐसा नही होता है। उन्होंने इसीलिए कहा है क्योंकि ब्रह्म की चेतना से मानव की अंतरात्मा का विकास होता है, और अन्तरात्मा का जो विकास होता है, वह भौतिक विज्ञान से सहस्रों लाखों गुणा अधिक होता है, इसीलिए उसको जानने के लिए अधिक बल दिया करते थे।

हमारे ऋषि मुनि इस विद्या और इस विज्ञान की परम्परा को जानते थे, हमारा तो जन्म सिद्ध अधिकार है, क्योंकि जिसने अपने स्थूल, सूक्ष्मऔर कारण तीनों शरीरों को जाना है, उसके यहाँ यह जो कहीं भौतिक विज्ञान है, वह उससे दूर नही होता। एक योगी सूक्ष्म शरीर वाला है और एक भौतिक विज्ञानवेता है, वह केवल अपने यन्त्रों द्वारा जाता है, परन्तु सूक्ष्म शरीर वाला जो है, वह सर्वशः लोकों में भ्रमण कर आता है।अग्नि उसको भस्म नही कर सकती, जल उसको नष्ट नही कर सकता, वायु उसको तीव्र गति नही दे सकती। जब तीव्र गति नही दे सकती, क्योंकि वह तत्वों का समूह रहता है और उसको अग्नि नष्ट नही कर सकती, तो उसके लिए चन्द्रमा की और सूर्य की यात्रा करना बहुत सहज हो जाता है। परन्तु आज का मानव कहता है कि वह केवल कल्पनामात्र है क्योंकि ऐसे योगी अब नही हैं, परन्तु योगी है, जो पर्वतों की कन्दराओं में विराजमान हैं, जो अपनी यात्रा कर लेते हैं, शान्त हो जाते हैं। 23.08.1969

784 योगी

आज कोई मानव यह उच्चारण करे, कि इन बड़ेबड़े ऊँचे गृहों में योगी प्राप्त हो जायें तो यह असम्भव है। क्या कहीं ऊँचे गृहों में, राष्ट्र गृहों में योगी प्राप्त होंगें?योगी तो कहीं ओर प्राप्त होंगे। जैसे महर्षि रेवक मुनि को कहा था महाराजा ज्ञानश्रुति जी के मन्त्री जी ने कहा कि आप रेवक हैं। हां महाराज! गाड़ी के नीचे अपने जीवन को व्यतीत करने वाले थे। महर्षि लोमश के जीवन से मुझे प्राप्त होता है, कि वह एक आसन लिए रहते थे, सहस्रों वर्षों की अवस्था होते हुए एक आसन पर रहते थे। तो आज कोई मानव यह कल्पना करने लगे, कि आज मुझे योगी प्राप्त हो जाए, परन्तु योगी तो तब प्राप्त होंगें, जब तुम योगी के जिज्ञासु बनोगे। आज जब जिज्ञासा नही है, जिज्ञासा तो भोगविलासों की हैं, जिज्ञासा तो रसना की पूर्ति करने की है, रसना तो दूसरे के रस को पान करने की है, आज मानव यह कल्पना करे, कि वह ऋषि आज क्यों नही है, यह सूक्ष्म शरीर वाली आत्मा तुम्हें कैसे प्राप्त हों, जब तुम्हारे ज्ञान के द्वारा ही अन्तर्द्वन्द समाप्त नही होता।

आज का मानव यह कहता है कि मांस का आहार करने वाले ही चन्द्रमा पर जा पंहुचे और जो अहिंसा का उपदेश देते हैं, वह यहाँ से यहाँ भी नही जा सकते। यह वाक्य बहुत सुन्दर हैं, आजमानव इन विडम्बनाओं में क्यों जाने लगा, इसीलिए जाने लगा, क्योंकि उसे भी अपनीरसना की पूर्ति करनी है, उसी प्रकार जब उसके मन में यह विडम्बना रहती है, कि आज मांस का आहार करने वाला प्राणी कहाँ चला गया। 23.08.1969

785 मांस भक्षण से दोष

जो भौतिक विज्ञान होता है, तो वह मानव के संस्कारों से ही होता है, यह मांस से सम्बन्धित नही होता। यह जो मानव के द्वारा प्रकृतिवाद है, इसमें मानव हिंसक बन जाता है। उसके मस्तिष्क पर हिंसक का इतना प्रभाव नही होता, क्योंकि वह प्रकृतिवाद मेंजो है, जब चेतना

को जानोगे और चेतना वाला जो विज्ञान है, उसको जानोगे, तो तुम्हें प्राप्त होगा, कि मांस प्राप्त करने में कितनी हानि होती है, और मुझे कितना सूक्ष्म बनना था।
चन्द्रमा में जाना है अथव मंगल में जाना है, यह भी तो सूक्ष्म विज्ञान है। मैं यह उच्चारण नही करता हूँ, कि यह सूक्ष्म नही हैं, परन्तु इसे अति सूक्ष्मता में जाने से, इसकी प्रतिभा का ज्ञान होता है। जहाँ तक एक दूसरी धातु के मिलान का प्रश्न हैऔर प्रकृति उसकी देन देती है, तो मांस खाने से इसका कोई प्रश्न नही हैं, यह तो विषय ही दूसरे हैं। आज का मानव यह उच्चारण करता रहता है, कि मांस खाने वालो नेचन्द्रमा की यात्रा करली और अहिंसा परमोधर्म का जानने वाला पर्वतों तक भी नही जा सकता, मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ, कि अहिंसा परमोधर्म की मीमांसा क्या है यह मानव को विचारना होगा।
अहिंसा परमोधर्म की मीमांसा, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में वर्णन कराई हैऔर बहुत सुन्दर रूपों में इसका निरूपण किया है। रहा यह वाक्य कि मेरा जो विषय दूसरा न बन जाए। मैं इन प्रश्नों का उत्तर इसीलिए दे रहा हूँ, क्योंकि यह मेरा विषय है मेरे हृदय में स्वयं यह उत्कट इच्छा उत्पन्न होती है, हम यह जानने का स्वतः प्रयास करेंगें, कि हम अहिंसा परमोधर्म कहते किसे हैं। 23.08.1969

786 प्रभु चेतना में लाभ

अहिंसा परमोधर्म की मीमांसा क्या है और यह जो चन्द्रमा में जाने वाले यन्त्रों की मीमांसा है, यह क्या है, भौतिकवाद की जो मीमांसा है, वह यह है, कि भौतिकवाद केवल इस वाक्य को जानता है, परन्तु इस प्रकार का मांस पान नही करता, जैसे आज के प्राणियों ने यहाँ का जो मानव है, कि आज का वैज्ञानिक मांस पान करता है, परन्तु उसकी जो सूक्ष्म तरंगें, जो वेदना होती है, वह अन्तरात्मा को ही प्रभावित करती हैं। परन्तु वहाँ जो नाना प्रकार के यन्त्र है, उसका उसके ऊपर किसी प्रकार का अन्तर्द्वन्द, उस पर नही आता, तो उसका यहाँ प्रश्न ही उत्पन्न नही होता, परन्तु अहिंसा परमोधर्म की आवश्यकता मानव को आत्मिक ज्ञान में होती है, और मानव की मानवता में होती है। मानव को को बहुत विचारना है, प्रत्येक वाक्य और सूक्ष्मतता से विचारना है। मांस को और चन्द्रमा में जाने वाले का प्रश्न उत्पन्न नही होता। यहाँ प्रश्न है कि मानव यन्त्रों के द्वारा चन्द्रमा में चला गया, यथार्थ है।क्योंकि नाना प्रकार की धातु हैं, तरंगें हैं, इनको जानता है। इनको मैं भी जानता हूँ।मेरे पूज्यपाद ने मुझे आज से लाखों वर्षों पूर्व इस का ज्ञान करा दिया था, और इन धातुओं का भी ज्ञान कराया था। परन्तु उनको उच्चारण करने से लाभ क्या? मैं चन्द्रमा में क्यों चला जाऊं? मुझे यह लाभ है जाने से, मुझे कोई अन्तर्द्वन्द नही हैं। मेरे लिये स्पष्ट मार्ग है, मैं उस मार्ग को प्राप्त कर सकता हूँ।परन्तु उससे मुझे कोई लाभ प्राप्त नहीं होगा। लाभ तो केवल उस प्रभु की चेतना में हैं क्योंकि प्रभु कीचेतना सर्वत्र ओतप्रोत है, उसको जानना हमारे लिये बहुत अनिवार्य है। 23.08.1969

787 योगी की लोक यात्रा

तो हम आत्मा कोअणु स्वीकार करते हैं, तो एक योगी का आत्मा सर्व लोकों की यात्रा नहीं कर पाता। एक भौतिक विज्ञानवेत्ता तो यन्त्रों केद्वारा मंगल की यात्रा, बुध की यात्रा और शुक्र इत्यादियों की यात्रा करता है। चन्द्र की यात्रा करता है। परन्तुएक जो योगी है, उस योगी की प्रवृत्तियों में ऐसा कहा गया है। जब वह हृदय और आकाश, दोनों की एकता में एक चित्त हो जाता है, तोदोनों का हृदय सुगठित होते हुए आत्मा का हृदय और ब्रह्म का हृदय जिसको प्रकृति का हृदय कहते हैं, आंतरिक, जब दोनों की एक तुलना हो जाती है, तोयह आत्मा नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की यात्रा करने लगता है। जब नाना प्रकार के लोकों की यात्रा करने के लिए तत्पर हो जाता है, तो नाना लोक इसके नीचे ज्ञान में दब जाते हैं, और यह प्रकृति के क्षेत्र को जानता हुआ, इसकी गति एक महत्ता में परिणत होती रहती है।
यदि हम इस आत्मा को शरीर में अणु के रूप में स्वीकार करते हैं तोयह सर्व ब्रह्माण्ड की गति किस प्रकार इसके समूह में आ जाती है? तो इसका उत्तर यही बन पाता है यदि हम ब्रह्माण्ड और पिण्ड की कल्पना, दोनों की एक करते हैं, तो आत्मा को भीविभु स्वीकार करना होगा। क्योंकि हम दोनों की एक ही तुलना करने पर दोनों को विभुवत स्वीकार करना होगा।
हमारे इस शरीर में पंच महाभूत है, प्रकृति भी पंच महाभूतों से क्रियाशील हो रही है, जितनी भी नाना प्रकार की प्रतिभा हमें प्रतीत होती है तो यहाँ इससे यह सिद्ध होता है कि यदि परमात्मा को अणु मानोगे तो आत्मा को भी अणु माना हमारे लिए बहुत अनिवार्य हो जाएगा। 17.01.1970

788 जिह्वा छिद्रों से विज्ञान बोध

मेरी बाल्य पुत्री कहा करती थी कि हे प्रभु! मैं चन्द्रमा की यात्रा में सफल होना चाहती हूँ, प्रभु! मैं मंगल की यात्रा में सफल होना चाहती हूँ, परन्तु मैं यह कहा करता था कि पुत्रवत! संसार में हमारी रसना का जो अग्र भाग है, उसमें लगभग एक सौ बयासी दाने होते हैं, छिद्र होते हैं। और वे जो छिद्र होते हैं, उनमें कुछ छिद्र ऐसे होते हैं, जिनका सम्बन्ध जगत में विचरण करने वाली, औषधियों से होता है। बहुत से छिद्र ऐसे होते हैं, जिनका सम्बन्ध नाना प्रकार के रस स्वादनों से होता है, तो इसी प्रकार हमारी जो रसना है इसमें नाना छिद्र हैं। उन

छिद्रों की गति को जानने के लिए, इतनी ही छिद्रों की गति वाला, हमें यन्त्र बनाना होगा, तो हम चन्द्रमा की यात्रा में सफलता को प्राप्त हो जाएगें। परन्तु जब मेरी बालिका यह कहा करती थी कि हे प्रभु! यह जो छिद्र है, वह आप मुझे निर्णय कराईए। इन छिद्रों के नाम क्या है? जिस को मुझे जानना है, जिनसे चन्द्रवत को प्राप्त हो करके, अपने आनन्दवत को मैं जानती ही चली जाऊं। 17.02.1970

789 लोक यात्रा से अभिमान

उस समय मैं इस वाक्य को अच्छी प्रकार जो जानता नही था। परन्तु मुझे उन प्रश्नों का उतर देने में बड़ी सुगमता रहनी थी, इसका मूल कारण यह था, कि रसना के जो अग्र भाग है, इसके छिद्रों को कोई भी मानव जानना चाहता है, तो तालुओं का जो अग्र भाग है उसमें एक छिद्र होता है, उस छिद्र में जब रसना को, हम अग्र रात्रि से ग्रहण करते रहते हैं, उस छिद्र से रसना के छिद्रों का मिलान करने लगते है, तो हृदय रूपी जो गुफा है, उसमें से एक आनन्द का स्रोत उत्पन्न होने लगता है।जैसे हमारा यह शरीर ही जड़वत को प्राप्त हो रहा है, और कहीं चेतनावत हम स्वयं अपने को अनुभव करने लगते है। जो इस आध्यात्मिक मार्ग पर जाने के लिए अग्रसर होते हैं।

परन्तु जब मुझे यह स्मरण आता रहता है कि मैं केवल चन्द्रमा की यात्रा करने में ही, क्योंकि सफलता प्राप्त हूँ, यह तो मानव के अभिमान का मूल कारण है।नाना प्रकार के लोकों में जाना भी तो, मानव के लिए एक ऐसा महान कार्य है, जो मानव को अभिमानित करता चला जाता है। अभिमान नही होना चाहिए। उसमें एक विचित्रवत होना चाहिए। जिसमें जीवन की एक महानता उस मानव के मस्तिष्क में प्रायः हमारे इस बाह्य और आन्तरिक जगत दोनों में एकवत होता चला जाए।

इस पर बहुत अनुसन्धान किया, परन्तु अनुसन्धान करने का अभिप्रायःकेवल यह नही था, कि मैं अपनी मानवीय धारा को नष्ट कर देता। तो मैंने अनुभव किया हैं, वह जो अनुभव का विषय है, वह बहुत ही गहन होता है, उसको उच्चारण करना और वाक्य तो बहुत ही सहज होते हैं, जो रटन्त होते है। जो अपनी प्रतिक्रियाओं में नही लाए जाते है, वह प्रभु से ही उन शब्दों का मिलान, उन शब्दों से उनकी सुगठित धारा रमण करती रहती है हमारे यहाँ हमारी जो संस्कृति है, वह एक एक वाक्य में ऐसी सुगठित हो रही है, कि उसमें मैं उस विज्ञान की धारा को रमण करने लगूं, तो जीवन के जीवन शुद्ध बन जाते हैं। 17.02.1970

790 सूक्ष्म शरीर से लोक भ्रमण

जिसने अपने सूक्ष्म शरीर को पाल लिया है, और वह पंचतन्मात्रा प्रकृति की मानी गई है। उन्हीं पंच तन्मात्ताओं के आधार पर जो स्थूल परमाणु होते हैं, वह सूक्ष्म को अपने गर्भ में धारण कर लेते हैं। कहीं कहीं सूक्ष्म, स्थूल को अपने गर्भ में धारण करने लगता है। और वह कैसे कर लेता है? क्योंकि जितना भी विज्ञान है। वह सूक्ष्मवाद में है। चाहे वह आध्यात्मिक विज्ञान हो अथवा भौतिक विज्ञान। परन्तु उसकी जितनी सूक्ष्म धाराएं हैं, सूक्ष्मवत है, वे सब सूक्ष्मतम हैं। वैज्ञानिक मंगल मण्डल में जाने का प्रयास करता है, तो कितने सूक्ष्म परमाणुओं की उसे आवश्यकता होगी?इसी प्रकार जो महापुरूष आज सूक्ष्म शरीर को जानने के पश्चात लोक लोकान्तरों का भ्रमण करता है। क्योंकि उसका जो अन्तरात्मा होता है, वह परमाणु से भी सूक्ष्म होता है। परमाणुओं की भी 99 हजार प्रकार की प्रवृत्तियां अर्थात उनकी गतियाँ होती हैं।

उसके पश्चात हम अणु जगत में जाते हैं। अणु की भी उतनी सूक्ष्म अबाध तथा गति कहलाई गई हैं। जैसे सूर्य का प्रकाश कितने योजनों से चला हुआ, कितने योजन प्रकाश देता है, मानव को उज्जवल बनाता रहता है। इसी प्रकार अबाध तथा विशद वह जो सूक्ष्म शरीर है वह भी अपना काम करता रहता है। उसकी ऐसी महान गति हो जाती है, कि वह सर्वत्र पृथ्वी मण्डल नहीं, चन्द्र मण्डल क्या, बृहस्पति मण्डल क्या, एक क्षण समय में सर्वत्र भ्रमण करने योग्य बन जाता है। 17.02.1970

791 हृदय में जगत

हमारी महत्ता सूक्ष्म शरीर की, जो गति है, वह महत्ता में परिणत हो जाती है।जब यह वाक्य आता है, कि इसको अनुभव किया जाए। मेरी बालिका ने यह प्रश्न किया किहे पूज्यनीय! मैं यह जानना चाहती हूँ कि इसको मैं केसे स्वीकार करूं?क्योंकि मेरा हृदय तो यह नहीं कह रहा है कि मैं इन वाक्यों को स्वीकार करूं। इस पर यह कहा गया है 'हे पुत्री! हृदय की प्रतिष्ठा जान, कि हृदय क्या है?हृदय को तुम जानती नहीं हो। जब हृदय की, मानव प्रतिष्ठा जान जाता है कि हृदय क्या है?हृदय को ज्ञान में परिणत करते हुए ऐसा कहा गया है, कि जैसेब्रह्माण्ड में, पृथ्वी मण्डल है, यह जल में ही तो प्रतिष्ठित रहता है, और यह जोजल है, यह अग्नि में प्रतिष्ठित हो जाता है।औरअग्नि वायु में प्रतिष्ठित हो जाता है, वायु अन्तरिक्ष में प्रतिष्ठित हो जाता है, और यह जोअन्तरिक्ष है, यह गन्धर्व लोकों मेंमहः लोकों में, चन्द्र लोकों में प्रतिष्ठित हो जाता है, और चन्द्र लोक, गन्धर्व लोकों में प्रतिष्ठित हो जाते हैं, औरगन्धर्व लोक, इन्द्र लोकों में प्रतिष्ठित हो जाते हैं, और इन्द्र लोकप्रजापति में प्रतिष्ठित हो जाते हैं, और यह जो प्रजापति है, यहयज्ञ में प्रतिष्ठित हो जाता है और यह जो यज्ञ है यह मानव कीदक्षिण में प्रतिष्ठित हो जाता है और दक्षिण मानव केहृदय में प्रतिष्ठित हो जाती है। इसीलिए आज हमें इस हृदय को जानने की

आवश्यकता है।क्योंकि जितना भी जगत है, यह सारा हृदय में समाहित हो रहा है।हृदय में ही योगी जन ध्यानावस्थित हो जाते है, और अपनी प्रवृतियों को जानने में वे संलग्नता को प्राप्त हो जाते हैं। 17.02.1970

792 चित्रावली निर्माण

वैज्ञानिक ने एक रक्त बिन्दु से ही, व्यक्ति के चरित्र का चित्र खींच जाने वाला यन्त्र बनाया था। आज का मानव चन्द्रमा पर जा रहा है। आज का मानव शुक्र की कल्पना कर रहा है।मैं यह नहीं कह रहा हूँ। हमारे यहाँ इस प्रकार के जो यन्त्र हैं। इस प्रकार की जो धाराएं हैं, यह परम्परागतों में भी रहती चली आई हैं। मैंने कल चित्रावलियों का वर्णन करते हुए कहा था। उनमें ऋषि मुनियों का चित्रण किया जाता था।मानव के द्वारा ऐसा भी प्रायः रहा है।

द्वापर के काल में महाराजा अर्जुन के पुत्र बभ्रुवाहन ने एक यन्त्र को जाना। जो ''क्राकीक'' नाम का यन्त्र कहलाया जाता था। वह ''क्राकीक'नाम के यन्त्र में ऐसी विशेषता थी, ऐसी एक महानता थी कि मानव के रक्त की धारा के एक ही बिन्दु से जब वह चित्रण करता था, अप्रेत करता रहता था। तो मानव का चित्र ज्यों का त्यों उसमें प्रायःआ जाता था। ऐसा विज्ञान से उन्होंने उस यन्त्र को जाना। बभ्रु वाहन का दूसरा यन्त्र, जिसकी सहायता से इस पृथ्वी मण्डल वाले अन्य लोक लोकान्तरों के निवासी लोगों का यथार्थ चित्र खींच लेते थे उसके पश्चात उन्होंने ऐसे यन्त्र को जाना। जैसे किसी भी लोक से कोई यन्त्र चलता है, संसार के लिए, पृथ्वी मण्डल के लिए, द्वितीय लोक के लिए, उसका चित्र भी, उस यन्त्र में, उनके समीप आ जाता था। प्रायः उसको ''क्रोगा अनेक'' नाम का यन्त्र कहा जाता था।

आधुनिक काल में तो यन्त्रों का प्रादुर्भाव ही नहीं हुआ है। जैसे मंगल मण्डल से कोई प्राणी चलता है। यन्त्रों से युक्त होकर के चलता है। उसका चित्रण उसमें प्रायः आ जाता था। ऐसा प्रायः हमें संसार को दृष्टिपात करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। घटोत्कच्छ तथा बभ्रुवाहन के छोड़े यन्त्र अश्वित तथा सोमाकृति आज भी अन्तरिक्ष में भ्रमण कर रहे हैं। यहाँ भीम के पुत्र घटोत्कच्छ की जो विज्ञानशाला थी, मैंने उसका विवरण पूर्व काल में भी दिया है। 01.08.1970

793 ब्रह्म बोध से ब्रह्माण्ड बोध

एक समयमहर्षि भारद्वाज से दालभ्य जी ने कहामहाराज! मैं इन विचारों को जानना चाहता हूँ कि आप विज्ञान को नहीं जानते हैं? क्या आप सूर्य मण्डल में जाने की प्रक्रियां नहीं जानते? क्या आप चन्द्रमा में जाने वाले यन्त्रों का निर्माण नहीं कर सकते? क्या मंगल में जाने वाले यन्त्रों का निर्माण नहीं कर सकते? उस समय महर्षि भारद्वाज ने कहा कि हे भगवन! तुम यह जानकर के क्या करोगे? उन्होंने कहाप्रभु! हम भी चन्द्रमा की यात्रा करेंगे। तुम सबसे पहले अपने आत्मवेत्ता को क्यों नहीं जानते? जिसमें चन्द्र मण्डल आदि सब समाहित हो जाते हैं, आज इस विज्ञान को जानने का प्रयास करो।महर्षि भारद्वाज ने कहामैं उस विद्या को जानता हूँ, परन्तु उस विद्या को मैं तुमसे प्रकट नहीं करना चाहता हूँ, क्योंकि तुम पण्डित हो, वह जो चन्द्रमा में जाने वाली विद्या है, बुध और शुक्र में जाने वाली है, लोकलोकान्तरों में रमण करने वाला जो यन्त्र है, धातु है, आज मैं पुनः उनका ज्ञान कराता हूँ। परन्तु उन्हें ले करके करोगे क्या? मैं तो यह चाहता हूँ, हे दालभ्य जी! तुम ब्रह्मवेत्ता बनो। ब्रह्मवेत्ता बन कर, ब्रह्म की जो प्रतिभा है, जिस प्रतिभा में सर्वत्र लोक लोकान्तर समाहित रहते हैं। तुम्हारे सूक्ष्म से पिण्ड में भी वहीं संसार ओतप्रोत रहता है, तुम अपने पिड रूपी ब्रह्माण्ड को जानने का प्रयत्न करो। परन्तु यह ब्रह्म को जानने से जाना जा सकेगा। इससे चन्द्रमा तुम्हारे निकट आ जाएगा। सूर्य तुम्हारे निकट आ जाता है। तुम्हारे अन्तरात्मा का इतना प्रकाश है कि उसके समान सहस्रों सूर्यों का प्रकाश भी नहीं होता इतना। आज तुमउसे जानकर के क्या करोगे? महात्मा दालभ्य ने कहा कि मेरे विचार में तो यह वाक्य भगवन यथार्थता में परिणत हो गया है। आज मैं इसका अनुमोदन करने वाला हूँ। मेरा विचार तो यह परम्परा से रहा है। अथवा एक महान विज्ञान की धारा में जाकर के ही क्या करेंगे। 02.08.1970

794 अस्त्रों शस्त्रों से अभिमान

महर्षि भारद्वाज ज्ञान और विज्ञान दोनों में पारंगत थे। महर्षि भारद्वाज, महाराजा शिव और आदि ब्रह्मा भी इस विज्ञान के शिरोमणि रहे हैं। जिन्होंने ब्रह्मास्त्रों का निर्माण किया। वह परम्परा से, उनके नामोच्चारण उसी काल से चले आ रहे हैं तथा प्रचलित है। महर्षि भारद्वाज ने कहा है कि आज मैं चन्द्रमा की यात्रा, यन्त्रों के द्वारा, प्रकृति की धातु और उनके परमाणुओं को भी जान करके यन्त्रों का निर्माण कर सकते हैं, अपना शारीरिकसंकल्प भी इस प्रकार कर बन सकता है। हम विज्ञान की धारा को जानने का भी प्रयास करें। परन्तु अपनी मानवता और अपनी विचारधारा को आत्मवेत्ता बनाने वाली जो धारा है, उसे कदापि अपने से दूर न करे। महर्षि भारद्वाज ने दालभ्य से कहाहे दालभ्य जी! संसार में जब भौतिक विज्ञान बाह्य रंग रूप धारण कर लेता है, उस समय मानव में नास्तिकवाद का प्रसार हो जाता है वहाँ विडम्बना होती है। वहाँ अन्धकार होता है। जहाँ अन्धकार होता है, हे दालभ्यजी! वहाँ मृत्यु होती है।

इसीलिए आज हमें विचारना है। कि रक्षा अस्त्रों शास्त्रों कदापि नहीं हुआ करती। क्यों नहीं होती? उसका मूल कारण क्या है?क्योंकि जिस

राजा के राष्ट्र के जितने अस्त्रशस्त्र होंगे, परमाणुवाद की विद्या होगी, उतना उस राष्ट्र में अभिमान होगा, तो उसी प्रकार की विडम्बना होगी, और वह अभिमान जो होता है, वह मानवीय समाज के सुकृत का हनन कर लेता है। राष्ट्र के राष्ट्र को हनन कर लेता है, उस राजा के राष्ट्र में नाना प्रकार की क्रान्ति उत्पन्न होती रहती है और क्रान्तियों का अभिप्राय यह कि एक समय वह आता है कि वही राष्ट्र अग्नि के मुख में परिणत हो जाता है।

जब यहाँ राजा रावण की प्रतिभा थी, पताका थी, उनका विज्ञान था। इस संसार में इतना विशाल विज्ञान था, चन्द्रमा में जाने वाले यन्त्र, बुध में जाने वाले यन्त्र, अग्नि शस्त्र और जलास्त्र तथा नाना प्रकार के यन्त्र थे। कैसे विशाल यन्त्र थे, मुझे वे यन्त्र, आज तक स्मरण आते रहते है, जिस समय रामऔर रावण का, संग्राम होने लगा, उस समय रावण के पुत्र मेघनाद ने एक सोमभक नाम के यन्त्र का प्रहार किया, नीचे जल ही जल हो गया और ऊपर से अग्नि को वर्षा हो रही है, सर्वस्व सेना जल मग्न हो गई, अग्नि का प्रवाह, अग्नि के रूपों में सेना भस्म होने लगी, उस समयभगवान राम क्योंकि महर्षि भारद्वाज ने उन्हें एक अस्त्र दिया था, जो जलास्त्र कहलाया था, महाराजा भारद्वाज ने जिसका निर्माण किया था, भगवान राम ने उस अस्त्र का प्रहार किया, तो अग्नि का अस्त्र अपने में शोषण कर गया और जल भी शोषण कर गया। जल अकुचन शक्ति, उस यन्त्र में अधिक होने के नाते, जल और अग्नि दोनों शान्त, मृत्यु को उच्चारण नहीं करना है। मृत्यु का आह्वान नहीं करना। जब भौतिक विज्ञान पराकाष्ठा पर जाता है, तो दालभ्य जी! उस काल में मानव का अन्तःकरण अभियान से परिणत हो जाता है, अभिमान उसके मस्तिष्क में प्रायःआ जाता है, और जहाँ अभिमान होता है वहाँ रात्रि होती है, अन्धकार होता है, विडम्बना होती है औररक्त में उत्तेजना होती है, वहीं मानव के जीवन, मृत्यु का कारण बनता चला जाता है। इसलिए आज मैं इस विद्या को तुम्हें देना नहीं चाहता हूँ। इस विद्या का मैं केवल आन्तरिक रूप ही धारण कराना चाहता हूँ। बाह्य अंग बनाना नहीं चाहता। जब तक संसार में कर्तव्य की वेदी है, तब तक इसको ब्राह्य रूप देने का हमारा कोई प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता है।

ऋषि मुनियों ने यह कहा है। एक मानव चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है, एक मानव नाना प्रकार के अग्नि अस्त्रों का निर्माण कर रहा है, क्यों कर रहा है? अग्नि अस्त्रों का, ब्रह्म अस्त्रों का निर्माण क्यों कर रहा है? शिवा अस्त्र क्यों बना रहा है? और वरुणास्त्रों का निर्माण क्यों कर रहा है? वह इसलिए कर रहा है कि तेरे राष्ट्र की सुरक्षा हो जाए, उस राष्ट्र और सेना की रक्षा हो जाए। इस प्रकार के अस्त्रशस्त्र प्रायः संसार में रहे हैं। 02.08.1970

795 ऋचा विचारक पुरुष

आज वैज्ञानिकों को और आत्मवेत्ताओं दोनों का एक स्वरूप बनना चाहिए। जैसे कोई ब्रह्मवेता है, आज किसी ऋचा को जानना है, दर्शनों में ऋचा का वर्णन आता है, ऋचा का विचारक जो पुरुष होता है, वहएकान्त स्थान में चला जाता है, भयंकर वनो में चला जाता है, अपने में ऋचा को अर्पित कर देता है, समर्पित कर देता है, उस ऋचा को जानतेजानते, एकएक ऋषि कोलगभग, एक सौ और सहस्रों वर्ष व्यतीत हो जाते हैं।वे अपने को यही नहीं जान पाए, कि मैं जगत में हूँ, संसार में हूँ, कहाँ हूँ? वह अपने को यह अनुभव कर लेते हैं कि मैं तो चेतना में हूँ, मेरी तो चेतना ही भिन्न है। 02.08.1970

796 वैज्ञानिक

इसी प्रकार के जो वैज्ञानिक होते हैं, एकएक वस्तु पर, एक एक परमाणु पर, उन परमाणुओं में जो धाराएं होती हैं, वास्तव में वह समाज, वह काल किस प्रकार का था?एक एक वैज्ञानिक कैसे 6 मास तक लुप्त हो जाथा था। और उस पर अनुसन्धान करता हुआ, नाना प्रकार के परमाणु अस्त्रों का निर्माण करने वाला बनता था। इस प्रकार की धारा उनकी प्रायः रही है। राजा रावण के राष्ट्र में कितना विज्ञान था?परन्तु उस विज्ञान का क्या बना?उसका यह बना कि लंका का विनाश हो गया। उसका यह बना कि परिवार नष्ट हो गया, उसका यह बना कि मानवता, अमानवता में परिवर्तित हो गई। उसका यही बनता है।

मैं तो यह कहा करता हूँ कि आध्यात्मिकवाद संसार में अधिक होना चाहिए, धार्मिकवाद अधिक होना चाहिए। 02.08.1970

797 राष्ट्र की भ्रष्टता का कारण

समाज का, राष्ट्र का विनाश किस काल में होता है? जब मेरी पुत्रियों को श्रृंगार भ्रष्ट किया जाता है। उस काल में राजा का राष्ट्र नष्ट हो जाता हैं। सबसे प्रथम रावण ने माता सीता के चरित्र को कुदृष्टि पान करना चाहा। उसका परिणाम यह हुआ, कि माता सीता तो अडिग रहीं, उसका जीवन भ्रष्ट न हो सका। इतना वैज्ञानिक, इतना महान् राजा था, परन्तु माता सीता की वेदना ने रावण के परिवार को नष्ठ कर दिया। राष्ट्र को अग्नि के मुख में परिणत कर दिया।

उस काल में राजा का विनाश होता है, जब मेरी पुत्रियों के श्रृंगार को भ्रष्ट करने वाला राष्ट्र बन जाता है, उस काल में, प्रजा में अशुद्ध क्रान्ति आने के कारण, वह राजा अग्नि के मुख में स्वतः चला जाता है। इसी प्रकार सबसे प्रथम कुम्भकरण ने यह कहा था, रावण से, हे

रावण। हे विधाता! यह तुमने क्या किया? तुम माता सीता का हरण कर लाए, यह तुम्हारा कार्य नहीं था। यह राजाओं का कर्त्तव्य नहीं होता। 02.08.1970

798 जीवन मुक्त प्राणी

जीवनमुक्त वही प्राणी होते हैं, जो परमाणुवाद पर गतिशील हो जाते हैं।उनका अधिपत्य उन पर हो जाता है।जैसे भौतिक विज्ञानवेत्ता मंगल की यात्रा करने जा रहा है, परन्तु मंगल में जाने वाले जो यन्त्र हैं, उन पर जब तक उसका अधिपत्य नहीं होता, तब तक मंगल की यात्रा नही हो पाती। इसी प्रकार जो जीवनमुक्त योगी होते हैं, उनके लिए वह जो परमाणु रूपी यन्त्र है, उस पर अधिपत्य होना चाहिए। उसे ज्ञान होना चाहिए, कि वायु के परमाणु कितनी मात्रा में होने चाहिए, जल के परमाणु कितनी मात्रा में होने चाहिए। 02.11.1970।

799 सुकृत से रक्षा

जहाँ मन और प्राण का निदान कर दिया जाता है, और निदान करके दोनों का जब मिलान करके, वे जो नाना प्रकार की नाड़िया, चक्रवे ग्रन्थियां जब खुल जाती हैं, तो मानव को विज्ञान उसे ऐसे अन्तर्गत आ जाता है जैसे गऊ के द्वारा बछड़ा आ जाता है।

मंगल का वैज्ञानिक कितना अनुसन्धान कर रहा है, बृहस्पति का मानव कितना अनुसन्धान कर रहा है। मैं इसकी भी विशेषता करने नहीं आया हूं क्योंकि हमारे यहाँ एक दूसरे लोकलोकान्तरों की उड़ान प्रायः होती रहती है और यह जो उड़ान है, यह महान और पवित्र भी हो सकती है, परन्तु यह विनाश का कारण बना करती है। परन्तु एक याज्ञिक पुरूष के अन्तर्गत दोनों प्रकार का विज्ञान होता है। एक मानव की रक्षा करने वाला और एक मानव को नष्ट करने वाला, समाज को नष्ट करने वाला। समाज की रक्षा कौन करता है? समाज की रक्षा वह करता है, जिसके द्वारा महान सुकृत महानता है। 13.02.1971

800 मस्तिष्क की नाड़ियों का लोकों से सम्बन्ध

मस्तिष्क की नस नाड़ियों से सब लोकलोकांतरों का सम्बन्ध है, एक समय राजा रावण के विधाता कुम्भकरण, जो लंका में 6 मास तक विज्ञानशालाओं में शिक्षा प्रदान करते, हिमालय की कंदराओं में विराजमान थे। एक समय श्रृगभानु ऋषि महाराज जो पापड़ी मुनि महाराज के पौत्र होते थे, वह उनके द्वार पर पहुंचे। वह नाना प्रकार के उन परमाणुओं के लिए सलग्न हो रहे थे, जिन परमाणुओं में नाना अप्रत, एक सुकुमानी नेत्रों को विराजमान करता हुआ, अपने ही नेत्रों के समीप नाना प्रकार के परमाणुओं का चित्रण करने वाला हो, वह जो चित्रावली का उन्होंने निर्माण किया था।

उन्होंने कहा कि यदि एक एक परमाणु के साथ, एक एक यन्त्र का निर्माण हो जावे, तो आप की वाणी प्रत्येक यन्त्र में विराजमान हो जाएगी?उस समय भारद्वाज शिष्य कुम्भकरण ने कहा कि ऐसा नहीं। मैंने प्रायः गुरुओं से ऐसा पाया है, अनुसन्धान भी किया है कि यदि हम एक एक परमाणु पर यन्त्र की स्थिति कर देते हैं, भौतिक यंत्रों को निर्माणित करते हुए, तो वाणी जिस यन्त्र से सम्बन्धित होगी उसी यन्त्र में उसका प्रवाह होता चला जाएगा। ऋषियों ने ऐसा भी कहा है कि मानव के मस्तिष्क में जितनी नस नाड़ियां हैं, नाना लोक लोकांतरो में नाना तरंगो के परमाणु मानव के मस्तिष्क में आता हुआ उसी प्रकार के यंत्रों का निर्माण करके वही परमाणु वायु मण्डल में जब तरंगित कर देते हैं, विद्युत के आश्रित हो करके जब उस में वह परिणित हो जाते हैं, तो वही वाक्य यंत्रों में आरम्भ होने लगता है।

हम आज चन्द्रयान का निर्माण करते हैं, यह निर्माण तो बहुत ही सुन्दर है, परन्तु जो निर्माण हमारे ऋषि मुनि चाहते हैं, वह निर्माण नहीं हो पाता, वह सुन्दरता नहीं आ पाती। ऋषि मुनि अपने शिष्यों से ऐसा कहा करते थे। पवित्र हृदय, पवित्र मस्तिष्क, पवित्र वाणी के संयमद्वारा रचित यन्त्रद्वारा संसार को वश में किया जा सकता है। 03.08.1971

801 हृदय पवित्रता से अमोघ वाणी

एक समय मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से एक प्रश्न किया कि हे प्रभो! आपकी इस वाणी के प्रभाव में आ करके मृगराज भी मौन हो जाते हैं। हिंसक प्राणी हिंसा को त्याग देते हैं, इस वाणी का सम्बन्ध द्यु लौक से रहता है। क्या प्रभो! आप इस वाणी का यान बना करके लोक लोकान्तरों में रमण कर सकते हैं?

उस समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा थ कि हे पुत्रवत! मैं वाणी का यान बना लेता हूँ। इसका यान किस प्रकार बनता है। जब हृदय में विचार आता है, यह विचार मस्तक में जाता है, उसमें होता हुआ वाणी के मुखारबिन्द में आ जाता है, वहीएक यन्त्र बन गया। यदि हम हृदय के विचार को अगमता में ही, हृदय के विचार को जहाँ से वाणी का स्रोत चलता है, उस स्रोत को हम हृदय स्थल में ही, हृदय को पवित्र बनाना प्रारम्भ कर देते हैं। वाणी को वहीं मौन कर लेते है, उसको मस्तक में लाते हैं, उसमें जो तरंगे उत्पन्न होती हैं, उन तरंगों को जान करके, उनके ऊपर सवार हो करके, इस परमाणुवाद पर अपना इतना अधिपत्य कर लेते हैं, कि हिंसक परमाणु भी उस वाणी के परमाणु में आ करके निगला जाता है। ऐसा हो जाता है, जैसा अग्नि में अन्न तपा करके, उस अन्न में उपजाऊ शक्ति नहीं होती, इसी प्रकार

हमारे यहाँ एक अमोघ शक्ति हो जाती है। उस वाणी के वाहन के द्वारा हम संसार का वशीकरण कर लेते हैंहिंसक प्राणियों का वशीकरण कर लेते हैं। इसी प्रकार हमारा सर्वत्र का एक ही विचार रहता है, कि संसार का वशीकरण कर लेना चाहिए। संसार को एक महान ज्योति का दिग्दर्शन कराना चाहिए, जिससे चन्द्रयान का, मंगलयान का, शुक्रयान का, सब का एकीकरण होकर के समाज अपनेअपने कर्तव्य का पालन करने में, अपनीअपनी धाराओं में, अपने हृदय प्रकाश में रमण करता हुआ रात्रि का जो संदेह रहता है, वह समाप्त हो जाता है। कर्त्तव्य पारायण सबसे अधिक उर्ध्व गति को प्राप्त होता है। 03.08.1971

802 कर्तव्यवादी प्राणी की उर्ध्वा उड़ान

आज का मानव चन्द्रमा की यात्रा में कितना संलग्न हो करके, अपना कार्य कर रहा है। जब मानव समाज में कर्त्तव्यवाद आ जाता है तो चन्द्रयान की भी मानव को विचारधारा नहीं आती। क्योंकि कर्तव्यवादी जो प्राणी होता है, उसकी उड़ान चन्द्रमा से भी ऊर्ध्वागति को प्राप्त होती रहती है, और वह ऊर्ध्वागति वाली क्या है? वह उड़ान ऐसी विशाल होती है, जहाँ मेरी प्यारी माताओं के श्रृंगार की सुरक्षा होती है, वहाँ यह समाज, यह राष्ट्र, यह जगत विचित्रता में सदैव भ्रमण करता है।सदाचारमयी आत्मा की उन्नति के बिना सांसारिक विज्ञान की उन्नति से मानव पतित हो जाता है। 03.08.1971

803 सोमनाकृतिक यन्त्र

सोमना कृतिकनाम का एक यन्त्र होता है। सोमना कृतिकनाम के यन्त्र में यह विशेषता होती है कि वायु मण्डल में जल परमाणुओं को एकत्रित करने की उसमें शक्ति होती है। और जल तत्व के परमाणुओं को एकत्रित करके जो उसमें दूसरा भाग, जो यन्त्र का होता है, उसमें परमाणुओं को अपने में धारण करने की शक्ति होती हैऔर जो तृतीय भाग था, परन्तु उसमें वायु के परमाणु इसी प्रकार पांचों परमाणु, जब यन्त्रों के द्वारा एकत्रित किये जाते हैं, तो उनमें वह रेखा इस प्रकार बनती है, विद्युत कृतियों केद्वारा। उसमें लगभग अग्नि और वायु तत्व प्रधान अधिक होते हैं। वायु, अग्नि तत्व परमाणु अधिक होने के नाते, अन्तरिक्ष की उसमें पुट होती है। पुट होने के नाते उन तीनों परमाणुओं का मिश्रण होकर के और पार्थिवतत्व और अप्राह वैसी विद्युत लेकर उनका पात बना करके उस रेखा का अंगिकृत किया जाता है। 03.08.1971

804 परमपिता परमात्मा की विज्ञानशाला

आगे वह चन्द्रयान प्रकाश के लिए रमण करता है। एक योगी बन जाता है। परन्तु यह जो जगत है, यह परमपिता परमात्मा की विज्ञानशाला है और वैज्ञानिक बनने के लिए प्रत्येक मानव, जगत में आता है। वैज्ञानिक बनना चाहिए। अनुभव करते रहना चाहिए प्रत्येक प्राणी को। जो मानव एक ही प्रक्रिया में संलग्न रहता है, वह अपने विज्ञान से विमुखहो जाता है और जो मानव इसमें कुछ न कुछ अनुसन्धान करता रहता है, विचार विनिमय करता रहता है, वह विज्ञान में उर्ध्वागति को प्राप्त हो जाता है। हमारे यहाँ ऋषि मुनियों की इस सम्बन्ध में बहुत विशाल उड़ान रही है। परमात्मा के राष्ट्र के वैज्ञानिक और भौतिक विज्ञानवेता में अंतर वशीकरण का भी विज्ञान होता है, परमाणुवाद होता है, मन का जो विज्ञान है वह बहुत ही विशाल होता है क्योंकि परमपिता का विज्ञान बहुत ही सुन्दर है। 03.08.1971

805 प्राणी की उपस्थिति का सार्वभौम सिद्धांत

यह तो सार्वभौम सिद्धान्त है। रहा यह वाक्य कि प्राणी किस प्रकार से रहता है? यह आज का जगत आज का विज्ञान उसे नहीं जान पाये या न जान पाये। यह तो मैं आगे की घोषणा करना मेरे लिए सम्भव नहीं है। न मैं इसको उच्चारण कर सकता हूँ। परन्तु वर्तमान के लिए मैं अवश्य तत्पर हूँ, कि मानव जाने के लिए तत्पर है, वहाँ जा सकता हैं। तत्पर है वहाँ स्थान बनाने के लिए भी। वह सफल हो सकता है, और हो जाएगा। परन्तु यह जो जगत यह जो पृथ्वी मण्डल का प्राणीमात्र है प्रत्येक प्राणी मात्र के मन में मानो घृण की, द्वेष की और स्वार्थ की अग्नि ऐसी प्रदिप्त हो गई है जैसे यज्ञशाला में घृत की अग्नि प्रचंड हो जाती है। इस समाज का मुझे यदि कोई अप्रतरहता है तो यही रहता है कि वह मंगल मण्डल का प्राणी पृथ्वी मण्डल पर भ्रमण कर लेता है, समुद्रों की यात्रा कर लेता है। वहाँ का विज्ञान बहुत ही महान और पूर्णता में परिणित रहा है। वहाँ के विज्ञान की धाराएं विचित्रता में रमण करती रही है। ऐसेऐसे यन्त्र है, वह एक रात्रि दिवस में वहाँ का वैज्ञानिक, चन्द्रमा की क्या, चन्द्रमा के कक्ष से होता हुआ, पृथ्वी मण्डल का, समुद्रों की यात्रा करके, दूसरी रात्रि, दूसरे दिवस में अप्रेत को प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार का विज्ञान आज मुझे संसार का, इस प्रभु के जगत का दृष्टिपात आता है, तो मैं तो बड़ा आश्चर्यचकित होता रहता हूँ, कि आज का मानव पृथ्वीमण्डल की शैय्या को त्याग करके चन्द्रमा को किस प्रकार शैय्या बना रहा है। यह तो हमारे, सभी का सौभाग्य रहता है। 04.08.1971

806 शब्द की नित्यता

प्रायः भारद्वाज आश्रम में बनता रहा है। जिन यन्त्रों के द्वारामानव लाखों वर्षो के जो शब्द द्यौ लोक में रमण करते हैं उन शब्दों को ग्रहण

किया जाता है उन शब्दों को आकर्षित किया जाता है।
क्योंकि वह शब्द नित्य होता है। शब्द नष्ट नहीं होता। वह शब्द द्यौ लोक में रमण करता रहता है। जब द्यौलोक में रमण करता है तो यन्त्र बनाते। उसको ''शब्दावलीकेतुभूमक'' नाम का यन्त्र कहा जाता है। इस यन्त्र मेंऐसी विशेषता, ऐसे यन्त्र निर्धारित होते हैं जिनमें जैसे मानव के शरीर में प्रभु ने करोड़ों जन्मों के संस्कारों को स्मरण करने के लिए यन्त्रों का निर्माण किया गया है इसी प्रकार मानव उस यन्त्र को बनाता है उसको हृदय से बनाता है उसमें केवल वायु की तन्मात्राओं से उसमें विशेषता लाकर के, उन शब्दों को वास्तव में यन्त्रों में ग्रहण करने लगता है। हमें प्रायः यौगिक साहित्य में प्राप्त होता है। जिस प्रकार योगीजन यौगिक वाक्यों को वेद ध्वनि को हम मस्तिष्क में अध्ययन करते हैं, मस्तिष्क में उसको अनहद रूपों में हम उस ध्वनियों को उन स्वरों को अपने में लाने का प्रयास करते हैं तो हमारे करोड़ों जन्मों के संस्कार, वह जो किया हुआ कृत्य है, अनहद ध्वनि में उसका साक्षात्कार हो जाता है, आत्मा का वहाँ चित्रण होता है, आत्मा के प्रकाश में उनके चित्त में दिग्दर्शन कर लेते हैं, इसी प्रकार उसी के तुल्य हम भौतिक यन्त्र बनाते हैं तन्मात्राओं के द्वारा। तो तन्मात्राओं में वह दृष्टिपात आने लगता है। 04.08.1971

807 वेदान्त

उन्होंने कहा वेदान्त कहते हैं वेदों के रस को, वेदों के रस का नाम ही वेदान्त कहा जाता है।जिस प्रकार अन्तरिक्ष के रस का मन्थन किया जाता है, जिस प्रकार नाना प्रकार की वनस्पतियों के रसों को धारण करने वाला गौ नाम का पशु होता हैं, हमारे यहाँ गौ रस कहा जाता है। तुम वैज्ञानिक हो, गौ नाम पृथ्वी का है, इसका जो रस है, इनका जो मन्थन करने के पश्चात जब पृथ्वी को वैज्ञानिक मन्थन करता है, तो खनिज पदार्थ और खाद्य पदार्थों को उत्पन्न करता हैंवही तो इस गौ रूपी पृथ्वी का मधुमेह कहलाया जाता हैं, उसी को हमारे यहाँ घृत कहा जाता है। इसी प्रकार गौ नाम का पशु, जो नाना प्रकार के पदार्थों को, वनस्पतियों को पान करके, गौ रस देती है। यज्ञमान यज्ञ करता है। मेरी प्यारी माता अपने पुत्र को उसी गौ रस से पनपा रही है।वह गौ रस कहाँ से आता है? उसका सम्बन्ध अग्नि से है उसका सम्बन्ध जल से है, वायु से है, अन्तरिक्ष से है, महत्वत्व से लेकर द्यौ मण्डल तक उसका सम्बन्ध होता है। इसी प्रकार यह जो वेदान्त है यह वेदों का मन्थन किया हुआ रस है और यह मानव को कहाँ ले जाता है जो इसके अनुसार चलता है। तुम चन्द्रयान बना सकते हो, चन्द्रयान से ऊँचे मंगलयान बना सकते हो यहाँ ध्रुवयान भी बना सकते हो, परन्तुउस प्रभु केद्वार जाने वाला तुमने कोई यन्त्र का निर्माण अभी तक नहीं किया। हमें प्रभु के द्वार पर जाने के लिए, वह जो महान वैज्ञानिक है जिसका विज्ञान नितान्त है, उस महान वैज्ञानिक केद्वारा जाने का हमारेद्वारा कोई यन्त्र नहीं है।अगर केवल कोई यन्त्र है, तो उसकी वाणी है, उसका वेदान्त, उसका जो मन्थन किया हुआ गौ घृत है उसको अपनाते हुए, उस यन्त्र पर विराजमान हो करके, हम प्रभु केद्वार पर जा सकते हैं। क्योंकि माता अपने प्यारे पुत्र को उसी काल तक अपने हृदय में धारण करती है, जब तकवह इसके अनुकूल है और जब वह प्रतिकूल हो जाता है, प्रकृति के आवेशों में हो जाता है तो माता से दूर हो जाता है। माता अपनी प्यारी लोरियों में तभी उसको पान कराती है, जब तक वह लोरियों का अधिकारी है, उससे दूर चला जाता है, तो माता अपने हृदय से दूर कर देती है। इसी प्रकारप्रभु मानव को उसी काल में अपनाता है जब वह उसके अनुकूल अपने आचरणों को बना लेता है, उसके अनुकूल बन जाता है।
हमेंयह विचारना है, अनुसन्धान करना है और अनुसन्धान की वेदी पर जाना है।कि यह सर्वत्र जगत एक प्रकार की अनुसन्धानशाला है। गौ मेघ यज्ञ करने को ही शाला है। इस पर प्रत्येक मानव यज्ञ करता है, अनुसन्धान करता है। 23.08.1971
एक समय महाराजा घटोतकच्छ और भीम नेयह कहा था कि हम यहाँ एक यज्ञ करना चाहते हैं। उस समय महाराजा व्यास, सौमकेतु शीर्य और महर्षि कुम्भ, महर्षि जमदगनि, शाममुनि ऋषि, जिनको हमारे यहाँ सांख्य का वक्ता कपिल जी भी कहा जाता था। उनका जब आगमन हुआ, तो यहाँ सुन्दरसुन्दर यज्ञों के निर्माण हुए। ऐसे सुन्दर यज्ञ हुए कि 6 माह तक यज्ञ प्रारम्भ रहा। उसी यज्ञ को इस प्रकार की ज्ञानवैज्ञानिक सुगन्धियों में परिणित किया, जिन सुगन्धियों को, जिन परमाणुओं को, उन्होंने अपने में धारण करते हुए चन्द्रयान से ऊँचे मंगल यानों का निर्माण भी प्रायः इस यज्ञ के पश्चात किया गया। 23.08.1971

808 मानव की महान और पवित्र अवस्था

एक मानव चन्द्रमा के दर्शन कर रहा है, सूर्य के दर्शनों को कर रहा है, जो लाखों योजन की दूरी पर रहने वाला है, पृथ्वी मण्डल से और भी नाना प्रकार के लोकलोकांतरों का दिग्दर्शन कर रहा है। उसको क्रिया में लाने का प्रयास कर रहा है, यन्त्र बन रहा है, किरणों के आधार पर अपनी मनोभावना को, मन को, शरीर को तपा रहा है। तपाने के पश्चात, एक योगी बन करके सूर्य की आभा और किरणों के साथसाथ वह सूर्य मण्डल को अपने में साक्षात कर लेता है। चन्द्रमा को भी, मंगल को भी इसी प्रकार जो साक्षात कर लेता है, यन्त्रों के द्वारा, अथवा आत्मा की क्रिया के द्वारा। क्योंकि इनके भी नाना प्रकार के भेदन हमारे यहाँ माने गए हैं। विज्ञान के भी नाना प्रकार के भेदनों में आध्यात्मिक

विज्ञान और महत्वपूर्ण होता है। भौतिक विज्ञान महत्व दायक होता है। इनका भिन्नभिन्न स्वरूप हमारे समीप आ जाता है। जब हम विज्ञान के आधार पर अपने जीवन को निर्धारित कर लेते हैं, अथवा दोनों प्रकार का पक्ष हमारे समीप होता है, अर्थात एक पक्ष आत्मा का है, दूसरा पक्ष विज्ञान के परमाणुवाद का माना गया है। परन्तु दोनों में एक ही भिन्नता मानी गई है, कि जहाँ परमाणुवाद का अन्त करने का प्रश्न आता है, वहाँ से आध्यात्मिक विज्ञान, आत्मा का साक्षात्कार प्रारम्भ हो जाता है। हमें इन दोनों प्रक्रियाओं का विचार विनिमय करना है। ज्ञान और विज्ञान के आधार पर अपने जीवन को बनाना है। क्योंकि संसार में यह जितना भी जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है, तथा मानव किसी भी लोकलाकांतरों में विचरण करने वाला प्राणी क्यों न हो, पृथ्वी मण्डल का ही नहीं, मंगल का भी क्यों न हो, परन्तु प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या का जो जीवन है, वह आध्यात्मिकवादी और भौतिकवादीपरमाणुओं से गुथा हुआ माना गया है। अब इन दोनों प्रकार की प्रक्रियाओं को जानना एक हमारा मौलिक कर्त्तव्य कहलाया गया है। क्योंकि मानव अपने संक्षिप्त विचारों में संलग्न रहता है। अपनी उन महान सूक्ष्मसूक्ष्म मान और अपमान की प्रक्रियाओं में संलग्न रहता है। परन्तु हमारा जीवन मान अपमान में आ जाने पर कोई सुन्दर नहीं रहता है। हमारा मानव जीवन उस काल में सुन्दर बनता है, जब हम ज्ञान और विज्ञान के आधार पर अपने जीवन को निणर्यात्मक रूप में लाने का प्रयास करते हैं। परन्तु अपने उस महान ज्ञान और विज्ञान दोनों का साक्षात्कार कर लेते हैं। वही तो मानव की एक महान पवित्र अवस्था कहलाई गई हैं। 04.10.1971

809 विज्ञान

वेद में लोक लोकांतरों में जाने का विज्ञान वर्तमान है। हम अपने जीवन को एक महत्ता, की वेदी पर ले जाना चाहते हैं। जीवन को एक ऐसे ऊँचे आदर्श में ले जाना चाहते हैं, जहाँ धर्म और मानवता की रक्षा होती हो। क्योंकि चन्द्रमा में जाना, मंगल में जाना, शुक्र में जाना, और भी नाना प्रकार के लोकलोकाँतरों की यात्रा करना, यह हमारे वैदिक साहित्य में विद्या परम्परागतों से निहित है। 22.02.1972

यह जो वर्तमान का जगत है, इस वर्तमान के जगत में जहाँ मानव चन्द्रमा की घोषणा और यात्राएं कर रहा है जहाँ मंगलमय यान भ्रमण कर रहे है। जहाँ वायु मण्डल में नाना प्रकार के यानों का लोकों से रमण हो रहा है, मानव को नष्ट करने के लिए नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण हो रहा है। 23.02.1972

810 आनंदानुभव

प्रत्येक श्वास के द्वारा प्राणी को आनन्दित होना चाहिए। आनन्द कैसे प्राप्त होता है?जबवह अपने में धारण करता है, वह नाना वस्तुओं को धारण करता हुआ, एक वैज्ञानिक है। वह चन्द्रमा की यात्रा में जा रहा है। यात्रा करना चाहता है, उसको कितनी निष्ठा है, कितनी आस्था है, क्या उसे मृत्यु का भय नहीं है?

केवल यह विचार उसके मस्तिष्क है, यह निष्ठा है। कि मुझे चन्द्र यात्रा करना है, मुझे चन्द्रमा पर जाना है। यह नहीं विचारता कि विधुत मेंअग्नि की तरंगों में, यह जो तुम्हारा यन्त्र जा रहा है, वायु की तरंगों और अग्नि की तरंगों में ही, जो उड़ान उड़ रहा है, जिस प्राणी को मृत्यु का भय नहीं होता। उसे केवल एक निष्ठा होती है, कि वह कितना त्यागी, उदासीन हो गयाहै, इस जगत से, इसी प्रकार उसको वास्तविक उदासीन नहीं कहते। उदासीन जो महापुरुष होते हैंवे चन्द्रमा की, धातुओं का यन्त्र बनाते हैं, परन्तु जो वास्तविक उदासीन होते हैं, आत्मिकउदासीन होते हैं, वह मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार का यन्त्र बनाकर के लोक लोकान्तरों में विराजमान रहते हैं। 11.03.1972

811 नौ कोण वाली यज्ञशाला

तो महर्षि भारद्वाज मुनि के कथनानुसार उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था। वह प्रातःकाल में यज्ञ करते, यज्ञ में जब स्वाहा करते थे, तो वे 284 प्रकार की औषधियों को एकत्रित करके सामग्री बनाते थे। और वह जो साकल्य था, वनस्पतियां थीं, किसी में अग्नि प्रधान, किसी में वायु प्रधान, किसी में जल प्रधान, औषधियों में भी इन्हीं में से किन्हीं तत्वों की प्रधानता होती है। परन्तु उनके द्वारा जब वह साकल्य बना करके आहुति देते थे। उनके यहाँ लगभग 9 कोण वाली यज्ञशाला थी। जो 9 कोण की यज्ञशाला होती है उस 9 कोण वाली यज्ञशाला में सुगंधित साकल्य प्रदान किया जाता था। उससे सुगंधि उत्पन्न होती थी। उस सुगंधियों को, उस परमाणु को, उन यंत्रों में लेते थे। तब उनसे वे यन्त्र में, उन धातुओं को एकत्रित करके, उसमें विराजमान हो करके, वह मंगल की यात्रा करते थे। मंगल की यात्रा करने वाले कुम्भकरण जैसे वैज्ञानिक हमारे यहाँ थे।

एक समय महर्षि भारद्वाज की आज्ञा के अनुसार वे यन्त्र, में विराजमान हो करके, जब उन्होंने उड़ान उड़नी प्रारम्भ की, तो ऐसा कहा जाता है, वह यन्त्र इतना शक्तिशाली था, कि दो रात्रि और दो दिवस में इस पृथ्वी मण्डल से यह मंगल मण्डल में उसका वास हो गया। वहाँ प्राणी रहते हैं। वहाँ मानव रहते हैं। 11.03.1972

812 आधुनिक काल का जो यन्त्र है

वह मंगल केद्वार पर जाने के लिए तत्पर है। मंगल के मार्ग में इतने पृथ्वी के रज आते हैं क्या यन्त्र को पार करना बड़ा दुश्कर है। परन्तु मैंने एक वाक्य कहाक्या संसार में यह विज्ञान परम्परा से बुद्धिमानों के मस्तिष्कों में रहता है। इस विज्ञान को जानना हमाराजन्मसिद्ध अधिकार है। क्योंकि वैदिक साहित्य में वैदिक विचार में वैदिक मन्त्रों में उनकी व्याख्या ही विज्ञान है। 11.03.1972

महर्षि भारद्वाज मुनि आश्रम में पुलस्त्य ऋषि महाराज के जो पौत्र हैं, वे मंगल की यात्रा करने के लिए तत्पर रहते थे। इनका विचार, अनुसंधान प्रायः चलता रहता 11.03.1972

त्रेता के काल में महर्षि भारद्वाज मुनि ने अपने जीवन में और इनके शिष्यागणों ने छत्तीस लोकों में अपने यन्त्रों के द्वारा यातायात को बनाया। छत्तीस लोक इस प्रकार के हैं जो सूर्य के अन्तर्गत रहने वाले हैं। जैसे मंगल है, जैसे शनि है, बुध है इसी प्रकार जैसे रोहिणी है, आभूषणम् है, यह नाना प्रकार के लोक हैं, जो सूर्य के अन्तर्गत रहते हैं। इन छत्तीस लोकों में उनका यातायात रहा है। एक चन्द्र मण्डल ही नहीं और भी नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों में उनकी गति रहती थी। केवल वे अनुसन्धान करते रहते थे। परमाणु, महापरमाणु, त्रिस्रेणु, चतुस्रेणु, पंचस्रेणु, षडस्रेणु, सप्तस्रेणु, अष्टस्रेणु इसी प्रकार छत्तीस प्रकार के जो परमाणु हैं, उनको वे जानते रहते थे। 11.03.1972

813 महत्ततत्व की सूर्य में ओत प्रोतता

चाक्राणि ने कहा प्रभु! मैं जानना चाहती हूँ कि यह महत्ततत्व किसमें ओतप्रोत रहता है? उन्होंने कहा कि यह जो महत्ततत्व है यह सूर्य लोकों में ओतप्रोत हो जाता है। क्योंकि सूर्य लोक ही ऐसे लोक हैं, जिसमें महत्ततत्व भी प्रतिष्ठित हो जाते हैं, उसी की आभा से यह जगत अपना कार्य कर रहा है। निरन्तर गति से भ्रमण हो रहा है, गतिशील हो रहा है। यह जगतसूर्य लोकों में इसकी प्रतिष्ठा रहती है। 16.03.1972

814 सूर्य की प्रतिष्ठा चन्द्रमा में

उस समय चाक्राणि गार्गी ने कहा, भगवन्! इन सूर्य लोकों की प्रतिष्ठा क्या है? ऋषि ने कहा, हे देवी! इन सूर्य लोकों की प्रतिष्ठा यह चन्द्र मण्डल हैं। क्योंकि चन्द्रमा इसके प्रकाश से प्रकाशित होता है। इसकी आभा से आभायित होता है, इसीलिए इसकी प्रतिष्ठा इसमें मानी जाती है। ये जो चन्द्र मण्डल हैं, ये ग्रह कहलाए जाते हैं। इसमें मानव परम्परागतों से भ्रमण करता चला आया है। जिन लोकों में यह उपग्रह हैं, ये ग्रह कहलाए जाते हैं। ग्रह का अभिप्राय है जिस लोक में प्राणी विचरण करते हैं। जिसमें गृह का निर्माण हो सकता हो, उसी को ग्रह कहा जाता है। जैसे चन्द्र ग्रह है, उसी प्रकार मंगल ग्रह है। यह जो चन्द्र मण्डल है, चन्द्र जो ग्रह है, पार्थिव तत्व वाला प्राणी वहाँ विचरण कर सकता है, जैसे पृथ्वी पर प्राणी रहते हैं, इसी प्रकार मंगल पर प्राणी रहते हैं, जैसे मंगल पर इसी प्रकार आरूणि मण्डल पर भी रहते हैं, परन्तु यह जो चन्द्र मण्डल है इसमें जल और वायु तत्त्वप्रधान प्राणी विचरण करते हैं। परन्तु उनके वहाँ ग्रह होते है, सुन्दर ग्रह होते हैं। हम चन्द्रमा की उपासना करें। चन्द्रमा में ही सूर्य लोकों की प्रतिष्ठा रहती है। 16.03.1972

815 विभिन्न लोक लोकान्तर

उस समयऋषि ने कहाचन्द्र मण्डलों की प्रतिष्ठा गन्धर्व लोकों में हैं। ऋषि कन्या बोलीप्रभु! यह चन्द्र मण्डल किसमें प्रतिष्ठित रहते हैं?उन्होंने कहा कि यह जो चन्द्र मण्डल हैं, यह इस महान गन्धर्व लोकों में ओतप्रोत रहते हैं। गन्धर्व किसे कहा जाता है? गन्धर्व एक आभा है, गन्धर्व एक लोक का नाम भी है। परन्तु यहाँ आभा का नाम गन्धर्व कहा गया है। जिस आभा में, जिस प्रतिभा में निरन्तर गति से यह लोक लोकान्तर गतिशील हो रहे हैं, गति कर रहे हैं, गतिमान हो रहे हैं। वह गन्धर्व ही नाना प्रकार के लोक लोकान्तर, उस गन्धर्व लोकों की आभा मेंप्रतिष्ठित रहतें हैं। जैसे कहा है गन्धर्व मण्डल में ही, गन्धर्व तरंग में ही लोकों की गणना भी की जाती है। कहा जाता है कि यह मंगल है, यह शनि है, यह सूर्य है, यह चन्द्र है, यह वृहस्पति है, यह आरूणि है, यह सप्त ऋषि मण्डल है, यह वशिष्ठ है, यह अरून्धति है, यह सोमभानु है, यह सुरीचि है, यह श्रणकेतु है, यह जेठाय है, यह ध्रुव है, यह अंचग है, यह मचंग है, यह स्वाभकेतु हैयह त्रेणि है, यह आभ्याम है, यह स्वाति है, यह कृति है, यह पुष्पाय नक्षत्र है, यह जेठकेतु है, यह रूहानकेतु है।ये नाना प्रकार के लोकलोकान्त उस गन्धर्व आभा में रमण कर रहे हैं। 16.03.1972

816 इंद्र लोक

चन्द्र लोकों की प्रतिष्ठा गन्धर्व लोकों में रहती है।आज हमें गन्धर्व लोकों को जानना चाहिये। उस समय कन्या बोलीहे प्रभु! ये जो गन्धर्व लोक हैं, इन की प्रतिष्ठा क्या है संसार में? उन्होंने कहादेवी! इनकी प्रतिष्ठा तो इन्द्र लोक कहलाए जाते हैं। इन्द्र उसे कहते हैं जिसमें गन्धर्व आभा भी समाहित होती हो। जहाँ ऋत और सत का समन्वय हो करके वह इन्द्र लोकों में समाहित हो जाती है। उस आभा का नाम इन्द्र कहा गया है। आज हमें इन्द्र लोकों को जानना चाहिए। इन्द्र किसे कहते हैं? इन्द्र एक आभा है, जिस आभा में संसार का सौर मण्डल और आकाशगंगाएं, जिसके गर्भ में विचरण करती है। उसको इन्द्र कहा जाता है।

इन्द्र लोकों की प्रतिष्ठा प्रजापति में है। उन्होंने कहाभगवन्! मैं यह जानता चाहती हूँ, कि यह इन्द्र लोकों की प्रतिष्ठा क्या है? उन्होंने कहा

कि यह जो इन्द्र लोक है, यह प्रजापति में प्रतिष्ठित हो जाते है? इसलिए प्रजापति को विचारना चाहिए। वह जो प्रजापति है वही संसार का प्रभुत्व है, आनन्दवत है, स्वानकेतु है। आज हमें उसे भलीभाँति अप्रतों से जान लेना चाहिए। वह जो प्रजापति है वह प्रजाओं का स्वामी है। इसलिए हमें इस प्रजापति को जानना चाहिए। 25.02.1972।

817 प्रजापति

वह जो प्रजापति है, जिसमें सर्वत्र जगत समाहित हो जाता है, सर्वत्र प्रजाएं समाहित रहती हैं। वह प्रजापति महामंगलेश्वर कहलाया गया है। सामभ्रम कहलाया गया है।आज हमें उसकी उपासना करनी चाहिए। इतने में चाक्राणि ने कहाभगवन! यह प्रजापति की प्रतिष्ठा क्या है? उन्होंने कहादेवी! प्रजापति की जो प्रतिष्ठा है, वह यज्ञ में मानी गई है। 25.02.1972।

818 यज्ञ

यज्ञ का अभिप्राय है कि जितना भी शुभ कर्म है, शुभ आभा है उन सभी का नाम यज्ञ कहलाया गया है। वह यज्ञमय ज्योति है आनन्दवत है वह देवी यज्ञ कहलाया गया है। उसे यज्ञ कहते हैं।

यह जितना भी शुभ कर्म है, वह सर्वत्र है। आज हमें यज्ञ करना चाहिए। वह मानव भी कुछ नहीं होता। जो यज्ञ से रहित रहता है। वह परमात्मा के राष्ट्र में न होने के तुल्य माना गया है।

उस समयऋषि कन्या बोली कि प्रभु मैं यज्ञ की प्रतिष्ठा को जानना चाहती हूँ। 25 02 1972।

819 संकल्प से संसार

उन्होंने कहा यज्ञ की जो प्रतिष्ठा है वह दक्षिणा है।आज हमें दक्षिणा देनी चाहिए। दक्षिणा क्या है? उन्होंने कहाहूत और प्रहूत का नाम यज्ञमय दक्षिणा है। दक्षिणा नाम संकल्प का है। यह जो सर्वत्र जगत है, यह एक संकल्प मात्र है।पतिपत्नी संकल्प के नाते ही रहते हैं। ऋषि मुनियों ने कहा है, एक संकल्प ही है जो संसार को स्थिर किए रहता है।

जिस प्रकार परमात्मा के सन्निधान मात्र से ही सृष्टि कर्म में गति प्रारम्भ हो जाती है। पंच महापरमाणुओं में गति प्रारम्भ हो जाती है स्वयं अपनी अपनी परिधि में प्रत्येक परमाणु रमण करने लगता है। वही परमाणु इस संसार की रचना करता है। आज जो रचना हमें दृष्टिपात आ रही है, वह रचना सूर्य के रूप में हो, मंगल के रूप में हो, चन्द्रमा के रूप में हो, ध्रुव, बृहस्पति और शनि के रूपों में हो, बुध और शुक्र के रूप में हो चाहे वह नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों के रूपों में क्यों न हो, सप्त ऋषि मण्डल में ही क्यों न हो। वह सर्वत्र रचना केवल प्रभु के और प्रकृति के चित्त के सन्निधान मात्र की एक सुन्दर रचना दृष्टिपात आती है। 25.02.1972।

820 संसार में विभाजनवाद

जिस प्रकारमानव के शरीर में चित्त के ही गतिम न होने पर संसार और नाना प्रकार का एक सुन्दर कुटुम्ब बन जाता है। प्रवृत्तियों का वृक्ष बन जाता है। उन प्रवृत्तियों के वृक्ष बन जाने के पश्चात मानवता की एक सुन्दर रचना होने लगती है। उस रचना का जो मान है उसकी जो प्रतिभा है, वह एक मानवता में ही नहीं, वह यौगिकता में परिणत होने लगती है। यह जो भी कुछ रचना है अथवा जो रूपों में है अथवा जो ब्रह्माण्ड और लोकलोकान्तरों के रूपों में वह सर्व रचना केवल प्रभु की चेतना और प्रकृति के चित्त के ही सन्निधान मात्र से ही संसार विभाजित होता हुआ दृष्टिपात हो रहा है। 25.02.1972।

821 चित्त में संस्कार

क्योंकि मानव का तो जन्मसिद्ध अधिकार है, कि वह अनुसन्धान की वेदी पर विराजमान है, प्रत्येक वस्तु का अनुसन्धान करता रहता है। प्रायः उसमें जिस प्रकार की बुद्धि होती है, उसी प्रकार का उसका अनुभव होता है। परन्तु चित्त में जैसा संस्कार होता है, चित्त में जैसे अंकुर होते हैं, उसके अनुकूल ही इस बाह्य जगत में भी प्रायः अनुसन्धान करने लगता है। यह तो मानव का जन्मसिद्ध अधिकार है। चाहे वह मानव इस पृथ्वी मण्डल पर विचरण करने वाला हो अथवा वह मंगल में हो, शनि में हो, चन्द्र में सप्तर्षि मण्डल में हो, रोहिणी नक्षत्र में क्यों न हो, पुष्य में, ज्येष्ठा आदि नक्षत्रों में ही क्यों न हो। अनुसन्धान करना उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। क्योंकि इसकी प्रवृति में यह स्वभाव है। 25.02.1972।

822 सूक्ष्म नाड़ियाँ

प्रभु ने जब मानव के शरीर का निर्माण किया, तो मानव के ब्रह्मरन्ध्र में जो सूक्ष्म वाहक नाड़ियां है, उन सूक्ष्म वाहक नाड़ियों का सम्बन्ध प्रायः सूक्ष्म वायु की धाराओं से होता है, सूक्ष्म अग्नि की धाराओं से होता है, सूक्ष्म पृथ्वी की धाराओं से होता है, सूक्ष्म जल की धाराओं से होता है और उनका सम्बन्ध लोकलोकान्तरों से भी होता है। वे जो धाराएं हैं, वे केवल कुछ संक्षिप्त रूपों से हैं और जब मानव अनुसन्धान करने लगता है, तो वही नाड़ी ऊर्ध्व रूप धारण करके मानव के मस्तिष्क में उसी प्रकार का चमत्कार, उसी प्रकार की चेतना जागरुक होने

लगती है। वह जो चेतना हैजैसा हमने बहुत पूर्व काल में कहा यदि मानव के इस चित्र मण्डल में यदि चन्द्रमा की कोई स्मृति नहीं होगी, चन्द्रमा से सम्बन्ध जोड़ने वाली वाहक नाड़ी नहीं होगी, तोचन्द्रमा की हम जानकारी प्राप्त नहीं कर सकते। हम उसका विभाजन कर ही नहीं सकते। क्योंकि विभाजन जितना भी होता है, वह मन और प्राणदोनों की सहकारिता से हो प्रायः प्राप्त होता रहता है। 25.02.1972।

823 विज्ञान मस्तिष्क का विचार

आज जितना भी मानव अनुसन्धान कर सकता है, जो वैदिक साहित्य में प्रायः जिसका विश्लेषण प्राप्त होता है। उसकी विचारधारा उसमें धर्म की प्रतिभा ओतप्रोत होती है। उसी का नाम वैदिकता कहा जाता है। वैदिकता का अभिप्राय यह कि आज जो भी हमारा जीवन है अथवा कर्मकाण्ड है, वह वेद के आधार पर जब होता है, तो वह इतना सुन्दर होना चाहिए, इतना पवित्र होना चाहिए, इतना शान्त होना चाहिए, क्रियात्मक जीवन वाला होना चाहिए, जिससे उस कर्मकांड में, उस क्रिया में, विज्ञान निहित होता हो। क्योंकि विज्ञान किसी की सम्पदा नहीं है, विज्ञान कोई रूढ़ि नहीं है, विज्ञान तो एक सामान्य विचार है, एक मस्तिष्क का विचार है। उसको लाने के लिए सदैव मानव को प्रयास करना चाहिए।

प्रायः जैसा मेरे प्यारे ने इससे पूर्व शब्दों में उच्चारण किया कि वैज्ञानिक अनुसन्धान कर रहे हैं कि जहाँ चन्द्रमा का क्या, मंगल इत्यादि सूर्य और वृहस्पति और भी नाना मण्डलों की जहाँ परिधियों कीप्रक्रियाएं, एक सामान्यता में परिणत हो जाती हैं। वहाँ एक स्थली बनाने का विचार रहता है। उस विचार में मानव प्रायः अनुसन्धान करता ही रहता है। क्योंकि नाना प्रकार की स्थली बन तो पाती नहीं।

विचार करना तो मानव का स्वभाव बना रहता है। क्योंकि जहाँ एक दूसरे मण्डल की आकर्षण शक्ति है। एक स्थान ऐसा है वायु मण्डल में जिसको हम सौर मण्डल कहा करते हैं। एक स्थल ऐसा है जहाँ तीन सौर मण्डलों की परिधिउनकी सीमा प्रायः प्राप्त होती हैं। वहाँ कोई भी वस्तु यदि निर्धारित की जाए, तो वह स्थिर हो जाती है। क्योंकि उसमें एक दूसरे में आकर्षण शक्ति है। 25.02.1972।

824 विष्णु राष्ट्र

हमारे यहाँ विष्णु राष्ट्र का प्रायः वर्णन आता रहता है। विष्णु उसे कहतेहैं, जिस राजा के राष्ट्र में विज्ञान पराकाष्ठा पर हो। जहाँ वैज्ञानिक पुरुष हों, वैज्ञानिक पुरुष अनुसन्धान करने वाले हों, गरुड़ इत्यादि के रूप में प्रायः वैज्ञानिकों का वर्णनआता रहता है। 25.02.1972।

825 भगवान कृष्ण महाराजा धृतराष्ट्र के द्वार पर

महाभारत के काल में भगवान कृष्ण महाराजा धृतराष्ट्र के द्वार पर पहुंचे, तो उन्होंने कहामहाराज! कुछ चाहते हो? उन्होंने कहाहे कृष्ण! मैं और कुछ नहीं चाहता हूँ। परन्तु एक ऐसा यन्त्र चाहता हूँ, जिससेमहाभारत के संग्राम को, मैं स्वयं दृष्टिपात कर सकूं। उन्होंने कहा आप तो प्रज्ञा चक्षुहैं ?'' उन्होंने कहा मेरे महामन्त्री संजय है, वे मुझे प्रकट कराते रहेंगे, ऐसा मैं चाहता हूँ।तब उन्होंने वह चित्रावली दी, जिसके द्वारा कुरुक्षेत्र में जो प्रातः संग्राम होता रहता था, उसका चित्रण प्रातः प्रायः आता रहता था, और संजय उससे दृष्टिपात करके अपनी वाणी से उच्चारण करते रहते थे। 25.02.1972।

826 रूढ़ि विहीन वैदिक साहित्य

इसी प्रकार भगवान राम इत्यादि के कालों में भी, और उससे पुरातन काल में भी, तथा उसके मध्य के काल में भी, ऐसा प्रायः जगत में चलता रहा है। क्योंकि यह अनुसन्धान तो मानव के लिए सहजहै, और परम्परा से ही मानव इस पर प्रायः अनुसन्धान करता आया है। वैदिक साहित्य में रूढ़ि नहीं है। जहाँ रूढ़ि नहीं होती, वह सामान्य धर्म, सामान्य विज्ञान, व्यापक विद्या तथा व्यापक ही धर्म होता है। इसीलिए हमारे यहाँ वेद की प्रशंसा ऋषि मुनियों ने, महान तपस्वियों ने की है। क्यों की हैं? क्योंकि उसमें से ऐसी वस्तुओं को अपने में निर्धारित किया है, जिस पर वे जितना भी जितना अनुसन्धान करें, उतना ही उनका मस्तिष्क विकसित होता चला जाता है। प्रकाशमान होता चला जाता है। 25.02.1972।

827 महाभारत काल में छाया

एक समय महाभारत के काल मेंमहर्षि व्यास मुनि महाराज, भास्कराचार्य, स्वाति ऋषि, ये तीनों विराजमान थे। उस काल में भी प्रायः ऐसी छाया उनके मस्तिष्कों में आई। उनकी विज्ञानशाला में ऐसी छाया आई थी। मानव के मस्तिष्क में जो ब्रह्मरन्ध्र हैं। जिस प्रकार की प्रकृति होती है उसी प्रकार का ब्रह्मरन्ध्र में एक यन्त्र होता है। जिसको हमारे यहाँ सहस्रारयन्त्रकहा जाता है अथवा उसको सहस्रार चक्र भी कहते हैं। यौगिकता में उसको सहस्रार चक्र भी कहते हैं। जितना भी योगी सूक्ष्म होता है उतना ही अनुसन्धानवेत्ता होता है। ब्रह्मरन्ध्र में इडा, पिंगला, सुषुम्ना ये तीन नाड़ियां हैं इनमें से बहत्तरबहत्तर प्रकार की धाराओं का जन्म होता रहता है और बहत्तर वीं धारा जो होती है, उसमें से निन्यानवेनिन्यानवे प्रकार की धाराओं का जन्म होता है। उन धाराओं का सम्बन्ध इस सर्वत्र प्रकृति से होता है। परन्तु वह जो प्रकृति है, उस प्रकृति का जैसा भी वातावरण होता है, जैसी भी प्रकृति की गति होती है, उसी प्रकार की छाया, उस योगी के मस्तिष्क में प्रायः आ

जाती है। इसी प्रकार भौतिक विज्ञानवेत्ता उसी के आधृतहोते हुए एक यन्त्र बनाते हैं। वह यन्त्र वायु की तरंगों का यन्त्र होता है। वायु और अग्नि की तरंगों का मिश्रण करते हैं, जैसे एक भाग तो वायु के परमाणुओं का हो, और उसका दो गुणा भाग अग्नि के परमाणुओं का हो, और उससे सौ गुणा भाग आपोकी धाराओं का होता है। और जब तीनों की पुट लगा करती है, तो कुछ सूक्ष्मसा इस पृथ्वी का भी मिश्रण होता है।

तो ऐसे इन परमाणुओं के समूह से जब यान बनता है तो प्रकृति में जैसी गति होती हैक्योंकि वह यान इतना ऊर्ध्वागति वाला बनता है, उसकी लगभग सूर्य मण्डल का जो सौर मण्डल है, उस सौर मण्डल की जितनी गति होती है, यन्त्र उस सौर मण्डल की गति की छाया, उस यन्त्र में आ जाती है। वह जो छाया है, उसी छाया के आधार पर वैज्ञानिक अपने में अनुमानित हो जाते हैं।उसकी छाया से वे जान लेते हैं कि चन्द्रमा में क्या हो रहा है? मंगल में क्या हो रहा है? स्वाति नक्षत्र में क्या हो रहा है? और बृहस्पति और शुक्र इत्यादि मण्डलों में क्या हो रहा है। इसी प्रकार वह सूर्य मण्डल तक की आभा को जानने के लिए तत्पर हो जाते हैं। और उन आभाओं के द्वारा ही उनका विज्ञान विकसित होता रहता है। क्योंकि बहुतसा विज्ञान इस प्रकार का है। तीन सौर मण्डलों की छाया उसमें आती रहती हैं।

हमारे यहाँ इडा, पिंगला, सुषुम्णा तीन प्रकार की नाड़ियां हैं। और उन नाड़ियों में दो सौत दो सौ तरंगें तरंगित होती रहतीहैं। क्योंकि वे धाराएं, वे तरंगें इडा, पिंगला, सुषुम्णा नाम की नाड़ियों के द्वारा आती रहती हैं। और वे जो तरंगें हैं, और उनसे मिलान करती हुई योगी को सर्वत्र ब्रह्माण्ड उसके लोकलोकान्तरों की प्रतीत होने लगती है। उसका मान उसके समीप आने लगता है। 25.02.1972।

828 गौ घृत से वायु मण्डल का शोधन

इस दूषित वायु मण्डल को किस प्रकार हम शोधन कर सकते हैं। हमारे ऋषि मुनि पुरातन काल में उसका शोधन जानते थे और वह शोधन प्रायःऔर भीलोकलोकान्तरों में है। हमारे पृथ्वी मण्डल पर भी ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में रहा है। उन्होंने घृत के द्वारा याग करके द्यौलोक को भर दिया और याग करने के पश्चात उन्होंने सृष्टि याग किया और परमाणु याग किया।उसके पश्चात उसी प्रकार के मन्त्र, जो ऋग्वेद में प्रायः प्राप्त होते रहते हैं। उन मन्त्रों का पठन पाठन करने से ही वह दूषित वातावरण समाप्त हो गया।इसी प्रकार आज लोकलोकान्तरों में भी याग की प्रथा मानी जाती है। 25.02.1972।

829 चित्रावली का सदुपयोग

पूर्व काल के विज्ञान का सदुपयोग क्या था? एक चित्रावली बनाई, उसमें माताओं का चरित्र, ऋषि मुनियों का चरित्र, ब्रह्मचर्य का महत्व, सात्विक, राष्ट्रीयता की विचारधारा और वैदिकता के मन्त्रार्थ, जब उसयन्त्र से प्रसारित किए जाते तो सर्वत्र राष्ट्र स्वर्ग के तुल्य दृष्टिपात होता था। आज का समाज, आज का युवक, आधुनिक यन्त्रों मेंमेरी पुत्रियों के चित्रों को देखने में मग्न दृष्टिपात होता है। यह क्या है? यह केवल उनके जीवन की प्रतिभा उनके जीवन के सुकृतको हनन करने वाला विज्ञान है। यह विज्ञान वास्तव में परम्परा से इस समाज में चला आ रहा है। यह विज्ञान तो प्राय इस जगत में चला आ रहा है।

महर्षि धन्वन्तरि जी, महर्षि भट्टाचार्य, श्री भट्ट, अश्विनी कुमारों और दधीचि की जब आयुर्वेद के ऊपर लेखनी बद्ध होती रहती थी, तो प्रायः वह आयुर्वेद का भक्ष्यअभक्ष्य युवक समाज के समीप आता उसकी शिक्षालयों में शिक्षा प्रदान की जाती। 25.02.1972।

830 आहार व्यवहार की पवित्रता

सबसे प्रथम आहार और व्यवहार पर ही बल दिया जाता। आहार और व्यवहार पर बल देना मानव के लिए बहुत अनिवार्य है। आज मेरी पुत्रियां, मेरी पवित्र माताएंजिनका जीवन सदैव पवित्रता में परिणत रहता। 25.02.1972।

831 लंका की लुप्तता

जिस काल में विज्ञान होता है उसी काल में यह समाज विनाश को प्राप्त होता है। राजा रावण का काल विज्ञान में कितना उन्नत था, परन्तु जिस काल में विज्ञान के दुरुपयोग होना प्रारम्भ हुआ, उसी काल में भयंकर संग्राम हो गया, उसी काल में विनाश को प्राप्त हो गया। राजा रावण के यहाँकितना विज्ञान था?समुद्र कीतरंगें भी इतनी उद्वेलित नहीं थी, जितनी आज वर्तमान में है। इस भारत भूमि का और लंका की इतनी दूरी नहीं थी। समुद्रकुछ समीप को आ गया है। पहली लंका कुछ समुद्रों में लुप्त हो गई। उस काल के पश्चात क्योंकि जहाँ लगभग नौ सौ लाख, ग्यारह वर्ष(911) हो गए। न जाने समुद्र कितने समय आया, कितने समय चला गया। उसकी तरंगों में कितना लुप्त हो गया, कितना प्रकट हो गया। यह नहीं कहा जा सकता। इसकी बहुत ही कम दूरी थी। जहाँ नल और नील दो वैज्ञानिकों ने सेतुबन्ध का निर्माण किया। निर्माण करने के पश्चात रावण को सर्वत्र यह प्रतीत हो रहा था कि राम चला आ रहा है, तेरे से संग्राम करने के लिए। परन्तु उनके जो विधाताविभीषण थे, उनका राम से मिलाव था। राम से स्नेह करने वले थे और वह उस दुःखद रावण के व्यक्तित्व को स्वीकार नहीं कर पाते थे। उन्होंने रावण को पहले से अपनी वार्ता से एक समय में नियत किए हुए थे, परन्तु जब रावण ने उनको पदों से ठुकराया, उसी

समय उन्होंने राम से आकर प्रीति की। परिणाम जो हुआ, वह सबको प्रतीत ही है। तथा नल और नील इतने वैज्ञानिक थे उन्होंने सेतुबन्ध, बांध का निर्माण करने के पश्चात, उसी से ही आगमन होने लगा। तब लंका इतनी दूर नहीं थी। समुद्र इतना लम्बा नहीं था। लंकाद्वीप बहुत ही निकट था। समुद्र की दूरी केवल ऐसी दूरी थी, जिस पर सेतुबन्ध का निर्माण हो सकता था। 25.02.1972।

832 विज्ञान से गौरव

आज का वैज्ञानिक क्या कह रहा है?किसूर्य मण्डल में इस प्रकार के गढेलेआ गए हैं, जो इस समाज में, राष्ट्र में, पृथ्वी मण्डल को दूषित बना सकते हैं। परन्तुआज के वैज्ञानिकों ने अच्छी प्रकार अनुसन्धान उस पर नहीं किया। उसकी दूषित छाया बुध और शनि पर जा पहुंची है। इस पृथ्वी मण्डल पर प्रभाव हो सकता है, परन्तु सूक्ष्म आधुनिक काल अपने में गौरव और अभिमान स्वीकार करता है। करना भी चाहिए। आज का विज्ञान चन्द्रमा में चला गया, मंगल के निकट चला गया और भी नाना प्रकार के यानों का निर्माण और विचार होता रहता है। मुझे इससे बड़ी प्रसन्नता है। परन्तु जहाँ प्रसन्नता है, वहाँ ऊँचा विचार भी होना चाहिए। आहार और व्यवहार में पवित्रता और विज्ञान में उन यन्त्रों का निर्माण होना चाहिए। उन यन्त्रों की प्रतिभा होनी चाहिए, जिन यन्त्रों से राष्ट्र और समाज को ऊँचा बनाया जाए। वाणी को एक सूत्र में बांधने का, संसार में एक सूत्र में लाने का प्रयास किया जाए। ऐसा भी यान बनाने के लिए आज का विज्ञान तत्पर है। 25.02.1972।

833 पूर्व वाणी संग्रह यन्त्र

जो महाभारत के काल में भगवान् कृष्ण और अर्जुन का जो संवाद था, वायु मण्डल में जो विचरण कर रहा है, उसको हम यन्त्रों के द्वारा लाना चाहते हैं। इस प्रकार का विज्ञान भी है। वह विज्ञान एक महान है। क्योंकि वाणी पर अनुसन्धान करने से ही, वायु पर अनुसन्धान करना, वायु की रश्मियोंको, अग्नि की रश्मियों को, इन दोनों का समावेश किया जाता है। एक वैज्ञानिक यन्त्र बनाता है और वह यन्त्र बनाने से पूर्व अपना लक्ष्य निर्धारित करता है कि मैं वायुमण्डल में, अन्तरिक्ष में, जो शब्द भ्रमण कर रहे हैं, मै उन शब्दों को एक यन्त्र में लाना चाहता हूँ। भौतिक विज्ञान में लाना चाहता हूँ। क्योंकि वे शब्द तो प्रकृति के गर्भ में रमण कर रहे हैं और प्रकृति के गर्भ में जो वस्तु रमण करती है, प्रायः हम उसक एकत्रित कर सकते हैं। जैसे एक मानव यन्त्रों का निर्माण करता है, शब्दों को ग्रहण करने के लिए, अन्तरिक्ष में जो परमाणु भ्रमण कर रहे हैं अथवा सूर्य की रश्मियां हैं और सूर्य की रश्मियों से भी एक सूक्ष्म रश्मियां होती हैं, जो जेठायनक्षत्र की रश्मियां होती हैं। उन रश्मियों को और सूर्य की किरणों के द्वारा जो रश्मियां हैं, उन दोनों रश्मियों को एकाग्र करते हैं, उनको एक यन्त्र में स्थिर करते हैं, क्योंकि उनकी एक स्थली बनाते हैं, पृथ्वी की पुट लगा करके और उसमें से प्राण वायु और प्राण के नाश करने वाली वायु, दोनों का हम मिलान करते हैं और मिलान करने के पश्चात वे जो रश्मियां हैं, उनमें कुछ प्राणदायक हैं, कुछ प्राण को दूषित बना सकती हैं, वे जो व्यानप्राण है, जैसे व्यानप्राण हमारे कण्ठ के ऊपर का भाग है, इसी प्रकार जो व्यानप्राण है, जो प्रकृति में, वायु मण्डल में भ्रमण कर रहा है, वह शब्द के साथ होता हैं वह प्राण और जेठाय नक्षत्र की जो रश्मियां हैं, वे प्रायः हमें उनसे प्राप्त होती हैं। अग्नि की धाराओं में, उनकी धारा रमण करती है। वायु की धाराओं में मिश्रित होता हुआ, वायु मण्डल के परमाणुओं को वह अपने में एकत्रित करने का प्रयास करता है। उस यन्त्र में स्वतः इस प्रकार की रश्मियां होती हैं। इस प्रकार की आकर्षण शक्ति हो जाती है, कि उस यन्त्र के द्वारा, शब्दों को ग्रहण करने लगते हैं। 25.02.1972।

834 शब्दावली यन्त्र

महर्षि भारद्वाज ने और भी अनेक आदि ऋषियों ने तो ऐसा कहा है, जैसे चित्रावली में एकस्थली का चित्र आ जाता है, ऐसे ही वायु मण्डल में जो शब्दों के साथ में, मानव के शरीरों के जो चित्रण हैं, परमाणु हैं, उनको भी मानव एकत्रित करके यन्त्र के द्वारा उनका चित्रण कर सकता है। यह महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा है। महर्षि भारद्वाज मुनि और अंगिरा मुनि और जो उनके पौत्र थे, श्रीणी मुनि महाराज, उनका लगभग लाखों वर्षों की दूरी का समय बनता है। परन्तु उन्होंने जिस समय शब्दावली के यन्त्रों का निर्माण किय, जिनसे हम शब्दों को ग्रहण करें, शब्दों को लाने का प्रयास करें। उन शब्दों को हम एक यन्त्र में लाते हैं, जो ज्ञानमय यन्त्र, ज्ञानमय परमाणुओं वाली वाणी के शब्द, भ्रमण कर रहे हैं। उन शब्दों को एत्रितत करनाचाहते हैं। तो उनको उन्होंने अपने यन्त्रों में लाने का प्रयास किया। और प्रयास करने के पश्चात, जो लाखों वर्षों पूर्व के शब्द थे, उन्होंने केवल स्वाति यन्त्रके द्वारा शब्दावलियों को अपने में ग्रहण करना प्रारम्भ किया। वे अपने जैसे चित्रणपटल पर चित्र होते हैं, ऐसे वे उनका दिग्दर्शन करने लगे।

तो विचार यह कि जो एक सहस्र का भी प्रमाण दे सकता है, वह लगभग लाखों वर्षों का भी प्रमाण दे सकता है। आज हम उस विज्ञान के युग में जाना चाहते हैं। आज का विज्ञान, उस विज्ञान के लिए पिपासा कर रहा है। हो सकता है यह विज्ञान आदि इस गति पर चलता रहा तो लगभग पचास वर्ष के पश्चात इन गतियों को प्राप्त कर सकता है। इसी प्रकार आगे आने वाला जो समाज है, आगे आने वाला जो जगत

है, उसमें यह सफलता को प्राप्त हो सकता है।
तोसूर्य मण्डल में जो गढेले आ गए हैं, जिसमें उसकी दूषित रश्मियां मण्डलों पर आनी प्रारम्भ हो गई है। यह नाना प्रकार के वैज्ञानिक जो लोक लोकान्तरों में विज्ञान के ऊपर अनुसन्धान कर रहे हैं, वे नाना प्रकार का अन्वेषण कर रहे हैं। उनको आक्रमणकरके उनको क्रियात्मक में लाना चाहते हैं। 25.02.1972।

835 समुद्रों से क्षुधा पूर्ति

परिणाम क्या कि उन समुद्रों में, जैसा मैंने मंगल के विज्ञान की चर्चाएं की, वहाँ समुद्रों में ऐसे पदार्थों की खोज किया जा रहा है जिनसे पान करने मात्र से ही, वहाँ के समुद्रों में ऐसे पदार्थ प्राप्त होते हैं, उनको एक समय पान कर लिया, तो तीनतीन दिवस तक क्षुधा उनको प्रेरित नहीं करती। अहा उनको क्षुधा नहीं लग पाती। इसी प्रकार आज का विज्ञान भी इस पृथ्वी मण्डल केवैज्ञानिक इस प्रकार के प्रयत्न कर रहे हैं। वे प्रयत्नशील हैं, कि हम कुछ ऐसे पदार्थों को समुद्रों में से पान करना चाहते हैं। जिसको पान करने मात्र से क्षुधा शान्त हो जाए। यह जो पृथ्वी पर वसुन्धरा के गर्भ से अन्न उत्पन्न होता है यह सूक्ष्म बन जाए परन्तु इस प्रकार की विचारधारा में, आज का वैज्ञानिक अनुसन्धान करने को तत्पर है। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि चन्द्रमा, सूर्य और मंगल के जहाँ समुद्रों की कृतियां आती हैं, जहाँ केवल यह है कि इस पृथ्वी मण्डल का जो समुद्र है, उसमें सूक्ष्म वह खनिज प्राप्त होते हैं। परन्तु वह है अधिक मात्रा में। परन्तु वे इतने नहीं हैं। हो सकता है कि आज का वैज्ञानिक दस वर्षों के आने वाले समय में आने वाले भविष्य में सफल हो जाएगा। सफल हो सकता है। अब उनको निकालने में उनका अनुसन्धान प्रारम्भ हो रहा है। 25.02.1972।
आज के लोकलोकान्तरों का विज्ञान कितना महान है, कितना ऊर्ध्व है। सूर्य मण्डल का जो विज्ञान है, वह इस पृथ्वी मण्डल के विज्ञान से एक सहस्र वर्ष आगे वहाँ का विज्ञान है। परन्तुमंगलमण्डल का जो विज्ञान है, वह इस पृथ्वी मण्डल के विज्ञान से सौ वर्ष आगे है। 25.02.1972।

836 यौगिकता से ब्रह्माण्ड दर्शन

अब कोई मुझे यह उच्चारण करे कि आपने यह कैसे जाना? आपको यह कैसे अनुभव हो रहा है? मुझे अनुभव यह है कि जो सूर्य की रश्मियां हैं, वायु मण्डल है, वायु मण्डल में जो तरंगें हैं, उन तरंगों से हम अपनी यौगिकता से, इसका अनुभव प्रायः करते रहते हैं। यौगिक जो जीवन है, वह वैज्ञानिक जीवन से हजार वर्ष क्या, लाखों वर्ष आगे रहता है, सदैव रहता चला आया है। एक मानव जो शब्दों को ग्रहण करता है, वायु मण्डल में से, योगी उन शब्दों को चरता है, उनको चर लेता है। सूक्ष्म शरीर को जो जानता है। क्योंकि यह जोविज्ञान है, यह सर्वत्र विज्ञान सूक्ष्म जो मात्रा है, प्रकृति उसके अन्तर्गत भ्रमण करती है और योगी का जो विचार है, सूक्ष्म शरीर से ऊर्ध्वागति, जो कारण शरीर वाला, जो लिंग है, जब उसका तारतम्य, सूक्ष्म शरीर, स्थल शरीर का तारतम्य योगी के लिए एक हो जाता है, उस समय वह सूर्य की रश्मियों से क्या, वायु की रश्मियों से क्या, इन पंच महाभौतिक जो अणुओं से भी सूक्ष्म कण हैं, परमाणु हैं, वह उसके निकट आ जाते हैं और योगी उनसे आगेआगे रहता है। योगी इस भौतिक विज्ञान से बहुत आगे रहता है।
सूर्य मण्डल का जो विज्ञान है, वह इस पृथ्वी मण्डल से एक सहस्र गुणा आगे है। बृहस्पति का विज्ञान सूर्य मण्डल से एक सौ वर्ष आगे है और ध्रुव मण्डल का जो विज्ञान है वह बृहस्पति के विज्ञान से एक सहस्र वर्ष आगे है, रमण करता रहता है और योगी का जो विज्ञान होता है, उसकी जो यौगिकता है, वह बृहस्पति के विज्ञान से एक लाख गुणा अधिक आगे ही आगे रमण करती रहती है।
तो प्रायः योगियों का, यौगिकता में रमण करने वाला, जो विचार है, वह एक महत्ता में रमण करता रहता है।। इसीलिए हमारे यहाँ योगीजन विज्ञान को जानते हुए भी प्रकट नहीं करते हैं। क्योंकि वे यह जानते हैं कि यह जो भौतिक विज्ञान है, यान्त्रिक विज्ञान है, इससे प्राणी को कोई विशेष लाभ प्राप्त नहीं होता। क्योंकि इसका दुरुपयोग होने लगता है, तो विज्ञान भ्रष्ट हो जाता है और यदि इसका सदुपयोग होने लगता है, तो सत्य में रमण करने लगता है।
ईश्वरीय जो ज्ञान है, उसमें यौगिकता होती हैऔर जहाँ यौगिकता होती है, वहीं परमाणुवाद पर अनुसन्धान होता रहता है। 26.02.1972

837 भक्ष्य अभक्ष्य से रुग्ण

मानव यह कह रहा है, कि हमें रुग्ण होते चले जा रहे हैं और आगे रुग्ण होते चले जाएंगे। परन्तु यह दोष सूर्य मण्डल का नहीं है। यह दोष यहाँ के प्राणी के भक्ष्य और अभक्ष्य का है। जो आगे दूषित होता चला जाएगा। रुग्ण होता चला जाएगा। क्योंकि आयुर्वेद में ऐसी ऐसी औषध है कि जो मानव को प्राण शक्ति प्रदान करती हैं। जिससे मानव जीवन में विभोर हो जाता है। परन्तु यहाँ नाना प्रकार का विचार मानव के विचारों में आता रहता है। वैज्ञानिक सदैव परम्परा से अनुसन्धान करते चले आए हैं। अनुसन्धान करते रहेंगे। धर्म एक रस रहता है, रूढ़ियों में भिन्नता रहती है। 26.02.1972

838 यज्ञ से दोष शुद्धि

इसीलिए आज हम उस आँगन में जाना चाहते हैं जिस आँगन में परिणत होने पर हमारी अन्तरात्मा को शान्ति हो, धर्म की रक्षा हो, यज्ञ की रक्षा हो। परन्तु आज का विज्ञान अनुसन्धान कर रहा है परमाणुओं का। यह जो दूषित प्राण वायु रमण कर रही है वायु मण्डल में विज्ञान यह कहता है कि आज से चालीस से पचास वर्ष के पश्चात यहाँ प्राणी की सांस की गति भी मन्द हो जायगी। क्यों कह रहा है? क्योंकि वह परमाणु मानव को प्राप्त नहीं हो रहे हैं, जिन परमाणुओं से वह परमाणु विनाश को प्राप्त हो जाए। एकएक परमाणु, सहस्रों परमाणुओं को निगल जाए। ऐसा परमाणु यज्ञ के द्वारा, यागों के द्वारा उत्पन्न होता है। इसीलिए प्रत्येक मानव को याग करने चाहिए। वेदों में यागों का बड़ा महत्व है। इसीलिए यज्ञ होने चाहिए। 26.02.1972

839 यागों की सूक्ष्मता से प्राकृतिक दोष

मैं भी वायुमण्डल के उस वातावरण को दृष्टिपात करता रहता हूँ, जो वायु में परमाणु विचरण कर रहे हैं, आज मैं यह अवश्य उच्चारण करता रहता हूँ, कि वर्तमान का जो वायुमण्डल है, यह इस प्रकार दूषित हो गया है, कि आज से बीस वर्ष के पश्चात मानव को श्वास लेना भी दुष्कर हो जाएगा, विचार यह कि आगे इस प्रकार दूषित वातावरण, जब इस संसार में ओतप्रोत हो जाता हैं, कहीं विचारों की दूषितता है, कहीं प्रकृति के परमाणुओं की दूषितता हैं, मूल कारण यह की यागों की सूक्ष्मता है। 11.03.1972

840 माताओं की शिक्षा से बल निर्माण

यह जो वातावरण है यह अशुद्धता में परिणत है, परन्तु माताओं के द्वारा इसकी निवृत्ति भी हो सकती है, क्योंकि उनको आयुर्वेद की विद्याएं, पवित्र विद्याओं कीशिक्षा होनी चाहिए, जिससे उनके गर्भ से भारद्वाज जैसे मुनिवरों का जन्म हो, कैसे ऋषि थे, वे ?उनके जीवन की नाना वार्ताएं मुझे स्मरण आती रहती हैंपन्द्रह वर्ष अवस्था में ही, उन्होंने ऋषि के आश्रम में, उस यान का निर्माण किया था, जिस यान में विराजमान होकर के चन्द्रमा की यात्रा करते थे, यह माता के विचारों का प्रभाव हैं।सोलह वर्ष की अवस्था में वह मंगल मण्डल के यात्री बन गए थे, महर्षि भारद्वाज, जिन्होंने लगभग पच्चीस वर्ष की आयु में, शब्द को आकर्षित यन्त्र में स्थित कर लिया था, जिसमें मानव के शब्दों की चित्रावली विराजमान हो जाती हैं 11.03.1972

841 बुद्धि और मेधावी क्षेत्रों में विज्ञान

जीवन में तपस्या का पूर्णतम बल आ गया। परिणाम यह हुआआत्मा बलवान बन गया। बलवान बन जाने के कारण, ये जो नाना प्रकार के परमाणु वायु मण्डल में भ्रमण करते हैं, तो उस समय बुद्धि मेधावी बन गई। मेधावी के स्थान में जब बुद्धि पूर्णतया मेधावी बन गई, तो मेधावी क्षेत्र में यह हुआ कि यह जो नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों में जाना यातायात का होना, प्रकृति के सूक्ष्म स्वरूप को जानना, जो करोड़ों जन्मों के संस्कार हमारे चित्त में विराजमान होते हैं, वे जो चित्त के संस्कार थे, उनमें उदबुद्धताआने लगी। उनमें जब उदबुद्धता आने लगी तो वे जो विज्ञान के संस्कार थे, वह ऊर्ध्वगति को आने लगे, तोनाना प्रकार के यन्त्रों में गति आने लगी। यन्त्र का निर्माण कैसे होता है? क्योंकि बुद्धि और मेधावी क्षेत्र तक ही प्रकृति का विज्ञान रहता है। प्रकृति की धारा रहती है, प्रकृति का स्वरूप साक्षात्कार हो जाता है।

चन्द्रमा में कैसे जाना है?चन्द्रमा की किरणों के साथ में योगी कैसे ऊर्ध्वागति को प्राप्त होता है?चन्द्रमा की कान्ति में कैसे योगी रमण करता है? इस प्रकार की गति और उनमें नाना प्रकार के परमाणुओं का यौगिक मिलान, नाना प्रकार के यन्त्र, वरुणास्त्र, आग्नेयास्त्र, स्वाति आदि नाना प्रकार के अस्त्रोंशस्त्रों का निर्माण, उनकी प्रक्रिया, उस योगी को साक्षात्कार हो जाती है।

यह जो मानव कहीं चन्द्रमा की उड़ान उड़ता है, कहीं सूर्य की उड़ाने उड़ने लगता है, कहीं यह मंगल की उड़ान उड़ने लगता है, प्रत्येक लोकलोकान्तरों की प्रतीति होने लगती है। कितने लोक स्थूल रूप में हैं, जिनमें पार्थिव तत्व हैं? कितने लोक है जोआग्नेय तत्व प्रधान हैं? कितने लोक हैं जो जल तत्व प्रधान हैं?कितने लोक हैं जो वायु तत्व प्रधान हैं? ये पंच महाभौतिक जो परमाणु हैं, इन्हीं के अन्तर्गत सारा प्रकृतिवाद, सारा प्रपंच हमें दृष्टिपात आने लगता है। 17.03.1972

842 मानव जन्म का लक्ष्य

संसार में मानव का जो जन्म होता है, वह प्रभु को प्राप्त करने के लिए, आत्मा को स्वतन्त्र बनाने के लिए प्राप्त होता है।इसीलिए मानव बनना चाहिए। वह मानव पृथ्वी मण्डल का हो, सूर्य मण्डल का हो, मंगल का हो, बृहस्पति का हो, शनि का हो और बुध का हो, चाहे वह ओर भी नाना जेठाय नक्षत्र और ध्रुव मण्डल का ही प्राणी क्यों न हो। परन्तु प्राणी जब भी आता है, किसी भी लोक में विचरण करने वाला हो, केवल एक आत्मा को स्वतन्त्र बनाने के लिए उसका जन्म होता है।कर्म करने के लिए उत्पन्न होता है।

एक वैज्ञानिक है। वह वैज्ञानिक यह विचारता रहता है, कि तुझे परमाणुओं को एकत्रित करना है। उन परमाणुओं का सन्निधान करना हैं।

जब वह परमाणुओं का सन्निधान करना प्रारम्भ करता है, तो उसके मन और कर्म दोनों का उसमें समन्वय रहता हैं। वह एक उपग्रह बनाता है।वह मंगल की यात्रा करने वाले यान का निर्माण करता है। वह निर्माण करता हुआ, जब वह निर्माणवेता ने, जिस लिए बनाया उस पर जाने के पश्चात उसके हृदय में हर्ष ध्वनि प्रारम्भ हो जाती है। 28.03.1973

843 वैज्ञानिको में तपस्या

जब हम उस महान विज्ञान की वेदी पर पहुंचते हैं, जहाँ वैज्ञानिक प्रकृतिवाद का दिग्दर्शन करते हैं और यह कहा करते हैं कि जहाँ ब्रह्मचेतना का अभाव माना जाता है।वास्तव में तो वहाँ ब्रह्म चेतना का प्रभाव नहीं होता। वहाँ केवल उस वैज्ञानिक की तपस्या का अभाव होता है। यदि उस वैज्ञानिक की तपस्या का अभाव नहीं होता, तो परमात्मा का अभाव उसके मस्तिष्क में आ नहीं सकता था। ब्रह्म चेतना का प्रभाव उस मानव के हृदय में प्रायः आता रहता है, जिसके हृदय में तपस्या के अंकुर नहीं होते।

आज एक मानव प्रकृति के गर्भ में जाने के पश्चात तपस्वी बनता है। तप करने के लिए तत्पर रहता है। उसकी यह प्रबल इच्छा होती है कि मैं ब्रह्मास्त्र, आग्नेयास्त्र, वरूणास्त्र, शिवास्त्र, रोहिणीअस्त्र बनाना चाहता हूँ। नाना प्रकार की विचारधारा होती है, कि मैं उन अस्त्रों को जानने के पश्चात अपनी प्रतिभा को जानना और उसमें तन्मय होना चाहता हूँ।

844 यान निर्माण की धातु

ब्रह्मचारी ने कहा कि मैं सूर्य मण्डल में जाना चाहता हूँ। सूर्य मण्डल में जाने के लिए छह भौतिक यानों का निर्माण करते हैं।

तो उन्होंने जब यान का निर्माण किया तो सबसे प्रथम एक भाग उन्होंने पृथ्वी के परमाणुओं का लिया और उससे दुगना भाग जल के परमाणुओं का लिया और चौगुना भाग अग्नि का लिया, अब तीनों प्रकार के परमाणुओं को लेकर के परमाणुओं का विभाजन किया। जब विभाजन किया तो उन्होंने एक जाति की तरंगें उत्पन्न की, उनका मिलान करके तरंगें उत्पन्न कीं और द्रव्य एकत्रित किया। स्थूल परमाणुओं का द्रव्य बनाया, इसी धातु से उन्होंने यानों का निर्माण प्रारंभ कर दिया।

जब निर्माण किया तो अब उसमें चौगुनी गति के वायु के परमाणु ले करके पुट लगाई और अन्तरिक्ष के परमाणुओं को लेकर के उस यान में विराजमान हो गए। विराजमान हो करके वह यान प्रारंभ होने लगा, वह वायु में त्याग दिया गया। जब वायु मण्डल में वह यान गति करने लगा, तो एक स्थूल यानपृथ्वी पर है और एक यान जो विज्ञानशाला में है वह गति कर रहा है। उसकी छाया निचले यन्त्र में आ रही है। जब वह चन्द्रमा के ऊपरले कक्ष में पहुंचा, तो उसमें छाया आ रही है, वह मंगल के ऊर्ध्वगति के श्वेतकेतु नक्षत्र के ऊपरले कक्ष में पहुंचा तो श्वेतकेतु नक्षत्र के ऊपरले भाग में द्यौ आस्वात्तन नक्षत्र है, उससे ऊर्ध्वागति में पहुंचा, तो सप्त ऋषि मण्डल है। उससे भी ऊर्ध्वागति में पहुंचा, तो उससे आगे सूर्य मण्डल की छाया आ जाती है, सूर्य मण्डल कक्ष से भी दूरी हो जाता है तो उससे आगे बृहस्पति, आरुणि इत्यादि मण्डलों का क्रित आने लगता है तो वह ध्रुव यानों में सफल होता है। 01.08.1973

845 आनंद की प्राप्ति

जब नाना लोक लोकान्तरों के प्राणी एक स्थल पर आकर विराजमान होकर के विचार विनिमय करते हैं।कहीं मानव चन्द्रमा के प्राणियों से वार्त्ता प्रारम्भ करता है। कहीं वह मंगल की यात्रा में, मंगल के प्राणियों से वार्त्ता करना प्रारम्भ करता है। कहीं वह गुरु मण्डल के प्राणियों से वार्त्ता प्रारम्भ करता है।

एक मानव उड़ान उड़ता हुआ कहाँ चला जाता है? एक मानव इस पृथ्वी मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ, मंगल और चन्द्रमा की यात्रा में चला जाता है।परन्तु उसे आनन्द की अनुभूति नहीं हो पाती। आनन्द उसको प्राप्त नहीं होता। उसे आनन्द किस काल में प्राप्त होता है? यह जानना है मानव को। 11.12.1974

846 वैज्ञानिक योग

एक तो मानव परमाणु का मिलान करता है। मिलान करता हुआ, उनको एक सूत्र में पिरोता है। एक सूत्र में पिरोने वाला जब चक्र परमाणु योग में मिलान करा देता है वह धातुयोगहै। हमारे यहाँ जब उसका योग सुचारू रूप से हो जाता है, तो मानव नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों को मापने लगता है, कि कितनी दूरी पर पृथ्वी मण्डल से चन्द्रमा है, कितनी दूरी पर यह मंगल है, कितनी दूरी पर सूर्य है, कितनी दूरी पर सात नक्षत्र हैं। नाना प्रकार के मण्डलों कोवह मानसिक गति के आधार पर मापना प्रारम्भ कर देता है। वह परमाणुओं को योग से मिलान करके उनको मापने लगता है। वह भौतिक विज्ञान है। भौतिक विज्ञान एक ऐसा विज्ञान है, जो मन और बुद्धि को सुचारु रूप से मापता रहता है। परन्तु वह मापा नहीं जाता। प्रायः जब वह परमाणु के मिलान के लिए अग्नि की आभा को जानने का प्रयास करता है तो वह परमाणुओं को जानता रहता है। अग्नि को जानकर अग्नि की धाराओं को जानना प्रारम्भ करता है। तोवह एक वैज्ञानिक योग कहलाता है। हम तुम्हें विज्ञान के योग में रमण करके अब तुम्हें ऊर्ध्व आत्मिक योग में ले जाना चाहते हैं। जो मानव का वास्तविक योग है।

नाना प्रकार के लोकलोकान्तर अपनी अपनी परिधि में गति कर रहे हैं और ऐसेऐसे विशाल मण्डल इस मेरे प्यारे प्रभु के विज्ञानमयजगत में दृष्टिपात आते हैं, एकएक मण्डल को तपाने के लिए अथवा प्रकाश देने के लिये बहत्तरबहत्तर सूर्य एक ही मण्डल को प्रकाशमान करते हैं। परन्तु उस प्रभु का विज्ञान कितना नितान्तहै और भी ऊर्ध्वागति में जब विचारक विराजमान हैं, तो क्या प्रभु होते हैं, तो उस परमात्मा के जगत में ऐसीऐसी निहारिकाएं कहलाती हैं जिस एक ही निहारिका को एक सौ बहत्तर सूर्य उसको प्रकाशित करते है तो क्या उसके विज्ञान को कोई नाप सकता है? 23.05.1975

847 मानव परमाणुओं का समूह

इस संसार को इतना समय हुआ, परन्तु कोई वैज्ञानिक इस प्रकार का नहीं हुआ, जो उस परमपिता परमात्मा के विज्ञानमय जगत को माप सके। मानव अपनी अपनी आभा में, परमाणुवाद में जाता रहता है। नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करता रहता है। उन परमाणुओं को जानता हुआ, नाना प्रकार के यन्त्रवाद में रमण कर जाता है। उस यन्त्रवाद में रमण करता हुआ, उस परमात्मा की आभा में, परमाणुवाद में जब रत हो जाता है, तो वह परमाणुओं का भयंकर वन है। मानव का अन्तिम शब्द यही होता है, कि मैं नहीं नाप सकता। एक परमाणु जानता है, दूसरा परमाणु उपस्थित हो जाता है। उसको जानता है, तो नाना परमाणु उसके समीप आ जाते हैं। इस मानवशरीर की जब आभा वायु मण्डल मेंगति करती है, तो नाना प्रकार के परमाणुओं का समूह होता है एक अणु है रिरिड चश्वस्त' नाम का, उस अणु के अन्तर्गत लाखों करोड़ों परमाणु गति करते हैं, और उतने ही आकार में रहते हैं, इसी प्रकार के नाना अणु होते हैं। जब वे परमाणु गति करते हैं, तो उन अणुओं के आँगन में नाना परमाणु गति करते हैं, अरबों खरबों परमाणु एक दूसरे परमाणुओं की गति करते हैं। परन्तु उसमें भी समूह में रहते हैं। जितना यह मानव का आकार बना हुआ है, इस प्रकार का जो भी प्राणी है, मानव हैं, यह परमाणुओं का जो समूह है, वह चित्र है, वह अन्तरिक्ष में गति करता रहता है। 23.05.1975

848 रूढ़ि

इस प्रकार का विज्ञान मानवीय मस्तिष्क में, मानवीय विचारकों में यह विज्ञान परम्परा से रहा है। इस विज्ञान में रूढ़ि नहीं है, भौतिकवाद है। भौतिकवाद होते हुए रूढ़ि नहीं, इसमें यौगिकता दृष्टिपात आती है। क्योंकि रूढ़ि उन शब्दों में होती है, उन विचारों में होती है, जिन विचारों में इस समाज की पद्धति का निर्माण होता है। समाज की पद्धति का निर्माण स्वयं समाज करता है। उसमें रूढ़िवाद की स्थापना हो जाती है। परन्तु इसमें भौतिकवाद होते हुए भी इसमें रूढ़िवाद नहीं कहलाती। 23.05.1975

849 चित्त में प्रकृति की सूक्ष्म धाराएं

तो मानव के शरीर में चित्त नाम का जो स्थान है उस चित्त नाम के स्थान में प्रकृति की सूक्ष्म धाराएँ हैं अथवा उसका सूक्ष्ममण्डल है।उससे जब आत्मा का मिलान, आत्मा का सन्निधान चित्तके द्वारा होता है, तो चित्त अपने स्वभाव में गति करने लगता है। 04.05.1976

850 ब्रह्माण्ड, प्रकृति के चित्त की रचना

जिस प्रकार परमात्मा के सन्निधान मात्र से ही सृष्टि कर्म में गति प्रारम्भ हो जाती है। पंच महाभूतों के परमाणुओं में गति प्रारम्भ हो जाती है। स्वयं अपनीअपनी परिधि में प्रत्येक परमाणु रमण करने लगता है। वही परमाणु इस संसार की रचना करता है। आज जो रचना हमें दृष्टिपात आ रही है, वह रचना सूर्य के रूप में हो, मंगल के रूप में हो, चन्द्रमा के रूपों में हो, ध्रुव, बृहस्पति और शनि के रूपों में हो, बुध और शुक्र के रूपों में हो, चाहे वह नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों के रूपों में क्यों न हो, सप्त ऋषि मण्डल में ही क्यों न हो। परन्तु वह सर्वत्र रचना केवल प्रभु के और प्रकृति के चित्त का सन्निधान मात्र की एक सुन्दर रचना दृष्टिपात आती है।

जिस प्रकार मानव के शरीर में, चित्त के ही गतिमान होने पर, संसार और नाना प्रकार का एक सुन्दर कुटुम्ब बन जाता है। प्रवृत्तियों का वृक्ष बन जाता है। उन प्रवृत्तियों के बीच बन जाने के पश्चात मानवता की एकसुन्दर रचना होने लगनी है। उस रचना का जो भान है उसकी जो प्रतिभा है, वह एक मानवता में ही नहीं, वह यौगिकता में परिणत होने लगती है।

तो यह जो भी कुछ रचना है अथवा जो मानसिक रूपों में है अथवा वह ब्रह्माण्ड और लोकलोकान्तरों के रूपों में है, वह सर्वत्र रचना केवल प्रभु की चेतना और प्रकृति के चित्त के ही सन्निधान मात्र से, संसार विभाजित होता दृष्टिपात हो रहा है।

मानव का तो जन्म सिद्ध अधिकार है कि वह अनुसन्धान की वेदी पर विराजमान है, प्रत्येक वस्तु का अनुसन्धान करता रहता है। प्रायः उसमें जिस प्रकार की बुद्धि होती है, उसी प्रकार का उसका अनुभव होता है। परन्तु चित्त में जैसा संस्कार होता है, चित्त में जैसे अंकुर होते हैं उसके अनुकूल ही इस बाह्य जगत में भी प्रायः अनुसन्धान करने लगता है। यह तो मानव का जन्मसिद्ध अधिकार है। चाहे वह मानव इस पृथ्वी मण्डल पर विचरण करने वाला हो अथवा वह मंगल में हो, शनि में हो, चन्द्र में, सप्तऋषि मण्डल में हो, रोहिणी नक्षत्र में क्यों न हो, पुष्य में क्यों न हो। ज्येष्ठा आदि नक्षत्रों में ही क्यों न हो। परन्तु अनुसन्धान करना उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। क्योंकि प्रकृति में यह

स्वभाव है।ब्रह्मरन्ध्र में जो सूक्ष्मवाहक नाड़ियां हैं, उन सूक्ष्म वाहक नाड़ियों का सम्बन्ध प्रायःसूक्ष्म वायु की धाराओं से होता है, सूक्ष्म अग्नि की धाराओं से होता है, सूक्ष्म पृथ्वी की धाराओं से होता है, सूक्ष्म जल की धाराओं से होता है, तो उनका सम्बन्ध लोक लोकान्तरों से भी होता है। वे जो धाराएँ हैं, वे केवल कुछ संक्षिप्तरूपों से हैं। जब मानव अनुसन्धान करने लगता है तो वही नाड़ी ऊर्ध्व रूप धारण करके मानव के मस्तिष्क में उसी प्रकार का चमत्कार, उसी प्रकार की चेतना जागरूक कर देती है। 04.05.1976

851 मानव चित्त में विज्ञान बोध

यदि मानव के इस चित्र मण्डल में यदि चन्द्रमा को कोई स्मृति नहीं होगी। चन्द्रमा में जाने वाली वाहक नाड़ी नहीं होगी, तो चन्द्रमा की जानकारी हम नहीं कर सकते। हम उसका विभाजन कर ही नहीं सकते, क्योंकि विभाजन जितना भी होता है, वह मन और प्राण दोनों की सहकारिता से ही प्रायः प्राप्त होता रहता है।

वैदिक साहित्य विज्ञान के लिए घोषणा करता रहता है और यह उच्चारण करता है कि आओ, विज्ञान की वेदी पर मानव को आना चाहिए। वैज्ञानिक बनो।

आज हमें वास्तव में विज्ञान के ऊपर अनुसन्धान करना चाहिए। चन्द्रमा में मानव की गति हो, सूर्य मन्डल में हो, ध्रुव मण्डल में जाने वाले यान होने चाहिएँ। क्योंकि हमारे यहाँ परम्परा से ही प्रायः विज्ञानवेत्ताओं ने नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में जाने की गतियां की हैं। आज का विज्ञान चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है। चन्द्रमा में शयन कर रहा है। हमने बहुत पूर्व काल में इनके प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा किद्वापर के काल में भी और उनके पुत्र घटोत्कच्छ के बहुत से यान ऐसे हैं, जिन यानों को आज का वैज्ञानिक जब चन्द्रमा के ऊपरले कक्ष में जाने का प्रयास करेगा, तो वह यान आज भी इन्हें प्रायः प्राप्त हो सकते हैं। इन्हें प्राप्त होंगे। क्योंकि जितना विज्ञान पुरातन काल में था। उस विज्ञान की तुलना हम किसी काल से नहीं किया करते। क्योंकि अपने समय का विज्ञान, अपने समय की ऊर्ध्वागति को प्रायः प्राप्त होता रहा है। 04.05.1976

852 यन्त्र निर्माण

हमारे यहाँ महर्षि भारद्वाज और भी आदि ऋषियों का यह कथन है, कि एक यन्त्र का जब हम निर्माण करते हैं, उस यन्त्र में वायु की तरंगें और अग्नि की धाराओं का, दोनों का मिश्रण करते हुए, जल की उसमें पुट लगाते हुए, हम एक ऐसे परमाणुवाद को एकत्रित करते हैं, उस परमाणु को एकत्रित करके यदि हम एक सूक्ष्म से पात्र में, एक यान में स्थिर कर देते हैं तो वह यान हमें चन्द्रमा के ऊपरले कक्ष में अथवा सूर्य मण्डल की परिक्रमा करने के लिए तत्पर हो जाता है। इस प्रकार का हम परमाणु एकत्रित करके, उसे यान में जब स्थित करते हैं, तो उस यान की एकएक क्या, कई लाख वर्षों की अवस्था का, उसमें परमाणु भर देते हैं। और वह सूर्य की परिक्रमा करता रहता है, चन्द्रमा की परिक्रमा भी करता है।परन्तु जो वैज्ञानिक केवल दो वर्ष, चार वर्ष पंचम वर्षदशम वर्ष का परमाणु यन्त्र में परिणत कर सकता है, वह वैज्ञानिक अनुसन्धान करे, तोवह सहस्त्रों और लाखों पर भी जाने को तत्पर हो जाता है।

आज का वैज्ञानिक जो लोक लोकान्तरों का, वैज्ञानिक है।क्योंकि जैसा पृथ्वी मण्डल पर वैज्ञानिक अनुसन्धान कर रहा है, विचार कर रहा है। इसी प्रकार का मंगल का वैज्ञानिक भी विचार कर रहा है, इसी प्रकार का सूर्य मण्डल का वैज्ञानिक भी विचार विनिमय कर रहा है। और भी नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों का वैज्ञानिक विचार विनिमय कर रहा है। 04.05.1976

853 पुरातन काल में चित्रावलियां

पुरातन काल में भी चित्रावलियों का प्रायः वर्णन आता रहा है। महाभारत के काल में भगवान कृष्ण महाराजा धृतराष्ट्र के जब द्वार पर पहुंचे, तो उन्होंने कहामहाराज! कुछ चाहते हो? उन्होंने कुछ नहीं चाहता हूँ। परन्तु मैंयह चाहता हूँ कि एक ऐसा यन्त्र चाहता हूँ कि जिससे मैं स्वयं महाभारत के संग्राम को दृष्टिपात कर सकूँ।

उन्होंने कहा कि आप तो प्रज्ञा चक्षु हैं। उन्होंने कहा मेरे महामन्त्री संजय जी हैं यह मुझे प्रकट कराते रहेंगे, ऐसा मैं चाहता हूँ।

इस चित्रावली काउन्होंने दिग्दर्शन कराया। वह चित्रावली दी और चित्रावली के द्वारा कुरुक्षेत्र में जो प्रायः संग्राम हुआ उसका चित्रण प्रायः आता रहता था और संजय उनसे दृष्टिपात किया हुआ, अपनी वाणी से उच्चारण करता रहता था। इसी प्रकार भगवान राम इत्यादियों के कालों में भी और उससे पुरातन काल में भी उसके मध्य के काल में भी ऐसा प्रायः चलता रहा है। क्योंकि यह अनुसन्धान तो मानव के लिए सहज है और मानव इस पर प्रायः परम्परा से ही अनुसन्धान करता आया है।

क्योंकिवैदिक साहित्य परम्परा से ही है और वैदिक साहित्य में रूढ़ि नहीं है। जहाँ रूढ़ि नहीं होती, वहाँ सामान्य धर्म, सामान्य विज्ञानव्यापक विद्या तथा व्यापक धर्म ही होता है। इसीलिए हमारे यहाँ वेद की प्रशंसा ऋषि मुनियों ने, महान तपस्वियों ने की है। क्यों की है? उसमें से ऐसी वस्तुओं को निर्धारित किया है, जिस पर वहजितना अनुसन्धान करें उतना ही उनका मस्तिष्क विकसित होता चला जाता है।

प्रकाशमान होता चला जाता है। 04.05.1976

854 परीक्षण से विकसित विज्ञान

आज का वैज्ञानिक यह उच्चारण कर रहा है कि सूर्य मण्डल में गढेलेआ गए हैं। सूर्य मण्डल में इस प्रकार की कृति अवस्था आ गई है। परन्तु आधुनिक काल के वैज्ञानिकों को कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। यह तो परम्परा से ही प्रायः ऐसा होता रहा है। जिस लोक का वैज्ञानिक जितना भी अन्वेषण करता है। जितना भी वह परीक्षण करता है उतना ही वहाँ का विज्ञान विकसित होता रहता है। हमारे यहाँ जैसे सूर्य की रश्मियां आती हैं उन रश्मियों का जो प्रभाव है वह पृथ्वी मण्डल पर कैसा आता है? और लोकों पर कैसा आता है? परन्तु जब वैज्ञानिकों के परीक्षण से गढेलेआ गए हैं, उसमें प्रतिक्रिया अशुद्ध आ गई है। तो उसका मानवता में अस्वति वैज्ञानिक धाराओं में ऐसी कोई विशेषता वाला, उनका प्रभाव अशुद्ध नहीं होता। यहाँ तक प्रायः नहीं आता।

क्योंकि वहाँ का जो मानव समाज है, वहाँ का जो राष्ट्र है उस पर किसी प्रकार का प्रभाव हो सकता है। क्योंकि वे जो किरणें हैं, रश्मियां हैं, वे अग्नि के द्वारा प्रचंड करती हुई आती हैं। वायु की धाराओं में रमण करती हुई, अग्नि की रश्मियां सूर्य को प्रकाशित करती रहती हैं। सूर्य मण्डल को प्रकाशित करती रहती हैं। उसमें अग्नि की प्रधानता होने के नाते होता है। परन्तु कुछ ऐसे लोक हैं जिनमें वायु और जल दोनों की प्रधानता होती है। वहाँ उन किरणों का दूषितपन का संदेह रहता है। परन्तु जहाँ पार्थिव तत्व होता है, उन लोकों में उसका कोई विशेष प्रभाव कदापि नहीं हुआ करता। 04.05.1976

855 महाभारत

एक समय महाभारत के काल में महर्षि व्यास मुनि महाराज, भास्करचार्य, स्वाति ऋषि ये तीनों विराजमान थे। उस काल में भी प्रायः ऐसी छाया उनके मस्तिष्कों में आई। उनकी जो विज्ञानशाला थी, उस विज्ञानशाला में इस प्रकार के अनेक विज्ञान सम्बन्धी परीक्षण होते थे। जैसे मानव का मस्तिष्क है, मानव के मस्तिष्क में जो ब्रह्मरन्ध्र है, ब्रह्मरन्ध्र में जिस प्रकार की प्रकृति होती है, उसी प्रकार का ब्रह्मरन्ध्र में एक यन्त्र होता है जिसको हमारे यहाँ 'स्वाधिष्ठान यन्त्र' कहा जाता है अथवा उसको चक्र भी कहते हैं। यौगिकता में उसको चक्र भी कहते हैं। जितना भी योगी सूक्ष्म होता है, अनुसन्धान वेत्ता होता है, उतना ही ब्रह्मरन्ध्र में इडा, पिंगला, सुषुम्णा, ये तीन नाड़ियां हैं इनमें से बहत्तरबहत्तर प्रकार की धाराओं का जन्म होता रहता है और बहत्तर वीं धारा जो होती है, उसमें से निन्यान्वीनिन्यान्वी प्रकार की धाराओं का जन्म होता है। उन धाराओं का सम्बन्ध उस सर्व प्रकृति से होता है। परन्तु वह जो प्रकृति है उस प्रकृति का जैसा भी वातावरण् जैसी भी प्रकृति की गति होती है उसी प्रकार की छाया उस योगी के मस्तिष्क में प्रायः आ जाती है। 04.05.1976

परमाणुओं के मिश्रण से यान

इसी प्रकार भौतिक विज्ञानवेत्ता उसी के आधारित होते हुए एक यन्त्र बनाते हैं।वह यन्त्र वायु की तरंगों का यन्त्र होता है। वायु और अग्नि की तरंगों का मिश्रण करते हैं जैसे एक भाग तो वायु के परमाणुओं का हो और उसका दो गुणा भाग अग्नि के परमाणुओं का हो और उससे सौ गुणा भाग आपोकी धाराओं का होता है और जब तीनों की पुट लगा करती है, तो कुछ सूक्ष्मसा इस पृथ्वी का भी मिश्रण होता है।

तो ऐसे परमाणुओं के समूह से जब यान बनता है तो प्रकृति में जैसी गति होती है क्योंकि वह यान इतना ऊर्ध्व गति वाला बनता है कि वह लगभग सूर्य मण्डल का जो सौर मण्डल है उस सौर मण्डल की जितनी गति होती है, उस सौर मण्डल की गति की छाया उस यन्त्र में आ जाती है। वह जो छाया है, उसी छाया के आधारित हो जाते हैं।उसकी छाया से वह जान लेते हैं कि चन्द्रमा में क्या हो रहा है? मंगल में क्या हो रहा है, स्वाति नक्षत्र में क्या हो रहा है?और बृहस्पति और शुक्र इत्यादि मण्डलों में क्या हो रहा है। इसी प्रकार वह सूर्य मण्डल तक की आभा को जानने के लिए तत्पर हो जाते हैं। और उन आभाओं के द्वारा ही उनका विज्ञान विकसित होता रहता है। उस विज्ञान के आधार पर ही मानव प्रायः अनुसन्धान करता रहता है। बहुतसा विज्ञान इस प्रकार का है कि तीन सौर मण्डलों की छाया उसमें आती रहती है।

हमने बहुत पूर्व काल में कहा था कि हमारे यहाँ इडा, पिंगला, सुषुम्ना तीन प्रकार की नाड़ियां हैं और उन नाड़ियों में 200-200 तरंगें तरंगित होती रहती हैं। क्योंकि वे धाराएं, वे तरंगें उस इडा, पिंगला, सुषुम्ना नाम की नाड़ियों के द्वारा आती रहती हैं। और वे जो तरंगें हैं और उनसे मिलान करती हुई योगी को सर्व ब्रह्माण्ड उसके लोक लोकान्तरों की प्रतीत होने लगती है। उसका भान उसके समीप आने लगता है। 04.05.1976

856 योगी को विज्ञान बोध

हमारे ऋषि मुनि पुरातन काल में उसका शोधन जानते थे और वह शोधन प्रायः और भी लोक लोकान्तरों में है। हमारे पृथ्वी मण्डल पर भी ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में रहा है। उन्होंने गो घृत के द्वारा याग किया और याग करने के पश्चात उन्होंने वृष्टि याग किया और परमाणु

याग करने के पश्चात उसी प्रकार के मन्त्र जो 'ऋग्वेद' में प्रायः प्राप्त होते रहते हैं। उनमन्त्रों का ही पठन पाठन करने से ही वह दूषित वातावरण समाप्त हो गया। इसी प्रकार आज लोक लोकान्तरों में भी याग की प्रथा मानी जाती है।

तो जितने भी संसार में लोक लोकान्तर हैं, उनमें जो नाना प्रकार की इडा, पिंगला सुषुम्णा अर्थात गंगा, यमुना सरस्वती कह दीजिए, इन तीनों नाड़ियों का मिलान, उस ब्रह्मरन्ध्र से होता है और ब्रह्मरन्ध्र के साथ में उन नाड़ियों का मेल अथवा चक्राणी बन करके रहती है, तो अन्तरिक्ष तथा जितना भी ब्रह्माण्ड है, जितना भी यह लोक लोकान्तरवाद है उन नाड़ियों में से सहस्रोंसहस्रों क्या, करोड़ोंकरोड़ों वाहक नाड़ियों का ऊर्ध्वामुख हो करके, उन लोकों को वह योगी अपने में दृष्टिपात करने लगता है। जब वह दृष्टिपात करने लगता हैवह जो लोक लोकान्तरवाद है उसको वह अपने में धारण करने लगता है। यह संसार अपने में दृष्टिपात आने लगता है, बाह्य जगत को आन्तरिक जगत में ले लेता है और ले करके लघु मस्तिष्क, वृत्तकेतु मस्तिष्क, सोमभृत मस्तिष्क तीनों मस्तिष्कों का ऊर्ध्वामुख हो करके ये जो लोक लोकान्तर हैं, इनको सहज ही जानने लगता है। जिस विज्ञान में जाने के पश्चात भौतिक विज्ञानवेत्ता नाना अणु और परमाणु में गति करता हुआ, नाना स्थूल यन्त्रों का निर्माण करता हुआ, वह अपनी ऊर्ध्वागति को बनाता हुआ, लोक लोकान्तरों में क्या, चन्द्र लोकों में गति करने लगता है, मंगल लोकों में, यानों से गति करने लगता है।

परन्तु एक योगी नाना मण्डलों को अपनेशरीरों में ही धारण करता हुआ उनको प्रत्यक्ष दृष्टिपात करने लगता है और वह कहता है कि हे वैज्ञानिकों! जहाँ तुम्हारा ये भौतिकवाद अणुवाद पूर्ण अर्थात समाप्त होता रहता है वहाँ से आध्यात्मिकवाद का प्रारम्भ हुआ करता है। वहाँ से आध्यात्मिकवाद की एक कृतिका प्रारम्भ होती है। 04.05.1976

857 अश्लील भाव से राष्ट्र पतन

आज का मानव नाना प्रकार के अणु महापरमाणुओं को एकत्रित करने में लगा हुआ है। एक ऐसा यन्त्र आज का मानव बना रहा है, जैसे सूर्य की किरणें आती हैं और सूर्य की किरण प्राणवर्धक हैं, परन्तुजो प्राणवर्धक वायु है, उन परमाणुओं को यन्त्रों में सींच लेता है और वह रेखा, जो सूर्य पृथ्वी के अन्तर्गत रेखाएं है, सूर्य की किरणें शीतल हो करके, पृथ्वी पर आती हैं, वह रेखा उन किरणों को नग्न बना देती हैं। क्योंकि प्राण तो उसमें से खींच लिए यन्त्र ने, और जिस राष्ट्र को भस्म करना चाहोगे, उससे वह मन्त्र प्राणवर्धक वायु को अपने में धारण करने के कारण, वह राष्ट्र का राष्ट्र, प्राणी मात्र, उस राष्ट्र का भस्म हो जाएगा। 24.05.1976

858 राजा विष्णु का गरुड़ यान

राजा विष्णु अपने गरुड़ यान पर विद्यमान हो करके, सूर्य लोक में यात्रा कर रहा है। वह सूर्यलोक के प्राणियों से अपनी वार्ता प्रकट कर रहा है। मंगल के प्राणियों से वार्ता कर रहा है। 23.02.1977

859 मन की तीव्र गति

एक मानव चन्द्रमा में चला गया, कोई वाक्य नहीं। मंगल में चला गया, यह भी आश्चर्य का विषय नहीं है। यह तो मानव की प्रवृत्ति है। एक मानव शान्त रूप से विद्यमान हैं। यह मन के ऊपर कल्पना कर रहा है, सूर्य मण्डल है, सूर्य मण्डल प्रकाश वाला है। वहमन की गति इतनी विचित्र है, इतनी महान है, कि एक क्षण समय में चन्द्रमा में चली जाती है। परमात्मा का यह जो विज्ञान है, यह कितना महान है? कि इस विज्ञान का कोई छोर पा सकता है? आज का मानव कहता है, मैं चन्द्रमा में चला गया, कोई आश्चर्य नहीं है। अरे! पूर्व का वैज्ञानिक तो अनुशासन में रह करके, ब्रह्मचर्य का पालन करके, वह छहछह माह तक मंगल में, चन्द्रमा में नाना लोकों में भ्रमण करके पृथ्वी मण्डल पर भी आ गए। 24.02.1977

860 विज्ञान दुरूपयोग से पतन

प्रत्येक मण्डल में जीवन है और नाना प्रकार केजैसे पंच महाभूत हैं और पंच महाभूतों वाले प्राणी रहते हैं। कहीं अग्नि प्रधान है, जो कहीं जल प्रधान है, और कहीं यह पार्थिवतत्व प्रधान हैं। यह अपनीअपनी आभा में आभायित हो रहा है। जब मैं यह विचारता हूँ कि आधुनिक काल के वैज्ञानिक ने एक यन्त्र का निर्माण किया है और वह यन्त्र क्या है? वह मानव को मृत्यु दे सकता है।परन्तु जीवन नहीं दे सकता। अरे! यही तो विज्ञान का दुरुपयोग है।

नाना प्रकार की चित्रावलियों का दिग्दर्शन हो रहा है परन्तु इन चित्रावलियो में मेरी पुत्रियो की अश्लीलता के चित्र आ रहे हैं। इससे यह विज्ञान का दुरुपयोग हो रहा है। उन्हीं चित्रावलियों में, उन्हीं यन्त्रों में यदि महापुरुषों के जीवन चरित्र आने प्रारम्भ हो जाएं, तो मानव जीवन की निर्माण चर्चाएं होने लगेंगी, तो यह विज्ञान का सदुपयोग है। इस विज्ञान का दुरुपयोग होना ही, इस संसार को, समाज को, मानव को, रसातल में ले जाता है इसकी उर्ध्वागति बन जाती है। उर्ध्वा न रह करके ध्रुवा बन जाती है। और वह मानव मानव नहीं रह पाता हैं। 18.03.1978

861 पूर्व कालों प्रेषित यानों की अंतरिक्ष में गति

मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा था कि प्रभु यह विज्ञान क्या है? इसके सम्बन्ध में उन्होंने कहा कि ऐसेऐसे यन्त्र अन्तरिक्ष में गति कर रहे हैं लोकों की परिक्रमा कर रहे हैं, जिनकी आयु दो सौ लाख वर्षों की है। ऐसे यन्त्र वायु मण्डल में आज भी गति कर रहे हैं, अन्तरिक्ष की आभा में गति कर रहे हैं।

महाराजा उद्धालक गोत्र में पनदेतऋषि हुए हैं। उद्धालक गोत्र में विद्यमान हो करके, एक यन्त्र का निर्माण करते हैं, और उस यन्त्र में अपने षोडश महापिता के दर्शन कर रहे। 18.03.1978

862 विज्ञान बोध की अनिवार्यता

ऐसा भी कोई यन्त्र निर्मित हो सकता है। जो सहस्रों वर्षों पूर्व जो सोलहवें मेरे महापिता समाप्त हो गए हैं, लाखों वर्ष पूर्व जो हो चुके हैं, उनका चित्र भी हम दिगदर्शन कर सकते हैं। अरे! ऐसा विज्ञान कहाँ आया है? आधुनिक काल में तोअभी उस विज्ञान का जन्म हुआ है। और विज्ञान के जन्म लेने के पश्चात ही उसका दुरुपयोग होना प्रारम्भ हो गया। तो यह विज्ञान कौनसी स्थली पर स्थिर रह सकेगा? इसलिए मैं कहा करता हूँ, अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रार्थना की है कि आधुनिक काल का जो जगत है, इसमें विज्ञान का, राष्ट्र में दुरुपयोग नहीं होना चाहिए। विज्ञान महान है। विज्ञान में जाने के पश्चात आत्मत्व में प्रवेश करता है, विज्ञान जानना बहुत अनिवार्य है। परन्तु विज्ञान का दुरुपयोग होना, यह मानवता नहीं कहलाती है।

जैसे आधुनिक काल के वैज्ञानिक ने मानव के मर जाने के पश्चात चित्रण करने के यन्त्र को जाना। परन्तु रक्त के बिन्दु से चित्रों का चित्रण आज का विज्ञान अभी तक नहीं कर पाया हैं, कितना अधूरापन है विज्ञान में। 18.03.1978

863 परमाणु शक्ति का महत्त्व

हमें अपने में ही विज्ञान को जानना है। विज्ञान है क्या? विज्ञान है इस प्रकृति के तत्वों को जानना और विज्ञान में अपने को रमण करना। 18.03.1978

भारद्वाज की शाला में जो वैज्ञानिक हो वह भक्षक होगा या रक्षक होगा? वह रक्षक था, भक्षक नहीं था। वह विज्ञान की तरंगों को जानता था, विज्ञान कैसा विशाल था?कि एक एक यन्त्र ऐसा, आधुनिक काल में, उस यन्त्र का निर्माण भी नहीं हुआ है। निचले स्थान में जलाशय बन गया है, ऊपर से अग्नि की वर्षा हो रही है, सर्वत्र सेना नष्ट हो जाती थी। इस प्रकार का यन्त्र आधुनिक काल में अभी प्रारम्भ भी नहीं हुआ। आग्नेय अस्त्र हैं, परन्तु राम से भारद्वाज कहता है, एक यन्त्र मेरा है, जो वरुणास्त्र है, जो अग्नि को शांत कर देता है, इसी प्रकार आधुनिक काल का जो परमाणुवाद है, अणुवाद है, वहमृत्यु के अन्वेषणों में चला गया है, परन्तु जीवन के अवशेषों में नहीं पहुंचा है, आज का वैज्ञानिक। एक यन्त्र अग्नि में प्रवेश कर सकता है, अग्नि जला सकता है, परन्तु वरुण शक्ति से, अग्नि को शान्त नहीं कर सकता। इसी प्रकार मैं कहता हूँहे वैज्ञानिक! तू वरुणास्त्रों का निर्माण कर, ये गोष्ठियां होती रहती हैं, कि परमाणु शक्ति को समाप्त किया जाए, क्योंकि कपर मुनि बना हुआ है आज का राष्ट्रीयत्व, बाह्य जगत में कहता है कि परमाणु शक्ति शान्त हो और जब अपनी राष्ट्रीय गोष्ठी होती हैं, तो कहता है कि परमाणु शक्ति ही तो द्रव्य है, यही तो धन है संसार का।

जितना अर्थ है संसार का, वह वैज्ञानिक तथ्यों में माना गया है, जितना जिस राष्ट्र में विज्ञान होगा, उतनी धातुओं का निर्माण होगा और जितनी धातु होगी, उतना ही राष्ट्र का द्रव्य प्रबल होता चला जाएगा। वह द्रव्यपति बन जाएगा। परन्तु जो दृव्य कहते हैं, तो परमाणु शक्ति को शान्त करने के लिए क्यों उच्चारण कर रहे हैं?

विज्ञान को जानना चाहिए। विज्ञान होना चाहिए, विज्ञान की तरंगें होनी चाहिए, परन्तु विज्ञान का दुरुपयोग हो करके, यहाँ समाज पतित नहीं होना चाहिए। यह विचार विनिमय करना होगा, वैज्ञानिकों को, राष्ट्र को। 18.03.1978

864 धर्म ही विज्ञान

अन्यथा वह समय दूर नहीं है, जब मानव मानव अग्नि के मुखारबिन्दु में परिणत होने वाला है। आज जब मैं वायुमण्डल की तरंगों को विचारने लगता हूँ तो संसार में त्राहित्राहि हो रही है। क्यों हो रही है? मूल कारण क्या है कि मानव ने धर्म की उपेक्षा की है। धर्म को नहीं जाना है। मैंने बहुत पुरातन काल में कहा था, कि धर्म ही विज्ञान है, धर्म ही मानवता है, धर्म ही कर्त्तव्य का पालन है। आज हमें कर्त्तव्यवादी बन करके धर्म और मानवता को सदैव विचारना चाहिए। 18.03.1978

865 वैज्ञानिक का पुनः वैज्ञानिक जन्म

परन्तु उसके पश्चात जब यह उड़ान उड़ता रहता है तो एक काल वह आता है जब वह थकित हो जाता है। यह भौतिक विज्ञानवेत्ता थकित हो जाता है। शरीरों को त्याग देता है। पुनः उसका अन्तरात्मा उसी अभिलाषा में उसी योनि को वैज्ञानिकता प्राप्त करता है। परन्तुअनुसन्धान,

अन्वेषण करता रहता है। अन्वेषण करता हुआ, इतना उज्ज्वल अन्वेषण करता है, कि वह यहाँ से उड़ान उड़ता है, नाना लोकों की उड़ान उड़ने में तत्पर हो जाता है। अन्त में इसकी चरम सीमा पर चला जाता है। 04.09.1979

वेद का ऋषि यह कहता है कि याग जैसे उत्तम कर्मों को रचाते रहें, क्योंकि इससे वायुमण्डल का शोधन होता है। इससे तुम्हारा विमान बन करके अन्तरिक्ष को चला जाता है। वह स्वाहा के साथ में तुम्हारा यज्ञशाला का, यज्ञमान का विमान है, और विमान यह द्यौलोक को चला जाता है। 22.02.1980

866 दूषित वायुमण्डल का प्रभाव

आधुनिक काल के वैज्ञानिकों को चिन्ता लगी हुई है, कि हमारा वायुमण्डल कैसे पवित्र बने। परन्तु आधुनिक काल में यदि यह दशा, यह गति चलती रही तो कुछ काल में जैसा पूज्यपाद गुरुदेव उच्चारण कर रहे थे, कि तीन प्रकार की प्रलय होती है।हो सकता है इन तीनों में से कोई प्रलय न आ जाए। क्योंकि वायुमण्डल जब दूषित होता है, तो अग्निकाण्ड होने लगते हैं। पृथ्वी विष उगलने लगती है। वायु अपने विष उगल करके प्राणीमात्र को अपने में भस्म करने लगती है। कहीं पृथ्वी में दरार बन करके, पृथ्वी विभक्त हो जाती हैं। उसमें मानव समाज समाप्त होने लगता है। ऐसे ही कहीं समुद्रों से जल प्लावन न आ जाए, चन्द्रमा अपनी तरंगों से विष न उगल दे। ऐसा अनुभव न हो जाए। आधुनिक काल का वैज्ञानिक इस बात से चिंतित हो रहा है। कि वायुमण्डल में जो दूषित वातावरण हो गया है, यह कैसे समाप्त हो? तो यह हमसे प्राप्त करो, हम इसका उत्तर देंगे और इसके ऊपर तुम आचरण करो। इसलिए गौघृत को लेकर के गायों का पालन होना चाहिए। उनके घृत और दूध को लेकर मानव उसका पान करे, और घृत के द्वारा याग करे। और उस याग का परमाणु जब अन्तरिक्ष में जाएगा, तो एकएक गौघृत का परमाणु वायु में शोधन हो करके, एकएक सहस्र परमाणुओं को, एक परमाणु में निगलने की शक्ति होती है। इसलिए वातावरण दूषित हुआ शान्त हो जाता है। वह शोधन हो जाता है। परन्तु इस विज्ञान में, मैं अधिक नहीं जाऊँगा। विचार यह कि प्रत्येक गृह में याग होना चाहिए। हमारा यह ऋषि मुनियों का क्षेत्र, ऋषि मुनियों की आज्ञा थी, कि प्रत्येक प्राणी गौघृत के द्वारा याग करे। परन्तु आज का राष्ट्र तो बड़ा विचित्र बन गया है। स्वान के पालन करने में तो प्रसन्नता होती है, और गौ के पालन करने में कहते हैं कि वह दूषित वातावरण करती है। अरे, इसका तो श्वास भी लाभप्रद है। उसका प्रत्येक अंग लाभप्रद है। 22.02.1980

867 विज्ञान को कैसे जानें

बहुत पुरातनकाल में हमने तुम्हें वर्णन करते हुए कहा था। विज्ञान मानव का मौलिक गुण है। विज्ञान के बिना आध्यात्मिकवाद में मानव प्रवेश नहीं कर सकता। क्योंकि प्रथम वह विज्ञान को जानने वाला बने। अनुसन्धान के द्वारा क्रियात्मक के द्वारा। एक मानवविचरता है, एकान्तस्थली में विद्यमान है, दर्शनों की पोथी उसके समीप है, वेद की पोथी है, और वेद उच्चारण कर रहा हैरसनत प्रवाहः चन्द्रणं ब्रह्मी कृत्यां बहु अमृतयामि देवा। 22.02.1980

868 षोडश कलाओं से ब्रह्माण्ड बोध

जब प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, जब पूर्णमासी तक इसकी षोडश कला नहीं हो जाती हैं, ज्योंज्यों यह चन्द्रमा कलाधारी होता रहता है, त्योंत्यों यह चन्द्रमा समुद्रों मे से रस को लेकर के अन्तरिक्ष में परिणित हो जाते हैं। इसी से धीमी वृष्टि होने लगती है। तो वह जो चन्द्रमा है, वह कैसा सौम्य है? कैसा अमृतमय कहलाता है, षोडश कलाओं वाला है?शुक्ल पक्ष में यह प्रतिपदा से प्रारम्भ अपनी कलाओं से सम्पन्न होता रहता है। ये कलाएं क्या हैं?षोडश कलाएं हैं। इन्हीं षोडश कलाओं में, सर्वत्र ब्रह्माण्ड का ज्ञान और विज्ञान निहित रहता है।

तो षोडश कलाओं वाले चन्द्रमा का सम्बन्ध मानव की रसना से होता है। और रसना में रस आता रहता है। नाना प्रकार के रसों को अपने में धारण करता रहता है, वह रसीबना रहता है। तो इस रसना को हमें जानना चाहिए। यह रसना बाह्य जगत के आनन्द को अपने में गृहण करती रहती है, और रसों का समन्वय किनकिन पदार्थों से है?इनका अणुओं से भी समन्वय है। यह सोम आदि बनकर के अग्नि के प्रतिनिधित्व को प्राप्त होने लगते हैं। तो यह परमाणु जो चन्द्रमा में आभायित कर रहे हैं। उस को सोम बना रहे हैं। उसको हमें पान करना और उसे धारण करना बहुत अनिवार्य है।

हम चन्द्रमा को अपना देवत्व स्वीकार करते हैं। चन्द्रमा के द्वारा सन्तानों का जन्म होता है। यही रस बन करके वीर्यत्व के रूप में रजस्व के रूप मेंबालक का निर्माण करता है, कलाओं के सहित निर्माण होता है। माता के गर्भ स्थल में नौमाह में निर्माण होता है है। इसी जगत को तुम नेत्रों के समानरसना स्वादन से बाह्य जगत में नाना प्रकार के रसों का स्वादन कर रहे हो। यही रस योगेश्वर अपनी आन्तरिकता में धारण कर लेता है, और अन्तर्हृदय में इसका जब अनुभव करता है। ब्रह्मरन्ध्र से ले करके, यह मूलाधार से ले करके ब्रह्मरन्ध्र तक चला जाता है। इन स्वादों का स्वादन करता हुआ, ब्रह्मरन्ध्र में वह अमृत को अपने में धारण करता है। इस अमृत को योगीजन अन्तर्हृदय में, अन्तर्मुखी

हो करके देवता इसको पान करते हैं। इसको पान करना, बाह्य जगत में रसों का स्वादन प्राणी कर रहा है।
हे मानव! तू आन्तरिक हृदय में इसके पात को, इसके रस को, अमृत को, तू आन्तरिक जगत में ग्रहण कर लेगा, तो तेरी महत्ता और पवित्रता बनी रहेगी। वह योगेश्वर बनने में योगी बनने में सहायक बन जाता है अथवा योगेश्वर ही बन जाता है। 22.02.1980

869 स्पर्श, वायु का गुण

यह विज्ञान है। प्रत्येक मानव विज्ञान में प्रवेश होना चाहता है। प्रत्येक मानव आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करना चाहता है। मानव को स्पर्श होता है, उस स्पर्श क्रिया को जान लेना, यह वायु का गुण माना गया है। जब स्पर्श करता है, तो वह भिन्नभिन्न प्रकार का स्पर्श होता है। क्रोध का भी स्पर्श होता है, ममता का भी होता है, और ममता में भी नाना प्रकार के ओर भेदन हैं।
इस त्वचा का सम्बन्ध वायु से रहता है और वायु का समन्वय प्राण से रहता है। वायु रमण कर रहा है। वेद में गति कर रहा है। अपने में स्पर्श कर रहा है। स्पर्श करता हुआ, आभा में परिणित कर रहा है। विचारना क्या? वह उसी त्वचा के स्वरूप को जान करके वायु जो वेग में आन्तरिक जगत में क्रीडा कर रही है। उस क्रीड़ा को जानना बहुत अनिवार्य है।
तो उसका स्थूल बनाना, स्पर्श करते ही मानव को अनुभव हो जाए, क्रियात्मक वाक्यों में नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया और नाना यन्त्रों का निर्माण करते हुए उन्होंने कहावह यन्त्र कैसे निर्मित करता है, स्पर्श वाले चित्रों को? क्योंकि वायु की आभा में प्राण गति करता है, प्राणों पर शब्द विद्यमान हो, करके इस संसार को आभायित कर रहा है।
तो वह स्पर्शवादी जो वैज्ञानिक होते हैं, वे इसके ऊपर अनुसंधान करके परमाणुओं का निर्माण करते रहते हैं। नाना प्रकार के निर्माणवेत्ता जब निर्माण करने लगते हैं, तो यन्त्रों का निर्माण होने लगता है। प्रकृति के वाड्ममय स्वरूप को जानने वाले, वैज्ञानिकद्वारा वायु के वेग में रमण करके, नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया जाता है। 22.02.1980

870 अग्नि

इसी प्रकार की सृष्टि वायुमण्डल में रहती है।नाना प्रकार के प्राणी गति करते रहते हैं। परमाणु गति करते रहते हैं। उनकी गतियों में एक समान आभा विराजमान रहती है। जब हम उसका अनुभव करने लगते हैं। तो विचार आता हैवैज्ञानिकां के तथ्य में रमण करने के लिए प्रवेश करते हैं।वही अग्नि जो समुद्रों में रमण करती है, वही अग्नि माता के गर्भस्थल में प्रवेश कर जाती है, औरमाता के गर्भ में यही बड़वानल नाम की अग्नि एकएक परमाणु को छिन्नभिन्न करके उनका नाम ''पादामृति अग्नि'', होता है उसका मिलान होते ही परमाणुओं का मिलान हो जाता है। परमाणुओं का मिलान हुआ, बालक का निर्माण हो गया।
वही अग्निमाता के गर्भस्थल में जब पंच माह का गर्भाशय होता है, उस काल में वही अग्नि बालक के शरीर में प्रवेश कर जाती है और अग्नि प्रवेश करकेजैसे पृथ्वी के गर्भ में धातुओं का निर्माण होता है। ऐसे ही धातुओं का, खनिज के द्वारा इस बालक के शरीर में निर्माण होता है। 'इन्द्र' नाम की अग्नि वायु में रहती है। वह वायु परम ऐश्वर्यवान बन करके माता के गर्भस्थल में बालक के शरीर में प्रवेश करती है, और प्रवेश करके जितनी भी अग्नि वायु में विद्यमान रहती है। चन्द्रमा में अग्नि तत्व में विद्यमान रहती है। वह सर्वत्र उसमें प्रवेश करती है, तो बाह्य जगत में आ करके वही प्राणी अनुसन्धान करने लगता है, विज्ञानवेत्ता बनता है। 22.02.1980

871 मानव शरीर में ब्रह्माण्ड

बाह्य जगत में आ करके कहीं चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है, कहीं मंगल की यात्रा कर रहा है। कहीं पृथ्वी के गर्भ को जान रहा है। कहीं वायु के तत्वों को जान रहा है। यह केसे जानता है? मानव के सूक्ष्म शरीर में, पिण्ड में सर्वत्र ब्रह्माण्ड विद्यमान है। परन्तु उस ब्रह्माण्ड को जानने की, तप करने की आवश्यकता है।जब मानव तप करता है। तप करने से वह जो अंकुर हैं, वह स्वाभाविक रूप से जागरूक हो करके वैज्ञानिक बनते हैं। यह जो मन और प्राण है एक सूत्र में आ करके वही इन्द्रियों के द्वारा विभक्त हो करके इसीलिए उसे योग की इच्छा होती है क्योंकि योग के तत्व भी इसमें विद्यमान रहते हैं। तो हमें इस मानवीय दर्पण को विचारना चाहिए। मानव दर्पण को, मानव विज्ञान को और बाह्य जगत वाले विज्ञान को समन्वय करना नहीं जानता। तो वह योगेश्वर नहीं बन सकता।
आज जब मानव से यह कहा जाता हैहे मानव! तू अपने मानवीय दर्शन को जानने का प्रयास कर। मानव दर्शन को नहीं जानता अग्नि की तरंगों को जानता है। अग्नि की तरंगों का अपने जीवन से जो समन्वय होता है, उसको नहीं जानता। जब अग्नि की तरंगों का अपने मानवीय जीवन से समन्वय होता है, उससे आधुनिक काल का वैज्ञानिक दूर जा रहा है। कि मानव के जीवन में विज्ञान से कितना समन्वय रहता है? आधुनिक काल वैज्ञानिक का मंगल में यान जा रहा है। मंगल में यन्त्र जा रहा है, चन्द्रमा में जा रहा है। आज यन्त्रों पर यन्त्र जा रहे हैं। राष्ट्र के और समाज के गर्भ में प्रवेश करते हैं और समाज के उनसे यह कहा जाता है कि तुम्हारा जीवन कितना पवित्र है। तुम्हारा जीवन कितना सुरक्षित है। मानव, मानव से त्रासता को प्राप्त हो रहा है। मानव, मानव से मिलान करने के लिए तत्पर नहीं है। जहाँ मानव, मानव से मिलान

करने में प्रसन्नता होती थी, उल्लास होता है, वहाँ मानव, मानव से भयभीत होता हुआ, अपने जीवन को मानवता में प्रकट नहीं कर रहा है। परन्तु जब मैं अपने पूज्य पाद गुरुदेव से कहा करता हूँ कि इस मानव समाज में अग्नि प्रदीप्त होने वाली है, तो पूज्यपाद गुरुदेव कहते हैं यह कटु शब्द है। 22.02.1980

872 वैज्ञानिक

वैज्ञानिक कैसे होते हैं? वैज्ञानिक उन्होंने कहा जाता है, जो आत्मीयता और परमाणुवाद को जानने वाले होते हैं। परमाणुवाद को कौन जानता है? वैज्ञानिकजानता है। परमाणुवाद को कौन जानता है? आध्यात्मिकवेत्ता जानता है। परमाणुवाद को कौन जानता है? वह जानता है जो मानवीय दर्शन को जानता। जब मैं विद्यालयों में प्रवेश करता हूँ, विद्यालयों में यह कहा करता हूँ, तुम्हारे शरीर में कितनी इन्द्रियां हैं?इन्द्रियों का भी वर्णन नहीं कर सकते। जब मैं यह कहा करता हूँ तुम्हारे शरीर में कितने प्राण हैं? प्राणों का वर्णन भी नहीं कर सकते। जब मैं यह कहा करता हूँ कि बुद्धि का माध्यम कहाँ है? तो बुद्धि के और मनस्त्व के माध्यम का निर्णय नहीं कर पाते।

क्या मैं इनको विद्यार्थी कहूँ? क्या उच्चारण कर सकता हूँ? वह आचार्यों के समीप पहुंचते हैं, आचार्य भी इसको नहीं जानते। यह दोषारोपण किसका है? आचार्यों का है या यह दोषारोपण ब्रह्मचारियों का है? विद्यार्थियों का है? छात्रों का है? यह दोषारोपण सब वैज्ञानिकों केद्वार से आ रहा है। क्योंकि वैज्ञानिकजन मूल को नहीं जानते। मूल को न जानकरके केवल वृक्ष की शाखा को जानता है, आज का वैज्ञानिक पत्तों को जानता है। आज का वैज्ञानिक यह नहीं जानता, कि मानव का मूल क्या है? समाज का मूल क्या है? समाज के मूल को नहीं जानोगे।

एक वैज्ञानिक यह विचार रहा है कि वाणी यह कृत कहलाती है। एक वैज्ञानिक यह जानता है कि मैं चन्द्रमा में पहुंच गया हूँ। परन्तुकुछ रूढ़ियां ऐसी हैं वे यह कहती हैं कि चन्द्रमा में जा ही नहीं सकते। क्यों नहीं जा सकते चन्द्रमा में? चन्द्रमा में जाना ऐसा कौनसा आश्चर्य है? क्यों इस प्रकार की वार्ता राष्ट्र में प्रकट की जाती है। 22.02.1980

आधुनिक काल के वैज्ञानिक चन्द्रमा और पृथ्वी के मध्य में एक यन्त्रशाला का निर्माण करने के लिए तत्पर हैं। उसका निर्माण भी हो गया। परन्तु उस में वैज्ञानिक विद्यमान हो करके, अपनी विज्ञानशालाएं इसके नीचे अनुसन्धान हो रहा है। यह वाक्य यथार्थ है। ऐसी विज्ञानशालाओं का निर्माण होना चाहिए। परन्तु यह अपवाद में आ जाती है। वह यन्त्र चन्द्रमा और पृथ्वी के मध्य में स्थिर हो जाए और स्थिर होकर के वह यन्त्र वहाँ से गति कर जाए, यह असम्भव वाक्य है। यह भी असम्भव है कि वह पृथ्वी पर आकर प्राणियों को नष्ट कर दे। परन्तु वैज्ञानिक अपनी बहुतसी वार्ता मिथ्या उच्चारण कर रहे हैं और वह मिथ्या क्या है कि वहाँ से वह यन्त्र पृथ्वी के आँगन को चल दिया है। 23.02.1980

873 द्यौ में चित्र

तो यह प्रभु का जो तेज है यह सृष्टि के प्रारम्भ से, उस प्यारे प्रभु का तेज हमें दृष्टिपात आता है। विचारविनिमय करने से प्रतीत होता है, वह जो द्यौमण्डल है, उसमें मानव के चित्रों का दिग्दर्शन होता हुआ, चित्र शब्दों के साथ में रमण करता हुआ, द्यौ लोक में चला जाता है। जो महान शब्द है, जो विचित्र शब्द है, जो दर्शनों से गुथा हुआ सत्यता से गुथा हुआ शब्द है, वह गति करता हुआ द्यौ लोक को प्राप्त हो जाता है। उसका चित्रण नहीं हो सकता। कोई यन्त्र का निर्माण नहीं किया गया जो उसको चित्रित करने वाला हो। इसी प्रकारवह द्यौलोक में रमण करता है।

874 विज्ञान में मानव सम्पदा

एक समय दोनों वैज्ञानिक सम्भानु ऋषि महाराज केद्वार पर पहुंचे। सम्भानु ऋषि महाराज ने कहा, आओ महावृत्तिः। दोनों आश्रम में विद्यमान हो गए। ऋषि ने कहा, मैंने श्रवण किया है कि तुमने यन्त्रों का निर्माण किया है। तुम यह क्या कर रहे हो? इससे संसार का विनाश होता है। उन्होंने कहाविज्ञान से विनाश नहीं होता। विज्ञान तो मानव की सम्पदा है। ऋषि ने कहाअस्त्रोंशस्त्रों से तुम विनाश को प्राप्त हो जाओगे। उन्होंने कहाहम विज्ञान को नष्ट नहीं होने देंगे, न इससे हमारा विनाश होगा।

हम प्रातःकाल याग करते हैं और याग के द्वारा, गौघृत के द्वारा, हम गौवर्धन याग करते हैं, उससे वायुमण्डल पवित्र बनता है। 29.09.1981

875 यज्ञ से विज्ञान

तो हमारे ऋषिमुनियों के मस्तिष्कों में यागों का चलन परम्परागतों से रहा है। वैदिक साहित्य में हमारे यहाँ यज्ञ की प्रतिभा का वर्णन आता है। क्योंकि हमारे यहाँ ऋषिजन योगसाधना के लिए यौगिकता को पवित्र बना देते हैं वह याग कहलाता है। माता अपने पुत्र को जन्म दे रही है, वह याग कर रही है। राजा राष्ट्र का निर्माण कर रहा है तो याग कर रहा है। वैज्ञानिक जब विज्ञानशाला में विद्यमान होते हैं तो सबसे प्रथम वह यज्ञशाला का निर्माण करते हैं। महर्षि भारद्वाज के यहाँचौबीस प्रकार की यज्ञशाला थीं, महाराजा गणेश जी के यहाँ चौबीस

प्रकार की यज्ञशाला थीं। 29.09.1981

876 रुद्राष्टि याग

महाराजा शिव के यहाँ जिन्होंने रुद्रष्टि याग का निर्माण किया। रुद्र क्या है? रुद्र हमारे यहाँ उसे कहते हैं जो रुला न सके।शिव को रुद्र रूपों में परिणत किया है। वह रुद्रेष्टि याग करते थे। एक सौ ग्यारह यज्ञशालाओं का निर्माण महाराजा शिव के यहाँ होता रहा है। यहाँ संसार को दृष्टिपात करने के पश्चात ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक मानव इस संसार में याज्ञिक बना हुआ है। माता के द्वार पर जाता हूँ, तो माता याग कर रही है। राजा के द्वार पर जाता हूँ, तो राजा याग कर रहा है। जो राजा याग नहीं करता है, उस राजा के राष्ट्र की सम्पदा समाप्त हो जाती है।

जिस राजा के यहाँ ब्रह्मवेत्ता पुरुष नहीं होते, राजा के राष्ट्र में याज्ञिक पुरुष नहीं होते अग्निष्टोम याग के वेत्ता नहीं होते उस राजा का राष्ट्र अन्धकार में चला जाता है। 29.09.1981

877 यज्ञ का महत्त्व

भगवान राम अपने यहाँ यही उपदेश देते थे, कि तुम्हारे यहाँ याग होना चाहिए। याग की प्रतिभा मानव के मस्तिष्कों में होनी चाहिए। यह क्रिया देवपूजा कहलाती है और इसी देवपूजा से ही याज्ञिक यज्ञमयी बनता है, वैज्ञानिक विज्ञानवेत्ता बनता है। मेरी प्यारी माता विदुषी बन जाती है। ब्रह्मचारी विद्यालय में ब्रह्मचारी बन रहा है। उसका निर्माण हो रहा है याग के द्वारा।यह संसार एक यज्ञमयी माना गया है। यहाँ प्रत्येक मानव, प्रत्येक श्वास के द्वारा याग करता है। मानव की शरीर रूपी जो यज्ञशाला है, ऋषियों ने इसकी बहुत ऊँची कल्पना की है। इसके ऊपर बहुत ऊर्ध्वा से विचारा है। 29.09.1981

878 पञ्च होता

ब्रह्मचारियों ने कहा पांच होताओं से याग क्यों?उन्होंने कहा पंचमहाभूत हैं। जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु और अन्तरिक्ष, यही पंचमहाभूत कहलाते हैं। यह मानव के शरीर में गति कर रहे हैं, यज्ञशाला में विद्यमान हैं। इन्हीं से यज्ञमान याग करता है। पंचमहाभूतों को जानता हुआ, वह प्रायः पंचीकरण करता रहता है। पाच ज्ञानेन्द्रियां हैं, पाच प्राण हैं। इनको जानने वाला पंचीकरण में होता हुआ, संसार के परमाणुवाद को, अणुवाद को जानता हुआ वह भौतिक विज्ञानवेत्ता बनता हुआ, आध्यात्मिकवाद में प्रवेश कर जाता है। उन्होंने कहा कि महाराज! तीन होता क्यों?उन्होंने कहा कि मानव शरीर तीन गुणों वाला है, जिसे सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण कहते हैं। 01 10 1981

सूत्र में ब्रह्माण्ड

उन्होंने कहा महाराज दो क्यों? उन्हांने कहा एक जड़वत है और एक चेतना है चेतना है। चेतना में ब्रह्म है और जड़वत में प्रकृति कहलाती है। उन्होंने कहा कि एक क्यों? एक चेतना है। एक ही सूत्र है, उस सूत्र में सर्वत्र ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ है। कैसे पिरो रहा हैकैसा अनुपम सूत्र है?ब्रह्माण्ड का एकएक कण, उस सूत्र में पिरोया हुआ है। जैसे माला में सूत्र होता है, इसी प्रकार उसी सूत्र में यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ है।

तो सब ऋषिमुनियों ने महर्षि विश्वामित्र से यह कहा कि तुम धर्नुयाग करो और अयोध्या में यह जो राजकुमार हैं, राम और लक्ष्मण इन दोनों को धनुर्याग से महान् बनाओ। उनको बलिष्ठ बनाया जाए। वैज्ञानिकता से, अस्त्रोंशस्त्रों से युक्त किया जाए। तोजब यह विचार चला तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने यह कहा कि रावण का जितना भी वंश है मैं प्रायः उनको शिक्षा देता रहा हूँ, क्योंकि उनके विधाता जो कुम्भकरण हैं वह मेरे यहाँ बारहबारह वर्षों तक विज्ञान की शिक्षा ले करके गए हैं। उनका विज्ञान इतना विशाल है, वह इतने अनुसन्धानवेत्ता हैं कि वह छः मास तक हिमालय में अनुसन्धान करते रहते हैं और छः मास तक लंका में, विद्यालयों में वैज्ञानिकों को शिक्षा देते रहते हैं। कुम्भकरण का इतना विज्ञान नितान्त था। 01.10.1981

879 स्वर्ण में सुगंधि

एक समय हिमालय कन्दराओं में अनुसन्धान करते हुए वह नित्यप्रति याग भी करते थे। उनहोने विचारा कि यह स्वर्ण की जो धातु है यह विशेष है। परन्तु मैं यह चाहता हूँ कि स्वर्ण में सुगन्धि उत्पन्न हो जाए। वह सुगन्धि के से ला सकते थे? परन्तु वह इसके ऊपर विचारविनिमय ही करते रहे, उसमें सुगन्धि नहीं ला सके। विचारते रहे क्योंकि अनुसन्धान उनका एक कर्त्तव्य बन गया था। 01.10.1981

880 विवेकी पुरुषों से चरित्र स्थापन

कुम्भकरण छः मास तक हिमालय कीकन्दराओं में अज्ञातवास में रहते थे और छः मास विश्वविद्यालयों में वह विज्ञान की शिक्षा प्रदान करते रहते थे।

भारद्वाज मुनि महाराज ने यह कहाअगर तुम रावण के अचरित्रवाद को समाप्त करना चाहते हो, तो विवेकी पुरुषों का जन्म होना चाहिए।

विवेकी पुरुष होने चाहिए। क्योंकि समाज में जब तक विवेक नहीं बनता, विवेकी पुरुष नहीं होते, वेद के पठनपाठन करने वाले पुरुष नहीं होते, और उनमें विवेक न हो, तब तक राष्ट्र ऊँचा नहीं बन सकता। जब उन्होंने यह वाक्य प्रकट किया, तो भारद्वाज मुनि ने यह कहामेरी विज्ञानशाला में जितने भी वरुणास्त्र हैं, इन्द्रास्त्र हैं, मेरे यहाँ नाना अस्त्रों का निर्माण किया गया। मैं राम की परिस्थिति जान करके, कोष को प्रदान कर सकता हूँ। भारद्वाज ने तो यह उस समय शपथ ग्रहण की, कि जितना भी मैंने विज्ञान को कजली वनों में विद्यमान हो करके, नाना यन्त्रों का निर्माण किया, क्योंकि भारद्वाज मुनि ने यह कहामेरे यहाँ ऐसे यन्त्र हैं, एक मानव के रक्त के बिन्दु को यन्त्र में प्रदान किया जाए, उस यन्त्र में मानव का चित्र आ जाता है, जिस मानव का वह रक्त का बिन्दु हो। चाहे वह प्राणी इस संसार में है अथवा नहीं। परन्तु रक्त के बिन्दु से उसका चित्रण कर सकते हैं। 01.10.1981

881 विज्ञान से राष्ट्र में सात्विकता

उन्होंने कहा आग्नेय अस्त्र भी मेरे यहाँ हैं। विद्यालयों से ही विज्ञान का जन्म होता है। वैज्ञानिक बनते हैं, उड़ान उड़ने वाले बनते हैं। वैज्ञानिकों को यह चाहिए, समाज को ऊँचा बनाना है, तो समाज को ऊर्ध्वा दशा में ले जाएं, और विज्ञान का सदुपयोग होने लगे। राष्ट्र में विज्ञान के द्वारा सात्विकता आ जाए।वह कैसे आती है? जब नाना चित्रावलियों का निर्माण राष्ट्र में हो जाता है। वैज्ञानिक कर लेते हैं, परन्तु यह कोई आश्चर्य नहीं है। एक मानव का शब्द है। शब्द के साथ में चित्र है।इतना ऊर्ध्वा में विज्ञान, जो एक यन्त्र में, अपने महापुरुषों के, अपने सौवें महापिता के यन्त्रों में चित्र आ जाते हैं।

एक रक्त के बिन्दु से जिस मानव का रक्त का बिन्दु है, उसका साक्षात्कार हो जाता है। आधुनिक विज्ञान में जाता हूँ तो आज का वैज्ञानिक इकाई में रमण कर रहा है। परन्तु पूर्व के भारद्वाज मुनि की विज्ञानशालाएं, यहाँ महाराजा कुम्भकरण की विज्ञानशाला है, उन विज्ञानशालाओं को दृष्टिपात करके आज की विज्ञानशालाएं इकाई में रमण कर रही हैं। पूर्व का मानव, पुरातन काल का मानव यहाँ से उड़ान उड़ता है, चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है। चन्द्रमा से उड़ान उड़ी है मंगल लोकों में चले गए। नाना लोकों का भ्रमण करते रहे। परन्तु एक यन्त्र जो बहत्तर लोकों में भ्रमण करने वाला और वह पुनः पृथ्वी मण्डल पर आ जाए। आज का वैज्ञानिक के वल चन्द्रमा तक पहुंचा है। कुछ कक्षों में यन्त्र रमण कर रहे हैं, कुछ मंगल के कक्ष में रमण कर रहे हैं आज के विज्ञान में। परन्तु पूर्व का विज्ञान इतना महान् रहा है कि सूर्य की परिक्रमा करने वाले यन्त्र थे और शनि की परिक्रमा करने वाला यन्त्र था।

आज का विज्ञान इस पृथ्वी के, सूर्य के, गर्भ में तेरह लाख पृथ्वियों को जान पाया है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने तीस लाख का वर्णन किया है।परन्तु आज का विज्ञान केवल शनि को प्रकाश देने के लिए पांच सूर्य कहता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने इसके ऊपर टिप्पणी की और यह कहा कि शनि को बहत्तर सूर्य प्रकाश देते हैं।

परन्तु ऋषिमुनियों की विज्ञानशालाएं इतनी महान् रही हैं। आज जब हम वेद की धाराओं को नहीं अपनाना चाहते, वेद रूपी प्रकाश से यह विज्ञान उत्पन्न होता है क्योंकि वेद एक प्रकाश है। ज्ञान का नाम वेद है और वेद रूपी प्रकाश को अपनाने वाला मानव ऊची उड़ान उड़ता है। विजानमयी उड़ान उड़ने वाला है, आज का विज्ञान ब्रह्मचर्य के ऊपर बल नहीं देता। ब्रह्मचरिष्यामि के ऊपर बल नहीं देता परन्तु पूर्व का वैज्ञानिक ब्रह्मचारी रह करके उड़ान उड़ता था। 01.10.1981

882 विभिन्न लोकों में आवागमन

आज का मानव कहताहै कि वह चन्द्रमा में चला गया है। चन्द्रमा में जाना कोई आश्चर्य नहीं। सूर्य में जाना भी कोई आश्चर्य नहीं। मंगल में जाना भी आश्चर्य नहीं है क्योंकि हमारे पूर्वज मंगल मण्डलों में रहरह करके और उन्होंने शिक्षा पा करके विज्ञान को प्रसार किया परन्तु मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यही कहा किविज्ञान राष्ट्र का प्राण माना गया है। विज्ञान ही लोकलोकान्तरों की माला को गणित करने लगता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव विज्ञान की महत्ता नित्यप्रति वर्णन करते रहते हैं। मैं आधुनिक काल के वैज्ञानिक यह उच्चारण कर रहे हैं, समयसमय पर जो तुम भविष्यवाणी करते हो, अपने अनुमान की चर्चा करते हो, प्रजा को भय में परिणत नहीं करना चाहिए। राजा के राष्ट्र में प्रजा में भय हो जाता है। उसकी आत्मा का हनन हो जाता है। आत्मा के हनन होने पर निष्क्रय बन करके वह समाप्त हो जाता है। राष्ट्र की राष्ट्रीयता समाप्त हो जाती है। आधुनिक काल का जो विज्ञान है वह समाज को भय दे रहा है। 29.01.1982

883 एक दूसरे लोक की छाया दुसरे लोक पर

अब जो भय आ रहा है, एक राशि पर ग्रह आ गए हैं। एक राशि पर ग्रह आना ही समाज का अन्त हो जाना है। कुछ भाग समाप्त हो जाएंगे। कौनकौन से ग्रह हैं जो एक ही सूत्र पर एक ही राशि पर आ रहे हैं? उसमें मंगल है, बुध है, शनि है, श्रोति है, तृती है, जमदकेतु है, ये नाना प्रकार के मण्डल जो एक पृथ्वी कहलाती है, एक राशि पर, एक ही रेखा पर आ रहे हैं। तो एक रेखा पर तो यह आते ही रहते हें। कोई आश्चर्य का वाक्य नहीं है। वह रेखा पर जब आते हैं तो आते रहते हैं, परन्तु उससे समाज का भाग नष्ट नहीं होता उनका प्रभाव इस समय

बुध पर जा रहा है। बुध मण्डल में नाना प्रकार के आक्रमण हो सकते हैं। परन्तु यह भी अनिवार्य नहीं है। क्योंकि यह जो मानव की आभा है पृथ्वीमण्डल की छाया बुध पर जा रही है; बुध की छाया मंगल पर जा रही है, मंगल की छाया शनि पर जा रही हैं, शनि की छाया त्रेतकेतु पर जा रही है, त्रेतकेतु की छाया चन्द्र पर जा रही है, चन्द्र की छाया पुष्य पर जा रही है।

पुष्य नक्षत्र की छाया ध्रुव पर जा रही है, ध्रुव की छाया रोहिणी केतु नक्षत्र पर जा रही है। रोहिणीकेतु नक्षत्र स्वाति नक्षत्र को प्रभावित कर रहा है। यह चक्र तो प्रभु का एक ब्रह्माण्ड कहलाता है। इस ब्रह्माण्ड में एक दूसरा मण्डल, एकदूसरे मण्डल को प्रभावित करता रहता है, दैवी प्रकोप भी होते रहते हैं, अनावृष्टि अतिवृष्टि में यह समाज परिवर्तित होता रहता है। परन्तु आधुनिक काल का वैज्ञानिक अभी इतना नहीं जानता कि बृहस्पति के अन्तर्गत कितने सूर्य गति कर रहे हैं उनकी भी गणना तुम नहीं कर सकते।

परन्तु यह भविष्यवाणी उनके अधूरेपन में परिणत होती रहती है। वह जो उनका आकार है, भविष्यवाला, वह भविष्यवाणी उनके नियन्त्रण में नहीं रह पाती। क्योंकि आभामयी जो जीवन की धाराएं हैं अथवा जो नक्षत्रों से धाराओं का जन्म होता है, सूर्य की किरणें एक लोक में पहुंची। उस लोक में उस किरण के प्रभाव से उसका कोई विभाग जा करके द्वितीय मण्डल में जा गिरा।

मण्डल में जब प्रवेश हुआ तो वह मण्डल अकृत बन गया। अपनी गति से मण्डल गतियां कर रहे हैं। अपनी रेखा में, एक सूत्र में गतियां कर रहे हैं और वह गतियां करते, करते एक ही रूप धारण कर लेते हैं। परन्तु उस समय प्रकृति का, पृथ्वी का, प्रकृति के गर्भ में जितने मण्डल हैं चाहे वह पृथ्वी मण्डल हो, चाहे वह चन्द्रमा हो, चाहे वह मंगल हो, बुध हो, शुक्र हो परन्तु कोई भी लोकलोकान्तर हों, किन्हीं लोकों के जीवन ध्वस्त हो जाते हैं और किन्हीं के जीवन ऊर्ध्वा में चले जाते हैं। कहीं नक्षत्रों का प्रभाव महानता में होता है, कहीं विनाशता में होता है। तो यह जो वैज्ञानिकों की धाराएं हैं, परम्परागतों से वैज्ञानिक होते चले आए हैं।

सृष्टि के प्रारम्भ से अनगणित वैज्ञानिक हुए हैं जिनको हम गणना में नहीं ला सकते। इतने विशालविशाल वैज्ञानिक हुए हैं जो विज्ञान के रूपों में परिणत थे। 29.01.1982

884 आहार व्यवहार पर वैज्ञानिक व्यवहार

आज का यह विज्ञान, वाणी में अधूरापन क्यों हो रहा है?

क्योंकि वैज्ञानिकों का आधुनिक काल में जो परमाणुवाद कहता है जो उनकी विचारधारा कहती है उसके अनुसार उनका आहार और व्यवहार नहीं रहा और उनके अनुसार आहार और व्यवहार न रहने पर वह अधूरे ही दृष्टिपात आते हैं उनमें संकीर्णता दृष्टिपात आती है। परन्तु उनका बाह्य जीवन कुछ बना हुआ है और आन्तरिक जो जीवन है वह कुछ कह रहा है।

एक परमाणुवादी विज्ञानवेत्ता यह कहता है कि गौघृत में, गौदुग्ध में वह शक्ति, वह परमाणु विद्यमान हैं, जिससे मानव अपने में प्रकाशित बनता है। परन्तु उसका आहार और व्यवहार करने से, अन्नाद को पान करने से, विशेष रूप से हिंसा नहीं होती। वह अहिंसा परमोधर्मी आहार को न करने से वैज्ञानिकता में संकीर्णता अधूरापन आता जा रहा है। इसके मूल में क्या है? आहार और व्यवहार जो उनका विज्ञान कहता है, खनिज पदार्थों को जान करके जो उन्हें प्रेरणाएं प्राप्त होती हैं उसके अनुसार उनका आहार, व्यवहार और क्रियाकलाप न रहने से मानव की आभा समाप्त होती जा रही है। उसी के मूल में है कि वैज्ञानिक जब अपने कथनानुसार जीवन को नहीं बनाते तो परिणाम यह होता है कि राष्ट्र में दूषितपना आ जाता है, राष्ट्र में दूषितपना आ करके और धर्म और रूढ़ियों में राष्ट्र परिणत हो करके अग्नि के मुख में परिणत हो जाता है। 29.01.1982

885 समाज की विचार धारा से वायुमण्डल निर्माण

आधुनिक वर्तमान का जो काल चल रहा है, प्रातःकालीन और सायंकाल को सूर्य के उदय होने और सूर्य के अस्त होने के पश्चात, सूर्य के उदय होने से पूर्व एक लालिमा अन्तरिक्ष में अपना प्रकाश दे रही है। परन्तु वह जो लालिमा भ्रमण कर रही है उसके मूल में समाज की विचारधारा है। समाज की विचारधाराओं से वायुमण्डल तो बनता ही है, यह तो सार्वभौम एक सिद्धान्त है। परन्तु वह जो लालिमा आ रही है उसमें एक बुध और मंगल रोहिणी और वशिष्ठ, अरुंधति, सोमभूमिका, स्वेणकेतु, स्वाति और पुष्य, अचंग, स्वातिधेन ये जो नक्षत्र है, ये एक सीमा में आ रहे हैं। परन्तु ये जो सीमा में आ रहे हैं, वर्तमान काल के वैज्ञानिकों ने इसके ऊपर अनुसन्धान भी हो रहा है। अनुसन्धानवेत्ता अनुसन्धान भी कर रहे हैं। परन्तु नक्षत्रों की एक आभा बन गई है, वह लालिमा, अनावृष्टि और अतिवृष्टि के रूप में परिणत होने वाला, यह वायुमण्डल है। परन्तु इन लोकों का प्रभाव मंगल पर, विशेषकर उसमें धारा परिणत हो रही है। मंगल मण्डल का जो समाज है, यहाँ का प्राणीमात्र जीवन भी अस्वस्थता में परिणत हो रहा है। परन्तु इस पृथ्वी मण्डल का जो प्राणी है, यह भी त्राहित्राहि कर रहा है, कि इस आधुनिक पृथ्वीमण्डल पर त्राहि का तो एक कारण है कि विज्ञान का दुरुपयोग होता जा रहा है। प्रत्येक प्राणी उस विज्ञान के दुरुपयोग को अपने में ग्रहण कर रहा है, अपने में ग्रहण करताकरता इसकी आवश्यकताएं बलवती हो गयी हैं। यह अपने आहार और

व्यवहार की पूर्ति करने के लिए भी यह जगत उसे असम्भव सा दृष्टिपात आ रहा है। 29.01.1982

886 साधना से विज्ञान

महर्षि याज्ञवलक्य मुनि महाराज अपनी विज्ञानशाला में यन्त्रों से इस आकाश गंगा के सूर्यों की गणना करते रहते थे, निहारते रहते थे। अन्तः में वह मौन हो जाते थे और तपस्या करते थे। समाधि में उस महान् विज्ञान को दृष्टिपात करते थे।

आधुनिक काल का जो वैज्ञानिक है वह ऐसा है कि एक तरंग को उसने जाना है, द्वितीय तरंग प्रतीत हो गई है, तृतीय तरंग प्रतीत हो गयी है उसी में उसका प्राणान्त हो जाता है। परन्तु उसे समाधिष्ठ होने का अपनी अन्तरात्मा से या मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार को एक सूत्र में ला करके जब वह वैज्ञानिक तत्वों का अनुभव करता है तो वह विज्ञान उन ऋषिमुनियों का सफल हो जाता है। आज मैं जब यह विचारता हूँ कि आधुनिक जगत का जो वैज्ञानिक है एक अणु को, एक परमाणु को जानता हुआ, उसमें कितनी धाराओं का जन्म होता है इसमें वह शान्त हो जाता है। 29.01.1982

887 एक एक परमाणु में सृष्टि

आधुनिक जगत में कुछ वैज्ञानिकों का ऐसा विश्लेषण चल रहा है। ऐसी उनकी विचारधारा है कि एक अणु, एक परमाणु को हम विभाजन करना चाहते हैं। उसने विभाजन किया तो उसने अधूरेपन की तरंगों को जाना है।

भूतकाल की वार्ताएं, अतीत के काल के ऋषियों की चर्चाएँ, जैसा भारद्वाज मुनि के यहाँ ब्रह्मचारिणी शबरी, ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धि, भगवान राम, महाराज कुम्भकरण, स्वाति अश्वेत, नाना ऋषिवर एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके, उन्होंने एक परमाणु का जब विभाजन किया, वह विभक्त हुआ, तो जितना यह ब्रह्माण्ड है, यन्त्रों से उस एक ही परमाणु के विभाजन करने से सर्वत्र ब्रह्माण्ड का चित्रण उसी एक परमाणु में दृष्टिपात आने लगा।तो उस काल में भारद्वाज इत्यादि ऋषियों ने इससे यह सिद्ध होता है जैसे हम पिण्ड और ब्रह्माण्ड की कल्पना करते हैं, और यह कहते हैं कि पिण्ड है, तो ब्रह्माण्ड है।परन्तु यहाँ तो एकएक परमाणु सृष्टि की गाथा गा रहा है और सृष्टि का वर्णन कर रहा है। ब्रह्माण्ड का चित्रण उसमें विद्यमान है। एकएक परमाणु में ब्रह्माण्ड का चित्रण होता रहता है। परन्तु जब वैज्ञानिक इस वाक्य को विचारने लगते हैं तो प्रायः ऐसा सिद्ध होता है कि भारद्वाज मुनि महाराज के द्वारा एक कामधेनु गऊ थी। उस कामधेनु गऊ का दुग्ध का आहार करते थे। परन्तु कुछ अन्नाद को पान करते थे और वह अन्नाद एकत्रित करते रहते थे। अन्नाद जिस पर किसी का अधिकार न हो, उस अन्न को खरड़ बना करके, उसका दुग्ध बना करके और गौ के दुग्ध में उसका मिश्रा करके, एक सौ एक वर्ष तक भारद्वाज मुनि ने इस आहार को पान किया और वह कैसे वैज्ञानिक थे?

इस प्रकार का आहार और व्यवहार जब प्राणी का बन जाता है, ब्रह्मवर्चोसि बन जाता है तो वह मानव अपने विज्ञान में सफलता को प्राप्त करता है।

आधुनिक काल का जो वैज्ञानिक है, जिसने एक घोषणा कुछ ही काल पूर्व की है।मैंने वर्णन कराया था एक सूर्य ग्रहण हुआ। सूर्य के आँगन में चन्द्रमा और पृथ्वी एक ही सूत्र में, एक ही धारा में वह परिणत हो गए तो सूर्य ग्रहण की उत्पत्ति बनी। परन्तु वैज्ञानिकों ने घोषणा की, संसार के प्राणियो! तुम नेत्रहीन हो जाओगे, तुम्हारी मृत्यु आ जाएगी। तुम्हारी मृत्यु आ जाएगी। परन्तु उन वैज्ञानिकों को यह नहीं दृष्टिपात आता कि जिस प्रभु ने संसार की रचना की है उसी की धारा में वह जो आयतन है, ब्रह्माण्ड वह एक रेखा में आ रहे हैं जिससे तुम भविष्यवाणी क्या कर रहे हो? परन्तु उनमें अधूरापन दृष्टिपात आता है। इसके मूल में यह हैकि उनके द्वारा तपस्या नहीं है, आत्मज्ञान नहीं है। आत्मतपस्या न होने के कारण वह तरंगों में अधूरेपन को प्राप्त हो रहे हैं।

इस विभक्त क्रिया से साकल्य, जिसे हम सामग्री कहते हैं, सामग्री का अर्थ है, संग्रह किये हुए पदार्थ, संग्रह की हुई नाना प्रकार की औषधियां, परन्तु इस अग्नि में धारण करने से सूक्ष्म बनाना ही वायुमण्डल की प्रतिभा को जन्म देना है।

सृष्टि का चक्र, सृष्टि का चित्रण, उसमें एकएक परमाणु में दृष्टिपात आने लगा। उन परमाणुओं का मिलान किया, तो यन्त्रों का निर्माण हो गया। यंत्रित होने लगे। राष्ट्रीयता में उसकी भव्यता आभ्याद्गति प्राप्त हो गई। परिणाम, यही विज्ञान, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं के समीप पहुंचा तो आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता ने सोचा, विचारा, चिन्तन और मनन करने के पश्चात क्यों यह संसार तो बाह्य जगत है यह बाह्य तो यज्ञशाला है परन्तु इस बाह्य जगतशाला में नाना प्रकार का एक याग हो रहा है। कहीं सूर्य प्रातःकालीन ऊषा और क्रान्ति के द्वारा प्रकाश कर रहा है, कहीं चन्द्रमा रेणुका के अन्धकार को लेकर के शान्ति वृष्टि कर रहा है कहींयह वायु इस संसार को प्राण दे रही है, प्राण शक्ति देता, इसका भेदन हो रहा है। यह अग्नि संसार को तेजोमयी बना रही है तेजोमयी बना करकेउसके स्वरूप को जाना जा रहा है परन्तु आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता यह विचारता है कि मुझे तो साधक बनना है, मुझे तो संसार में मुद्रित हो जाना है।

एक समय, एक प्रश्न भगवान कृष्ण ने सन्दीपन ऋषि से किया था। कि महाराज! मैं आध्यात्मिक मुद्रित होना चाहता हूँ, मैं आध्यात्मिक

मुद्रित कैसे बनूंगा?तो सन्दीपन ऋषि ने इसी वाक्य को ले करके कहा था कि तुम्हें मुद्रित होना है, तोतुम प्रत्येक इन्द्रियों को मुद्रित बना लो। 29.01.1982

888 परिक्रमा का ब्रह्माण्ड

भगवान कृष्ण ने चरणों में ओतप्रोत हो करके अपने को मुद्रित बनाने का प्रयास किया नेत्रों को मुद्रित किया, श्रोत्रों को मुद्रित किया, त्वचा को मुद्रित किया। सबको मुद्रित करने के पश्चात इस ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात किया। इस ब्रह्माण्ड के विज्ञान को विज्ञान के तत्वावधान में ले गए, भौतिक विज्ञान जिसे कहते हैं जहाँ अणुओं और परमाणुओं की तरंगों में जाने वाला वैज्ञानिक उड़ान उड़ता हुआ कोई सूर्य में रमण कर रहा है, कोई चन्द्रमा में जा रहा है कोई मंगल में जा रहा है, कोई शुक्र और बुध में जा रहा है, कोई नाना रूपों में परिक्रमा कर रहा है, कोई गुरु की परिक्रमा यान कर रहा है, कोई सूर्य की परिक्रमा कर रहा है। कोई स्वाति की परिक्रमा कर रहा है परन्तु देखो यहाँ परिक्रमा का बहुत महत्व माना गया है। माता अपने पुत्र की परिक्रमा कर रही है और पुत्र अपनी माता को परिक्रमा कर रहा है। पत्नी अपने पति की परिक्रमा कर रही है, पतिपत्नी की परिक्रमा कर रहा है।यह कैसा ब्रह्माण्ड है?कैसा परिक्रमा करने वाला यह जगत है?इन्हीं परिक्रमाओं को जानतेजानते एक विचार दूसरे विचार से उसका समन्वय हो जाता है और जब विचारों का समन्वय हो गया तो वह मुद्रित होना प्रारम्भ हो जाता है और वह मुद्रित होता हुआ अपनी आत्मा जैसे मानव के शरीर में इन्द्रियां प्राणों की परिक्रमा कर रही हैं और प्राण इन्द्रियों की परिक्रमा कर रहा है। प्राणअपान की परिक्रमा कर रहा है, अपान व्यान की परिक्रमा कर रहा है, व्यान समान की परिक्रमा कर रहा है और समान की परिक्रमा करता हुआयह समय रूपी चक्र चल रहा है। कैसा अनुपम यह ब्रह्माण्ड है?प्राणप्राण की परिक्रमा कर रहा है, इन्द्रियों के विषय इन्द्रियों में समाहित हो रहे हैं। 29.01.1982

वशिष्ठ मुनि ने दीक्षान्त उपदेश में कहाकि तुम्हें वैज्ञानिक बनना है, तुम्हें विज्ञान के रूप में प्रवेश करना है, तो तुम्हें पृथ्वी से ऊपर उत्थान करते हुए चन्द्रलोक में, चन्द्रलोक से उत्थान करते हुए बुध में, बुध से उत्थान करते हुए तुम मंगल में, मंगल से उत्थान करते हुए स्वाति में, स्वाति से उत्थान करते हुए तुम कृमित लोकों में, कृमित लोकों में उत्थान करते हुए, महती लोकों में, महती लोकों से उत्थान करते हुए, व्रेतकेतु लोगों में, व्रेतकेतु लोकों से उत्थान करते हुए, सूर्य लोगों में, और सूर्य लोक से उत्थान करते हुए, ध्रुव लोक में सब तुम्हें गति करनी है। 15.09.1984

889 लोकों की ओत प्रोतता

नाना ब्रह्माण्ड इसी के आश्रित हो करके गति करने लगता है। जब वैज्ञानिकों ने यह विचारा कि यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा कैसे गा रही है, क्योंकि वेद का मन्त्र कहता है कि यह पृथ्वी भी ब्रह्माण्ड की गाथा गाती है।

तो वेद का ऋषि कहता है।यह जो पृथ्वी है यह कैसी विशाल है। वेद का मन्त्र इस प्रकार का पुनः से आ रहा है। यह सूर्यमण्डल इतना विशाल है, इसमें तेरह लाख पृथ्वियां समाहित हो जाती हैं। किन्हीं आचार्यो ने, जब और गम्भीरता से अध्ययन किया गया, तो तीस लाख पृथ्वियां इस प्रकार की हैं, जो इस सूर्यमण्डल में ओतप्रोत हो जाती हैं। एक सहस्त्र सूर्यमण्डल बृहस्पति मेंओतप्रोत हो जाते हैं। एक सहस्त्र बृहस्पतिइस स्वाति नक्षत्र में ओतप्रोत हो होते हैं। एक सहस्त्र स्वाति नक्षत्र हैं जो ध्रुवमण्डल में ओतप्रोत हो जाते हैं। एक सहस्त्र ध्रुवमण्डल हैं, जो एक मूल नक्षत्र में ओतप्रोत हो जाते हैं। वेद का आचार्य कहता है कि एक सहस्त्र मूल नक्षत्र, पुष्य नक्षत्रमें ओतप्रोत हो जाते हैं। एक सहस्त्र पुष्य नक्षत्र है जो हिरण मंगलो वाचिलोकों में ओतप्रोत हो जाते हैं। एक सहस्त्र हिरणय लाचक मण्डल, अचल मण्डल में ओतप्रोत हो जाते हैं। एक सहस्त्र अचल मण्डल हैंजो स्वाम वाचिक लोकों में ओतप्रोत हो जाते हैं। एक सहस्त्र वाचिक मण्डल, गन्धर्व लोकों में ओतप्रोत हो जाते हैं। एक सहस्त्र गन्धर्व मण्डल, इन्द्र में ओतप्रोत हो जाते हैं। तो यहाँ लोकों की सीमाबद्ध हो करके, इतने मण्डलों का एक सौर मण्डल बन जाता है। जो सौरमण्डल हैं वह आकाशगंगा में रत हो करके, एक आकाशगंगा में, एक निहारिका में, एक सौरमण्डल नहीं, दो नहीं, परन्तु वेद के ऋषियों को समाधि में कहीं विज्ञान के क्षेत्रों में प्रवेश करते हुए ऐसे अरबों, खरबों सौरमण्डल एक ही निहारिका में दृष्टिपात आते रहते हैं।

तो प्रभू का जो यह ब्रह्माण्ड है, यह कितना अनन्तमयी माना गया है। परन्तु आगे चिन्तन करने वालों ने कहा, जिस निहारिका में अरबों, खरबों सौरमण्डल गति करते हैं, ऐसी निहारिका ऋषिमुनियों को नौ सौ बहत्तर आकाशगंगाएं, निहारिकाएं, उन्हें दृष्टिपात आती रही हैं। यह जो पृथ्वी है, यह ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। क्योंकि ब्रह्माण्ड की गणना का, ब्रह्माण्ड को जानने के लिए, जो मानव तत्पर होता है वह पृथ्वी से हुआ करता है। यह पृथ्वी क्योंकि गुरुत्व प्रमाणि वाच की कहलाती है, इसलिए यहाँ से ही प्रारम्भ करता है मानव। जब सूर्य की गणना करने वाले सूर्यो की गणना करने लगे तो अरबों, खरबों में की। यह अगणित सूर्यों में चले गए। 16.09.1984

890 महाभारत कालीन यन्त्र

सहस्रों यन्त्र अग्नि के मुख में चले गए हैं और आधुनिक काल के वैज्ञानिकों को प्रतीत नहीं हो रहा, कि यन्त्र मेरा कहाँ चला गया है? वह अग्नि के मुख में चला गया है या समुद्र की आन्तरिक गति में चला गया है या उसके अवशेष ऊर्ध्वा में गति कर गये हैं।आधुनिक काल के वैज्ञानिकों को यह प्रतीत नहीं हो रहा। महाभारत काल में घटोतकच्छ और बर्बरीक ने भगवान कृष्ण की सहायता से एक ऐसा यन्त्र पृथ्वी और चन्द्रमा के बीच स्थित कर रखा है, जो इतना शक्तिशाली है, कि उसकी छाया समुद्र में एक स्थान पर जा रही है। जो यान उस छाया के अन्तर्गत आ जाता है, उसका एक अंकुर भी नहीं रहता। 01.10.1984

891 रक्तबिंदु से मानव चित्र

त्रेता के काल में महर्षि पणपेतु मुनि महाराज की कन्या शबरी थी, वह शबरी भारद्वाज मुनि के यहां विज्ञानशाला में उपकरणों के द्वारा यन्त्रों के द्वारा एक यन्त्रशाला में, एक यन्त्र का निर्माण किया गया। उस यन्त्र में यह विशेषता थी, कि एक रक्त के बिन्दु प्रवेश किया और उस यन्त्र में जिस मानव के रक्त का बिन्दु था, उस मानव का स्वरुप दृष्टिपात आने लगा। वह शबरी उपकरणों, वह यन्त्रों के द्वारा विज्ञानवेता बन गई, यह वही शबरी थी, जब राम वन को जा करके रावण को विजय करने के लिए चले, तो भारद्वाज मुनि ने सर्वयन्त्रों को उन्हें प्रदान किया था, और यह कहा था कि तुम यह राम को प्रदान कर देना।और वह यन्त्रों को लेकर पंहुच गई, यह संसार एक प्रकार की विज्ञानशाला है और यह विज्ञान में रत रहने वाला है। परन्तु अन्त में ऋषियों ने एक वाक् कहा कि इस संसार को मानव जिस दृष्टि से मापने लगता है तो वैसी ही दृष्टि प्राप्त हो जाती है। 13.12.1986

892 मानवीय मस्तिष्कों में विज्ञान

आज का वैज्ञानिक यह कहता है कि पूर्व काल में विज्ञान नहीं था। मैंने पुरातन काल में यह कहा है, आज का वैज्ञानिक तो कैवल चन्द्रमा की यात्रा कर सका है। परन्तु जब ध्रुव वैज्ञानिक इसको पार कर जाते हैं, तो वह ध्रुव की यात्रा करता है। जब यहाँ ब्रह्मचारी सुकेता की चर्चा आती है, भारद्वाज की चर्चाएँ आती हैं।वह एक यन्त्र में विराजमान हो करके, एक ही यन्त्र से वह चन्द्रमा में जा रहा है, उसी यन्त्र से वह बुध में जा रहा है, उसी यन्त्र से वह मंगल में जा रहा है, उसी से वह शुक्र में जा रहा है, एक यन्त्र से वह बहत्तर लोकों का वह भ्रमण कर रहा है। इस प्रकार का विज्ञान रहा था, यह मानवीय मस्तिष्कों का विज्ञान है। परम्परा से इसको जानने का प्राणियों को अधिकार रहा है।आधुनिक काल का वैज्ञानिक नाना प्रकार के यन्त्रों का आविष्कार कर रहा है, और कहता है कि आधुनिक जो विकास है, वो नाना प्रकार की चित्रवलियां हैं, जिसमें मानव कहीं उच्चारण कर रहा है और उसका चित्र भी आ रहा है, शब्द कहीं से कहीं आभासित हो रहा है। आधुनिक काल का वैज्ञानिक कहता है कि हम निरोध करके, एक माता पिता के रज, वीर्य को ले करके यन्त्र में एक बालक का निर्माण हो रहा है, वह जीवित क्रीड़ा कर रहा है। वायु मण्डल की तरंगें आते ही उसका समापन भी हो गया। परिणाम क्या कि यह कहता है कि हम इस विकासवाद और प्रत्यक्षवाद में ही रमण कर रहे हैं।

पृथ्वी के नाना प्रकार के खनिजों को वैज्ञानिकों ने जाना है, नाना प्रकार की धातुओं का विकास किया, चन्द्र मण्डलों में नाना प्रकार की तरंगों में गति कर रहा है।

आधुनिक काल का मानव चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है। उनका यान जब प्रथम चन्द्रमा के आँगन में पहुंचा, तो वह वहाँ से पार्थिव तत्व ले करके आए। परन्तु और आगे जाने का साहस नहीं बन पाया। जब अन्य यान अथवा वैज्ञानिक वहाँ पहुंचेंगे, तो इन्हें वहाँ जलाशय प्रतीत होंगे और जहाँ जलाशय होते हैं, वहाँ वायु होती है, वहाँ प्राणी अवश्य होता हैयह निश्चित वाक्य है। आधुनिक काल का चन्द्र यात्री कहता है, कि चन्द्रमा में प्राणी नहीं है।चन्द्रमा में मानव नहीं है। मैं यह कहता हूँ कि जहाँ पार्थिव तत्व है, जहाँ जलाशय प्रतीत होते होंगे, वहाँ प्राणी अवश्य होगा। यह निश्चित वाक्य है। कोई द्वितीय वाक्य नहीं। क्योंकि पार्थिव तत्व और जल दोनों का समावेश इस प्रकार का है कि प्राणी की उत्पत्ति हो जाती है और जहाँ वायु हो, वहाँ मानव की उत्पत्ति होती है। 05.12.1986

893 विज्ञान की गोपनीयता

आज वैज्ञानिक ने अन्तरिक्ष में, चन्द्रमा के निचले कक्ष में कुछ यानों का प्रादुर्भाव किया है, जो गति कर रहा है, परिक्रमा कर रहा है। परन्तु यह विज्ञान गोपनीय रहना चाहिए। गोपनीय क्यों रहना चाहिए? क्योंकि बाह्य जगत होते ही, मानव विज्ञान का दुरुपयोग करना प्रारम्भ कर देता है। जब विज्ञान का दुरुपयोग होता है, तो रक्त भरी क्रान्ति आती है। सर्वत्र ऋषि मुनियों ने विज्ञान को गोपनीय धाराओं में तरंगित किया है।

यही अन्तर है आधुनिक काल के विज्ञान में और पूर्व के विज्ञान में। पूर्व का विज्ञान प्रत्येक ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में रहा है और आधुनिक काल का जो विज्ञान है, यह विद्यार्थियों के मस्तिष्कों में रह करके, उस विज्ञान का दुरुपयोग होता रहता है। जिससे मानव का चरित्र भ्रष्ट हो रहा है। उससे मानव में ब्रह्मचर्य नहीं रहा है, कर्त्तव्यवाद की विहीनता हो रही है, कर्त्तव्यवाद नहीं रहा है। यह उस विज्ञान

और इस विज्ञान में अंतर्द्वन्द्व माना गया है। पूर्व का विज्ञान गोपनीय विषय रहकर, मस्तिष्कों में रहा है। उसको ऊर्ध्वा बनाने के लिए कुछ ऋषियों ने इसकी व्याख्याएं की हैं। वैज्ञानिक दर्शन के रचयिताओं ने उन्हें पोथियों में नियुक्त कर दिया है, परमात्मा के विषय को पोथियों में नियुक्त कर दिया है। 05.12.1986

894 त्रेताकाल में वारणावत क्षेत्र में विज्ञानशाला

त्रेता के काल के भौतिकवाद विज्ञान में ले जाना चाहता हूँ। त्रेता के काल में जहाँ हमारी आकाशवाणी जा रही है वहाँ से लगभग पचास योजन की दूरी पर एक आश्रम था। जिस आश्रम में घटोत्कच्छ और भीम दोनों अपनी विज्ञानशाला में विद्यमान रहते थे। एक विज्ञानशाला उनकी उस स्थली पर थी, एक विज्ञानशाला वारणावत क्षेत्र में कहलाती थी। परन्तु एक विज्ञानशाला समुद्र तट पर रहती थी। जहाँ प्रायः अनुसन्धान करते थे। अनुसन्धानशालाओं में विद्यमान हो करके अपने यानों का प्रादुर्भाव करते थे। उनके नाना यन्त्र, चन्द्रमा के उपरले कक्ष में गति कर रहे हैं। आज के वैज्ञानिकों के वायु मण्डल में जो यान गति कर रहा है उसकी तीन हजार वर्षों की आयु है और घटोत्कच के यान की आयु एक लाख पच्चीस हजार है, जो गति कर रहा है। चन्द्रमा की परिक्रमा करता रहेगा। वह विज्ञान इतना शक्तिशाली है कि आज के विज्ञान से मिलान किया जाता है तो यह विज्ञान नष्ट होने के तुल्य माना जाता है, और उस यन्त्र का आज का वैज्ञानिक यन्त्र कुछ नहीं कर पाता इस प्रकार की शक्तिशाली उनकी धातु है।

आधुनिक जगत के पृथ्वी मण्डल के वैज्ञानिकों का यान, जब चन्द्रमा के कक्ष में गति कर रहा था, और जब मानव कक्ष में जाने वाला था तो वह जो घटोत्कच्छ का यान था, दोनों का समन्वय हो गया तो उस यान को नीचे लाना पड़ा और घटोत्कच्छ का यान चन्द्रमा के कक्ष में गति करता रहा। इस प्रकार का विज्ञान परंपरा का माना जाता है। 05.12.1986

895 अहिल्या कृतिभा यन्त्र

परन्तु जब भगवान् राम भारद्वाज की विज्ञानशाला में विद्यमान थे, तोउन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था, जिसको 'अहल्या' प्रीति कृतिमा यन्त्र कहते थे। उस यन्त्र में यह विशेषता थी कि पृथ्वी के निचले गर्भ में दसदस योजना को, उस यन्त्र में दृष्टिपात कर लेते थे, कि कितनी दूरी पर कौनकौन धातु है?

महर्षि यज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बारह वर्ष तक शिलस्थ अन्न पान करके ब्रह्मचारियों को शिक्षा दी। वे ब्रह्मचारी ऊँचे बनेंगे या आज का ब्रह्मचारी ऊँचा बनेगा। महर्षि उद्दालक, महर्षि यज्ञवल्क्य मुनि महाराज एक समय अपने विद्यालय में ब्रह्मचारी कदम्बी को यह निर्णय कराने लगे कि इस आकाश गंगा में दृष्टिपात करो। आधुनिक काल का वैज्ञानिक लगभग बहत्तर अश्वहीन लोकों की गणना कर पाया है, परन्तु महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज, ब्रह्मचारी कवन्धि को वाक्य प्रकट करा रहे हैं और वह आकाशगंगा के सूर्यों की गणना करने लगा। जब एक ही आकाशगंगा में तीन खरब पचास अरब पचास करोड़ पचपन लाख बावन हजार सूर्यों की गणना कर ली तो वह मौन हो गए। 05.12.1986

896 अग्नि में राष्ट्र

आज का वैज्ञानिक लोकों की गणना में लगा हुआ है, सूर्यों की गणना क्या है, इसकी गणना नहीं की। अरे! वे वैज्ञानिक कौन थे? वे शिलस्थ का अन्न ग्रहण करने वाले थे, वे सात्विक अन्न को पान करने वाले थे।

महर्षि भारद्वाज ने अपनी विज्ञानशाला में एक यन्त्र का निर्माण किया था, जो पृथ्वी की परिक्रमा करने वाली रेखा है। उस रेखा में जो प्राणवर्धक परमाणु थे वह उस यन्त्र में आ गए और वह रेखा नग्न रह गई और नग्न रहने के पश्चात राष्ट्र के राष्ट्र अग्नि के मुखारबिन्द में परिणत हो गए। 05.12.1986

897 कुरुमेह यान

महर्षि नारद मुनि की विज्ञानशाला में 'कुरुमेह यान' का निर्माण किया गया था, जो ध्रुव की परिक्रमा कर रहा है। उस यान की साठ लाख पैंसठ हजार पांच सौ वर्ष की अवधि मानी है। आधुनिक काल का वैज्ञानिक यदि इस प्रकार गति करता रहा, तो लगभग दो सौ वर्षों में उस गति को प्राप्त कर सकता है। 05.12.1986

898 रक्त से मानव चित्र

आधुनिक काल का वैज्ञानिक तो यह कहता है कि तेरह लाख पृथ्वी हैं जो सूर्य में समाहित होती हैं। अभी पृथ्वियों का अनुमान प्राप्त नहीं कर सका है कि कितनी पृथ्वियां हैं, जो सूर्य की परिक्रमा कर रही हैं। जब मानव ज्ञान युक्त विचारता है तो प्रतीत होता है, कि कितना प्रभु का मण्डल है, कितना अमूल्य विज्ञानमय जगत है।

आधुनिक काल का मानव चित्रावली यन्त्र को लेकर कहता है कि कितना विकास किया है। परन्तु भारद्वाज की विज्ञानशाला में एक यन्त्र

था, जो पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन कराया। आधुनिक काल का वैज्ञानिक एक यन्त्र निर्मित कर सका, जिससे जैसे एक स्थली पर मानव विद्यमान है और उसके प्रस्थान करने के पश्चात उस मानव का चित्र लेता है। परन्तु पुरातन काल में ढाई घड़ी के पश्चत भी उस मानव का चित्र ले लिया जाता था। भारद्वाज की विज्ञानशाला में कहीं एक रक्त का बिन्दु प्राप्त हो जाए, चाहे वह प्राणी संसार में है अथवा नहीं है अथवा सहस्रों वर्ष पूर्व उसका निधन क्यों न हो गया हो। परन्तु उसके एक रक्त के बिन्दु से, उस यन्त्र में मानव का साक्षात चित्र आ जाता था। इसके पश्चात एक यन्त्र जिसमें जैसे मानव का उच्चारण कर रहा है और उस शब्द के साथ में चित्र है। आज के विज्ञान में उसके विशेष स्थान हैं परन्तु उसकाल में कहीं भी मानव शब्द विज्ञानशाला में 'कुरुमेह यान' का निर्माण किया गया था, जो ध्रुव की परिक्रमा कर रहा है। उस यान की साठ लाख पैंसठ हजार पांच सौ वर्ष की अवधि मानी है। आधुनिक काल का वैज्ञानिक यदि इस प्रकार गति करता रहा, तो लगभग दो सौ वर्षों में उस गति को प्राप्त कर सकता है। 05.12.1986

899 विज्ञान से चरित्र

मानव में विज्ञान होना चाहिए, परन्तु विज्ञान के साथ में चरित्र होना चाहिए। राजा को अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना है तो जितने भी चित्रावली यन्त्र हैं, इनमें ऋषि मुनियों के चरित्र आने चाहिए। जब इनसे ऋषि मुनियों के चरित्र और मेरी प्यारी माताओं के चरित्र आएगे, माता मदालसा और गार्गी इत्यादि के चरित्र आएगे, तो यह समाज पुनः से चरित्र की आभा में आ सकेगा। 05.12.1986

900 धर्म और विज्ञान का सम्बन्ध

नाना वैज्ञानिक यन्त्र लोकों की परिक्रमा कर रहे हैं। कुछ यन्त्र ऐसे हैं जो ध्रुव की परिक्रमा कर रहे हैं, कुछ यन्त्र ऐसे हैं जो सूर्य की परिक्रमा कर रहे हैं। कुछ यन्त्र ऐसे हैं जो चन्द्रमा के कक्ष के ऊपरले भाग में परिक्रमा कर रहे हैं परन्तु विज्ञान तो इतना व्यापक शब्द है। विज्ञान और धर्म दोनों का समन्वय करने वाले पूर्व वैज्ञानिक धार्मिक और महापुरुष हुए हैं। जब, मुझे भारद्वाज का जीवन स्मरण आता है तो वे विज्ञान में कितने पारंगत रहते थे और ब्रह्म में, वे ब्रह्मवेत्ता भी थे और विज्ञान में भी उनकी उर्ध्वा गति थी।

जीवन सत्ता कहांकहां चली गई, जहां मन और प्राण है वहीं जीवन सत्ता है, चाहे वह पृथ्वी मण्डल पर हो, चाहे वह सूर्य मण्डल पर हो, चाहे वह मंगल में हो, अथवा किसी भी मण्डल में क्यों न हो। 05.12.1986

901 मानव मस्तिष्क में लोक लोकान्तरों की यात्रा का कौतुक

तो वह भिन्न-भिन्न प्रकार के मनकों के रूप में दृष्टिपात आते हैं, यदि हम यह दृष्टिपात करने लगे, कि जब योगीजन लघु मस्तिष्क में प्रवेश करता है, जब यह लघु मस्तिष्क में जाता है, तो लघु मस्तिष्क में प्रवेश होते ही नाना प्रकार के लोकलोकान्तर एक मस्तिष्क में दृष्टिपात आने लगते हैं, लोकलोकान्तरों का क्रियाकलाप, एक समय एक योगी ने यह कहा कि मैं अपने अनुभव में, लघु मस्तिष्क में जब प्रवेश हुआ, तो मुझे कुछ ऐसा दृष्टिपात हुआ, जैसे मंगल लोक में एक भयंकर क्रांति आ गई है, ऋत्विजों ने कहामहाराज! यह कैसे जाना जाए कि मंगल लोक में क्रांति आ गई है? ऋषि के द्वारा एक यन्त्र विद्यमान था और यन्त्र में चन्द्र लोक की, चन्द्रमा की, मंगल की चन्द्रमा में होती हुई तरंगे आती हैं और वे तरंगे उनके यन्त्रों में दृष्टिपात आ रही थी, उन तरंगो में एक महान, एक क्रियाकलाप हो रहा है, जो एक प्राणी प्राणी के रक्त में परिणत कर रहा है, तो यह वाक सिद्ध हो गया, क्योंकि विज्ञान अपने में अनूठा रहता है, विज्ञानपरम्परागतों से ही निहित रहा है, मानव के मस्तिष्कों में तो विज्ञानएक दूसरे लोकलोकान्तरों तक की यात्रा करना, उनके कौतुक को प्रगट करते रहते थे, तो यहाँ ऋषिमुनि अपने योगाभ्यास में परिणत होते रहे हैं। 05.12.1986

902 मानव की इच्छा

सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके, वर्तमान के काल तक नाना प्रकार के अनुष्ठानवेता हुए हैं, परन्तु नाना प्रकार याग हो, चाहे वह आध्यात्मिक याग हो, चाहे वह भौतिक याग हो, चाहे वह आध्यात्मिक विज्ञान हो, चाहे वह भौतिक विज्ञान हो, परन्तु प्रत्येक मानव का एक ही मन्तव्य रहा है, चाहे वह आत्मा की उड़ाने उड़ने वाला हो, चाहे लोकलोकान्तरों में गमन करने वाला हो, सबका एक ही मन्तव्य रहा है कि मैं अन्धकार से प्रकाश में चला जाऊं।क्योंकि अन्धकार से प्रकाश में जाने के लिए मानव की उत्कट इच्छा बनी रहती है।चाहे वह किसी भी लोकलोकान्तरों का प्राणी हो, चाहे वह पृथ्वी मण्डल का हो, चाहे वह शुक्र का हो, मंगल का हो, किसी भी लोकलोकान्तरों में गमन करने वाला प्राणी क्यों न हो, परन्तु सभी के उत्कट इच्छा रहती है, अन्धकार मुझे स्पर्श न करे। 11.01.1987।

किरणों को समयसमय पर अपने में आहार बना लेता है, तो मानवयोगेश्वर की उपाधि को प्राप्त हो जाता है। इसमें भी आध्यात्मिकवाद और आत्मा के समीप जाने वाली, जो ज्ञान की रश्मियां है, और सूर्य की कृतिका है, उसमें जब रत हो जाती है, तो वह भी महान बन जाता है। 23.03.1987

903 वेद का प्रकाश

जैसे नेत्रों का बाह्य प्रकाश यह सूर्य बन करके आता है, इसी प्रकार मानव के अन्तःकरण को प्रकाश देने वाला, यह वैदिक ज्ञान है। वेद का प्रकाश है।इसीलिए हमें वेद को प्रकाश स्वीकार करके, गति करनी चाहिए। पोथियों का नाम वेद नहीं कहा जाता, परन्तु पोथियों में जो ज्ञान है विज्ञान है, उसमें जो कृतिका है, उसका नाम ज्ञान है।वह ज्ञान पृथ्वी मण्डल पर हो, चाहे वह चन्द्रमा में हो, चाहे वह बुध में हो, चाहे वह शुक्र में हो, परन्तु ज्ञान एकोकी रहता है। उसमें भिन्नता नहीं आती।तो वेद में बहुतसा ज्ञान इस प्रकार का है, जहां मानव, जा नहीं पाता है।परन्तु वेद मन्त्र यह कहता हैंकि जो सूत्रपृथ्वी से गति करता है, वही सूत्र आपो में समन्वय करता है, और, वही सूत्र आपो को, तेजोमयी में प्रवेश करता हुआ, वही लोक लोकान्तरों में गमन करता है और वह जैसा वेद का ज्ञान, हम स्वीकार करते है, उससे ऊर्ध्वा में हमारे यहां तेजोमयी प्रकाश वाले मण्डल है, उनमें यहां से विशेष होता है और जो अग्निमयी, तेजोमयी कहलाते है वहां उससे विशेष होता है।

सूर्य मण्डल में जो प्राणी मात्र रहता है, उसका ज्ञान बड़ा अनुपम, वह अपने में विष्णु राष्ट्र, क्योंकि विष्णु हमारे यहां सूर्य को कहते है। और सूर्य मण्डल में जो प्राणी मात्र है, उनका वेद का ज्ञान, अनुपम और विचित्र, और वेद और विज्ञान से गुथा हुआ है। इसी प्रकार मंगल मण्डल में भी तेजोमयी की प्रतिभा न रह करके, वह कृति कुछ सूक्ष्म है, पार्थिवता होने से, वहां का ज्ञान और विज्ञान भी ऊर्ध्वा में है, तो वेद का मन्त्र कहता है कि उसके ऊपर प्राणी को जाने के लिए प्रयत्न करना चाहिए, तो वेद में इस प्रकार की प्रतिभा है, इस प्रकार के संकेत हमें प्राप्त होते है, जिसके ऊपर मानव को वास्तव में गमन करना चाहिए, विज्ञान की धाराएं, इस वैदिक साहित्य से, जन्म ले करके उनके मस्तिष्कों में, एक परमाणु को जानते ही, दूसरा परमाणु, जो उस सूत्र में आने वाला है, उसका समन्वय होता है, और उसके ऊपर वह मानव विचार करने लगता है, और चिन्तन करने लगता है, और चिन्तन करता हुआ, उसके अन्तिम चरण पर वह अपने पर अधिपथ्य कर लेता है। 23.03.1987

904 ऋणी ताप परमाणु

पुरातन काल मेंमहर्षि मार्कण्डेय जी ने एक समय परमाणु को जाना था, उस परमाणु का नाम ऋणी त्राप परमाणु था, उस परमाणु को जाना, तो वह जहां पृथ्वी का परमाणु और चन्द्रमा का परमाणु, जहां मिलन करता था, वहां वह परमाणु स्थिर हो गया। आपने जाना, कि जहां चन्द्रमा और पृथ्वी दोनों की सीमा है, वहां एक आश्रम का निर्माण किया जा सकता है, परमाणुवाद के द्वारा। तो मार्कण्डेय मुनि ने इन्हीं से यंत्रों का निर्माण किया और यंत्रों का निर्माण करके, जहां चन्द्रमा और पृथ्वी की सीमा है, वहां जा करके अपने यान को स्थिर कर दिया था। जहां छह माह तक माता पार्वती और शिव ने जा करके विज्ञानमयी अपने जीवन को बनाया।

हमारे यहां जितना भी ज्ञान और विज्ञान है, उसमें रत रहने से मानव को अभिमान की मात्रा रहती ही नहीं है, क्योंकि परमात्मा का ज्ञान बड़ा अनन्त है, वेद का ज्ञान बड़ा अनन्त है, और जब अनन्तता के ऊपर विचार करने लगोगें, तो सम्पूर्ण यह जो द्रव्य है, यह हमें अभिमानी नहीं कर सकता।तो अभिमानी तब करता है जब वह अपने मार्ग को त्याग करके, अन्धकार के मार्ग पर आ जाते है, परमात्मा को अपने से दूरी कर देते है। 23.03.1987

905 मानव हृदय में विज्ञान की प्रतिष्ठा

तो संसार का ज्ञान और विज्ञान, मन और प्राण की रूपता में परिणत हो करके, हृदय में सिमटता हुआ सा दृष्टिपात आता है, तो इसीलिए हम अपने हृदय में इन सिमटे हुए पदार्थों को, जब हम चिन्तन में लाते हैं, तो हमारा चिन्तन इतना महान प्रबल हो जाता है कि यह जो जितना भौतिक विज्ञान है, चाहे वह पृथ्वी मण्डल पर है, चाहे वह मंगल में हैं, किसी भी लोकलाकान्तरों में किसी भी प्रकार का विज्ञान हो, वह मानव के हृदय से सिमटा हुआ रहता है, उसमें उसकी प्रतिष्ठा रहती है। 23.03.1987

906 आध्यात्मिकवाद विज्ञान

द्वितीय विज्ञान आध्यात्मिकवाद है, आध्यात्मिकवाद उसे कहते हैं, जो विज्ञानउपलब्ध हुआ है, और उस विज्ञान का सदुपयोग करना और सदुपयोग को जान करके ज्ञान और विज्ञान और आध्यात्मिकवाद मेंउसे परिणत कर देना है। तो हमने भौतिक विज्ञान में यह जाना है, अथवा नाना प्रकार की चित्रावलियों को जाना है, जिनमें एकएक रक्त के बिन्दु में चित्र विद्यमान रहते हैं, एकएक रक्त का बिन्दु, यन्त्र में प्रवेश किया, तो उस मानव का चित्र आ गया है, तो यह भौतिक विज्ञान है। 19.05.1987

907 राष्ट्र का लक्ष्य

महाराज अश्वपति के यहाँ नाना वैज्ञानिक उनके राष्ट्र में पंहुचे और उन्होने उनका स्वागत किया, उन्होंने कहाविराजो, वैज्ञानिक अपने में विद्यमान हो गए।महाराज ने कहाकहो, आज तुम्हारा पर्दापण क्यों हुआ है?वैज्ञानिकों ने कहाप्रभु! हम इसीलिए आए हैं, कि हमने वेद मन्त्रों में यह जाना है, कि मानव अन्तरिक्ष में उड़ाने उड़ता रहता है, विचारों की उड़ाने भी उड़ता रहता है, यन्त्रों के द्वारा यन्त्रों को निर्माणित करके उड़ता रहता है, लोकों का यातायात बन जाता है।तो प्रभु! हम उस विज्ञान को लाना चाहते हैं, जिस विज्ञान से राष्ट्र ऊँचा बनें,

महाराजा अश्वपति ने कहावह कैसा विज्ञान है? उन्होंने कहावह विज्ञान है, जो लोकलोकान्तरों की यातायात में परिणत हो जाए। महाराज अश्वपति ने कहाकि राजा के राष्ट्र में या समाज में लोकलोकान्तरों की आवश्यकता नही हैं, लोकलोकान्तरों में यातायात हो, या न हो, मंगल में जाने वाला यातायात हो, या न हो, परन्तुराजा के राष्ट्र में चरित्र और मानवता का यातायात होना चाहिए, कर्तव्यवाद होना चाहिए, राजा के राष्ट्र में जो भी एक दूसरे का ऋणि नही रहना चाहिए, जो एक दूसरे का ऋणि रहता है, वह कर्तव्य से विहीन हो जाता है। 19.05.1987

908 मिथ्या उच्चारण से मानव प्रवृतियों का ह्रास

तो महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने कहामेरे पिता का नाम रेंगणी भारद्वाज था और रेंगणी भारद्वाजु मुनि महाराज ने मुझे यह प्रेरणा दी हैकि परमाणुवाद बड़ा विचित्र है, मानव को मिथ्या नहीं उच्चारण करना चाहिए, क्योंकि मिथ्या उच्चारण करने से मानव की प्रवृतियां भ्रष्ट हो जाती हैं, तो वह मानवीय समाज को हानिप्रद होता है, माता ने भी मुझे यही शिक्षा दी, मेरी प्यारी माता का नाम शकुंतका था।परन्तु, उसके पश्चात मैं विज्ञानवेता बना हूँ, मैंने उन परमाणुओं को जानने की उत्कृष्ट इच्छा की और जानकरउसको क्रिया रूप दिया है।तो ऐसा उन्होंने वर्णन किया कि तुमने कुछ इतना विशाल विज्ञान जाना है, कोई यन्त्र आपका ध्रुव की परिक्रमा कर रहा है, कोई यन्त्र तुम्हारा श्रुतियां में रत हो रहा है, और आपने हमें एक विचित्रता दृष्टिपात कराई है, कि एक यन्त्र में विद्यमान हो करके आप यहाँ से उड़ान उड़ते हैं, एक यन्त्र में उड़ान उड़ के आप चन्द्रमा में जाते हैं, चन्द्रमा से वह यन्त्र उड़ान उड़ता है, वह बुध में चला जाता है, बुध से उड़ान उड़ता है वह शुक्र में चला गया, शुक्र से उड़ान उड़ी तो वह मंगल में चला गया, मंगल से उड़ान उड़ी तो रोहिणी केतु मण्डल में चला गया, रोहिणी केतु मण्डल से उड़ान उड़ी, मृचिका मण्डल में चला गय, मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी तो सोमकेतु मण्डल में प्रवेश हो गया वहाँ से उड़ान उड़ी वह अरूण्धति मण्डल में चला गया, अरूण्धति से उड़ान उड़ी, तो वशिष्ठ मण्डल में चला गया, वशिष्ठ से उड़ान उड़ी तो वह सोमकेतु मण्डल मे चला गया

विचार क्या कि तुम्हारा याग बहत्तर लोकों में भ्रमण करके, इस पृथ्वी मण्डल पर आ जाता है, यह मैं नही पाया हूँ, भगवन! हम यह जानना चाहते हैं कि आपका विज्ञान बड़ा विचित्र है, परन्तु हम द्वितीय यह ओर जानना चाहते हैं, तुम्हारे यहाँ अग्नेयास्त्र हैं, वरूणास्त्र हैं, प्रभु! इस विज्ञान का अन्तिम परिणाम क्या होगा? 24.06.1987

909 भौतिक विज्ञान का अन्तिम परिणाम

महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने नतमस्तिष्क हो करके कहा कहाप्रभु! यह जो विज्ञान हमने जाना है या आपने दृष्टिपात कराया है इस विज्ञान के दो परिणाम होते हैं एक परिणाम अन्धकार है, मृत्यु है, रक्त है और एक परिणामइसका जीवन है।महर्षि प्रवाहण ने कहाप्रभु! मृत्यु कैसे है और यहजीवन कैसे है?उन्होंने कहा कि यह राष्ट्र की वार्ता है, उन्होंने कहाजिस विज्ञान में, जिस राजा के राष्ट्र में या समाज में, जब विज्ञान का दुरूपयोग होना प्रारम्भ हो जाता है, तो वह विज्ञान, उस राष्ट्र को निगल जाता है। वह राष्ट्र को अन्धकार में परिणत कर देता है, जैसे राष्ट्रवाद में नाना प्रकार की चित्रावलियों का मैंने तुम्हें दिग्दर्शन कराया है, यदि इन चित्रावलियों में मेरी पुत्रियों का हनन होना या नाना प्रकार के नृत होना या इन चित्रों को दृष्टिपात करना अश्लीलता के उनमेंउनको दृष्टिपात करने वाला, जब छात्र और छात्रिका दृष्टिपात करते हैं, उनका ब्रह्मचर्य जब दूषित हो जाता है, और ब्रह्मचर्य के दूषित होने पर आलस्य और प्रमाद आ जाता है, आलस्य और प्रमाद के आने परअधिकार की पुकार करने लगता है और कर्तव्य का पालन नही करता, जब कर्तव्य नही होता और वह अधिकार की पुकार करने लगता है तो जबसे सृष्टि का प्रारम्भ हुआ है, कोई भी मानव बिना कर्तव्य के किसी के अधिकार को अब तक पूर्ण नही कर सका है, जब राजा के राष्ट्र में इस प्रकार का समाज बन जाता है, वह अधिकार ही अधिकार चाहता है, कर्तव्यवाद नही कर पाता। 24.06.1987

आध्यात्मिक याग

महाराजा अश्वपति ने कहाप्रभु! यहतपस्वियों की वार्ता है, यह तपस्वियों के द्वारा प्राप्त होती है।याग अपनी स्थलियों मेंविचित्र है, याग अपने में ही महान है, क्योंकि जब आध्यात्मिक याग में मानव प्रवेश करता है, आध्यात्मिक याग में जबपांचों ज्ञानेद्रियों का जो साकल्य बनाना जानता है, वही तो आध्यात्मिक याग करता है। 20.05.1987

910 शून्य बिंदु की प्रतिष्ठा

हे प्रभु! मैंने यह श्रवण किया है कि आपने आध्यात्मिक याग के ऊपर बड़ा अनुसंधान किया है, अथवा उसमें आपकी बड़ी गतियां रही है, तो प्रभु! मैं आध्यात्मिक याग में प्रवेश तो हो गया हूँ, परन्तु आपने उसको क्रियात्मक लिया है, मैं उसतुम्हारे आध्यात्मिक याग में से, मैं भी कुछ पान करना चाहता हूँ, राजा ने जब नम्र हो करके, यह कहा, तो गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहाराजन! बहुत प्रियतम, आओ, विराजो। तुम क्या जानना चाहते हो, ? राजा ने यह प्रश्न कियाकि महाराज! मैं ध्रुवा से यह जानना चाहता हूँ, कि यह जो महत्तत्व

है, जब यह शून्य बिन्दु हो जाता है, इसकी कोई प्रतिष्ठा है?तो ऋषि ने कहाराजन! मुझे ऐसा प्रतीत होता है, कि एक वेद का मन्त्र, जब मैं पूज्यपाद गुरूदेव के द्वारा अध्ययन करता था, तो एक वेद का मन्त्र मुझे स्मरण आता रहा है।चन्द्रों भवा सम्भवा लोकां वाचन्नमं ब्रव्हे सूर्यांणि गच्छता, वेद का ऋषि कहता है कि महाराज। इस वेद मन्त्र के ऊपर मैंने अनुसंधान किया और मुझे ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे आज मेरे समीप आ करके आप उन्हीं मन्त्रों के माध्यम से कुछ प्रश्न कर रहे हो, तो आपका जो प्रश्न है, वह बड़ा प्रिय है तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है, कि वेद मन्त्रों से, यह जो शून्य बिन्दु की प्रतिष्ठा है, अथवा यह जो ओतप्रोतता, यह जो शून्यबिन्दु की जो प्रतिष्ठा है, वह चन्द्रलोकों में निहित हो जाती है, यह जो चन्द्रमा है, क्योंकि अमृत को बहाता रहता है, यह चन्द्रमा अपने में ही शून्य बिन्दु को, प्रवेश प्रविष्ट कर लेता है, जिससे वह अपने में अपनेपन की आभा को प्राप्त हो करके, यह अमृतमयी रचना का सबमें प्रथम एक मनका कहा जाता है, एक प्रारम्भ की प्रतिभा कही जाती है। 20.05.1987

911 चन्द्रमा की प्रतिष्ठा

उस समय राजा ने कहा प्रभु! यह जो चन्द्रमा है इनकी प्रतिष्ठा क्या है? यह किसमें ओतप्रोत हो जाते है? तो उन्होंने कहाकि यह चन्द्रमाओं की प्रतिष्ठा सूर्य लोक है। यह सूर्य लोको में प्रतिष्ठित हो जाते है, और सूर्य ही, इसको ऊर्ज्वा दे करके, इसे प्रकाशित करता है औरउसके पश्चात भी यह चन्द्रमा उसी में ओतप्रोत हो जाते है, उसी आभा में निहित हो जाते है, जिस आभा को जान करके वह अपने में एकदूसरे को ओतप्रोत करा देते है।तो उस समय राजा से ऋषि में कहाहे राजन! यह जो सूर्य है, यह द्यौ से प्रकाश लेता है और द्यौ से प्रकाश ले करके संसार को प्रकाश देता है, अथवा ऊर्ज्वा देता है, और ऊर्ज्वा दे करके, यह सूर्य अपने में भासता रहता है, अपने में प्रकाश देता रहता है, यही पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार के खनिजों को तपाता रहता है, नाना प्रकार के खनिजों का निर्माण कराता रहता है, तो यह ऐसी अनुपम इसकी किरणें है, जो स्वर्ण के परमाणुओं को आदानप्रदान के रूप में, अपने को समाहित करता रहता है। 20.05.1987

912 गन्धर्व लोक

जब ऋषि ने यह वाक कहा, तो राजा ने कहा प्रभु! हम यह जानना चाहते है, सूर्य की भी तो कोई प्रतिष्ठा हैयह सूर्य कहां ओतप्रोत होता है? उन्होंने कहाप्रभु! ऐसा मुझे प्रतीत है, एक समय में एक वेद का अध्ययन कर रहा था और वह वेद मन्त्र यह कह रहा था कि भगवन! यह जो सूर्य मण्डल है, यह गन्धर्व लोकों में ओतप्रोत हो जाता हैं, यह जो गन्धर्व है, यह सौर मण्डल का अन्तिम मनका कहलाता है, इस मनके को अप्रतु उदय होने वाला, सूर्य का इससे समन्वय हो जाता है, यह चन्द्रमा और सूर्य की प्रतिभा गन्धर्व मण्डल से ओतप्रोत हो जाती है, गन्धर्व के कई प्रकार के रूप माने गए है, वैदिक आचार्यों ने वर्णन किया कि गन्धर्व नाम बुद्धि का है, बुद्धि भी गन्धर्व के रूप में, गन्धर्व के रूप में ही नहीं, बुद्धि, मेघा, ऋतम्भरा, प्रज्ञावी रूप में प्रवेश होती रहती है, ये चारों प्रकार की बुद्धियों का निर्माण, गन्धर्व से ही प्रारम्भ होता है। तोयह गन्धर्व नाम जहां बुद्धि का है, वहां गन्धर्व का नाम मण्डल भी कहा गया है, गन्धर्व नाम आत्मा को भी कहा गया है, जो सर्वत्र इस शरीर में जितने भी अव्यय, क्रियाक्लाप कर रहे है, उनका स्वामीत्व होने से उसे गन्धर्व कहते है, गन्धर्व कहते है जो स्वामीत्व का स्वामीत्व के रूप में परिणित रहता है, उसका नाम गन्धर्व है। तो ऋषि कहता है कि यह सूर्य गन्धर्व में ही प्रतिष्ठित हो जाता है, उसी में ओतप्रोत हो जाता है, उस समय ऋषि ने यह कहाभगवन! यह गन्धर्व ही हमारा प्रतिनिधि है, यही हमें प्रकाश और आनन्द को देने वाला है। राजा ने कहा प्रभु मैं यह जानना चाहता हूँ यह गन्धर्व की प्रतिष्ठा क्या है यह किसमें ओतप्रोत होता है उन्होंने कहा यह गन्धर्व ही इन्द्र लोकों में ओतप्रोत हो जाता है। 20.05.1987

913 याग का स्वरूप

एक समय महर्षि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के यहां ऋषिमुनियों एक सभा हुई, और सभा में यह प्रश्न किया, कि महाराज! यह जो हमारा याग है, याग के कितने प्रकार के स्वरूप माने गए हैं। तो गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहाकि हे ऋषियों! तुम ऐसा क्यों जानना चाहते हो ?क्योंकि तुममें सभी आध्यात्मिक विज्ञानवेता होऔर भिन्नभिन्न प्रकार की आभा में रत रहने वाले हो, उसमें महर्षि प्रवाहण, और शिलक ने यह कहा कि महाराज! हम इसीलिए जानना चाहते हैं, कि मनों की इच्छा होती है, कि इस संसार को जान लिया जाए, इस संसार में जितना भी प्रतिक्रियाक्रियाकलाप हो रहा है, उन सर्वत्र क्रियाओं को अपने में धारण करना चाहिए। 04.07.1987

914 वाजपेयी याग

तो हे प्रभु! हमारी यह इच्छा रहती है, क्योंकि हम ब्रह्म को तो जान गए हैं, कि ब्रह्म तो है। परन्तु ब्रह्म के साथसाथ उसके राष्ट्र में, उसके विज्ञानमयी ब्रह्माण्ड में जो भी क्रियाकलाप हो रहा है, उस क्रियाकलाप में हम रत रहना चाहते हैं, तो गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहाकि तुम कौन से याग को जानना चाहते हो?

उन्होंने कहा प्रभु हम वाजपेयी याग के सम्बन्ध में जानना चाहते हैं, उसके क्रियाकलापों को भी जानना चाहते हैं।उन्होंने कहाबहुत प्रियतम,

ऋषि ने यह वर्णन करते हुए कहा, कि हमारे यहां वाजपेयी जो याग है, उसको राष्ट्र को अधिकार होता है, कि राजा उस याग को करता है। 04.07.1987

915 पूर्वजों का दर्शन

मैं अपने पूर्वजों का दर्शन करना चाहता हूँ, विज्ञान के माध्यम से, तो उस समय कहा, कि जाओं, तुम अस्ताविन को प्राप्त हो जाओं तो सोमकेतु अपने गृह में पंहुचे, उनके पूर्वजों के संग्रहालय में विद्यमान थे, उनके छठे महापिता के संग्रहालय में एक वस्त्र पर उनका एक रक्त का बिन्दु उन्हें प्राप्त हो गया, वह उसको लाए, और महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में उस वस्त्र पर एक रक्त का बिन्दु लगा हुआ है, उस रक्त का बिन्दु, जो वस्त्र पर था, उसे यन्त्र में प्रवेश किया, सोमकेतु को अपने छठे महापिता का दिग्दर्शन होने लगा, यह सिद्ध हुआ, कि एक रक्त का बिन्दु विद्यमान हो, उसमें मानव का चित्र है, मानव की प्रतिभा है, मानव अपने में रत कर रहा है।

यह तो महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने कहाप्रभु! यह विज्ञानशाला है, उन्होंने कहा ब्रह्मचारी सुकेता, कवन्धि और शबरी और ये तीनों इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करते रहे हैं, जब इस प्रकार का विचारविनिमय ऋषि ने वर्णन किया, तो आश्चर्य में बोले कि प्रभु आप के यहाँ ओर भी यन्त्र है।वे यन्त्रशाला में ले गए, जहाँ नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों में यातायात बने हुए यन्त्र विद्यमान हैं। 04.07.1987

916 द्यौ

वेद का आचार्य कहता है कि देवी! यही तरलत्व आपोमयी ज्योति में रहता है, आपोमयी ज्योतिइस तेजोमयी में प्रवेश हो जाता है, यह तेजोमयी क्या है?यह तेज, द्यौ लोक में रहता है, जैसेगुरु और शिष्य एक समय विद्यमान थे, आचार्य ने गुरु से कहाहे प्रभु! मैं जानना चाहता हूँ कि आपके और मेरे मध्य में क्या है?

तो उन्होंने कहाइसमें द्यौ है।अंतरिक्ष और पृथ्वी के मध्य में क्या है? उन्होंने कहाद्यौ।माता और पुत्र के मध्य में क्या है? द्यौ।माता के पितर के मध्य में क्या है? द्यौ। तो द्यौ की विवेचना करने लगा ऋषि, यह तेजोमयी भी द्यौ में प्रवेश हो जाता है।

यह द्यौ अपने में प्रतिष्ठित रहता है, तोऋषि ने कहा कि यह तेजोमयी में प्रवेश हो जाते है। यह तेजोमयी यह गतियों में प्रवेश कर जाता है, और यह गतिवान हो करके, यह अन्तरिक्ष में प्रवेश कर जाता है, यही शब्दों को अपने में धारण करता रहता है, जैसा हमारे यहाँ यह आया है, हमारे ऋषिमुनियों की प्रतिभा में, उद्दालक गोत्र में एक शिकामकेतु ऋषि हुए हैं, परन्तु उनकी पत्नी यह कहती है किप्रभु! हम अनतरिक्ष में रमण करना चाहते हैं। तो उन्होंने अपने में धारयामि बना करके, वेदोनो अन्तरिक्ष में प्रवेश हो गए और अन्तरिक्ष में क्या शब्दम् आचार्य ने कहा कि यह तेजोमयी अपने में बनता चला जा रहा है।

तो वह तेज अग्नि का वृत्त कहलाया जाता है, जितना शब्द है, जितना चित्र है, यह सब, अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, यह द्यौ में प्रवेश हो जाता है और द्यौ की आभा में प्रवेश करके, उसी से ऊर्ज्वा बनती रहती है, प्रकाशमयी जगत आता रहता है, तो जब रेंगणी भारद्वाज मुनि महाराज की पत्नी शन्कुतका ने पुनःकहाहे प्रभु! यह तो मैंने जान लिया, परन्तु यह अन्तरिक्ष औरगतियां महत्तत्व शून्यता में प्रवेश कर जाती है, शून्य पर जा करके दोनो एक दूसरे की चर्चा में मौन हो गए। 02.08.1987

917 जगत चिंतन से आत्मबल वृद्धि

उन्होंने कहादेवी! तुम मौन हो गई हो, क्या इतना ही जानती हो, ब्रह्म के सम्बन्ध में? उन्होंने कहाप्रभु! मैंने तो इतना ही जाना है कि शून्य है, और शून्य से विकास है और विकास जब सिमट जाता है, वो शून्य में प्रवेश कर जाता है।

ऋषि ने कहादेवी! यही नही, आगे भी जानने की इच्छा करो, क्योंकि यह संसार ऐसा विचित्र है, किप्रभु के जगत को जितना भी चिन्तन में लाया जाएंगे, उतना ही आत्मा में बल आता है, शरीर में बलिष्ठता आती है, मानव जब आध्यात्मिकवाद के ऊपर चिन्तन, मनन नहीं करता, तो उसकी आत्मा मे बलिष्ठता नहीं आती, वह प्रकाश में नही आता है, वह अन्धकार में ही रत्त रहता है।

तोदेवी ने कहाप्रभु! आगे वर्णन कराईये, तो ऋषि ने कहा कि जब विकास होता है, सबसे प्रथम ये तरंगे चन्द्रमा में प्रवेश होती है, चन्द्रमा सोम देता है, अमृत देता है, यह चन्द्रमा समुद्रों के जलों को धारण करकेधारयामि बनाता रहता है, यही तो चन्दमा है, जो अमृत को देता हुआ कटिबद्ध होता रहता है, वह पुत्र को जन्म देता रहता है, पुत्री को जन्म देता है, यही तो संसार में रस बहाता रहता है।उन्होंने पुनः प्रश्न किया कि महाराज! चन्द्रमा कहां रहता है? उन्होंने कहा कि यहजो सूर्य है, यह ऊर्ज्वा से, द्यौ से प्रकाश लेता हुआ, द्यौ से वृत्तियां ले करके ऊर्ज्वा देता है, इसी ऊर्ज्वा से यह संसार में प्रकाश में बन जाता है, प्रत्येक मानव प्रकाश में रहता है।मन्त्र कहता है कि माता के गर्भ में प्रकाश जा रहा है, सूर्य का प्रकाश जा रहा है, रस्मियों के द्वारा नस नाड़ियों के द्वारा जा रहा है, तो ये सर्वत्र एक प्रकाश में रत्त हो जाता है, यह प्रकाश का द्यौतक है।

तो आगे उन्होंने यह प्रश्न किया कि महाराजा! यह सूर्य आभा में कहां रहता है? यह सूर्य अपनी रश्मियों में रहता है।तो उन्होंने कहाहे देवी!

यह सूर्य मण्डल गन्धर्व में प्रवेश होते हैं, क्योंकिहे देवी! उसी मनके को जानते रहते हैं, वह गन्धर्व नाम बुद्धि का भी है गन्धर्व नाम मण्डल का भी है। 02.08.1987

918 मृत्यु

प्रभु के राष्ट्र में जब आध्यात्मिक विज्ञानवेता प्रवेश कर जाता है, तो वहां न तोरात्रि है, न आलस्य है, न प्रमाद है और जहां आलस्य और प्रमाद नहीं है, वहां अन्धकार भी नहीं है। वहां सदैव प्रकाश ही प्रकाश है, और जहां प्रकाश ही प्रकाश रहता है, वहां मृत्यु भी नहीं हुआ करती। तो विचारवेता कहता है कि मृत्यु क्या है, अज्ञान का नामोकरण ही मृत्यु कहा गया है।

तो महर्षि शिकामकेतु उद्दालक ने अपना यह निर्णय दिया, कि जहां मैं विज्ञानवेत्ता हूँ, जहां मैं नाना प्रकार के चित्रों का दर्शन करता रहता हूँ, अपने पूर्वजों का दर्शन करता रहता हूँ, यंत्रों के द्वारा, वहां आध्यात्मिक विज्ञान में भी मैं यह स्वीकार कर गया हूँ, मेरा यह स्थिर निश्चय हो गया है, कि अंधकार को त्यागना और प्रकाश को अपनाना ही जीवन महान कहलाता है।

आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता क्या कर सकता है? यह जो आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता है और भौतिक विज्ञानवेत्ता दोनों की संतुलना क्या है? उन्होंने कहा कि आध्यात्मिक विज्ञानवेता, यह अन्धकार है, अंधकार को दूरी कर देता है, आध्यात्मिक विज्ञानवेता ब्रह्माण्ड का दर्शन कर लेता है। ब्रह्माण्ड का कैसे दर्शन होता है? क्या गुरूत्व परमाणुओं के ऊपर विचार करता है, जितना भी गुरूत्व है, वह लघु मस्तिष्क में जब प्राण और मन को ले जाता है, ब्रह्मरन्ध से ऊर्ध्वा याग में एक लघु मस्तिष्क कहलाता है। हमारे यहां उस लघु मस्तिष्क में जब यह प्रवेश करता है योगेश्वर, तो जितने पार्थिव लोक लोकातंर है, उनका दर्शन करता है।जितना जलों मेंपरमाणु है, उनका दिग्दर्शन करता है। तो जब यह ब्रह्माण्ड का दर्शन करता हुआ, अपने में ओजस्वी बन जाता है, तो यह अपने में लोक लोकातंरों को गणना में लाता है। मैं विज्ञान की माला को, तुम्हें धारण नहीं कराना चाहता हूँ, यह माला है, आध्यात्मिक माला है।जिस माला में एक सूत्र में सूत्रित होते हुए मनके हमें दृष्टिपात आते है। 15.08.1987

919 सौर मण्डल

वेद के मन्त्रों के आधार पर, जब मानव अपनी उड़ान उड़ना प्रारम्भ करता है तोमालाओं की गणना करने लगता है।इतने मण्डलों का एक, सौर मण्डल बनता है इतने मालाओं की एक सौर मण्डल बना। ऋषियों ने गणना की लगभग पिचान्नवे करोड़ नवासी लाख, उन्नचस हजार, पांच सौ इक्सठ, इस प्रकार के सौर मण्डलों की एक आकाश गंगा का निर्माण हो जाता है।प्रभु का कितना विशाल मण्डल है यह, इसके ऊपर मानव विचारविनिमय ही करता रहता है, इतने सौर मण्डलों की एक अरब पिच्चानवे करोड़ नवासी लाख, उन्नचस हजार, पांच सौ इक्यासी के लगभग, इतनी आकाशगंगाओं कीएक अवन्तिका बन जाती है।

सृष्टि के प्रारम्भ से नाना प्रकार के विज्ञानवेत्ता, इसके ऊपर विचारविनिमय करते रहे है।लगभग एक अरब पिच्चानवे करोड़, इक्यासी लाख, उन्नचस हजार, पांच सौ एक के लगभगइतनी अवन्तिकाओं कीएक निहारिका बन जाती है।यह प्रभु का ब्रह्माण्ड कैसा अनुपम है, ऋषि यहां आ करके मौन हो गया है। प्रभु के ब्रह्माण्ड को विचारना ही शान्त कर दिया। 15.08.1987

920 यंत्रों से समुद्र तरंगों का बोध

तो यह विज्ञान अपने में विज्ञान न रह करकेयह विज्ञान विनाश के मार्ग पर ले जा रहा है। विज्ञान का जब सदुपयोग होता है, जिस भी काल में, क्योंकि राजा सागर के यहां भी, मनु के काल में भी, विज्ञान था और वह विज्ञान कैसा था?आज से कई गुणा इसकी विशिष्ठता में विज्ञान था। ऐसा विज्ञान था, कि समुद्र के तट पर वैज्ञानिक विद्यमान है, और समुद्र की जो गहरी से गहरीउसकी तल है, उस तल के निचरले भाग में, जब भी कोई तरंगे उत्पन्न होती रही, तो वैज्ञानिकों ने तरंग उत्पन्न होते हीउसको यन्त्रों में ले लिया, यंत्रों में दृष्टिपात किया और प्रजा में यह घोषणा कर दी कि तुम कुछ समय के पश्चात इस संसार मेंजल प्लावन आ सकता है। जल प्लावन के लिएतुम तैयार होंगे। 31.10.1987

921 पुरातन वैज्ञानिक

आधुनिक काल मेंजल प्लावन हो लेता है और वह जलप्लावन होने के पश्चात उसकी घोषणा होती है। एकएक माह से पूर्व ही घोषणा हो गई, ऐसे यन्त्र, भगवान मनु के काल में आए, वैज्ञानिकों नेयहां ओर भी नाना जैसे, यहां प्राण विशेषज्ञ हनुमान, वहां विज्ञान में इतना पारायण महाराजा शिव के पुत्र गणेश जी और हनुमान जी समुद्रों के तटों पर विद्यमान हो करके, वह जलों के ऊपर अनुसंधान करना और परमाणुवाद केऊपरअन्वेषण करना, यन्त्रों का निर्माण करना और यन्त्रों का निर्माण करकेवहजो तरंगें उदबुद्ध हो करके, जो चन्द्रमा की कान्ति के द्वारा, समुद्रों में मिलान करना और समुद्रों की कान्तिका मंगल मण्डल में मिलान करना, उनको जानना, उनको यन्त्रों में लाना, उन तरंगां को और उनके प्रति यन्त्रों का निर्माण करना, यह वैज्ञानिकों का क्रियाकलाप रहा है।31 10 1987

धनुर्याग की शिक्षा

धनुर्याग उसी को कहते हैं, जिस धनुर्याग में मानव अपनी बौद्धिक, शारीरिक और आत्मिक उन्नति करता है। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा कि तुम्हें, इस बोद्धिकता को ऊँचा बनाना है हमारे यहाँ ब्रह्मचारी दो प्रकार की बौद्धिक उन्नति करते हैं और शारीरिक उन्नति करते हुए, अपने को धर्नुयाग में परिणत कर देते हैं। धनुर्याग मेंनाना प्रकार के यागों का निर्माण करना और लोकलोकान्तरों में यातायात बनाना, धनुर्याग में नाना प्रकार के अस्त्रोंशस्त्रों का निर्माण, उनकी प्रतिक्रियाएं, उनका आयु का फल, कितने समय तक, किस रूप में यह परिणत हो सकते हैं।भारद्वाज मुनि ने कहाहे ब्रह्मचारियों! तुम्हारा एक वर्ष पूर्ण हो गया है, तुमने बड़ीबड़ी उन्नतियां की हैं, तुम अपने में आत्मवेता बनने के लिए भी तत्पर रहे हो, परन्तु आत्मिकवेता अपने में वह कहलाता है, जो अपने में भौतिक विज्ञान में प्रवेश करता हुआ, और लोकलोकान्तरों को जानता है।विद्यालयों में यन्त्र बने हुए हैं, निर्माणित है, पृथ्वी का प्राणी बुध में प्रवेश कर रहा है, बुध का प्राणी मंगल में प्रवेश कर रहा है, मंगल का प्राणी, वह शोनिक मण्डलों में रमण कर रहा है।तो यह बौद्धिकता है, इसमें विज्ञान है, इसमें महानता का दर्शन होता रहता है। 14.11.1987

922 द्वापर कालीन विज्ञान

ऐसा काल आता रहा है कि यह, द्वापर के काल में यह सम्भूति वर्णन किया था जिस समय महर्षि स्वानकेतु मुनि महाराज ब्रह्मचारी कवन्धि और सुकेता भारद्वाज मुनि के आश्रम में सेअपने यान के द्वारा मंगल में पहुंचे थे। मंगल का वैज्ञानिक सुधनक नामक वैज्ञानिक था। 27.11.1987

923 अनन्त ब्रह्माण्ड

एक समय महर्षि शिकामकेतु उद्दालक ने महर्षि भारद्वाज से कहाप्रभु! मैं यह जानना चाहता हूँ, यह जो हम पृथ्वियों की गणना करने लगे हैं, अन्तरिक्ष में और वेद के कुछ सूत्रों को ले करके, वेद की प्रतिभा को ले करके, जब इसकी उड़ान उड़ते हैं, तो अनन्तमयी पृथ्वियां दृष्टिपात आती हैं, जब वह विज्ञानमयी में प्रवेश किया और यन्त्रों में प्रवेश किया, तो महर्षि भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला मेंतीस लाख पृथ्वियों की गणना हुई, इसी प्रकार की गणनाएं, महर्षि उद्दालक गोत्र में शिकामकेतु के यहां हुई, परन्तुएक वेदमन्त्र को ले करके, इस प्रकार का विज्ञान, उनके समीप आया।तो महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने तो अपने यहांतीस लाख पृथ्वियां की गणना की, शिकामकेतु ने भी इसी प्रकार की गणना का स्वरूप बना, पृथ्वी का, एक ऐसा सूक्ष्म स्वरूप बन गया, वह विज्ञान की एक महान ऐसी पवित्र एक धारा बन गई, जो मानव अन्त में मौन हो गया, क्योंकि परमपिता परमात्मा का जो यह जगत है, परमपिता परमात्मा का जो यह विज्ञानमयी जगत है, क्योंकि यह अनन्तमयी कहलाता है।

तो जहां यहभौतिक विज्ञान की विचार वृतियों में रहा है, उतना ही विज्ञान भीइसी रूप को धारण करता रहा है। 01.12.1987

924 रक्त से यंत्रों में पूर्वजों के दर्शन

विद्यालय में जब ऋषि का आगमन हुआ, तो ऋषि ने यह प्रश्न किया, कि प्रभु मेरे हृदय में एक वेदना प्रदीप्त हो रही है, कि मैं आपके यन्त्रों के द्वारा, अपने किसी पूर्वज का दर्शन करना चाहता हूँ, महर्षि भारद्वाजके विद्यालय में नाना प्रकार के यन्त्र विद्यमान थे, यन्त्र ऐसेऐसे विचित्र थे, नाना प्रकार की चित्रावलियां थी, उन चित्रावलियों में अपने पूर्वजों का दर्शन करना चाहते थे, तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहाकि हे प्रभु! हम तुम्हें पूर्वजों का यन्त्रों में दर्शन करा सकते हैं।परन्तु कहीं हमें उनका एक रक्त का बिन्दु प्राप्त हो जाए।

तोएक रक्त का बिन्दु मूल में बन गया है। महर्षि सोमकेतु मुनि महाराज ने अपने आश्रम में भ्रमण किया, और भ्रमण करते हुए, उन्होंने अपने पूर्वजों के, जो संग्रहालय थे, उन्होंने प्रवेश किया, तो उनके कहीं छठे महापिता थे, उनके कहीं वस्त्र पर एक रक्त का बिन्दु उन्हें प्राप्त हो गया, वह रक्त का बिन्दु जब प्राप्त हुआ, तो वह बड़े मग्न हुए, उस वस्त्र को ले करके, महर्षि भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में पंहुचे और उस विज्ञानशाला में कहाप्रभु! यह एक रक्त का बिन्दु, वस्त्र मुझे प्राप्त हुआ। उन्होंने कहाबहुत प्रिय। तो ब्रह्मचारी सुकेता और ब्रह्मचारी कवन्धि ने रक्त के बिन्दु को, उस यन्त्र में, चित्रावली में उन्होंने प्रवेश किया, तोउस चित्रावली में, जैसे रक्त का बिन्दु प्रवेश हुआ, जिस मानव कावह रक्त का बिन्दु था, उसका चित्र साक्षात्कार दृष्टिपात आने लगा। वह चित्र जब दृष्टिपात आया, तो भारद्वाज मुनि बोले कि तुम्हारे छठे महापिता का दर्शन हो रहा है। जिसका दो सौ पिच्चासी वर्षपूर्व निधन को हो गया था, उसका चित्र एक रक्त के बिन्दु से, चित्र में दृष्टिपात आ रहा है।

तो वेद की प्रतिभा, वेद के मन्त्र से, मानव जब अपने में स्वतन्त्र प्रतिभा से गमन करता है, तो एकएक शब्द में, संसार का विज्ञान विद्यमान होता है। तो जब उसमें चित्र दृष्टिपात आने लगे, तो उन्होंने कहाब्रह्मचारी दृष्टिपात करो, तुम अपने पूर्वजों का दर्शन करो, तो ऋषि बड़े प्रसन्न हुए, सोमकेतु ऋषि महाराज ने कहाधन्य है प्रभु! आपने जितना भी इस विज्ञान को जाना है, यह बड़ा विचित्रतम कहलाता है।

उनके यहां जहां नाना प्रकार की चित्रावली आती, वह चित्रावलियां बड़ी विचित्र बन करके रही।परन्तुआगे उन चित्रावलियों को दृष्टिपात करने के लिए, उन्होंने कहाभगवन! मैं आपकी विज्ञानशाला में भ्रमण कर सकता हूँ, ओर आपके यहां मैं इन चित्रावलियों को भी दृष्टिपात करना, नाना प्रकार के अस्त्रोंशस्त्रों में प्रवेश करना चाहता हूँ। 01.12.1987

925 यज्ञ के चित्र दर्शन

वह दृष्टिपात कराने लगे ब्रह्मचारी सुकेता उनके समीप हैं, उनके यहां यज्ञशाला है, यज्ञशाला भी चौबीस कोणों की यज्ञशाला है, उस यज्ञशाला में वह याग करते थे, और याग के साथ ही उनके चित्र विद्यमान थे, जो स्वाहा उच्चारण कर रहा है, उसके चित्र द्यौ लोक को जाते दृष्टिपात आते रहते, विज्ञान अपनी स्थली पर बड़ा विचित्र बन करके रहता है।

वेद के आचार्यों ने वहां अध्ययन कराया, नाना प्रकार के अस्त्रोंशस्त्रों में ले गए, जहांउनके यहां वरूणास्त्र थे, और वरूणास्त्र जो वृति अग्नि प्रदीप्त हो रही है, और वरूणास्त्रों से, उस अग्नि को निगलने के लिए, यन्त्र विद्यमान हैं और भी नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण होता रहा है, और वह यन्त्रशाला बड़ी विचित्रता में दृष्टिपात आ रही थी।बहुत पुरातन काल हो गया, ऋषिमुनि अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके, एकएक वेदमन्त्र को ले करके, अध्ययन करते रहे हैं, चित्रावलियों में गति करते रहे हैं। 01.12.1987

926 वरुणास्त्र

ऋषि ने नाना प्रकार के अस्त्रोंशस्त्रों का वर्णन दृष्टिपात कराया, कोई यन्त्र उनका पृथ्वी की परिक्रमा कर रहा है। कोई यन्त्र मंगल की परिक्रमा कर रहा है, कोई यन्त्रसूर्य की परिक्रमा कर रहा है, कोई यन्त्र ध्रुव की परिक्रमा कर रहा है। नाना प्रकार की विज्ञानशालाएं कहीं आग्नेयास्त्र हैं, एकएक राष्ट्र नही, कईकई राष्ट्रों का यन्त्र से निधन हो जाए अग्निकाण्ड हो जाए, तो ऐसेऐसे यन्त्र जिसके प्रहार से अग्नि को निगल जाए उसको वरूणास्त्र कहते हैं। तो विज्ञान अपनी स्थलियों में बड़ा विचित्र और महानता में गति करता रहा है।जब सर्वत्र विज्ञानशाला का ऋषि ने दर्शन कर लिया सोमकेतु दद्दड़ गोत्रीय ने, बड़े विचित्र और विज्ञान के वांगमय में भी प्रवेश करने वाले, जब सर्वत्र भ्रमण किया, तो उन्होंने महर्षि भारद्वाज मुनि के यह कहाप्रभु! आपका विज्ञान तो बड़ा अद्वितीय है। आपके यहां तोलोकलोकान्तरों कायन्त्रों का वृत्ति हो रहा है। 01.12.1987

927 धनुर्याग

तोमहात्मा राजा सुखमजंस उनके पिता सगर को भी अपना यन्त्र दृष्टिपात कराया, इस प्रकार का हमारा धनुर्याग, महात्मा कपिल मुनि महाराज के यहां होता रहा, आकाशवाणी आती रहती, उन आकाशवाणियों में विद्यमान हो करके, अपने में नृत करते रहे, विज्ञान अपने में बड़ा अनूठा और विचित्र माना गया है, राजा सगर ने भीउसी प्रकार का याग कराया, जिस याग में वह सफलता को प्राप्त हुए तो यह प्रभु का विज्ञान कितना बिखरा हुआ है, मंगल में यात्री जा रहा है, प्रभु का जो रचाया हुआ जगत हूँ, जो आघात समुद्र के तुल्य है, उसमें से विज्ञान बहुतसी वार्ताओं को ले करके, वह अपने में विज्ञानवेता बन जाता है।बड़ी विचित्रतम उनके यहां एक प्रकार का विज्ञान नृत होता रहा, यातायात लोकों में निर्माणित कर दिया, यह सर्वत्र उनका एक वृत, अन्तिम कैसी विचित्रता, मुझे दृष्टिपात आ रही है, तो हृदय गद गद हो जाता है, वह हृदय ग्राही बन जाता है। 05.12.1987

928 योगी वैज्ञानिक

विचार आता रहा है कि ऐसेऐसे वहां बुद्धिमान योगी और योग में भी प्राण के ऊपर उनका बड़ा अधिपथ्य रहा है, सदैव बालि को अपने पुत्र के प्रति ऐसा अनुशागत रहा है, अनुग्रह रहा।उन्होंने समकोटिक मुनि महाराज के यहाँ, वह अपने पुत्र को, उन्होंने बारह वर्षों का अभ्याम कराया और बारहबारह वर्ष के दो अनुष्ठान, उन्होंने किए, चौबीस वर्षों मेंवह जहां चाहते थे, वही प्राण को ले जाते थे, वह प्राण को सर्वत्र शरीर के, पांच प्राणों को, दस प्राणों को एक ही स्थली में परिणत कर देने में, वह सफलता को प्राप्त हुए।वह अंगद भी इसी प्रकार का प्राणेश्वर, एक समय उन्होंने सर्वत्र प्राण को, दोनों नेत्रों के समीप, सर्वत्र प्राण को ले आए और एक अंग में प्राण को लाने का प्रयास किया, जब रावण की सभा में गए, वह राष्ट्रीय विचार धारा कि इन दोनों का परस्पर विवाद न रहे, तो वह प्राण को एक पग में ला करके, उसके प्राण को, कोई उसके शरीर के पगों को, कोई भी एक स्थली से, द्वितीय स्थली पर नहीं कर सका। ऐसीयह प्राण सत्ता मानी जाती है, यही प्राण सत्ता हनुमान जी के पास भी थी। 05.12.1987

929 यज्ञमय ब्रह्माण्ड

यह जो ब्रह्माण्ड है, इसमें जो क्रियाक्लाप हो रहा है, चाहे वह पृथ्वी मण्डल पर है, चाहे वह मंगल में है, चाहे वह चन्द्रमा में है, किसी भी लोकलोकातंरों में क्यों न हो, परन्तु वह सर्वत्र एक यज्ञमयी स्वरूप है और वह याग हो रहा है। 28.04.1988

930 प्रथम विज्ञानवेता कार्य

जब हम, विज्ञान की प्रतिभा को प्राप्त करने लगते है, तो सबसे प्रथम जो विज्ञानवेता होते है, वह गुरुत्व परमाणु के ऊपर अनुसंधान करते है, चाहे वह पृथ्वी मण्डल का रहने वाला प्राणी हो, चाहे वह मंगल में गमन करने वाला हो, किसी भी लोक लोकान्तरों में गमन करने वाला विज्ञानवेता क्यों न हो, परन्तु जब भी वह अनुसंधान करता है, तो गुरुत्व परमाणु के ऊपर अवेषण करता है और गुरुत्व परमाणु के ऊपर अनुसंधान करता हुआ, वह तीन प्रकार के परमाणुओं को जान करके, गुरुत्व तरलत्व और तेजोमयी ये तीन प्रकार के परमाणुओं को ले करके, मानव विज्ञान की धाराओं में वह परिणित हो जाता है, वह विज्ञानवेता बन जाता है। परन्तु इन्हीं से प्रकृति की पांच प्रकार की गतियों को जान करकेउसी में रत रह करके, नाना प्रकार के यंत्रों का निर्माण करता है। 19.10.1988

931 तीन परमाणुओं से जगत

जितना भी यह जगत है, यह तीन प्रकार के परमाणुओं से निहित और प्रभावित रहता है, तीन प्रकार के परमाणुवाद में सर्वत्र विज्ञान विद्यमान हैं, चाहे वह पृथ्वी मण्डल पर हो, चाहे वह मंगल में हो, किसी भी लोकलोकान्तरों में विज्ञान हो, परन्तु वह तीन प्रकार के परमाणुओं से घिरा हुआ है, परमाणु तीन है, गति देने वाली वायु है और जहां गतिवान हो रहा है, उसका नाम अन्तरिक्ष है। तो इसका नाम एक स्थली में विज्ञान है और दूसरा जो रुप है, वह आध्यात्मिकवाद कहलाता है। 01.11.1988
उसे सुगन्धित बना करके, उसको रोगनाशक सुगन्धि और पुष्ट चारों गुणों से युक्त करके, उनको नियुक्त किया। उन्होंने कहाप्रभु! जब यज्ञमान यज्ञशाला में याग करता है, वह तीन प्रकार की, चतुष प्रकार कीअग्नि चलती है और स्रुवा को ले करेक, यज्ञ के समीप जाता है, और पुष्टिकारक, सुगन्धित, और रोगनाशक इस प्रकार का वह मधु से परिपूर्ण होनी चाहिए तो इसमें मधु भी है, पुष्टिकारक भी है और रोगनाशक भी है। हेप्रभु! इसमें चतुर्थ गुण कहलाते हैं, मेरे समक्ष इसमें कोई न्यूनता नियुक्त करो? 14.11.1988

932 प्रत्येक लोक का वैज्ञानिक पार्थिव तत्व का चिन्तक

ऋषि ने कहा यह ब्रह्माण्ड अनन्तमयी कहलाता है, परन्तु जब यह विचार आता रहता है, यह तारा मण्डलों का प्रकाश तो अनन्तमयी हैं और इसका विस्तारवादी है और वेद का आचार्य कहता है, जिस भी काल में, संसार में विज्ञान पनपा हैं, विज्ञान तो प्रायः परम्परागतों से ही रहा है, परन्तु जब वैज्ञानिक जनों ने इस विज्ञान को अपने को क्रिया में लाना प्रारम्भ किया, तो सबसे प्रथम गुरुत्व परमाणु के ऊपर अध्ययन किया गया, इस पृथ्वी के ऊपर अध्ययन किया गया, पार्थिव जो गुरुत्व परमाणु हैं, उसके ऊपर अध्ययन प्रारम्भ किया जाता है।पृथ्वी मण्डल का वैज्ञानिक हो, चाहे मंगल का हो, चाहे वह शुक्र वैज्ञानिक हो, किसी भी लोकलोकान्तरों में गमन करने वाला विज्ञानवेत्ता हो, वह गुरुत्व परमाणु के ऊपर अध्ययन करता है, क्योंकि गुरुत्व पृथ्वी का गुण कहलाता है, तो सबसे प्रथम पृथ्वियों के ऊपर अन्वेषण प्रारम्भ हुआ।जहाँ महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँपृथ्वी के ऊपर अन्वेषण होने लगा, तोइनकी गणना करने लगे, जब पृथ्वी की गणनाकरने लगे, तोमहर्षि भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में तीस लाख पृथ्वियों की गणना की गई, क्या तीस लाख पृथ्वियाँ हैं, और भी अनन्यमयीहो सकती हैं, परन्तु, तीस लाख पृथ्वियाँ, उन्होंने यन्त्रों में लाने का प्रयास किया और यही उद्दालक गोत्र के शिकामकेतु उद्दालक मुनि ने इसको जानने का प्रयास किया था। 01.05.1989

933 लोकों की माला

महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि बोले किराजन!, मैं इस माला को धारण कराए देता हूँ, तीस लाख पृथ्वियों की एक माला बनी, और एकएक पृथ्वीब्रह्मसूत्र में, ब्रहा या प्राण सूत्र मेंपिरोयी गई, और यह माला बनी, इन मालाओं को धारण करने वालासूर्य कहलाता है।सूर्य इतना विशाल मण्डल है, जिसमेंतीस लाख पृथ्वियाँ समाहित हो जाती हैं, तीस लाख पृथ्वियाँ उसमे जब समाहित हो गई, उस माला को धारण किया गया, तोएक सहस्र सूर्यो की माला बनी, वही अपने में जब अध्ययन करने लगते हैं, विज्ञान के वांगमय में, तो जब एक सहस्र सूर्यो की माला बन, उनको बृहस्पति मण्डल ने अपने में धारण कर लिया, और बृहस्पति मण्डलों की एक सहस्र बृहस्पति मण्डलों की माला बनी तो, आरुणि मण्डल ने अपने में धारण कर लिया एक सहस्रआरुणि मण्डलों की माला बनी तो, उसको ध्रुव मण्डल ने अपने में धारण कर लिया, एक सहस्र ध्रुव मण्डलों की माला बनी, तो वहएक सहस्र ध्रुवों को धारण करने वाला, मूल ऩक्षत्र माना गया है, एक सहस्र मूल नक्षत्रों की माला बनी, उसको स्वाति ने अपने में धारण कर लिया और एक सहस्र स्वाति मण्डलों की माला बनी, उसको पुष्य नक्षत्र ने अपने में धारण कर लिया, एक सहस्र पुष्य नक्षत्रों की माला बनीं, उसको अचंग मण्डल ने अपने में धारण कर लिया, एक सहस्र अचंग मण्डलों की माला बनी, तो कृतिका मण्डल में प्रवेश कर गए, एक सहस्र कृतिका मण्डलों की माला बनी तो, वह राहिणीकेतु मण्डल को प्राप्त हो गए, एक सहस्र रोहिणीकेतु मण्डलों की माला बनी, तोउसको गन्धर्व ने अपने में धारण कर लिया। कितना अनन्तमयी ब्रह्माण्ड मानव के समीप आया।विचारा गया, वेद मन्त्र के आधार पर, वेद का ऋषि वर्णन करतेहुए, विज्ञानशाला में, विज्ञान की आभा में रत्त होता है, चिन्तन कर रहा है, यहीं शान्त हो जाए, ऋषियों से नहीं रहा गया, वैज्ञानिकों ने ऋषित्व को अपने में धारण किया और उन्होंने विचारा

कि इतने मण्डलों का तो एक सौर मण्डल ही बनता है, तो इतने सौर मण्डल, ऐसा वेद का आचार्य कहता है, योगी कहते हैं और वैज्ञानिक भी कहते हैं, लगभग इतने सौर मण्डलों की एक आकाशगंगा बनी है, एक आकाशगंगा जब निर्माणित होने लगी, दृष्टिपात होने लगी, कहीं समाधि में, ऋषि-मुनियों ने दृष्टिपात किया, कहीं यन्त्रों में दृष्टिपात किया, इस प्रकार एक माला को धारण किया। तो जब ऋषि निर्णय देने लगे तो, एक अरब छियानवें करोड़, उन्नतीस लाख, उन्नचसवें हजार, पाच सौ इक्सठ के लगभग, इस प्रकार की आकश गंगाए इतनी ही आकाश गंगाओं की अवन्तिका का निर्माण हुआ।एक अवन्तिका बन गई अवन्तिका जब बन गई, तो ऋषि मुनि विचारने लगे, उन्होंने आगे अध्ययन प्रारम्भ किया, उन्होंने कहा आगे अध्ययन न रहा गया, तो विचारने लगे दो अरब, पचानवें करोड़, नवासी लाख, उन्नचसवें हजार, पाच सौ बावन के लगभग, इतनी अवन्तिकाओं की, एक निहारिका बन गई।अनन्तमयी ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आने लगा, जब अनन्तमयी ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आने लगा, तो बड़ा विचित्र एक नृत बन गया। इस प्रकार तारा मण्डलों की निहारिका तब पंहुच गए, अवन्तिका तक पंहुच गए और आकाश गंगा और मण्डलों में रत्त होकर शान्त हो गए। 01.05.1989

934 गृह

नाना ग्रहों के निर्माण किए, गृह उसे कहते हैं, जहाँ प्राणी वास करते हैं, जैस चन्द्र ग्रह है, सूर्य ग्रह है, बुध ग्रह है, ये सब ग्रह कहलाते हैं, जिसमें सब प्राणी मात्रवास करते रहते हैं, यह ग्रह हैं।जो परमपिता परमात्मा ने, सृष्टि के पिता ने, सृष्टि का सृजन करते हुए, इन सब ग्रहों को निर्माणित किया और निर्माणित करके वहाँ के प्राणी मात्र को, ऋषिमुनियों ने अपनी समाधि के द्वारा अपने सूर्य की किरणों के द्वारा गमन करते हुए, यन्त्रों के द्वारा, उन ग्रहों में जाने का प्रयास किया।वेद का आचार्य कहता है, ऋषि कहता है कि वह परमपिता परमात्मा का यह कैसा भव्य गृह माना गया है, जहाँ परमात्मा वास करता है, परमपिता परमात्मा सर्वज्ञ है, वह एकएक कणकण में व्याप्त रहता है, तो वह प्रभु यह नाना ग्रहों का निर्माण किया, वशिष्ठ मण्डल वशिष्ठ ग्रह कहलाता है, अरूणधती ग्रह कहलाता है, विश्व स्वयं गृह कहलाता है, नाना गृह है जिनकी गणना भी ही की जा सकती। यह प्रभु का एक अनूठा जगत है, ये ग्रह कहलाते हैं, जिनमें प्राणी वास करता है, वैज्ञानिक जन अपने में वास करते रहते हैं। पुरातन काल के आचार्य जन, अपनेअपने यन्त्रों के द्वारा, लोकों की यात्रा करते रहे हैं और उन लोकों में वास करते रहें हैं, वायुमण्डल को जानते हुए, जान करके, उन्होंने वातावरण को यहाँ लाने का प्रयास किया, कि परमपिता परमात्मा का यह अनूठा जगत है, इस अनूठे जगत में, ग्रहों का निर्माण करने वाले प्रभु हैं, यह पृथ्वी ग्रह है, जहाँ मानव वास करता हो, ग्रहों का निर्माण करने वाला हो, वही तो ग्रह कहलाता है, चन्द्र ग्रह, सूर्य ग्रह, मंगल ग्रह, वशिष्ठ ग्रह, रेति ग्रह, नाना प्रकार के ग्रहों का वर्णन आता रहता है और ग्रह का अभ्रिपायः यह जहाँ मानव वास करता है, ग्रहों का निर्माण कर सकता है। तो यह नाना प्रकार के ग्रहों में, मानव का यातायात बना रहा है, वह यातायात विज्ञान के द्वारा, प्रवृत्ति के द्वारा, योगाभ्यास के द्वारा, प्राण और मन का एकाग्र करना ही, सूर्य की किरणों के आधारित हो करके, ऊर्ध्वा को गमन करना, यह सब यातायाग की प्रतिभा बनी रहती है।प्रत्येक मानव के हृदय में यातायात बना रहा है, मन ऐसा विचित्र है, कि संसार की प्रत्येक यातायात इसके आगे पिछले विभाग में रह जाती है, जब योगी बन जाता है, तब मानव को एक क्षण समय नहीं लगता, जब यह चन्द्रमा की यात्रा करके चला आता है, एक क्षण समय नहीं लगता, जब यह सूर्य मण्डल की किरणों के साथ में गमन कर जाता है, प्रकृति का सबसे सूक्ष्मतम तन्तु यह मन माना गया है, इस मन और प्राण के ऊपर दोनों का संयम रहा, दोनो के ऊपर संयम करने का नाम साधना है।विचित्रता है, मानवीयता है।वृत्तियों में मानव रत्त रहता है। परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और देवत्व को जानते हुए, हम गृह को ऊँचा बनाए और जब गृह का निर्माण हो जाए, उस गृह में विचारका एक माधुर्यत्व रहना चाहिए, एक अपने क्रियाकलापों का माधुर्यत्व रहना चाहिए। 15.12.1989

935 अहिल्या

वैदिक साहित्य में अहिल्या नाम पृथ्वी को माना है, अहिल्या नाम रात्रि को माना है, अहिल्या नाम बुद्धि को कहा जाता है, तो अहिल्या के नाना पर्यायवाची शब्द हैं।

राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न और भी ब्रह्मचारी, जो राष्ट्र के विद्यमान वह सब धनुर्विद्या को पान करते रहे, तो महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज नेबड़े विश्वनीय अप्रतों को निर्माणित किया और उन्होंने कहाजब भी तुम्हें कोई आवश्यकता हो, तो मेरे यहां नाना प्रकार की विद्या का अध्ययन होता रहता है, याग के ऊपर ओर नाना प्रकार के, जो अन्तरिक्ष से गमन करने वाले यान है, उसमें भीतुम पारायण बनो, तो ब्रह्मचारियों ने, भारद्वाज से कि हे प्रभु! हमलोकलोकन्तरों की उड़ाने कैसे उड़ सकते हैं ?उन्होंने कहायन्त्रों के द्वारा, जब मैं अपने विद्यालय में अध्ययन करता था, महर्षि तत्व मुनि महाराज के यहां, यही तो वह धनुर्विद्या है, परमाणु विद्या है। जिस परमाणु विद्या को जानते हुए, परमाणुओं का गठन करना, परमाणुओं को एक दूसरे में परिणत कर देना ओर वही परमाणुवाद यन्त्रों में उसको परिवर्तित करते रहे हैं, ओर उन यन्त्रों में विराजमान हो करके, नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों की हम उड़ान उड़ते रहते थे। 07.01.1990

936 लंका में भवन

उन्होंने कहाप्रभु! यह कुबेर भवन है।यह जो द्वितीयभवन, तुम्हें मैं दृष्टिपात करा रहा हूँ, यह स्वर्ण का भवन है, जिसका निर्माण महाराजा शिव ने किया है। उन्होंने कहाबहुत प्रियतम! भ्रमण कराते हुए, वह सर्वत्र लंका का भ्रमण कराने लगे, नाना भवनों का निरीक्षण कराया। उन्होंने कहाआओ भगवन! अब मेरे राष्ट्र में जो विज्ञानशाला है, इसका आप और दर्शन कर लीजिए, वह विज्ञानशाला में ले गए और विज्ञानशाला में सबसे प्रथम उन्होंने कहा हे भगवन! यहाँ पृथ्वी के ऊपर अन्वेषण होता रहता, कि पृथ्वी में कितनी दूरी पर कौनसा खनिज विद्यमान है, और कौनसा सूर्य की किरण, किस प्रकार आ करके, इसको वृत दे रही है। पृथ्वी के ऊपर अनुसन्धान हो रहा है। हे प्रभु! यह आपोमयी जल के ऊपर अनुसन्धान हो रहा है, यह जल किस किस प्रकार का, कहाँ कहाँ विद्यमान है, पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार का जो जल विद्यमान है उसको सूर्य कैसे तपाता है और वहीं जल, वाहनों में क्रियाकलाप करने लगता है। वही जल, समुद्रों में रत्त रहता है। इसी प्रकार, उस पृथ्वी मां के गर्भस्थल में जो सूर्य अपना प्रतिभाषित कर रहा है और अपनी किरणों से तपायमान कर रहा है यह माता वसुन्धरा के गर्भस्थल में तप रहा है। आपो के ऊपर अनुसन्धान हो रहा है। उन्होंने कहाप्रभु! यह, अग्नि अनुसन्धानशाला है, जहाँ अग्नि के ऊपर अन्वेषण हो रहा है, कि अग्नि क्याक्या किया करती है, यह अग्नि वह है जो यज्ञशाला मेंप्रदीप्त रहने वाली है, जो विभाजन करती है पदार्थो का, वही अग्नि, काष्ठ में रहती है, वही अग्नि सूर्य की किरणों में, सूर्य की आभा में रत्त रहने वाली है। जिससे सूर्य ऊर्ज्वा को प्राप्त करता हुआ, वह ऊर्ज्वा संसार को देता है, प्रकाश देता है और वहीं द्यौ में प्रवेश हो करके, द्यौ को प्रकाशित करने वाला है और द्यौ से यह अपने में प्रकाश ले करके और ऊर्ज्वा ले करके, यह संसार को तपायमान करता रहता है। 27.03.1990

937 सूर्य अनुसंधान शाला

ऋषि बड़े प्रसन्न हुए ऋषि ने कहाधन्य है प्रभु! यह सूर्य अनुसन्धानशाला है, जहाँ ऊर्ज्वा को जाना जाता है, नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करते हुए, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में यन्त्र, अपने में गमन करता रहता है, वह सूर्य से ऊर्ज्जा पाता है, सूर्य से ऊर्ज्वा को पाने वाला यन्त्र, सूर्य की परिक्रमा से बाह्य जगत में चला जाता है, वह ध्रुव यात्री बन जाता है, वह ध्रुव मण्डल की भी परिक्रमा करने लगता है। यहाँ सूर्य के ऊपर अन्वेषण होता रहता है। यह विज्ञानवेत्ता विद्यमान है। ऋषि का आत्मा बड़ा प्रसन्न हुआ और ऋषि ने कहा रावण तुम्हें धन्य है, तुम्हारा विज्ञान बड़ा पराकाष्ठा पर जा रहा है। उन्होंने कहा भगवन! नारान्तक है और नारान्तक की यह विज्ञानशाला है, जोचन्द्रमा के यात्री बने हुए है और चन्द्रमा में यात्रा करते रहते है। उन्होंने नारान्तक से चर्चा की। हे नारान्तक! तुम विज्ञान की आभा में कितने रत्त करते हो? उन्होंने कहा प्रभु! मैं अपने यन्त्र में विद्यमान हो करके, मैं एक रात्रि और एक दिवस मेरे लिए चन्द्रमा में जाने के लिए पर्याप्त होता है। इतना ही समय मुझे आने के लिए पर्याप्त है।उन्होंने कहाकि मैं चन्द्रमा से ऊर्ध्वा, बुध में भी चला जाता हूँ और शुक्र में गमन करता हुआ, मैं मंगल की यात्रा कर लेता हूँ। इस प्रकार जब उन्होंने निर्णय कराया, तो ऋषि का अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न हुआ, ऋषि ने कहाधन्य है। हे रावण! मुझे प्रतीत नहीं था, तुम्हारा राष्ट्र, इतना विज्ञानवेत्ताओं से रत्त हो रहा है। 27.03.1990

938 अश्विनी कुमारों की आयुर्वेद गति

उन्होंने कहाप्रभु! यहहमारे यहाँ चिकित्सालय है, यहाँ अश्विनी कुमार और सुघन्वा नामक, वैद्यराज यहाँ अन्वेषण करते रहते है। औषधियों के ऊपर विचारविनिमय करते रहते है।अश्विनी कुमारों से कहाहे अश्विनी कुमारो! तुम्हारी इस आयुर्वेद में कितनी गति है? उन्होंने कहाप्रभु! हम मानव के हृदय को छह माह तक, मानव का शरीर और हृदय दोनों को पृथक्पृथक् कर देते है, और उसहृदय को, औषधियों में नियुक्त कर देते है और छह माह के पश्चात पुनः दोनों का समन्वय करके, पुनः गति प्रदान कर देते है। 27.03.1990

939 भवन निर्माणशाला

अपने में आयुर्वेदविशिष्ठ रहा है, राजा रावण के यहाँ आयुर्वेद की महान गति रही है।औषधियों के ऊपर अन्वेषण होता हुआ, मानव की प्रतिभा उसमें निहित रही है। जब उन्होंने आयुर्वेदशाला भी दृष्टिपात कर ली, तो उन्होंने कहाआओ भगवन!, मैं तुम्हें मार्गशालाओं में ले जाना चाहता हूँ। जहाँ सुन्दरसुन्दर मार्गो के निर्माण होते थे, तो वह मार्गवेत्ताओं के समीप पहुंचे। उन्होंने वार्ता प्रगट की, उन्होंने कहायह मेरी मार्गशालाऐं है और यहाँ मार्गवेत्तानिर्माण करते रहते है। 27.03.1990

940 विज्ञान राष्ट्र की सम्पदा

सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके, वर्तमान के काल तक, जब भी विज्ञान पनपा, है सबसे प्रथम उन्होंने पृथ्वी के ऊपर अन्वेषण किया है, और पृथ्वी के विज्ञानवेता, नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों में गमन करते रहे हैं, और भी नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों में प्रायः इस प्रकार का विज्ञान रत होता रहा है। जैसे मंगल में भी विज्ञान, अपनी आभा में रमण करता रहता है, शुक्र में भी इसी प्रकार का विज्ञान रत रहा है, क्योंकि परमात्मा का यह जो अनूठा जगत है, यह नाना प्रकार के लोकलोकान्तर एक ब्रह्म सूत्र में पिरोये हुए हैं। और वह एक माला के

सदृश्य हमें दृष्टिपात आते रहते हैं, तो यह पृथ्वी को जानने वाला, नाना पृथ्वियों को जानता रहा है, एक पृथ्वी नही, दो नही, नाना पृथ्वी के ऊपर अन्वेषण होता रहा है, और नाना सूर्यों के ऊपर भी अन्वेषण होता रहा है, और नाना ध्रुव मण्डलों के ऊपर भी अन्वेषण होता रहा है।तोपृथ्वी माता के गर्भस्थल में मानव विद्यमान होता है ओर उससे नाना प्रकार के खाद्य और खनिज को प्राप्त करता हुआ वह अपने मानवीय जीवन को ऊँचा बनाता है राष्ट्र में जितने विज्ञानवेता होते हैं वह विज्ञान राष्ट्र की सम्पदा होती है राष्ट्र की सम्पदा ही राष्ट्र को ऊँचा बनाती है तो राष्ट्र अपने में पवित्र बनता रहता है। 27.03.1990

941 प्रथम उसने पृथ्वी के ऊपर अन्वेषण

सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके, वर्तमान के काल तक, जब भी विज्ञान पनपा है, सबसे प्रथम उसने पृथ्वी के ऊपर अन्वेषण किया है, और पृथ्वी के विज्ञानवेत्ता नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों में गमन करते रहे हैं, और भी नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों में प्रायः इस प्रकार का विज्ञान रत्त होता रहा है, जैसे मंगल में विज्ञान, अपनी आभा में विज्ञान अपनी आभा में रमण करता रहता हैशुक्र में भी इसी प्रकार का विज्ञान रत्त रहा है क्योंकि परमात्मा का यह जो अनूठा जगत है, यह नाना प्रकार के लोकलोकान्तर कोएक ब्रह्म सूत्र में पिरोए हुए हैं, और वह एक माला के सदृश्य हमें दृष्टिपात आते रहते हैं, तो जैसे यह पृथ्वी के जानने वाला, नानापृथ्वियों को जानता रहा है, एक पृथ्वी नहीं, दो नहीं, नाना पृथ्वियों के ऊपर अन्वेषण होता रहा है, और नाना सूर्यो के ऊपर भी अन्वेषण होता रहा है। 09.01.1991

942 त्रैतवाद

महर्षि व्रेतकेतु ने कहाकि यह संसार त्रैतवाद में निहित रहने वाला है। जब विज्ञानवेता अपने में विज्ञान की धाराओं में रत्त होता है तोवह भी तीन प्रकार की धाराओं को ले करके गमन करता है, गुरुत्व परमाणु, तरलत्व परमाणु, और तेजोमयी अग्नि के परमाणु येत्रैतवाद में ये तीन प्रकार के परमाणुओं का सुगठित करता हुआ, विज्ञानवेता कहीं अर्न्तरिक्ष में उड़ान उड़ता है, कहीं पृथ्वी के गर्भ में चला जाता है, कहीं द्वितीय पृथ्वी में चला जाता है।ब्रह्माण्ड को वह दृष्टिपात करने लगता है, तो वह त्रैतवाद कहलाता है। 05.03.1991

943 मस्तिष्क के तीन प्रकार

तो हमें विचारना चाहिए कि त्रैतवाद में हमें रत्त रहना है और तीन ही अमृत कहलाये जाते हैं, कृतिका, श्वेतवर्णी और वाचकेतु, ये तीन ही आभाओं में रत्त रहने वाला यह जगत है, तीन प्रकार के मस्तिष्क माने हैं एक मानधुत, एक रेणकुत मस्तिष्क है एक व्रहातक्रतिका मस्तिष्क कहलाता है, यह त्रैतवाद में रमण करने वाला जगत है। तो मानव तीन वस्तुओं से अपने में कतिबद्ध रहता है, तो हमओ३म्पर जब विचारविनिमय करते हैं, तो वह साधना का क्षेत्र बन जाता है। अ और म को जब हम अपनी व्याहृति बना करके मन में चिंतन करना प्रारम्भ करते हैं, और जब अन्तिम चरण होता है, तो उस चरण में भी तीन ही होते हैं। मन, बुद्धि और चित्त, ये मन कीवृतिया है, और बुद्धि में भी नाना प्रकार की धाराओं का जनम होता है।परन्तु त्रैत वर्णों में रत्त रहने वाला है, इसी प्रकार तीन प्रकार की विद्या है, ज्ञान, कर्म और उपासना, तीन ही प्रकार की विद्या संसार में है, सबसे प्रथम ज्ञान उसके पश्चात कर्मकाण्ड और उसके पश्चात उपासना का देवत्व आ जाता है।

वेद मंत्र में त्रिवर्धा का बड़ा वर्णन आ रहा है, त्रैतवाद में मानव को रत्त रहना चाहिए, क्योंकि राजा जब अपने राष्ट्र का पालना करता है, उस पालना के मूल में भी यही है किवह रजोगुण से अनुशासन करता है। सतोगुण से प्रजा की पालना करता है।

माता में तीन प्रकार की गुणावधानम रहते है, वह तमोगुण में उत्पत्ति का मूल है, और रजोगुण में अनुशासन है और सतोगुण में पालना का मूल कहा जाता है। तो सतोगुण में विष्णु है, रजोगुण में शिव है, और तमोगुण मेंब्रह्म कहा जाता है। रचना के मूल में, सतोगुण की पुट लगी रही है, और रजोगुण की भी तरंगे रमण करती रहती है। 05.03.1991

944 मानव की पिपासा

वेद का मंत्र यह कहता है क्या हम यंत्रों में विद्यमान हो करके हम अपना यातायात बनाए जिस यातायात से क्योंकि मानव की यह पिपासा बनी रहती है। भगवन! प्रत्येक मानव, प्रत्येक मेरी पुत्री सब चाहते रहते हैं, कि एक प्रेरणा जागरुक हुई है, क्या मैं अपने मन में, मनस्तव को धारण करूँ और मनस्तव के पश्चात भावना बनी, कि मैं देवत्व को प्राप्त हो जाऊ और देवत्व के पश्चात भावना बनी कि मैं ऋषित्व में और प्रभु के हृदय से, अपने हृदय का मिलान करू, इस प्रकार की भावना सदैव मानवीय हृदयों में प्रविष्ट होती रहती है। जानकारी के लिए, वह प्रत्येक वस्तु का अनुसंधान करता रहता है। हे भगवन! जब ऋशिवर चित मण्डल में प्रवेश करते रहते हैं, तो चित मण्डल की प्रवृतियों को जान करके, वह बुद्धि के मण्डल में प्रवेश हो जाते हैं, और बुद्धि के मण्डलों की जब बुद्धि की ऊर्ध्वा में गमन करने लगते, हैं तो समाधिष्ठ हो करके, लोक लोकान्तरों की माला बनाते हैं, और लोक लोकान्तरों की माला बना करके आकाशगंगाओं की माला बना लेते हैं, अवन्तिका की माला बना करके, प्रभु! उसे अपने ब्रह्मरन्ध्र मेंयोगेश्वर अपने में ध्यानावस्थित हो जाता है।

तो यह मानव ऐसा क्यों करता है, क्योंकि मानव का यह जो शरीर है, यह पिण्ड और ब्रह्माण्ड में कोई भी अंतर्द्वंद्व नहीं है। इसलिए सूक्ष्म मण्डल में प्रवेश हो करके, यह पिपासी बना रहता है, कि मैं संसार को जानने वाला बनूं, और मैं संसार का विज्ञानवेता बन जाऊं, मैं लोक लोकांतरों में गमन करने लगूं, क्योंकि हमारा जो मनस्तव है, वह प्रकृति का तन्तु है और प्रकृतियह सर्वत्र ब्रह्माण्ड इस प्रकृति मण्डल में निहित रहता है, तो इसलिए मनस्तव अपनी आभा को ले करके, वह मण्डलों में जाना चाहता है, लोक लोकान्तरों में गमन करना चाहता है। तो भगवन यह पिपासा तो सदैव बनी ही रहेगी।

तो हे प्रभु! हम यह जानने आए हैं, कि जब मण्डल में यन्त्र में विद्यमान हो करके, लोक लोकान्तरों की यात्रा करना चाहते हैं।महात्मा ने कहाकि हे ब्रह्मचारियों! तुम्हारे अन्तर्हृदय में यह जो पिपासा जागरुक हुई है, मेरा अंतरात्मा उससे बहुत प्रसन्न है, क्योंकि ब्रह्मचारी बनता ही वह है, जब उसका मन, कर्म, वचन एक ही कार्यों में उर्ध्वा कार्यो में रत्त रहता है, शायद कोई मानव यह कहे, कि मैं संसार के रागद्वेषो में परिणत हो करके, मैं ब्रह्मवर्चोसि बन सकूं, तो नहीं बन पाता, वह बनता उस काल में है, जब, उसमें वह संलग्न रहता है, एकएक वस्तु के जानने में वर्षों व्यतीत कर देता है, निन्द्रा भी उतनी ही ले पाता है, जितनी उसके शरीर में अवृति उत्पन्न न हो सके। 05.03.1991

945 ब्रह्मचर्य

वहाँ के पदार्थ ला लाकर के, आचार्य को उन्होंने दिग्दर्शन कराया, उनके यहाँ जहाँ वेदज्ञ वेदशाला थी, वही विज्ञानशालाभी थी। जब विज्ञान की उड़ाने उड़ते, तो अपने में अपनेपन को धारण करते और जब, वह प्रातःकालीन, आचार्य के चरणों में विद्यमान हो करके, आचार्य जैसे ब्रह्म का चिंतन करते थे, जैसे सुयोग्य मातापिता अपने बाल्य को ले करके प्रातःकाल में ब्रह्म का चिंतन करते हैं, अथवा ब्रह्मयाग करते हैं, वह अपने में बड़ा अद्बितीय होता है, इसी प्रकार वह विद्यालय, कितना महान, पवित्र कहलाता है। जहाँ आचार्यजन और ब्रह्मचारी अंग संग विद्यमान हो करके, वह ब्रह्म की चर्चा करते हैं, ब्रह्म की पिपासा में रत्त रहते हैं, कि ब्रह्म का जगत कितना अनुपम है, कितना महान है। 05.03.1991

946 ब्रह्म दर्शन

प्रातःकालीन ब्रह्मचारियों से आचार्यो ने कहाहे ब्रह्मचारियों! तुमने प्रभु का सृष्टि मण्डल तो दृष्टिपात किया है, अभी तो तुम ईकाई में भी नहीं पहुंचे हो, जब तुम पूर्णता में प्रवेश हो जाओगे, उस समय तुम्हें परमपिता परमात्मा का ब्रह्माण्ड अनन्तता में दृष्टिपात आएगा।

उन्होंने कहा प्रभु! यह तो अवश्य है, क्योंकि एक मानव कुछ विद्या अध्ययन करके, यह अनुभव कर लेता है, क्या मैं तो सर्व विद्याओं में पूर्ण हो गया हूँ, परन्तु जब वह परमात्मा के अनन्तमयी ब्रह्माण्ड में प्रवेश करता है। और उससे अपने हृदय का मिलान करता है, तो एक धारा, द्वितीय धारा में से जन्म लेती रहती है और जन्म ले करके, एक से दूसरे में, तीसरे में रमण करते हुए, ब्रह्म का एक ऊर्ध्वा में दर्शन होने लगता है।

तो यहीं ब्रह्म का चिंतन है, क्योंकि अपने जीवन को, जब ब्रह्म चिंतन में क्रियात्मकता में लाने का प्रयास करोगे, तोतुम अपनी धाराओं में त्रैतवाद में रमण करते चले जाओगे, तोतुम अपने विद्यालय कोपवित्र बनाओ, जिससेतुम्हारे विद्यालय में क्रियात्मक कर्म हो। 05.03.1991

947 यन्त्रों का निर्माण

विज्ञानवेता बन जाता है, इसी के गर्भ से जब पार्थिव तत्व के ऊपर अनुसन्धान करता है, तो उसे एकदूसरी धातु का मिलान करके वह यन्त्रों का निर्माण करता है, कोई यन्त्र अपने, वह सूर्य की किरणों के साथ गमन करता है, कोई ध्रुव की परिक्रमा कर रहा है, कोई मंगल में प्रवेश कर रहा है, नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करके और वह लोकलोकान्तरों की उड़ाने उड़ने लगता है क्योंकि विज्ञानवेता, जब भी यहाँ पनपा है संसार में, तो उन्होंने सबसे प्रथम पृथ्वी के ऊपर अन्वेषण किया है और पृथ्वी के वागमय में प्रवेश करके अग्रणीय बना है और वह विज्ञानवेता बन करके, नाना प्रकार की उड़ाने उड़ता है, यन्त्रों में विद्यमान हो करके, वह मंगल में जाता है और मंगल में मंगल की विद्या का अध्ययन करता है, और मंगल में से जब वह ऊर्ध्वा में, बृहस्पति में चला जाता है, तो वहाँ की विद्या का अध्ययन करता है, वहाँ से नाना प्रकार केप्राणों के माध्यम से, वह जो प्राण विद्या है, जो उसमें परिणत हो रही है, उसके माध्यम से यन्त्रों को वह वहाँ से पृथ्वी पर क्या मंगल पर जिस भी लोक का वैज्ञानिक है, अपने राष्ट्र में उनको उड़ित करने लगता है।

तो, हमारे यहाँ प्राण विद्या विशिष्ठ विद्या मानी गई है, हमारे यहाँ योगेश्वर, जब प्राण को अपान में मिलाते है, अपान को समान में प्रवेश करते है, समान में जब व्यान की पुट लगाते है, और व्यान को जब उदान में प्रवेश करते है, तो जब इस यन्त्र में विद्यमान हो करके, आत्मा जब लोक लोकान्तरों की जहाँ ऋषि मुनियों की सूक्ष्म आत्माएं होती है, उनके मध्य में विद्यमान हो करके और प्राणीहै तोयह संसार अपने में वशीभूत हो रहा है, प्रत्येक प्राणी अपने में ही रत्त हो रहा है, चारों प्रकार की सृष्टियों का व्यवधान, जिसे हमारे यहाँ, सबसे प्रथम स्थावर, अण्डज, जंगम और स्वेदज सृष्टि कहलाती है, यह चार प्रकार की सृष्टि है। परन्तु अन्त में इसमें योनियां प्राप्त होती है, स्वीकार की गई है

विद्वानों ने, और अपने में, इसका मन्थन भी होता रहा है। तो इसके गर्भ में नाना प्रकार के परमाणुओं का आदानप्रदान हो रहा है, स्वर्ण जैसी आपो कृतियों का जन्म हो रहा है, स्वर्णमयी और, रत्नों का निर्माण हो रहा है, निर्माणवेता निर्माण कर रहा है और यह पृथ्वी माता जब भी वैज्ञानिक जन, इस संसार में पनपा है और वैज्ञानिक सृष्टि के प्रारम्भ से ही पनपने लगा है। 12.03.1991

948 परमपिता परमात्मा के गर्भ में विज्ञान

वेद का मन्त्र कुछ विज्ञान के वांगमय में तो नहीं ले जाना चाहता हूँविचार विनिमय यह कि हमारा वेदमन्त्र अपने में उद्गीत गा रहा है, वह माता वसुन्धरा है, जो हमारा कल्याण करने वाली है, परन्तु जब यह मानव इस माता पृथ्वी के गर्भ से भी उपराम हो जाता है, तो यह जो परमपिता परमात्मा है, तो वेद मन्त्र यह कहता है, यह विष्णु ही तो अमृत है और यह परमपिता परमात्मा वसुन्धरा के रूप में परिणत रहता है, प्रत्येक वेदमन्त्रउस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है, जैसे माता का पुत्र, माता की गाथा गा रहा है, यह किसी माता का पुत्र है, इसी प्रकार पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गाती है, एक ब्रह्माण्ड, द्वितीय ब्रह्माण्ड में रत्त होने वाली पृथ्वी है, इसी प्रकार उस परमपिता परमात्मा की जो अनुपम रचना है, वह रचना ही उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रही है।प्रत्येक वेदमन्त्र अपने में उस परमपिता परमात्मा का वर्णन कर रहा है अथवा उसकी गाथा गा रहा है। इसीलिए हम परमपिता परमात्मा को वसुन्धरा के रूप में वर्णित करते रहते है, इसी मेंयह नाना प्रकार का ब्रह्माण्ड समाहित रहता है।जैसे माता के गर्भ मेंशिशु अथवा पुत्र विद्यमान है, योनियां इस पृथ्वी के गर्भ में है, इसी प्रकार यह जो नाना प्रकार का मण्डलवाद है, अथवा लोक लोकान्तरवाद है, यह अब उस माता परमपिता परमात्मा की गोद में विद्यमान है, उसी में रत्त होता रहता है, मानव भी जब इस पृथ्वी में उपराम होता है, तोवह परमपिता परमात्मा की गोद में चला जाता है, उसी के गर्भ में यह रमण करता रहता है। 12.03.1991

949 लोकों की ओत-प्रोतता

एक दूसरे में ओतप्रोत होने वाला, जो यह जगत है, वह बड़ा अनुपम है।कैसे ब्रह्माण्ड एक दूसरे में समाहित हो रहा है, तीस लाख पृथ्वियां सूर्य में और एक सहस्र सूर्य मण्डल, बृहस्पति में समाहित हो जाते है, एक सहस्र बृहस्पति मण्डलों की माला बनी, जो आरुणि मण्डल अपने में धारण करने लगता है, एक सहस्र आरुणि मण्डल है, जिन्हेंध्रुव अपने में धारण कर लेता है, एक सहस्र ध्रुव मण्डलों की माला बनती है, जिनमें पुष्य नक्षत्र अपने में धारण कर लेता है, एक सहस्र पुष्य नक्षत्रों की माला बनती है, उसको वहत्रिमण्डल अपने में धारण कर लेता है, और एक सहस्र स्वाति मण्डलों की माला बनी, उसेमूल नक्षत्र अपने में धारण कर लेता है, एक सहस्र मूल नक्षत्र बनें, अचंग मण्डल ने अपने में धारण कर लिए, एक सहस्र अपंग मण्डल बन, उसको रोहिणीकेतु मण्डल ने अपने में धारण कर लिया, एक सहस्र रोहिणीकेतु मण्डलों का निर्माण हुआ वह श्रीती मण्डल में प्रवेश कर गये एक सहस्र स्रीती मण्डल जोगन्धर्व लोक में समाहित हो गए, इतने मण्डलों का एक सौर मण्डल बनता है, और ऐसे लगभग एक अरब पिचानवें करोड़ नवासी लाख उन्नचवे हजार और पाच सौ इक्कसठ के लगभगइतने सौर मण्डल एक उनकी आकाशगंगा बनती है। इतने सौर मण्डलों की एक आकाशगंगा बनी, और पौने दो अरब आकाश गंगाओं कीएक अवन्तिका बनी, औरदो अरब पांच सौ इक्कसठ अवन्तिकाओं की एक निहारिका बनती है, यहाँ आ करके ऋषि अपने में मौन हो जाता है और वैज्ञानिक जन कहते है, कि यह तो अनन्तमयी ब्रह्माण्ड है, जहाँ अनन्तता का वर्णन आता, वहाँ परमपिता परमात्मा के गर्भ मेंसर्वत्र लोक लोकान्तर वशीभूत हो जाता है, उसी में रत्त हो जाता है। 12.03.1991

950 पृथ्वी की प्रतिष्ठा जल

परन्तु मैं यह जानना चाहती हूँ, कि यह जो पृथ्वी है, यह कहाँ प्रतिष्ठित रहती है? उन्होंने कहादेवी! यह जो पृथ्वी है, यह जब भी प्रतिष्ठा को प्राप्त होती है, तो प्रतिष्ठित बनती है, ओतप्रोत होती है, तो जल में ओतप्रोत हो जाती है, क्योंकि जल को उसमें परिणत करते हैं।

तो, मेरी प्यारी माता रज और त्वचा में परिणत करती है, तो वह भी उत्पति के मूल में, उत्पति का निर्माण करती है और जब यह, जल में पृथ्वी की रज और सुधा जल को कहा जाता है, जल का मिश्रण होता है, तो यह भी नाना पिण्डों का निर्माण करकेलोकलोकान्तरों में यह सूक्ष्म पिण्ड बने हुए हैं।

जब गुरुत्व मेंजल का मिश्रण होता है, तोवह अपने में पिण्ड का निर्माण करते रहते हैं, तोऋषि ने जब इस प्रकार वर्णन किया तो उन्होंने कहादेवी! यह पृथ्वी जल में ओप्रोत हो जाती है, जल में प्रतिष्ठित हो जाती है।तो उन्होंने कहाधन्य है, प्रभु! मैं यह और जानना चाहती हूँ, कि यह जल कहाँ प्रतिष्ठित होता है? 19.04.1991

951 जल की प्रतिष्ठा अग्नि

उन्होंने कहाजल अग्नि में ओतप्रोत हो जाता है, क्योंकि यह जल को अमृत कहते हैं, जल को ही विष्णु का रूप दिया गया है, यह जल ही अग्नि में ओतप्रोत हो जाता है, क्योंकि अग्नि उसे अपने में धारण करती है, जब अग्नि का प्रचण्ड रूप बनता है, अग्नि की उग्र क्रिया बनती

है, तो जल ही उसे अग्नि में धारण करता है, और यह जल के द्वारा अपने को शान्त कर देती है। जैसे आपो एक तेजोमयी कहलाती है, और तेजोमयी बन करके यह अपने को प्राप्त कर लेती है, तो वेद का ऋषि अपने में उदगीत गा रहा है, और वेद का मन्त्र कहता है, यह जो अग्नि है, यह तेजोमयी है, यह अग्नि ज्योतिमयी स्वरूप मानी गई है, तो यह अग्नि अपने में उष्ण बनाती है, और उष्ण बना करके, धीमाधीमा उष्ण दे करके, उसको परिपक्व बना देती है। जैसे नाना पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार का खनिज और खाद्य विद्यमान रहता है, कणों को यह एक दूसरे में पिण्ड रूप में मिलान करके और उसको शुष्क बनाने वाली, यह धीमी अग्नि है और यह अग्नि सूर्य के रूप में विद्यमान होती है, कहीं यह चन्द्रमा के रूप में अग्निविद्यमान होती है, यह कहीं यह चन्द्रमा को यह अग्नि न प्राप्त हो, तो उसमें शीतलता का व्यवधान नही आएगा और यदि सूर्य के पिण्ड में अग्नि नही होगी, तो वह ऊर्ज्वा नही दे सकता, एक दूसरे में ऊर्ज्वा का सम्बन्ध है।एक दूसरे में ऊर्ज्वा ओतप्रोत है। तो यह संसार अपने में गतिवान हो रहा है, यह जल प्रतिष्ठित हो जाता है, जैसेउग्र क्रिया को एक दूसरे में धारण करता हुआ, अपने में धारयामि बना लेता है, उसको शीतलता में दे करके, अमृतमयी बनाता रहता है। 19.04.1991

952 परमाणुओं के तीन प्रकार

ये तीन प्रकार के परमाणु वैज्ञानिकों ने स्वीकार किये हैं, सबसे प्रथम तेजोमयी, तरलमयी औरगुरुत्व, ये तीन प्रकार के परमाणु हैं, इन्हीं परमाणु से निर्माण होता है, इन्हीं परमाणुओं से यह ब्रह्माण्ड का निर्माण होता है, एक दूसरे में ओतप्रोत हो जाते हैं, ऋषिमुनि जब भी अपनी एकान्त स्थली में ब्रह्मयाग करने लगते हैं। तो ब्रह्मयागी इसमें विचारने लगता है, और ब्रह्मयागी यह विचारता है, यह जो पिण्डबनते हैं, यह पिण्ड ही परमाणुओं के लिए होते हैं, गुरुत्व तरलत्व और तेजोमयी ये तीन प्रकार की धाराएं, तीन परमाणु माने गए हैं, इन्हीं परमाणुओं को बना करके, यन्त्रों का निर्माण होता है, इन्हीं के द्वारासूर्य लोक का यात्री बनता है। इन्ही को जानता हुआचन्द्रमा का यात्री बनता है, इन्ही को धारण करके, ध्रुव का भी यात्री बन जाता है। जब ऋषि मुनि अपने ब्रह्मचारियों को, शिक्षा देते हैं तोउनके यहां एक विज्ञानशाला है, और उस विज्ञानशाला में ओतप्रोत हो करके नाना प्रकार के विज्ञान में रत होते रहे हैं। 19.04.1991

953 देव भाषा से अन्य लोकों की भाषा का बोध

यह जो देव भाषा है, और देवभाषा का का जो व्याकरण है, वह ब्रह्मा का व्याकरण कहलाता है।और जो अनहद ध्वनि होती है, मस्तिष्क में जो उसका तारतम्य, साधना से बना लेता है, वह ब्रह्माण्ड के किसी भी लोक की भाषा को जान लेता है।तो वह जब उस पर विद्यमान हो करके, अपने अन्तरिक्ष की उड़ान उड़ने लगता है, तो वह छह माह तक वायुमण्डल कें वैज्ञानिकों तक वार्ताएं प्रगट करते रहते थे, परन्तु उसके पश्चात, वह वहाँ से उड़ान उड़ करके, वह वशिष्ठ मण्डल में पंहुचे, तो वशिष्ठ मण्डल का जो वैज्ञानिक है, वहाँ का जो विज्ञान है, उसमें, जल की कुछ प्रधानता मानी जाती है, वशिष्ठ मण्डल के लिए उन्होंने वहाँ से वायुमण्डल के परिचय को ले करके, वहवहाँ से उड़ान उड़ते हैं और उड़ान उड़ करके वह अरूण्धति में चले गए और उसका सूर्य से विशेष सम्बन्ध रहता है, अरूण्धति मेंअग्नि तत्व प्रधान माना गया, तो स्वाति में चले गए, स्वाति का वायुमण्डल सामान्य है, उस पर जो पृथ्वी तत्व है, उस अग्नि की प्रधानता, वह लिए हुए, उसमें अग्नि की प्रधानता विशेष मानी जाती हैं।

तो आगे जब उन्होंने स्वाति मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वृतिकामण्डल से चले गए, जहाँ पार्थिव तत्व प्रधान माना जाता है, तो इस प्रकार उड़ान उड़ते हुए, वह लोकों की उड़ान उड़ते हुए, बहत्तर लोकों का भ्रमण करते हुए, भारद्वाज का यन्त्र इसी प्रकार धीरेधीरे पृथ्वी मण्डल पर आ गया, तो प्रभु का विज्ञान कितना अनुपम है और प्रभु का राष्ट्र कैसा अनुपम है? तो उस समय विज्ञान अपने में बड़ा अनूठा माना जाता है, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि ने कहाहे दिव्या! यह जो तीन प्रकार के परमाणु हैं, एक को तरलत्व, तेजोमयी और गुरुत्व और इन परमाणुओं को, एक दूसरे में मिलान करते रहे, कहीं तो गुरुत्व की विशेषता है, कहीं तरलत्व विशेष है, तो कहीं अग्नि प्रधान है, इसी प्रकार ये तीन प्रकार के परमाणु से, यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड, एक दूसरे से पिरोया हुआ है, उसी सेपिण्डों का निर्माण करते रहते हैं, वायु उन पिण्डों को गति कराती रहती है और जहाँ गति कर रहे हैं, उसे हम अन्तरिक्ष कहते हैं, वह अन्तरिक्ष में विद्यमान होते रहते हैं, तोयह जो परमात्मा का अनूठा जगत है, एक लोक दूसरे में ओतप्रोत हो रहा है, यह माता के सदृश्य है, एकएक मण्डलों की माला की बनी है। 19.04.1991

954 यज्ञमयी स्वरूप

वेद की एक आख्यिका यह वर्णन कर रही है, कि कोई भी वस्तु हो, वह पिण्ड को निर्माणित करती हुई, ब्रह्माण्ड की रचना मेंसहायक बनती है।तो हमारा यह मानवीय यज्ञशाला है, पिण्ड है, इसमें कहीं सप्त होताओं के द्वारा याग का चलन हो रहा है, कहीं ग्यारह होताओं के द्वारा चयन हो रहा है, तो यह जो हमारा मानव शरीर है, यह पिण्ड रूप में माना गया है। परन्तु इसी प्रकार, यह जो ब्रह्माण्ड है, जिसकी प्रायः हम कल्पना करते रहते हैं, यह भी एक यज्ञोमयी स्वरूप् माना गया हैं! परमात्मा का जगत यह इतना अनूठा है, जब परमपिता परमात्मा ने सृष्टि का सृजन किया, तो वह परमात्मा ब्रह्म रूप बन गया और वह परमात्मा ब्रह्म रूप बन करके, संसार का नियमन कर रहा

है, और आत्मा उस समय यज्ञमान के रूप में निहित रहता है और देवताओं का यह जो मुख है, यही है, अग्नि सूक्ष्म बना देती है, यह अध्वर्यु अमृत कहलाता है, प्राणों के द्वारा गान गाया जाता है, तो वायुगान गाने वाली, उदगाता कही जाती है और यह अमृत जल है, जो तरलत्व हो करके, मानव के श्रोत्रों में, घ्राण में अथवा नेत्रों में यह अपने में समाहित होता रहा है। तो यह, प्राणों के संरक्षण में रहने वाला, यह यज्ञमयी स्वरूप माना गया है।

तो विचार यहहै कि अन्तरिक्ष में सब अवृत हो जाते हैं, अथवा लय हो जाते हैं। यह चारों प्रकार की सृष्टि अपनेअपने स्वरूप में रमण करती रही है और यह एक दूसरे मे सहायक बनी हुई है, लोकलोकान्तरों का वर्णन करते हुए, वेद का मन्त्र यह कहता है, कि एक दूसरे में कटिबद्ध होने वाला है और यह माला के सदृश्य जो जगत है, यह बड़ा अनूठा है। तो हमारे ऋषिमुनियोंकी एक विचित्र देन रही है, कि वह ध्रुवा से ऊर्ध्वा में और ऊर्ध्वा से ध्रुवा में अपनी उड़ाने उड़ते रहे हैं। 24.04. 1991

955 अग्नि की जननी वायु

तो एक दूसरे में एक दूसरा जगत ओतप्रोत हो रहा है, नाना प्रकार में अपने में प्रतिष्ठित हो रहा है, जैसे, जल और अग्नि की विवेचना हो रही थी, इससे पूर्व अग्निवायु में प्रतिष्ठित हो जाती है।चाक्राणी गार्गी ने कहाहे प्रभु! अग्नि कहाँ प्रतिष्ठित हो जाती है? उन्होंने कहायह अग्नि वायु में प्रतिष्ठित हो जाती है और वायु ही इसको अपने में धारण करता है, जहाँ वायु है, वही अग्नि है और जहाँवायु नही रहता है, क्योंकि वायु अग्नि की जननी कहलाई जाती है।

तो जहाँ वायु नही रहेगा, वहाँ अग्नि भी प्रदीप्त नही होगी, अग्नि भी शान्त हो जाएगी, तो अग्नि भी प्राणों को देने वाला है, यहां प्राण नाना प्रकार के रूप में, अग्नि का व्यवधान चलता रहता है, गतिवान होता रहा है, इसके पश्चात उन्होंने कहायह वायु है, जो जगत को प्रसारित कर रही है, अथवा यह प्राण सत्ता दे रही है, वायु नही रहेगी, तो प्राण भी नही रहेगा, प्राण नही रहेगा, तो मानव नही रहेगा, प्राणी मात्र नही रहेगा, वनस्पतियां नही रहेंगीं, सर्वत्र अपने मे शून्यता को प्राप्त हो जाएगें। 24.04.1991

956 प्राण शोधक वायु

तो वेद का मन्त्र कहता है, यह वायु ही तो प्राण का शोधन करने वाली है। यही तो उसको व्यवधान में परिणत कर रही है।शिकामकेतु उद्दालक ने, तो इन प्राणों के ऊपर अन्वेषण करते हुए, बहुत से यन्त्रों का निर्माण किया, भारद्वाज मुनि के यहां भी इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण होता रहा है।तो यह जो वायु है, यह अन्तरिक्ष में ओतप्रोत हो जाती है, यह अन्तरिक्ष में वायु भरण करती रहती है, यह तीन प्रकार के परमाणुओं को ले करके, यह वायुमण्डल, यह अन्तरिक्ष में रमण करती रहती है। यह अपने में भ्रमण करती है, तो धीरेधीरे अपने में अपनेपन का भान कराती रहती है, और यह कहीं अन्तरिक्ष में लय हो जाती है, कहीं अन्तरिक्ष से यह पुनः पृथ्वी मण्डल पर आते हैं, कहीं पृथ्वी सेतरलत्व में परिणत हो जाते हैं, इसी प्रकार एक दूसरे में, एक दूसरे का व्यवधान माना गया है, तो जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन कराया, तो ऋषि ने कहा कियह अन्तरिक्ष कहाँ रहता है, यह अन्तरिक्ष कहाँ प्रतिष्ठित होता है?

उन्होंने कहा यह महत्तत्व में ओतप्रोत हो जाता है, जब वह ओतप्रोत हो की चर्चा, ऋषि ने वर्णन की, तो ऋषि यहां आ करके मौन हो गया और मौन हो करके याज्ञवल्क्य मुनि बोलेकि शून्य बिन्दु पर जा करके, शून्यता पर वाणी या कोई इन्द्री, कोई अपना क्रियाकलाप नही करती, चाक्राणी ने कहाहे देव! यह महत्तत्व कहाँ प्रतिष्ठित हो जाता है? 24.04.1991

957 महत्तत्व की प्रतिष्ठा

तो जब महत्तत्व की चर्चा आई, तो याज्ञवल्क्य कहता है, अब वह ध्रुवा से ऊर्ध्वा को उड़ाने उड़ता है, वह बोले कि वह चन्द्रमा में प्रतिष्ठित हो जाते हैं, यह चन्द्रमा ही तो सोम की वृष्टि करने वाला है, यह चन्द्रमा सोम कहलाता है, यही वनस्पतियों में रस देता है, यही माता के गर्भस्थल में, हम जैसे शिशुओं का अमृत प्रदान करता रहता है, उससे जन जीवन प्राप्त होता है, अमृतमयी बन जाता है, वह यह चन्द्रमा ही, चन्द्रमा में ओतप्रोत हो जाता है, अथवा उसी में यह प्रतिष्ठित हो जाता है। 24.04.1991

958 चन्द्रमा ही सोम

तो चन्द्रमा ही सोम कहलाता है, यह चन्द्रमा समुद्रों से जलों का उत्थान करता है, और जल से मेघ बनते हैं, और जब मेघमण्डल वत्रासुर बन करके, इन्द्र का और वत्रासुर दोनों का संग्राम होता है, तो धीमीधीमी वृष्टि प्रारम्भ होती है, उससे यह पृथ्वी नाना व्यंजनों वाली बन जाती है, नाना प्रकार का खाद्य और खनिज उसी के द्वार से उत्पन्न होता है, क्योंकि उससे यह कटिबद्ध हो रहा है जगत, तो यह चन्द्रमा सोम है, इसका समन्वय समुद्रों से रहता है, अन्धकार रूपी रात्रि को अपने गर्भ में धारण कर लेता है, और धारण करके, यह सोम की वृष्टि करता है और सौम्य दे करके खाद्य और खनिज पदार्थों को यह पवित्रता में परिणत कर देता है। 24.04.1991

959 चन्द्रमा की प्रतिष्ठा

चाक्राणी ने प्रश्न कियाप्रभु! यहचन्द्रमा कहाँ प्रतिष्ठित है?उन्होंने कहाचन्द्रमा सूर्य में प्रतिष्ठित हो जाता है, यह सूर्य से सहायता लेता है, यह सूर्य से सहायता ले करके, अपने में सोम कहलाता है। और यह ऊर्ज्वावादी है, नाना प्रकार के ऊर्ज्वा को ले करके, यह शीतल बन जाती है, अमृतमयी बन जाती है, इसी प्रकार यह ऊर्ज्वा का प्रतिनिधित्व करने वाला है, यह द्यौ से प्रकाश लेता है और द्यौ से ऊर्ज्वा ले करके, यह ऊर्ज्वा को बिखेर देता है, मानव में जन जीवन आ जाता है।

तो ऋषि ने कहा यह जो सूर्य है, यह ऊर्ज्वा को बिखेरता है, और यह चन्द्रमा में कान्ति देता है, और यह रात्रि को, अपने गर्भ में धारण करता है।इसीलिए यह नाना प्रकार की आभा में रत रहता है। 24.04.1991

960 सूर्य की प्रतिष्ठा

चाक्राणी ने कहाप्रभु! यह सूर्य कहाँ प्रतिष्ठित होता है? उन्होंने कहायह जो सूर्य है, यह गन्धर्व मण्डल में ओतप्रोत हो जाता है और यह गन्धर्व सौर मण्डलों का अन्तिम मनका कहलाता है। इसी के द्वारा सुमेरू कहलाता है।सुमेरू उसे कहते हैं, जोनाना मण्डलों की माला बन जाती है, मनकों की माला बन करके उसका एक सुमेरू होता है, और वह सुमेरू में कटिबद्ध रहती है, वह विशेष कहलाता है। इसी प्रकारयह गन्धर्व सुमेरू की भाँति रहता है, यह सूर्य इसी में प्रतिष्ठित हो जाता है, द्यौ के सहितइसमें प्रतिष्ठित हो जाता है, और यह गन्धर्व ही ऊर्ज्वा को द्यौ में देता है, और द्यौसूर्य को प्रकाशित करता है और सूर्य उससे ऊर्ज्वा ले करके, वह वनस्पतियों में, सब प्राणी मात्र में, जीवन सत्ता प्रदान कर देता है, तो यह गन्धर्व मण्डल है, इसमें सूर्य प्रतिष्ठित हो जाता है। 24.04.1991

961 गन्धर्व की प्रतिष्ठा

वेद का आचार्य कहता है कि यह गन्धर्व कहाँ प्रतिष्ठित हो जाता है?उन्होंने कहायह गन्धर्व, इन्द्र मण्डल में ओतप्रोत हो जाता है, जहाँ नाना प्रकार के मण्डल है, वहाँ एक मण्डलइन्द्र नाम का मण्डल है, जिस मण्डल में यह गन्धर्व भी प्रतिष्ठा को प्राप्तहो जाता है। उसी में ओतप्रोत होता हुआ दृष्टिपात आता है।

योग साधना के द्वारा साधक जब इसको अपने में दृष्टिपात करता है, तो इन्द्र का स्थान ब्रह्मरन्ध्र में होता है, और ब्रह्मरन्ध्र मेंप्रकृतिस्थिर हो जाती है और उसी में वह सांत्वना को प्राप्त हो करके, अपने में दृष्टिपात करता है। तो वह जो इन्द्र है, वह गन्धर्व इन्द्र में ओतप्रोत हो जाता है।

तो ऋषि ने जब यह वाक् श्रवण किया, तो चाक्राणी उपस्थित हो करके बोलीकि महाराज! यह इन्द्र कहाँ प्रतिष्ठित होता है ?उन्होंने कहा यह जो इन्द्र हैं, यह प्रजापति में ओतप्रोत हो जाता है, मानव के द्वारा जैसे मातापिता हैं, मातापिता के द्वारा दो प्रकार की सन्तानें होती हैं, एक सन्तान होती है, एक प्रजा होती है। प्रजा लोकप्रिय कहलाती है और सन्तान, मोह के वशीभूत कहलाती है। 24.04.1991

962 प्रजा

तो वेदमन्त्र कहता है, मातापिता को प्रजा को जन्म देना चाहिए, माता जब अपने गर्भ से प्रजा का जन्म देती है, तो वह प्रजा कहलाती है। सन्तान को जन्म देती है, तो वह मोह ममता में कर्तव्य से विहिन हो जाती है। तो वह मोह न करते हुए, वह केवल प्रजा और उसको शिक्षित बना दे और देवत्व बना दे, यह माता का कर्तव्य है। माता जब उसे प्रजामयी बना देती है और यदि उसको पुत्र बना देती है, तो उसमें मोह हो जाता है और मोह से पुत्रपुत्र ही रह जाता है वह प्रजा नही बनती। 24.04.1991

963 अहंकार से पिण्ड निर्माण

जब संस्कारों से विहीन हुआ, तो मोक्ष बन गया।तो वह कल्पकल्पान्तरों तक अपने प्रभु के राष्ट्र में रहता है, प्रभु के आनन्द में आनन्दित रहने वाला वह आत्मा है, तो आत्मा के साथ में, पंच महाभूतों का जो मिलन है, पंच महाभूतों का जो सूक्ष्म रूप है, बुद्धि से भी सूक्ष्म वह चित्त कहलाता है और चित्त के पश्चात अहंकार आता है, अहंकार कहते है, जो पिण्डों का निर्माण करता है। यदि अहंकार नही होगा, तो पिण्डों का निर्माण नही होगा, एक पिण्ड नही, मानव का पिण्ड है, प्राणी मात्र का पिण्ड बना हुआ है। लोकलोकान्तरों के पिण्ड बने हुए है, जोलोकलोकान्तरों के रूप में विद्यमान हैं, नाना प्रकार के नक्षत्र बने हुए हैं, जैसे यह पृथ्वी मण्डल है और पृथ्वी के अंगसंग रहने वाला, वह शुक्र कहलाता है। शुक्र इसके अंगसंग रहने वाला बुध कहलाता है, और बुध के अंगसंग रहने वाला मंगल रहता है, और मंगल मण्डल के अंगसंग रहने वाला अरूण्धति रहता है, और अरूण्धति के अंगसंग रहने वाला, यह वशिष्ठ मण्डल कहलाता है, जो वशिष्ठ मण्डल के ऊर्ध्वा भाग में, स्वाति नक्षत्र है और स्वाति नक्षत्र के अंग संग रहने वाला वह वर्णकृत मण्डल कहलाता है। यह प्रभु ही तो निर्माण करने वाला, माता के गर्भस्थल में, उनका समूह है, उनका जगत है, लघु मस्तिष्क को निर्माण करता है, रेणकेतु मस्तिष्क का निर्माण करता है। तो यह अनन्तमयी जगत है, इस मानव शरीर का, तो उसी में जब तपों में परिणत हो जाता है, तप करने लगता है।तो यह सर्वत्र जगत उसके समीप आना प्रारम्भ हो जाता है। 24.04.1991

964 मंडलों की यात्रा

महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज और श्वेतकेतु ब्रह्मचारी और महर्षि ममतु, ये तीनों यन्त्रों में विद्यमान हो करके, महर्षि तत्व मुनि महाराज के यहाँ, जब उड़ान उड़ने लगे, तो ब्रह्मचारी उसमें विद्यमान, परन्तु उनका आश्रम से यान उड़ान उड़ता है, और यान उड़ता हुआ, सबसे प्रथम वह यान पृथ्वी से उड़ान उड़ करके, वह सबसे प्रथम चन्द्रमा में जाता है, और चन्द्रमा से उड़ान उड़ता हुआ, वह बुध में प्रवेश करता है, और बुध से उड़ान उड़ करके, वह शुक्र में प्रवेश करता है, और शुक्र से उड़ान उड़ता हुआ, वह मंगल में चला जाता है, और मंगल से उड़ान उड़ता है, तो मृचिका मण्डल में प्रवेश कर जाता है, और मृचिका मण्डल में प्रवेश करता हुआ, रोहिणी केतु मण्डल में प्रवेश करता है, और रोहिणीकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ, वह वशिष्ठ मण्डल में चला गया और वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ करके अरूण्धति में प्रवेश हो गया और अरूण्धति से उड़ान उड़ता हुआ, वह श्वेताम् भू मण्डल में प्रवेश कर गया और श्वेता भू मण्डल से प्रवेश करता हुआ, उड़ान उड़ता हुआ, वह मौनकेतु मण्डल में प्रवेश कर गया और मौनकेतु मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो रोहिणी केतु मण्डल में प्रवेश कर गया और रोहिणी केतु मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ, वह सम्भूति मण्डल में प्रवेश कर गया, वह यान उनका बहत्तर लोकों का करता हुआ, वह लोकलोकान्तरों की यात्रा करता हुआ, पुनः वह आचार्य के आश्रम में प्रवेश कर जाता है। 08.05.1991।

965 विद्यालयों की पवित्रता

तो इस प्रकार का विज्ञान, जब विद्यालयों में प्रायः होता रहा है, तोविद्यालय पवित्रता को प्राप्त होते रहे हैं, उसमें ज्ञान और विज्ञान की उड़ान उड़ने वाला, यही नही, लोकलोकान्तरों में यातायात है। परन्तु उसमें विज्ञान और लोक लोकान्तरों का अध्ययन भी होना चाहिए। ऐसे ब्रह्मचारी और ऐसे विद्यालयों में यानों का निर्माण होता रहा है, जिस लोक में, वहाँ का वायु मण्डल और वहाँ के क्रियाकलाप, वहाँ केराष्ट्र में, उनका भान होता रहा है, शिक्षा प्रणाली को भी वह प्रायः अपने में धारण करते रहे हैं।

वेद का मन्त्र, हमारा एक-एक अपने में, पूर्णता को प्राप्त होता रहा है।तो जहाँ इस प्रकार के विद्यालय होते हैं, जहाँ ज्ञान और विज्ञान की उड़ाने उड़ी जाती हैं, जहाँ लोक लोकान्तरों में यातायात हो, वहाँ का राष्ट्र सबसे महान और पवित्रतम कहलाता है। तो यह तीन प्रकार की अग्नियों का, जहाँ पूजन होता हो, पूजन का अभिप्रायः यह है कि जहाँ उनका उपयोग होता हो, उसका नाम पूजन है और उनको क्रिया में लाने का नाम कर्म कहा गया है। 08.05.1991।

966 अभाव में याग की अनिवार्यता

अंजलि में इस पृथ्वी की रज लेकरके कहो प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, जल न हो तो पृथ्वी की रज को ले करके याग करो, और याग करते हुए कहो, यही तो पिण्ड का मूल है, माता के गर्भस्थल में वही रेतस प्रवेश करता है, और रेतस के द्वारामानव के पिण्ड का निर्माण होता है, इसी प्रकार लोकलोकान्तरों कानिर्माण होता है। 06.07.1991

967 माता के गर्भ स्थल में निर्माण

तो माता के गर्भस्थल में हम जैसे शिशुओं का निर्माण होता है, तो कही बुद्धि का निर्माण है कहीं हृदय का निर्माण हो रहा है कहीं नाना प्रकार की नस नाड़ियों का निर्माण होता है, माता के गर्भस्थल में निर्माणवेता निर्माण कर रहा है, परन्तु तीन प्रकार के परमाणु है। जो रेतस के रूप में विद्यमान रहते हैं, तो ऋषि ने कहा हे ब्रह्मचारी! यह तुमने जान लिया कि यह जो गुरुत्व है, यह पिण्ड का शोधक है, और इसमें तरलत्व का जो निर्माण होता है।तो दोनो की पुष्टि हो जाती है, और तरलत्व जब हो जाता है, तो मानव परिपक्व बन जाता है, तो इसी प्रकार जो तीन प्रकार के परमाणुओं के द्वारा साकल्य न हो, तो कोई वाक् नही, परन्तु तुम्हारे द्वारा पृथ्वी की रज तो है, और पृथ्वी की रज से कहो, कि तुम प्राणाय स्वाहाः, अपानाय स्वाहाः, प्राण गति कर रहा है।परन्तु यदि उसमें पृथ्वी के परमाणु गुरुत्व नही, हैं तो प्राण, अग्नि को प्रदीप्त कर सकता है, औरतरलत्व नही होगा, तो उसमें जो परमाणुओं का आवागमन हो रहा है, वह परमाणु प्राण के साथ में गमन करता है, और उसमें गमन करता हुआ, अपने में मानवीयता को धारण कर रहा है।

इसी प्रकार जैसे शरद ऋतु में जबहेमन्त ऋतु आती है, तो जोअग्नि के परमाणु होते हैं, वे अग्निमयी बन जाते है, और यदि इसमें तरलत्व पदार्थ होते हैं, तो वह शीतल बन जाते है। तो इसी प्रकार वह अपने में अपनेपन का गान गाता रहता है, विचार आता रहता है, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा कि यह जो नाना प्रकार के ब्रह्माण्ड की रचना हो रही है, रचनाकार रचना को स्वीकार करते हैं, सबसे प्रथम वसुन्धरा के गर्भ में, नाना प्रकार की धाराओं का जन्म होता है, वही परमाणु एक दूसरे से मिलान करना प्रारम्भ करते हैं, जैसे यह पृथ्वी है, यह सूर्य है, यह चन्द्रमा है, यह बुध है, यह शुक्र है, यह शनि है और यह मंगल है, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की रचना प्रारम्भ हो जाती है। 06.07.1991

968 लोकों में यान

जब महर्षि तत्व मुनि महाराज के विद्यालय में नाना ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहे हैं, उन्होंने अपने यहाँ एक यन्त्र का निर्माण किया था, जिसमें, सहायक नाना ऋषि थे।परन्तु यान में विद्यमान हो करके नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में रमण करने वाले, ऐसे वैज्ञानिक हुए हैं, जिनका जैसे महर्षि तत्व मुनि महाराज के यहाँ विज्ञान अपनी उड़ाने उड़ता है, तो उड़ान उड़ता हुआ, सबसे प्रथम वह चन्द्रमा में जाता है, चन्द्रमा से उड़ान उड़ता है, तो शुक्र में जाता है, और शुक्र से उड़ान उड़ता है, तो बुध में चला जाता है, बुध से उड़ान उड़ता है, वह मंगल में चला जाता है, और मंगल से उड़ान उड़ता है, तो वह वशिष्ठ मण्डल में चला जाता है, और वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो अरूण्धति में चला जाता है, अरूण्धति से उड़ान उड़ता है, कालेत्वर मण्डल में चला जाता है, कालेत्वर मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो मौन वृतिका मण्डल में प्रवेश होता है, और मौनवृतिका मण्डल से उड़ान उड़ता हुआ, वह सम्भूनि मण्डल में अपना वास कर लेता है। तोयान बहत्तर लोकों का भ्रमण करके पुनः ऋषि के आश्रम में प्रवेश करता है।तो यह जो गुरुत्व है, तरलत्व है, इन तीनों परमाणुओं में सर्वत्र विज्ञान निहित रहता है, और विज्ञान परमाणुओं की प्रतिभा कहलाती है। 06.07.1991

969 चरैवेति भाव में प्राण

तो विचार आता रहता है, आचार्यों से वर्णन करते हुए, उन्होंने कहा वेद का मन्त्र कहता है हे मानव!, तू सम दृष्टिपात कर, इसी प्रकार तू अपने में यागिक बन और अपने में पृथ्वी की रज को ले करके कहोप्राणाय स्वाहाः, यह प्राण गति कर रहा है, प्राण ही चरैवेति कहलाता है, इसका अभिप्रायः यह है कि प्राण ही माना गया है, चवरैति, जो गमन करने वाला, जो गमन करता रहता है। माता के गर्भस्थल में जो निर्माण हो रहा है और बाह्य जगत में भी निर्माण हो रहा है। 06.07.1991

970 गृह

वह गृह स्वामी जो परमपिता परमात्मा इस अन्तरात्मा में विद्यमान है, उस मानव आत्मा के गृह के ऊपर विचार-विनिमय प्रारम्भ करे, वैसे तो यह संसार गृह भवन है, नाना प्रकार के मण्डलों को भी गृह कहा जाता है, परन्तु जहाँ यह आत्मा वास करता है, उनको भी गृह कहा जाता है, तो विचार आता है, मंगल मण्डल में मानव प्राणी वास करता है, तो उसको मंगल गृह की उपाधि सम्बोधित किया है, और उपाधि नही, जहाँ वास करता हो प्राणी, उसी को गृह कहा जाता है।वास्तव में जैसे बुध गृह है, बृहस्पति गृह है, और भी नाना प्रकार के मण्डलों को गृह की उपाधि प्रदान की गई है। 14.07.1991

971 जीवन मुक्त

तो यह आत्मा का गृह है, जिसको हम सूक्ष्म शरीर कहते हैं, जिसको सूक्ष्मतम में, हम रमण कराते रहते है। तो यह जो पंच महाभूतों का, जो एक अमूल्य शरीर है, यह एक बड़ा महान और पवित्रता में सदैव रमण करता रहा है। तो इसके ऊपर ऋषिमुनि सूक्ष्म शरीर को जानने वाला ही, जीवन मुक्त होता है।वह जीवन मुक्त इसीलिए की जो इस सूक्ष्म शरीर को जान लेता है, वह कारण को जान लेता है, और वही स्थूल को जान लेता है, और वह जीवन मुक्त हो जाता है।वह जब चाहता है स्थूलता को प्राप्त कर लेता है और जब चाहता है वह सूक्ष्मतम को प्राप्त हो जाता है। परन्तुइसके ऊपर ऋषिमुनि बड़ा अनुसन्धान करते रहे हैं। महात्मा जालवी ने तो एक ही वाक् कहा था कि यह जो सूक्ष्म तन्मात्राए है इनका भी एक अमूल्य जगत माना गया है, जिस जगत में लोकलोकान्तर अपनी आभा में, सूत्र में सूत्रित होते रहे हैं।
तो सूक्ष्म शरीर को हम जानने का प्रयास करे, जिससे वायु अपने में गमन करता रहता है, जिस में अभ्योदय होता रहता है। तो ऋषि कहता है, यह सूक्ष्म शरीर, यह आत्मा का द्वितीय शरीर है।और तृतीय जो शरीर है उसका नाम स्थूल कहलाता है। 14.07.1991

972 साधक

तो साधक जब साधना करता है तो आपो के परमाणुओं को उनकी गन्ध और सुगन्ध को ले करके इसका निर्णय करा देता है इसमें जल प्रधान है इसमें अग्नि प्रधान है और अग्नि और जल में यही वस्तु विद्यमान रहती है तो वायु तत्वों को जान करके और तरलत्व को जान करके, वैज्ञानिक अपने में, विज्ञान की उड़ाने उड़ता है, साधक अपनी साधना में प्रवेश करता है, और साधारण प्राणी उसी में रत रहता है। तो जब तरलत्व और गुरुत्व को जानने वाला, जिससे साधक जानता है, कि यह पिण्ड बना हुआ है, चाहे वह गृह का पिण्ड है, चाहे मानव शरीर का पिण्ड है, चाहे वह लोकलोकान्तरों का पिण्ड है, चाहे वह सूर्य इत्यादिमण्डलों का पिण्ड बना हुआ हैं, यह पिण्ड जितना भी है, गुरुत्व की इसमें पुट लगी होती है, और गति भी इसमें विद्यमान है, परन्तु इसी में तरलत्व हो करके, पिण्डों का निर्माण होता रहता हैं।
यह संसार, एक पिण्ड में निहित रहता है, यह पिण्डाकार नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों गतियां कर रहे हैं।गृह स्वामी और गृह स्वामिनी, एक अपने गृह का निर्माण करते हैं, वह भी एक पिण्ड का निर्माण करते हैं, परन्त उसमें जो शिल्पकार है, वह पिण्डों का निर्माण करता है, और विधिवतपरमात्मा के ब्रह्माण्ड को ले करके ही, वह जगत का, साधारण पिण्ड का निर्माण करता है।
परन्तु परमात्मा ने तो शरीर रूपी पिण्ड का निर्माण किया, लोकलोकान्तरों का निर्माण किया है, तो इसी प्रकारयह जो पिण्डों का निर्माण

हो रहा हैं, यहगुरुत्व की महिमा है, और गुरुत्व को जानना चाहिए और यह गुरुत्व कहते है, जो तरलत्व, तेजोमयी परमाणुओं को अपने समीप ला करके और अपने गुरुत्व में प्रवेश करके, पिण्डों का निर्माण हो जाता है, जैसे एक शिल्पकार, अपनी पृथ्वी औरजल के गुरुत्व जल के परमाणुओं को ले करके, वह उन दोनो का मिश्रण बना करके, पिण्ड का निर्माण कर देता है, वह जोउन्होंने पिण्ड का निर्माण किया, उसके संकल्प में, गृह का निर्माण है। 14.07.1991

973 आत्मा का लोक

इसी प्रकार महर्षि जालवी ने कहा किहे ऋषिवर! आत्मा का जो लोक है, आत्मा का लोक, यह गृह, यह मानव का शरीर है। और यह सूक्ष्मता में नही, यह पिण्ड को जानने वाला साधक, जब गुरुत्व को जाने लेता है, सब पिण्डों को भलि भाँति जानता है, किस पिण्ड में कौनसा तत्व प्रधान है, और कौनसी तन्मात्राओं का मिलान हो रहा है।

तो ऋषि जालवी ने कहाजब वायु में, प्राणों को जानने लगता है और प्राण और अपान में अपान को व्यान में प्रवेश करना जानता है तो वायुमण्डल को जान लेता है। इस वायु में कोन सी सुगन्ध आ रही है, कौन सी गन्ध आ रही है, और कैसा वायुमण्डल चल रहा है, तो उसको जान करके कहता है, यह ब्रह्माण्ड दूषित हो गया है, प्रदूषण हो गया है और, इसी को जान करके वह परम साधक योग और विज्ञान की प्रतिभा में रमण करता है, इनको जानने वाला कोई योगेश्वर, कोई साधक बन करके अपनी आभा में प्रवेश होता रहता है, तो इस प्रकार जब साधक इन पंच महा अमृतों को जान करकेअमृता को प्राप्त होता है।

तो गति प्राण को कहते हैं और अन्तरिक्ष में जब रमण करने लगता है, तो साधक कुम्भक, रेचक करता हुआ, वह साधक वायुमण्डल में रमण कर जाता है, जैसे परमाणु अपने में रमण कर रहा है और अग्नि तेजोमयी की आभा में रत हो करके अन्तरिक्ष में रमण करता है, इसी प्रकार वह रमण करता रहता है, उसी में रत रह करके जैसे वैद्यराज अपनीनाना प्रकार की औषधियों के द्वारा निदान करने वाला, अपने जीवन का कृत, वह ऊँची से ऊँची उड़ान उड़ करके, वह उस औषध दे करके, विशुद्ध बना देता है। जालवी जी ने यह कहा कि पंच महाभूतों को जानने वाला, वहप्राण को अपान में, अपान को व्यान में, प्रवेश करता हुआ, वह अपने में अपनेपन कोदृष्टिपात करता रहता है।तो महाराज जालवी ने कहा कि यह आत्मा का लोक है। 14.07.1991

974 सूर्य अनुसन्धान शाला

उन्होंने कहा यह द्वितीय विज्ञानशाला है, आपो में ही जल के ऊपर अनुसन्धान हो रहा है, यह आपो ही तो जीवन है, आपो ही प्राणों का देने वाला है, इसके ऊपर वैज्ञानिक अपने में अनुसन्धान कर रहे है, उन्होंने कहाधन्य है, राजन्! तुम्हारा राष्ट्र बड़ा उन्नत है। उन्होंने कहाप्रभु! यह मेरे यहां सूर्य अनुसन्धानशाला है, यहां सूर्य के ऊपर अनुसन्धान और सूर्य की उर्ज्वा के साथ में यन्त्र भ्रमण कर रहे है।एक यन्त्र का यहां निर्माण हुआ है, जो सूर्य की किरणों से वह गमन करता रहता है, उसकी उर्ज्वा से, यहसूर्य की परिक्रमा कर रहा है।कोई यन्त्र पृथ्वी की परिक्रमा कर रहा है, कोई ध्रुव की परिक्रमा कर रहा है, यह नाना प्रकार के वैज्ञानिक यन्त्रों का निर्माण करके उनका वायु दे करके भ्रमण करा रहे हैं, उन्होंने कहाधन्य है। 15.10.1991

975 चन्द्र शाला

यह चन्द्र शाला है। यहां चन्द्रमा के ऊपर अनुसन्धान होता रहता है यह चन्द्रमा कितना सोम लेता है, समुद्रों से और सोम की कौन वृष्टि करता है। इसके ऊपर विचार-विनिमय करते रहते है, यन्त्रों का निर्माण करते रहते है, और चन्द्रमा में गति कैसे होती है? 15.10.1991

976 लोकों की यात्रा

वह नारान्तक के द्वार पर पहुंचे, यह मेरा पुत्र नारान्तक है, यह यन्त्रों में गमन करते रहते है, उन्होंने कहा कि तुम चन्द्र यात्री हो, उन्होंने कहामहाराज! कहीं भ्रमण कर आता हूं। उन्होंने कहा कितनी गति है, तुम्हारी जाने की? उन्होंने कहा कि मैं एक रात्रि और एक दिवस मेरे लिए पर्याप्त है। मैं चन्द्रमा में प्रवेश कर जाता हूं, चन्द्रमा में मेरा गमन हो जाता है। वहां के वैज्ञानिकों से भी वार्ता प्रगट करके चला आता हूं। उन्होंने कहा और तुम्हारी कितनी गति है? उन्होंने कहामेरे जो आचार्य है, वह महर्षि भारद्वाज रहे है, और भारद्वाज की विज्ञानशाला में, मैंने विज्ञान की शिक्षा को प्राप्त किया है, मैंने ऐसे यन्त्रों का निर्माण किया, एक यन्त्र में विद्यमान होता हुआ, यहां से जो यन्त्र उड़ान उड़ता है, तो यहां से उड़ान उड़ता है। तो सबसे प्रथम चन्द्रमा से उड़ान उड़ी, तो बुध में, और बुध से उड़ान उड़ी, तो शुक्र में और शुक्र से उड़ान उड़ी, तो मंगल में, और मंगल से उड़ान उड़ी, तो मृचिका मण्डल में, मृचिका मण्डल से उड़ान उड़ी, तो म्रेतकेतु मण्डल में, म्रेतकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो अरुंधति में अरुंधति मण्डल से उड़ान उड़ी, तो वशिष्ठ मण्डल में, और वशिष्ठ मण्डल से उड़ान उड़ी, तोस्वाति नक्षत्र में चला जाता हूं। और स्वाति नक्षत्र से उड़ान उड़ता हुआ, मूल नक्षत्र में चला जाता हूं, और मूल नक्षत्र से उड़ान हुआ, मैं मौन अवृति मण्डलों में प्रवेश कर जाता हूं। 15.10.1991

977 आयुर्वेदशाला

तो नारान्तक ने कहाभगवन! में बहत्तर लोकों का भ्रमण करके, मेरा यान, मेरी विज्ञानशाला में, पुनः प्रवेश कर जाता है। उन्होंने कहा धन्य है। वह अपने में मौन हो गए, राजा रावण ने कहा प्रभु! यह मेरे यहां विज्ञानशाला है, नाना प्रकार के अस्त्र शस्त्रों का निर्माण होता रहता है। यहां आग्नेयास्त्र और ब्रह्मास्त्रों का प्रायः निर्माण होता रहता है। यह विज्ञानशालाएं है, वहां से भ्रमण करते हुए, वह चिकित्साशाला में पहुंचे, जहांमहात्मा भुंजु के दोनों पुत्र, अश्विनी कुमार इसके ऊपर अन्वेषण करते, सुषेण भी उनके मध्य में विद्यमान थे।उनसे कहा कि तुम्हारी आयुर्वेद में कितनी गति है? उन्होंने कहा प्रभु! हम मानव के मस्तिष्क को, कण्ठ के ऊपरले भाग को भीदूरी कर देते है, उसे गति दे देते है, और मानव के हृदय को निकास करके, और शरीर से पृथक करके, औषधियों में दोनों को निहित कर देते है, और छह माह के पश्चात पुनः उसमें गति प्रदान कर देते है, इस प्रकार का हमारा यह चिकित्सालय है, चिकित्सालयों में और भी नाना प्रकार का अन्वेषण होता रहता है, कहीइस प्रकार की बूटियां है, जिनकोपान करके, मानवभिन्नभिन्न प्राणियों की भाषा को जानने लगते है, तो इस प्रकार जब उन्होंने दृष्टिपात कराया, तो ऋषि बड़े प्रसन्न हुए और प्रसन्न चित्त हो करके भ्रमण करके मार्गशालाओं के जो विशेषज्ञ थे, जहां मार्गो के निर्माण हो रहे थे, मार्गो में, ऊर्ध्वा में मार्ग थे।उन्होंने कहाप्रभु! यह मार्गशालाएं है, यहां मार्ग के विशेषज्ञ है, और यहां निर्माण होता रहता है। 15.10.1991

चरित्र शाला के अभाव में राष्ट्र पतन

लंका का भ्रमण करने के पश्चात, राजा रावण ने ऋषि के चरणों में ओत प्रोत हो करके, बोलेहे भगवन! प्रथम में यह जानना चाहता हूं, आपको मेरी लंका कैसी प्रतीत हुई? उन्होंने कहा रावण! तुम्हारा राष्ट्र तो बड़ा पवित्र है, तुम्हारा तो विकासवादी राष्ट्र है, राजन्! तुम्हें धन्य है, परन्तु सर्वत्र लंका को भ्रमण करने के पश्चात, मुझे ऐसा प्रतीत हुआ है, जैसे तुम्हारी लंका में अग्नि प्रदीप्त होने वाली है।जब ऋषि ने यह कहा, तो रावण ने नत मस्तिष्क हो करके कहा प्रभु! आपने ऐसा क्यों कहा? उन्होंने कहा मैंने इसलिए कहा है, तुमने मुझे ऊंचे-ऊंचे भवनों का दर्शन कराया है, स्वर्ण के भवनों का दर्शन कराया है, तुमने जल अनुसन्धान शाला, पृथ्वी अनुसन्धान, सूर्य अनुसन्धानशालाएं, चन्द्र अनुसन्धानशालाएं लोक लोकान्तरों में जाने वाले यन्त्र विद्यमान है, परन्तु नाना प्रकार की चिकितशालाएं है, और मार्गशालाएं है, हे रावण! तुमने मुझे सब कुछ दृष्टिपात कराया, परन्तु तुमने मुझे कोई चरित्रशाला का दर्शन नहीं कराया है, और जिस राजा के राष्ट्र में चरित्र नही होता, उस राजा का राष्ट्र, आज नही तो कल अवश्य, देखो अग्नि का काण्ड बन करके रहेगा, तो राजा रावण नतमस्तक हो गए और उन्होंने कहा प्रभु! वास्तव में विज्ञान में ही लगा रहा है, परन्तु चरित्र का वास्तव में अभाव है, तो उन्होंने कहाराजा रावण! तुम्हें यह प्रतीत है, जिस समय तुम्हारा राज्यभिषेक हुआ था, उस समय महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज ने मुझे सभापति बनाया और सभापति बना करके यह कहा कि तुम इसका राज्याभिषेक करो, मैंने तुम्हारे मस्तिष्क का अध्ययन किया और मस्तिष्क की अध्ययन करके यह कहा कहा था कि राष्ट्र को चरित्र नहीं दे सकेगा। 15.10.1991

978 विभिन्न लोकों में विशेष तत्व प्रधान प्राणी

कैसा अनूठा यह ब्रह्माण्ड है, जैसे यह पृथ्वी मण्डल है, इस पर पार्थिव तत्व प्रधान है, तो जैसे हमारे यहां अरूण्धति मण्डल है, वहा भी जल तत्व प्रधान है, वशिष्ठ मण्डल में भी पृथ्वी तत्व प्रधान माना गया है, औरजैसे हमारे यहां यह सूर्य मण्डलहै, सूर्य में अग्नि तत्व प्रधान प्राणी रहते हैं, और यह मंगल प्राणी में, पृथ्वी तत्व प्राणी रहते हैं, कहींवायु तत्व प्राणी गमन करते रहते हैं।

याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहादेवी! यह दो प्रकार की सृष्टि हैं, और तृतीय सृष्टि का नाम जंगम कहलाता है, जंगम सृष्टि में, यह मानव प्राणी भी आता है। नाना प्राणियों का व्यवधान होता रहता है, जैसे गऊ हैं और भी नाना प्रकार की जातीयता मानी जाती हैं, जैसे मानव जाति है, वह भी जंगम से जन्म लेने वाली है, और भी नाना प्रकार की जातियों का इसमें निहित रहते हैं, उसके पश्चात समुद्रों में, नगरों के नगर, प्राणियों के विद्यमान रहते हैं, जिसमें जल तत्व प्रधानता प्राणी रहते हैं, नगर के नगर विद्यमान हैं, जिसके ऊपर मानव विचार-विनिमय करता रहता है, वह स्वेदज सृष्टि कहलाती है।उसको हमारे यहां उदभिज भी कहते हैं, जो हमारे यहांएक जल है, और एक उष्णता का, जहां मिलान हुआ, वहीं प्राणियों का जन्म होना प्रारम्भ हो जाता है। तो जहांजंगम सृष्टि में अवान्तर भेद माने गए हैं, यहजंगम सृष्टि चन्द्र मण्डल में भी पाई जाती है, यह मंगल में भी पाई जाती है, यह शुक्र और बुध में प्राप्त होती रही है, लोक लोकान्तरों में सृष्टि का व्यवधान होता रहा है।तो ऋषि ने यह कहा किहे देवी!, हे चाक्राणी! ! तुम जान गई होगी, ब्रह्म विचारक सब जानते हैं, कि यह चारों प्रकार की जो सृष्टि है, यह अपने में अपनेपन में दृष्टिपात आती रहती है। तो इनकी प्रतिष्ठा में तुम जाना चाहती हो, इनकी जो प्रतिष्ठा है, वह प्रतिष्ठित होने वाला जगत है, इसकी प्रतिष्ठा, इस पृथ्वी में ओत प्रोत हो जाती है।

ये चारों प्रकार की जो सृष्टियां है, इनकी जो प्रतिष्ठा है, यह पृथ्वी में ओतप्रोत हो जाती है, और पृथ्वी इसमें यह अपने में निगल जाती है,

और पृथ्वी से ही इसका उद्धबुध हुआ करता है, तो जब यह वाक् चाक्राणी ने श्रवण किया, उत्तर प्राप्त हो गया, वह अपने में शान्त हो गई, उन्होंने कहादेव! यह वाक् तो मेरे विचार में आ गया है, परन्तु मैं यह और जानना चाहती हूँ, कि यह जो गुरुत्व है, पृथ्वी का जो गुण है, वह पृथ्वी कहां प्रतिष्ठित होती है? उन्होंने कहा यह जो पृथ्वी है, यह अपने में ही प्रतिष्ठित होती है, यह जल में प्रतिष्ठित हो जाती है, इसीलिए जल अमृत कहलाता है, बिना जल के, पृथ्वी अपने में अपंग कहलाती है, जब वृष्टि प्रारम्भ होती है, तो यह पृथ्वी नाना प्रकार के व्यंजनों वाली बन जाती है। और नाना प्रकार के व्यंजनों वाली बन करके, नाना प्रकार का खाद्यान्न, यह चारों प्रकार की सृष्टि का व्यवधान बन जाता हैं, यह अपने में, अपने पन में निहित हो जाती है, अपनेपन में ही दृष्टिपात आने लगती है। यह आपो ही तो जल है, जब मैं अपनी माता के द्वार पर जाता हूँ, और माता से यह प्रश्न करता हूँहे माता! तेरे गर्भस्थल में जब हम विद्यमान थे, तो हमारा ओढ़न क्या था? हमारा बिछौना क्या था? और हमारे पांशे क्या बने हुए थे? तो माता इसका उत्तर नही दे पाती, परन्तुजब माता के गर्भस्थल में, यह जंगम सृष्टि होती है, तो उसी समय जल ही इसका आसन होता है, और जल ही ओढ़न होता है और जल ही पांशे बने हुए होते है। वाह रे मेरे देव! तू कितना महान है, कितना रचयिता है, और वह रचनाकार, रचना कर रहा है और देवताजन उसकी प्रतिष्ठ को प्रतिष्ठित कर रहे हैं। चन्द्रमा अमृत देता रहता है, सूर्य प्रकाश देता है, और अग्नि उष्ण बनाती है, और वह पृथ्वी गुरुत्व देती है, और आपोमयी में ओतप्रोत हो करके और वह देवत्व वायु को प्राण दे रहा है, अन्तरिक्ष अवकाश दे रहा है।

यह प्रभु ने कैसा, अनुपम माता के गर्भस्थल में शिशु का निर्माण किया है। तो निर्माणवेता प्रभु है, मेरी भोली माता नही जानती, कौन निर्माण करने वाला है, जब सृष्टि के रचयिता ने, मानव शरीर का रचनाकार ने रचना की, तोबहत्तर करोड़, बहत्तर लाख, दस हजार दो सौ नाड़ियों का निर्माण किया। कहीं बुद्धि में, मन के विचारों का जन्म दिया है, मन और बुद्धि है।बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा, प्रज्ञा कहलाती है।और चित्त मण्डल में जब प्रवेश हो जाते हैं, या आन्तरिक जगत बन जाता है, जहां आत्मा के प्रकाश में मन प्रकाशित होता रहता है।तो यह कैसा अनुपम जगत है, तो माता के गर्भस्थल में, कहीं हृदय का निर्माण हो रहा है, कहीं ईंगला, पिंगला, सुषुम्णा का निर्माण हो करके, ब्रह्मरन्ध्र कोरसावादन दिया जा रहा है। 31.10.1991

979 तीन प्रकार के परमाणुओं से वैज्ञानिक

तीन प्रकार के परमाणुओं को जान करके, विज्ञानवेता बनना चाहता है, विज्ञानवेता वही बनता है। जो तीन प्रकार के परमाणुओं को जानने में लगा हुआ है, तेजोमयी तरलत्व और गुरुत्व ये तीन प्रकार के परमाणु हैं, जिसकी आभा में, जिसमें विज्ञान निहित हो रहा है। चाहे वहपृथ्वी मण्डल का विज्ञानवेता हो, चाहे वह मंगल मण्डल का विज्ञान हो, चाहे ओर भी नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों का विज्ञान क्यों ने हो, परन्तु वह विज्ञान केवल त्रिवर्धा में निहित रहने वाला है। गुरुत्व, तरलत्व और तेजोमयी यह अपने में अभ्योदय हो रहा है, जिससे मानव विज्ञानवेता कहलाता है, और वह नाना प्रकार की उड़ाने उड़ता रहता है।

अन्तरिक्ष में ऐसी-ऐसी स्थलियां हैं, जहां विज्ञानवेता अपने यन्त्रों में विद्यमान हो करके, वह यन्त्र स्थिर कर दिए और नाना प्रकार के लोकों की सीमाओं को वह प्रायः दृष्टिपात करते रहे हैं। 02.11.1991।

980 सूक्ष्म शरीर

हमारा वेद क्या कहता है? वेद त्रिवर्धा को उदगीत गा रहा है, वेद में तीन प्रकार की विभक्तियों में यह संसार रत रहा है, तीन ही प्रकार के शरीर होते हैं, आत्मा जब इस संसार में आता है, किसी भी काल में आया, तो परमपिता परमात्मा ने तीन प्रकार के शरीर दिए, सबसे प्रथम स्थूल, सूक्ष्म और कारण या स्थूल ये तीन प्रकार के शरीर, आत्मा के माने जाते हैं, सबसे प्रथम कारण है, जहां ज्ञान और प्रयत्न दोनों रहते हैं।

उसके पश्चात सूक्ष्म है, जहांदस प्राण हैं, पंच तन्मात्राएं हैं, और जहां प्रकृति की वासनाएं हैं, और मन, बुद्धि यह सत्रह आभाओं का निर्मित होने वाला, सूक्ष्म शरीर कहलाता है। 02.11.1991।

981 स्थूल शरीर

चौबीस का स्थूल कहलाता है, इसमें दस प्राण है, दस ज्ञानेन्द्रियां हैं, ज्ञानेन्द्रियां और कर्मेन्द्रियां दस ही कहलाती हैं। परन्तु मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार यह चतुष अन्तःकरण कहलाता है। 02.11.1991।

982 अंतरात्मा से प्रेरणा

तो परमपिता परमात्मा ने जब सृष्टि का सृजन किया, तो ये तीन प्रकार का जगत, मेरे देव ने निर्माणित किया है, ओर वह दो प्रकार का जगत, एक जगत बाह्य जगत है, जिसे सांसारिक जगत कहते हैं, और एक आन्तरिक जगत माना गया है, जो अन्तरात्मा से, नाना प्रकार की प्रेरणाओं का जन्म होता रहता है, और उससे प्रेरित हो करके, अपने में रत रहता है, यह प्रेरणा को पाता रहता है। 02.11.1991।

983 याग का स्वरूप

तो जब यागिक पुरूषों ने, यह विचारा कि यह याग क्या है? तो इसके ऊपर उन्होंने आन्तरिक और बाह्य जगत दोनों का समन्वय किया। उन्होंने ज्ञान और विज्ञान को ही, अपने में समावेश किया, उसके पश्चात याग की, कर्मकाण्ड की पद्धतियों का निर्माण किया, जिससे वह पद्धति एक साकार बन करके, मानव के जीवन को शिक्षा प्रद बना देती है। तोइसी प्रकार हमारे यहां दोनों प्रकार के जगत को मानव को जानना चाहिए यदि मानव यह चाहता है कि मैं इस संसार सागर से पार हो जाऊं या मैं अपने में ज्ञान ओर विज्ञान में रत हो जाऊं तो वह दोनों प्रकार के ज्ञान ओर विज्ञान को वह जानने के लिए वह तत्पर हो जाये ओर यह तीनों प्रकार का जो शरीर है आत्मा का यह आन्तरिक या बाह्य जगत सर्वत्रता को जानना चाहिए। जब मानव तपस्या में परिणत होता है तो तप करने के पश्चात वह अपनी आभा में रत होता है ओर तपश्चर हो करके किसी शब्द को वह निर्धारित करता है इसे यौगिक शब्द कहते हैं वह अकाटय बन जाता है जिस पर कोई मानव टिप्पणी नही कर सकता। हमारे यहां दो प्रकार के यागों के परम्परा मानी जाती है। एक आध्यात्मिक याग है, तो दूसरा भौतिक विज्ञान और भौतिक याग के नामों से वर्णन किया गया है। 02.11.1991।

तो जब ऋषि मौन होने लगे, तो राजा जनक ने कहाहे प्रभु! आप तो राजाओं की भी धिराज हैं, क्योंकि ऋषि है, और ऋषि राजाओं के भी राजा होते हैं। हे प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं, जब यह तारा मण्डल नही होता, तो कौन प्रकाश को द्यौतक है? उन्होंने कहा जब यह तारा मण्डल नही होता, तो हे राजन! हम अग्नि के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं, जो अग्नि काष्ठ में रमण करने वाली है।

हमारे वैदिक आचार्यों ने चार प्रकार की अग्नि का व्यवधान किया है, सबसे प्रथम अग्नि का नाम गार्हपथ्य है दूसरी गृहपथ्य है, तीसरी वैश्वानर और चतुर्थ आह्वनीय। ये चार प्रकार की अग्नियों का व्यवधान किया है, जिसमें गार्हपथ्य नाम की अग्नि में ब्रह्मचारी तपता है गृहपथ्य नाम की अग्नि में मातापिता, पतिपत्नी तपा करते हैं, और वैश्वानर नाम की अग्नि में वानप्रस्थ तपते है, और महापुरूष आह्वनीय नाम की अग्नि मेंतपा करते हैं। 16.12.1991

984 अरबों खरबों प्रकार की अग्नि

तो यही अग्नि, जब इसके ऊपर ओर विचार-विनिमय होता है, तो आयुर्वेदाचार्यों ने पिचासी प्रकार की अग्नि का व्यवधान किया है, जब पिचासी प्रकार की अग्नियों को स्वीकार किया गया, तो यही अग्नि जब वैज्ञानिकों के कुल में पहुची, तो वैज्ञानिकों ने अरबों खरबों प्रकार की अग्नि का चयन किया है।वही अग्नि है, जो शब्द को, द्यौ में प्रवेश करा देती हैं, यही अग्नि है, जो अणु और परमाणु को भ्रमण करा देती है। यही अग्नि है, जब परमाणु का विभाजन होता है, तो उसमें एक-एक सृष्टि दृष्टिपात होने लगती है। 16.12.1991

985 शब्द की गति

यह प्रभु का विज्ञान बड़ा अनन्तमयी माना गया है, वेद का ऋषि, वेद का मन्त्र कहता है, कि हम अग्नि को जानने वाले बनें, यह अग्नि, जब आयुर्वेदाचार्यों ने इसके ऊपर जब विचार-विनिमय करते हैं तो पिचासी प्रकार की है और जब वैज्ञानिक इसके ऊपर अनुसन्धान करते हैं, तो यह अरबोंखरबों प्रकार की हैं, यही है, जो शब्द को दूरी पंहुचा देती है। एक क्षण समय में यही अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, शब्दचार वृतियों में, यह पृथ्वी का भ्रमण कर लेता है। यह ब्रह्माण्ड का व्यापक स्वरूप धारण कर लेता है।

हे प्रभु! यही अग्नि ब्रह्माग्नि बन करके रहती है, जिसमें ब्रह्म का ब्रह्मवेता अपने में बखान करते हैं, जब इस प्रकार ऋषि ने वर्णन किया तो राजा ने कहा हे प्रभु! आप तो अनन्तमयी हैं, भगवन! मैं जानना चाहता हूँ, जब यह अग्नि नही होती, तो कौनसा प्रकाश का द्यौतक है? उन्होंने कहा हे राजन! जब यह अग्नि नही होती, तो हम शब्द के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं, एक मार्ग में चला जा रहा ह, अन्धकार छाया हुआ है, परन्तु अन्धकार नष्ट हो रहा है, और जब वह भयंकर वन में चला जाता है, तो वह कहता, है, कोई मार्ग चेताने वाला, उस समय द्वितीय जो मार्ग पर, जो मानव है, वह कहता है, आ जाओ, मैं मार्ग में हूँ, तो उस शब्द के प्रकाश से, अपने पथ को वह ग्रहण कर लेता है। वह पथपदर्शक बन जाता है। तो उसके शब्द के प्रकाश से, यही शब्द है, जो जब ऋषिमुनि शान्त मुद्रा में रात्रि के काल में प्रभु का ध्यानावस्थित करते हैं। 16.12.1991

986 अनहद ध्वनि से परमात्मा के सूक्ष्म जगत का बोध

तो परमाणुओं का संघर्ष होता रहता है, वही रात्रि के काल में परमाणुओं के संघर्ष को, वह अपने में ग्रहण करते रहते हैं, वही जब अग्रणीय बनते हैं, तो वह लघु मस्तिष्क में, अपने को ले जाते हैं, वहां एक अनहाद नाम की ध्वनि होती रहती है, जो अनहद नाम की ध्वनि में, जो साधक रत हो जाता है, वह परमात्मा के सूक्ष्म जगत में प्रवेश हो जाता है। तो इसी प्रकार साधक अपनी साधना कर रहा है, पाण्डितव उन शब्दों के कारण, वेदमन्त्रों का उदगीत गाता रहता है, वेदमन्त्रों के ऊपर उदगीत की मीमांसा करता रहता है, और अपने में विचार करता हुआ, वह पाण्डितव बन जाता है।उन्हीं शब्दों के कारण, पाण्डितव कहलाता है। वही शब्द ध्वनि है, जो अन्तरिक्ष में भ्रमण कर रही है,

वही ध्वनि है, जो अग्नि को अपने में धारण करती रहती है।जब ध्वनि आती रहती है, एक परमाणु की जब ध्वनि आती है, तो ऋषिजन, वैज्ञानिक हो करके, उसका विभाजन करते हैं। तो एक-एक परमाणु में से, एकएक सृष्टि का जन्म हो जाता है।

तो महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि बोले हे राजन! जब हम शब्द के प्रकाश से प्रकाशमान होते है, ध्वनि पर ध्वनि आ रही है, ध्वनियों को श्रवण कर रहे हैं, उन ध्वनि में अपनी ध्वनि में प्रवेश कर जाते हैं, वही ध्वनि मानव अपने में धारयामि बन जाता है, ध्वनि से ही मानव मानव के आकार को जानने लगता है, ध्वनि के कारण ही शब्द से अपने प्रिय में रत हो जाता है।

तो ऋषि ने कहा हे राजन! यह शब्द ही हमारे प्रकाश का द्यौतक है, इन प्रकाश के कारण ही, हम प्रकाशमान होते रहते हैं ओर वेदमन्त्रों की ध्वनि से गान गाते हैं, कि इस जगत में कहीं जटा पाठ में गाते हैं, कहीं धन पाठ में गाते हैं, कहीं उदात अनुदात में गान गाते हैं, परन्तु वह ध्वनि पर ध्वनि आ रही है, मानव उसके पाण्डितव को अपने में ग्रहण कर रहा है, जब ऋषि नेइस प्रकार वर्णन किया, तो उन्होंने कहा प्रभु! यह शब्द नही होता, तो कौन प्रकाश का द्यौतक होता? 16.12.1991

987 आत्मा का प्रकाश

जब राजा ने इस प्रकार प्रश्न किया, तो ऋषि ने कहा राजन्! तुम प्रश्न करते चले जा रहे हो, परन्तु यह प्रिय नही हैं, मैं तुम्हें अब निर्णय देता हूँ, कि जब यह प्रकाश नही, शब्द का प्रकाश नही होता, तो हम आत्मा के प्रकाश से प्रकाशमान हो जाते हैं, यह आत्मा इस प्रकाश का द्यौतक है, आत्मा के प्रकाश से हम प्रकाशमान होते हैं, आत्मा ही हमारे जीवन का अवृत कहलाया जाता है। जब यह आत्मा इस शरीर से निकस जाता है, अरे उस समय सूर्य भी अपना प्रकाश दे रहा है, मानव के नेत्रों के भी गोलक ज्यों के त्यों बने हुए हैं, परन्तु शरीर में एक आत्मा नही हैं, अरे मानव क्यों नही जागरूक हो जाते, क्योंकि आत्मा इसी प्रकाश का द्यौतक है।चन्द्रमा अमृत दे रहा है, कान्तियां दे रहा हैं, एक आत्मा इस शरीर में नही है, तो चन्द्रमा कान्ति से शून्य हो गया है, लोकलोकान्तरों की माला बनी हुई है, आकाश गंगा की माला बनी हुई और उन अवन्तिकाओं की माला बनी हुई है, निहारिकाओं की माला बनी। 16.12.1991

988 विज्ञानवेत्ता

कहीं खाद्य गमन कर रहा है, तो कही खनिज गमन कर रहा है, उसी से अन्नाद से अन्नवान प्राणी हो जाता है, तो अन्न के उपयोग को जानता है, अन्न कोकृषि से, वसुन्धरा से लेना जानता है। परन्तु विज्ञानवेत्ता जब खनिज के ऊपर गमन करता है, तो विज्ञानवेता बन जाता है। हे माता! तेरे ही गर्भस्थल में आ करके, तो विज्ञानवेत्ता बनते हैं। परन्तु विज्ञानवेत्ता, तो जैसे पृथ्वी मण्डल पर है, ऐसे मंगल मण्डल में भी है, बुघ में भी है, शुक्र में भी है, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में विज्ञान है, ज्ञान है, विवेक है, सर्वत्रता में विद्यमान है।परन्तु, वह कहीं भी होपृथ्वी के कणो से ही उनके विज्ञान का प्रारम्भ होता है। हे मातेश्वरी! तेरे गर्भस्थल में पृथ्वी मण्डल से भी, जितना विज्ञानवेत्ता है, वह सब तेरे सबसे प्रथम गुरुत्व के ऊपर अध्ययन करना प्रारम्भ करता है और वह तेरे गुरुत्व को जानता हुआ उसमें से खाद्य और खनिज पदार्थों को जानने लगता है, विज्ञानवेत्ता, जो इस पृथ्वी के गर्भ में वसुन्धरा बना करके, जब प्रवेश करता है विज्ञानवेत्ता, तो इसके गर्भस्थल में कहीं खाद्य तप रहा है, कही खनिज तप रहा है, कहीं जल को शक्तिशाली बनाया जा रहा है, कहीं रत्नों की धातु का निर्माण हो रहा है, कहीं रत्नों का निर्माण हो रहा है। वाह रे मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानवेत्ता, हे माता वसुन्धरा! तेरे गर्भस्थल में यह संसार वशीभूत हो रहा है। जब वैज्ञानिक जन इसके गर्भ में प्रवेश हो जाते हैं, कहीं अहिल्या के रुप में वर्णन किया है, कहीं तुझे वेद पृथा कहता है, कही, वसुन्धरा, कहीं कामधेनु कहता है, तू कई प्रकार से, नाना प्रकार के व्यंजनों को जन्म देने वाली है, और तेरा समन्वय हूत से ले करके और देवत्व, तेरी आभा विद्यमान रहती है।ये मेघ मण्डल भी तेरे ही आश्रित हो करके, तेरे ही ऊपर वृष्टि को प्रारम्भ करते हैं, क्योंकि तू पिपासा में परिणत होती है, जब तुझे पिपासा होती है। 23.01.1990

989 लोक लोकान्तरों की यात्रा

जो लोकलोकान्तरों की यात्रा करने वाला हो, और अपने पिता का रचाया हुआ जो ब्रह्माण्ड है, उस ब्रह्माण्ड के ऊपर वह मनन और चिन्तन करता है। वास्तव में वह पुत्र कहलाता है, जो अपने पिता कीनाना प्रकार की, यह ब्रह्माण्ड रुपी जो धरोहर है, इसके ऊपर जो मनन करता रहता है, कहीं लोक में पृथ्वी में हैं, कहीं वह मंगल की यात्रा करने लगता है, कहीं वह बुध में प्रवेश हो जाता है। वह प्रत्येक लोकलोकान्तरों को, वह अपना खिलवाड़ बनाने लगता है। वाह रे मेरे प्रभु! वह पुत्र कहलाता है। 03.03.1990

990 याग से शुद्धिकरण

मेरे प्यारे प्रभु का कैसा अनूठा यह जगत है, जैसे जल में रहने वालीउदभिज सृष्टि हैं, और उदभिज सृष्टि में जैसे मछली इत्यादि योनियाँ हैं, जो जल को विषैलेपन को धारण करते रहते हैं, और उसका शुद्धिकरण करते रहते हैं।तो शुद्धिकरण करने का नाम ही याग माना गय है। 26.02.1992

991 सार्वभौम याग

वैदिक आचार्यों ने कहा यज्ञोमयी विष्णु, हमारे वैदिक साहित्य में नाना प्रकार के यागों का व्यवधान होता रहा है, अथवा निर्णय होता रहा है। जैसे याज्ञवल्यक मुनि महाराज ने अपनी एकान्त स्थलियों में विद्यमान हो करके नाना प्रकार के यागों का वर्णन किया है, हमारे यहाँ जैसे यह चारों प्रकार की, जो सृष्टियों के द्वारा याग हो रहा है, वह सार्वभौम याग कहलाता है। चाहे वहइस पृथ्वी मण्डल पर हो, चाहे वह चन्द्र मण्डल में हो, चाहे वह सूर्य मण्डल में क्यों न हो, चाहे वह मंगल मेंक्यों न हो, जहाँ पृथ्वी जल प्रधानता में रहते हैं, वहीं वनस्पतियों का व्यवधान हो रहा है, और वनस्पतियों मेंचार प्रकार के गुण माने जाते हैं।सबसे प्रथममधुपन होता है, मधु और स्विष्ट रोगनाशक और सुगन्धित, ये चार प्रकार के पदार्थों के द्वारा, भव्य जगत में याग हो रहा है।परमपिता परमात्मा का यह जो अनूठा जगत है, यह बड़ा भव्यता में परिणत हो रहा है।

हमारे आचार्यों ने एकान्त स्थलियों पर विद्यमान हो करके, उन्होंने आध्यात्मिक और भौतिकवाद दोनों में याग किया है, मेरी प्यारी माता जब प्राणों को जानने लगती है, जब प्राणों का शोधन करती है, तो प्राण और अपान को मिलान करती है, और अपान को समान और व्यान में प्रवेश करा देती है, और उदान की पुट लगा करके, अपने गर्भस्थल में आत्मा को दृष्टिपात करने लगती है। वह भव्य भौतिक याग कर रही है, अपने गर्भस्थल को ऊँचा बनाना, उनमें भव्य विचार देना, यह भी एक याग है, एक स्थली परदार्शनिक विद्यमान है, वह दर्शनों की चर्चा कर रहे हैं, वायुमण्डल को अपनी वाणी का शोधन कर रहे हैं, और वायुमण्डल से ही, वायु का शोधन होता है, तो वह याग हो रहा है। 26.02.1992

992 आत्मा से शरीर में चेतना

एक मानव के शरीर में आत्मा विद्यमान होता है, और वह आत्मा जब तक शरीर में रहता है, शरीर चेतनित बना रहता है, जब तक शरीर में रहता है, जब तक बुद्धिमान बना हुआ है, जब तक शरीर में विद्यमान है, तब तक वह नाना प्रकार का अनुसन्धान कर रहा है, जब तक आत्मा इस शरीर में विद्यमान हैं, तभी तक संसार का विज्ञानवेता बन जाता है, जब तक आत्मा विद्यमान है, जब तक यौगिक क्षेत्र में जा करके, सूर्य की किरणों के साथ, वहसूर्य का यात्री बन जाता है, चन्द्रमा का यात्री बन जाता है, और सूर्य के साथ में वह परिक्रमा बद्ध हो करके, परिवर्तन हो जाता है।परन्तुजब तक यह आत्मा शरीर में विद्यमान है, वह पिता कहलाता है, वह पति बन जाता है, वही आचार्य बन करके, ब्रह्मचारी को शिक्षा देता है, और जब तक आत्मा, वही ब्रह्मचारी, आचार्य के चरणों में विद्यमान हैं, आत्मा यह अमृता कहलाता है, यह आत्मा ही तो अमृता है, जिसके लिए मानव प्रयास करता रहता है।

तो अमृता को जाना है, जो ब्रह्म आत्मा होती है, वही तो अमृत है, उसी को पान करना है, उसके प्रति हमें इस शरीर का वह आत्मा है। वह बाल्य ब्रह्मचारियों का आत्मा है, वह माता ही तो आत्मा है।जब माता को अग्नि में दाह कर दिया जाता है, कुछ समय के पश्चात माता स्मरण नही आता।तो आत्मा जब तक विद्यमान है, वह माता है, वही पितर है, और वही आचार्य के रूप में विद्यमान, हमें दृष्टिपात आता है, वही ब्रह्मचारी के रूप में है। तोइस प्रकार जो इसे जानता है, तो यह स्वाहाः कहलाता है, उसका नाम स्वाहाः है। जिसके न रहने से, मृतक है, शून्य है, अन्धकार है, और जिसके रहने से सर्वत्र चहुंमुखी बना हुआ है, वह कहीं वैज्ञानिक बना हुआ है, अन्तरिक्ष की यात्रा कर रहा है। 11.04.1991।

993 स्वाहा से वाणी की पवित्रता

महर्षि तत्व मुनि महाराज, ब्रह्मचारी श्वेताश्वेतर और ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु, यज्ञदत चारों ब्रह्मचारियों ने यज्ञ, विज्ञानशाला में विद्यमान हो करके, जब वह यन्त्र में रमण करने लगे, तो यन्त्र जब यहाँ से गमन किया, अपने विद्यालय से, तत्व मुनि के यहाँ से, तो वह चन्द्रमा में प्रवेश कर गया, चन्द्रमा से उड़ान उड़ता है, तो बुध में चला गया, और बुध से उड़ान उड़ी, तो वह मंगल में प्रवेश कर गया और मंगल से उड़ाने उड़ी, तो वह स्वाति नक्षत्र में चला गया, जब वहाँ से डड़ान उड़ता है, तो कृतिका नक्षत्र में प्रवेश हो गया और जब कृतिका नक्षत्र से उड़ान उड़ता है, तो वही राहिणीकेतु मण्डल में प्रवेश हो गया, और जब वहाँ से उड़ान उड़ता है, तो वह मूल नक्षत्र में प्रवेश कर गया और मूल नक्षत्र से उड़ान उड़ता है, तो वह अरूण्धति मण्डल में चला गया, अरूण्धति मण्डल से उड़ान उड़ता है, तो वशिष्ठ में चला गया, तो जब यह वशिष्ठ मण्डल से अपने मार्ग को गमन कर रहे थे, तो यह यह वशिष्ठ मण्डल में इन्होनें अपने यान को वहाँ विश्राम कराया और वहाँ के प्राणियों से वार्त्ता प्रगट की और प्राणी-प्राणी उदगीत गा रहे थे, स्वाहा। तो उन्होंने कहा यह तुम क्या उदगीत गा रहे हो। उन्होंने कहाहम याग की, अपनी वाणी को पवित्र बना रहे हैं। क्योंकि वाणी जब भी पवित्र बनेगी तो स्वाहा शब्दों से ऊँची बनेगी, स्वाहाः शब्दों से वाणी में तेज और ओज की उत्पत्ति आएगी, इसीलिए परमात्मा की उस ध्वनि में हम ध्वनित हो रहे हैं, जिस ध्वनि में ध्वनित हो करके, हमारा अन्तरात्मा पवित्रता को प्राप्त हो जाता है। यह आत्मा की आत्मा है, स्वाहा।यज्ञ में जाओं, तो यज्ञ की आत्मा है स्वाहा, यही स्वाहा

शरीर में जाएगी, तो यह आत्मा रूप बन करके, यह स्वाहाः ही आत्मा कहलाता है। यदि राष्ट्र में चले जाओ, तो राष्ट्र में, राष्ट्र का चरित्र ही स्वाहाः कहलाता है और चरित्र यदि स्वाहा बन करके रहेगा और यदि स्वाहाः चला जाता है राष्ट्र से तो राष्ट्र का सार चला जाता है। 11.04.1991।

994 राष्ट्र का प्राण

वह विज्ञान ही राष्ट्र का प्राण कहा जाता है, वही राष्ट्र का द्रव्य कहा जाता है, इस प्रकार द्रव्य का स्वामी तो यह पृथ्वी मानी गई है, द्रव्य का स्वामी तो राजा के राष्ट्र में कृषक समाज होता है, और यह राष्ट्र अध्वर्यु के रूप में नही माना गया है। 09.03.1992

995 राष्ट्र का प्राण यातायात

राष्ट्र का जो प्राण है राष्ट्र की जो प्रतिभा है वह, ऊर्ध्वा में राष्ट्र में विज्ञान की गति होनी चाहिए जब राजा के राष्ट्र में पृथ्वी मण्डल से ले करके और अरूण्धति मण्डल तक और ध्रुव मण्डल तक एक प्रकार का तारतम्य लग जाएगा और इतना निकटवाद आ जाएगा, एक चन्द्र और एक मंगल मण्डल का प्राणी है। उसका पृथ्वी के प्राणियों से मिलन हो जाए और, मंगल के वैज्ञानिक जब शुक्र में चला जाता है, तो उसमें परिणत हो जाए तो उसका नाम प्राण माना गया है, यह राष्ट्र का प्राण है, जो तुम्हारा यातायात ऊर्ध्वा में गति हो जाए। 09.03.1992 तो यह विज्ञान अपने में पूर्णता को प्राप्त होता रहा है, मैं यहाँ शिकामकेतु उद्दालक की नही, जब मैं महर्षि भारद्वाज मुनि की चर्चाएं या तत्व मुनि की चर्चाएं स्मरण आती रहती हैं, तो उनका नृत स्मरण आता रहता है। तो वे लोकों की यात्रा करने में सफलता को प्राप्त होते रहे हैं, तो लोकलोकान्तरों में जाना यातायात बनाना। 12.03.1992

996 महाराजा रघु की याग दृष्टि

तोराजा रघु का वह याग प्रारम्भ हो रहा था, राजा रघु के याग में, वह बारम्बार मुझे उसका प्रतीत होता रहता है, जैसे हम उस याग में विद्यमान हों, औरपरमात्मा दृष्टा बना हुआ है, और परमात्मा की वाणी का हम बखान कर रहे हैं, ऐसा हमें प्रतीत होता रहता है जब राजा रघु का याग छह माह तक प्रारम्भ रहा और परमाणु याग उन्होंने किया और सर्वांग याग उन्होंने किया, जितना उनके द्वारा द्रव्य था, अथवा गृह में स्वर्ण था, वह सबद्रव्य उन्होंने याग में परिणत कर दिया। तो जब वह याग सम्पन्न होने लगा, सम्पन्न होने के पश्चात राजा अपने राष्ट्र के गो इत्यादियों को, वह दान देने लगे, दक्षिणा उन्होंने दी। तो दक्षिणा ऋषि ने स्वीकार नही की, ऋषियों ने कहाहे प्रभु! मुझे तो वह दक्षिणा चाहिए, जो दक्षिणा हमें स्वीकार करनी है, राजा से यही कहा कि तुम्हारा राष्ट्र पवित्र होना चाहिए तुम्हारे राष्ट्र में महानता का जन्म होना चाहिए।

राजा रघस्वयं कृषि कला करते थे, वह कृषि कला कौशल करके, उस अन्न को पान करते थे, जिससे पवित्र हो जाए क्योंकि राजा के यहाँ प्रजा के वैभव को जब राजा अपने उपयोग में लाने लगता है, तो जानों कि उसराजा की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, और राष्ट्र की जो परम्परा है, वह नष्ट हो जाती है। इसीलिए हमारे यहाँ यह माना गया है, कि राजा स्वयं कला कौशल करके, अपने राष्ट्र का पालन करें, परन्तु ऋषिमुनि उस अन्न को ग्रहण नही करते थे, जो राजाओं के यहाँ अन्न होता। 13.03.1992

997 महाराजा अश्वपति का याग

जब महाराज अश्वपति के यहाँ, एक समय हमने यह विचार बनाया कि चलो, पूज्यपाद गुरुदेव के समीप हम चलते हैं, और महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में भ्रमण करेंगे, तो महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में, जब पंहुचे, तो महाराज ने ऋषि का स्वागत किया और स्वागत करने के पश्चात, उन्होंने कुछ अन्न इत्यादि को लाने का प्रयास किया, तो ऋषियों ने कहा कि नही, भगवन! हम तुम्हारे अन्न को ग्रहण नही करेंगे, उन्होंने कहा भगवन! क्यों नही करोगे? क्योंकि राष्ट्र का जो अन्न है, और राष्ट्र को जो अन्न होता है, वह दूषित है, वह रजोगुण, तमोगुण से सना हुआ होता है, और रजोगुण, तमोगुण से सने हुए, अन्न को पान करने से, हम हमारा ऋषित्व समाप्त हो जाता है और अपनी बुद्धि को अमृतमयी लाना चाहते हैं। तो महाराजा अश्वपति उनकी देवी ने नतमस्तिष्क हो करके यह कहाप्रभु! हमारा जो अन्न है, वह हम स्वयं कला कौशल करते हैं, और उसके बदले जो अन्न आता है, उसको हम पान करते हैं, प्रभु! वही हम अतिथि को देते है, और आप हमारे अतिथि हैं। 13.03.1992

998 प्राण प्रबंधन

अरबो-खरबों परमाणुओं को लाता है, अरबों-खरबों परमाणुओं को, आन्तरिक जगत से, बाह्य जगत में प्रवेश करा देता है। इतना विलक्षण प्राण, अपान उसको अपने में समन्वय करता है और व्यान उसका निरीक्षण करता है, और समान सर्वत्रता में रमण करता है और उदान उदगीत गाता रहता है। तो इस प्रकार तुम अपने में याग करो कहो, कि प्राणाय स्वाहाः अपानाय स्वाहाः जब यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान होता, तो यह प्राणों का यज्ञ करने वाला, क्योंकि प्राण ही तो भोक्ता रहता है, प्राण ही तो भक्षण करता है। क्योंकि प्राण ही अवधान

करता रहता है।

999 साधन अभाव में याग

तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा तुम समिधाओं के द्वारा अग्नि का ध्यान करो, और अग्नि में हूत प्रारम्भ करो, क्योंकि अग्नि देवताओं का मुख कहलाता है। देवता इसी के माध्यम से सर्वत्रता को प्राप्त करते रहते हैं, यज्ञदत ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु! यह भी हमने स्वीकार कर लिया है, परन्तु कही ऐसा स्थान हो, कि हमारे यहाँ अग्नि भी न हो, यह समिधा भी न हो, तो प्रभु! हम याग कैसे करें?

उन्होंने कहा यदि समिधा न हो, तो तुमजल को अपनी अंजलि में लो, और जल को लेकर कहो, प्राणाय स्वाहाः, अपानाय स्वाहाः, व्यानाय स्वाहाः, समानाय स्वाहाः, उदानाय स्वाहाः इस प्रकार तुम हूत प्रारम्भ करो, और प्रारम्भ करते हुए कहो, वह जल को अंजलि में ले करके, जब स्वाहा दोगे, तो जल के द्वारा ही, जल का पात्र, तुम्हारे समीप होना चाहिए, और जल से, क्योंकि जल की ही तरंगे उत्पन्न होती हैं, अग्नि भी धारण करती हैं, अग्नि की तरंगे ही, तो उत्पन्न हो करके, वायु मण्डल को निर्माणित करती हैं, तो इसी प्रकारयह जल हो तो पिण्ड बनाने वाला है।

तो इसीलिए जल तरलत्व पदार्थ माना गया है, चाहे वह इस पृथ्वी मण्डल पर हो, चाहे वह सूर्य मण्डल में हो, चाहे वह चन्द्र मण्डल में हो चाहे, किसी भी लोकलोकान्तरों में नृत करने वाला, परमाणु क्यों ने हो, उसमें तरलता की गतियां रहती हैं, वही आगे चल करके पिण्ड के रूप में परिणत हो जाती हैं।

इस प्रकार ऋषि ने अपना मन्तव्य दिया, तो उस समय यज्ञदत ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु! मैं विशेष इसकी व्याख्या नही कराना चाहता हूँ, आचार्यो ने मुझे ऐसा वर्णन कराया है, मेरा एक प्रसंग और है कि हे प्रभु! कहींहमें जल भी प्राप्त न हो, तो हम याग कैसे करेंगे? उन्होने कहायदि तुम्हें जल भी प्राप्त न हो, तो तुम पृथ्वी की रज को ले करके, कहो प्राणाय स्वाहाः, अपानाय स्वाहाः, व्यानाय स्वाहाः, समानाय स्वाहाः उदानाय स्वाहाः कह करके हूत प्रारम्भ करो, उस हूत को, तुम प्रारम्भ करके, तुम अपने में रत्त हो जाओ, यही तो पिण्ड का स्वामी है, माता के गर्भस्थल में जब यह तरलत्व वनस्पतियों का रस जाता है, तो वही तो पिण्ड का मूल कहा जाता है।

जब लोक लोकान्तरों की रचना होती है, तो उसमें गुरुत्व होने से ही, पृथ्वी के रज होने से ही नाना पिण्डों का निर्माण होता है, वह पिण्ड कोई पिण्ड पृथ्वी के रूप में हैं, द्वितीय पिण्ड मंगल के रूप में हैं, कहीं बृहस्पति के रूप में हैं, कहींवही ध्रुव इत्यादि लोकलोकान्तरों के रूप में दृष्टिपात आता रहता है, यह जो जगत है, यह पिण्डाकार माना गया है, और पिण्डाकार का निर्माण, बिना गुरुत्व के कोई पदार्थ नही होता।

1000 पिण्डों का निर्माण

तो इसीलिए वेद का ऋषि कहता है, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने, ब्रह्मचारियों के मध्य में कहाहे ब्रह्मचारियों! यह जो गुरुत्व, पृथ्वी के रज हैं, अरे, इसके ही रज, जब माता के गर्भ में जाते हैं, तो हम जैसे शरीरों का निर्माण होता हैं, पंच महाभूतों का निर्माण होता रहता है, और वही तरंगे, जब ऊर्ध्वा में गमन करती है, तो पृथ्वी मण्डल का, वह पिण्ड बनता रहता है, एक पिण्ड नहीं है, नाना पिण्डों की विवेचना वर्णन की है, एक पिण्ड नही है, कोई माता के रूप में पिण्ड है, कोई पितर के रूप में पिण्ड हैं, कोई पुत्र के रूप में पिण्ड बना हुआ है, यह नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों वाला और निहारिका वाला यह पिण्डाकार जगत मुझे दृष्टिपात हो रहा है।

तो यह पिण्ड का निर्माण करने वाला कौन है? कौन निर्माण कर रहा है, चैतन्य देव जो रचनाकार है, वही तो इन पंच महाभूतों को, एकत्रित करता हुआ, एक संगठित बनाता है, और उसमें अपना तेजोमयी दे करके, उसका निर्माण प्रारम्भ होता है। 15.03.1992

1001 प्रकृति की पांच गतियां

तो पिण्डों का आकार कैसे बनता है, चाहे वहपृथ्वी के रूप में हो, चाहे मंगल के रूप में हों, चाहे वह बृहस्पति के रूप में हो, चाहे वह आरुणि मण्डल के रूप में हों, चाहे वह वनस्पति के रूप में हों, नाना प्रकार का जो पिण्डाकार, जगत दृष्टिपात आ रहा है, यह सर्वत्र एक गुरुत्व में विशेषता प्रदान रहता है।

तीन प्रकार के परमाणु हैं, जिनके ऊपर सर्वत्र विज्ञान निहित रहता है, वैज्ञानिक कहते हैं, कि, तीन प्रकार का परमाणुवाद है, तेजोमयी तरलत्व और गुरुत्व ये तीन प्रकार के परमाणु, अभ्यन करते रहते हैं, वायुइनको गति दे रहा है, और अन्तरिक्ष में यह गति कर रहे हैं, इसीलिए यह पंच महा वृतियों काप्रकृति कीपांच गतियां मानी जाती हैं।

तो कौन निर्माण करने वाला? निर्माणवेता तो प्रभु हैं।अपनीअपनी आभा मेंगुरुत्व, परमाणुओं को ले करके, निर्माणित करते रहें हैं। जबविज्ञानवेता, अपनी विज्ञानशाला में यन्त्र का निर्माण करता है और यन्त्र का आयु देता है, महाराजा भीम और घटोत्कच्छ की विज्ञानशाला में दोनों ने अपनी विज्ञानशाला में यन्त्रों का निर्माण किया था, उनका यन्त्रवर्तमान में वायु मण्डल में गमन कर रहा है, एकएक

लाख वर्षों के वायुमण्डल में यन्त्र गतिवान हो रहे हैं। 15.03.1992

1002 अत्रि

वाणी गान गा रही है। और उद्गीत बनकर के और अत्रि बन करके, अत्रि में परिणित हो रही है। वेद के ऋषियों ने कहा है, कि हमारे यहाँ इस वाणी को अत्रि कहते हैं। यह वाणी अत्रि बन करके करके उच्चारण कर देती है। अति उच्चारण करती हुई, अत्रि में परिणत होती हुई, ये अत्रि कहलाती है। हमरे यहाँ अत्रि ऋषि हैं, सप्त ऋषियों में भी एक अत्रि ऋषि है। जो वाणी के रूप में परिणित होती रहती है।

तो वेद का शब्द वाणी के रूप में ब्रह्म की गाथा गा रहा है। जैसे पृथ्वी इस ब्रह्माण्ड की गाथा, जैसे माता की गाथा गाने वाला पुत्र, इसी प्रकार तीन प्रकार की आभा हैं, इस संसार की रचयिता में दृष्टिपात करने से प्रतीत होता है।

प्रत्येक, एक दूसरे की गाथा गा रहा है।जैसे पृथ्वी सूर्य की गाथा गा रही है। सूर्य ब्रह्माण्ड, आकाशगंगा की गाथा गा रहा है। आकाशगंगा, निहारिका की गाथा गा रही है। और निहारिका लोकों की गाथा गा रही है। ये प्रभु का कितना विशाल जगत हैं। सूर्य का प्रकाश इस पृथ्वी तक आता है और सूर्य की आभा में, प्रकाश शनि का और भी लोकों का आता रहता है। 21.11.1981

1003 रक्त से मानव चित्र

एक समय भारद्वाज मुनि से सुकेता और शबरी दोनों विद्यमान थे, उन्होंने कहा कि महाराज! आप जितने विज्ञान में गति करते हैं, । एक रक्त के बिन्दु से चित्रों का दिग्दर्शन करा देते हैं, योग में कितनी आपकी गति है? आप योग में प्रवेश कर सकते हैं?

तो भारद्वाज मुनि ने कहा था कि योगी एकएक परमाणु का विभाजन करके, सर्वत्र सृष्टि का, एक ब्रह्माण्ड में, सर्वत्र ब्रह्माण्ड का चित्रण करता रहा है। क्योंकि जब एक परमाणु का विभाजन करोगे, तो जितना ये सृष्टि का चक्र है, ये योग में भी दृष्टिपात आता है और जो वैज्ञानिक सूक्ष्म बन जाते हैं, उनको भी दृष्टिपात आता है।जैसे मैं एक रक्त के बिन्दु से, उन चित्रों में, उस मानव का दिग्दर्शन कराता हूँ। तो हे पुत्री! जब योग में प्रवेश करता हूँ, तो जो रक्त का एक परमाणु है, जब मैं उसके गर्भ में अस्तुतियों को ले जाता हूँ, तो उसमें असंख्य चित्र मुझे दृष्टिपात आते हैं। उस एक-एक परमाणु में, मुझे असंख्य जन्म जन्मान्तरों के चित्र, उस मानव के दृष्टिपात आते हैं। जो रक्त के बिन्दु से, उस मानव का केवल चित्र ही दिखायी देता है। एकएक परमाणु में जन्म जन्मान्तर दृष्टिपात आते हैं। 21.11.1981

1004 प्रजापति का ब्रह्माण्ड

प्रजापति में यह ब्रह्माण्ड समाहित हो रहा है। अरे! कौन प्रजापति है? वह परमपिता परमात्मा, जो ब्रह्माण्ड का नेतृत्त्व करने वाला हे। जो इसको निर्माणित कर रहा है।मुझे तो ऐसा स्मरण है, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज और सोमकेतु ने बारह वर्ष के अनुष्ठान में एक निर्णय ओर दिया है, किकोईकोई लोक तो ऐसा है, जिस लोक के लिए बहत्तरबहत्तर सूर्य प्रकाशित करते हैं। परन्तुकुछ ऐसे लोक हैं, कुछ ऐसे मण्डल हैं, जिन मण्डलों में, तीस हजार पृथ्वियाँ उसमें समाहित हो करके, और उसमें बीस हजार सूर्य समाहित हो करके, उनको पुनः प्रकाशित किया जाता है। बहुत से मण्डल ऐसे हैं, जिनको जानतेजानते, उनका प्रकाश भी पृथ्वी मण्डल तक नहीं आ पाता और सृष्टि का काल समाप्त हो जाता है। तोयह कैसा अनुपम प्रजापति का ब्रह्माण्ड है। 09.10.1989

1005 वैदिक रहस्य

वहाँ भी अपने रूपों में जैसा तत्त्व प्रधान होता है, उसके अनुसार सभी प्रदार्थ पाए जाते हैं, क्योंकि वेद का ज्ञान सर्वत्र विद्यमान है। क्योंकि कोई ऐसी विद्या नहीं है, जो वेदों में प्रायः न हो। वैदिक रहस्य का स्पष्टीकरण जितना भी मस्तिष्क अविक्षिप्त होगा, पक्षपात से रहित होगा, विचारक होगा, यौगिक मस्तिष्क होगा, उतना ही मानव के हृदय में एक जानकारी की, ऐसी अमूल्य निधि आने लगती है, जिससे मानव वास्तव में विभोर हो जाता है। वेदों के रहस्य को मानव रूढ़ि से नहीं जान सकता, उसको जब मन रूपी अपने घृत से, उस मस्तिष्क को, अग्नि को प्रदीप्त करते हैं, ज्ञान के द्वारा, हृदय की नाना प्रवृत्तियों को, बाह्यप्रवृत्तियों को, जब आन्तरिक बना लेते है और मस्तिष्क में विचारविनिमय प्रारम्भ हो जाता है, तो उस विचार को ध्यानावस्थित कहते हैं। ध्यान की अवस्था होते ही, उस वेद के मन्त्र में, परमात्मा की वाणी में, जो रहस्य होता है, वह समाप्त हो जाती है। उसका वास्तविक स्वरूप उसके समीप आ जाता है। 09.10.1989

1006 मन प्राण की एकता

क्योंकि हमारे यहाँ प्रायः ऐसा माना गया है, कि वेदों में मन और प्राण दोनों की जो विशेषता है, जहाँ मन और प्राण का समन्वय हो जाता है, क्योंकि ध्यानावस्थित हम उसी को कहते हैं, जहाँ मन और प्राण दोनों की सहकारिता होती है, वह जो ध्यानावस्थित है, उसमें वेद की रूढ़ि नहीं रहती। उसका मस्तिष्क उन रहस्यों को जानने लगता है। जहाँ रूढ़ि नहीं होती, वहाँ वास्तविक ज्ञान होता है। वह ज्ञान से भरा एक महान् विज्ञान होता है। इसलिए वेद के रहस्यों को जानने वाला प्रायः योगी ही होता है। योगी ही वेद के रहस्या को जानता है। क्योंकि प्रकाश का प्रकाश से समन्वय कर देना जो जानता है, इनका निदान जानता है जैसे चतुर वैद्यराज होता है वह रूग्ण का अच्छी प्रकार

निदान जानता है तो वह उसको औषध भी प्राप्त कराता है। इसलिए वेदों के अर्थों को, वेद की आभा को केवल वह योगी जानता है, जो अपने प्राण और मन दोनों को समन्वय कर देता हैं। वह वेद के ऐसे प्रकाश में चला जाता है, कि उसके जीवन में रात्रि अथवा अन्धकार नहीं होता। 09.10.1989

1007 लोक लोकान्तरों में घृत, ओषध की आभा

महर्षि दालभ्य ने, महात्मा शिलक और प्रवाहण से कहाकि हम नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों में जाते हैं, तो वहाँ कैसी औषध हैं? कैसा घृत है? इसके ऊपर विचारविनिमय करना है। जब हम यह विचारते हैं कि वहाँ का घृत कैसा है? और औषध क्या है?'' तो ऋषियों ने उत्तर दिया, जिसका जैसा वायुमण्डल होता है, वैसा ही वहाँ काऔषध होता है। जहाँ जो तत्त्व प्रधान होता है, वहाँ उस प्रकार का औषध और उसी प्रकार से मन्थन करके, घृत भी उसी प्रकार का होता है। जैसे अग्नि का घृत क्या है? अग्नि का घृत विद्युत माना गया है। विद्युत में भी कई प्रकार की आभा होती है।वायु में भी कईप्रकार की आभा के आचार्यों ने आरोपण किए हैं। अश्विनी कुमारों ने कहा, महात्मा दधीचि जैसे ऋषियों ने इसका निरूपण किया है। इसी प्रकार आपो में भी, इसी प्रकार की धारा मानी जाती है। अन्तरिक्ष में भी, पांचों तत्त्वों में इस प्रकार की गतियां और आभा होती हैं। इसी प्रकार जैसा लोक होगा, जिसमें जो तत्त्व प्रधान होगा, उसी प्रकार उसकी आभा बन करके, वसुन्धरा में परिणित हो जाती है। इसीलिये हमारे आचार्यों ने इसके ऊपर बहुत ही गम्भीरता से विचारविनिमय किया है। 09.10.1989

1008 कण-कण में व्याप्त परमात्मा का गृह

जैसे पृथ्वी मण्डल में प्राण और मन का घृत बना करके यज्ञ करते हैं, जैसे बृहस्पति मण्डल में प्राण की विशेषता है। क्योंकि वहाँ वायु की प्रधानता होने के नाते, उसकी आभा विचित्र बन जाती है। परन्तु वहाँ वायु से मिश्रण होने वाला जल है, इन दोनों की प्रधानता होने के नाते, वहाँ बहने वाला घृत बन करके, जिसको हम औषध कहते हैं, वहाँ वायु औषध होती है, जल औषध होता है, दोनों का पान किया जाता है। पशु भी उसी प्रकार के होते हैं। पान करते हैं, उनका घृत बनाया जाता है। जहाँ भी दृष्टिपात करोगे, वहीं तुम्हें आध्यात्मिकवाद प्राप्त होगा। क्योंकि आध्यात्मिक जो विज्ञान है, उसमें मौलिकता है। जीव का जन्मसिद्ध अधिकार होता है। किसी लोक लोकान्तर में रमण करने वाला प्राणी क्यों न हो, उसकी आभा एक विचित्रता में सदैव परिणित रहती है। जैसे चन्द्र गृह है, सूर्य गृह है, बुध गृह है, ये सब गृह कहलाते है, इनमें सब प्राणी मात्र वास करते रहते हैं। ये गृह हैं, जो परमात्मा ने, सृष्टि के पिता ने, सृष्टि का सृजन करते हुए इन सब गृहों को निर्माणित किया और निर्माणित करके वहाँ के प्राणी मात्र को, ऋषिमुनियों ने अपनी समाधि के द्वारा, अपने सूर्य की किरणों के द्वारा गमन करते हुए, उन गृहों में जाने का प्रयास किया, यंत्रों के द्वारा, वेद का आचार्य कहता है, ऋषि कहता है किवह परमपिता परमात्मा का कैसा भव्य, यह गृह माना गया है, जहाँ परमात्मा वास करता है। परमपिता परमात्मा सर्वज्ञ हैं। वह एकएक कणकण में व्याप्त रहता है।

तो प्रभु ने इन नाना गृहों का निर्माण किया। वशिष्ट मण्डल, वशिष्ट गृह कहलाता है, अरुंधति गृह कहलाता है, विश्व श्रृंग गृह कहलाता है, नाना गृह हैं, जिनकी गणना भी नहीं की जा सकती। यह प्रभु का एक अनूठा जगत है। ये गृह कहलाते हैं, जिसमें प्राणी वास करता है, वैज्ञानिकजन अपने में वास करते रहते है। 09.10.1989

1009 परमात्मा का अनुठा जगत

पुरातन काल के आचार्यजन, अपनेअपने यंत्रों के द्वारा लोकों की यात्रा करते रहे हैं और उन लोकों में वास करते रहे हैं। वायुमण्डल को जानते हुए, जान करके, उन्होंने वातावरण को यहाँ लाने का प्रयास किया है।

परमपिता परमात्मा का यह अनूठा जगत है। इस अनूठे जगत में, गृहों का निर्माण करने वाले प्रभु हैं।यह पृथ्वीगृह है। जहाँ मानव वास करता है, गृहों का निर्माण करने वाला हो, वही तो गृह कहलाता है। चन्द्रगृह, सूर्यगृह, मंगलगृह, वशिष्टगृह, त्रीतिगृह, नाना प्रकार के गृहों का वर्णन आता रहता है और गृह का अभिप्रायः यह है, जहाँ मानव वास करता है, गृहों का निर्माण कर सकता है। तो इन नाना प्रकार के गृहों में मानव का यातायात बना रहा है। वह यातायात विज्ञान के द्वारा, प्रवत्ति के द्वारा, योगाभ्यास के द्वारा, प्राण और मन का एकाग्र करना, यातायात की प्रतिभा बनी रहती है। 09.10.1989

1010 मन से साधना

प्रत्येक मानव के हृदय में यातायात बना रहा हैं, मन ऐसा विचित्र है, कि यह संसार के प्रत्येक, यातायात इसके पिछले विभाग में रह जाते हैं और यह अग्रणीय बन जाता है। एक क्षण समय नहीं लगता, जब यह चन्द्रमा की यात्रा करके, चला आता है। एक क्षण समय नहीं लगता, जब वह सूर्य मण्डल की किरणों के साथ में गमन कर जाता है। प्रकृति का सबसे सूक्ष्मतम तन्तु यह मन माना गया है। इस मन और प्राण दोनों के ऊपर संयम करने का नाम साधना है, विचित्रता है, मानवीयता है। वृत्तियों में यह मानव रत्त रहता है। हम परमपिता परमात्मा

की आराधना करते हुए, और देवत्त्व को जानते हुए, हम गृह को ऊँचा बनाए और, जब गृह का निर्माण हो जाए, उस गृह में, विचारों का एक माधुर्यत्त्व रहना चाहिए, एक अपने क्रियाकलापों का माधुर्यत्त्व रहना चाहिए। दर्शन करते रहे हैं। वे पचासवें महापिता का दर्शन, एकएक के दर्शन करना। 09.10.1989

1011 प्राण से लोक लोकान्तरों की माला

यह केवल यह प्राण की वृतियों से उसे दृष्टिपात कर सकती हैं प्राण का एक कार्य नही हैसंसार में जो प्राण है यह प्राण ही हैजो संसार में लोक लोकान्तरों की माला बनाए रहता है और एक दूसरे में माला को धारण कराए रहता हैं यह सब माला कहलाती है राष्ट्र भी एक, माला का सूत्र कहलाता है, प्रजा और राजा दोनों मिल करके एक माला बन जाती हैं, दोनो सुगठित हो करके राष्ट्र को उन्नत बनाते हैं, नैतिकता में लाते हैं, उनको कर्तव्यवाद में रत्त करा देते हैं, और कर्तव्य में जब उग्र क्रिया दोनो वृतित हो जाती हैं, तो वहाँ ओर ही वृतियां बन जाती हैं, जिससे मानव अपने को प्रकाश में ले जाता है।

तो यह प्राणों की प्रतिभा कहलाती हैं, अग्नि अपने मेंकाष्ठों में रमण कर रही है, वहाँ प्राण ही समाहित रहता हैं, अग्नि नही होती, तब तक अपने में ध्वनियां कर रहा हैं, रात्रि आ जाती हैं, रात्रि में एक-एक ध्वनि आ रही है, और वहाँ परमाणुओं का संघर्ष होता हैं, वह परमाणु रूपी ध्वनियां आती रहती हैं। 27.10.1989

1012 अंगद की प्राण विद्या

अंगद औरश्वेता मुनि के ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहे हैं और ब्रह्मचारी जब अपने में अध्ययन कर रहे हैं, तो जब विद्यालय शान्त होता, अवकाश को प्राप्त होते, तो बालि के पुत्र अंगद, बड़े सुयोग्य और बड़े विज्ञान में पारायण थे, प्राण विद्या को अपनें में धारण करते रहते थे, यह प्राण विद्या उन्होंने स्वाति मुनि के चरणों में ग्रहण की और प्राण को जिस अंग में, वह लाना चाहते थे, वह प्राण उसी अंग मेंअर्पित हो जाता था, उसी में प्रायः वह दृष्टिपात होने लगता था।तो ये विद्याएं अंगद जी ने महाराजा स्वाति मुनि के यहाँ अध्ययन की, यहाँ नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, जो बुद्धिमान होता है, कर्मठ होता है, उससे राष्ट्रीयता नही होती, उसमें एक मानवतता होती हैं, उसमें सुयोग्यता होती हैं, और वह सुयोग्य को ही, उस विद्या को प्रदान कराना चाहता हैं।आचार्यों का परम्परागतों से यह कथन रहा है, उसके लिए, एक राष्ट्र नही, दो राष्ट्र नही, पृथ्वी का क्या, किसी भी लोकलोकान्तरों का प्राणी क्यों न आ जाए, परन्तु उसी को विद्या देना प्रारम्भ कर देता हैं। 27.10.1989

1013 नम्रता

तो इसीलिए इस विद्या को अधिकारी को प्रदान करनी चाहिए, स्वाति मुनि महाराज, इस विद्या में बड़े पारायण थे, तो इस विद्या ब्रह्म का बखान अवश्य होना चाहिए, जब आचार्यो के गृहों में वैज्ञानिकों के गृहों से जब परमात्मा का नामोकरण स्मरण नही रहेगा, तो उस समय यह विज्ञान एक अग्नि का काण्ड बन करके रहता है, जैसे यज्ञशाला में यज्ञमान अपने हृदय से नम्रता को त्याग देता है, तो वह यज्ञ, उस मानवीय आन्तरिक प्रवृति को समाप्त कर देता हैं।इसी प्रकार नम्रता बहुत अनिवार्य हैं। वैज्ञानिकों के गृहों में नम्रता हो क्रियात्मकवादियों के गृहों में नम्रता हो, और गृह स्वामी, गृह स्वामिनीयों के गृहों में नम्रता हो राजा के हृदय में प्रजा के हृदय में प्रजा में नम्रता और प्रजा में राजा के प्रति उनको प्रोत्साहन देना, यह नम्रता के प्रतीक माने गए हैं, इसीलिए प्रत्येक मानव के हृदयों में नमः का शब्द होना चाहिए, हमारे वैदिक साहित्य में नमः का भाव बहुत समय से, बहुत कृतियों में आता रहा हैं।

वेद के मन्त्र इस प्रकार हैं, जो नमः के ही शब्द हैं। इसीलिए नमः रहना चाहिए, नम्रता ही मानव को ऊर्ध्वा में ले जाती है, जब नम्रता समाप्त हो जाती है, विज्ञान मानववाद राष्ट्रवाद सब अग्नि के मुखारबिन्दु में चला जाता है, तो जहाँ विज्ञान हो, तो नम्रता अवश्य हो। यदि वह चन्द्र यात्री बना है, तो नम्रता अवश्य होनी चाहिए।यदि यह सूर्य की किरणों के साथ गमन करने लगता है, तो नम्रता अवश्य होनी चाहिए, वह नम्रता कोन देते हैं, जो उस विद्या का शमन कराते हैं, और जो शमन करते हैं, जब परस्पर व्यवहार नम्रता का होता है, तो वृतियों में रत्त हो जाते हैं।

यह तो वैज्ञानिकों का विषय हैं, जब विद्यालयों में विद्यमान होते हैं यह ब्रह्मचारियों और गुरुओं का विषय है, हम भी कुछ समय तक इसके विद्यार्थी रहें हैं, तो बहुत समय पूर्वआचार्यों के समीप विद्यमान हो करके, उस विद्या का अध्ययन कर रहे हैं, क्रिया में लाते रहे हैं, क्योंकि ये जो ऋषिमुनि होते हैं, तपश्चर होते हैं, विज्ञान में पारायण होते हैं, यह जितना भी जानते हैं, उतना ये अपने में पूर्णता की आभा में रत्त रहते हैं।

परमपिता परमात्मा जो हमारा सखा हैं, अनुपम है, जो वैज्ञानिकों का भी विज्ञानवेता हैं, सर्वत्रता में विद्यमान हैं, हमारे अन्तर्हृदयों में भी विद्यमान रहता है, वह, बुद्धिमानों का बुद्धिमान हैं, वह प्रकाश का भी प्रकाशक हैं, वह वेद रूपी प्रकाश में रत्त रहने वाला है। 27.10.1989

1014 अहिल्या कतिभा यन्त्र

माता अरूण्धति ने कहा कि मेरा तो एक ही मन्तव्य रहा है, कि मैं ब्रह्मचारियों को यही कहती रही हूँ, विद्यालयों में भी और आज भी मेरा यही विचार यही है, कि हम अपनीमानवीयता को ऊँचा बनाए और अपने मानसिक जो विचार है, वे महान पवित्र बन जाए, उन पर हमारी विजय होना चाहिए, जब हमारी विचारों पर विजय हो जाती है, तोहम तपस्वी बन जाते हैं, और बिना तपस्या के, छात्र कदापि भी ऊँचा नही बनता। जब माता को, माता की दृष्टि से, दृष्टिपात किया जाता है, उसे नेत्रों मेंमाता कोसमाहित कर लेते हैं, तो वह नेत्रों में सदैव माता ही माता दृष्टिपात आने लगती है।और वह माता प्रकृति के रूप में विद्यमान हो जाती हैं, वही प्रकृति है, जो चरी कहलाती हैं, जिसके गर्भ में नाना प्रकार का विज्ञान विद्यमान होता हैं, खाद्यान्न भी है, खनिज भी हैं, और भी नाना प्रकार की धाराओं की उपलब्धियां होती रहती हैंजो प्रायः तुम्हें क्रिया में लाने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। क्योकि यह जो तुम्हारा एक विज्ञानमयी, एक अहिल्या कृतिभा यन्त्र का निर्माण किया है, जो यह निर्माणतुमने याग के माध्यम से किया हैं, याग के परमाणुओं के ऊपर तुम्हारा अध्ययन हुआ है, और उसपरमाणुवाद में, यह सत्ता भी प्राप्त की होगी, कि पृथ्वी के गर्भस्थल में कितनी दूरी पर कौनसा खनिज हैं, कौनसागमन कर रहा है, जल को शक्तिशाली बनाने वाली, जो ऊर्ज्वा शक्ति है, जो सूर्य से प्राप्त होती है, अमृत को देने वाली चन्द्रमा से ऊर्ज्वा प्राप्त हो रही है, तो वह सर्वत्र एक आभा में रमण कर रही है।

माता अरूण्धति ने कहा हे ब्रह्मचारियों! यह तुम्हारा सौभाग्य है, जो तुम इस आश्रम में, तुम ब्रह्मवेत्ता के समक्ष, तुम अपनी विद्या का अध्ययन कर रहे हो, यहाँअहिल्या कृतिभा यन्त्रों का निर्माण किया है, जिस निर्माण में पृथ्वी के गर्भ को जानना है, और पृथ्वी के गर्भ को जानने वाला है, वहविज्ञानवेता कहलाता है। हे ब्रह्मचारियों! दूसरा तुम्हारा जो कौतक है, वह अस्त्रोंशस्त्रों का निर्माण हैं, कुछइस प्रकार के अस्त्रशस्त्र है, जो तुम्हें इस पृथ्वी मण्डल पर अभ्यस्त के लिए नही प्राप्त होंगे, तुम्हें दूसरे मण्डलों में भी जाने की आवश्यकता होगी, वहाँ भी तुम्हें अपनी उड़ाने उड़नी है और वहाँ भी तुम्हें विज्ञान को ओर यन्त्रों को जानने के लिए, उसके पश्चात पृथ्वी मण्डल पर आना है, ऐसा मेरा गन्तव्य रहता है, तुम्हारा यह जीवन, इसी प्रकार का, तपों में क्रियाकलापों में लगा रहेगा, तो इसी का नाम तप कहा जाता है। तुम तपस्या में परिणत हो जाओ, तुम्हें यह प्रतीत है, कि हमारे यहाँ जब विष्णु राष्ट्र की स्थापना हुई, तो विष्णु महाराज अपने गरूड़ रूपी महाराज पर विद्यमान हो करके, लोकलोकान्तरोंकी यात्रा करते रहे हैं और लोकलोकान्तरों में जाना वहाँ जो भी यन्त्र जिसविज्ञान प्राप्त होनाविज्ञान की धाराओं को अपने मस्तिष्क में वृत करते हुए और वहाँ से यन्त्रों को इस पृथ्वी मण्डल पर लाना, यह प्रायःराष्ट्र का एक कर्तव्य बन जाता है, राष्ट्र में इतना ऊँचा विज्ञान होना चाहिए, हमारे विद्यालय का विज्ञान, इतना ऊँचा होना चाहिए, जिससे तुम्हारा राष्ट्र का वैज्ञानिक नाना लोकलोकान्तरों की यात्रा मेंसफलता को प्राप्त कर सके। 29.09.1990

1015 माता अरुंधति का दीक्षान्त

तो अपना दीक्षान्त उपदेश देते हुए कहामेरा यह सौभाग्य है, मैं एक वर्ष के पश्चात, तुमने विजय का, अपना एक पतिका, एक वर्ष में आश्रम में वर्णित की हैं, मेरा यह बड़ा सौभाग्य रहा है। मैं जो तुम्हें दृष्टिपात कर रही हूँ, और तुम दसों इन्द्रियों के ऊपर संयम करो, और विज्ञानवेता बन करके और तुम अस्त्रों-शस्त्रों का अभ्यास और निर्माण करो, निर्माण करके, उसका अभ्यास करो, जिससे अयोध्या राष्ट्र ऊँचा बने, और अयोध्या राष्ट्र के ऊँचे बनते ही, सर्वत्र पृथ्वी मण्डल पवित्रता की लहरों में परिणत हो जाएगा, इन तरगों में तरंगित हो करके, अपने में अपनेपन को प्राप्त करते रहोगे, तोमाता अरूण्धति ने अपना उपेदश दे करके, यह कहाकि मैं महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज की आज्ञा का पालन करते हुए, माता अरूण्धति ने यह कहा कि गृह, विद्यालय जब तपों में बनते हैं, जब माता पिता, मैं और महात्मा वशिष्ठ जब हम दोनों विद्यमान होते, तो विज्ञान की चर्चाएं करते रहते हैं, परमात्मा की सृष्टि को निहारते रहते हैं और परमात्मा की सृष्टि को निहारना, एक दूसरे में देवत्व की भावनाओं को ले करके, अपने गृह को पवित्र बनाते रहते हैं, तो माता अरूण्धति ने कहा कि तुम्हारे विचार में जब एकत्रित हो करके विद्यमान हो जाओ, तो आत्मा परमात्मा को निहारते रहो औरपरमात्मा के विज्ञान में चले जाओ। 29.09.1990

1016 महात्मा कुक्कुट मुनि ने रावण से कहा

महात्मा कुक्कुट मुनि ने रावण से कहाहे प्रभु! उन्हें एक सौ पिच्चासी वर्ष हो गए थे, इसी प्रकार का तप करते हुए, जब एक सौ पिच्चासी वर्ष हो गए, तोवह लगभग एक लाख जन्मों के संस्कारों को जान पाए थे और वे एक लाख जन्मों में, वे संस्कारों को जो साक्षात बीज रूप में, अंकुर रूप में, अन्तःकरण में चित्त के मण्डल में विद्यमान हो गए। 19.10.1991

1017 चित्त मण्डल

चित्त, कहते ही उसे हैं, जहाँ जन्मजन्मान्तरों के संस्कार विद्यमान होते हैं।परन्तु अपने समस्त रूप से, अंकुर रूप में परिणित होते रहे हैं।तो इसी प्रकार उसका नाम चित्तमण्डल कहा जाता है। चित्त में, हमारे आचार्यों की बड़ी एक महान् उपलब्धि रही है, उन्होंने कहाजब तक

शरीर में चित्त रहेगा और चित्त के मण्डल में संस्कार रहेंगे, तब तकमोक्ष की आभा को प्राप्त नहीं कर सकता। ऋषि ने बड़े ऊर्ध्वा में, महात्मा कुक्कुट और रावण, दोनों का संवाद बड़ा विचित्र रहा। रावण ने कहा किप्रभु! धन्य है! यह वार्त्ता, मेरे महापिता भी करते रहे हैं, महात्मा पुलत्स्य ऋषि भी करते रहे हैं।यह मैंने श्रवण किया था। आज आपसे, ओर भी मेरे विचारों की, हमारे पूर्वजों के विचारों की ओर भी पुष्टि हो गयी। इस प्रकार यह चित्त का मण्डल है। 19.10.1991

1018 अहंकार से पिण्ड

उन्होंने कहाउसके पश्चात अहंकार है, क्योंकि अहंकार से, मानव के परमाणुओं को, बिखरे हुए परमाणुओं को, पिण्ड रूप में परिणित किया जाता है, उसकाहमारे यहाँ अहंकार कहते हैं। क्योंकि जितना अपने में सामान्यतः अहंकार रहता है, तो वह एकदूसरे परमाणुओं का मिलना करता है, एकदूसरे कोसंगठित बनाता है। वह जो अपने में अहंकार है, वही तो पिण्ड रूप बनाता है। यदि अहंकार नहीं होगा, तो पिण्ड भी नहीं बनेगा। पिण्ड नहीं बनेगा, तो चित्त का मण्डल नहीं होगा। चित्त का मण्डल नहीं होगा, तो बुद्धि का मण्डल भी नहीं होगा। बुद्धि का मण्डल नहीं होगा, बुद्धि का मण्डल नहीं होगा, तो मन का मण्डल भी नहीं होगा। हमारे अहंकार में आ करके, ये सर्वत्र एकदूसरे में मिलान करके, यह भव्य भवन का निर्माण होता है। यह मानव का शरीर, एक भव्य भवन है।और यही भव्य भवन, ब्रह्माण्ड की रचना में आता है, जहाँ लोकलोकान्तरों में मानव प्रवेश करता है। तो हमारा वेदमन्त्र यह कहता है कि मानव अपने में मानवीयता को जानने वाला बने, जिससे वह अपने गम्भीर क्षेत्र में प्रवेश हो जाए, साधक बन जाए, और साधना में प्रवेश हो करके, अपने चित्तमण्डल को संस्कारों से विहीन कर दे। 19.10.1991

1019 प्राण की आहुति

ऋषि ने कहा हे ब्रह्मचारियों! तुम उच्चारण करो, प्राणाय स्वाहाः, अपानाय स्वाहाः कह करके प्रारम्भ करो, क्योंकि प्राण और अपान कहते ही उसे हैं, जो संसार को निगल जाते हैं, उत्पत्ति के मूल में विद्यमान रहते हैं, प्राणअपान ही, इस संसार का नृत है और व्यान की इसके ऊपर पुट लग जाती हैं।

योगीजन जबयज्ञ के माध्यम से, जब प्रत्येक प्राण की आहुति देते हैं, अपान की आहुति देते हैं, व्यान की आहुति देते हैं और व्यान और समान की उसमें पुट लगा करके, व्यान को उसमें प्रवेश करा देते हैं, तो वह प्राणों का एक समूह बन करके, आचार्यों ने, वैज्ञानिकों ने भी यह कहा है, कि हम अन्तरिक्ष में इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण भी, प्राणों के द्वारा ही करते हैं। क्योंकि तरंगें उसमें विद्यमान होती हैं, वही परमाणुवाद जब साधको के मध्य में जाता है, अथवा वही प्राण जब योगियों के मध्य में जाता है, तो योगीजन अपने शरीर को ही पृथक कर लेते हैं, और प्राण के माध्यम से, वह अन्तरिक्ष में, वह एक तारतम्य प्राण का बना रहता है, आत्मा के साथ, वह आत्मा द्यौ में प्रवेश है और वहाँ से प्राणों का समावेश हो रहा है, प्राणों का तारतम्य बन रहा है, शरीर शून्यता में है, परन्तु प्राण की प्रतिभा वहाँ पर विद्यमान रहती है। जैसे वैज्ञानिक जन अपने परमाणुवाद को जान करके, वह अन्तरिक्ष में, अपनी स्थली बना लेते हैं, जहाँ चन्द्रमा पृथ्वी कीआकर्षण शक्ति का समन्वय होता हैं, वहाँ यन्त्रों को स्थिर कर देते हैं, जहाँ सूर्य और मंगल दोनों की प्रतिभा, एक दूसरे में मिलान होती है, और उसकी जहाँ स्थली होती है, एक दूसरे की आकर्षण शक्ति, उसमें विद्यमान, एक स्थान बनाया जा सकता हैं, तो वैज्ञानिक जब परम्परागतों से ही नाना प्रकार के विज्ञान में रत्त हो करके और वह अपनी, अन्तरिक्ष की स्थलियों में विद्यमान रहे हैं। 20.10.1991

1020 त्रि समिधा

याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा कि तुम इस प्रकार का, प्रकृति का साकल्य, पृथ्वी से, वसुन्धरा से, उत्पन्न होने वाला, जो खाद्य और खनिज है, उसका चरू बनाया जाता हैं, और वह अग्नि को प्रदान किया जाता हैं, क्योकि अग्नि देवताओं का मुख है, और कोई साकल्य ऐसा नही है, जो देवताओं से भिन्न हो, वह देवताओं से, पंच महाभूतों से, उसका समन्वय रहता है। तो जब समिधा के द्वारा, तीनतीन समिधा का व्यवधान करता है, यज्ञमान कहता हैं, कि मेरे तीन प्रकार के ताप, मेरे से अवृत हो जाए, मैं ज्ञान, कर्म, उपासना में रत्त हो जाऊं और रजोगुण, तमोगुण, इसको मैं जान करके, इस संसार सागर से पार हो जाऊं, ऐसा तीन समिधा के द्वारा, वह अपनी ओजस्वी विचारधारा, वह अग्नि को प्रदान करता है।क्योंकि तीन समिधाओं में अग्नि प्रदीप्त हो जाती है, वही तीन प्रकार का विचार करके, जब मानव, राष्ट्रों का निर्माण भी इसी से होता है, राष्ट्र में भीपूर्ण आहुति दी जाती हैं, और वहउसी में रत्त रहता है। 20.10.1991

हमारा जो गौ नाम का पशु है, वे इन्द्रियाँ है और इन्द्रियों के ऊपर हमारा अनुशासन होना चाहिए। इन्द्रियों का जो अनुशासन जानता है, अनुशासन करता हुआ, वह अनुशासित हो जाता है। जैसे नेत्रों पर हमें अनुशासन करना है, और नेत्रों का जो अनुशासन है, वह, सुदृष्टिपात करना है और सुदृष्टिपात करते-करते वह इतने सूक्ष्मतम दृष्टि में चला जाता है, कि वह तारामण्डलों के मध्य में, एकदूसरे के मध्य में जो ऋत और सत बह रहा है, उसको भी नेत्रों की ज्योति से दृष्टिपात करने लगता है। जब, मानव योगाभ्यास में परिणित हो जाता है, तब

इन्द्रियों से, वह जो अग्नि उसमें वास कर रही है, वह जो अग्नि रूप बना हुआ हमारा नेत्र है, उस अग्नि के रूप में, हमें दृष्टिपात करना चाहिए। इन नेत्रों को व्यष्टि से समष्टि में ले जाना है। और, समष्टि उसे कहते है, जहाँ सम हो जाए, जहाँ व्यापकता आ जाए। तो नेत्रों में जो अग्नि बह रही है, अथवा जो दुरितानि ज्योति भ्रमण कर रही है, उस ज्योति को जानने का नाम इन्द्रियों के ऊपर अनुशासन करना है। और वही उनकी सेवा का अभिप्रायः होता है, वही सेवा कही जाती है। श्रोत्रअनुशासन हमारे यहाँ जैसे श्रोत्र हैं, तो श्रोत्रों सेवह शब्द आता है, वह शब्द को ग्रहण करता है, शब्द को जानना और शब्द को वहाँ तक जानता है, जैसे ध्वनि आ रही है। 03.10.1992

1021 शब्द विज्ञान

एक मानव ओझल हो रहा है और ओझल हो करके वह उसका नामोकरण उच्चारण कर रहा है, तो जिस मानव ने अपनी वाणी से अग्नि की है, शब्दफूंका है, वही शब्द, उसे यह विदित करता हैं, कि अमुक प्राणी, मुझे वाणी से कुछ उद्गीत गा रहा है, वह वाणी से उद्गीत गा रहा है। तो उसके चित्र में, उसकी प्रतिभा में और उसके शब्द में, वह उसे दृष्टिपात आने लगता है, वह अनुभव करता है।उसका ज्ञान, इतना अनन्तमयी हो जाता है, कि उसके सब अंगों को जान लेता है, कि अमुक प्राणी अन्तरिक्ष में, देवत्त्व को धारण कर रहा है। इसी प्रकार, शब्दविज्ञान को जानना है। वह शब्द आ रहा है, वही ध्वनि पर ध्वनि आ रही है, और वही, अनर्ध्य रूप में परिणित हो जाती है, और वही ध्वनि, मानव मेंअपने ही अन्तर्मुखी हो करके अपने में अनुभव करता है। वह, योग की आभा में परिणत हो जाता है। 03.10.1992

1022 जिज्ञासुओं का अनुशासन

वह ध्वनि है और वही ध्वनि, रात्रि का काल छाया रहता है, एक जिज्ञासु है, योगीजन अपने में, जो तारामण्डलों का, जो परमाणुवाद का संघर्ष हो रहा है।एक योगी, प्राण को जब व्यान में प्रवेश कराता है, मिलान करता है, तो वह ध्वनि आने लगती है, और वह जो ध्वनि आने लगती है और वह जो ध्वनि परमाणुवाद अपने में संघर्ष कर रहा है, वायुमण्डल में, ध्वनि को वह अपने में धारण करने लगता है, तो वह ध्वनि कहलाती है। तो इस प्रकार जब मानव ध्वनि में ध्वनित हो जाता है, अथवा शब्दों की प्रतिभा में परिणित हो जाता है, तोवह उसका अनुशासन माना गया है। वही ध्वनित हो करके, कैसे परमाणुओं का संग्राम हो रहा है, परमाणु अपने में संग्रहित हो रहें है, यह सर्वत्र उन्हें दृष्टिपात आता रहता है। तो यह उन जिज्ञासुओं का एक अनुशासन रहा। 03.10.1992

1023 घ्राणेन्द्रियां

द्वितीय उन्होंने विचारा कि, घ्राणेन्द्रियां हैं। घ्राणेन्द्रियों के सम्बन्ध में उन्होंने, अपने में अनुशासन करना प्रारम्भ किया। एक घ्राणेन्द्रियों से, पृथ्वी में से गन्ध आ रही है और पृथ्वी के गन्ध को जानता हुआ, वह विज्ञान के वांग्मय में जब प्रवेश करता है, तो वह यह जान लेता है, कि खनिज कितनी दूरी पर विद्यमान है। कौनसा खनिज विद्यमान है। यह सब घ्राणेन्द्रियों से ही, उसे अनुभव हो जाता है, उसे अनुभूति होने लगती है।

तो घ्राणेन्द्रियां अपने में बड़ी अद्वितीय क्रियाकलाप करती रहती, वेदमन्त्र यह कहता रहता है। कियह घ्राणेन्द्रियों का विषय है और घ्राण का सम्बन्ध पृथ्वी से है, और पृथ्वी में सर्वत्र खनिज विद्यमान रहते हैं। यह पंचमहाभौतिक, जो गमन करने वाला अमृत है, वह उसमें नृत्य करता रहता है, और वही हमारी घ्राणइन्द्रियों में गमन करता रहता है। तो उसको हम इस प्राण के माध्यम से, घ्राणेन्द्रियों को जानने का प्रयास करें।

वह घ्राणेन्द्रियों के द्वारा, पृथ्वी की गन्ध को ले करके, उससे अपना समन्वय करके और यह विचारविनिमय कर लेता है, कि इसमें इतनी दूरी पर इतना खनिज विद्यमान है। तो उसका वह एक अनुशासन माना गया है। 03.10.1992

1024 त्वचा अनुशासन

त्वचा अनुशासन, यह अनुशासित होने वाली इन्द्रियां अपने में, तो उसके पश्चात, वे वायु वेग में रमण कर रही है, त्वचा से उसका स्पर्श हो रहा है। तो त्वचा से जब उसका स्पर्श होता है, तो वह जान लेता है, कि वायु में कौनसा परमाणु भ्रमण कर रहा है, अथवा गमन कर रहा है। वह यहाँ तक मुझे कुछ ऐसा अनुभव, ऋषिमुनियों की प्रतिभा प्राप्त होती रहती रही है, किइस स्पर्शशक्ति से, जो अन्तरिक्ष में, शब्द बह रहा है, उसे वह जान लेता है।कि वायु में अमुक खनिज रमण कर रहा है। शरद वायु या ग्रीष्म में कौन शब्द रमण कर रहा है।

त्रेता के काल में, जब महर्षि विश्वामित्र ने, धनुर्याग किया था। उस धनुर्याग में, ब्रह्मचारी इसके ऊपर अनुसन्धान करते थे। महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ एकवृतिका ऋषि, ब्रह्मचारी, अपने में अध्ययन करते थे और अध्ययन करते, मुझे स्मरण है कि उन्होंने, इस वायुमण्डल को जानने का प्रयास किया, अपनी त्वचा के द्वारा, क्योंकि वह उसे स्पर्श करती रही। उसी को यंत्रों में लाने का प्रयास किया। तो वायु में कितना खनिज बह रहा है? कितना वृत्त बह रहा है? इसके ऊपर अनुसन्धान किया गया। तो विचारने से यह प्रतीत हुआ कि यह त्वचा का अनुशासन है। रसना अनुशासन, इसी प्रकार, मानव का शब्द, मानव की प्रतिभा और मानव का जो रसास्वादन है, वह जल से उसका

समन्वय रहता है और रसना का समन्वय रहता है, दोनों ही, एकदूसरे के पूरक कहलाए गए हैं। 03.10.1992

1025 त्रिवाद में संसार

महर्षि श्वेतकेतु ने अपने सांख्य सिद्धान्त का वर्णन करते हुए कहा कि यह संसार त्रिवाद में परिणत हो रहा हैं, और त्रिवाद उसे कहते हैं, जहाँ तीन मात्राओं से, संसार को हम अपने में निर्णयात्मक कर लेते हैं। जैसे हमारे यहाँ, तीन गुण माने गए है। रजोगुण, तमोगुण सतोगुण। ये प्रकृति के सूक्ष्मतम अव्यव माने गए हैं। तो यह त्रिवर्धा बन जाता है। ये संसार की प्रतिभा में चित्तमण्डल में प्रवेश करते हैं। तो तीन 'ओ३म' की मात्रा कहीं जाती है अ, उ और म्। ये तीन मात्राओं तक गणना का जन्म होता है। आगे जो व्यापक रूप बनता है, वह इसी से बनता है। परन्तु ये तीन मण्डल कहे जाते हैं। इन्ही में, तीन प्रकार के परमाणु विद्यमान रहते हैं।भूः , भुवः, जिसको तरलत्व कहते हैं और स्वः जिसको अग्नि का स्परूप माना जाता है। ये तीन प्रकार के परमाणुओं के ऊपर, संसार का जितना भी ज्ञान है, चाहे वह, अन्तरिक्ष में रमण करने वाला हो, चाहे वह लोकलोकान्तरों में उड़ान उड़ने वाला हो, वे सर्वत्र, यह तीन प्रकार का परमाणुवाद हीविज्ञान के वांग्यम में प्रवेश हो जाता है। विचार आता रहता है, यह जो विज्ञान है, यहअपने मे त्रिविद्या कहलाता है। इसमें गुरूत्व, तरलत्व और तेजोमयी, तीन प्रकार के परमाणु दृष्टिपात आते रहते है। यह त्रिविद्या बन जाता हैं, तीन मण्डलों का त्रिवर्धा है। तीन ही प्रकार के प्राणी मात्र होते हैं। रजोगुणी प्रवृत्ति, सतोगुणी और तमोगुणी प्रवृत्ति वाले। यह प्रवृत्ति उनकी प्रकृति में व्याप्त रहती है।

तो तीन प्रकार का ही, तीन से विभाजन किया जाता है यह संसार, तोत्रैतवाद में मानव प्रवेश कर जाता है। इसी में, हम अपने में अपनेपन को धारण करते रहते हैं। जब, इस प्रकार का उन्होंने अपना मन्तव्य दिया, तोवे अपने में मौन होने लगे और अपने में मौन हो करके उन्होंने अपना निर्णयात्मक दिया और, पिप्पलाद मुनि यहाँ आ करके मौन हो गए और उन्होंने कहामैं आगेतुम्हारी वृत्तियों का उत्तर नहीं दे सकूंगा। तो महर्षि पिप्पलाद मुनि महाराज और जिज्ञासुओं का इस प्रकार, पशु के ऊपर अपना मन्तव्य प्रारम्भ होता रहा। उन्होंने अपना यही निर्णय दिया है कि संसारयह कहींचन्द्रमा, रयि के रूप में रहता है, कहीं मिथुन के रूप में रहता है। तो नाना प्रकार केअपना मन्तव्य दिया। ऋषि उसको श्रवण करते रहे। तोजिज्ञासुओं को जब यह ज्ञान हो गया, कि ब्रह्म की आभा में हम सदैव रमण कर रहे हैं और यह जो ब्रह्माण्ड, नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों के रूप में दृष्टिपात आ रहा है, वह सर्वत्र, ऋत से बना हुआ, एकदूसरेलोक की दूरी के मध्य से भी ऋत और सत रहता है।उसमें एक सूत्र से सर्वत्र जगत पिरोया हुआ है।उसी से पिरोया हुआ होने से एक माला दृष्टिपात आती रहती है।

सबसे प्रथम परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में और विवेक को उत्पन्न करें। विवेकी बन करके प्रकृति का सर्वत्र ज्ञान प्रायः हमें होना चाहिए और जब हम जिज्ञासु बन करके, आचार्यो के समीप विद्यमान होते है, तो आचार्य तुम्हें, ब्रह्मा का ज्ञान कराएगे, अथवा उसी में तुम देखा रत्त हो जाओगे। तोअन्तरिक्ष में रमण करने वाले हो, चाहे वह लोकलोकान्तरों में उड़ान उड़ने वाले हो, यह सर्वत्र, तीन प्रकार का परमाणुवाद ही, विज्ञान के वांग्यम में प्रवेश हो जाता है। विचार आता रहता है, यह जो विज्ञान है, यह अपने मे त्रिविद्या कहलाता है। इसमें गुरूत्व, तरलत्व और तेजोमयी, तीन प्रकार के परमाणु दृष्टिपात आते रहते है।, यह त्रिविद्या बन जाता हैं, तीन मण्डलों का त्रिवर्धा है। तीन ही प्रकार के प्राणी मात्र होते हैं। रजोगुणी प्रवृत्ति, सतोगुणी और तमोगुणी प्रवृत्ति वाले। यह उनकी प्रवृत्तिप्रकृति में व्याप्त रहती है। तो इस संसार का तीन प्रकार से विभाजन किया जाता है, त्रैतवाद में मानव प्रवेश कर जाता है। इसी मेंहम अपने में अपनेपन को धारण करते रहते हैं। तो जबइस प्रकार का उन्होंने अपना मन्तव्य दिया, तो वे अपने में मौन होने लगे और अपने में मौन हो करके उन्होंने अपना निर्णयात्मक दिया औरपिप्पलाद मुनि यहाँ आ करके मौन हो गए और उन्होंने कहामैं आगे तुम्हारी वृत्तियों का कोई उत्तर नहीं दे सकूंगा। 03.10.1992

1026 लोक गमन की जिज्ञासा

लोक लोकान्तरों की यात्रा होनी चाहिए। वहाँ का अनुभव होना चाहिए, वहाँ के प्राणी मात्र का अनुभव होना चाहिए और वहाँ का जो क्रियाकलाप है, उसका ज्ञान तुम्हें प्रायः होना चाहिए। महात्मा वशिष्ठ ने यह वर्णन किया क्या कि मंगल में जाना चाहिए, और मंगल के प्राणी को दृष्टिपात करके, उनका जो विज्ञान है, उनकी जो सार्थकता है, वह भी तुम्हारे राष्ट्र में होनी चाहिए। 17.03.1989

उसकी एक ही मुक्षणा उसका मग्न होना है, एक सा हीकोई भी विचार धारा का प्राणी होकोईरूढ़िवाद में पनपने वाला हो, उसका ईश्वरीय जो विधान है, जहाँ वहसर्वत्र व्याप रहता है, चाहे वह इस पृथ्वी मण्डल का प्राणी हो, चाहे वह मंगल का प्राणी हो, चाहे वह बुध इत्यादियों में रमण करने वाला प्राणी क्यों न हो, परन्तु वह जो ईश्वरीय नियमावाली है, वह सर्वत्र के लिए एक ही तुल्य मानी गई है, हमारे यहाँ जब धर्म को राज्य सभाओं से भिन्न कर दिया जाता है, तो राष्ट्रवाद कुछ रहता ही नही, जब कर्तव्यवाद नही रहेगा, परन्तु जहाँ हिंसा नही, जिस पातालपुरी की मैं चर्चा कर रहा हूँ, जिस पातालपुरी से भाषा का एक नृत्त चल रहा है, वहाँ महर्षि कपिल जी ने विवेक के ऊपर अध्ययन करके नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया है और उन्हीं यन्त्रों के द्वाराविज्ञानवेता कहलाए। 18.03.1989

1027 आत्मा का प्रतिनिधि

चन्द्रमा जो सूर्य की सहायता ले करके, प्रकाश ले करके, वह पृथ्वी के समन्वय हो करके, यह अन्नाद से पिण्ड को बनाता है, उसमें अमृत देता है, अमृत दे करके, यह जलाशयों में प्रवेश हो जाता है, और यह अमृता को प्राप्त करके ही यह अन्नाद का पिण्ड बना और पिण्ड का सूक्ष्म रूप बना, सूक्ष्म रूप का पुनः पिण्ड बना और पिण्ड बन करके सूक्ष्म रूप बन करके उसका रेतस बना और रेतस बन करके वह उग्र रूप को धारण करके वही उत्पत्ति के मूल में प्रतिभासित होता रहता है। 21.02.1991

1028 हिरण्यगर्भाः परमात्मा

हम सब परमपिता परमात्मा के गर्भ में विद्यमान रहते हैं, और जितना भी ज्ञान और विज्ञान है, चाहे वह लोकलोकान्तरों में जाने वाला हो, चाहे वह योगी अपने में समाधिष्ठ में रत्त रहने वाला हो, चाहे हृदय अगम्य ज्योति में परमपिता परमात्मा को ध्यानावस्थित करने वाला हो, चाहे वह लोकलोकान्तरों में, मंगल में चला जाए, बुध में, शुक्र में, किसी भी मण्डल में प्रवेश कर जाए, परन्तु आत्मवेता बन करके भी परमपिता परमात्मा के गर्भ में निहित रहते हैं और उसी के गर्भ में हम अपने में हिरण्यगर्भाः कहलाते हैं। 22.02.1991

1029 अंतरिक्ष में रेचक कुम्भक

तोहम अपने में सिद्ध हो गए और द्वितीय उन्होंने अन्तरिक्ष में कुम्भक और रेचक प्राणायाम से अपने शरीर को इतना वायु इसमें भरण कर लेते हैं और वायु का भरण करके प्राण सखा को उसमें पुट में पुट लगाते रहते हैं, तो यह आसन, प्राणायाम करने से अन्तरिक्ष में गमन करने लगता है, अन्तरिक्ष में रत्त होने लगता है।जब अन्तरिक्ष में वह नाना प्रकार के लोकलोकान्तरों में, देवर्षि नारद मुनि तो अपनी चरणा पादुका के ऊपर विश्राम करते हुए, वह आज पृथ्वी मण्डल, तो कल वह चन्द्रमा में गमन कर रहे हैं, चन्द्रमा से उड़ाने उड़ करके मंगल इत्यादि लोकों में रमण करने लगते हैं, इसी प्रतिक्रिया को ले करके, महर्षि तत्व मुनि के यहाँ यन्त्रों का निर्माण हुआ, यहीलंका में, रावण के राष्ट्र में भी नारान्तक ने उन यन्त्रों का निर्माण किया, जिन यन्त्रों में, आवागमन बना, परन्तु देवर्षि नारद मुनि की यह विशेषता रही है, वे अपने शरीर को बहुत सूक्ष्म बना करके, उन चरण पादुका में विद्यमान हो करके, इस लोक में, पृथ्वी से उड़ान उड़कर आज पृथ्वी मण्डल में हैं, तो कल बुध में हैं और बुध से उड़ान उड़ते हैं, तो शुक्र में हैं। शुक्र से उड़ाने उड़ते हैं, तो मंगल में गमन कर रहे हैं। 19.05.1991

1030 मोक्ष की पगडंडी

जिससे वह अपने में, अपनादर्शन करने लगता है, और अपने में अपना दर्शन करने वाला ही महान बन जाता हैं।महर्षि वैशम्पायन, विभाण्डक मुनि महाराज और महर्षि पिप्पलाद, समुद्रों के तट पर विद्यमान हो करके, इस प्रकार की साधना करते रहे, साधना करने वालों में गणेश जी बड़ी साधना में, जिसकी घ्राण शक्ति बड़ी प्रबल थी। समुद्रों में जिस प्रकार की गन्ध आती रहती थी, उसी को वह श्रवण करते और गन्ध के परमाणु को ले करके, यन्त्रों का निर्माण करते रहतेथे, वह भौतिकवाद विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान दोनों में पारायण कहलाए गए।

तो, ऋषि मुनि अपने में अपनेपन को विचारते रहते थे, तो समुद्रों को लांघ जाना, समुद्रों की प्रतिभा में गमन करना, समुद्र के आन्तरिक जगत में गमन करना, यह सर्वत्र लघु प्रतिक्रिया कहलाती हैं। जिसके ऊपरमानव परम्परागतों से अनुसन्धान करता रहा हैं।और यह चाहता है, कि मेरा चित्त संस्कारों से विहीन हो जाए, तो मैं मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर लूं, यह मेरा कर्तव्य हैं।

तो मानव अपनी आभा से कहाँ-कहाँ चला जाता है, किस प्रकार का वह अन्वेषण करने लगता है, किस प्रकार की धाराओं में रत्त हो जाता है, और उन धाराओं का, वह कैसे प्रत्यक्ष दर्शन करता है।महर्षि शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ भी ये प्रतिक्रियाएं प्राप्त होती रही हैं, तो यह अपने में, समुद्र के तटों पर विद्यमान हो करके, साधना में परिणत हो गए, जब ईंगला, पिंगला, सुषुम्णा ये तीनों नाड़ियाँ, जब ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश कर जाती हैं, क्रियाओं से, ब्रह्मरन्ध्र में उनका ऊर्ध्वा मुख हो जाता है, और ऊर्ध्वा मुख हो करके उनका जो समन्वय है, वह कहीं सूर्य से, तो कहीं आकाशगंगा से हैं, कहीं अवन्तिकाओं से हैं तो निहारिकाओं तकउसकी अवृतियां प्रबल हो जाती हैं।

तो हमें चित्त के मण्डल को विचारना है, यह तो परमात्मा का अनुपम बाह्य चित्त हैं, अथवा इसके ऊपर भी हमें दृष्टिपात करना हैं बाह्य जगत और आन्तरिक जगत दोनों का एक समन्वय करना है, दोनों प्रकार के जगत को विचार करके, हमें गमन करना है। संसार में तो यह अनुशासन, कितना प्रबल हैं। अनुशासन मेंकितना जगत विद्यमान रहता है, यह अनुशासन है, जोचित्त की वृतियों को वह निरोध करता है, और निरोध करके जहाँ का वह चित्त मण्डल हैं जहाँ की वे तरंगें, वही तरंगों को पंहुचा देना है, अथवा उसे वहीं गमन करा देना है। तो चित्त की वृतियों को निरोध करके, उसका विभाजन करता है, उसमें लोकलोकान्तरों का दर्शन करता है, और दर्शन करके उसको विभक्त क्रिया में ला देता हैं, वही विभक्त क्रिया है, जोचित्त के मण्डल से, चित्त से समन्वय रहता हैं। 19.05.1991

1031 परमाणु परमाणु में

ऊर्ज्वा ले करके वह उसे शीतल बनाता है, रात्रि को गर्भ में धारण करता हैं, वही रात्रि है, जो चन्द्रमा के गर्भ में रहती है। तो यह सब

अनुशासन कहलाता हैं, तो हम अनुशासित बनें। क्योंकि परमात्मा ने, यह सर्वत्र जगत एक अनुशासित बनाया हैं, तो तारा मण्डल हैं, अपनी-अपनी आभा में गमन कर रहे हैं, और चक्र की भाँति एक दूसरे की परिक्रमा कर रहे हैं, और वही परिक्रमा, एक दूसरें को दर्शा रही हैं। यह जगत एक दूसरे की परिक्रमा कर रहा है, और यह प्राणी मात्र भी एक दूसरे की परिक्रमा कर रहा हैं, अणु और परमाणु अपने में गतिवान है, माता के गर्भस्थल में एक बिन्दु कितना अनुशासित हैं, और वह एक-एक, परमाणु-परमाणु से अनुशासित हो रहा है। परमाणु-परमाणु में पिरोया हुआ हैं, उसमें ब्रह्माण्ड भी है, उसमें लोक लोकान्तर भी हैं, परन्तु उसकी ऊर्ज्वा विद्यमान रहती हैं, तो वही चन्द्रमा सोम बन जाता है, और सोम को पान करने वाली, मेरी प्यारी माता नाना प्रकार की वनस्पतियों के रसों को, चन्द्रमा की कान्ति को अपने में सिंचन करने लगती हैं। वह सिंचन प्राण के द्वारा, शीतली प्राण के द्वारा किया जाता हैं और खेचरी मुद्रा से मानव मुद्रित हो जाती हैं। 21.02.1988

1032 विनाश का मूल

हम उस महान वेदज्ञ ज्ञान के ऊपर विचार-विनिमय करें और अुनशासन और योग की प्रतिभा में रमण कर जाए, क्योंकि योग में ही, जब वह अपने प्राणो से, वह अपना एक पिण्ड बनाता हैं, प्राणों से विचारों को ला करके, उसका पिण्ड बनाता हैं और जब पिण्ड को वह पुनः विभाजन करता है, वह योग के द्वारा, तो उसमें ब्रह्माण्डों का जन्म हो जाता हैं, वैदिक ऋषि मुनियों ने अपना बड़ा अनुसन्धान किया हैं।यह जो संसार है, यह अपनी आभा में रत्त रहता हैं, परन्तुऊर्ध्वा में परमाणुवाद हैं, अपने परमाणुवाद में सीमित रहते हैं, इसी प्रकारकहते हैं कि मोह नही करना चाहिए, मैं यह कहता रहता हूँ, कि मोह करना चाहिए, परन्तु मोह में अति नही आनी चाहिए, यदि अति आ गई, तो वह मोह ही तुम्हारे विनाश का कारण बन जाएगा, तुम्हें जागरूक होना चाहिए, काम वृत्ति के रूप में, उत्पति के मूल में रहना चाहिए, और यदि तुम, उससे आगे अति में चले गए, तो वही तुम्हारे विनाश का मूल बन जाएगा। 21.02.1988

1033 इन्द्रियों की क्रिया

तो इसीलिए मानव अपने में अनुशसित रहता हैं, वह अपने में अनुशासित होने वाला हों, इन्द्रियों को अनुशासन में दृष्टिपात करते-करते दूरी चला जाता है, अन्त में यह होता है कि इन्द्रियों की क्रिया उसकी शान्त हो जाती हैं, जब वह शान्त हो जाती है, द्वितीय घ्राण इन्द्रियों को विचारते विचारते, बहुत दूरी चला जाता हैं, जब उसका विषय समाप्त हो जाता है, वहीं मौन हो जाता हैं। 21.02.1988

1034 यौगिक प्रतिक्रिया

तो यह योग की परिभाषा हैं, यह योग का विषय हैं, वायु से ही परमाणुओं को जान लेना यौगिक प्रतिक्रिया हैं।

राम का इतना विज्ञान और इन्द्रियों पर उनका इतना अनुशासन था, क्योंकि मानव का वहाँ अनुशासन नही रहता, जब बहुत तुच्छ विचारों में, इन्द्रियाँ चली जाती हैं। विचारों में व्यापकवाद रहना चाहिए, विचारों में वासना कृति नही रहनी चाहिए, वासना से ऊर्ध्वा को गमन करके, अपने जीवन को दृष्टिपात करोगे, उसे अनुशासन में लाओगे, तो तुम्हें यह सब वस्तुए सहज हो जाएगी।

श्रोत्रों के द्वारा, रसना के द्वारा, त्वचा के द्वारा, इस ब्रह्माण्ड में जोजो प्रतिक्रिया हो रही है, उसका वह अनुभव करते रहते हैं। इस प्रकार के, एक राम ही नही, नाना ऋषि थे। महाराज गणेश जी, शिव पुत्र इस प्रकार का वह गमन करते रहते थे, ऋषि वैश्म्पायन, वायु को दृष्टिपात करके, अनुभव करके स्पर्श शक्ति के द्वारा, वह यह जान लेते थे, कि वायुमण्डल में धातु विशेष हो गया हैं, अमुक जल विशेष हो गया है, अग्नि विशेष हो गई हैं, तो उनका अग्नि से विभाजन करना, और उसमें से जल को विभाजन करना, योगाभ्यास में उसे अपने में धारण करते रहते थे। 20.05.1991

1035 रक्त बिंदु से चित्र दर्शन

चित्रावलियों मे तुमने दृष्टिपात कराया। ऋषियों ने एक स्वर में हर्षध्वनि की कहा धन्य है, ऋषिवर! रक्तबिन्दु में मानवचित्रों का दर्शन, द्वितीय विज्ञानशाला में ले गए। उन वैज्ञानिक यन्त्रों मे यह विशेषता थी, क्योंकि वह जो परमात्मा विश्वकर्मा है, वह एक बिन्दु से ही मानव के शरीर का निर्माण करता है। तो उसमें कैसे करता है? भारद्वाज मुनि ने कहाआओ, महाराज! ये मेरे यन्त्र विद्यमान हैं, इन यन्त्रों में यह विशेषता है कि एक मानव का रक्त का बिन्दु हैं, और रक्त के बिन्दु को, इस यन्त्र में जब प्रवेश किया जाता है, तो उसके रक्त के बिन्दु से, यह जो मेरी चित्रावली है, यन्त्रशाला है, जिस मानव का वह रक्त का बिन्दु है, उस मानव का साक्षात्कार चित्र मेरे यन्त्र में आ जाता है। एक बिन्दु से ही मानव का चित्र यन्त्रों में आना, यह महर्षि भारद्वाज मुनि ने वर्णन कराया और भारद्वाज मुनि ने कहा किमहाराज! तुमने यह दृष्टिपात किया होगा, जो मैं दृष्टिपात करा रहा हूँ। मैंने तुम्हें यह गाथा प्रकट करा दी है। एक समय दद्दड़ गोत्रीय सोमकेतु ऋषि महाराज के हृदय में यह आकांक्षा उत्पन्न हुई, कि मैं अपने चौथे महापिता का दर्शन करना चाहता हूँ, तोएक समय उन्होंने अपने चौथे महापिता, उससे भी पूर्व हुए, उनके वस्त्रो को अपनी एक शाला में दृष्टिपात कर रहे थे। तो कहीं उनके चौथे महापिता थे, उनका कहीं एक वस्त्र उन्हें प्राप्त हो

गया और उस वस्त्र पर एक रक्त का बिन्दुलगा हुआ था, उस रक्त के बिन्दु वाले, उस वस्त्र को ले करके सोमकेतु ऋषि महाराज एक समय मेरे आश्रम में आ पहुँचे। भारद्वाज ने कहा कि महाराज! जब वे आश्रम में आ गए तो उन यन्त्रों में मैंने दृष्टिपात कराया, इसी यन्त्र से उस रक्त के बिन्दु से, उसकेचौथे महापिता, जिनको मृतक हुए भी, लगभग अस्सी वर्ष हो गए थे, उस मानव का, उस वस्त्र पर रक्त का बिन्दु और सोमकेतु ऋषि महाराज ने अपने चौथे महापिता के, यन्त्र में दिग्दर्शन कर रहे थे।

एक रक्त के बिन्दु में इतने परमाणु होते है, इतने, अणु होते है, जिससे माता के गर्भस्थल में, मानव का निर्माण होता है। हम यह विचार-विनिमय करते हैं कि मेरा देव कितना विचित्र है, कितना वैज्ञानिक है, जिसने सृष्टि के प्रारम्भ मेंइस परमाणु विद्या को निहित कर दिया, जिससे निर्माण होता है। माता के शरीर में जब यह रक्त का बिन्दु जाता हैतो बहत्तर करोड़ बहत्तर लाख दस हजार दौ सौ दौ नाड़ियों का निर्माण होता हो जाता है। तो यह कौन कर रहा है? यह माता नहीं कर रही है, पितर नहीं कर रहा है, वह जो मेरा प्यारा विश्वकर्मा है, जो निर्माण करने वाला है, जो इस संसार का निर्माणवेत्ता है, वह निर्माण कर रहा है। 19.07.1982

1036 चित्रावली विभ्राननी यन्त्र

भारद्वाज मुनि ने कहा कि महाराज! यह मेरे यहाँ यन्त्रशाला है, इसको चित्रावली विभ्राननी यन्त्र कहते हैं। मानव के रक्त के बिन्दु से चित्र आते हैइसमें नाना चित्रावलियाँ आती रहती हैं।उन्होंने और भी नाना चित्रावलियों का दिग्दर्शन कराया। जो शब्द के साथ में चित्र अन्तरिक्ष में जाता है, उसका चित्र अन्तरिक्ष में आ रहा था। और जहाँ लय हो रहा था, द्यौलोक में, अन्तरिक्ष और द्यौलोक में, उनका चित्र उसी प्रकार दृष्टिपात आ रहा था। 19.07.1982

वरूणास्त्र विज्ञान

ऋषि ने भ्रमण कराया और, वह वरूणअस्त्रों में ले गए, जहाँ वरूणास्त्रों का निर्माण, ब्रह्मचारिणी शबरी ने औरराजा रावण के विधाता कुम्भकरण भी, उसी विज्ञानशाला में अपना कार्य करते रहते थे। तो उस विज्ञानशाला में, जहाँ ब्रह्मचारी सुकेता भी अध्ययन करते रहते थे, उन्होंने वहा, उस यन्त्रशाला में ले गए। उन्होंने कहा महाराज! मैंने एक यन्त्र, निर्माणित किया है, यन्त्र, इतना जिसमें एक में दोनों शक्ति का प्रतिपादन कर दिया है। यदि किसी भी काल में इसको वायुमण्डल में त्याग दिया जाएगा, तो पच्चीस राष्ट्रों का यह एक यन्त्र विनाश कर देगा। 19.07.1982

1037 यज्ञमान का रथ द्यौ लोक को

उस याग का ब्रह्मा, महर्षि वैशम्पायन को नियुक्त किया गया। महर्षि विभाण्डक मुनि को उद्गाता के रूप में और नाना ऋषियों को, किसी को, अध्वर्यु, राम स्वयं यज्ञमान बन करके और याग का प्रारम्भ होने लगा। उन्होंने सब ऋषि मुनियों को निमन्त्रित किया और निमन्त्रित करके, जैसे याग प्रारम्भ करने लगे, तो याग में जब अग्निहोत्र हो गया, अग्नि प्रचण्ड हो गई, तो वेदमन्त्र राम के समीप भी आया। न्यौदा के मन्त्रों का उद्घोष हो रहा है, और वही वेदमन्त्र कि यज्ञमान का रथ बन करके द्यौलोक को जा रहा है। वेद का वाक्य कहता है कि यज्ञमान का रथ बन करके द्यौ लोक को जाता है।

राम ने प्रार्थना की, प्रभु! वेद का मन्त्र यह कह रहा है कि यज्ञमान का रथ बन करके और यज्ञशाला का रथ बन करके द्यौलोक को जाता है। हम उस द्यौलोक वाले रथ को दृष्टिपात करना चाहते हैं। जबकि याग का प्रारम्भ होगा, उस रथ को हम दृष्टिपात करेंगे। महर्षि वैशम्पायन, विभाण्डक इत्यादियों ने दर्शनों की मीमांसा करके यह सिद्ध किया कि चित्र बन करके जाता है। परन्तु राम ने कहा नहीं, भगवन! मैं उसको प्रत्यक्ष दृष्टिपात करना चाहता हूँ।यज्ञशाला में यही विचार चल रहा था। इतने में ब्रह्मचारिणी शबरी, महर्षि पणकेतु और वृत्तिकायज्ञकृतिका, इन ब्रह्मचारियों के सहित महर्षि भारद्वाज अपने वाहन में, यज्ञशाला में आ पधारे।

महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहाराम! तुम्हारा याग क्यों शान्त हो रहा है?उन्होंने कहाप्रभु! यह वेदमन्त्र है और यह कहता है कि यज्ञमान का रथ बन करके द्यौलोक को जाता है। मैं उस द्यौलोक वाले रथ को दृष्टिपात करना चाहता हूं।उन्होंने कहाबहुत प्रियतम, भारद्वाज ने कहाराम! तुम ब्रह्मवेत्ताओं का, ब्राह्मणसमाज का अपमान तो नहीं कर रहे हो? क्योंकि ये सब ब्रह्मवेत्ता हैं, कोई ब्रह्मवर्चोसि है।

उन्होंने कहा ‘‘प्रभु! मेरे में इतनी शक्ति नहीं, जो मैं ऋषियों का अपमान करूँ। मेरा तो अन्तरात्मा यह चाहता है कि मैं विज्ञान के वांग्मय मैं उसको दृष्टिपात करता रहता हूँ। प्रभु! मैं तो इनके चरणों की रज हूँ और मस्तिष्क पर रज को अपने में अवृत्त करने वाला हूँ। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज बड़ेविज्ञानवेत्ता थे, उन्होंने ब्रह्मचारी शबरी और यज्ञकेतु को कहाजाओ, कजली वनों में से चित्रावलियों के यन्त्रों को लाया जाए।उन्होंने वहाँ से अपने वाहनों मै विद्यमान हो करके गमन किया और कजली वनों से सक विज्ञानशाला वाली उन वृति, चित्रावलियों को लाया गया है। वह चित्रावली विद्युत पर नृत्य करते हुए, महर्षि भारद्वाज ने कहायाग का प्रारम्भ करो।

जैसे उन्होंने यन्त्रों में चित्रावलियों में, याग का प्रारम्भ किया, जब वह स्वाहाउच्चारण करते थे, तो अग्नि की धाराओं पर वे शब्द विद्यमान

हो करके, देवतावेदमन्त्रों के सहित, उन शब्दों का चित्र, उनका आकार और वह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके द्यौलोक को जाते हुए, यन्त्रों में दृष्टिपात आने लगा। भारद्वाज ने कहाहे राम! यह दृष्टिपात करो। तुम्हारी यज्ञशाला का जितना आकार है, उसका रथ बन करके, जिसमें ब्रह्मा, अध्वर्यु, उद्गाता, यज्ञमान, होतागण विद्यमान हो करके द्यौलोक को जा रहे हैं।राम के हर्ष की कोई सीमा न रही, और महर्षि वैशम्पायान तो अपने आसन पर से ही, अपने में इतने हर्षध्वनि करने लगे, वैशम्पायन का वह मन्तव्य अपने मे साकार रूप बन गया, जैसा वेदमन्त्र कह रहा था, वेदमन्त्र का जो अध्ययन हो रहा था। 28.01.1988

1038 रक्त बिंदु से पूर्वजों के दर्शन

महर्षि भारद्वाज ने कहा, हे राम! मेरे यहाँ एक यन्त्र ऐसा भी है, जिस यन्त्र में एक रक्त के बिन्दु से, उस मानव का चित्रण आता है, जिस मानव का रक्त का वह बिन्दु है। एकएक बिन्दु में मानव का दर्शन होता रहता है।राम बड़े प्रसन्न हुए। महर्षि भारद्वाज ने कहा''हे राम! तुम शबरी को जानते हो? यह शबरी कौन है? महर्षि पणपेतु महाराज की यह कन्या है, सर्वत्र अस्त्रोंशस्त्रों का जो कोष था, वह तुम्हें शबरी ने ही प्रदान किया था।

वहराम ने जान लिया। उन्होंने कहा''प्रभु मैं तो यह जानता हूँ, ये दिव्या हैं।उनका याग प्रारम्भ रहा। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज याग में विद्यमान रहे। छह माह तक वह याग चलता रहा। छह माह के पश्चात याग सम्पन्न हो गया। ऋषिमुनि अपनी मुद्राएं ले करके अपनेअपने आसन का उन्होंने गमन किया। विज्ञान और मानवदर्शन का याग से समन्वय, यह जो संसार रूपी यज्ञशाला है, यह प्रभु ने ऐसा एक निर्माण किया है, कि जिसमेंएकएक मानवशब्द का, चित्र बन करके द्यौलोक मैं चला जाता है। 28.01.1988

1039 तीन मुखी परमाणु

तो हम हिंसा उसे कहते हैं, जिस हिंसा के वायुमण्डल में परमाणुओं को जब विभाजन किया जाता है, उससे यह जो अणुवाद हैं और अणुवाद में, जो एक प्रकार की विकृत आभाएं उत्पन्न होती हैं, जिससे परमाणु, अणु, महाअणु त्रिस्रेणु जिससे इसका विकास होता रहता हैं, इसका विकास हुआ और मानव में उसी प्रकार के परमाणुओं को एकत्रित करके यह अणु शक्ति उत्पन्न कर दी, अणु शक्ति के यन्त्र का निर्माण किया, परन्तु रहा यह कि पृथ्वी के गर्भ से हमारे यहाँ समय-समय पर, प्रत्येक काल में विज्ञान की धाराएं, भिन्न-भिन्न रही हैं।जैसे वाजपेयी यागवेता ने वर्णन किया है। 10.07.1982

1040 त्रिकोण याग

जैसे त्रिकोण याग होता हैं, और त्रिकोण इसी प्रकार का होता हैं, जितने भी तुम परमाणु स्वीकार करोगे, उतने ही परमाणुओं का त्रिमुख कहलाता हैं, वह त्रिमुख, क्योकि तीन ही परमाणु होते हैं, जैसे पृथ्वी हैं, जल है, और अग्नि हैं। इनके ही परमाणु तीन मुखी कहलाता हैं। परन्तु तीन मुखी परमाणु का जब विभाजन वैज्ञानिक करता है, तो उसमें जो भी शक्ति उर्पाजन होती हैं, वह जैसे अग्नि परमाणु विशेषकर रहता है, जल परमाणु विशेषकर रहता है, और पार्थिव और इसी प्रकार के गुरुत्व और शीतांगकृति वरुणास्त्र जिसे कहते हैं। और देखो, ब्रह्माग्नये अस्त्र जिसे कहते हैं, तो यह तीन प्रकार की धाराओं का जन्म एक ही तीन मुखी में उत्पन्न हो जाता हैं।

परन्तु रहा यह कि पुरातन काल, जिस काल में यह वाजपेयी याग, अग्निष्टोम याग का वर्णन आता रहा है, उस काल में वैज्ञानिक ऐसे थे, क्योंकि वह याग कर्म करते थे, वह औषधियों के द्वारा विचारते थे, उन परमाणुओं का ऊर्ध्वा मुख होता और ऊर्ध्वा मुख हो करके उन परमाणुओं में से उनका समन्वय सूर्य से रहता था, याग के जितने भी परमाणु है, यज्ञमान जितनी शुभ कामना करता है, उतने ही परमाणुओं का ऊर्ध्वा मुख हो करके, सूर्य की किरणों के साथ होता हैं, और उस काल में जो वैज्ञानिक याग के द्वारा, जो परमाणु उद्बुध करते रहे हैं, वह सूर्य से ले करके करते रहे हैं। क्योंकि सूर्य से एक यन्त्र बनाया, उन्होंने त्रिवाण केतु यन्त्र बनाया और यन्त्र का निर्माण किया, तोवह सूर्य की किरण, वह यन्त्र अपने में ग्रहण करता रहा, सूर्य की किरणों को ले करके, ताप को ले करके, उसकी आभा को ले करके, उन्होंने भीइस प्रकार के अग्नि के भण्डार को उत्पन्न कर लिया है, कि वायुमण्डल में उस अग्नि के परमाणुओं से उस महान सूर्य जिससे विद्युत ली गई थी, उस विद्युत से वह वाहन गति करते रहते थे, चाहे वह पृथ्वी पर गति करने वाला हो, चाहे वह वायुमण्डल में गति करने वाला हो। 10.07.1982

1041 वाजपेयी याग से यन्त्र निर्माण

तुम्हें प्रतीत होगा, कि जिस समय भारद्वाज मुनि ने एक यन्त्र का निर्माण किया था, तो वह यन्त्र, वाजपेयी याग करतेकरते, कुछ परमाणु लिए और सूर्य की किरणों से ले करके, उन्होंने यन्त्र बनाया, जिस यन्त्र का आयु लगभग दो सौ चौरासी वर्ष का आयु था, और उसमें सूर्य की किरणों से, जो विद्युत ली, उस विद्युत को ले करके, उसमें भरण कर दी और भरण करने के पश्चात, वह यन्त्र अन्तरिक्ष में गति करता रहा, वह चन्द्रमा की परिक्रमा और मंगल की परिक्रमा करता रहा, इसी प्रकार एकएक लाख वर्षों के आयु वाले यन्त्र को ऋषिमुनियों ने

जाना। परन्तु सूर्य की किरणों से वह तेजोमयी ले करके, उसमें आभ्रत कहलाता हैं।
पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन! सूर्य की किरणों में त्रिमुख नही होता।
पूज्यपाद गुरुदेवः हाँ सूर्य की किरणों में त्रिमुख होता हैं, उसमें गुरुत्व भी होता है और, उसमें तिवांगड़ी भी होता हैं, और उसी में तेजोमयी और अग्निवाद भी होता हैं, क्योंकि इन्हीं परमाणुओं से विद्युतधाराओं का जन्म होता है। तो इसीलिए हमारे यहाँ जितना याग कर्म है, वह बहुत अनिवार्य है। 10.07.1982

1042 समुद्रों में पंच प्रकार की अग्नि

पांच प्रकार की अग्नि है, जो समुद्रों में रहती है। एक अग्नि बड़वानल नाम की है, एक अग्नि रेणवाचिका, एक अग्नि सोम के रूप में है, एक अग्नि वाचसुन्धि की है, एक सोम कहलाती है, क्या बड़वानल नाम की अग्नि, तो जल को जल में प्रदीप्त हो करके, जल का उग्र रूप बना देती है, एक अग्नि वह है, जो जल का पिण्ड बना देती है, वह भी तो अग्नि है, जो जल का पिण्ड बनाती है, वह शान्ता अग्नि कहलाती है, चौथी अग्नि उसे कहते हैं, जोवह अग्नि अपने श्वासों के रूप में गति करती है, जो प्राण वृतिका कहते हैं। एक अग्नि वह होती है, जो समुद्रों के मध्य में, कुछ दूरी पर अग्नि का प्रभाव, केवल जल को तपाने का है, जिसकोजल अपने मेंशान्त रह करके पृथ्वी की रक्षा करता है।

तोप्रभु का विज्ञान कितना विचित्र है, जब मैं इसमें जाता हूँ, किप्रभु ने, समुद्रों में पांच प्रकार की अग्नि का सन्निधान किया है, उसमें निर्धारित किया है, और वह पांचों प्रकार की अग्नि, किस प्रकार से रत्त रहती है, इसको वैज्ञानिक जनों ने भी उग्र रूप में जानने का प्रयास किया, परन्तुएक अग्नि वह, और पांच प्रकार की अग्नि पृथ्वी के आंगन में रहती है। जिसको हमारे यहाँ गृहपथ्य नाम की अग्नि कहते हैं, एक को गार्हपथ्य अग्नि कहते हैं, एक को वैश्वानर नाम की अग्नि कहते हैं, एक को सोमवाणकेतु अग्नि कहते हैं, एक कोदाह अग्नि कहते हैं।

1043 पांच प्रकार की अग्नि

तो यह पांच प्रकार की अग्नि है, सबसे प्रथम गृहपथ्य नाम की अग्नि, जिनसे गृह स्वर्ग बनते हैं, क्योंकि मातापिता जिस अग्नि की विचारधारा, अग्नि को अपना करके, अग्नि का चयन करते हैं। उस अग्नि का चयन करके, बाल्यबालिका और गृह सब पवित्र बनते हैं। जहाँ वेद का पठनपाठन होता है, वह गृहपथ्य नाम की अग्नि है, जहाँ याग होता है। वह गृहपथ्य नाम की अग्नि है, जहाँ ब्रह्मचारियों को बाल्य बालिकाओं को, माता पिता ऊँची शिक्षा देते हैं। वह भी गृहपथ्य नाम की अग्नि है, जो गृह मे प्रदीप्त रहती है। एक अग्नि वैश्वानर नाम की अग्नि है, जो ब्रह्मचारियों के, जैसे एक गार्हपथ्य नाम की अग्नि है, जो ब्रह्मचारियों के हृदयों में वैश्वानर नाम की अग्नि धड़कती रहती है, जो एक उग्र रूप बनाती रहती है, ब्रह्मचार्य को बलवती बनाती रहती है, और ब्रह्मचारी उसका उपयोग करके विद्या का अध्ययन करता है। और ग्रहण करताकरता नाना रूपेण विद्या का अध्ययन करता है, वह वैश्वानर नाम की अग्नि, वह जो इस अग्नि के द्वारा अपना क्रियात्मक जीवन बनाता है, उग्रता में क्रियात्मक जीवन बना करके, विद्यालयों में शिक्षार्थी शिक्षा दे करके ही ब्रह्मचारियों को ऊर्ध्वा में ले जाता है। आध्यात्मिकवादी बना देता है, आध्यात्मिकवाद में परिणत होत जाता है। द्वितीय अग्नि वह, जिसको शान्ता अग्नि कहते हैं, क्रोधाग्नि नही आती, शान्त रहता है। ज्ञान में रत्त रहता है, वह ज्ञान रूपी अग्न, जिसे ब्रह्माग्नि कहते हैं, उसे ब्रह्माग्नि भी कहते हैं, रेणवाची अग्नि भी कहते हैं, जो भिन्नभिन्न प्रकार की विद्याओं में परिणत हो करके, प्राणायाम करता है। उस प्राण के द्वारा जो प्राण में अग्नि प्रदीप्त हो रही है, उस अग्नि को वह कुम्भक और रेचक प्राणायाम में उसकोउग्र रूप बनाता है। 16.12.1984

महाराज कुम्भकरण, एक समय हिमालय की कन्दराओं में अध्ययन कर रहा था, भारद्वाज मुनि के आश्रम में, मैं भ्रमण करके आया उन्होंने मुझे वर्णन कराया, कि यह जो स्वर्णमयी धातु है, यह जो स्वर्णमयी गन्ध में, सुगन्ध को ग्रहण करना हैं, जितना भी धातु पिपाद हैं संसार में, सर्वत्रता में उस सुगन्धि की तरंगें होती हैं, उस सुगन्ध को अपने में ग्रहण कर लेती हैं, हमारा इतना गम्भीर अध्ययन होना चाहिए, हमारा इतना गम्भीर आचरणता होनी चाहिए, जिससे हम अपने में यह जान सकें, अपने में जब इसकी सुगन्ध को जान सकें, वास्तव में खनिज में सुगन्ध का आ जाना, उसको जान लेना, उस सुगन्ध से मानव के जीवन का सम्बन्ध है, क्योंकि मानव का जीवन जब पिण्ड और ब्रह्माण्ड की कल्पना करता रहता हैं, तो वह सुगन्ध में ही परिणत रहता है, जब मैं हिमालय की कन्दराओं में यह अध्ययन कर रहा था, भिन्नभिन्न प्रकार के अस्त्रों का अध्ययन कर रहा था। इस अग्नि के द्वारा, जो स्वर्ण की धातु कापंचीकरण होता है और भी नाना प्रकार की अग्नियां इस पृथ्वी के गर्भ में विद्यमान होती हैं, तो ऋषि से जब राजकुमार ने कहा प्रभु! मैंने इसी धातु को जान करके, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों का यागिक बना हूँ, यह तो यागिक बन करके मैंने याग किया। 06.10.1986

1044 राष्ट्र में सुचरित्रता

मैं एक समय भ्रमण करता हुआ, आज्ञा पा करके एक समय मंगल लोक में पंहुचा, तो मंगल लोक केविज्ञानवेताओं ने यह कहा कि यह जो तुम लोकलोकान्तरों में भ्रमण कर रहे हो यह तो यथार्थम् हैं, परन्तु हम यह जानने के लिए तत्पर रहता हूँ, कि तुम्हारा राष्ट्र जहाँ से तुम्हारा आगमन हुआ हैं, सुचरित्रता उसके द्वारा होनी चाहिए, क्यौंकि सुचरित्रता हीलोकलोकान्तरों में परिणत करा देती हैं, सुगन्धि देने लगती हैं, उन्होंने कहा जब मैंने उनसे यह वार्त्ता प्रगट की, तोवह शान्त हो करके, पुनः अपने अस्त्रों में आ पंहुचे और हिमालय मे आ करके, यन्त्रों के द्वारा उनको असफल दृष्टिपात किया तो यह विचारने लगा और विचारतेविचारते पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा पंहुचा, तो तब उन्होंने यह निर्णय कराया, कि यह यथार्थ है, कि तुम प्रथम, अपने समाज को महान बनाओ, उसके पश्चात तुम्हारा राष्ट्र पवित्र बनेगा। 06.10.1986

1045 अतिथि मानव

कुम्भकरण जी ने कहा मेरी इच्छा यह है कि मैं छह छह माह तक अणु और परमाणुओं की शिक्षा देता रहता हूँ, अपने विचार व्यक्त करता रहता हूँ, उनको यौगिकता के द्वारा और भौतिकवाद की प्रतिभा के द्वाराअनन्य प्रकारों से इसका उदगीत गाता रहता हूँ। अथवा उसका उदगीत गातेगाते अन्त में मैं मौन हो जाता हूँ। तो मेरा विचार यह है कि हे ब्रह्मचारी जनों! तुम्हें विद्यालय में शिक्षा देता रहता हूँ, मेराविचार यह है कि तुम अपनेजीवन को महान बना करके, पवित्र बना करके तुम अपने को संसार में अतिथि के रूप में स्वीकार करो, क्योंकि संसार में जो भी प्राणी यहाँ आता हैं, वह अतिथि बन करके आता हैं और वह अतिथि बन करके अपने लोक को प्राप्त हो जाता हैं।

यह वाक् उच्चारण करके महाराज कुम्भकरण अपने में मौन हो गए और यह कहा कि प्रभु! मेरा तो इतना विचार है, कि हम अपने राष्ट्र और मानवीयता को ऊँचा बनाए, तो अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो गए, तो ऋषि भारद्वाज ने संकेत किया, जो राष्ट्रपिता थे, जो रावण, उनका बाल्य कालों का नामकुछ और ही कहा जाता था, जब वह उपस्थित हुए उन्हें संकेत किया गया, तो वह अपने आसन पर विद्यमान हो गए, उन्होंने कहा क्या मैं चरणों की वन्दना करते हुए ऋषिमुनियों का जो मानवीय जीवन होता है, वह राष्ट्रवेताओं से ऊर्ध्वा में गति करने वाला हैं, वह ऊर्ध्वा में गति करता रहता है, और रावण ने उपस्थित हो करके, अपने समाज को सम्बोधित करते हुए, अपने आचार्यों को सम्बोधित करते हुए, ऋषिमुनियों के चरणों की वन्दना करते हुए, उन्होंने कहा कि मेरे हृदय में यह आकांक्षा बनी रहती हैं, कि मेरा राष्ट्र ज्ञान और विज्ञान में इतना पारायण होना चाहिए। कि लोकलोकान्तरों के विज्ञानवेता भी उसकी वृतियां न पा सकें मेरे हृदय की यह कामना रहती हैं। 06.10.1986

प्रथम यह जो पृथ्वियाँ हैं,

जहाँ मानव सबसे प्रथम यह जो पृथ्वियाँ हैं, यह गुरुत्व को धारण करने वाली हैं, जितना भी गुरुत्व मनकों की माला हैं, उस माला को जान लेना चाहिए, जैसे पृथ्वी है, उसमें गुरुत्व होता हैं, जहाँ गुरुत्व होता है, वहाँ नाना प्रकार के पदार्थों का निर्माण होता हैं। चाहे वह यह पृथ्वी हो, चाहे मंगल लोक हो, जहाँ भी पार्थिव तत्व प्रधान होगा, वहीं रत्नों का निर्माण होगा, वहीं नाना प्रकार के धातु पिपाद का निर्माण होता रहता है।

जहाँ आपोमयी ज्योति, जिस लोक में, जिस स्थली पर प्रधानता में होती हैं, वहाँ जलचर, उसी प्रकार के खनिजों का निर्माण करते रहते हैं।तो यह तो बड़ा विचित्र एक वन है, वन के आँगन में जाना नही चाहता हूँ, अपने में उस महान मनके के ऊपर विचारविनिमय करना हैं, जिससे मनका है, जिससे आपोमयी ज्योति कहते हैं, आपोमयी ज्योति जल को कहा जाता है, यह जहाँ भी गुरुत्व प्रजा उसी गुरुत्व के साथ में आपो का जन्म हो गया हैं, जब आपो का जन्म हुआ, तो वही तो आपो बन करके, माता के गर्भस्थल में जब हम शिशु के रूप में प्रवेश करते हैं, और शिशु को अपने में धारण करने वाली, वह एक माला के रूप मेंप्रगट होने लगते हैं, एक शिशु है और शिशु अपनी उस माला को धारण कर लेता है, जिससे उसे एक न एक नवीनता की प्राप्ति होने लगती हैं। 11.10.1986

1046 बड़वानल अग्नि

बड़वानल नाम की अग्नि को जानने के लिए एक समय महाराजा हनुमान और, गणेश जी दोनों विद्यमान हो गए, महाराजा हनुमान जो बड़े वैज्ञानिक थे, इस अग्नि को जानने के लिए तत्पर होने जा रहे थ, महाराजा गणेश जी और वह दोनों एक स्थली पर विद्यमान हो करके, बड़वानल नाम की अग्नि का चयन करने लगे, यन्त्र लगे हुए है, और उस अग्नि को जानना चाहते हैं।

एक समय जब सूर्य की किरणें हुई औरसमुद्र में अग्नि प्रदीप्त हो गई जल प्लावन आ गये और जल प्लावन आ करके वह भंयकर अग्नि जब समुद्रों में परिणत हो जाती है तो, जल प्लावन आ जाते हैं प्राणी नष्ट हो जाते हैं यह पृथ्वी जल मग्न हो जाती हैं परन्तु महाराजा हनुमान ने और महात्मा गणेश ने दोनों ने अपने में चिन्तन करते हुए बारह वर्ष तक इस प्रकार का अनुसन्धान किया और अणु और परमाणुओं को जान करके उन्होंने विचारों की इस अग्नि को इस अग्नि पर कैसे आधिपथ्य कर सकते हैं उन्होंने अग्नि में अग्नि का ही चयन करते हुए

उन्होंने बड़े विशाल यन्त्रों का निर्माण किया जब यन्त्रौं का निर्माण किया तो एक यन्त्र का नाम वाचो व्रतं अग्नियान कहलाया जाता था। 11.10.1986

1047 जल प्लावन का यन्त्र से पूर्व बोध

एक समय जब यन्त्र में जल प्लावन का समय आया, तो वायु मण्डल ने यह निर्णय किया, कि जल प्लावन आने वाला हैं। तो उन्होंने यन्त्र को समुद्र में प्रवेश किया, तो वह बड़वानल नाम की अग्नि शान्त हो गई और शान्त हो करके, वह समाज का जन जीवन ऊँचा बन गया।तो उन्होंने ऐसे यन्त्रों का निर्माण किया, तो यह अग्नि कौनसी हैं, यह बड़वानल नाम की अग्नि कहलाती हैं। वैज्ञानिक जन अपने हृदय में विचार-विनिमय करते हैं, यन्त्रों का निर्माण कर सकते हैं, राजा इस अग्नि का चयन करके, अपने राष्ट्र को कैसे ऊँचा बना सकता हैं।राजा इस अग्नि का दीप गाता हुआ, राजा अपनी सभाएं करता हैं। 11.10.1986

गृह स्वामी और गृह स्वामिनी, सर्वत्र इस गृह में वास करते हैं। क्योंकि आत्मा का तो गृह, केवल पंच महाभूतों से निर्मित है।परन्तु जब वह इस संसार में, भौतिक जगत में आ करके, भौतिकता के गृहों का निर्माण करते हैं, तो उस समय उनका गृह स्वामी और गृह स्वामिनी के नामों से उसक वर्णन किया जाता है। प्रायः वास्तव में तो यह जो मानव का पंच महाभौतिक, जो पिण्ड है, इसमें जो आत्मा वास करता है, वह भिन्न है। और वह इससे भिन्न कहलाता है, वह एक रस रहने वाला आत्मा है, चेतना है, और वह पंच महाभूतों को धारण किए हुए, पिण्डाकार में निहित रहता है, जैसे परमपिता परमात्मा इस पंच महाभौतिक ब्रह्माण्ड को अपने में धारण कर रहा है।और यह नाना प्रकार के जो लोकलोकान्तर है, किसी लोक में अग्नि प्रधान है, तो किसी ग्रह में आपो जल प्रधान है, और किसी मण्डल में वायु प्रधान, पृथ्वी प्रधान माना गया है। 22.08.1969

1048 तीन प्रकार के परमाणुओं

तो तीन प्रकार के परमाणुओं से, तीन प्रकार की आभाओं से, गृहों का निर्माण होता है। हमारे यहाँ परमाणु तो तीन ही माने गए हैं, गुरुत्व, तरलत्व और तेजोमयी वायु इनको परमाणुओं को गमन कराती है, और अन्तरिक्ष में ये भ्रमण करते है। तो जितने भी यह लोक लोकान्तर है, जैसे चन्द्र मण्डल है, अथवा मंगल है, और भी नाना मण्डल जैसे बृहस्पति और अरूण्धति और वशिष्ठ का वर्णन आता रहा है। परन्तु ध्रुव मण्डल है, और ध्रुव मण्डल से ऊर्ध्वागति भागों में आरुणि औरआरुणि से मूल नक्षत्रों का वास रहता है। और मूल नक्षत्रों के निचले भाग में, पुष्य नक्षत्र और स्वाति ग्रह का भी वास रहता है।इसी प्रकार यह मण्डलों का, एक दूसरे का तारतम्य बना हुआ है, जैसे माला में एक सूत्र में, मनके पिरोने से माला बन जाती है। इसी प्रकार लोक लोकान्तरों की एक माला बन गई है, और वह माला एक दूसरे में पिरोई हुई है, तो इसीलिए वह अवन्तिका के रूप में गमन करती रही है। 22.08.1969

1049 सूक्ष्म शरीर से विभिन्न लोकों में भ्रमण

हमारे यहाँ मंगल ग्रह है, इसी प्रकार बुध भी ग्रह माना गया है, शनि भी ग्रह माना गया है, और भी नाना जैसे शुक्र ग्रह का वर्णन आता है, तो हमारे यहाँ इन लोकलोकान्तरों का, जो एक समूह बन गया है, इसमें सब प्राणी वास करते रहते हैं।जब सूक्ष्म शरीर वाला आत्मा, जब स्थूल शरीर को त्यागता रहता है, तो यह कुछ ग्रहों में भ्रमण करने चला जाता। कुछ वायुमण्डल इस प्रकार के हैं, जिन वायुण्डलों में यह आत्मा अपने सूक्ष्म शरीर द्वारा वास करता रहता है, अथवा भ्रमण करता है।

तो यह ग्रह हैं, ग्रहों में प्राणी वास करते हैं। जैसे मंगल मण्डल है, यह जो मंगल गृह है, इसमें पृथ्वी मण्डल जैसा जीवन है, या पृथ्वी मण्डल पर जैसे प्राणी वास करता है, इसी प्रकार मंगल और बुध दोनों में वशिष्ठ, अरूण्धति इन मण्डलों में इसी प्रकार पार्थिव तत्व वाले प्राणी वास करते हैं, तो, वह गृह कहा जाता है, ग्रह का अभिप्रायः यह है, जहाँ मानव, जहाँ प्राणी गृह बना करके, अपना वास करता है।

तो मैं आज गृहों के सम्बन्ध में, वेदमन्त्र के संकेत अथवा प्रेरणा मुझे प्राप्त हो रही थी, जहाँ प्रायः ग्रहों का वर्णन आता रहा है। मुझे बहुतसा काल स्मरण आता रहा है, ऋषिमुनियों का प्रायः यातायात भी बना रहा है, और वह पृथ्वी मण्डल और मंगल मण्डल के दोनों का यातायात औरवह अरूण्धति ओर वशिष्ठ मण्डल का, इन सब का यातायात एक कृतियों में विद्यमान रहा है। महाराजा अर्जुन का मंगल ग्रह में भ्रमण, तो जहाँ पार्थिव तत्व वाले प्राणी रहते हैं, वहाँ विज्ञान भी है, वहाँ अस्त्रोंशस्त्रों की विद्या भी निर्माणित की जाती है। 22.08.1969

1050 चार प्रकार की सृष्टि

प्रभु की चार प्रकार की सृष्टिहै, अण्डज, उदभिज, जरायुज, और जंगम, जहाँ जल होगा, वहाँ प्राणी अवश्य होगा। यह सार्वभौम सिद्धान्त है, इसेकोई काट नही सकता, यह वेद का सिद्धान्त है और वेद का ज्ञान सर्वत्र है, जैसे प्रभु कीप्रतिभा सर्वत्र है, जैसे मानव के शरीर में मन की प्रतिभा सर्वत्र है, बिना पञ्च महाभूत के, लोक कीप्रतिभा नही बनती, उसकी मीमांसा नही कर पाएगें। मीमांसा वहीं होती हैं, जहाँ पञ्च महाभूत होते हैं। 22.08.1969

1051 पञ्च महाभूत की उपस्थिति में प्राणी

मैंने सूक्ष्म शरीर के द्वारा यह दृष्टिपात किया है, अथवा नही किया, इसको उच्चारण करने का क्यालाभ है। परन्तु मैने सार्वभौम सिद्धान्त प्रथम ही वाक्यों में प्रगट किया है, कि जहाँ भी पञ्च महाभूत होंगें वहाँ प्राणी भी होंगें। यह द्वितीय चर्चा है कि वहाँ कौनसा तत्त्व प्रधानहै। रहा यह वाक्य कि परमात्मा के राष्ट्र में हम आत्माकितनी स्वीकार करें? तो यह बहुतअल्पबुद्धि वाला प्रश्न है, क्योंकि जैसे परमपिता परमात्मा अनन्त है, वैसे ही प्रकृति भी अनन्त है, इसकी कोई सीमा नही होती और न कोई इसे सीमा में कटिबद्ध कर सकता है। इसी प्रकार आत्मा अनन्त है। तो हमारा जो सार्वभौम सिद्धान्त हैं, उसकी प्रतिभा को हम सदैव स्वीकार करें और ब्रह्म की चेतना के साथ हम अपनी चेतना को उसमें मिश्रण करने का प्रयास करें, जिससे हम इन नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में सफल हो सकें।

चन्द्रमण्डल की चर्चाएं तुमने प्रगट की हैं। आज का वैज्ञानिक यह उच्चारण करता है कि चन्द्रमा में जीवन नही हैं?

पूज्य महानन्द जीः हाँ भगवन!।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो यह किस आधार पर स्वीकार करता है?

पूज्य महानन्द जीःक्योंकि भगवन! उनके यन्त्रोंने कोई वाक्य स्वीकार नही किया।

1052 विश्व संग्राम

पूज्यपाद गुरुदेवः तो अपने यन्त्र के आधार पर तो अब यहऐसा है, कि बहुत समय के पश्चात पृथ्वी मण्डल के प्राणीकोप्रतीत होगा, कि चन्द्रमा मेंजीवन है। जीवन की धाराएं वैसे ही प्राप्त नही होती। जहाँ प्राणी का शरीर, विचारधारा, आहार, व्यवहार अच्छी प्रकार उसके अनुकूल नही होती, तो इसीलिए उनके जीवन कीप्रतीति कुछ समय के पश्चात हुआ करती है, जब वह सर्वस्व मण्डल में भ्रमण कर लेते हैं। परन्तुजैसा तुमने उच्चारण किया था, कि किसी तट पर पंहुचे हैं, उत्तरी भाग में जिसको तुमनेकोई रेखा भी उच्चारण की है, उसको हमारे यहाँ वेदों में, स्वनित नाम की रेखा कहते है।जो चन्द्रमा की अकृति स्वीकार की गई है। जहाँ पृथ्वी और चन्द्रमा दोनों कीआकर्षण शक्ति का मिलान होता है, उसको सोमभुकनाम का प्रतीक स्थान उसको कहते हैं, इसी प्रकारचन्द्रमा और चन्द्रमा के ऊपरला भाग मण्डल है, जिसको हमारे यहाँ सोमधुकनिधित मण्डल स्वीकार कहते हैं। जहाँ दोनों की आकर्षण शक्ति को स्वीकार करके हैं, उसको मानतनित नाम की रेखा कहते हैं, जिसका वर्णन किसी काल में लोक लोकान्तरों की रेखाओं केवर्णन के समय में करेंगें। यह रेखाओं का प्राण और विश्वेभान मन, उसके आधार पर होता रहता है। उसी के आधार पर मानव को पंहुचना बहुत सहज होजाता है, उसकी प्रतिभा उसकी सर्वस्व वार्ताओं को जानने के लिए समय कीआवश्यकता होती है। समय की प्रतिभा आती रहेगी। और मानव उसकी जानकारी को प्राप्त होसकता हैं, समाज की जानकारी दृष्टिपात करो, कि कितने समय तक यह विज्ञान प्रगतिशील होता रहेगा। क्योंकि हमने ऐसा स्वीकार किया है। 22.08.1969

1053 विश्व संग्राम

जब चन्द्रमा को अच्छी प्रकार जानने का समय आता है, तो कोई न कोईविश्व संग्राम हो जाता है, जैसेराजा रावण का काल था, जैसे महाभारत का काल समाप्त हुआ है, सतोयुग मेंमहाराज हिरण्यकश्यप का राष्ट्र था, उस काल में भी ऐसा हुआ। उसके पूर्व भी बहुत से काल ऐसेआते चले गएं हैं, जहाँ भौतिकवादी वैज्ञानिक चन्द्रमा में जाने के लिए तत्पर हुए हैं, जहाँ सर्वश मण्डलों मेंभ्रमण करना, मङ्गल का भ्रमण करना, बुध का भ्रमण करना, जिन पर इस पृथ्वी मण्डल का भौतिक वैज्ञानिक पंहुच पाता है, और पंहुचने के कुछ काल के पश्चात विश्व संग्राम हो जाता है, ऐसा प्रायः रहा है।

चन्द्रमा पर जाने का लाभ क्या है? लाभ नही हो, परन्तु मानव की जो अन्तरात्मा है, मस्तिष्क है, हृदय है इसकी उत्कट इच्छा होती है, कि तू इस वस्तु को जानने का प्रयास कर, श्रवण करने का प्रयास कर। जैसे एक मानव किसी विज्ञान को नही जानता, परन्तु विज्ञान कीवार्ताओं में उसके श्रोत्र कहते हैं, कि इसको श्रवण कर। उसकी अन्तरात्मा की वाणी होती है, हृदय की उत्कटइच्छा होती है, उसको जानने की, मानव शरीर में आ करके, उसको जानने के लिएयह उत्कट इच्छा होतीहै, और यह जन्मसिद्धअधिकार होता है।परन्तु उसको जानता कोईकोई है, किसी किसी का मस्तिष्क होताहै, जोबहुत सूक्ष्मता से प्रारब्धों के आधार पर बना हुआ होता है, और कुछ प्रकृतिवाद में आकर प्रयत्न करता है, और प्रयत्न करते हुए उसमेंसफलहो जाता है। यह उसकीजानकारी के लिए बहुत सुन्दर है। द्रव्य होता है, वह उस कार्य में लग जाता है।क्यों कि द्रव्य जहाँ का था, वही लग गया, मन, बुद्धि, चित्त और अहङ्कार का जन्म इसी जानकारी के लिएहोता है। इसी आधार पर जन्म होता रहता है। 22.08.1969

1054 तत्वों में तरंगे

वह मानव की उत्कट इच्छा होती है, एक मानव परमात्मा की सन्ध्या उपासना कुछ नही कर पाता, परन्तु उसकी इच्छा होती है, कि सन्ध्या

के प्रति तू कुछ श्रवण कर। इसी प्रकार भौतिकवाद में उसकी इच्छा होती है। तत्त्व वहजानता है, कि जल में कितनी तरंगें उत्पन्न होती हैं, अग्नि में कितनी तरंगें औरवायु में कितनी तरंगें होती हैं, इन सब तरंगों को जानने के लिए, कितने प्रकार की तरंगे होती है, जैसे हम ही है, हम किसी काल में यज्ञ के कर्म में बड़े दक्ष रहे, अब वार्ता हमसे दूर चली गई, हम यह जानते थेकिस किस समिधा में कितने प्रकार की तरंगें उत्पन्न होती हैं, कितने परमाणुओं का उसमे सें जन्म होता है। अग्नि के परमाणु कितने होते हैं, जल के परमाणु कितने होते हैं और उसमें वायुके कितने परमाणु मिश्रण करते हैं। और पृथ्वी में कितने परमाणु चले जाते हैं, तोयह मानव की जानकारी होती है। जानकारी करना हमारा कर्तव्य होता है और मानव को करना चाहिए।

वेद का जो पवित्र ज्ञान है, उसके मनके बनालेना चाहिए, मन और वाणी दोनों का समन्वय करते हुए, धागा बना करकेवेद रूपीऋचाओं के मनकों को उसमें पिरो लेना चाहिए। वह एक प्रकार की माला बन जाएगी। वाणीसे उच्चारण करो, मन उसको श्रवण करनेवाला हो और प्राण उसको प्रत्येक श्वांस के द्वारा वायुमण्डल में प्रसारण करने वालाहो, तो मानव ज्ञान और विज्ञान में पारङ्गत हो जाता है उसकी व्यापक प्रवृत्ति बन जाती है। 22.08.1969

एक मानव यह विचारने लगता है, कि मैं लोक लोकान्तरों की यात्रा करता हूँ, परन्तु मानव के द्वारा प्रभु ने मन को ऐसा रचा हैं जिसकी गति इतनी तीव्र है, जिसका हमारे द्वारा कोई प्रमाण ही नही हैं। कोई भी वैज्ञानिक उस मन की गति को नही जान सकता, कि उसमें कितनी गति है, इसमें गति क्यों हैं? क्योंकि प्रभु के सङ्कल्प और सन्निधान मात्र से है।

प्रभुकितना महान और अलौकिक है तो मानव को अभिमान, विडम्बना का यहाँ कोई स्थान नही रह जाता है, क्योंकि वह तो इतना देव है, कि उसके देवत्व कावर्णन नही कर पा सकते। एक योगी है, यौगिकता में रमण कर जाता है, वह यह जानने लगता है, कि मैंने अमुक वस्तु को जाना है, अमुक ज्ञान को जाना है, परन्तु जो ज्ञान तूने जाननेका प्रयास किया है योगेश्वर वह जो वेदों में पुनः था, तेरा जो प्रारब्ध और तेरे जो ऊँचे संस्कार थे, परमात्मा से मिलन के तेरे हृदय में वेदनाहुई, उसी वेदना के साथ तूने पवित्रता और उस महानप्रभु की प्रतिभा को जानने का प्रयास किया, वह तुझे प्राप्त हो गई, वह सर्वश: नहीहोती, सूक्ष्मता से, क्योंकि वाणी कामाप नही हो सकता, बुद्धि का कोई मापनही है, अन्त में मानव नेतिनेति उच्चारण करता है।

1055 प्रभु की अलौकिकता

वह प्रभुकितनाअलौकिक है, कितना देवहै एक मानव राष्ट्रवेत्ता बन जाता है, राष्ट्रीयता कोधारण करने में वह दक्ष रहता है, और उसके द्वारा स्वार्थ की मात्रा आने से उसकी दक्षताभी समाप्त हो जाती है, परन्तु यदि राजा यह विचारने लगे, कि मैंने राष्ट्र का निर्माण किया और मैं राष्ट्र पिताहूँ, तो अरे, मानव! तू राष्ट्र पिता क्या बन सकता है? जो वह प्रभु है, उस प्रभु कीराष्ट्रीयता पर विचार विनिमय करो, किप्रभु ने जो लोक सृष्टि के प्रारम्भ में रचा दिया औरजो उनमें जितनीअन्तर्द्वन्द्वता है वह सृष्टि के अन्त तकउसी प्रकार उसकी प्रक्रिया रहेगी। कितने नियम है कितना नियन्त्रण है हे मानव! तू आज राजा बनकर अपने स्वार्थ में कामातुर होकर भी तेरा सङ्कल्प भंग हो सकता है, परन्तु प्रभु कीविचित्रता देखो, एक दूसरा लोक दूसरेसे मिलन नही कर पाता और पृथ्वी अपने मार्ग में भ्रमण कर रही है। वसुन्धरा के गर्भमें नाना प्रकार का खनिज और खाद्य उत्पन्न होता रहता है, परन्तु उसका मूल वह प्रभु है, वह देव है, वह चेतना है, जिस चेतना के आधार पर यह सर्वश: ब्रह्माण्ड क्रियाशील हो रहाहै।

आज के वेदपाठ में कितने-कितने सुन्दर लोकों की रचना का और उनकी प्रक्रियाओं का, वहाँ के प्राणियों का वर्णन आता रहता है। वेदोंका ज्ञान कितना सर्वोत्तम और कितना परिपक्व है, इस ज्ञान के ऊपर विचार विनिमय और अनुसन्धान करना प्रत्येक मानव का कर्तव्यहो जाता है।

जब मानव विज्ञान के गर्भ में जाता है, वहाँ रूढ़ि नही रहती। जब मानव यौगिकवाद में जाता है, तो वहाँ वाद और रूढ़ि नही रहती। रूढ़ि समाप्त हो जाती है। प्रकृति और ब्रह्म दोनों ही ऐसे हैं, जिनकी गोद मेंजाने से मानव की रूढ़ियां समाप्त हो जाती हैं। प्रकृति की गोद में जाने से रूढ़ि तो रहती नही, परन्तु अभिमान की मात्रा उत्पन्न हो जाती है, यौगिकवाद में जाने से रूढ़ि भी नही रहती और अभिमान भी नही रहता और नम्रता की उत्पत्ति हो जाती है यह वाक्य अनुभव का है।

1056 वायु मण्डल का अन्तर्द्वन्द्व

आज का मानव विचारता है, नाना प्रकार के यन्त्रों को रचा है कि एक दूसरा मानव कहीं का कहीं वाक्य प्रगट करने लगता है और मैं यन्त्रों के द्वारा दूसरे लोकों में जाता हूँ और वहाँ के चित्र भी यन्त्रों के द्वारा प्रकाशित होने लगते हैं, परन्तु जब प्रभु की रचना पर विचार-विनिमय किया जाता है और यह विचारा जाता है कि प्रभु की महता कितनी उत्तम है, आज जो मानव ने जाना है वह पुनः मानव के मस्तिष्क में है, क्योंकि प्रभु ने वह जन्मते ही मस्तिष्क में ओत-प्रोत करा दिया है। एक मानव है, वह अपने मार्ग में भ्रमण कर रहा है, द्वितीय मार्ग से मानव

आता है वह उसका नामोच्चारण करता है और वही मानव उसके समीप आने लगता है। इसी प्रकार वायुमण्डल में तरंगें भ्रमण कर रही हैं, क्योंकि वह वायुमण्डल का अन्तर्द्वन्द्व था, अन्तरिक्ष का अन्तर्द्वन्द्व, उनके मध्य में होने के कारण वही मानव कहता है कहिए भगवन! आप मुझे वाणी से उच्चारण कर रहे थे, मेरा नामोच्चारण करते हुए। तो इसी प्रकार जब नामोच्चारण होता है, तो वह मानव उसके समीप आ जाता है, समीप आने के पश्चात उनकी विवेचनाएं होती हैं अहा और क्यों नही उच्चारण करता उन वाक्यों को? इसीलिए नही करता, क्योंकि वाणी का जो सम्बोधन था, वह केवल उसी मानव से सम्बोधित था, इसी प्रकार एक मानव मानो यन्त्र बनाता है। और यन्त्र से अपनी वाणी को प्रसारित कर देता है, वह तरंगित हैं यन्त्र के द्वारा, अब जो यन्त्र उस यन्त्र से सम्बन्धित होगा, वह शब्द उसी के द्वारा आते रहते हैं, उसी यन्त्र में आयेंगें। क्यों नही आते, दूसरे यन्त्रों में? इसीलिए नही आते, क्योंकि वह उसी को सम्बोधित करते हैं। यह है प्रभु की रचना, कि एक मानव दूसरे मानव से सहस्रों योजन दूरी पर विद्यमान है परन्तु, जब वह अपनी मानो मानसिक वेदना से उसको स्मरण करता है, तो उसकी वेदना की, इतनी तरंगें होती हैं, कि एक क्षण भर में तरंगें उसके समीप पंहुचा देती हैं। समय नही प्राप्त होता, परन्तु मन जान लेता है, मन की जो कल्पना है, वह जान लेती है, इसी प्रकार यह जो प्राण के ऊपर जो शब्द है, जो वस्तु इसके ऊपर सवार हो जाती है, वह बहुत तीव्र गति से भ्रमण करती है।

1057 संस्कारों का केंद्र

आज चन्द्रमा की यात्रा करने वाला प्राणी, यह वाक्य उच्चारण करने के लिए तत्पर हो रहा है, कि मैं जो वहाँ वाक्य उच्चारण करता हूँ, मैंने जो वहाँ विश्राम किया है, उसका चित्र पृथ्वी मण्डल पर आता है। यह तो प्रभु ने पूर्व ही रचना रच दी है, क्योंकि मानव के शरीर में जो चित्त नाम की वस्तु है, उस चित्त में जन्म जन्मान्तरों के ऐसे संस्कार होते हैं, एक मानव जो बाल्यकाल में किसी नगर को दृष्टिपात किया है और वह मानव उस नगर का स्मरण होने जा रहा है, तो मानव के मस्तिष्क में पुनः उस नगर की स्मरण शक्ति उसके समीप आने लगती है उसका क्या कारण है? क्योंकिवह जो चित्त काअन्तःकरण है, वह संस्कारों का केन्द्र हैं, इसी प्रकार जब इतनी तीव्रगति है और मन एक क्षण समय नही लगाता, परन्तु चित्त लाता रहता है और मानव के चित्त में कितनी विचित्रता है, सर्वश राष्ट्र उसके अन्तःकरण में समाहित हो जाता है, समाहित होने के पश्चात इसी प्रकार चन्द्रमा में जाने वाले व्यक्तियों की प्रबल अस्वस्त गति मानी गई है। जब हम विचारने लगते हैं, कि वास्तव में भौतिक विज्ञान में और आध्यात्मिक विज्ञान में अन्तर्द्वन्द्व है, परन्तु दोनों एक ही तुल्य माने जाते हैं, परन्तु जब योगी आगे जाता है, तो विज्ञान से आगे चला जाता है, इस भौतिकवाद से आगे चला जाता है, उसकी अग्रहणी गति बन जाती है, क्योंकि उसमें नम्रता, मानवत्व, सूक्ष्मता और विज्ञान की प्रतिभा एक महानता में परिणित हो जाती है। 23.08.1969

1058 प्रकृति से स्वभाव

आज का हमारा विज्ञानवाद। रहा यह वाक्य कि प्रकृति से स्वभाव उत्पन्न होता रहता है। माता का पुत्र है। माता का पुत्र उसके समीप आते ही, माता की लोरियों से स्वाभाविक दुग्ध उत्पन्न हो जाताहै। इसी प्रकार यह जो प्रकृति है। जब इसके तत्त्वों को तुम जानने लगोगे, मानो इसमें नाना प्रकार की धातुओं को एक दूसरे में मिलान करने की शक्ति तुमें आ जाएगी, उस समय आप ही उसके स्वभाव से ही, क्योंकि जैसे प्रभु का सन्निधान मात्र है, इसी प्रकार नानाप्रकार के परमाणुवाद को एक दूसरे से मिलान करने से प्रकृति का स्वभाव उमड़ आता है, वह प्रकृति के स्वभाव के द्वारा ही नाना प्रकारके यन्त्रों की उत्पति हो जाती है।